ISSN 2321-4945
UGC CARE LISTED JOURNAL

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

वर्ष : 74 अंक : 07

अक्टूबर, 2024

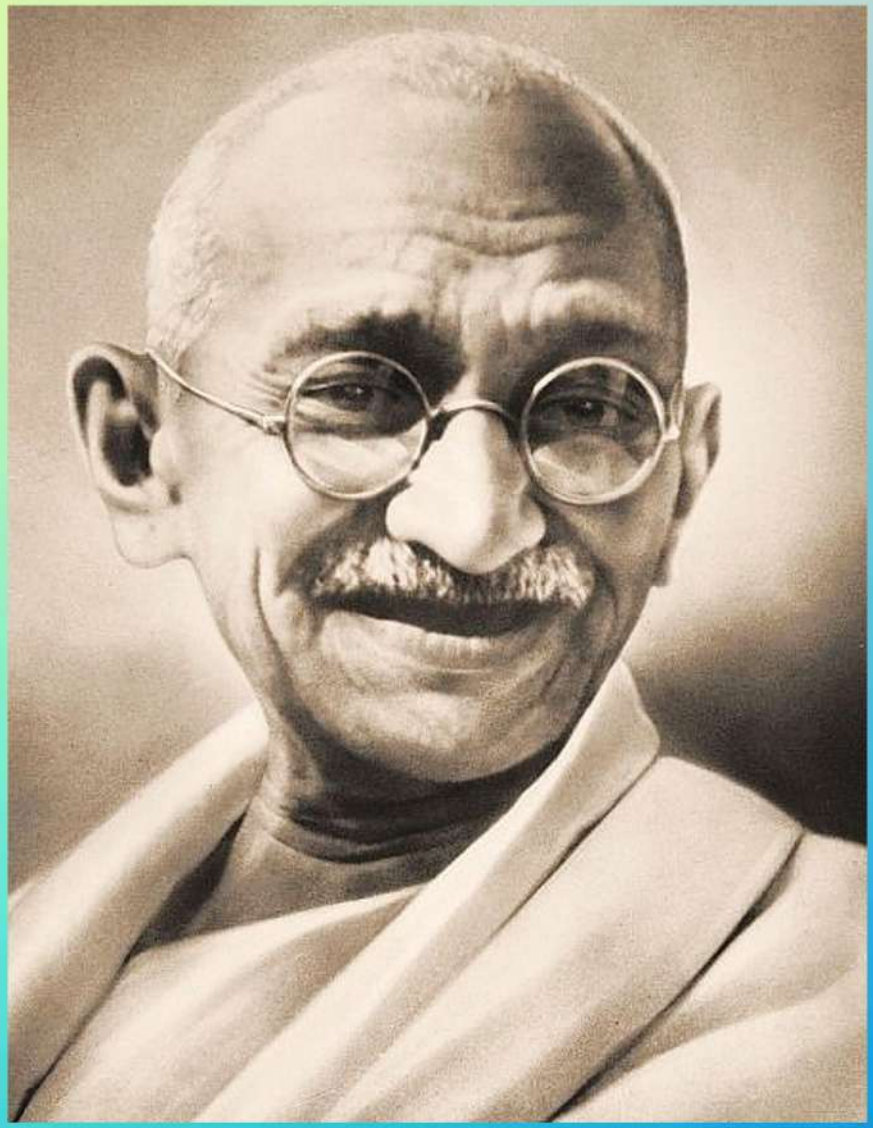

अमृत वर्ष
की ओर
अग्रसर...

RNI NO. ASSBIL/2009/31008 ISSN : 2321-4945

एक हृदय हो भारत जननी

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

(भाषा, साहित्य, समाज, कला व संस्कृति विषयक शोध-पत्रिका)

UGC CARE LISTED JOURNAL

www.arpsguwahati.com

वर्ष : 74 **अंक : 07** **अक्टूबर, 2024**

परामर्श मंडल

भारतभूषण महंत (असम) • **प्रो. आर. एस. सर्राजु** (तेलंगाना) • **प्रो. किरण हाजरिका** (पंजाब)
• **प्रो. प्रदीप के शर्मा** (सिक्किम) • **प्रो. एच. एन. वाघेला** (गुजरात) • **डॉ. रीतामणि वैश्य** (असम)

प्रधान संपादक

डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया

संपादक

प्रो. मोहन

कार्यकारी संपादक

रामनाथ प्रसाद

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी

DWIBHASHI RASTRASEWAK : A Bilingual (Hindi & Assamese) Monthly Research Journal, Focused on Language, Literature Society, Art and Culture, Partially funded by Central Hindi Directorate, Govt. of India and Published by Asom Rastrabhasha Prachar Samiti, Rupnagar, Guwahati-781032.

प्रकाशक :

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

गुवाहाटी-32

© सर्वाधिक सुरक्षित

संपादकीय कार्यालय :

प्रधान संपादक, द्विभाषी राष्ट्रसेवक

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, गुवाहाटी-32

फोन : 9101541395, 9101541380

ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com

सहयोग राशि : 100/- (प्रति अंक)

शब्द संयोजन : रतिकांत कलिता

आवरण पृष्ठ : इंटरनेट से साभार

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की ओर से मंत्री डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया द्वारा सराइघाट फोटो टाइप्स प्रा.लि., इंडस्ट्रियल इस्टेट, गुवाहाटी-781021 में मुद्रित, प्रकाशित एवं प्रसारित।

सर्वाधिकार : **असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी-32**

'द्विभाषी राष्ट्रसेवक' में प्रकाशित रचनाओं के विचारों से असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति का सहमत होना आवश्यक नहीं है। प्रकाशित सामग्री के उपयोग हेतु प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है। सभी कानूनी विवादों का निपटारा गुवाहाटी न्यायालय के अधीनस्थ होगा।

विषय सूची

क्रम	विषय	लेखक	पृष्ठ
	हिंदी विभाग		
	संपादकीय		5
1.	गढ़वाली लोकगाथाओं में जागरण परम्परा	✍ डॉ. अनूप प्रसाद सेमवाल	6
2.	हिंदी साहित्य के विकास में जैन कवियों का योगदान	✍ पूजा रावत ✍ डॉ प्रीति रॉय	13
3.	उपवाक्य व्यवस्था : हिंदी के संदर्भ में	✍ डॉ. राजवीर सिंह	18
4.	आधुनिक सभ्यता एवं स्वामी विवेकानंद : एक बहुआयामी परिप्रेक्ष्य पर सर्वांगीण विचार-दृष्टि	✍ डॉ. ब्रजेश कुमार प्रसाद	24
5.	नारी उत्पीड़न का यथार्थ : तिरिया चरित्तर	✍ डॉ. पूजा शर्मा	30
6.	आधे-अधूरे की सावित्री और डाबोडखाओ की सनाज ओबी में एकरूपता	✍ थोकचोम मोनिका देवी	35
7.	हिंदी आलोचना की भारतीय परंपरा : एक वैचारिक हस्तक्षेप	✍ विक्रम कुमार	39
8.	जौनसारी आवास विविधता में एकता के सूचक (एक भौगोलिक अध्ययन)	✍ मनोज	44
9.	सुभाष चन्द्र कुशवाहा के गजल संग्रह 'गाँव हुए बेगाने अब' में ग्रामीण जीवन का यथार्थ	✍ युगल किशोर यादव ✍ प्रो. श्याम शंकर सिंह	50
10.	दलित वर्ग के यथार्थ को दर्शाता - गूदड़बस्ती	✍ पूजा धीमान	56
11.	रामधारी सिंह दिवाकर की कहानियों में विधवा नारी संघर्ष	✍ ललिता देवी	60
12.	रणेन्द्र कृत 'गायब होता देश' उपन्यास में आदिवासी अस्मिता का प्रश्न	✍ लक्ष्मी देवी	63
13.	बाजारवाद के संदर्भ में 'मन्नत टेलर्स'	✍ शिवाली शर्मा	67
14.	सामाजिक सरोकार के परिप्रेक्ष्य में 'अकाल सन्ध्या'	✍ आरती देवी	72
15.	ओडिशा में भक्ति आंदोलन का उद्भव और विकास	✍ कैलाश पधान	76
16.	संत दादूदयाल की वाणी में आध्यात्मिक चिंतन का स्वरूप	✍ टिंकू छेत्री	83
17.	विजयदान देथा की कहानियों का रंगमंच से अंतर्संबंध	✍ प्रोमिला	88
18.	इदु मिश्मी लोकसाहित्य : एक विवेचन	✍ मो. जोहुरुल इस्लाम	94
19.	किन्नर विमर्श की दृष्टि से 'मंगलामुखी' : एक समीक्षात्मक अध्ययन	✍ डॉ. नूरजहाँ रहमतुल्ला ✍ रित्ती कलिता	100

অসমীয়া বিভাগ

20. অসমীয়া প্রবন্ধ সাহিত্যৰ উদ্ভৱ আৰু অসমৰ সমাজ — ✍ ড° চন্দন জ্যোতি চুতীয়া 104

21. আপাতানি ভাষাৰ কাৰক আৰু কাৰকসূচক ৰূপৰ ব্যৱহাৰ — ✍ ড° ৰাহুল কুলি, ✍ চুমি কাথাৰ 113

22. বিষ্ণুপ্রসাদ ৰাভাৰ 'মিছিং কনেঙ্' উপন্যাসত লোক পৰিৱেশ্য কলাৰ প্রসংগ — ✍ ৰিচা চুতিআ, ✍ ড° দীপামণি বৰুৱা দাস 122

23. তিৰাসকলৰ লালিলাং গীতত প্রতিফলিত সমাজ-জীৱন ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন — ✍ ড ° কণিমা পাঠক 128

24. স্বাধীনোত্তৰ ভাৰতৰ শিক্ষা নীতিত মূল্যবোধ শিক্ষাৰ ভূমিকা ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন — ✍ পূর্ণিমা পাদি 134

25. কৃষক বিদ্রোহ ঃ সমকালীন আলোচনী আৰু অন্যান্য প্রসংগ - এক বিশ্লেষণ — ✍ ৰাজেন দাস 140

26. প্রণৱজ্যোতি ডেকাৰ গল্প ঃ বিষয়-বৈচিত্র্য আৰু কথনশৈলী — ✍ জ্যোতিষ্মান দাস 147

27. অসমৰ শোণিতপুৰ জিলাৰ কৈশোৰ ছাত্র-ছাত্রীৰ মানসিক স্বাস্থ্যৰ ওপৰত এক অধ্যয়ন — ✍ ধ্রুৱজ্যোতি বৰা, ✍ ড° প্রণৱ শইকীয়া 155

29. সৌম্যদ্বীপ দত্তৰ 'অৰণ্যৰ ছাঁ-পোহৰ' গ্রন্থ ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন — ✍ জ্যোতি বড়া 162

30. ইয়াৰুইঙ্গম উপন্যাসত প্রতিফলিত টাংখুল সমাজৰ চিত্র ঃ এক পর্যালোচনা — ✍ পৰেশ দাস 168

31. মিচিং জনজাতিৰ পৰম্পৰাগত বাসস্থান ঃ এটি অধ্যয়ন — ✍ মৃগাক্ষী বৰা 174

32. অসমীয়া ভাষাত প্রত্যয়ৰ প্রয়োগ — ✍ নীলাক্ষি দাস 182

33. ডাইনী নিগ্রহ আৰু অসমীয়া অভিযোজিত চলচ্চিত্র 'ঈশ্বু' — ✍ পূজা বৰা, ✍ ড° কল্পনা শর্মা কলিতা 187

34. ড° ভবেন্দ্র নাথ শইকীয়াৰ যৌতুক গল্প আৰু দীনবন্ধু নাটকৰ এক তুলনামূলক আৰু বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন — ✍ নিশামণি মহন্ত, ✍ ভাস্কৰ জ্যোতি বর্মন 191

35. একবিংশ শতিকাৰ অসমীয়া কল্পবিজ্ঞানভিত্তিক চুটিগল্প ঃ এটি বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন (ক্ষীৰধৰ বৰুৱা, অভিজিত শর্মা বৰুৱা, বন্দিতা ফুকনৰ গল্পৰ উল্লেখনসহ) — ✍ দিব্য কুলি 198

36. লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ পাঁচনি নাটকত সন্নিৱিষ্ট ৰসৰ বিচাৰ ঃ এক প্রাচ্যতাত্ত্বিক অৱলোকন — ✍ বিদ্যুৎ দত্ত, ✍ ড° বিভূতি লোচন শর্মা 209

37. আহোম যুগৰ অলংকাৰ ঃ এক চমু অৱলোকন — ✍ প্রণীতা শৰণীয়া, ✍ ড° কাকলি গগৈ 216

38. ইয়ুঙৰ মনোবৈজ্ঞানিক তত্ত্বৰ আলোকত শৰৎ চন্দ্র গোস্বামীৰ 'অন্তৰ আবৰণ' — ✍ প্রীতম তালুকদাৰ 222

39. মনোমতী উপন্যাসত যুদ্ধবন্দী আৰু বন্দীকর্তাৰ মনস্তত্ত্ব তথা প্রভুত্ব স্থাপনৰ কৌশল ঃ এটি বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন — ✍ অজিৎ কলিতা 231

40. 'সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ' উপন্যাসৰ আধাৰত যুৱসমাজত বিশ্বায়ন আৰু তথ্য-প্রযুক্তিৰ প্রভাৱ ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন — ✍ চয়নিকা ৰাজখোৱা 238

❑ ❑ ❑

संपादकीय

गांधी जी का अर्थशास्त्रीय चिंतन

महात्मा गांधी बहुआयामी व्यक्तित्व से संपन्न विश्व की महानतम विभूतियों में से एक हैं। मानवीय जीवन से जुड़ा हुआ कोई ऐसा पहलू नहीं है जिस पर गांधी जी ने चिंतन न किया हो। लोकतंत्र से लेकर ग्राम-स्वराज्य, नशामुक्ति, शिक्षा, बेरोजगारी, अराजकता, आर्थिक और सामाजिक वैषम्य जैसे प्रत्येक पहलू पर गहन अध्ययन और चिंतन करके व्यावहारिक समाधान प्रस्तुत किए। वे एक समाज सुधारक, दार्शनिक, विचारक, अर्थशास्त्री थे। उन्होंने अर्थशास्त्र से संबंधित एक आधारभूत सिद्धांत दिया कि 'सच्चा अर्थशास्त्र कभी भी उच्चतम नैतिक मापदंड के विरुद्ध नहीं जा सकता। अर्थशास्त्र को न्याय भावना से पूर्ण होना चाहिए, यदि वह न्याय भावना से पूर्ण है और उसे श्रेष्ठ अर्थशास्त्र के नैतिक आधार पर प्रतिष्ठित कर दिया तो आधुनिक युग की अनेक समस्याओं एवं दोषों को दूर किया जा सकता है।' गांधी जी अपने आर्थिक विचारों में जॉन रस्किन से अधिक प्रभावित थे। उन्होंने रस्किन की पुस्तक 'अन टू दिस लास्ट' का 'सर्वोदय' के नाम से अनुवाद किया और यही पुस्तक उनके आर्थिक सिद्धांत की आधारशिला है।

गांधी जी के अर्थशास्त्रीय विचारों को समझने से पूर्व हम अर्थशास्त्र का अभिप्राय समझते हैं। लियोन रॉबिंस के अनुसार 'अर्थशास्त्र वह विज्ञान है जो उद्देश्यों और विकल्पत: उपयोगी विरल साधनों के पारस्परिक संबंध के संदर्भ में मानव-व्यवहार का अध्ययन करता है।' भौतिक पदार्थों के उत्पादन, उपयोग, विनिमय तथा वितरण आदि के लिए किए गए प्रयासों एवं क्रियाओं को आर्थिक प्रयास कहा जाता है। इन आर्थिक प्रयासों के कार्यान्वयन के लिए विभिन्न प्रकार के नियम एवं सिद्धांत हैं। इन नियमों अथवा सिद्धातों का विवेचन करने वाले शास्त्र को अर्थशास्त्र कहा जाता है।

भारत और पश्चिमी देशों की अर्थनीतिक संरचना एवं उद्देश्य में अंतर है। पश्चिमी देशों की अर्थनीतिक सरंचना का लक्ष्य है- आवश्यकताओं की वृद्धि। इनके अनुसार जितनी अधिक वस्तुओं एवं सेवाओं का उपयोग हम करते हैं, हमारे जीवन निर्वाह का स्तर उतना ही ऊँचा होता है और भौतिक दृष्टि से हम उतने ही सभ्य और सुखी होते हैं। पश्चिमी समाजवाद, साम्यवाद और पूंजीवाद का स्वरूप यही है। उन देशों का जीवनादर्श 'अधिक से अधिक उत्पादन बढ़ाओ और दुनिया पर छा जाओ' रहता है। उनकी वृत्ति परिग्रह की रही है, इसके विपरीत भारत ने भौतिक विकास की ओर ध्यान न देकर जीवन-यापन हेतु आर्थिक प्रयासों के मूल में आध्यात्मिकता को विशेष महत्व प्रदान किया। गांधी जी की दृष्टि में समस्त आर्थिक विषमताओं की जड़ है आधुनिक सभ्यता की सदा बढ़ती जाने वाली 'और आगे... और आगे' की प्रवृत्ति। गांधी जी के जीवन का आदर्श है 'सरल जीवन और उच्च विचार'। वे गैर जरूरी आवश्यकताओं की वृद्धि के विरुद्ध हैं।

गांधी जी आर्थिक और राजनैतिक क्षेत्र में विकेंद्रीकरण के पूरजोर समर्थक रहें। वे ग्राम स्वराज द्वारा ग्रामीण विकास के स्वप्न को साकार करना चाहते हैं। वे गांवों को पूर्णत: आत्मनिर्भर बनाना चाहते हैं। इसलिए उन्होंने घरेलू धंधों, कुटीर उद्योगों द्वारा ग्रामीण आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उत्पादन बढ़ाने और स्ववलंबी जीवन-यापन पर अधिक बल दिया। गांधी जी का अर्थशास्त्रीय चिंतन व्यक्ति से समाज, समाज से गांव, गांव से नगर और नगर से देश को आत्मनिर्भरता, शारीरिक श्रम और एकता सूत्र में जोड़ता है।

अंत में कहा जा सकता है कि गांधी जी एक महान चिंतक ही नहीं, अपितु देश के प्रति संमर्पित सच्चे सिपाही भी थे, जिन्होंने अंग्रेजों को देश छोड़ने के लिए विवश ही नहीं किया अपितु देश की सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक व्यवस्था को सुधारने में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया। आज गांधी जी के विचारों को व्यवहार में लाना, मानो गांधी जी के प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी। आप सभी सुधी पाठकों को गांधी जयंती की बधाई एवं शुभकामनाएँ। ❑

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

संस्कृति

गढ़वाली लोक गाथाओं में जागरण परंपरा

डॉ. अनूप प्रसाद सेमवाल

सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग
हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल
केंद्रीय विश्वविद्यालय
श्रीनगर-246174, उत्तराखंड
7500850003
dranoopsemwalhindi@gmail.com

देवात्मा हिमालय की गोद में बसा उत्तराखंड युग-युगों से अपने आध्यात्मिक स्वरूप एवं प्राकृतिक सुषमा के साथ-साथ रंग-बिरंगी संस्कृति के लिए विश्वविख्यात है। जिस प्रकार यहाँ की आध्यात्मिक पृष्ठभूमि अनेक ऋषि-मुनियों की तप स्थली रही है, उसी प्रकार यहाँ की संस्कृति के विविध रंग अनेक पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित करती आए हैं। सूचना प्रौद्योगिकी के इस दौर पर जब अपना त्याज्य और पराया ग्राह्य की संस्कृति जोर पकड़ती जा रही है, ऐसे में जीवन मूल्यों के संरक्षण हेतु लोक साहित्य का प्रबल होना अत्यावश्यक है। लोक साहित्य की प्रबलता लोक के संपूर्ण स्वरूप को सँजोऐ रखता है। यही कारण है कि लोक संस्कृति की सबलता के लिए लोक साहित्य का प्रासंगिक होना आवश्यक है।

गढ़वाली साहित्य जहाँ एक ओर अपनी लोक संस्कृति को सँजोए है, वहीं भारतीय संस्कृति के सभी मानक तथ्यों का समावेषण भी अपने में अंतर्निहित किए हुए है। पहाड़ की माटी एवं उसकी सौंधी खुशबू से पहाड़ी जन-जीवन का परिचय मिलता है, वहीं दूसरी और वैदिक धर्म, स्वयंभू की तपस्या, कालसी के बौद्ध धर्म के अवशेष, अद्वैत वेदांत का प्रभाव एवं नाथ पंथी के साथ-साथ अन्य अनेक संप्रदायों की संस्कृतियों का समन्वय भी करता है। गढ़वाली साहित्य की इस उपादेयता के संदर्भ में यह कथन परिलक्षित होता है-*''भारतीय संस्कृति की रसवंती धारा के प्रवाह में गढ़वाल का विशेष योगदान रहा। हिमालय तीर्थों व आश्रमों के साथ-साथ सांस्कृतिक उच्चताओं में भी अपना विशिष्ट महत्व रखता है। यहाँ पर अवस्थित तीर्थ भारतीय संस्कृति के तप, त्याग, अहिंसा व पावनता के प्रतीक हैं। वैदिक धर्म के स्वयंभू शंकर ने इसी भूमि में आकर तपस्या की। कालसी में बौद्ध धर्म के अवशेष एवं अद्वैत वेदांत के प्रतीष्ठापक जगदगुरु शंकराचार्य, नाथ पंथ के अनुयायी गुरु गोरखनाथ, कबीर व अन्य संप्रदायों की समस्त सांस्कृतियों का समन्वय गढ़वाल में ही उपलब्ध होता है।''*[1]

लोक गाथाएँ हमारे लोक साहित्य की धरोहर हैं, जो कि हमारे इतिहास, पौराणिक मान्यताओं और विश्वासों तथा जीवन शैली का परिचय देती हैं। गढ़वाली लोक गाथाएँ गढ़वाल के लोक संगीत का प्रमुख आधार हैं। आख्यानमूलक इन लोक गाथाओं में लोक के इतिहास, धर्म-अध्यात्म एवं जन-जीवन का सुंदर प्रतिबिंब देखने को मिलता है। गढ़वाली लोक गाथाओं में लोक की भावनाओं की सशक्त

अभिव्यक्ति, गेय कथाओं में प्राचीन गढ़वाल के हर्ष-विषाद, हास-परिहास, समृद्धि-दरिद्रता, करुणा-अनुराग एवं शौर्य पराक्रम का उत्कृष्ट प्रदर्शन मिलता है। लोक गाथाओं का आधार पौराणिक होता है। इन लोक गाथाओं में ऐतिहासिक तथ्यों के साथ ही कल्पना और अतिशयोक्ति का भी सुंदर वर्णन मिलता है। इस संबंध में यह कथन द्रष्टव्य है- *''लोक गाथा गीत की भाषा में लंबा-चौड़ा वह रोचक आख्यान है, जिसमें कल्पना के साथ ऐतिहासिक बिंदु भी होता है।''*[2]

गढ़वाली लोक गाथाएँ गाकर कही जाने वाली कथा हैं, जिसमें प्राचीनता, ऐतिहासिकता, भक्ति, साहस, धर्म, और प्रणय तथा जिसमें लोक जीवन में प्रचलित पारंपरिक देवी-देवताओं, वीर-योद्धा आदि की महिमा का बखान, पराक्रम का यशोगान एवं उनकी प्रेम कथाओं का काव्यमयी वर्णन पाया जाता है।

''लोक गाथा शब्द लोक जीवन में प्रचलित लंबे कथानक युक्त प्रबंध काव्य के लिए होता है, जिसमें पारंपरिक देवी-देवताओं, लोक जीवन के महापुरुषों के वीरतापूर्वक एवं प्रणयात्मक कार्यों का मिथकीय तरीकों का अतिशयोक्तिपूर्ण रूप से वर्णन होता है। लोक गाथाएँ लोक गीतों की अपेक्षा प्रदीर्घ वस्तुनिष्ठ कविता हैं, जो किसी अवसर विशेष से संबंधित होती हैं तथा इसमें नृत्य एवं संगीत का साहचर्य भी अपेक्षित होता है।''[3]

गढ़वाली लोक गाथाएँ वास्तव में ऐसे रोचक गीत होते हैं, जिनमें इतिहास और कल्पना का सुंदर समन्वय होता है। गढ़वाल में लोक गीतों की तरह ही लोक गाथाओं का भी विशेष भंडार देखने को मिलता है। इन लोक गाथाओं में लोक जीवन के सभी पक्ष सुंदर और प्रभावी ढंग से चित्रित होते हैं, मन को मोहित करने वाली विचित्र शैली वाली इन लोक गाथाओं का आकार लोक गीतों से बड़ा होता है। इस संदर्भ में यह कथन परिलक्षित होता है- *''गढ़वाल में लोक गीतों के समान ही लोक गाथाओं का बहुत बड़ा अक्षय भंडार है। अंतर इतना ही है कि लोक गीत खास अवसर की अपेक्षा नहीं रखते, किंतु लोक गाथाएँ अवसर विशेष से संबंधित होती हैं, जागर गाथाएँ, धार्मिक गाथाएँ होने के नाते आनुष्ठानिक होती हैं, चैती गाथाएं चैत के महीने औजियों द्वारा किसी समय गृह-द्वारों पर गाई जाती थीं और वीर गाथाएँ तो युद्ध के समय चंफ्या, हुडक्याओं तथा भाटों द्वारा मध्यकाल में रची और गाई जाती रहीं।''*[4]

यहाँ की धार्मिक गाथाओं का आधार पौराणिक माना जाता है तथा गढ़वाली लोक गाथाओं में धार्मिक गाथा के अंतर्गत जागर गाथा, श्रीकृष्ण का जागर, गंगू रमोला, पाण्डव वार्ता, नंदा देवी का जागर आदि धार्मिक गाथाएँ देखने को मिलती हैं।

जागर शब्द संस्कृत मूल जग से आया है, जिसे वैदिक संस्कृत में जागर कहा गया है, जिसका अर्थ है श्जागनाए वैदिक काल से ऋषि-मुनि जिस प्रकार किसी दोष, बीमारी आदि का निवारण करने के लिए यज्ञ करते थे, और जैसे आज भी देवी-देवताओं के लिए जागरण आयोजित होते हैं, उसी प्रकार उत्तराखंड की पहाड़ियों में जागर के माध्यम से लोग अपने देवताओं को जागृत करते हैं और उनकी शक्ति का लाभ लेते हैं।

जागर गाथा को धार्मिक गाथाएँ भी कहा जा सकता है। जागर, गीत और गाथा दोनों रूपों में मिलते हैं। जागर गाथाएँ सामान्यत: दैवीय शक्ति के आह्वान तथा माध्यम को देवता के रूप में नाचते हुए जागरी पुरोहित अथवा औजी-वादक द्वारा गाई जाती हैं। जागर लोक गाथा धार्मिक होती है, जो मुख्यत: अनुष्ठानों में तथा भूत-प्रेत को दूर भगाने तथा अपने देवता को प्रसन्न करने हेतु जागरी द्वारा गाई जाती है। इस संदर्भ में यह कथन दृष्टिगोचर होता है- *''जागर धर्म गाथाएँ हैं, ये मुख्यत: कथात्मक हैं, किंतु समय के साथ कई देवी-देवताओं की गाथाओं का कथातत्व भी समाप्त हो गया है और वह जागर के कंकाल मात्र रह गई। पर जो जागर काल का अतिक्रमण कर कथातत्व को सुरक्षित रखी हुए थे आज भी मानव की आदिम भावना के रूपकों और धार्मिक अभिप्रायों से संयुक्त हैं।''*[5]

जागर गाथाएँ गढ़वाल के जातीय जीवन, आशा, आकांक्षाओं तथा कल्पनाओं एवं धारणाओं को व्यक्त करती हैं। जागर गाथाएँ धार्मिक पुरुषों और देवताओं से जुड़ी हैं। प्रत्येक जाति अपने धर्म-नायकों को अपने ढंग से रचती है। जागर आयोजन में वाद्य-वादन को 'घड़ियाल' कहते हैं, जिसमें डमरु-थाली वाद्यों को एक विशेष ढंग से

बजाया जाता है। 'घड़ियाल' मुख्य रूप से 'हन्त्य' का आह्वान करने के लिए लगाया जाता है। इसके अतिरिक्त नृसिंह, नागराजा आदि देवता का भी 'घडियाल' लगता है। जागर को गढ़वाल में 'मण्ड़ाण' भी कहते हैं, जिसमें ढोल और दमाऊँ मुख्य रूप से वाद्य यंत्र होते हैं। जिस पर दिव्य शक्ति प्रकट होती है उसे 'पस्वा' कहते हैं।

जागर लोक गाथाओं में देवताओं को नचाने के लिए गढ़वाल में आयोजित समारोहों को जातरा, मण्ड़ाण और घड़ियाल कहा जाता है। पांडवों की जात को 'पंडवार्त' और देवी की जात को 'अठवा' कहते हैं, इसे अष्टमी भी कहा जाता है। देवी की पूजा के लिए जौ की हरियाली जमाई जाती है और आठ या नौ दिन तक देवी को 'मण्ड़ाण' में नचाया जाता है, जिसे 'नौरता' भी कहा जाता है।

''इसी आधार पर कई देवी-देवताओं को ही नहीं,

किसी युग जातीय वीरों यहाँ तक कि भूतों, रणभूतों आछरियों तक को भी नचाया जाता है। गढ़वाली लोक-मानष इसे अपनी विशेष पद्धति कहेंगे, जहाँ पाण्डव, जीतू बगड़वाल को यह गौरव मिला, वहीं राम, शिव आदि इसमें उपेक्षित ही रहे।''[6]

इस प्रकार धार्मिक गाथाओं के अंतर्गत महत्वपूर्ण जागर कथाएँ निम्न रूप से प्रस्तुत हैं-

श्रीकृष्ण की जागर :

श्रीकृष्ण की जागर गाथा धार्मिक गाथाओं के अंतर्गत आती हैं। हमारे गढ़वाल क्षेत्र में श्रीकृष्ण की जागर गाथा सबसे अधिक लोकप्रिय और प्रचलित मानी जाती है। गढ़वाल क्षेत्र में जब भी 'मण्ड़ाण' का आयोजन होता है तो सर्वप्रथम कृष्ण का ही 'बाजा' लगाया जाता है। श्रीकृष्ण की जागर गाथा को गढ़वाल में 'नागराजा' एवं 'नारैण' शब्द से भी अभिसिंचित किया जाता है। इस संदर्भ में यह कथन उल्लेखनीय होता है-

''धनि धनि नारैण धनि धनि गोविंद,
तू होलु भगीवान दीनू को दयाल;
दीनू कू दयाल पंछ्यों को पीफल!
इनो रई भगीवान, गर्वियों का गर्ब चलैन,
पाप्यों का मोचद पाप, निर्बलों देन्दू बल!
तू रै भगीवान राण्यों रौंसिया,
तू रै भगीवान फूलों कू हौंसिया।''[7]

धार्मिक गाथाओं में श्रीकृष्ण भगवान को कहीं-कहीं पर नागवंशी भी कहा गया है। और अन्य में वे यादववंशी ही कहलाए तथा वसुदेव और देवकी के ही बेटे बताए गए हैं।

''तिन लिने जनम देवकी का कोख हे नारैण,
देवकी का कोख, कंसकोट राज मा!
वैरियों की भूमि, मामा की मथुरा
माता तेरी देवकी, पिता ह्वैल वसुदेव।''[8]

गढ़वाली लोक गाथाओं के अंतर्गत जागर में श्रीकृष्ण के व्यक्तित्व का जितना विराट प्रदर्शन है, किसी अन्य का उतना दुर्लभ है। गढ़वाल में श्रीकृष्ण की गाथा लोकप्रिय मानी जाती है। इस संदर्भ में यह कथन उल्लेखनीय होता है- *''गढ़वाली जागर गाथाओं में श्रीकृष्ण के विराट व्यक्तित्व का प्रदर्शन है। 'भगवत गीता' की तरह ही इनके 'कर्मयोग' और 'संभवामि युगे-युगे' का स्वरूप इनमें प्रतिपादित किया गया है। जिसका कोई नहीं उसका तू स्वामी के सिद्धांत पर यहाँ का लोक इस 'त्रिलोकी' नाथ के चरणों में समर्पित है। नागराजा के रूप में नचाए-पूजे जाने वाले कृष्ण पर यहाँ समस्त मानव एवं देवगण आरोपित हैं। कृष्ण के बहुआयामी जीवन-चरित, व्यक्तित्व और कृतित्व को गाथाओं में नाना रूपों में व्यक्त किया गया है। कृष्ण को 'छलि-बलि नारैण', अनाथू को नाथ एवं बावन अवतारी रूप मिला है।''*[9]

गंगू रमोला की जागर गाथा :

धार्मिक लोक गाथाओं में गंगू रमोला की लोक गाथा भी प्रसिद्ध मानी जाती है। कृष्ण भगवान के जागर के साथ 'गंगू रमोला' का जागर भी गढ़वाल में अत्यंत प्रसिद्ध और लोकप्रिय है। गंगू रमोली गढ़ का सामंत था। रमोलीगढ़ टिहरी गढ़वाल की एक पट्टी है, जहाँ 'नागराजा' भगवान का मुख्य तीर्थ स्थान सेम-मुखेम है। यहाँ पर श्रीकृष्ण का मंदिर है। सेम-मुखेम में तृतीय वर्ष नवंबर महीने में श्रीकृष्ण की पूजा की जाती है। यह स्थान पहाड़ की चोटी पर अत्यंत रमणीक एवं मनोरम माना जाता है।

''कृष्ण के जागर के साथ एक व्यक्ति और संबंधित है-सिदुवा, जो गंगू रमोला का बेटा और श्रीकृष्ण का मित्र था, और जनश्रुति यह भी है कि जब द्वारिका से श्रीकृष्ण का मन ऊब गया तो गढ़वाल का 'सेम-मुखेम' स्थान उन्होंने अपने लिए चुना। यह सेम-मुखेम आज भी गढ़वाल क्षेत्र का वृंदावन है।''[10]

गंगू रमोला का जागर भी श्रीकृष्ण के जागर से ही प्रारंभ होता है-

''लूका भूका सेम जाग, आरुणी सेम जाग,
वारुणी सेम जाग, तल्लो सेम जाग, तलवला सेम जाग,
तिन मथुरा मा जनम लीने, कर्तार,
तिन देवकी का गर्भ लीने अवतार!
तुम द्वारका का धनी, मथुरा का ग्वैर,
गायों का गोपाल होला, गोप्यों का मोहन।''[11]

गढ़वाली लोक गाथाओं में गंगू रमोला के जागरण में यह वर्णित है कि भगवान श्रीकृष्ण स्वप्न में गंगू रमोला का रमोलीगढ़ देखते हैं तो उनका मन वहाँ रम जाता है। और वे अपने दूतों को गंगू रमोला से रमोलीगढ़ की ढाई गज जमीन माँगने को भेजते हैं, परंतु गंगू रमोला देने से इनकार कर देता है तो फिर श्रीकृष्ण स्वयं गंगू की रमोली जाते हैं और उससे ढाई गज जमीन माँगते हैं तो गंगू रमोला कहता है कि आज ढाई गज माँग रहा है, कल पूरी रमोली माँग लेगा, इसलिए गंगू रमोला जमीन देने से इनकार कर देता है। इस संदर्भ में यह कथन द्रष्टव्य होता है–

''तब सुपिना मा देखे कृष्ण गंगू की रंमोली!

तौं उची डांड्यों मा, बांज की बणाई होली जख होली कुर्लाइं।

अनमन भांति का फूल होला, फूलू की बासिना;

दुरू फैल्यां सौड़ होला, होलो उचो शतरंज ,

देखे भगवान बांकी रमोली लागे मन!

तब इना बैन बोदा सांवल भगीवन –

हे गंगू रमोला मैं तेरो कुल देऊ

जगा दियाल मैं तेरी रमोली लाग्योमन!

तब गंगू रमोला झाड़ काटीक जवाब देन्द,

मेरा यख कैक रिड्वा बिड्वा क जगा नीछ।''[12]

इस प्रकार द्वारका पहुँचकर देवी रुक्मिणी से कृष्ण गंगू को कुछ देने को कहते हैं तो कृष्ण रानी से भोजन बनाने को कहते हैं, किंतु भोजन को पानी और रक्त बनने जैसे छल प्रपंच भगवान रखते हैं, और गंगू को याद दिलाते हैं कि मैंने तुझसे ढाई गज रमोली माँगी थी, परंतु तेरे मना करने के कारण ही तेरी यह दशा हुई है। तब गंगू रमोला भगवान कृष्ण से क्षमा याचना करता है और भगवान को रमोलीगढ़ दे देता है। तब जाकर उसका रहन–सहन पहले जैसा होता है।

''तब गंगू ढकुली ढवौंद माथो नवौंद।

भगवान न वैकी लक्ष्मी लौटाई दिने,

गंगून सेम मुखेम की थाली दिने, शतरंज को सौड़;

उची थाती मा मंदिर लगैले।

फेर वैकी ह्वै गए होणी खाणी।

तब तै सेम मुखेम मा तेरा बजदा धांड ,

लोक जातरा औन्दा भगीवान ,

दस घड़ी की संजा होंदी बीस घड़ी की पूजा।''[13]

जिस प्रकार गढ़वाल में 'नागराजा' श्रीकृष्ण का जागर अत्यंत प्रसिद्ध है, उसी प्रकार 'गंगू रमोला' का जागर भी अत्यंत प्रचलित है। क्योंकि गंगू रमोला, सिदुवा–बिदुवा, ब्रह्मकौंल आदि का जागर श्रीकृष्ण के जागर से ही संबंधित है। धार्मिक गाथाओं में गंगू रमोला की जागर गाथा लोकप्रिय मानी जाती है।

धार्मिक लोक गाथाओं में पांडव वार्ता :

गढ़वाली लोक गाथाओं में पांडवों का जागर आज भी अपना अनुपम स्थान रखता है, जिसे 'पंडवार्त' कहते हैं। कृष्ण की तरह ही पांडव भी गढ़वाल में अत्यंत लोकप्रिय रहे हैं। पांडवों के पिता पांडु 'मृगया' के लिए गढ़वाल भावर तक पहुँचे थे। कहा जाता है कि पांडुकेश्वर में उसने तपस्या की थी और उसी क्षेत्र में पांडवों का जन्म हुआ था। वास्तव में अनेक स्थल, तालाब आज भी पांडवों की स्मृति को सुरक्षित रखे हुए हैं। इस संदर्भ में यह कथन द्रष्टव्य होता है– *''हिमालय के पाद प्रदेश, यमुना–गंगा के उद्गम क्षेत्रों, दून घाटी तथा कोसी उपत्यका में ऐसी बहुत–सी सामग्री मिलती हैं, जो इस बात को प्रमाणित करती हैं।''*[14]

इसी प्रकार धार्मिक लोक गाथाओं में पांडव वार्ता में पांचों भाई पांडव, कुंती, द्रौपदी आदि का जागर लगता है–

''परगट ह्वै जान, परगट ह्वै जान, परगट ह्वै जान, पांच भाई पंडऊं

परगट ह्वै जान, परगट कोन्ती माता, परगट ह्वै जान, परगट राणी द्रोपता ।

परगट ह्वै जान, खाती अर्जुन को धनूष, परगट ह्वै जान, भीमसण की गदा ।

परगट ह्वै जान, धर्म राज को धर्म, परगट ह्वै जान, जान सहदेव की छड़ी!

हां त काली ढोली लगौन्द पंडौंऊ की कथा।''[15]

गढ़वाल क्षेत्र में 'पंडवार्त' को टिहरी में भंडारा एवं भण्डाण कहते हैं। उत्तरकाशी जनपद में इसे 'रिंगौण' कहते हैं, जिसमें पांडव साधारण मनुष्यों पर अवतरित होते हैं।

इस अवसर पर जागरी औजी ढोल-दमाऊं के जो जागर गाते हैं वह दैवीय शक्ति के उद्‌बोधन से प्रारंभ होता है, जिनमें देवताओं को प्रकट करने का आह्वान किया जाता है। कंपन के साथ पांडव अपने माध्यमों या 'पस्वाओं' द्वारा प्रकट होकर नाचते हैं। इस संदर्भ में या कथन उल्लेखनीय होता है- *''वे अपनी विशिष्ट वेशभूषा में धनुष-बाण और गदा लेकर वीरों की बानगी के सात अपनी 'रिंगौंण' दिखाते हैं और जैसा बाजा बजता है और जागर गाए जाते हैं, उसी के अनुरूप वे नाचते हैं।''*[16]

पांडव वार्ता में संपूर्ण प्रसंग महाभारत की कथा के अनुरूप ही होते हैं, किंतु कुछ स्थानीय रंग भी दर्शित होते हैं-

''कौंती माता होली बल धर्मयाली,
नगौं कू वस्त्र देंदी भूखौं कू अन्न;
नंगौं देखीक वस्तर नी लांदी,
भूकौं देखीक अन्न नी खांदी।''[17]

'पंडवार्त' में प्राय: एक कद्दू पर ककड़ी के चार पैर लगाकर उसे गैंडे के रूप में मंडाण में स्थापित किया जाता है और फिर शिकार का अभिनय करते हुए नाचते हैं। तब जागरी उस समय का वार्ता लगाता है, जबकि कुंती माता को सपना हुआ था कि पांडु के श्राद्ध के लिए गैंडे की खोज करो; पांडव जब खोज में जाने लगते हैं तो द्रौपदी भी साथ चलने को आग्रह करती है-

''कोंती माता सुपिनो ह्वै गए, ताछुम-ताछुम,
पांडु का सराधक चैंद गैंडों, ताछुम-ताछुम,
ओडू नेडू आवा मेरा पांच पंडऊ, ताछुम-ताछुम,
तुम जवा पंडऊ गैंडना की खोज, ताछुम-ताछुम,
तब पैट्‌या पंडऊ गैंडना की खोज, ताछुम-ताछुम।''[18]

अभिमन्यु-वध का भी 'पंडवार्त' में विशेष रूप से जागर लगता है। कुरुक्षेत्र के रणस्थल में अर्जुन की दुविधा, कृष्ण की भूमिका, चक्रव्यूह की रचना और उसमें अभिमन्यु की हत्या जैसे प्रसंगों का गायन गढ़वाल के चमोली क्षेत्र में विशेष रूप से लोकप्रिय है। इन प्रसंगों में कोई नवीनता नहीं, किंतु नृत्य और अभिनव द्वारा प्रकट युद्ध कौशल की दृष्टि से यह बड़े मनोहारी दृश्य उत्पन्न करते हैं। इस संदर्भ में यह कथन द्रष्टव्य होता है-

''कृष्ण होन्दा उदास, हे अर्जुन;
जैंती मां होंद विलाप, हे अर्जुन;
तब त्वेन प्रण कर्याले, हे अर्जुन;
तू होलो हमारू कुल जोत अभिमन्यु।
किलै तू रण मां गई अभिमन्यु।
तौन तू मारी दिने बालो अभिमन्यु।
हमन ज्यूंदा नी छोडण स्वी कौरव।।''[19]

इस प्रकार से गढ़वाल क्षेत्र में सांस्कृतिक एवं धार्मिक दृष्टि से 'पंडवार्त' का महत्वपूर्ण स्थान है।

नंदा देवी का जागर :

गढ़वाल में देवी को भी अधिकांशत: जागर पद्धति से नचाया जाता है। कहीं केवल साधारण पूजा होती है। देवी का कालिका रूप 'पस्वा' पर अवतरित होता है। इसके अतिरिक्त अन्य रूपों में मैठाणा, चंद्रबदनी, धारी देवी, राजराजेश्वरी आदि का पूजन मंदिरों एवं घरों में होता है। चैत्र और आश्विन के महीने में देवी के मुख्य रूप से नवरात्र बैठते हैं, जिन्हें गढ़वाली में नौरता या अष्टमी कहते हैं। माँ भगवती की हरियाली पड़ती है, जिसमें आठ या नौ दिन तक देवी का जागर मंडाण रूप में लगता है। नंदा देवी को गढ़वाल-कुमाऊँ में विशेष लोकप्रिय एवं पूजनीय माना गया है। इस संदर्भ में यह कथन परिलक्षित होता है- *''इन सब रूपों में नंदा देवी को गढ़वाल-कुमाऊँ में विशेष लोकप्रियता मिली है। नंदा जात की लीला-भूमि नंदा देवी शिखर की तलहटी में स्थित दशौली परगने का वह क्षेत्र है, जिसके आसपास मंदाकिनी नदी प्रवाहित होती है। कहीं-कहीं इसके लिए 'उफरणी' देवी कहा जाता है। कहीं उफराई के संबंध में जो जागर प्रचलित है, उसमें कहा गया है कि इस क्षेत्र में शिव ने उसका अपहरण कर लिया था। इसलिए वह 'अपहरणी' या 'अपर्णा' कहलाई होगी।''*[20]

गढ़वाल कुमाऊँ में नंदा देवी का जात भाद्रपद महीने की शुक्ल पक्ष की अष्टमी तिथि को निश्चित रहती है, जब नंदा अष्टमी का मेला लगता है। इस दिन बारहवें वर्ष नंदा देवी को नंदागिरी स्थित उनकी ससुराल के लिए विदा करने का आयोजन होता है। नंदा देवी की जातरा में उनकी

डोली ले जाने की प्रक्रिया मुख्य होती है।

''देवी के रूप में पार्वती की पूजा समस्त हिमालय में व्याप्त है। सामान्यत: नवरात्र के अवसर पर 'आठवाड़' में देवी को व्यक्ति के सिर पर आहूत किया जाता है और उसकी गाथा गाई जाती है। इस गाथा में मुख्यत: देवासुर संग्राम तथा देवी द्वारा असुरों की हत्या का वर्णन ही मुख्य होता है। भाषा और भाव दोनों की दृष्टि से यह वर्णन हिंदी के बहुत निकट ठहरता है।''[21]

वस्तुत: गढ़वाली साहित्य यहाँ के समाज को प्रखर रूप से जन-जन के बीच में अभिव्यक्त करता है। इसके अंतर्गत लोकजन की अनुभूतिजन्य, सहज, सरल, स्वाभाविक अभिव्यक्ति का समावेषण मिलता है, जिसमें जीवन मूल्यों की अभिव्यक्ति का स्वरूप अनायास ही मिल जाता है। यहाँ की लोक कथाएँ, लोक गाथाएँ या फिर लोक गीतों में गढ़वाली लोकजनों की विशिष्टता प्रदर्शित होती है। प्रकृति और मानव का संबंध भी यहाँ के लोक गीतों, लोक कथाओं और लोक गाथाओं में आत्मीय पीठिका के रूप में प्रतिष्ठित है। किसी भी लोक की पहचान का सबसे बड़ा द्योतक वहाँ की संस्कृति होती है। संस्कृति ही 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' की दिव्य अवधारण को भव्य आकार प्रदान करती है। इस प्रकार गढ़वाली साहित्य के अंतर्गत उन सभी लोक मूल्यों का समावेषण मिलता है, जो उत्तम चरित्र निर्माण में पूर्ण रूप से भागीदार होते हैं। वर्तमान समय में लगातार क्षरण होते जीवन मूल्य एवं लोक संस्कृति के संवर्द्धन हेतु उस लोक के साहित्य का आधार ही इस विभीषिका से पार पाने में सबल हो सकता है। ❑

संदर्भ सूची :

1. डॉ. ब्रह्मदेव शर्मा-गढ़वाल में हिंदी साहित्य का उद्भव और विकास पृ.स.-77
2. मोहन लाल बाबुलकर-गढ़वाली लोक साहित्य का विवेचनात्मक अध्ययन पृ.सं.-92
3. डॉ. कुसुम डोभाल-लोक साहित्य के सिद्धांत और गढ़वाली लोक साहित्य का संदर्भ पृ.सं.-38
4. डॉ. गोविंद चातक-गढ़वाली लोक गाथाएँ-सामान्य परिचय, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली पृ. सं.-01
5. डॉ. गोविंद चातक-गढ़वाली लोक गाथाएँ, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.सं.-17
6. डॉ. गोविंद चातक-गढ़वाली लोक गाथाएँ, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली पृ.सं.-38-39
7. डॉ. गोविंद चातक-गढ़वाली लोक गाथाएँ, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.सं.-41
8. डॉ. शिवानंद नौटियाल-भारतीय लोक कथाएं, पृ.सं.-19
9. मीनाक्षी शर्मा-लोकगीत स्वरूप एवं वर्गीकरण, पृ.सं.-75
10. डॉ. गोविंद चातक-गढ़वाली लोक गाथाएँ, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ल्ली, पृ.सं.-87
11. डॉ. गोविंद चातक-गढ़वाली लोक गाथाएँ, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.स.-87
12. डॉ. गोविंद चातक-गढ़वाली लोक गाथाएँ, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.सं.-98
13. डॉ. गोविंद चातक-गढ़वाली लोक गाथाएँ, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.सं.-24
14. डॉ. गोविंद चातक-गढ़वाली लोक गाथाएँ, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.सं.-120
15. डॉ. गोविंद चातक-गढ़वाली लोक गाथाएँ, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.सं.-128
16. डॉ. गोविंद चातक-गढ़वाली लोक गाथाएँ, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.सं.-132
17. डॉ. गोविंद चातक-गढ़वाली लोक गाथाएँ, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.स.-28
18. डॉ. गोविंद चातक-भारतीय लोक संस्कृति का संदर्भ : मध्य हिमालय, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.सं.-260
19 डॉ. गोविंद चातक-गढ़वाली लोक गाथाएँ, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, प.सं.-149
20. डॉ. गोविंद चातक-गढ़वाली लोक गाथाएँ, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.सं.-149
20 डॉ. गोविंद चातक-गढ़वाली लोक गाथाएँ, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, प.सं.-153

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

वाङ्मय

हिंदी साहित्य के विकास में जैन कवियों का योगदान

पूजा रावत

शोधार्थी, हिंदी विभाग
बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर
केंद्रीय विश्वविद्यालय लखनऊ (उप्र)
8400923530
poojarawat7004@gmail.com

डॉ प्रीति रॉय

सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग
बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर
केंद्रीय विश्वविद्यालय लखनऊ (उप्र)
9451888162

शोध सार :

हिंदी साहित्य में विभिन्न धर्मों एवं भाषाओं का उल्लेख किया गया है, जिसमें जैन धर्म भी सम्मिलित है। हिंदी साहित्य के आदिकाल में नाथ साहित्य, सिद्ध साहित्य, बौद्ध साहित्य, जैन साहित्य, वीरगाथात्मक रचनाएँ भी हैं। हिंदी साहित्य का आधार तैयार करने में जैन साहित्य का महत्वपूर्ण योगदान है। हिंदी भाषा में जैन साहित्य प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। हिंदी भाषा विभिन्न मत-मतांतरों एवं धर्म लेख को भावनाओं को अभिव्यक्त करने का माध्यम है। जैन धर्म के प्रचार-प्रसार एवं जैन समाज के उत्थान के प्रति श्रद्धावान बनाने के उद्देश्य से जैन साहित्यकारों ने विशाल संख्या में जैन साहित्य का प्रणयन कर हिंदी साहित्य के भंडार की अभिवृद्धि की है।

बीज शब्द :

आध्यात्म , संप्रदाय, पुराण, आविर्भाव, धर्म, चिंतनधारा, सिद्धांत, अभिवृद्धि, प्रार्दुभाव, निर्वाण, अनुशासन, भावभूमि, प्रथमावस्था, इतिहास , महाव्रत।

मूल आलेख :

जैन धर्म एक प्राचीन धर्म है, जो सभी जीवित प्राणियों को अनुशासित जीवन के माध्यम से मुक्ति का मार्ग एवं आध्यात्मिक शुद्धता और आत्म ज्ञान का मार्ग सिखाता है। जैन धर्म की उत्पत्ति छठी शताब्दी ईसा पूर्व में हुई। महावीर स्वामी ने जैन धर्म का प्रचार प्रसार किया, तब यह प्रमुखता से सामने आया। जैन शब्द 'जिन' या जैन से बना है, जिसका अर्थ है विजेता। जैन धर्म में 24 शिक्षकों को तीर्थंकर कहा गया है। वे लोग हैं, जिन्होंने अपने जीवन में ज्ञान या मोक्ष प्राप्त कर लिया।

जब हम किसी धर्म अथवा संप्रदाय की बात करते हैं तो इसका अर्थ यह है की प्रस्तुत धर्म अपने समय में जनता के हृदय पर कितना प्रभाव डाल सका अथवा स्थान बना सका, क्योंकि धर्म को आगे बढ़ाने में लोक की भागीदारी ही अधिक होती है। जैसा कि आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अपने हिंदी साहित्य के इतिहास नामक प्रसिद्ध ग्रंथ में लिखा है कि *''जबकि प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता का संचित प्रतिबिंब होता है। तब यह निश्चित है कि जनता की चित्तवृत्ति के साथ-साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है।''* अर्थात जनता की प्रवृत्ति

ही प्रमुख मानी जाती है।

भारतीय साहित्य इतिहास के अनुसार जैन साहित्य की परंपरा का विकास लगभग छठी सातवीं शताब्दी माना जाता है। इस परंपरा के प्रथम कवि के रूप में स्वयंभू को मानते हैं, किंतु अनेक विद्वान इससे असहमत हैं, फिर भी स्वयंभू को जैन साहित्य के विद्वान प्रथम कवि के रूप में स्वीकार करते हैं। जैन साहित्य में अनेक ऐसे कवि हुए हैं, जिन्होंने पौराणिक एवं ऐतिहासिक कथाओं को अपनी रचना का विषय बनाया तथा उनके चरित्र काव्य लिखे। जिनमें स्वयंभू कृत **पउम चरिउ** का विषय, जिसमें भगवान श्रीराम का विस्तार से वर्णन किया गया है। **हेमचंद्र कृत कुमार पाल चरित, सोमप्रभाचार्य कृत कुमारपाल प्रतिबोध, पुष्पदंत कृत महापुराण** आदि का उल्लेख विशेष रूप से किया गया है।

जैन धर्म के अनुयायियों के अनुसार जैन धर्म की प्राचीनता प्रागैतिहासिक है। इनके अनुसार मोहनजोदड़ो से प्राप्त योगी की मूर्ति आदि प्रवर्तक प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव की है। ऋग्वेद की एक जगह पर ऋषभ शब्द आया है, जिसे ऋषभदेव के साथ जोड़ा जाता है। यजुर्वेद में ऋषभ धर्म प्रवर्तकों में श्रेष्ठ है। लिखित अथर्ववेद और गोपथ ब्राह्मण में स्वयंभू काश्यप का संबंध ऋषभदेव से जोड़ा जाता है। इस प्रकार जैन धर्म का अविर्भाव विद्वानों ने अपने-अपने मतानुसार माना है। इस धर्म में 24 तीर्थंकर हुए हैं, जिन्होंने अपने समय में जैन धर्म का प्रचार-प्रसार किया। इनके नाम ऋषभ, आदिनाथ, अजीतनाथ, संभवनाथ, अभिनंदन नाथ, सुमतिनाथ, पद्मप्रभु, सुपार्श्वनाथ, चन्द्रप्रभु, सुविदिनाथ, शीतलनाथ, श्रेयांसनाथ, वासुपुंज, विमलनाथ, अनंतनाथ, धर्मनाथ, शांतिनाथ, कुंथुनाथ, मुनिसुव्रत, नेमिनाथ, अरिनाथ, मल्लिनाथ, अरिष्टनेमी, पार्श्वनाथ और 24वें महावीर स्वामी। जैन धर्म के व्यवस्थित और सुनियोजित ज्ञान तत्व, चिंतनधारा और दर्शन तत्व का स्वरूप पार्श्वनाथ के निर्देशन में विकसित हुआ। इनके सिद्धांतों में हिंदू धर्म के देववाद, कर्मकांड, हिंसा, यज्ञ और जाति व्यवस्था आदि का विरोध तथा अहिंसा का समर्थन है। जैन धर्म के चौबीसवें तीर्थंकर वर्धमान महावीर के नेतृत्व में इस धर्म का अभूतपूर्व उत्कर्ष हुआ। इन्होंने अपनी अद्भुत प्रतिभा और बुद्धि से पार्श्वनाथ द्वारा प्रचारित सिद्धांतों में आवश्यकतानुसार परिवर्तन करके प्रचार-प्रसार किया। महावीर का मानना था कि जीवन सभी रूपों में है तथा वनस्पति से मनुष्य तक सभी प्राणी एक जन्म जग मरण के क्रम में आबद्ध है, साथ ही मनुष्य अपने प्रयास से इस क्रम से मुक्त हो सकता है। महावीर स्वामी अपने आकर्षक व्यक्तित्व और ज्ञान से लोगों को प्रभावित कर लेते थे। प्राकृतिक विज्ञान के विषय में उनका ज्ञान अविश्मरणीय है। वायु, अग्नि, वनस्पति और परमाणु जैसे विषयों पर उनके विचार स्पष्ट थे। पार्श्वनाथ और महावीर स्वामी के उपदेशों में भिन्नता थी। पार्श्व के अनुसार जैन भिक्षु वस्त्र धारण कर सकते थे, किंतु महावीर स्वामी के अनुसार उन्हें नग्न रूप में निर्वस्त्र रहना चाहिए। इस प्रकार जैन धर्मावलंबियों और साधु में दो वर्ग हो गए। एक वस्त्र धारण करने वाले और दूसरे निर्वस्त्र रहने वाले। पहले वर्ग के पार्श्वनाथ के अनुसार अनुयायी हुए और दूसरे वर्ग के लोग महावीर स्वामी के। किंतु उनके मूल सिद्धांतों में कोई भेद नहीं था। उनके तात्विक विचार समान ही थे। ये दोनों

वर्ग कालांतर में क्रमश: श्वेतांबर और दिगंबर कहलाते हैं। जैन धर्म के सिद्धांतों में निवृत्त मार्ग का प्रधान स्थान है, जिसके माध्यम से व्यक्ति जगत की नाना प्रकार की व्याधियों और प्रपंचों से मुक्त हो जाता है। जैन ज्ञान तत्व के अंतर्गत कर्म का सिद्धांत महत्वपूर्ण है। सत्य और असत्य कर्म से ही बंधन और मुक्ति होती है। संसार में कर्म की प्रधानता मानी है। जैन धर्म की आधार मीमांसा से संबद्ध त्रिरत्न की व्याख्या दी गई है, जो जीव को कर्मफल से मुक्ति दिलाने का माध्यम माना गया है। 1- सम्यक श्रद्धा, 2-सम्यक ज्ञान और 3- सम्यक चरित्र। अत: उक्त तीनों के पालन से मुक्ति संभव मानी गई है। जैन धर्म और हिंदू धर्म के देवी-देवताओं में समानता थी। जैन साहित्य की छठी सदी में पूजे जाने वाले लोकप्रिय देवताओं का पता चलता है, जिनमें इन्द्र सर्वप्रमुख था ब्रह्मा, अग्नि, सूर्य, लोकपाल, यश पूजा, नाग पूजा, वृक्ष पूजा, पीपल वृक्ष की पूजा प्राकृतिक रूप में और वृक्ष की आत्मा के रूप में जैन धर्म में प्रचलित थे। जैन धर्म में अहिंसा में विश्वास त्रिरत्न तपस्या का महत्व पंचमहाव्रत है। जैन धर्म के अनुसार कर्मबंधन से आत्मा को मुक्ति दिलाने के लिए पाँच महाव्रत को जीवन में अपनाना चाहिए। ये पाँच महाव्रत अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह हैं। निर्वाण मार्ग, वर्ण व्यवस्था, संबंधित सिद्धांत आदि सिद्धांतों को प्रमुखता से जीवन में धारण करने का उपदेश दिया है।

आनंदघन-बनारसीदास, रूपचंद, जीवाराम, भागचंद, ध्यांतराय जैसी उच्च कोटि के कवि थे तो दूसरी तरफ हेमचंद्राचार्य, यशोविजय और आत्मानंद जैसे दार्शनिक आध्यात्मिक कवि विद्वान भी हुए हैं। प्राचीन जैन साहित्य में प्रबंध काव्य काव्य, चरित काव्य , एवं रासो ग्रंथों के साथ-साथ मुक्तक काव्यों की भी रचना की है। डॉ. प्रेम सागर जैन लिखते हैं कि *''भक्तिकालीन जैन भक्त कवियों ने बावनी, शतक, बत्तीसी और छत्तीसी आदि रूपों में अपने भाव अभिव्यक्ति किए हैं। जैन के संस्कृत-प्राकृत साहित्य में ऐसी रचनाएँ उपलब्ध नहीं हैं। अजैन हिंदी कवियों में इनका प्रणयन कम ही हुआ है। बारहखड़ी के अक्षरों को लेकर सीमित पदों में काव्य रचना करना जैन कवियों की अपनी विशिष्टता है।''*

आदिकाल दसवीं शती से चौदवीं शती तक वीरगाथा काल के अनुसार ही हिंदी जैन साहित्य का प्रार्दुभाव माना जाता है। श्रीकामता प्रसाद जैन के अनुसार, *''उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्व मध्यकाल से नवयुग काल का आरंभ हो जाता है और वह अब भी वर्तमान है।''* इस प्रकार आदि काल में धर्म और वीर गाथाओं को लेकर रासो साहित्य का प्रचलन शुरू हुआ। महापंडित राहुल सांकृत्यायन महाकवि पुष्पदंत से अधिक प्रभावित थे। पुष्पदंत अपभ्रंश के दूसरे कवि 10वीं शताब्दी में हुए थे। उनकी तीन रचनाएँ मिलती हैं- महापुराण, नयकुमार चरिउ तथा जसहर-चरिउ। पुष्पदंत ने प्रकृति का सरस वर्णन किया है। पुष्पदंत की साहित्य रचना शुद्ध धार्मिक भाव से हुई है। पुष्पदंत अपभ्रंश भाषा के श्रेष्ठ कवि माने जाते हैं। महापुराण इनका प्रसिद्ध ग्रंथ है, जिसमें 63 महापुरुषों की जीवन घटनाओं को वर्णन का विषय बनाया गया है। ग्यारहवीं शती के प्रमुख कवियों में धनपाल तथा मुनि श्री चंद का नाम प्रमुखता से आता है। धनपाल की रचना भविष्यतकहा में मनुष्य हृदय की अत्यंत मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है, इसमें एक वणिक की कथा को स्वाभाविक घटनाओं के द्वारा हृदय की अनेक घात-प्रतिघातों की अभिव्यक्ति में पूर्णता सफल हुआ है। धनपाल की यह रचना चरित्र काव्यों की एक नई कड़ी है, जिसका प्रभाव आदिकालीन हिंदी रचनाओं पर भी पड़ा है। 12वीं शताब्दी के जिनदत्त सूरि का उपदेशरसायन रास का उल्लेख प्रमुखता से मिलता है। 80 पदों का यह नृत्य गीत काव्य हिंदी के आदिकालीन रासो काव्य के रूप में विकसित हो गया। अपभ्रंश दोहा काव्य परंपरा भी सुचारू रूप से चल रही थी। 13वीं शताब्दी की रचनाओं में कवि लक्खण कृत अणुनय रयण पईव उल्लेखनीय ग्रंथ है। श्री विनयचंद्र कृत 'उवस्समाला कहायण छप्पई' भी इसी शती की महत्वपूर्ण रचना है, जो छप्पय छंद में लिखा गया है। चौदहवीं शताब्दी की रचनाएँ प्राय: शुद्ध अपभ्रंश की हैं। कवि श्रीधर के रचे हुए बहुत-से ग्रंथ इसी काल के हैं, जिनमें प्रमुख हैं वद्धमाण चरिउ, भविष्य दत्त कथा, चंद्रप्रभ चरिउ शांतिजिन चरिउ और श्रुतावतार। इसी शताब्दी के जैनाचार्य मेरुतुंग के संस्कृत ग्रंथ 'प्रबन्धचिन्तामणि' में प्राचीन हिंदी के दोहे कहीं-कहीं दिए गए हैं। आदिकालीन जैन कवियों ने चरित काव्य की सुंदर परंपरा का आरंभ

किया। कथा काव्यों में प्रमुखता से हिंदू देवी-देवताओं जैसे रामचरितमानस, महाभारत के प्रसिद्ध पात्रों को आधार बनाया गया, जिसके कारण अन्य धर्म के अनुयायी हिंदू धर्म से परिचित हुए। जैन मत के संस्थापक ऋषभदेव का श्रीमद्भागवत में विवरण प्राप्त होता है। डॉक्टर गणपतिचंद्र गुप्त जैन साधु श्री शालिभद्र सूरि द्वारा रचित भरतेश्वर बाहुबली रास से हिंदी में रासो काव्य परंपरा की शुरुआत मानते हैं। इसको इन्होंने हिंदी और अपभ्रंश के मध्य की संधि रेखा माना है। हिंदी साहित्य के विकास की प्रारंभिक अवस्था जब हिंदी भाषा का स्वरूप भी विकसित नहीं हुआ, उस समय धर्म के कारण हिंदी साहित्य समृद्ध हुआ। साधु-संतों ने अपने-अपने धर्म के प्रचार के लिए जनमानस की भाषा को अपनाया, जिससे धर्म का प्रचार-प्रसार लोक में व्याप्त हो सके । इनमें साधु, संत बौद्ध धर्म के अनुयायी, जैन साधक, नाथपंथी एवं सिद्ध प्रमुख थे। राम कुमार वर्मा हिंदी साहित्य के विकास में इन जैन साधुओं के योग को स्वीकार करते हुए कहते हैं, *''वास्तव में हिंदी साहित्य की उत्पत्ति और विकास में जैन धर्म का बहुत हाथ रहा है। अपभ्रंश में ही जैन के मूल सिद्धांतों की रचना हुई है। अपभ्रंश का विकास हिंदी में होने के कारण हिंदी की प्रथमावस्था में भी इन सिद्धांतों पर रचनाएँ हुईं। अतएव भाषा विज्ञान की दृष्टि से ही नहीं, वरन हिंदी के प्रारंभिक रूप का सूत्रपात करने में भी जैन साहित्य का महत्व है।''* देवसेन नामक प्रसिद्ध जैन आचार्य ने श्रावकाचार नामक काव्य की रचना की। इन्होंने अपभ्रंश में दब्ब-सहाव-पयास नामक काव्य लिखा। श्रावकाचार में 250 दोहों में श्रावक धर्म का प्रतिपादन किया गया है। इसका एक उदाहरण देखिए-

''जो जिण सासण भाषियउ, सो मई कहियउ सारू।
जो पालइ सइ भाउ करि, सो सइ पावइ पारु।''

इसी प्रकार आसगु ने चंदनबालारास 35 छंदों का एक लघु खंड काव्य की रचना की है। 1209 ईस्वी में रची 'स्थूलभद्र रास' काव्य की रचना जिनिधर्म सूरि ने की है। इसकी भाषा का मूल रूप हिंदी ही है। इसकी भावभूमि और अभिव्यंजना काव्य के सर्वथा अनुकूल है। 'रेवंतगिरी रास' विजयसेन सूरि द्वारा रचित काव्य कृति है। इस काव्य में तीर्थंकर नेमिनाथ की मूर्ति और रैवतगिरी पर्वत का वर्णन है। इस प्रकार आदिकालीन जैन साहित्य का हिंदी साहित्य में वर्णन मिलता है। जैन संप्रदाय के युवा कवि और लेखक मुनि श्री विद्याविजय ने जैन धर्म व समाज को अपनी प्रतिभा एवं निष्ठा से गौरवान्वित किया है। प्राचीन काल से जैन धर्म से प्रभावित होकर उसकी आधार भूमि पर कितने ही ग्रंथों का निर्माण किया गया है। इनमें कुछ दार्शनिक हैं तो बहुत-सी रचनाएँ धार्मिक तथा साहित्यिक भी हैं। जैन दर्शन की विचारधारा दर्शनिकों की भाँति साहित्यकार को भी प्रभावित करती है। फलस्वरूप साहित्यकार विविध स्रोतों, भिन्न-भिन्न धाराओं में फुटकर साहित्य का रूप धारण करते हैं। इस दर्शन की सत्य, अहिंसा व प्रेम की पवित्र त्रिवेणी साहित्य सृजन की प्रेरणा देती है। अत: इसके प्रसिद्ध तीर्थंकरों की उदात्त चरित्रों को प्रभावपूर्ण ढंग से इन तथ्यों को सुनिश्चित करके साहित्य लिखा गया है। आधुनिक युग के साहित्यकारों ने भी जैन कवियों, धर्म के इन्हीं प्रमुख तत्वों व चरित्रों को ग्रहण कर अपना विशिष्ट योगदान दिया है। जैन धर्म के योगदान को अनेक क्षेत्रों में विभाजित किया जाता सकता है। मुख्य रूप से जैन धर्म आम लोगों और पंथों की सहायता करने पर केंद्रित है। जैन धर्म का योगदान और प्रभाव साहित्यिक निर्माण, दार्शनिक विकास, राजनीति पर प्रभाव, सामाजिक परिवर्तन और जैन धर्म की कलात्मक और स्थापत्य विरासत के माध्यम से प्रकट हुए हैं। साहित्य में उनकी रचनाएँ प्राकृत भाषा में भी मिलती हैं, जो आधुनिक समाज में उनके कुछ सबसे महत्वपूर्ण कार्यों का वर्णन मिलता है। जैन कवियों की हिंदी सेवा अद्वितीय है। हिंदी साहित्य की आध्यात्मिक चेतना को जागृत रखने में जैन साहित्य की दार्शनिक संवेदना की भूमिका महत्वपूर्ण है। हिंदी के भक्तिकाल की समृद्धि में भी जैन कवियों, आचार्यों- संतों का योगदान महत्वपूर्ण है। इस काल के प्रमुख जैन कवि भट्टारक सकल, ब्रह्मजिन दास, बनारसी दास समय सुंदर, भूधर दास, ज्ञान सागर हैं। जिनहर्ष आदि ने भक्ति की सरल धाराएँ प्रवाहित कीं। जैन साहित्य में छंदों का शास्त्रीय विश्लेषण करने वाले ग्रंथों की भी रचना की गई है। स्वयंभू कृत स्वयंभू छंद, हेमचंद कृत छंदोनुशासन तथा हेमचंद्रशब्दानुशासन आदि ग्रंथों का भी वर्णन मिलता है।

निष्कर्ष : इस प्रकार जैन कवियों ने हिंदी साहित्य को समृद्ध किया है। जैन कवियों ने अहिंसा, त्याग, करुणा जैसे मूल्यों के कारण यह धर्म हिंदू धर्म से अधिक निकट है। जैन कवियों ने अपने धर्म से संबंधित जैन महापुरुषों के चरित्र, काव्यों के साथ-साथ हिंदू धर्म के प्रसिद्ध जीवन चरित्रों का जैसे राम-कृष्ण को अपनी कथा का आधार बनाया है तो जैन कवियों ने शृंगार, शौर्य, नीति ,अन्योक्ति संबंधी फुटकर ग्रंथ भी लिखे हैं। इस प्रकार हिंदी साहित्य परंपरा को समृद्ध करने वाले प्रमुख जैन कवियों का योगदान अविस्मरणीय है। इस संबंध में डॉ. नगेन्द्र के अनुसार- *''पश्चिमी क्षेत्र में जैन संघों ने अपने मत का प्रचार हिंदी कविता के माध्यम से किया। इन कवियों की रचनाएँ आचार रास , फाग चरित्र आदि विभिन्न शैलियों में मिलती हैं।''* ❑

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. हिंदी साहित्य का इतिहास-आचार्य रामचंद्र शुक्ल, श्री प्रकाशन, पृष्ठ संख्या-28
2. हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक-इतिहास डॉ. राम कुमार वर्मा, पृष्ठ संख्या-69
3. हिंदी साहित्य का इतिहास-संपादक डॉ. नगेंद्र, मयूर प्रकाशन, पृष्ठ संख्या-46
4. हिंदी साहित्य का इतिहास-आचार्य रामचंद्र शुक्ल, श्री प्रकाशन, पृष्ठ संख्या-30
5. हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास-डॉ राम कुमार वर्मा
6. हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास-बच्चन सिंह, राधाकृष्णन प्रकाशन, पृष्ठ संख्या 37
7. जैन धर्म का इतिहास- कैलाश चंद जैन, डीके प्रिंट वर्ल्ड प्राधिकरण लिमिटेड, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-147
8. आधुनिक हिंदी जैन साहित्य-डॉ. सरोज के वोहरा, भारतीय कला प्रकाशन, दिल्ली 2000, पृष्ठ संख्या-34
9. हिंदी साहित्य का इतिहास-आचार्य रामचंद्र शुक्ल, श्री प्रकाशन, पृष्ठ संख्या-29
10. हिंदी साहित्य का इतिहास-संपादक डॉ. नगेंद्र, मयूर प्रकाशन, पृष्ठ संख्या-47

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

भाषा

उपवाक्य व्यवस्था : हिंदी के संदर्भ में

डॉ. राजवीर सिंह

प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष,
नवीकरण एवं भाषा प्रसार विभाग,
केंद्रीय हिंदी संस्थान
आगरा-282005
एवं पूर्व क्षेत्रीय निदेशक
केंद्रीय हिंदी संस्थान क्षेत्रीय केंद्र,
गुवाहाटी (असम)
9457483513/8279696633
rajveersinghkhs@gmail.com

वाक्य भाषा की लघुतम सार्थक इकाई है, जो किसी भाव, विचार या संदेश को व्यक्त करने में सक्षम होती है। रचना की दृष्टि से एक क्रिया पदबंध वाले वाक्य 'सरल' वाक्य कहलाते हैं तथा एक से अधिक क्रिया पदबंधों वाले वाक्य 'जटिल' वाक्य कहलाते हैं; जैसे –

(क) कक्षा के सब छात्र मैच देख रहे हैं।

(ख) मैं अपना काम कर रहा हूँ।

(ग) मैं अपना काम कर रहा हूँ तथा कक्षा के सब छात्र मैच देख रहे हैं।

(घ) कक्षा अध्यापक को मालूम है कि कक्षा के सब छात्र मैच देख रहे हैं।

(ङ) कक्षा अध्यापक को मालूम है कि कक्षा के सब छात्र मैच देख रहे हैं तथा मैं अपना काम कर रहा हूँ।

इन पाँचों वाक्यों में पहला और दूसरा वाक्य सरल वाक्य हैं तथा तीसरा, चौथा और पाँचवाँ वाक्य जटिल (संयुक्त तथा मिश्र) वाक्य हैं। इन सभी जटिल वाक्यों की रचना एक से अधिक (रेखांकित) सरल वाक्यों से मिलकर हुई है। जटिल वाक्यों की रचना में आने वाले ये (रेखांकित) सरल वाक्य ही उपवाक्य कहलाते हैं।

उपवाक्य वाक्य से छोटी इकाई है। वाक्य एक उपवाक्य का भी हो सकता है तथा एक से अधिक उपवाक्यों का भी हो सकता है। उपवाक्य किसी वाक्य का वह भाग होता है, जिसमें प्रत्यक्ष रूप से या अप्रत्यक्ष रूप से उद्देश्य और विधेय दोनों अंग विद्यमान होते हैं तथा उसका अपना अर्थ होता है। सरल वाक्य में गठन की दृष्टि से एक ही उपवाक्य होता है अर्थात् जहाँ एक उपवाक्य स्वतंत्र रूप में होता है, वस्तुत: वह सरल वाक्य ही होता है। यदि हम इसी सरल वाक्य को दूसरे सरल वाक्य के साथ जोड़कर एक ही वाक्य बना दें, तो यह सरल वाक्य ही एक उपवाक्य कहलाता है। उदाहरणार्थ – 'मेरा भाई मोहन बीमार है।'– एक सरल वाक्य है।

दूसरा उदाहरण है– 'मेरा भाई मोहन बीमार है, इसलिए वह आज विद्यालय नहीं आएगा।' भी एक वाक्य है, लेकिन इस वाक्य में दो उपवाक्य हैं– (i) 'मेरा भाई मोहन बीमार है' (ii) 'वह आज विद्यालय नहीं आएगा'। सामान्यत: एक

सरल वाक्य और 'अकेला स्वतंत्र उपवाक्य' एक ही है। एक उपवाक्य में कम से कम एक संज्ञा वाक्यांश/संज्ञा पदबंध (उद्देश्य) तथा एक क्रिया वाक्यांश/क्रिया पदबंध (विधेय) की सत्ता होती है।

'उपवाक्य पदबंधों से मिलकर बनने वाली एक ऐसी रचना है, जो व्याकरणिक दृष्टि से एक स्वतंत्र अभिव्यक्ति भी हो सकती है तथा दूसरे उपवाक्य पर आश्रित अभिव्यक्ति भी हो सकती है।'

जिस जटिल वाक्य में सभी उपवाक्य समान स्तर के तथा स्वतंत्र होते हैं, वह संयुक्त वाक्य कहलता है। जिस जटिल वाक्य में एक उपवाक्य प्रधान या मुख्य उपवाक्य होता है तथा अन्य उपवाक्य उस पर आश्रित होते हैं, वह मिश्र वाक्य कहलता है। एक मिश्र वाक्य में आने वाले सभी आश्रित या गौण उपवाक्य मिश्र वाक्य के प्रारंभ में, मध्य में तथा अंत में तीनों ही स्थानों पर आ सकते हैं; जैसे-

(क) जो खिलौना पिताजी ने बच्चे को दिया था, वह टूट गया। (आरंभ में)

(ख) वह खिलौना जो पिताजी ने बच्चे को दिया था, टूट गया। (मध्य में)

(ग) वह खिलौना टूट गया, जो पिताजी ने बच्चे को दिया था। (अंत में)

जटिल वाक्यों में आने वाले इन उपवाक्यों के पारस्परिक संबंध के आधार पर इनके दो भेद हो सकते हैं- (i) स्वतंत्र उपवाक्य तथा (ii) आश्रित उपवाक्य।

जो उपवाक्य अपने अर्थ या मंतव्य को पूर्णत: व्यक्त करने के लिए किसी दूसरे उपवाक्य पर आश्रित न हो, वह स्वतंत्र उपवाक्य कहलाता है। स्वतंत्र उपवाक्य प्राय: मुख्य या प्रधान उपवाक्य भी कहलाता है। एक स्वतंत्र उपवाक्य व्याकरणिक दृष्टि से पूर्ण तथा अर्थ की दृष्टि से स्वतंत्र होता है, किसी अन्य उपवाक्य पर आश्रित नहीं होता, बल्कि समान स्तर का होता है; जैसे-

(क) मैंने एक किताब पढ़ी।

(ख) इस कक्षा में पचास छात्र पढ़ते हैं।

(ग) यात्री गाड़ी में बैठ गए।

ये तीनों ही वाक्य स्वतंत्र उपवाक्य हैं। सभी स्वतंत्र उपवाक्य सरल वाक्य होते हैं। इसीलिए स्वतंत्र उपवाक्यों को सरल उपवाक्य भी कहा जा सकता है। अत: संयुक्त वाक्य के उपवाक्यों को समानाधिकृत या समानाधिकरण उपवाक्य भी कहा जा सकता है।

जो उपवाक्य अपने अर्थ या मंतव्य को पूर्णत: व्यक्त करने के लिए किसी दूसरे उपवाक्य पर आश्रित होता है, वह आश्रित उपवाक्य कहलता है। एक आश्रित उपवाक्य व्याकरणिक दृष्टि से स्वतंत्र नहीं होता, अपितु किसी दूसरे उपवाक्य पर आश्रित होता है। आश्रित उपवाक्य को गौण उपवाक्य भी कहा जाता है।

मिश्र वाक्यों के अंतर्गत आने वाले सभी आश्रित या गौण उपवाक्य संरचना तथा प्रकार्य की दृष्टि से तीन प्रकार के होते हैं- (i) संज्ञा उपवाक्य, (ii) विशेषण उपवाक्य तथा (iii) क्रिया विशेषण उपवाक्य।

1. संज्ञा उपवाक्य :

जो उपवाक्य मुख्य उपवाक्य/प्रधान उपवाक्य की किसी संज्ञा या संज्ञा पदबंध के बदले आता है, वह संज्ञा उपवाक्य कहलाता है। अर्थात् जो मुख्य उपवाक्य में संज्ञा पद या संज्ञा पदबंध का काम करते हैं, वे संज्ञा उपवाक्य कहलाते हैं। संज्ञा पदबंध के स्थान पर जब कोई उपवाक्य आता है, तो उसे संज्ञा उपवाक्य कहा जाता है। सामान्यत: संज्ञा उपवाक्य के पहले 'कि' का प्रयोग होता है तथा कभी-कभी 'कि' का लोप भी हो जाता है; जैसे

(क) मुझे विश्वास है कि आप दीपवाली पर घर अवश्य आएँगे। (कि का प्रयोग)

(ख) तुम नहीं आओगे, मैं अच्छी तरह जानती थी। (संज्ञा उपवाक्य के पहले 'कि' का लोप)

(ग) रहीम ने बताया कि मैं कल डिब्रुगढ़ जाऊँगा। (बताना क्रिया का कर्म)

(घ) जान पड़ता है कि माता जी कुछ अस्वस्थ हैं। (जान पड़ता है, क्रिया का उद्देश्य)

(ङ) इनसे यह मत पूछिए कि ये कौन हैं। (यह का पूरक)

(च) मुझे विश्वास है कि आप अवश्य आएँगे। (विश्वास का समानाधिकरण)

(छ) पिताजी ने कहा कि वे बहुत बीमार हैं। (कहना क्रिया का कर्म)

2. विशेषण उपवाक्य :

जो उपवाक्य वाक्य में प्रयुक्त संज्ञा पद की विशेषता बताते हैं, विशेषण उपवाक्य कहलाते हैं; जैसे – तुम्हारा वह एलबम कहाँ है, जिसमें तुम्हारे बचपन के फोटो लगे हुए हैं। (एलबम संज्ञा पद का विशेषक) हिंदी में जो (जिस, जिसे, जिसको, जिसमें, जिसपर, जिसका तथा जिसके लिए आदि) वाले उपवाक्य प्राय: विशेषण उपवाक्य होते हैं। विशेषण उपवाक्य अधिकतर वाक्य के प्रारंभ में या अंत में प्रयुक्त होते हैं तथा कुछ विशेषण उपवाक्य वाक्य के मध्य में भी प्रयुक्त होते हैं; जैसे –

(क) जो लड़का कल यहाँ आया था, वह बहुत बीमार है। (वाक्य के आरंभ में)

(ख) वह लड़का बहुत बीमार है, जो कल यहाँ आया था। (वाक्य के अंत में)

(ग) वह लड़का, जो कल यहाँ आया था, बहुत बीमार है। (वाक्य के मध्य में)

अन्य उदाहरण :

1. आपकी वह पुस्तक कहाँ है, जो आप दिल्ली पुस्तक मेले से लाए थे। (वाक्य के अंत में)
2. जो आदमी पत्र बाँटता है, वह डाकिया होता है। (वाक्य के आरंभ में)
3. जिसे आप ढूँढ रहे हैं, वह मैं नहीं हूँ। (वाक्य के आरंभ में)
4. जो पैसे मुझे मिले थे, वे खर्च हो गए। (वाक्य के आरंभ में)
5. वे पैसे खर्च हो गए, जो मुझे मिले थे। (वाक्य के अंत में)
6. मेरे पास एक खिलौना है, जो बैटरी से चलता है। (वाक्य के अंत में)
7. जिसे आप जानते ही नहीं, उससे क्या बात करेंगे। (वाक्य के आरंभ में)
8. जिन लोगों ने तुम्हें सलाह दी थी, अब उन्ही के पास जाओ। (वाक्य के आरंभ में)
9. उसी से अपनी किताब माँगिए, जिसे आपने दी थी। (वाक्य के अंत में)
10. जो लड़का कल यहाँ आया था, मेरा छोटा भाई है। (वाक्य के आरंभ में)
11. जो नीली कमीज पहने है, उस लड़के को बुलाओ। (वाक्य के आरंभ में)
12. उस लड़के को बुलाओ, जो नीली कमीज पहने है। (वाक्य के अंत में)
13. कुछ लोग जो आपसे मिलना चाहते हैं, बाहर खड़े हैं। (वाक्य के मध्य में)

3. क्रिया विशेषण उपवाक्य :

जो उपवाक्य मुख्य/प्रधान उपवाक्य की क्रिया की विशेषता बताता है, वह क्रिया विशेषण उपवाक्य कहलाता है। क्रिया विशेषण उपवाक्य भी क्रिया विशेषण शब्दों की तरह ही क्रिया की विशेषता बताते हैं, अर्थात् क्रिया के घटित होने के समय, स्थान, रीति, कारण, दिशा तथा परिणाम आदि की सूचना जिन उपवाक्यों के माध्यम से मिलती है, वे क्रिया विशेषण

उपवाक्य कहलाते हैं। क्रिया विशेषण उपवाक्य अव्यय उपवाक्य भी कहलाते हैं। क्रिया विशेषण उपवाक्य कभी-कभी मुख्य उपवाक्य की क्रिया के अलावा उसके किसी 'विशेषण' या 'क्रिया विशेषण' की भी विशेषता बतलाते हैं; जैसे- 'यदि तुम मेहनत करोगे', तो प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हो जाओगे।

इस मिश्र वाक्य में दो उपवाक्य हैं (i) 'यदि तुम मेहनत करोगे' तथा (ii) 'प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हो जाओगे।' मुख्य/प्रधान उपवाक्य है तथा 'यदि तुम मेहनत करोगे' आश्रित उपवाक्य है। यह आश्रित उपवाक्य क्रिया विशेषण का काम कर रहा है, इसलिए यह क्रिया विशेषण उपवाक्य है। अन्य उदाहरण दृष्टव्य हैं–

1. जब मैं गुवाहाटी में रहता था, तब बहुत मेहनत करता था। (समय सूचक)
2. जब आप मिलेंगे, तब सब कुछ बता दूँगा। (समय सूचक)
3. जहाँ हम रहते थे, वहाँ अब कोई नहीं रहता। (स्थान सूचक)
4. मैं भी वहीं जा रहा हूँ, जहाँ से आप आए हैं। (स्थान सूचक)

5. जैसा मैं कहूँ, वैसा ही करो। (रीति सूचक)
6. जैसा वह गाती है, वैसा कोई नहीं गाता। (रीति सूचक)
7. वह इतना कमजोर है कि चल भी नहीं सकता। (कमजोर विशेषण का विशेषक)
8. वह इतना बेईमान हो गया है कि सबको धोखा देता है। (बेईमान विशेषण का विशेषक)
9. अध्यापक इतनी जल्दी बोलता है कि कुछ भी समझ में नहीं आता। (जल्दी क्रिया विशेषण का विशेषक)
10. गाड़ी इतनी तेज चल रही थी, जैसे हवाई जहाज हो।

इन वाक्यों में वाक्य सं. 7 में आश्रित उपवाक्य 'कमजोर' विशेषण की विशेषता तथा वाक्य सं. 8 में आश्रित उपवाक्य 'बेईमान' विशेषण की विशेषता बता रहा है। इसी प्रकार वाक्य सं. 9 में आश्रित उपवाक्य 'जल्दी' क्रिया विशेषण की विशेषता बता रहा है तथा वाक्य सं. 10 में आश्रित उपवाक्य 'तेज' क्रिया विशेषण की विशेषता बता रहा है। क्रिया विशेषण की विशेषता बताने के आधार पर ही क्रिया विशेषण उपवाक्यों के भी पाँच उपभेद हो जाते हैं-

1. समय/कालवाचक क्रिया विशेषण उपवाक्य :

कालवाचक क्रिया विशेषण उपवाक्य निश्चित काल तथा काल अवधि की सूचना देते हैं; जैसे -

(क) जब मैं स्टेशन पहुँचा, तब रेलगाड़ी प्लेटफार्म पर खड़ी थी।
(ख) जब दूध में उबाल आ जाए, तभी उसे उतार लेना ठीक है।
(ग) जब वर्षा हो रही थी, तब हम लोग पेड़ के नीचे खड़े थे।
(घ) जब-जब मैं इनसे मिलने गया, तब-तब ये मुझे पड़ते हुए मिले।
(ङ) जब आपका फोन आया था, मैं नहा रहा था।

2. स्थानवाचक क्रिया विशेषण उपवाक्य :

स्थानवाचक क्रिया विशेषण उपवाक्य स्थिति की तथा गति की सूचना देते हैं; जैसे -

(क) जहाँ आपका मकान है, वहाँ शायद एक पुराना पेड़ था।
(ख) जिधर यह बस जा रही है, उधर ही रेलवे स्टेशन है।
(ग) जहाँ वे रहते हैं, वहीं एक मंदिर भी है।
(घ) यह वही जगह है, जहाँ आपने झंडा फहराया था।
(ङ) जिधर से शब्द आया था, उधर ही राजा दशरथ ने तीर चला दिया।
(च) जहाँ तुम्हारे बड़े भाई राम गए हैं, वहीं तुम भी जाओ।

3. रीति वाचक क्रिया विशेषण उपवाक्य :

रीति वाचक क्रिया विशेषण उपवाक्य क्रिया की रीति की सूचना देते हैं। रीतिवाचक क्रिया विशेषण उपवाक्य प्राय: जैसे, जैसी, जैसा, ज्यों (मानो, मानहुँ कविता में) आदि शब्दों से प्रारंभ होते हैं; जैसे-

(क) जैसा अध्यापक कहे, वैसा ही करना।
(ख) बच्चों ने वैसा ही किया, जैसा उनसे कहा गया था।
(ग) जैसा मैं चाहता हूँ, वैसा ही होता है।
(घ) जैसा खाना माँ पकाती है, वैसा कोई नहीं पका पाता।
(ङ) वह ऐसे बोलता है, मानो वहाँ का बादशाह हो।

4. परिमाण वाचक क्रिया विशेषण उपवाक्य :

परिमाणवाचक क्रिया विशेषण उपवाक्य 'परिमाण' की सूचना देते हैं। ये उपवाक्य ज्यों-ज्यों, जैसे-जैसे, जहाँ तक, जितना कि आदि शब्दों से आरंभ होते हैं;

(क) जैसे-जैसे व्यक्ति की आमदनी बढ़ती जाती है, वैसे-वैसे उसका खर्च भी बढ़ता जाता है।
(ख) तुम जितना पढ़ोगे, उतना ही तुम्हें लाभ होगा।
(ग) ज्यों-ज्यों वह बड़ा हो रहा है, त्यों-त्यों बिगड़ता जा रहा है।
(घ) जितना तुम मुझसे चाहते हो, उतना मैं कर नहीं पाऊँगा।
(ङ) जितना तुम दान करोगे, उतना ही तुम्हें पुण्य मिलेगा।

5. कार्य कारण वाचक या परिणाम वाचक क्रिया विशेषण उपवाक्य :

ये उपवाक्य कार्य का कारण या परिणाम बताते हैं। ये उपवाक्य यदि, क्योंकि, यद्यपि, ताकि, जिससे कि, चूँकि, जो अगर, चाहे कैसा/कितना आदि शब्दों से आरंभ होते हैं। कार्यकारण वाचक क्रिया विशेषण उपवाक्यों के साथ तो, तोभी, किंतु, तथापि, इसलिए, इतना, फिर भी, परंतु आदि शब्द आते हैं; जैसे-

(क) वह नहीं मानेगा, क्योंकि वह स्वार्थी है।
(ख) वह जाएगा जरूर, क्योंकि उसका कल साक्षात्कार है।

(ग) मैं कल बैठक में नहीं आ सकता, क्योंकि मैं बीमार हूँ।
(घ) यदि मैंने कड़ी मेहनत की होती, तो अवश्य प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हो जाता।
(ङ) यदि मैं उसके कहने के अनुसार चलता, तो निश्चय ही अनुत्तीर्ण हो जाता।
(च) मैंने ऐसा इसलिए किया है, ताकि/जिससे कि आपका भ्रम दूर हो जाए। ङ यद्यपि तुम मोटे-ताजे हो, तो भी मुझसे जीत नहीं पाओगे। उपवाक्य के भेद और उपभेदों को इस आरेख के माध्यम से भी समझा जा सकता है –

स्वतंत्र अभिव्यक्ति हो सकती है तथा उपवाक्य पर आश्रित अभिव्यक्ति भी हो सकती है। स्वतंत्र उपवाक्यों को ही सरल वाक्य भी कहा जा सकता है। अपने अर्थ या मंतव्य को पूर्णत: व्यक्त करने के लिए जो उपवाक्य दूसरे उपवाक्य पर आश्रित होता है, वह आश्रित/गौण उपवाक्य कहलाता है। आश्रित/गौण उपवाक्य संरचना तथा प्रकार्य की दृष्टि से तीन प्रकार (संज्ञा उपवाक्य, विशेषण उपवाक्य तथा क्रिया विशेषण उपवाक्य) के होते हैं। सामान्यत: संज्ञा उपवाक्य के पहले 'कि' का प्रयोग होता है तथा कभी-कभी 'कि'

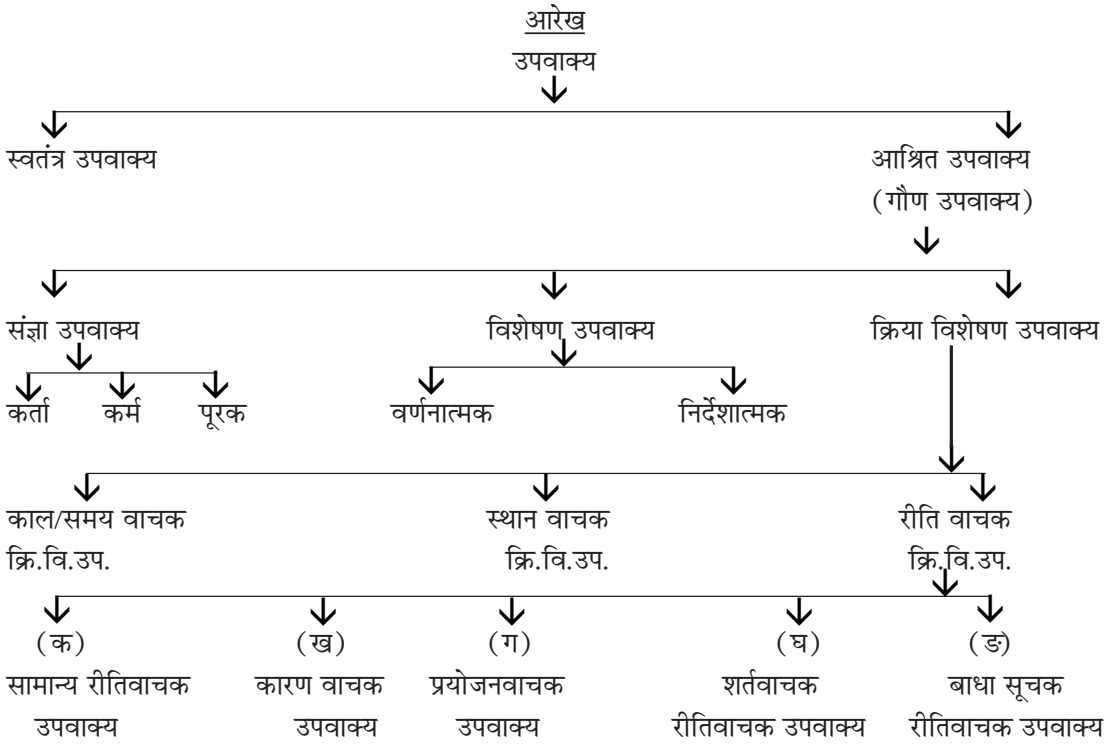

निष्कर्ष :

उपर्युक्त विश्लेषण के आधार पर निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि उपवाक्य वाक्य से छोटी इकाई है। वाक्य एक उपवाक्य का भी हो सकता है तथा एक से अधिक उपवाक्यों का भी हो सकता है। उपवाक्य वाक्य का वह भाग होता है, जिसमें प्रत्यक्ष रूप से या अप्रत्यक्ष रूप से उद्देश्य और विधेय दोनों अंग विद्यमान होते हैं तथा उसका अपना अर्थ होता है। उपवाक्य पदबंधों से मिलकर बनने वाली ऐसी रचना है, जो व्याकरणिक दृष्टि से एक का लोप भी हो जाता है। विशेषण उपवाक्य अधिकतर वाक्य के आरंभ में या अंत में प्रयुक्त होते हैं तथा कुछ विशेषण उपवाक्य वाक्य के मध्य में भी प्रयुक्त होते हैं। क्रिया विशेषण उपवाक्य मुख्य/प्रधान उपवाक्य की क्रिया की विशेषता बतलाता है। क्रिया विशेषण उपवाक्य कभी-कभी मुख्य क्रिया के अलावा उसके किसी 'विशेषण' या 'क्रिया विशेषण' की भी विशेषता बतलाते हैं क्रिया विशेषण की विशेषता बताने के आधार पर ही क्रिया विशेषण उपवाक्यों के भी पाँच उपभेद हो जाते हैं। ❑

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. अग्रवाल, कैलाश चन्द्र: आधुनिक हिंदी व्याकरण तथा रचना (1976), रंजन प्रकाशन, आगरा
2. अग्रवाल, धनश्याम: हिंदी व्याकरण एवं रचना (1992), कृष्णा ब्रदर्स, अजमेर
3. गुप्त, रवि प्रकाश: बृहद् हिंदी व्याकरण (2014), अरू पब्लिकेशन्स प्रा.लि. दिल्ली
4. गुप्त, रवि प्रकाश एवं सत्यार्थी कमल आदि: सरस्वती मानक हिंदी व्याकरण तथा रचना 2005), सरस्वती हाउस प्रा.लि., दिल्ली
5. गुरु कामता प्रसाद: हिंदी व्याकरण (सं. 2022), नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी
6. तरुण, हरिवंश: मानक हिंदी व्याकरण और रचना (2011), प्रकाशन संस्थान, ल्ली
7. तिवारी, भोलानाथ: हिंदी व्याकरण की वाक्य संरचना (1996), राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
8. तिवारी, भोलानाथ: हिंदी भाषा की वाक्य संरचना (2000), साहित्य सहकार, दिल्ली
9. दीम शित्स, ज.म. हिंदी व्याकरण की रूप रेखा (1996), राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
10. प्रसाद, स्नेह लता : (सं) शिक्षार्थी व्याकरण और व्यावहारिक हिंदी (2003) राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली
11. शर्मा, राम जन्म: (सं) केंद्रिक हिंदी व्याकरण और रचना (1995), राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, दिल्ली।
12. बाहरी, हरदेव: व्यावहारिक हिंदी व्याकरण और रचना (2011) लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद।
13. पाठक, हरिशचंद्र: हिंदी भाषा का इतिहास और रचना (2004), तक्षशिला प्रकाशन दिल्ली
14. बाजपेई, किशोरी दास: हिंदी शब्दानुशासन (सं0 2023), नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

चिंतन

आधुनिक सभ्यता एवं स्वामी विवेकानंद : एक बहुआयामी परिप्रेक्ष्य पर सर्वांगीण विचार-दृष्टि

डॉ. ब्रजेश कुमार प्रसाद

सहायक प्रोफेसर, इतिहास विभाग
काशी हिंदू विश्वविद्यालय
वाराणसी, उत्तर प्रदेश, भारत
पिन कोड 221005
9559561761
muchajoy@gmail.com

शोध-संक्षेप :

स्वामी विवेकानंद का दृष्टिकोण आधुनिक सभ्यता के विभिन्न पहलुओं पर गहन और बहुआयामी रहा है। उनकी विचारधारा में आध्यात्मिकता, नैतिकता और सामाजिक सुधार को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। विवेकानंद ने आधुनिक सभ्यता की भौतिक उन्नति को स्वीकारते हुए इसके नैतिक और आध्यात्मिक पतन पर गहरी चिंता व्यक्त की। उनके अनुसार, भौतिक समृद्धि के साथ-साथ आध्यात्मिक और नैतिक मूल्यों का संतुलन आवश्यक है। उन्होंने समाज में व्याप्त असमानता, जातिवाद, और अंधविश्वास के खिलाफ आवाज उठाई और तर्कशीलता, विज्ञान और शिक्षा को बढ़ावा दिया। उनके विचारों में मानवता की सेवा, राष्ट्र निर्माण और विश्व बंधुत्व का संदेश प्रमुखता से दिखाई देता है। इस शोध पत्र का उद्देश्य स्वामी विवेकानंद के विचारों के माध्यम से आधुनिक सभ्यता के विभिन्न पहलुओं का विश्लेषण करना है। इसमें उनके जीवन, शिक्षाएँ और उनके द्वारा प्रस्तावित सुधारों को प्रमुखता से प्रस्तुत किया गया है। यह शोध विवेकानंद के विचारों की प्रासंगिकता और आधुनिक समाज में उनके योगदान को रेखांकित करता है, जिससे वर्तमान समय की चुनौतियों का समाधान खोजा जा सके।

बीज-शब्द :

सभ्यता, आध्यात्मिकता, नैतिकता, उन्नति, मूल्य, तर्कशीलता, मानवता सेवा, राष्ट्र निर्माण, विश्व बंधुत्व।

प्रस्तावना :

आधुनिक सभ्यता ने विज्ञान, तकनीक और आर्थिक उन्नति के क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति की है। इसने जीवन स्तर में सुधार लाने, स्वास्थ्य सेवाओं को बेहतर बनाने, और सामाजिक संरचनाओं में महत्वपूर्ण परिवर्तन करने में अहम भूमिका निभाई है। इसके परिणामस्वरूप भौतिक सुविधाएँ और जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि हुई है। लेकिन इस प्रगति के साथ-साथ नैतिकता, आध्यात्मिकता और पारंपरिक सामाजिक मूल्यों में गिरावट भी देखी गई है। इस संदर्भ में स्वामी विवेकानंद के विचार अत्यंत महत्वपूर्ण और प्रासंगिक हैं।

स्वामी विवेकानंद का दृष्टिकोण आधुनिक सभ्यता की भौतिक उन्नति को स्वीकार करता है, लेकिन साथ ही इसके नैतिक और आध्यात्मिक पतन पर गहरी चिंता व्यक्त करता है। उनका मानना था कि किसी भी सभ्यता की स्थिरता और दीर्घकालिक प्रगति के लिए भौतिक और आध्यात्मिक मूल्यों के बीच संतुलन आवश्यक है। उन्होंने इस संतुलन को प्राप्त करने के लिए आध्यात्मिकता, नैतिकता और तर्कशीलता को महत्वपूर्ण बताया। विवेकानंद ने भारतीय समाज में व्याप्त असमानता, जातिवाद और अंधविश्वास के खिलाफ आवाज उठाई और विज्ञान, तर्कशीलता, और शिक्षा को बढ़ावा दिया।

स्वामी विवेकानंद का जीवन और उनकी शिक्षाएँ हमें यह समझने में मदद करती हैं कि कैसे हम आधुनिक सभ्यता की चुनौतियों का सामना कर सकते हैं और एक संतुलित, नैतिक और आध्यात्मिक समाज की स्थापना कर सकते हैं। उनके विचारों में मानवता की सेवा, राष्ट्र निर्माण और विश्व बंधुत्व का संदेश प्रमुखता से दिखाई देता है। उन्होंने भारतीय संस्कृति और आध्यात्मिकता को पुनर्जीवित करने के साथ-साथ पश्चिमी तर्कशीलता और वैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपनाने पर जोर दिया।

इस शोध पत्र का उद्देश्य स्वामी विवेकानंद के विचारों के माध्यम से आधुनिक सभ्यता के विभिन्न पहलुओं का विश्लेषण करना और उनके द्वारा प्रस्तावित समाधानों की प्रासंगिकता को उजागर करना है। विवेकानंद के विचार न केवल उनके समय में प्रासंगिक थे, बल्कि वर्तमान समय की चुनौतियों का समाधान खोजने में भी महत्वपूर्ण हैं। उनका दृष्टिकोण आधुनिक सभ्यता के लिए एक मार्गदर्शक सिद्धांत प्रस्तुत करता है, जो भौतिक और आध्यात्मिक प्रगति के बीच संतुलन बनाने का प्रयास करता है।

भूमंडलीकरण के इस दौर में बाजार हमारे जीवन पर हावी हो चुका है। संसार सिमटता जा रहा है। भौतिकता की ओर हमारी बढ़ती आसक्ति ने नैतिक मूल्यों को हाशिए पर पहुँचा दिया है। साध्य को पाने के लिए साधन की शुचिता को हम महत्वहीन बना चुके है। विश्व में बढ़ती हुई हिंसात्मक घटनाएँ इसका प्रमाण हैं। ऐसा केवल राजनीति के क्षेत्र में नहीं हो रहा है, पर्यावरण, समाज, संस्कृति के क्षेत्र में भी ऐसा ही हो रहा है। विकास के नाम पर प्रकृति का विनाश किया जा रहा है। इस नई व्यवस्था में हम विकल्पहीन होते जा रहे हैं।

कालजीवी होकर ही कालजयी हुआ जा सकता है। स्वामी विवेकानंद की विशेषता उनके कालजीवी होने में है। उनके विचार उनकी देशकाल की समीक्षा की देन है। यही कारण है कि आज परिस्थितियों की जटिलता ने स्वामी विवेकानंद को अत्यन्त प्रासंगिक बना दिया है।

स्वामी विवेकानंद का जन्म 1863 में हुआ था। 1881 में वे अपने गुरु रामकृष्ण से मिले थे। गुरु का सान्निध्य उन्हें मात्र 5 वर्षों का मिला। 1886 में उनके गुरु रामकृष्ण की मृत्यु हो गई। उनकी मृत्यु के बाद उनके सारे कार्यों की जिम्मेदारी विवेकानंद पर आ गई। इस जिम्मेदारी के निर्वहन के लिए पहले वे दो बार भारत-भ्रमण पर निकले। पहली बार 1888 में और दूसरी बार 1891 में। इन दोनों भ्रमणों से जहाँ उन्हें भारत की उन्नत आध्यात्मिक परंपरा एवं समृद्ध सांस्कृतिक एकता का ज्ञान हुआ, वहीं उन्हें भारत की अज्ञानता, दरिद्रता, निर्बलता, निराशा और रोग-शोक का भी ज्ञान हुआ। फलतः इन भ्रमणों के बाद वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि यदि भारत को फिर से अपनी आध्यात्मिक और सांस्कृतिक विरासत को हासिल करना है तो उसे पहले अपनी दरिद्रता और निर्बलता पर विजय पाना होगा। उन्हें अपने गुरु के शब्द याद आए कि ''धर्म भूखे लोगों के लिए नहीं है।'' इसलिए उन्होंने सबसे पहले भारत की गरीबी दूर करने का निश्चय किया और इसके लिए उन्हें जो मार्ग दिखाई पड़ा वह पश्चिम से विनिमय करना था। उन्होंने कहा, ''मैं सारे भारत में घूम चुका हूँ पर हे बन्धुओं! यह मेरे लिए दारुण कष्ट था, मैंने जनसाधारण की भयंकर निर्धनता और पीड़ा को अपनी आँखों से देखा और मैं अपने आँसू न रोक सका। अब यह मेरा दृढ़ विश्वास है कि बिना पहले उनकी गरीबी और कष्ट दूर किए, उनमें धर्म का प्रचार करना व्यर्थ है। इसी कारण दरिद्र भारत की मुक्ति के साधन जुटाने के लिए मैं अब अमेरिका जा रहा हूँ।'' *(मॉर्निंग स्टार, 31 जनवरी, 1926) अमेरिका जाने के पीछे उनका उद्देश्य वहाँ वेदांत की शिक्षा देकर भारत के लिए धन जुटाना था। यह विनिमय था। पश्चिम से*

आध्यात्मिक ज्ञान के बदले भौतिक संपदा की प्राप्ति करना। 1893 में शिकागो के सर्वधर्म सम्मेलन में भाग लेने वे इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए गए थे।[1]

विवेकानंद के ऐसा करने की वजह उनका पश्चिम की भौतिक सभ्यता के प्रति आकर्षित होना था। उन्हें पश्चिम से उम्मीद थी, यद्यपि कि वे पहले पश्चिम कभी गए नहीं थे। पश्चिम के बारे में वे जो कुछ भी जानते थे, वह वहाँ के विद्वानों को पढ़कर ही। अपने छात्र जीवन में उन्होंने मिल, स्पेंसर, शेली, वड्र्सवर्थ और हेगेल आदि विद्वानों को गंभीरता से पढ़ा और उनसे काफी प्रभावित हुए थे। इसलिए तब वे केवल संशयवादी नहीं थे, बल्कि नास्तिक भी थे। यद्यपि रामकृष्ण से मुलाकात के बाद उनका संशय और उनकी नास्तिकता पूरी तरह मिट गई थी, परंतु संभवत: उन पाश्चात्य विद्वानों के प्रभाव की कोई सूखी रेखा उनके जेहन में बची रह गई थी, जो उन्हें पश्चिम के प्रति आशान्वित किए हुए थी। उन्हें लगा था कि पश्चिम उनकी मदद करेगा। वे वहाँ से विनिमय करने में सफल होंगे। आध्यात्मिक ज्ञान के बदले भौतिक संपदा जुटा सकेंगे। इसलिए जब वे शिकागो गए तो वहाँ की शक्ति की समृद्धि से अभिभूत होकर वहाँ की प्रशंसा करने लगे। उनके जीवनीकार रोमां रोलां इस संबंध में लिखते हैं- *''पहले तो वह बच्चों की तरह आँखें फाड़े, मुँह बाए शिकागो की औद्योगिक विश्व प्रदर्शनी में चक्कर काटते रहे। हर वस्तु उन्हें आश्चर्य में डालने वाली, विस्मयकारी थी। उन्होंने पाश्चात्य जगत की शक्ति, समृद्धि और आविष्कार क्षमता की ऐसी कल्पना कभी ना की थी। रवींद्र नाथ ठाकुर और महात्मा गाँधी की तुलना में, जो यूरोपीय-अमेरिकी, विशेषरूप से अमेरिका की विक्षिप्त गति और शोर-शराबे से त्रस्त थे, विवेकानंद शक्ति के प्रति अधिक आकर्षित थे। इसलिए कम-से-कम प्रारंभ में तो उन्हें यह सहज लगा। बारह दिनों तक उनकी आँखें इस नई दुनिया को सराहती रहीं।''*[2]

इस सराहना के पीछे विवेकानंद का पश्चिमी लोकतंत्र और यंत्रों के अत्यधिक उपयोग से भी प्रभावित होता था। तभी तो वह पश्चिम से यंत्रवाद की शिक्षा लेने के हिमायती थे। वह वहाँ की सामाजिक श्रेष्ठता और स्त्रियों की स्वतंत्रता के भी प्रशंसक थे। इसलिए उन्होंने अमेरिकियों के आध्यात्मिकता में निम्न होने के उनके समाज को श्रेष्ठ माना था। रोमां रोलां का इस संबंध में कहना है- "उनकी दृष्टि में पश्चिमी देश भौतिक ही नहीं, बल्कि सामाजिक और नैतिक उपलब्धियों का भी महत्व था। वह लोकतंत्र में अंतर्निहित उस समता की प्रशंसा से मुग्ध थे, जिसमें एक ट्रामगाड़ी में एक लखपति और साधारण मजदूरि साथ-साथ धक्का-मुक्की करते हैं। इसे उन्होंने जरूरत से ज्यादा महत्व दिया। इसके अतिरिक्त उन्होंने अनेकानेक अमेरिकी स्त्रियों की उच्च बौद्धिक उपलब्धियों और उनकी स्वतंत्रता के सदुपयोग की प्रशंसा की। उन्होंने विविध प्रकार से पश्चिमी सामाजिक श्रेष्ठता को स्वीकार किया, क्योंकि वे चाहते थे कि देशवासी उनके लाभ उठाएँ। इसमें कहीं भी उनका जातीय स्वाभिमान आड़े नहीं आया।''

विवेकानंद पश्चिम से केवल लेने के पक्ष में नहीं थे, उसे कुछ देना भी चाहते थे और वह अध्यात्म था। वह चाहते थे कि पश्चिम से हम विज्ञान की शिक्षा लें और बदले में उसे अध्यात्म की शिक्षा दें। वह एक विनिमय चाहते थे, समान स्तर पर। उन्होंने भारत भ्रमण और पश्चिम

यात्रा में यह देख लिया था कि भारत दुखी और निर्धन है, जबकि पश्चिम सुखी और संपन्न। परंतु साथ-साथ उन्होंने यह भी देखा था कि भारत शांत और संतुष्ट है, जबकि पश्चिम अशांत और असंतुष्ट। इसलिए उन्हें लगा कि मानव और विश्व का कल्याण तभी हो सकता है, जब भारत पश्चिम की तरह समृद्ध और पश्चिम भारत की तरह शांत हो। यह आपसी लेन-देन से संभव हो सकता है। इसलिए उन्होंने कहा, *''पश्चिम से हम यंत्रवाद की शिक्षा ले सकते हैं और भी कई बातें अच्छी हैं, जिन्हें पश्चिम से ग्रहण करना आवश्यक दिखता है। किंतु हमें उन्हें कुछ सिखाना है। हम उन्हें धर्म और आध्यात्मिकता की शिक्षा दे सकते हैं। पश्चिम वालों से हमें एक विनिमय करना है। धर्म और आध्यात्मिकता के स्तर की चीजें हम उन्हें देंगे और बदले में भौतिक साधनों का दान हम सहर्ष स्वीकार करेंगे।''*[3] विवेकानंद का यही कथन उनके धर्म और विज्ञान के विचार का आधार बना।

परंतु सैद्धांतिक स्तर पर इस विनिमय की संगति के बावजूद व्यावहारिक स्तर पर यह विनिमय नहीं हो पाया। भारत ने जरूर पश्चिम से यंत्र और विज्ञान की शिक्षा ली और अब भी ले रहा है, परंतु पश्चिम ने भारत से धर्म और आध्यात्म की शिक्षा नहीं ली। तब भी नहीं, जब विवेकानंद इसका प्रयास कर रहे थे। इसलिए पश्चिम की प्रथम यात्रा से लौटते समय वह खिन्न और उदास थे। भारत की दरिद्रता दूर करने के लिए जिस भौतिक संपदा के लिए वह पश्चिम गए थे, वह उन्हें नहीं मिली। यह सफलता उन्हें 1899 में भी नहीं मिली, जब वह 1897 में पहली यात्रा से भारत लौटने के बाद दूसरी बार पश्चिम की यात्रा पर गए। यद्यपि इस यात्रा का घोषित उद्देश्य धर्म प्रचार के लिए वहाँ शुरू किए गए कार्यों की समीक्षा करना था, लेकिन उसकी पृष्ठभूमि में भारतीयों के लिए धन इकठ्ठा करने का उद्देश्य भी शामिल था। मगर इस बार भी उनकी सारी प्रसिद्धि, सारी सफलताएँ उन्हें मात्र तीस करोड़ की राशि नहीं दिला सकी, जो वह भारत के भौतिक पुनरुद्धार के लिए चाहते थे। अत: उनकी निराशा स्वाभाविक थी। वह धर्म के बदले जिस धन के लिए वहाँ गए थे, वह उन्हें नहीं मिला।

लेकिन इस बार इतना जरूर हुआ कि पश्चिमी सभ्यता से उनका मोहभंग हो गया। वैसे यह मोहभंग उन्हें प्रथम यात्रा में ही होने लगा था। मगर इस बार वह इस आधुनिक सभ्यता का असली चेहरा बखूबी पहचान गए थे। इसलिए उन्हें इससे वितृष्णा-सी होने लगी थी। रोमां रोलां उनके इस मोहभंग के बारे में लिखते हैं -*''वह पाश्चात्य साम्राज्यवादी की खूनी और घृणा से भरी आँखों में आँखें डालकर देख चुके थे। उन्होंने अनुभव किया कि पहली यात्रा में वह अमेरिका और यूरोप के लोकतंत्र की सतही बातों, उसकी शक्ति और संगठन क्षमता के छलावे में आ गए थे। इस बार उन्होंने उसमें छिपी पैसा बटोरने की ललक, अपना वर्चस्व स्थापित करने के लिए भीषण संघर्ष और उसके विकराल गठबंधनों को समझ लिया था। भौतिक समृद्धि अब उन्हें धोखा न दे सकी। उन्होंने देखा कि आत्मशक्ति के निरर्थक अपव्यय के नीचे पीड़ा और छिछोरे चेहरे के पीछे गहरा संताप छिपा हुआ है।''*[4]

इस प्रकार विवेकानंद की पश्चिम की दो यात्राओं और उनकी परिणतियों पर नजर डालने के बाद यह साफ हो जाती है कि अपने आरंभिक दिनों में विवेकानंद पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित थे। इसलिए उसी के आधार पर निर्मित समाज व्यवस्था यहाँ भी चाहते थे। वहाँ की शक्ति और समृद्धि उन्हें आकर्षित करती थी और वह चाहते थे कि वैसी ही शक्ति और समृद्धि भारत को भी प्राप्त हो। परंतु अपने अंतिम दिनों तक वह इस प्रभाव और आकर्षण से बंधे नहीं रहे। इन दो यात्राओं में पश्चिमी समाज और आधुनिक सभ्यता का असली चेहरा उनके सामने आ गया। ऊपर से साफ-सुथरा दिखने वाले इस चेहरे के पीछे एक गंदा, वीभत्स चेहरा था। एक ऐसा क्रूर और अमानवीय चेहरा, जो अपने हित के लिए किसी का भी किसी हद तक नुकसान पहुँचा सकता है, शोषण कर सकता है।

यदि पृथ्वी पर कोई ऐसा देश है, जिसे हम धन्य, पुण्यभूमि कह सकते हैं, यदि ऐसा कोई स्थान है, जहाँ पृथ्वी के सब जीवों को अपना कर्मफल भोगने के लिए आना पड़ता है, यदि ऐसा कोई स्थान है, जहाँ भगवान की ओर उन्मुख होने के प्रयत्न में संलग्न रहने वाले जीवमात्र को अंतत: आना होगा; यदि ऐसा कोई देश है, जहाँ मानवजाति की क्षमा, धृति, दया, शुद्धता आदि सद्वृत्तियों

का सर्वाधिक विकास हुआ है और यदि ऐसा कोई देश है, जहाँ आध्यात्मिकता तथा सर्वाधिक आत्मान्वेषण का विकास हुआ है तो वह भूमि भारत ही है।''[5]

अमेरिका और इंग्लैंड में मैं बहुत बार केवल अपनी वेशभूषा के कारण भी प्राय: आक्रांत किया गया हूँ। पर भारत में मैंने ऐसी बात कभी नहीं सुनी कि भीड़ किसी मनुष्य की वेशभूषा के कारण उसके पीछे पड़ गई हो। अन्य सभी बातों में हमारी जनता यूरोप की जनता की अपेक्षा कहीं अधिक सभ्य है।''[6]

पाश्चात्य देशों में स्त्री को पत्नी की दृष्टि से देखा जाता है। वहीं स्त्री में पत्नीत्व की कल्पना की जाती है; परंतु इसके विपरीत प्रत्येक भारतीय नारी में मातृत्व की कल्पना करता है। पाश्चात्य देशों में गृह की स्वामिनी और शासिका पत्नी है। भारतीय गृहों में घर की स्वामिनी और शासिका माता है। पाश्चात्य गृह में यदि माता हो भी तो उसे पत्नी के अधीन रहना पड़ता है, क्योंकि गृह-स्वामिनी पत्नी है। हमारे घरों में माता ही सब कुछ है। पत्नी को उसकी आज्ञा का पालन करना चाहिए। आदर्श की भिन्नता से दोनों घरों में कितना अंतर हो जाता है।

''भारतीय राष्ट्र कभी बलशाली-दूसरों को पराजित करने वाला- राष्ट्र नहीं बनेगा, कभी नहीं! वह कभी भी राजनीतिक शक्ति बन सकेगा, ऐसी शक्ति बनना उसका व्यवसाय ही नहीं; राष्ट्रों की संगीत-संगति में भारत इस प्रकार का स्वर कभी दे ही नहीं सकेगा। पर आखिर भारत का स्वर होगा क्या? वह स्वर होगा ईश्वर, केवल ईश्वर का। भारत उससे कठोर मृत्यु की तरह चिपटा हुआ है। इसीलिए वहीं अभी आशा है।''[7]

भावी भारत में अतीत के भारत की पुनरावृत्ति नहीं होगा। स्वामी जी कहते हैं, ''कोई अपने ग्रंथों के भारत को, अपने अध्ययन और सपनों के भारत को पुन: देखने की इच्छा भले ही कर सकता है। पर मेरी आशा फिर से उस भारत को देखने की है, जिसके अतीत की विशेषताएँ, इस युग की विशेषताओं के द्वारा विशेष से संवर्द्धित हुई हैं।'' भविष्य का भारत अतीत के भारत की अपेक्षा अनंत गुना महिमान्वित होने वाला है। स्वामी जी भविष्यवाणी करते हुए कहते हैं, *''अद्‌भुत गौरवशाली भावी भारत आने वाला है- मुझे निश्चय है कि वह आ रहा है- वह महत्तर भारत, जैसा यह पहले कभी नहीं था।''*[8]

पर इसका उपाय किया है? विवेकानंद के भाषण और लेख उस लक्ष्य की प्राप्ति के अमूल्य सुझावों से भरे पड़े हैं। *''और यदि हम अपने सपनों में सँजोए हुए भविष्य के महान भारत को प्रत्यक्ष अपनी आँखों के सामने महिमान्वित सत्य के रूप में साकार करना चाहते हैं तो स्वामी जी के सुझावों के अनुसार हमें कार्य करने होंगे।''*[9]

निष्कर्ष :

स्वामी विवेकानंद की दृष्टि में आधुनिक सभ्यता की भौतिक उन्नति के साथ-साथ इसके नैतिक और आध्यात्मिक पहलुओं पर ध्यान देने की आवश्यकता है। उन्होंने भौतिक समृद्धि के साथ-साथ सामाजिक और आध्यात्मिक सुधार को महत्वपूर्ण मानते हुए आधुनिक सभ्यता की सीमाओं और चुनौतियों को चिन्हित किया। विवेकानंद ने स्पष्ट रूप से बताया कि एक सशक्त और समृद्ध समाज केवल भौतिक संसाधनों की वृद्धि पर निर्भर नहीं हो सकता, बल्कि उसकी प्रगति की नींव नैतिकता, मानवता और आध्यात्मिक मूल्यों पर भी आधारित होनी चाहिए।

उनकी शिक्षाएँ हमें यह समझने में मदद करती हैं कि भौतिक विकास और आध्यात्मिक संतुलन के बीच का संघर्ष आधुनिक सभ्यता की मूल चुनौती है। विवेकानंद के अनुसार, आध्यात्मिक मूल्यों की अनुपस्थिति से समाज में व्याप्त असमानता, जातिवाद और अंधविश्वास जैसी समस्याएँ उत्पन्न होती हैं, जो समाज की सच्ची प्रगति को अवरुद्ध करती हैं। उन्होंने भारतीय संस्कृति और योग के माध्यम से आध्यात्मिक जागरूकता और नैतिक बल को बढ़ावा देने की आवश्यकता पर बल दिया ताकि समाज एक समावेशी और संपूर्ण विकास की दिशा में अग्रसर हो सके।

स्वामी विवेकानंद के विचार आज भी अत्यंत प्रासंगिक हैं, क्योंकि वे आधुनिक समाज की जटिलताओं और चुनौतियों को समझने के लिए एक संतुलित दृष्टिकोण प्रदान करते हैं। उनके दृष्टिकोण में भौतिक उन्नति और आध्यात्मिक संतुलन के बीच समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया गया है। उनके विचारों की यह बहुआयामी

दृष्टि आधुनिक सभ्यता के विभिन्न पहलुओं को एक समग्र परिप्रेक्ष्य में समझने की दिशा में मार्गदर्शन प्रदान करती है।

अंतत: स्वामी विवेकानंद के दृष्टिकोण के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि आधुनिक सभ्यता की स्थिरता और समृद्धि के लिए केवल भौतिक प्रगति पर निर्भर रहना पर्याप्त नहीं है। एक सशक्त और संतुलित समाज की स्थापना के लिए आध्यात्मिक और नैतिक मूल्यों की भी महत्वपूर्ण भूमिका है। विवेकानंद का संदेश हमें यह सिखाता है कि समाज की समग्र प्रगति के लिए भौतिक, नैतिक, और आध्यात्मिक विकास का समन्वय आवश्यक है। उनकी शिक्षाएँ और दृष्टिकोण न केवल उनके समय में, बल्कि वर्तमान युग में भी एक मार्गदर्शक के रूप में कार्यरत हैं, जो हमें आधुनिक सभ्यता की चुनौतियों का सामना करने और एक समृद्ध और नैतिक समाज की दिशा में अग्रसर होने में सहायता करती हैं। ❑

संदर्भ ग्रंथ :

1. योजना, अंक-1(जनवरी 2012). पृ. 66
2. रोलां, रोमां, स्वामी विवेकानंद की जीवनी, पृ. 30. कोलकाता : अद्वैत आश्रम, 2000
3. वही, पृ0 60-61
4. दिनकर, रामधारी सिंह, सस्कृति के चार अध्याय, पृ. 510, इलाहाबाद : लोक भारती प्रकाशन, 2005
5. वही, पृष्ठ 116-117
6. रंजन, राजीव, युगद्रष्टा विवेकानंद, पृ. 176, नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन, 2011
7. वही, पृष्ठ 177
8. वही, पृष्ठ 178.
9. विदेहात्मानंद, स्वामी., संपा. स्वामी विवेकानंद और उनका अवदान, पृ. 222, कोलकाता : अद्वैत आश्रम, 2008

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

नारी उत्पीड़न का यथार्थ : तिरिया चरित्तर

डॉ. पूजा शर्मा

अस्थायी व्याख्याता, हिंदी विभाग
दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा निदेशालय
जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू-180006
मो. 9055384937
ps15121987@gmail.com

शोध-सार :

नारी के प्रति समाज की प्राय: संकुचित मानसिकता ही देखने को मिलती है, जिसके अनुसार नारी निर्दोष होकर भी दोषी ही मानी जाती है। विशेष रूप से नारी चरित्र की बात करें तो उसके चरित्र पर शीघ्रता से शंका की जाती है। इस पितृ सत्तात्मक समाज में पुरुष को तो अपने चरित्र का प्रमाण नहीं देना पड़ता, लेकिन नारी से सदैव सच्च चरित्रता का प्रमाण माँगा जाता है। विडंबना तो यह है कि नारी के प्रमाण देने पर भी उसे दोषी मान सजा सुनाई जाती है। शिवमूर्ति ग्रामीण जीवन के कथाकार हैं, इसलिए अपने लेखन में उन्होंने विशेषकर ग्रामीण जीवन की कुरीतियों व पितृ सत्तात्मक समाज की विकृतियों को उजागर किया है। इसी परिप्रेक्ष्य में शिवमूर्ति द्वारा रचित 'तिरिया चरित्तर' कहानी का मूल्यांकन करें तो इसमें प्रमुख नारी पात्र 'विमली' के जीवन संघर्ष के माध्यम से लेखक ने ग्रामीण नारी के उत्पीड़न की यथार्थता को व्यक्त किया है। नारी शोषण के विविध पहलुओं- शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक, शोषण को प्रकट करती यह कहानी समाज को आत्मचिंतन तथा नारी के प्रति अपनी संकुचित मानसिकता व व्यवहार को बदलने का संदेश देती है। अत: 'तिरिया चरित्तर' के मुहावरे को पुरुष प्रपंच के रूप में दर्शाते हुए लेखक ने ग्रामीण समाज की विद्रूपताओं व पितृ सत्तात्मक संकुचित मानसिकता पर प्रहार किया है।

बीज शब्द :

उत्पीड़न, पुरुष प्रपंच, शोषण, दगनी, अंतर्वेदना, लिंग भेद, बाल विवाह।

मूल आलेख :

ग्रामीण जीवन में रचे-बसे होने के कारण शिवमूर्ति के पास ग्रामीण जीवन के सघन अनुभव, बिंब व चित्र एकत्रित हैं, जिनके आधार पर वह अपनी कहानियों का सृजन करते हैं। ग्रामीण परिवेश को पूर्ण यथार्थ के साथ अपनी कहानियों में व्यक्त करने के कारण ही इन्हें ग्रामीण चेतना का कहानीकार कहा गया है।

इनकी कहानियों में ग्रामीण जीवन की विषमताओं, अंतर्विरोधों तथा नारी की पीड़ा को यथार्थतता के साथ व्यक्त किया गया है। नारी उत्पीड़न तो कई कोण से मुखरित हुआ है। यहाँ तक कि इनकी अधिकांशत: कहानियों के केंद्रीय पात्र स्त्री हैं।

ग्रामीण समाज में स्त्री जिन समस्याओं, रूढ़िगत परंपरा व मानसिकता का सामना कर शोषित हो रही हैं, उसी को अपनी कहानियों में चित्रित करते हुए इन्होंने भारतीय परंपरा के उस वर्चस्व को नकारा है, जो प्रत्येक परिस्थिति में नारी को ही दोषी ठहराता है। सन 1987 में रचित इनकी 'तिरिया चरित्तर' कहानी भी सदियों से नारी के प्रति बनी 'त्रिया-चरित्र' की मानसिकता को नकारती है। यह कहानी इस सत्य को सामने लाती है कि पुरुष जब 'त्रिया-चरित्र' करता है तो वह कितना नीचे गिर जाता है।

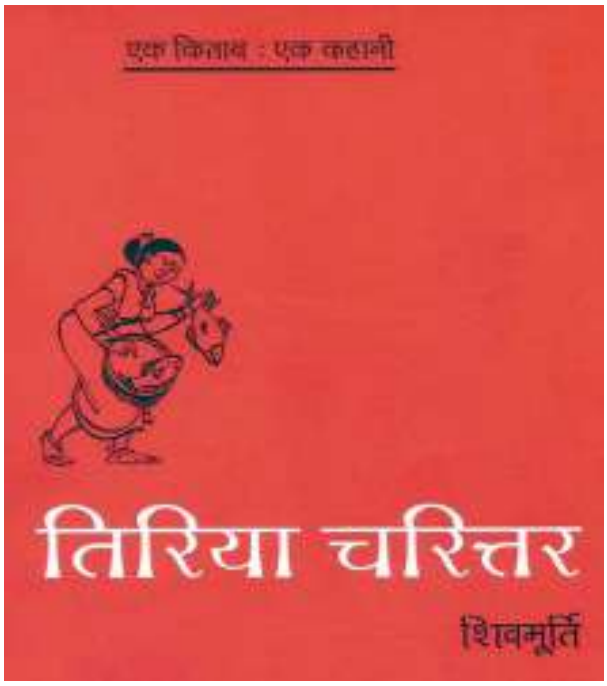

इस कहानी की मुख्य नारी पात्र 'विमली' भले ही ग्रामीण जीवन से संबंध रखती है, लेकिन उसे हम अबला नारी के रूप में नहीं, बल्कि एक संघर्षशील स्त्री के रूप में देखते हैं। कहानी के आरंभ से लेकर अंत तक वह पितृ सत्तात्मक संकुचित मानसिकता का डटकर सामना करती रही है। विमली का जीवन संघर्ष ग्रामीण समाज की संकीर्णता, अंधी पुरुषवादी पंचायत व्यवस्था तथा पितृ सत्तात्मक व्यवस्था का विरोध करती नारी के उत्पीड़न को अत्यंत संवेदनशीलता के साथ मुखरित करता है।

पुरुष को महत्व देने वाले इस भारतीय समाज की मानसिकता में समय के साथ चाहे परिवर्तन आया हो, लेकिन लिंग भेद की संकीर्ण मानसिकता आज भी पूर्णत: समाप्त नहीं हुई है। ग्रामीण समाज तो विशेष रूप से इस मानसिकता से प्रभावित है। ग्रामीण नारी को प्राय: गृहकार्य तक सीमित रखा जाता है। यदि वह गृहकार्य के अतिरिक्त पुरुष की तरह घर से बाहर निकल कार्य करने की सोचे तो समस्त ग्रामीण समाज उसके चरित्र पर लांछन लगाने से नहीं चुकता। ग्रामीण जीवन की इस मानसिकता को शिवमूर्ति 'तिरिया चरित्तर' कहानी में खंडित करते हुए दिखाते हैं। कहानी में विमली जब अपने परिवार को आर्थिक सहयोग देने हेतु भट्ठे पर कार्य करने जाती है तो पूरा गाँव विमली के इस निर्णय का विरोध करते हुए कहता है- *''दुनिया भर के चोर-चाई का अड्डा है भट्ठा। लौंडे-लपाड़े! गुंडा-बदमाश! रात-बिरात आते-जाते रहते हैं। नौ-दस साल की लड़की छोटी नहीं होती, आन्हर हो गई है बुढ़िया। ईंट पथवाएगी। 'पाथेगा' कोई ढंग से? तब समझ में आएगा।''*[1] विमली और उसकी माँ पर तो इन बातों का कोई असर नहीं हुआ, लेकिन पिता अवश्य चिंता में आ गया। बेटी के अहित का सोचकर वह विमली द्वारा भट्ठे पर काम करने का विरोध करता है, लेकिन पत्नी द्वारा वास्तविकता को समझाने पर वह शांत हो जाता है। विमली द्वारा लिंग भेदी ग्रामीण मानसिकता का खंडन करना और माता-पिता का इसमें बेटी का सहयोग देना सिद्ध करता है कि यह संकुचित मानसिकता निरर्थक तथा समाज के विकास में अवरोधक है। इसलिए इसका खंडन होना आवश्यक है। ग्रामीण मानसिकता अनुसार विमली ने स्त्री अनुचित कार्य कर लिंग भेद की रूढ़िगत मानसिकता को समाप्त करने का जो प्रयास किया, उससे मात्र उसके जीवन में ही सकारात्मक परिवर्तन नहीं हुआ, बल्कि उसके गाँव की लड़कियाँ व बहुएँ भी इस संकुचित मानसिकता को मुक्त होती हैं। परिणामत: जिस भट्ठे पर कार्य करने पर विमली को तथा उसके परिवार वालों को गाँव भर के विरोध का सामना करना पड़ा, बाद में उसी भट्ठे पर गाँव की आधी लड़कियाँ और बहुएँ मजदूरी के लिए जाती हैं। अत: लेखक विमली के माध्यम से लिंग-भेद से ग्रस्त

मानसिकता वालों के समक्ष यह उदाहरण प्रस्तुत करते हैं कि परिवार को आर्थिक सहयोग मात्र बेटा ही नहीं दे सकता, बल्कि बेटी भी परिवार का प्रत्येक दायित्व संभाल सकती है। लेखक के शब्दों में- *''दरअसल, माँ-बाप के लिए लड़का बनकर रहती है विमली!... वह नहीं चाहती कि उसके माँ-बाप लड़के के अभाव को लेकर दुखी हों! किस लड़के से कम है वह? 15-16 रुपए रोज कमाती है,... महतारी-बाप का जितना ध्यान विमली रखती है, इतना तो इस गाँव में किसी का लड़का भी नहीं रखता।''* [2] अत: लेखक ने विमली के माध्यम से यह सिद्ध कर दिया है कि लंग-भेद जैसी मानसिकता निरर्थक है। क्योंकि जिस पुरुष भट्ठे पर कार्य करने से गाँव वाले उसकी असुरक्षा का दावा करते हैं, उसी भट्ठे पर पुरुषों के मध्य कार्य करते हुए भी विमली अपने दामन पर दाग नहीं लगने देती।

पितृ सत्तात्मक समाज में नारी के लिए अनेक नियम, बंधन व परंपराएँ हैं, जिनके सहारे उसके हृदय को दरकिनार कर समाज उसे अपने अधीन रखता है। बाल-विवाह भी समाज का ऐसा ही बंधन है। बालपन में ही बेटी का विवाह कर उसके अबोध हृदय को अपरिचित व्यक्ति से बांध देना नारी के मनोभावों को दमित करता है। माता-पिता तो बेटी का बाल-विवाह कर अपने दायित्व से मुक्त हो जाते हैं, लेकिन यह बाल-विवाह उनकी बेटी की समस्त इच्छाओं की मृत्यु कर देता है, क्योंकि बचपन में विवाह तो हो जाता है, लेकिन गौना युवावस्था में होता है। ऐसे में वह लड़की न चाहते हुए भी उस अनजान के प्रति समर्पित रहती है। चाहे उसका नारी हृदय किसी अन्य के प्रति आकर्षण व प्रेम भाव रखे, लेकिन इस विवाह बंधन के चलते वह अपनी इच्छाओं व प्रेम भावना को दमित करती रहती है। कहानी में विमली चाहे लिंग-भेद जैसी मानसिकता का खंडन करती है, लेकिन न तो वह इस बाल-विवाह को नकार पाई और न ही अपनी प्रेम भावना को स्वीकार कर सकी। नारी हृदय प्रेम की इच्छा रखता है। विमली को भी यह इच्छा रही, जो ड्राइवर बाबू से पूर्ण भी हो सकती थी, किंतु बाल-विवाह बंधन तो उसे पति से बांधता है। ऐसे में वह ड्राइवर बाबू का प्रेम व विवाह प्रस्ताव कैसे स्वीकार कर सकती थी। उसके भीतर सचेत बैठी ब्याहता नारी पग-पग पर उसे पत्नी के दायित्व का बोध करवाती है। जहाँ तक कि जिस पति को उसने युवा होने तक कभी देखा ही नहीं, उसी के नाम को वह कलाई पर गुदवाती है, *''विमली ने ठुड्डी पर तिल गौदाया है और कलाई पर सीताराम! सीताराम? भगतिन हो गई? किसी को क्या पता कि सीताराम उसके आदमी का नाम है, कितने जतन से पता लगाया है उसने अपने आदमी का नाम?''* [3] इतना ही नहीं, विमली अपने अनदेखे पति के प्रति इस प्रकार समर्पित थी कि माता-पिता द्वारा बिल्लर से उसका विवाह करवाने की बात करने पर ही वह उनका विरोध करती है। वह दूसरे विवाह हेतु दिए माँ के प्रत्येक तर्क को नकारते हुए आक्रोश में माँ से कहती है- *''कैसे सोच लिया ऐसा? जिसकी औरत उसे पता भी नहीं और तू उसे दूसरे को सौंप देगी? गाय-बकरी समझ लिया है?''* [4]

स्पष्ट है कि बचपन में बिसराम के बेटे 'सीताराम' से हुआ उसका विवाह उसके जीवन को पूर्ण रूप से बांध देता है। देखा जाए तो विमली के समक्ष कितने विकल्प थे, जिससे उसका जीवन आगामी उत्पीड़न से बच सकता था, लेकिन बाल-विवाह का बंधन विमली को स्वतंत्र अनुभव नहीं होने देता। बढ़ती उम्र के साथ वह इस बंधन के प्रति समर्पित होती चली गई। यही कारण था, जिसके चलते वह ड्राइवर तथा बिल्लर के प्रेम व विवाह प्रस्ताव को स्वीकार न कर सकी।

एक स्त्री जब माता-पिता के घर से विदा होकर ससुराल जाती है तो अनेक स्वप्न व उम्मीदें उसके साथ होती हैं। अनजान घर में एक पति ही होता है, जिसके प्रेम, विश्वास व साथ के सहारे वह अपना विगत परिवार भूलकर नए घर में सुखद व सुरक्षित अनुभव करती है। कहानी में विमली के स्वप्न और उम्मीदें तो विदाई के साथ ही टूटती हैं, क्योंकि न तो उसे विदा करवाकर उसका पति ले गया और न ही ससुराल में उसे पति का सहयोग मिला। इतना ही नहीं, पति तो घर वापिस आया ही नहीं। ससुराल में विमली की स्थिति कसाई की गाय से कम न थी, *''लेकिन पतोहू कुछ बोलती ही न थी। एकदम गूँगी। बोलती थी उसकी आँखें। लाल सूजी आँखें। टुकुर-टुकुर ताकती हुईं। उतरा मुँह! थका चेहरा! कसाई की गाय!''* [5] स्पष्ट है कि

विमली ससुराल में खुश नहीं थी। बिसराम का बेटे के बिना ही बहू को विदा करवाकर लाना, बहन को तीसरे दिन ही अपने घर से विदा कर देना तथा घर में दारू की गंध व जली बीड़ी के टुकड़े इसी ओर संकेत करते हैं कि बिसराम के संरक्षण में विमली सुरक्षित नहीं थी।

पुरुष के लिए तो नारी प्राय: भोग्य वस्तु है, जिसका भोग करना वह अपना अधिकार समझता है। पुरुष की यह भोग्य प्रवृत्ति नारी को कितनी पीड़ा देती है इसका अनुभव भी वह करना नहीं चाहता। पुरुष की इसी भोग्य प्रवृत्ति को देख यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि आखिर नारी सुरक्षित कैसे रहे। हमारे धर्म ग्रंथ तो नारी को पुरुष के संरक्षण में रहने का उपदेश देते हैं, किंतु एक स्त्री को यदि सबसे अधिक किसी से असुरक्षा है तो वह पुरुष ही है तथा आज स्थिति तो यह है कि नारी घर में सुरक्षित नहीं। कहानी में अपने अनदेखे पति को समर्पित विमली पुरुषों के मध्य भट्ठे पर कार्य करते हुए भी पुरुष की भोग्या नहीं बनी, किंतु ससुराल में अपने विलासी ससुर की हवस का शिकार उसे बनना पड़ा। विमली उन ग्रामीण नारियों का प्रतिनिधत्व करती है, जो पिता समान ससुर द्वारा शारीरिक शोषण की पीड़ा को सहती हैं। विमली अपनी वेदना को प्रकट करते हुई कहती है, *''धोखा! छल! कहाँ-कहाँ से किन-किन खतरों से बचाती आई थी वह परायी अमानत! कितने बीहड़? कितने जंगल? कितने जानवर? कितने शिकारी! और मुकाम तक सुरक्षित पहुँचकर भी लुट गई वह! मेंड़ ही खेत खा गई छल से।''*[6] स्पष्ट है कि आज नारी अपने घर में भी सुरक्षित नहीं, क्योंकि प्राय: पुरुष की भोग-वासना संबंधों की मर्यादा को तार-तार कर देती है। ऐसे में अपने घर को सुरक्षा कवच और संबंधों पर विश्वास करने वाली स्त्री प्राय: पुरुष द्वारा उत्पीड़ित होती है। आश्चर्य तो उस समय होता है, जब यह देखने को मिले कि इस पुरुषवादी समाज में नारी की पीड़ा शारीरिक शोषण पर ही समाप्त नहीं होती, बल्कि नारी द्वारा न्याय माँगने पर उसे इस संवेदनहीन पुरुषवादी न्याय व्यवस्था से अन्याय ही मिलता है। ग्रामीण नारी तो अंधी तथा पुरुष वर्चस्व वाली पंचायत व्यवस्था के चलते अधिक उत्पीड़ित होती है। यह कहानी इसी ग्रामीण पंचायत व्यवस्था का वास्तविक रूप हमारे सामने लाती है। शिवमूर्ति ने इस कहानी में जिस पंचायत व्यवस्था का चित्रण किया है, न तो वह प्रेमचंद की 'पंचपरमेश्वर' जैसी न्यायपूर्ण है, और न ही उसमें परमेश्वर का 'सत' है। 'पंचपरमेश्वर' में जिस व्यवस्था ने नारी के साथ न्याय किया, 'तिरिया चरित्तर' में वही व्यवस्था मात्र विमली पर अविश्वास ही नहीं करती, बल्कि उसके विलासी ससुर को निर्दोष साबित कर विमली को 'दगनी दागना' जैसी संवेदनशून्य सजा विलासी ससुर के हाथों दिलाती है, *''गाँव का नाक कटानेवाली, गाँव की इज्जत में दाग लगाने वाली जनाना को बेदाग नहीं छोड़ा जा सकता... तो आज अभी इसी पंचायत के बीच लोहे की कलछुल की डाँड़ी लाल करके दागने का काम बिसराम के जिम्मे। पतोहू की निगरानी करने में चूक हुई, इसकी सजा।''*[7] जिस विलासी बिसराम ने अपनी हवस के लिए विमली का शारीरिक शोषण किया, उसके द्वारा पंचायत में विमली को सजा मिलना नारी के लिए अत्यंत अन्यायपूर्ण निर्णय है। बिसराम द्वारा भरी पंचायत में विमली पर आरोप लगाते हुए अपमानित किया गया। सच्च व पवित्र चरित्र होते हुए भी उसके चरित्र पर लांछन लगाए गए, किंतु किसी ने विमली की पीड़ा को समझने का प्रयास नहीं किया, जबकि समस्त गाँव के लोग बिसराम की विलासी प्रवृत्ति से अवगत थे। विधवा 'बिरजा' सत्य जानती है, लेकिन लोक प्रश्न से डरते हुए चुप रहती है और मनतोरिया की माई ने विरोध करना चाहा तो उसका पति पंचायत से उसे घसीटते हुए घर ले गया। इस प्रकार पूरी पंचायत व्यवस्था पुरुषवादी मानसिकता के चलते विमली को ही दोषी मानती है। अंतत: विमली स्वयं इस न्याय को अस्वीकार कर अपना विरोध प्रकट करती है, *''मुझे पंच का फैसला मंजूर नहीं। पंच अन्धा है। पंच बहरा है। पंच में भगवान का 'सत' नहीं है।' मैं ऐसे फैसले पर थूकती हूँ- आ-क-थू...! देखूँ कौन माई का लाल दगनी दागता है।''*[8] विमली इस अंधी-बहरी, संवेदनहीन पंचायत व्यवस्था का विरोध तो करती है, किंतु पुरुष वर्चस्व के कारण उसके विरोध का परिणाम शून्य ही निकलता है, क्योंकि पुरुषों द्वारा जबरन विमली को पकड़कर सजा दी जाती है। विमली के दगनी दागने का जो चित्र शिवमूर्ति ने उकेरा है, वह पुरुष की अत्यंत क्रूरता को व्यक्त करता है, *''कलछुल लाल होते ही कई नौजवान पतोहू को हाथ-पैर और सिर पकड़कर लिटा देते हैं? कसकर दबाओ। जो*

जहाँ पकड़े वहीं मांसलता का आनंद ले लेना चाहता है। नोचते-कचोटते, खींचते, दबाते हाथ। पतोहू जिबह होती गाय की तरह 'अल्लाने' लगती है।...छन्न! कलछुल खाल से छूते ही पतोहू का चीत्कार कलेजा फाड़ देता है। कूदती लोथ! मांस जलने की चिरायँध! चीत्कार सुनकर एकाध कुत्ते भौंकते हैं, एकाध रोने लगते हैं।''[9] कितना वेदनापूर्ण व अमानवीय दृश्य है, जिसे देखकर कुत्ते तक भौंकने तथा रोने लगते हैं। लेकिन पौरुष का बल रखने वाले समस्त ग्रामीण मूक दर्शक बनकर यह हिंसात्मक कार्य देखते रहे।

कहानी का यह अंतिम दृश्य पाठक की संवेदना को गहराई से छुता ही नहीं, बल्कि अन्यायी पंचायत व्यवस्था पर अनेक प्रश्न चिह्न लगाते हुए आत्ममंथन करने पर विवश करता है कि आखिर नारी के साथ ही अन्याय क्यों? क्यों पुरुष प्राय: दोषी होकर भी निर्दोष साबित हो जाता है और नारी निर्दोष होकर भी सजा पाती है?

अत: 'तिरिया चरित्तर' कहानी मात्र विमली के उत्पीड़न को ही चित्रित नहीं करती, बल्कि विमली तो उन ग्रामीण नारियों का प्रतिनिधित्व करती है, जो पुरुषों की विलासी प्रवृत्ति के कारण उत्पीडित हो त्रस्त जीवन जीने को विवश हैं। शिवमूर्ति उन समस्त ग्रामीण उत्पीड़ित नारियों की वेदना को विमली के माध्यम से मुखरित करते हुए 'तिरिया चरित्तर' के मुहावरे को 'पुरुष प्रपंच' के रूप में दर्शाकर ग्रामीण समाज की विद्रूपताओं व पितृ सत्तात्मक संकुचित मानसिकता पर प्रहार करते हैं। ❑

संदर्भ :

1. शिवमूर्ति, केशर कस्तूरी, तिरिया चरित्तर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015, पृ. 86
2. वही, पृ. 80, 84
3. वही, पृ. 93
4. वही, पृ. 100
5. वही, पृ. 103
6. वही, पृ. 110
7. वही, पृ. 121
8. वही, पृ. 122
9. वही, पृ. 122-123

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

समन्वय

आधे-अधूरे की सावित्री और ङाबोङखाओ की सनाजा ओबी में एकरूपता

थोकचोम मोनिका देवी

शोधार्थी, हिंदी विभाग
मणिपुर विश्वविद्यालय
पिन : 795003
700557701
moirangchamonica93@gmail.com

प्रस्तावना :

मोहन राकेश और जी.सी. तोङब्रा लगभग एक ही समय के लेखक हैं। उन्होंने जिस तरह समाज को बहुत ही नजदीक से देखकर उसके एक-एक पक्ष को अपनी रचनाओं में उकेरा है, वैसा शायद बहुत कम ही हुआ है। विशेषत: उनके नाटक के हर पात्र बहुत ही अलग हैं, लेकिन अपने ही बहुत पास रहने वाले लगने लगते हैं। आधे अधूरे और ङाबोङखाओ दोनों ही नाटक अपने ही घर अपनी ही गलियों की कहानी लगने लगते हैं। नाटक के शुरुआती हिस्सों में दोनों सावित्री और सनाज ओबी पर दर्शक शायद ऊँगली ही उठाते हैं, लेकिन अंतिम पड़ाव तक वह ऊँगली खुद पर आकर प्रश्न उठाने लगती है कि क्या मैंने मनुष्य को वाकई तह तक जान लिया है। इन दोनों पात्रों को मुख्य बिंदु बनाकर दोनों नाटककार पहले तो हँसाते हैं, लेकिन बाद में सोचने पर भी मजबूर कर देते हैं।

बीज शब्द : आधे-अधूरे, ङाबोङखाओ, सावित्री, सनाजओबी, समाज, स्त्री।

भूमिका :

मोहन राकेश का स्थान हिंदी नाटककारों में प्रमुख है। उन्होंने अपने सैंतालिस वर्ष के जीवन काल में अनेक नाटकों की रचना की, जिनमें आषाढ़ का एक दिन, लहरों का राजहंस और आधे-अधूरे ये तीन नाटक अत्यंत प्रसिद्ध हुए। इन नाटकों में 'आधे-अधूरे' का स्थान विशिष्ट है। इसमें उन्होंने आधुनिक समाज में व्याप्त विसंगतियों और समस्याओं को उजागर करने का सफल प्रयत्न किया है। आधुनिकता के चलते समाज में आ रहे बदलावों के कारण मानवीय संबंधों में व्यापक परिवर्तन देखने को मिलता है। मोहन राकेश ने आधे-अधूरे में स्त्री-पुरुष संबंधों के विविध आयामों को उजागृत किया है, जिनके चलते एक परिवार विघटित होता चला जाता है। असफल पति के कारण पत्नी अपने जीवन को अपूर्ण समझती है। इसे पूर्ण करने की आशा में अपने परिवार की बली चढ़ाती है। *''वैवाहिक जीवन की मध्य वर्गीय विडंबनाओं के कारण परिवार का प्रत्येक व्यक्ति आधा-अधूरा रहकर अपने-अपने ढंग का संत्रास भोगते हैं।''*[1] (हिंदी साहित्य का इतिहास)

इसी तरह मणिपुरी नाट्य इतिहास क्षेत्र में जी.सी. तोङब्रा का आविर्भाव एक क्रांति है। मणिपुरी साहित्येतिहास को अन्य भाषा साहित्य के इतिहास की तरह तीन

खंडों में विभाजित किया जाता है। आदिकाल, मध्य काल और आधुनिक काल। द्वितीय विश्व युद्ध के आधार पर दो खंड : युद्ध पूर्व और युद्धोत्तर में बाँटा जाता है। जी.सी. तोङब्रा युद्ध उपरांत एक युग की तरह आते हैं। मणिपुरी नाट्य इतिहास में सामाजिक नाटकों का आधार तोङब्रा के आने से और मजबूत बनता है। मणिपुर के प्रख्यात इतिहासकार सी.एच. मनिहार के कथानुसार, *''समाज का ऐसा कोई भी पक्ष नहीं है, जिसे तोङब्रा ने न छुआ हो और हमें मीठे क्वीनेन की तरह नियमित रूप से विचार करवाया है। और इस प्रक्रिया में कई नए प्रयोग किए हैं, जिसे आज के विश्व थिएटर में देखा जा सकता है।''*[2]

उनके नाट्य विषय को लेकर मणिपुर के प्रख्यात साहित्यकार अराम्बम समरेन्द्र भी कहते हैं- *''वह मनुष्य को ध्यान से देखता है, समाज का गहन अध्ययन करता है, मुख्य बात है 'मनुष्य और जीना', मनुष्य और समाज दोनों के बीच उत्पन्न यही सब बातें नाटक का विषय हैं।''*[3]

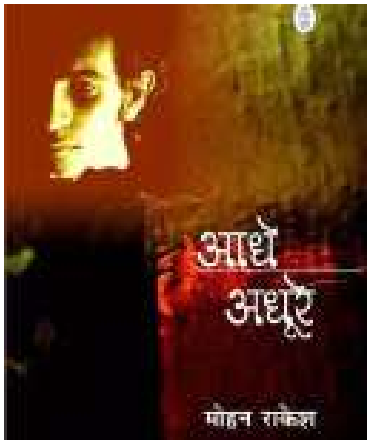

उनके विभिन्न नाटकों के अंतर्गत 'ङाबोङखाओ' 1974 में आया, जो अपने हास्य व्यंग्य की प्रधानता और गीतात्मक शैली के कारण अत्यंत लोकप्रिय हुआ। इसमें सनाजओबी एक ऐसे स्त्री के रूप में चित्रित है, जो अपना मतलब निकालने के लिए अपने पति तोमालो का इस्तेमाल करती है। तोमालो अपनी पत्नी के चंगुल में आकर बहुत दयनीय जीवन व्यतीत करता है। वह अपनी पत्नी से छुटकारा पाने के लिए छटपटाता है और उसकी पत्नी उसी की सहायता से दूसरे मर्दों को फाँसने का काम करती है। इन दो चरित्रों के संबंध में 'मणिपुर थिएटर अमदी ड्रामागी खोमजिन्बा वारेङ' नामक किताब में डॉ. लमाबम गोजेंद्र लिखते हैं, *''नाटक में बाहर से सनाजओबी को दुष्ट और चरित्रहीन औरत के रूप में और तोमालो को स्त्री चंगुल में फँसे पुरुष के रूप में दिखाने के पीछे मनुष्य की आंतरिक भावनाओं को दिखाने की कोशिश है। इसे कई अर्थों में समझा जा सकता है।''*[4]

दोनों ही नाटकों के प्रमुख स्त्री पत्रों में आधुनिक स्त्री का वह स्वरूप दिखाई देता है, जिसमें स्त्री न केवल पुरुष के बराबर अपने को स्थापित करती है, बल्कि पुरुषों को अपनी इच्छा से इस्तेमाल भी करती है। सावित्री और सनाजओबी एक तरह से पुरुष वर्चस्व को चुनौती देते हुए समाज की मर्यादाओं को तोड़कर अपना रास्ता तय करती प्रतीत होती हैं। दोनों ही नाट्य कृतियाँ भिन्न समाज और सांस्कृतिक परिवेश में रची जाने के बावजूद कुछ समान विशेषताएँ लिए हुए हैं। अत: तुलनात्मक अध्ययन के लिए दोनों नाटकों के स्त्री पात्र- सावित्री और सनाजओबी के चरित्र का विश्लेषण समीचीन है।

'आधे-अधूरे' की मुख्य स्त्री पात्र सावित्री को लेकर संपूर्ण नाटक आगे बढ़ता है। नाटक के सभी पात्र उससे संबंधित हैं। 'ङाबोङखाओ' की प्रमुख स्त्री पात्र सनाजओबी के इर्द-गिर्द तोमालो का जीवन चलता है। संपूर्ण नाटक उसी के आधार पर अग्रसित होता है। दोनों स्त्रियों को अत्यंत सुंदर स्त्री के रूप में दर्शाया गया है, जो अपने सौंदर्य से अन्य पुरुषों को फँसाने का सदैव प्रयत्न करती हैं। सावित्री को नाटक के शुरुआत में इस तरह रूपायित किया गया है, *''उम्र चालीस को छूती, चेहरे पर यौवन की चमक और चाह फिर भी शेष। ब्लाउज साधारण होते हुए भी सुरुचिपूर्ण। दूसरी साड़ी विशेष अवसरों के लिए।''*[5]

वैसे ही 'ङाबोङखाओ' नाटक में जब सनाजओबी लमलोङ बाजार के भोले दुकानदार को फँसाने के लिए बात आगे बढ़ाती है, तब अपनी पत्नी से झगड़े के बारे में बताते हुए वह सनाजओबी से कहता है कि उसकी दुकान से एक शादीशुदा औरत उधार लिया करती है, उसी को लेकर झगड़ा हुआ है। सनाजओबी उससे उस औरत के बारे में पूछती है :-

''सनाजओबी : अच्छा इसका मतलब वो उधार लेने वाली सुंदर औरत का पति भी है?

इबोयाय : जी इचेमशी, उसका पति है और सुंदरता में तो वह आपकी ही तरह अत्यंत सुंदर है।''[6]

सावित्री और सनाजओबी दोनों सुविधा भोगिनी नारी हैं। अपना मतलब निकालने के लिए वे किसी भी हद तक जा सकती हैं। उन्हें आधुनिक समाज की सुविधाओं की लालसा है। उन्हें यह भौतिक सुख किसी भी हालत में पूर्ण करना है। जयदेव तनेजा कृत 'नई रंग चेतना और हिंदी नाटककार' में व्यक्त किया गया है, *''जीवन की तमाम इच्छाओं, आकाक्षाओं और उपलब्धियों को भौतिक सुख सुविधाओं से जोड़ लिया है और इस मृग मरीचिका में फँसकर पारिवारिक संबंधों की सहज प्राप्त आत्मीयता, ऊष्मा और भावनात्मक सुरक्षा तथा आत्मिक शांति को पूरी तरह खो दिया है।''*[7]

वे अपने पति को इसे दिलाने में असमर्थ पाती है। सावित्री जहाँ एक ओर अपने पति को घर के किसी पुराने फर्नीचर की तरह व्यवहार करती है तो सनाजओबी गैर-मर्दों को फँसाने में अपने पति तोमालो का प्रयोग करती है। आधे-अधूरे का महेन्द्रनाथ अपने आपको परिवार में केवल रबर स्टैम्प की तरह पाता है तो दूसरी तरफ तोमालो को मंजीरा बताया गया है। वह गाता हुआ कहता है :-

''मंजीरा हूँ मैं मंजीरा
अंगूठे के सहारे बजता
घिस चूका है वह मंजीरा''[8]

दोनों ही वस्तु से अधिक कुछ नहीं है, जिन्हें दूसरे इस्तेमाल करते हैं। दोनों की कहीं मर्जी नहीं चलती। उनमें खुद खड़े होने का सामर्थ्य भी नहीं है। जब तोमालो अपनी पत्नी को छोड़ने का सोचता है तो वह कहती है,

''तुम्हारे लिए क्या नहीं किया है, जो तुम भागने पर तुले हो। बताओ मुझे तुम्हें क्या चाहिए, मैं तुम्हें सब दूँगी।

तोमालो : मेरे दिल में जलन-तड़प कई दिनों से है। मैं ठंडी हवा चाहता हूँ।

सनाजाओबी : तुम्हारे बिना कुछ नहीं होगा। एक्सीडेंट के बीच मुझे मरवाना चाहते हो क्या?''[9]

अपने महत्वकांक्षा को पूर्ण करने के लिए दोनों गैर-मर्दों से संबंध रखती हैं। एक तरह से अपने बच्चों की आड़ में अपनी सुविधा भोगी जीवन को सिद्ध करने की कोशिश करती हैं। वे कहती तो हैं कि वे यह सब अपने ही बच्चों के लिए कर रही हैं, लेकिन पाठकों के मन में यह प्रश्नचिह्न स्वत: आ जाता है कि क्या वाकई यह सिर्फ अपने बच्चों के लिए है। दोनों स्त्री पर-पुरुषों से संबंध बनाते हुए अपने को गलत नहीं मानतीं। सिंघानिया को घर बुलाने को सही सिद्ध करते हुए सावित्री कहती है, *''इसलिए की इस घर का कुछ हो सके। कि अकेले मेरे ऊपर बहुत बोझ है। और घर का कोई और भी मेरे साथ ढोने वाला हो सके। अगर में कुछ खास लोगों के साथ संबंध बनाना चाहती हूँ, तो खुद अपने लिए नहीं, तुम लोगों के लिए।''*[10]

इधर डाबोडखाओ में भी सनाजओबी अपने बेटों के नाम पर धनेन्द्र और सुकुमार से पैसे लेती है। दोनों को अपने बेटों का बाप बताकर उनके फीस के नाम पर पैसा वसूल करती है। जब सुकुमार साहब कई दिन दर्शन नहीं देते तो वह पूछती है कि क्या वे अपने बेटों को भूल गए हैं?

''सुकुमार : ऐसा कोई बाप नहीं जो अपने बेटों से प्रेम न करता हो। लेकिन यह विचार बार-बार आता है कि क्या वे वाकई मेरे बेटे हैं।

सनाजओबी : यह क्या कह रहे आप? आप क्यों और कैसे शक कर सकते हैं, जब यह बदसूरत बच्चा आपसे कितना मिलता-जुलता है। यह आप की ही तरह स्वार्थी है।''[11]

दोनों स्त्रियाँ पारंपरिक स्त्री चरित्र के बिल्कुल विपरीत हैं। उन्हें अपनी इच्छाएँ पूरी करनी हैं। इसकी पूर्ति वे अलग-अलग पुरुषों में ढूँढ़ती हैं। एक ही पुरुष से उनका मन नहीं भरता। किसी भी पुरुष को अपने चंगुल में फँसाने की कोशिश में रहती हैं। आधे-अधूरे नाटक के अंत में जुनेजा व्यंग्य करता है कि सावित्री को कोई भी पुरुष पूर्ण नहीं लगेगा। कुछ समय साथ रहने के बाद उसका मन भर जाता है। डाबोडखाओ का मुख्य पात्र तोमालो का दोस्त बबाहन ऐसी औरतों को समाज की बुराइयों की जड़ समझता है और सनाजओबी को मारने तक की सलाह देता है। उसके शब्द में, *''कुछ औरतें साँप जैसी होती हैं, जो मुँह में हीरा दबाकर उसकी चमक में रात को मेंढक पकड़ती हैं।*

ऐसी औरतें लोगों को बंदी बनाती हैं। इन्हीं के कारण तो समाज में भ्रष्टाचार पैदा होता है।''[12]

आधे-अधूरे की सावित्री को अपने पति के निठल्लेपन से खास असंतुष्टी है। एक सफल व्यापारी होने के कारण किया गया विवाह जब बाद में असफल हो जाता है। इच्छाएं अपूर्ण होने लगती हैं तो सावित्री अपने पति को अपूर्ण समझने लगती है। वह उसे अपने पति के रूप में सम्मान नहीं कर पाती है। ङाबोङखाओ का शाब्दिक अर्थ झोला है। सनाजओबी भी एक तरह से अपने ही पति के सामने अन्य पुरुषों संबंध बनाती है। नाटक में जगह-जगह तोमालो द्वारा अन्य पुरुषों के आगमन की सूचना देना, एक तरह से उसके पति होने पर प्रश्न चिन्ह लगाता है। क्या वह इतना असमर्थ हो गया है कि खुद उसके अनैतिक कार्यों को पूर्ण करने में मदद कर रहा है। ऊँचे पद के लिए एक तरफ सावित्री अपने ही परिवार को तोड़ती चली जा रही है तो सनाजओबी अलग-अलग पुरुषों से धन अर्जन करने में तुली है।

दोनों स्त्रियाँ एक तरह से एक ही चरित्र के दो रूप जैसी लगती हैं। वे अपना हाथ-पैर जितना भी मार लें, वे जितना भी अमीर व्यक्तियों से संबंध ही क्यों न बना लें, उन्हें वापस वही घिसी-पिटी जिंदगी ही मिल पाती है। चाहे उन्हें पर पुरुष कुछ समय के लिए खुशी दे जाए, लेकिन अंत में दोनों अपने पति के साथ ही रह जाती हैं। बच्चन सिंह के शब्दों में, *''घर की जिंदगी समेटने के प्रयास में वह और भी बिखर जाती है। अपने टूटन को समाप्त करने के लिए सिंघानिया, जुनेजा, मनोज जगमोहन के साथ संपर्क स्थापित करती है। लेकिन वे सभी आधे-अधूरे हैं। अंत में व्यक्तित्वहीन अधूरे पति के साथ शेष जिंदगी काट देने के लिए अभिशप्त हो जाती है।''*[13]

इधर सनाजओबी भी लोगों के हाथों तोमालो को बचाती है और वापस अपने साथ ङाबोङखाओ अर्थात झोले में उसे डालकर ले जाती है। दोनों स्त्रियों की यही नियति है।

मानव समाज में आदि काल से ही सबसे शक्तिशाली के जीवित रहने का नियम चलता आ रहा है। हम सावित्री और सनाजओबी में भी इस प्रवृत्ति को देख सकते हैं। दोनों औरतें अति महत्वाकांक्षी हैं। दोनों समाज के उच्च कहे जाने वाले वर्ग से जुड़ना चाहती हैं। इसकी पूर्ति के लिए ही वे ऐसे राह अपनाती हैं, जो समाज की परंपराओं से हटकर है। एक स्त्री स्त्रीत्व के साँचे में ढलने से पहले एक मनुष्य है, जिसके अंदर लालच, इच्छा, लोभ माया जैसे प्रवृत्तियाँ व्याप्त हैं। कहा जाता है मनुष्य में भी पशुत्व हमेशा से विद्यमान है, जिसको हम जीवन के अनेक हिस्सों में बाहर निकालते हैं। दोनों स्त्री खुद को प्रमुखता देते हुए जीवन के फैसले लेती हैं, जिस कारण उन्हें चरित्रहिन भी करार दिया जाता है। लेकिन यह भी आज के आधुनिक समाज में जीवित रह पाने की जद्दोजहद ही लगने लगता है। सावित्री और सनाजओबी आखिर मनुष्य ही तो हैं। ❑

संदर्भ ग्रंथ :

1. आधे-अधूरे , मोहन राकेश, राधाकृष्ण प्रकाशन, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली
2. आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास, बच्चन सिंह, लोकभारती प्रकाशन
3. खोमजिल्लबा मणिपुरी लीला मचाशीङ; अराम्बम समरेन्द्र, साहित्य अकादमी
4. ङाबोङखाओ, जी सी तोङब्रा, पद्मा प्रिंटर्स, पावना बाजार
5. मणिपुरी थिएटर अमदी द्रमागी खोमजिन्बा वारेङ; डॉ. लामाबम गोजेंद्र, राइटर्स फोरम इंफाल, लमयान्बा प्रिंटर्स
6. नई रंग चेतना और हिंदी नाटककार, जूदेव तनेजा, तक्षशिला प्रकाशन
7. साहित्य अमसुंग थिएटर, लेइमपोक्पम दामोदर, असाङबा कम्युनिकेशन, इंफाल
8. हिंदी साहित्य का इतिहास, संपादक- डॉ. नगेंद्र डॉ. हरदयाल, मयूर बुक्स
9. हिस्ट्री ऑफ मणिपुरी लिटरेचर, सी एच. मनिहार, साहित्य अकादमी
10. आधे-अधूरे, मोहन राकेश, राधाकृष्ण प्रकाशन, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली
11. ङाबोङखाओ, जी सी तोङब्रा, पद्मा प्रिंटर्स, पावना बाजार
12. ङाबोङखाओ, जी सी तोङब्रा, पद्मा प्रिंटर्स, पावना बाजार
13. आधे-अधूरे , मोहन राकेश, राधाकृष्ण प्रकाशन, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

दृष्टिकोण

हिंदी आलोचना की भारतीय परंपरा : एक वैचारिक हस्तक्षेप

विक्रम कुमार

शोधार्थी, हिंदी विभाग
राजीव गांधी विश्वविद्यालय
दोईमुख, अरुणाचल प्रदेश-791112
9532733401
vikramjhargu@gmail.com

शोध सार :

हिंदी आलोचना का स्वरूप बहुत विस्तृत है। आलोचना सम्यक लोचन के साथ ज्ञान मीमांसा की परंपरा को मूल्यांकित करती है। हिंदी आलोचना का आरंभ भारतीय विद्वान उन्नीसवीं शताब्दी के साथ मानते हैं, जबकि भारतीय ज्ञान परंपरा पर गौर करें, तब इसकी एक पूरी व्यापक परंपरा दिखाई देती है, जो आलोचना की सैद्धांतिकी को निरूपित करती रही है। आलोचना की इस परंपरा को विस्तार से देखने और समझने की जरूरत है। आलोचना का कार्य एक जिम्मेदारी है, जो रचनाओं पर पड़ी धूल को साफ करता है, आलोचना की भारतीय परंपरा और इसके महत्व को समझने की जरूरत है। यह आलेख इन्हीं सवालों को केंद्रित करके लिखा गया है।

बीज शब्द :

आलोचना, मीमांसा, लोक जागरण, समालोचना, समकालीन साहित्य, बिंबवाद, रूपवाद, संरचनावाद, अस्तित्ववाद, मनोविज्ञान, प्रतीकवाद, रूपवाद।

मूल आलेख :

आलोचना एक जिम्मेदारी है। कहते हैं अगर मल्लीनाथ न होते तो आज हम कालिदास की रचनाओं से अनभिज्ञ होते। वो मल्लीनाथ ही थे, जिन्होंने कालिदास की रचनाओं पर सम्यक लोचन-टिप्पणी की, जिसके कारण कालिदास की रचनाओं में व्याप्त जटिलता की गिरहें हमारे सामने खुलती गईं। अभिनव गुप्त ने भी कुछ इसी तरह की भूमिका ध्वनि सिद्धांत पर ध्वन्यालोचन लिखकर निभाई थी अगर वह नहीं लिखते, तब ध्वनि सिद्धांत से भी आज हम सभी अनभिज्ञ होते। आलोचना का कार्य एक जिम्मेदारी है, जो किसी रचना पर पड़ी धूल को सिर्फ साफ ही नहीं करता है, बल्कि सम्यक आलोचना के साथ समकालीन मूल्यों का चिंतन-मनन भी करता है। आलोचना का कार्य समय देखकर संपन्न नहीं होता, उसका महत्व मूल्य निर्णय के साथ उसके महत्व और प्रसांगिकता का विवेचन करना है। आलोचना को लेकर नामवर सिंह कहते हैं कि *''आलोचना का कार्य अतीत की रक्षा के साथ-साथ यह भी है कि वह समकालीनता में हो अर्थात समकालीन रचनाओं को जाँचे-परखे, मूल्य-निर्णय दे, उस पर एक आम धारणा है कि समय इसका निर्णय करेगा, यह गलत धारणा है यदि ऐसा ही है तो फिर*

आप किसलिए हैं? रचना करने वाला यह नहीं कहता कि समय रचना करेगा। वह स्वयं रचना करता है-आज, अभी! आलोचक की सार्थकता इस बात में है कि समकालीन साहित्य को उसने कितना जाँचा-परखा। आलोचना की मुख्य चुनौती समकालीन रचनाएँ ही होती हैं।''[1]

नामवर सिंह आलोचना की मुख्य चुनौती समकालीन रचनाओं से रू-ब-रू को मानते थे, साथ ही वे अतीत के सम्यक मूल्यांकन का पक्ष रखते हैं। आलोचना का यह कार्य बिल्कुल नहीं है कि वह हमारे सामने सिर्फ किसी की बुराई और अच्छाई को परोसे, बल्कि आलोचना का कार्य यह भी है कि रचना के अभिज्ञान में आने वाली कठिनाइयों का सम्यक अनुशीलन कर पाठकों के लिए सुलभ बनाए। आलोचना में रचना का अनुशीलन, उसकी प्रासंगिकता की पहचान सबसे प्रमुख है। हिंदी आलोचना पर यह आरोप हमेशा से लगता रहा है कि इसने अपनी सांस्कृतिक भूमि को छोड़कर पश्चिम के उपादानों को ज्यादा महत्व दिया है। एक प्रश्न आज भी बना हुआ है कि हिंदी आलोचना की अपनी सांस्कृतिक भूमि क्या है? सांस्कृतिक भूमि से तात्पर्य इसका आधार, इसकी परंपरा से है। क्या वाकई हिंदी आलोचना पश्चिमी सिद्धांतों और वादों का भंडारगृह बनकर रह गई है? हिंदी आलोचना का अवलोकन करें, तब यह दिखाई देता है कि भारतीय शास्त्र को हिंदी आलोचकों ने जिस तरह से विवेचित किया, ऐसा लगता है मानो हिंदी आलोचना पर विचार नहीं, बल्कि पश्चिमी अभिज्ञानों का विवेचन कर रहे हों। हिंदी आलोचना को जिस तरह पश्चिमी उपमानों से भर दिया गया है, आज हिंदी आलोचना को जब देखते हैं तो अपने-आप को एक ऐसे पहाड़ के सामने पाते हैं, जहाँ चारों ओर पश्चिमी अभिज्ञानों का बिंबवाद, रूपवाद, संरचनावाद जैसे अनेक वादों का स्वरूप हमारे सामने मौजूद है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने बहुत पहले ही इसपर टिप्पणी की थी, जो आज समीचीन प्रतीत होती है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल अपने इतिहास ग्रंथ में आलोचना की स्थिति पर टिप्पणी करते हुए लिखते हैं कि *''इधर दो-एक लेखकों की एक और प्रवृत्ति दिखाई पड़ रही है। वे यूरोप के कुछ कला संबंधी एकदेशीय और अत्युक्त मतों को सामने लाकर हिंदी वालों की आँखों में उसी प्रकार चकाचौंध उत्पन्न करना चाहते हैं, जिस प्रकार कुछ लोग वहाँ के फैशन की तड़क-भड़क दिखाकर ... वे कला संबंधी विलायती पुस्तकों की बातें लेकर और कहीं मैटरलिंक (Mater linc), कहीं गेटे (Goethe), कहीं टॉलस्टय (Tolstoy) के उद्धरण देकर अपने लेखों की तड़क-भड़क भर बढ़ाते हैं। लेखों को यहाँ से वहाँ तक पढ़ जाइए, लेखकों के अपने किसी विचार का पता न लगेगा।... समालोचना के क्षेत्र में ऐसे विचारशून्य लेखों से कोई विशेष लाभ नहीं।''*[2]

रामचंद्र शुक्ल यह बात आज से साठ वर्ष पहले ही कह चुके हैं। यह तब की स्थिति है, आज जब हम हिंदी आलोचना पर विचार करते हैं, तब देखते हैं कि स्थिति बहुत ही गंभीर है, पोस्ट मॉडर्निज्म के नाम पर भारतीय साहित्य में आज आलोचना का एक ऐसा टूल मौजूद है, जिसकी आवश्यकता बहुत ही कम थी। एक तो यह मान लिया गया कि हिंदी आलोचना का आरंभ उन्नीसवीं शताब्दी में ही विकसित हुआ है, जिससे हिंदी आलोचना की जो भारतीय जमीन है वह कहीं-न-कहीं गायब नजर आती है। आज हिंदी आलोचना की जो स्थिति है, उससे बचा जा सकता था। आज मुख्य सवाल यह भी है कि क्या वाकई में हिंदी आलोचना के लिए भारतीय शास्त्र के पास कोई टूल नहीं था? आखिर वो कौन सी वजहें थीं, जिस कारण हिंदी आलोचना का विकास भारतीय शास्त्र की केंद्रीयता से हटकर पश्चिमोन्मुख हो गया? और हिंदी आलोचना अपने प्रतिमान को पश्चिम से उठाता गया? क्या वजहें हैं जो आज हिंदी आलोचना अस्तित्ववाद, मनोविज्ञान, प्रतीकवाद, रूपवाद आदि में फँसकर रह गई है, जबकि आलोचना की परंपरा को देखें, तब इसकी परंपरा भारतीय अतीत की गहराई में व्यापक रूप से मौजूद है। आलोचना का सबसे प्रारंभिक रूप हमें संस्कृत साहित्य में देखने को मिलता है। यह बात मैं इसलिए बिल्कुल नहीं कह रहा कि जिस तरह यूरोप में एक परंपरा है कि कोई भी साहित्य-सिद्धांत अपने-आप को महत्वपूर्ण बताने के लिए ग्रीक और लैटिन से जोड़ता है, उसी प्रकार मैं भी आलोचना को संस्कृत से जोड़ रहा हूँ। हाँ, यह चलन में जरूर है, लेकिन इसका यह अर्थ बिल्कुल नहीं है कि हम अपनी पंरपरा की थाती को छोड़ दें। हिंदी आलोचना के विकास में संस्कृत का महत्वपूर्ण योगदान है। संस्कृत साहित्य में क्या लिखें, कैसे लिखें ,कब लिखें ,क्यों लिखें-इनपर काफी विस्तार से विचार-विमर्श किया गया है। काव्य, कहानी, नाटक

अनेक विधाओं के स्वरूप पर संस्कृत साहित्य में हमें विस्तार से जानकारी मिलती है, जहाँ एक मुकम्मल शास्त्र का निर्माण किया गया था। जहाँ काव्य-गुण, काव्य- दोष, रस, अलंकार, छंद, ध्वनि, वक्रोक्ति आदि पर विस्तार से लिखा गया है। हिंदी आलोचना का विकास और मानक यहीं से मिलता है। हिंदी आलोचना का प्रारंभिक स्वर हमें संस्कृत साहित्य में देखने को मिलता है, जिसे रीति काव्य के कवियों ने अंगीकार कर अपने काव्य को परिपुष्ट किया था, जिसे हिंदी आलोचकों ने पिष्टपेषण कहकर दरकिनार किया। कृष्णदत्त पालीवाल लिखते हैं, *''संस्कृत काव्यशास्त्र की 'धरोहर' के प्रति आत्मधिक्कार, हिकारत और बौद्धिक आलस्य ने भयंकर नकारवाद को जन्म दिया है। जिस रीतिवाद-कलावाद के काव्यशास्त्र को 'आचार्यों' के पुनः पाठ ने अपनाया, उसमें कोई विशेष मौलिकता नहीं है। रीतिवाद से पीड़ित काव्यशास्त्र में संस्कृत काव्यशास्त्र के रस, रीति, गुण, अलंकार, वक्रोक्ति, ध्वनि, औचित्य के सिद्धांत ही यथावत-अपरिवर्तनीय शास्त्र-बड़ता से स्वीकृत हुए। न उनका पुनर्भाष्य किया गया न पुनर्व्याख्यात्मक पाठ-विमर्श । सर्जन परंपरा की अर्थ मीमांसा और पुनः पाठ का प्रश्न ही गंभीरता से हिंदी आलोचनाशास्त्र में नहीं उठा। परिणाम यह हुआ कि हिंदी का मौलिक समीक्षाशास्त्र सौ वर्षों से भी अधिक समय से उपेक्षा का शिकार है।''*[3]

पुनर्विचार और पुनर्मूल्यांकन ही आलोचना को सर्वकालिक बनाता है। हिंदी आलोचना का आरंभिक विकास 19वीं शताब्दी से दिखाई देता है, जिसके आरंभिक नाम में भारतेंदु की भूमिका महत्वपूर्ण है। इस दौर में आलोचना का स्वरूप दिखाई देता है, वह पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से ज्यादा दिखाई देता है, जिसमें हरिश्चंद्र मैगजीन, हरिश्चंद्र चंद्रिका, भारत मित्र, ब्राह्मण आदि पत्रिकाओं ने महत्वपूर्ण योगदान दिया। भारतेंदु के आलोचनात्मक वितान में उनके एक निबंध, जो उन्होंने 1883 में 'नाटक' नाम से लिखा था, का हिंदी आलोचना में महत्वपूर्ण योगदान है। इसमें नाटक के बारे में, इसकी प्रक्रिया के बारे में विस्तार से सम्यक मूल्यांकन भारतेंदु ने किया है। भारतेंदु एक ऐसे स्तंभ हैं, जिन्होंने अपने दौर में एक ऐसे साहित्यिक समाज को निर्मित किया था, जिसने कविता, नाटक, निबंध, आलोचना के विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान सांगठनिक नेतृत्वकर्ता के तौर पर दिया था। भारतेंदु के दौर में आलोचना के क्षेत्र में जो ध्यान खींचते हैं, उसमें एक नाम बालकृष्ण भट्ट का भी है, जो साहित्य को जनसमूह के हृदय का विकास मानते थे। इनके निबंध साहित्य के बारे में जानने के लिए 'साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास' एक महत्वपूर्ण निबंध है। बालकृष्ण भट्ट सिर्फ आलोचना में ही नहीं, निबंध में भी गहराई से उपस्थिति रखते हैं। रामचंद्र शुक्ल हिंदी आलोचना के आरंभिक आलोचकों में भारतेंदु और प्रेमघन को रखते हैं। बालकृष्ण भट्ट अपनी रचनाओं से हिंदी आलोचना में हस्तक्षेप करते हैं। रामचंद्र शुक्ल से पूर्व हिंदी आलोचना की स्थिति बहुत प्रौढ़ नहीं थी, बल्कि यह अपनी शैशव अवस्था में थी। रामचंद्र शुक्ल ने आलोचना को समृद्ध किया, जिसके बाद हिंदी आलोचना की एक स्वस्थ परंपरा सम्यक रूप से दिखाई देती है। रामचंद्र शुक्ल ने हिंदी आलोचना में पैराडाइम शिफ्ट करने का काम किया है, जिसका स्रोत 'हिंदी साहित्य का इतिहास', 'चिंतामणि' और 'रसमीमांसा' की रचनाओं में दिखाई देता है, जहाँ 'कविता क्या है' और लोकमंगल की साधारणीकरण पर बात की गई है तो काव्य में लोकमंगल की अवधारणा भी रखी है। रामचंद्र शुक्ल की दृष्टि आलोचना में लोक की दृष्टि थी। रामचंद्र शुक्ल के बारे में कृष्णदत्त पालीवाल कहते हैं, *''वे प्रथम आचार्य हैं, जिन्होंने हिंदी की सैद्धांतिक समीक्षा के स्वतंत्र प्रतिमानों को विकसित किया है तथा उनकी प्रासंगिकता को व्यावहारिक साहित्य पर कसते हुए आगे बढ़ाया है। कहना न होगा कि हिंदी के मौलिक समीक्षा-शास्त्र की नींव रखने एवं उसे दृढ़ करने में उनकी भूमिका एक युग प्रवर्तक आचार्य की रही है। देश-विदेश की रीतिवादी कलावादी चिंतन-परंपराओं का तार्किकता से खंडन करते हुए उन्होंने लोक जागरणवादी काव्य-चिंतन-सूत्रों का नए ढंग से संपादन-परिष्कार करते हुए हिंदी के परवर्ती चिंतन को अनेक दिशाओं में आगे बढ़ाया है।''*[4]

आरंभिक हिंदी आलोचना को अगर व्यवस्थित स्वरूप प्रदान करने में आचार्य रामचंद्र शुक्ल का महत्वपूर्ण योगदान है, तब रामचंद्र शुक्ल के आलोचना में जो रिक्त दिखाई पड़ता है, उसे भरने का कार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने किया। इन्होंने भक्ति काव्य को परंपरा से जोड़कर साहित्य के फलक को व्यापक बना दिया। जिस तरह रामचंद्र शुक्ल

आदिकाल के काव्य को साहित्य मानने से इनकार करते हैं, जिस पर हजारी प्रसाद द्विवेदी ने विपक्ष रचने का कार्य किया। आदिकाल पर इन्होंने पाँच महत्वपूर्ण व्यख्यान दिए थे, जो हिंदी साहित्य की थाती है। हजारी प्रसाद द्विवेदी ने हिंदी साहित्य को समृद्ध करने का कार्य किया, संस्कृत साहित्य, नाथ-सिद्ध, अपभ्रंश कश्मीर, शैव-वैष्णव आदि पर विस्तार से विचार किया। हजारी प्रसाद द्विवेदी पर एक महत्वपूर्ण टिप्पणी है, *''हजारी प्रसाद द्विवेदी के अवदानों पर द्विवेदी जी के संपूर्ण वाङ्मय पर विचार किया जाए तो उसके बहुआयामी चार बौद्धिक आधार स्तंभ हैं-पहला है स्थानीयता, लोक परंपरा। दूसरा है साहित्य, इतिहास, संस्कृति। तीसरा है लालित्य, आनंद, रस। चौथा है मानवतावाद, राष्ट्रीयता, आधुनिकता, लोकतंत्र और समानता। भारतीय समाज, संस्कृति, इतिहास की उनकी पचाई, आत्मसात की हुई प्रतिभा का प्रतिफल है कि उनके वाङ्मय में लोक परंपरा और शास्त्र, आख्यान और इतिहास, राष्ट्रीयता और विश्वजनीन मानवतावाद, परंपरा और आधुनिकता पूरी वैचारिक स्पष्टता के साथ एक-दूसरे में गुत्थमगुत्थ हैं।''*[5]

हिंदी आलोचना में मुझे 1910 के बाद विशेष परिवर्तन दिखाई देता है, जिसमें महावीर प्रसाद द्विवेदी मौजूद थे, जिन्होंने 'चींटी से हाथी पर तक कविता लिखी जा सकती है' का उद्घोष कर साहित्य के फलक को व्यापक बना दिया था। सरस्वती पत्रिका के माध्यम से इन्होंने साहित्यिक विचार को समाहित और दिशा देने का काम किया था, जहाँ आलोचना में मुख्य परिवर्तन देखने को मिलता है, जो प्रभावकारी था। यह दौर राष्ट्रवादी आंदोलनों के उभार का था, जहाँ गांधी केंद्र में थे तो साहित्यकारों ने साहित्य के माध्यम से दिशा देने का काम किया था। इंदु जैसी कई पत्रिकाओं का उभार देखने को मिलता है। इसी दौर में प्रेमचंद की रचनाओं पर प्रतिबंध लगाया गया तो गणेश शंकर विद्यार्थी को वर्षों प्रतिबंध झेलना पड़ा था, जिन्होंने अपनी पत्रिकाओं के माध्यम से साहित्यिक हस्तक्षेप किया था। इसी दौर में अध्यापकीय आलोचना हमारे सामने आती है, जिसमें समय 'काशी हिंदू विश्वविद्यालय' और 'नागरी प्रचारिणी सभा' का महत्वपूर्ण योगदान था। 'काशी हिंदू विश्वविद्यालय' में पहली बार हिंदी की पढ़ाई आरंभ होती है, जिसमें श्यामसुंदर दास जैसे अध्यापक मौजूद थे, जो हिंदी आलोचना में 'साहित्यालोचन' के माध्यम से प्रवेश करते हैं। जहाँ से अध्यापकीय आलोचना का आरंभ होता है, जिसके बाद यह बहस भी होना चाहिए कि क्या अध्यापकीय आलोचना के बिना आलोचना होनी संभव है? क्योंकि हिंदी आलोचना पर गौर करने पर यही दिखता है। एक समय यह भी आया कि अध्यापकीय आलोचना को संदेह की दृष्टि से देखा गया, जिससे रचनाकारों को अपनी रचना को सिद्ध करने की जरूरत पड़ी। छायावाद के रचनाकारों को तो अपनी रचनाओं को सिद्ध करने के लिए बहुत जद्दोजहद करनी पड़ी थी। जिस तरह एक समय रीति काव्य का दोयम दर्जे के तहत मूल्यांकन किया गया था, उसी तरह का व्यवहार छायावाद के साथ हुआ था, जिसमें रामचंद्र शुक्ल का भी योगदान था, जो सबसे पहले मजबूती के साथ छायावाद के साथ असहमति जताते हैं, इसे रहस्यवाद के साथ जोड़ते हैं। इसके विरोध स्वरूप नंददुलारे वाजपेयी और डॉ. नगेंद्र जैसे कई लोग छायावाद का पक्ष लेते हुए इसका बचाव करते हुए आलोचना में प्रवेश करते हैं।

छायावाद के कई कवियों ने अपनी रचनाओं के बचाव में आलोचना लिखी। रामविलास शर्मा जैसे आलोचक इसके बचाव में यहाँ तक कह देते हैं कि छायावाद का विरोध करना भारतीय संस्कृति का विरोध करना है। नंददुलारे वाजपेयी तो इसके बचाव में एक पुस्तक भी लिखते हैं, 'हिंदी साहित्य : बीसवीं शताब्दी', जिसमें वह छायावाद से संबंधित तीन निबंध लिखते हैं। इसमें आचार्य शुक्ल के छायावाद मत पर प्रहार करते हुए छायावाद का बचाव करते हैं। छायावादी आलोचना के बाद जो आलोचना में हस्तक्षेप करता है, वह है प्रगतिवादी आलोचना! जिसे आरंभ में असंदिग्धता के नजरों से देखा गया था, क्योंकि प्रगतिवाद के कई आलोचकों ने भक्ति काव्य और रीति काव्य के मूल्यांकन को गलत तरीके से मूल्यांकित किया था, जिसके खिलाफ रामविलास शर्मा, चंद्रबली सिंह और स्वातंत्र्योत्तर भारत में परिमल की भूमिका महत्वपूर्ण है। स्वातंत्र्योत्तर भारत में इसने हिंदी आलोचना को समृद्ध किया। परिमल संस्था में रामस्वरूप चतुर्वेदी और विजय देव नारायण साही जैसे आलोचक शामिल थे, जो नई कविता को स्थापित करने के लिए आलोचकीय दुनिया में प्रवेश करते हैं। प्रयोगवाद और नई कविता का जो द्वंद्व था,

उसने भी आलोचना को ऊष्मीय ऊर्जा दी। हालाँकि स्वाधीनता के बाद आलोचना में जिस तरह की भूमिका पत्रिकाओं ने निभाई है, वह आलोचना के क्षेत्र में महत्वपूर्ण थी। इस तरह की भूमिका व्यक्तिगत या संस्थागत तौर पर कम ही देखने को मिलती है। इसी दौर में हमें आलोचकों की एक ऐसी फौज भी दिखाई पड़ती है, जो अपनी रचनाओं के बारे में खुद बात करना चाहती है, जिन्हें आलोचकों के बयान पर बहुत कम विश्वास था। जिसे कवि-आलोचक कहा गया, जिसका आरंभ हमें जयशंकर प्रसाद से ही थोड़ा-थोड़ा देखने को मिलता है, जब उनसे उनके नाटकों पर सवाल किया गया कि उनके द्वारा रचित नाटक रंगमंचीयता के योग्य नहीं है, तब उन्होंने अपनी पुस्तक कला और उसके तीन निबंधों में नाटक पर एक विस्तृत लेख लिखा। इसी तरह की प्रक्रिया कमोबेश हमें स्वतंत्रता के बाद भी दिखाई देती है। इसी दौर में कई ऐसे कहानीकार, आलोचक और उपन्यासकार हमारे सामने थे, जो अपनी रचनाओं के बारे में अपनी रचना प्रक्रिया के बारे में बात करते रहे थे, जिसमें मुक्तिबोध, कमलेश्वर, देवीशंकर अवस्थी, अज्ञेय जैसे अनेक नाम शामिल हैं। हिंदी आलोचना में सातवाँ दशक अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जिस पर टिप्पणी करते हुए निर्मला जैन ने लिखा है, *''सातवें दशक में रचना के क्षेत्र में परिवर्तन के साथ ही आलोचना में भी परिवर्तन के लक्षण प्रकट होने लगे। गहमागहमी का एक दशक पूरा करके नई कविता और नई कहानी के आंदोलन ठंडे होते दिखे तथा कवियों और कहानीकारों की एक युवा पीढ़ी ने नए तेवर के साथ साहित्य में प्रवेश किया, जिसका मुहावरा ही नया नहीं था, बल्कि जिसकी यथार्थ दृष्टि का आग्रह भी प्रबल था। यह अवश्य है कि इस दौर के लेखकों के रुख सामान्यत: आलोचना-विरोधी हैं, फिर भी समकालीन रचना के बीच से कुछ अपने आलोचक उभर ही आए। इन उदीयमान आलोचकों में मलयज और रमेशचंद्र शाह के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।''*[6] हिंदी आलोचना की यात्रा कई द्वंद्व, विवाद, संवाद, विचार का संयोजन है। बीसवीं शताब्दी के अस्सी के दौर में एक ऐसी आलोचना भी हमारे सामने होती है, जो उत्तर-आधुनिकता की जगह उपनिवेशवाद की बात करती है।

निष्कर्ष :

हम सभी जानते हैं कि भारत चार सौ वर्षों तक एक उपनिवेश रहा है। इन आलोचकों का मानना है कि आज भी उपनिवेशवाद की छाया देखने को मिलती है। इन आलोचकों का मानना है कि इसे दूर करने की जरूरत है, जिसमें रंजीत गुहा, गायत्री चक्रवर्ती स्पिवाक, शाहिद अमीन, दीपेश चक्रवर्ती जैसे लोग शामिल हैं। ये मानते हैं कि भारत को डी-कोलोनाइज्ड करने की जरूरत है। वहीं नब्बे के दशक में हिंदी आलोचना सबाल्टर्न पद्धति विमर्शवादी आलोचना के केंद्र में आती है, जिसमें दलित, अल्पसंख्यक, स्त्री को केंद्र में रखकर आलोचना का सौंदर्यशास्त्र गढ़ा जाता है। वर्तमान में आलोचना की जो लोकतांत्रिकता है, उसमें कमी आई है। इसकी विश्वसनीयता कम हुई है। जिस तरह की खेमेबाजी आज आलोचना में देखने को मिल रही है, वह दु:खद है। यह सम्यक आलोचना के क्षरण का दौर है। आज आलोचना जान-पहचान की केंद्रीयता के साथ परिचालित हो रही है। अपने पसंद के आलोचक अपनी पसंद के कवि जैसी आलोचना के दौर में आलोचना की जिम्मेदारी को और बढ़ा देते हैं ताकि आलोचना की विश्वसनीयता बची रहे। ❑

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. संकलन-संपादन-विजय प्रकाश सिंह, आलोचना और जनतंत्र, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2023, पृष्ठ -35
2. रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, सत्रहवाँ संस्करण-2021, पृष्ठ-387
3. कृष्णदत्त पालीवाल, हिंदी आलोचना का उत्तर आधुनिक विमर्श, सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन, पटना, प्रथम संस्करण-2021, पृष्ठ -139
4. कृष्णदत्त पालीवाल, हिंदी आलोचना का सैद्धांतिक आधार, वाणी प्रकाशन, संस्करण-2009, पृष्ठ -330
5. संपादन-श्रीप्रकाश शुक्ल, आलेख-आचार्य द्विवेदी : परंपरा, इतिहास-दृष्टि और आधुनिकता-सत्यमित्र दुबे, सेतु प्रकाशन, संस्करण-2021, पृष्ठ -135
6. निर्मला जैन, हिंदी आलोचना का दूसरा पाठ, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण-2018, पृष्ठ -136

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

जनजीवन

जौनसारी आवास विविधता में एकता के सूचक
(एक भौगोलिक अध्ययन)

मनोज

शोधार्थी भूगोल विभाग
एल.एस.एम. परिसर, पिथौरागढ़
सोबन सिंह विश्वविद्यालय
अम्लोढ़ा, उत्तराखंड-263601
8791912577
ranamonaj254@gmail.com

सामान्यत: जनजाति शब्द का प्रयोग किसी भौगोलिक क्षेत्र के उन निवासियों के लिए किया जाता है, जिनका उस भौगोलिक क्षेत्र से ज्ञात इतिहास में सबसे पुराना संबंध हो। जिस प्रकार से गैर-जनजाति समाज का विकास हुआ है, उसी प्रकार से जनजाति समाज का विकास नहीं हो पा रहा है। जिस वजह से आज भी ये समुदाय बहुत पिछड़ा है और इसी पिछड़ेपन एवं जर्जर स्थिति को ध्यान में रखकर डॉ. भीमराव अंबेडकर ने संविधान के अनुच्छेद 392 के खंड (1) में आदिवासियों को सूची बनाकर शामिल किया गया है, जिसे अनुसूचित जनजाति के नाम से जाना जाता है। इनके आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक, मानसिक व शारीरिक रूप से संपूर्ण विकास और शोषण की मुक्ति दिलाने का कार्यभार राज्य शासन को सौंपा गया है। इनके समुचित विकास के लिए अनुसूचित जनजाति आयोग मंत्रालय गठित किया गया है, जो कि इनके विकास के लिए कार्य कर रहा है।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में देश की कुल जनसंख्या का 8.6% भाग तथा कुल क्षेत्रफल का 15% भाग जनजातियों का है, जो कि आज भी घने जंगलों व पहाड़ों में निवास करते हैं, और अपनी मूलभूत सुविधाओं से वंचित रहकर अपना जीवन यापन कठिनाईपूर्वक कर रहे हैं। संस्कृति वास्तव में मनुष्य के जन्म से लेकर मृत्यु तक की सारी गतिविधियों का समुचित मेल है, जिसमें मनुष्य की भाषा, शैली, खानपान, आचार-विचार समाहित होता है। मनुष्य समाज की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक धार्मिक व भौगोलिक-संपूर्ण क्रियाकलापों का मिलाप है। प्रतिफल भारतवर्ष के अंतर्गत पहले 27वें क्रम में अब 26वें क्रम में गठित राज्य देवभूमि उत्तराखंड सदियों पूर्व से ही मानव अधिवास व आवास के लिए उपयोग में आती रही है। यहाँ की सौंदर्यमय घाटियों, प्राकृतिक वनस्पतियों से समृद्ध पर्वत, जल से भरपूर नदियों शांतिपूर्ण वातावरण, शुद्ध वायु, जल की प्रचुरता आदि मानव को अपना यहाँ आवास बनाने के लिए सदियों से आकर्षित करती रही होगी। यह कहने में अतिशयोक्ति नहीं होगी कि उत्तराखंड में मानव उद्भव ऋवैदिक काल से पूर्व रहा होगा। महापाषाणीय शवाधान तथा अनेक प्रजातियों का अस्तित्व वर्तमान समय में यहाँ पाया जाता है। इन प्रजातियों का उल्लेख अनेक पुराग्रंथों में यथा- वेद, महाभारत,

पुराण, रामायण व अन्य में पर्याप्त मिलता है।

उत्तराखंड में अनेक आदिवासी जनजातियाँ निवास करती हैं। इनमें भोटिया, थारू, बुक्सा, वनराजी व जौनसारी प्रमुख हैं।

वस्तुत: इस शोध अध्ययन के अंतर्गत मेरे द्वारा 'जौनसारी जनजाति के आवास-विविधता में एकता के सूचक' (एक भौगोलिक अध्ययन) विषय पर अपना शोध पत्र प्रस्तुत किया जा रहा है।

कुंजी शब्द :

जौनसारी जनजाति, अधिवास, आवास, भौगोलिक, विविधता में एकता, सूचक।

मूल आलेख :

जौनसारी जनजाति उत्तराखंड में निवास करने वाली जनजातियों में दूसरी सर्वाधिक जनसंख्या वाली जनजाति है। जौनसारी राज्य का दूसरा सबसे बड़ा जनजातीय समुदाय होने के साथ-साथ गढ़वाल क्षेत्र का भी सबसे बड़ा जनजातीय समुदाय है। इनका मुख्य निवास स्थल लघु-हिमालय के उत्तरी-पश्चिमी भाग का भाबर क्षेत्र है। इस क्षेत्र के अंतर्गत देहरादून का चकराता, कालसी, त्यूनी, लाखामंडल आदि क्षेत्र, टिहरी का जौनपुर क्षेत्र तथा उत्तरकाशी का परगने-काना क्षेत्र आता है। देहरादून का कालसी, चकराता व त्यूनी तहसील को जौनसार-बाबर व देवघार क्षेत्र कहा जाता है। 1002 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र पर फैला हुआ यह क्षेत्र, जिसके अंतर्गत कुल 39 खत व 358 राजस्व गाँव आते हैं। भौगोलिक दृष्टि से 77° 65' से 78° 7' 20' पूर्वी देशांतर की ओर, 30° 31' से 31° 3' 3' उत्तरी अक्षांश में स्थित है। इसके पूर्व में यमुना नदी और पश्चिम में टौंस नदी प्रवाहित होती है।

सामाजिक दृष्टि से यह क्षेत्र दो भागों में विस्तृत है। नीचे का आधा भाग 'जौनसार' है और ऊपरी हिमाच्छादित भाग बावर-देवघार खरम्बा चोटी बावर क्षेत्र में आता है।

भारतीय मानव विज्ञान सर्वेक्षण विभाग के अनुसार पितृ सत्तात्मक, संयुक्त परिवार प्रथा वाली यह हिंदू धर्म को मानने वाली चार पूज्य देव भाइयों, बाशीक, वोटा, पवासी व चालदा एक नाम 'महासु' देवता को मानने वाली जनजाति देश की प्राचीन जनजातियों में स्थान रखती है। इस समुदाय के कुटुंबों में बहुपति व बहुविवाह की प्रथाएँ पीढ़ियों तक परंपरागत रही हैं। इस जनजाति समुदाय में यदा-कदा ही आपसी बीच विवाद संबंध बनते हैं। पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आ रही संयुक्त परिवार परिपाटी के अंतर्गत इस जनजाति में संपत्ति बँटवारे की प्रथा का चलन अब तक नहीं है। उक्त परंपरा ने इस जनजाति कुटुंबों को आधुनिक काल में भी एक डोर में बांधे रखा है। अनेक कुटुंब परिजनों की संख्या सत्तर व नब्बे तक है। बहुपति प्रथा की परंपरा अब लगभग समाप्त हो चुकी है। विवाह प्राय: जल्दी हो जाते हैं। आराध्य देव के निर्मित मंदिरों में दर्जनों गाँव के लोगों द्वारा सामूहिक रूप में भव्य कार्यक्रम पौराणिक काल से आयोजित करने की परिपाटी/परंपरा आज भी निरंतर चलायमान है। इस जनजातीय क्षेत्र के अधिवास प्राकृतिक सौंदर्य के प्रतीक हैं। विडंबना रही है कि यह क्षेत्र बाहरी दुनिया और अन्य समाजों से कई सदियों तक कटा रहा, जिसके कारण यहाँ की अनूठी सामाजिक व सांस्कृतिक परंपराएँ अभी तक कायम रही हैं।

जौनसारी जनजाति में कुछ ऐसी अनूठी संस्कृति और परंपराएँ हैं, जो इस जनजाति क्षेत्र को अन्य समाजों से अलग करती हैं। आवास-अधिवास, भाषा-बोली, रीति-रिवाज, संस्कृति, खानपान, रहन-सहन, वेश-भूषा ही नहीं, बल्कि यहाँ के लोगों के जीने का अंदाज भी जुदा है। अतिथि देवो भव: की परंपरा इस समुदाय की समृद्ध संस्कृति का परिचायक रहा है, जो कि विविधता में एकता का सूचक है। सांस्कृतिक कार्यक्रम गाँव के पंचायती आँगन में आयोजित किए जाते हैं। यहाँ के हारूल, रासो, धूमसू, झेन्ता, तान्द, बारदा, नाटी, पांडव नृत्य में अद्‌भुत सम्मोहन है। हनौल जौनसारी जनजातीय समुदाय का प्रमुख तीर्थ स्थल है, जहाँ पर इनके आराध्य देवता विराजमान हैं। जौनसारी समुदाय के मुख्य त्योहार बिस्सू (बैसाखी), जागडा, पाँचौ (दशहरा), दियाई (दीपावली), नुणाई, मरोज (माघ मेला) इत्यादि हैं। माघ मेला जौनसारियों का महत्वपूर्ण पर्व है।

जौनसारी सामज अपने अधिवास व आवास निर्माण को बहुत महत्व देता है। राज्य के पर्वतीय क्षेत्रों में वहाँ के निवासियों द्वारा बसाए गए अधिवास (गाँव) तथा घर

सांस्कृतिक भूदृश्य का उत्तम उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। उनके अधिवास तथा गृह निर्माण शैलियों पर स्थानीय भौतिक तथा सांस्कृतिक दशाओं का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है।

(1) भौतिक तथ्य - विषम स्थलाकृति, बीहड़ और कठोर जलवायु वाले क्षेत्र जौनसारी अधिवासों की स्थापना में अवरोध उत्पन्न करते हैं। नदी घाटियों में अपेक्षाकृत अस्वास्थ्यकर जलवायु होने पर भी उत्तम मिट्टियाँ, सिंचाई के प्रचुर साधनों तथा समतल कृषि भूमि का बाहुल्य है। यहाँ कृषि की उपयोगिता की अधिकतम संभावनाएँ, सघन अधिवासों को जन्म देती हैं। फलत: यही तथ्य घाटियों को कृषि तथा कृषक समुदायों के अनुकूल बना देता है। घाटी क्षेत्रों की अपेक्षाकृत समतल प्रकृति के कारण उनमें यातायात एवं संचार-साधनों के विकास से अधिवासों की स्थापना सुगमता से हो जाती है।

(2) सांस्कृतिक तथ्य - सांस्कृतिक तथ्यों का स्वरूप व्यापक है। इनके अंतर्गत सामान्यत: जौनसारी अधिवासों का केंद्रीकरण, संचार-साधनों तथा यातायात की सुविधाओं पर निर्भर करता है। इन साधनों की सुलभता एवं अभाव किसी-न-किसी रूप से प्रभावित करते हैं। मनुष्य का सामाजिक प्राणी सुलभ-स्वभाव भी उसे एक समुदाय में एक स्थान पर बसने को प्रेरित करता है। एक ही जाति या रक्त संबंध के लोग एक स्थान पर ही बसते हैं और उनकी जाति के नाम पर ही गाँवों के नाम रख दिए जाते हैं। यह गाँव उसी जाति के मूल निवासियों द्वारा बसाए गए होते हैं। यहाँ व्यक्ति से ऊपर उसकी 'भयाव' (समाज) का स्थान होता है। एक ही गाँव में कई 'थोक' मिलते हैं, जिनमें प्रत्येक में एक ही जाति या रक्त संबंध के लोग निवास करते हैं।

पर्वतीय क्षेत्रों के ग्रामीण अधिवास :

पर्वतीय क्षेत्रों में जौनसारी अधिवासों की स्थापना की प्राथमिकता कृषि भूमि की निकटता है। जहाँ कहीं भी थोड़ी बहुत कृषि योग्य भूमि पाई जाती है, वहाँ एकाकी या मिश्रित छोटी-छोटी बस्तियाँ बस जाती हैं। ऐसे क्षेत्रों में जहाँ अधिकतम जनसंख्या कृषि पर ही निर्भर है, ग्रामीण अधिवासों की स्थापना का मुख्य आधार है। किंतु स्थानीय प्राकृतिक रचना और जलवायु एक ही स्थान पर अधिक निवासियों को बसने नहीं देती।

उत्तराखंड में नदी-घाटियाँ एवं मंद पहाड़ी ढलान ग्रामीण अधिवासों की स्थापना के सर्वाधिक अनुकूल पाए जाते हैं। प्राय: भूमि का अनुपयुक्त टुकड़ा अधिवास के लिए उपयुक्त समझा जाता है, किंतु अधिकांश गाँव ऐसे स्थानों पर बसाए जाते हैं, जहाँ भूस्खलन, शिलाखंडों के लुढ़क कर गिरने, पहाड़ धँसने या तूफानों की कम संभावनाएँ होती हैं। इस प्रकार हिमालय के अन्य पर्वतीय राज्यों की तरह प्रदेश में भी ग्रामीण अधिवासों की स्थापना के सिद्धांत, स्थानिक विभिन्नताओं के होते हुए न्यूनाधिक रूप से लगभग समान होते हैं। अधिवास सामान्यत: वर्षभर जल देने वाले स्रोतों के पास पाए जाते हैं। विस्तृत नदी-घाटियाँ (गड्डियाँ) अपनी उर्वरा शक्ति के कारण मानव अधिवासों को अधिक आकर्षित करती हैं। यद्यपि घाटियाँ और आर्द्र जलवायु कष्टदायक एवं अस्वास्थ्यकर होती हैं, तथापि जहाँ घाटियाँ अधिक चौड़ी एवं कृषि योग्य होती हैं, वहाँ कृषकों के अधिवास 750 मीटर की समोच्च रेखा के निकट पाए जाते हैं। दूर से गड्डी पहुँचकर कृषि करने में उन्हें कष्ट अवश्य होता है, किंतु इस प्रतिकूल जलवायु के प्रकोप से वह किसी सीमा तक बचे रहते हैं।

प्राय: रौलियों (बरसाती नाला) के दोनों ओर समतल या थोड़ी-बहुत ढलवाँ भूमि पर ग्रामीण बस्तियाँ अवस्थित होती हैं। किसी शैली के एक या दोनों ओर के पर्वतीय ढाल गाँव की सीमा बनाते हैं। वस्तुत: पर्वतीय क्षेत्रों में किसी भी ग्रामीण अधिवास की स्थापना कृषि योग्य भूमि के टुकड़े, जल की बूँद और घास के तिनके द्वारा निश्चित की जाती है। सामान्यत: पर्वतीय क्षेत्रों में मानव-अधिवास प्राथमिक रूप से जल स्रोत, रौली, गधेरे या नदी के पास पाए जाते हैं।

अधिक उच्च शिखर क्षेत्रों में कठोर जलवायु एवं कृषि योग्य भूमि की कमी के कारण गाँव छोटे-छोटे होते हैं। 2100-2400 मीटर से अधिक ऊँचाई पर बसे अधिवासों में 10-12 परिवार नहीं पाए जाते हैं, जिनकी संख्या 50-60 व्यक्तियों तक ही सीमित रहती है। पारिवारिक भूमि के बँटवारे के कारण कृषि भूमि की

कमी होने पर हर पीढ़ी में 2-4 परिवार गाँव बनाकर अन्यत्र जा बसते हैं अथवा गाँव के निकट किसी 'धार' (पहाड़ी) को खोदकर खेती के योग्य बना डालते हैं। इस प्रकार मुख्य गाँव के निकट एक छोटा-सा गाँव बस जाता है, जिसे 'लग्गा' या तोक कहते हैं।

अधिवासों के प्रकार :

जौनसारी जनजाति के उत्तराखंड हिमालय में सामान्यत: निम्न तीन प्रकार के अधिवास पाए जाते हैं-

(1) सघन अधिवास

(2) अपखंडित या विरल अधिवास

(3) एकाकी अधिवास

(1) सघन अधिवास - इस प्रकार की बस्तियाँ प्राय: घाटी क्षेत्रों में समतल भूमि खंडों से कुछ ऊँचाई पर पाई जाती हैं। मिट्टी की उर्वरा शक्ति, सिंचाई के लिए जल की सुलभता, कृषि के लिए उपयुक्त जलवायु एवं यातायात के साधन सघन अधिवासों को जन्म देते हैं। इन क्षेत्रों में मैदानी भागों की-सी संगुच्छित बस्तियाँ तो नहीं पाई जातीं, किंतु पर्वतीय क्षेत्रों के सघनतम अधिवास अवश्य पाए जाते हैं। नदियों की घाटियों की अपेक्षा बड़े-बड़े गधेरों की निचली तलहटियों में इस प्रकार के अधिवास प्रमुख रूप से दृष्टिगोचर होते हैं। मोटर मार्गों की सघनता के कारण कहीं-कहीं व्यापारिक केंद्र स्थापित हो गए हैं, जिनमें सघन अधिवासों की झलक मिलती है। प्रदेश के प्राय: सभी भागों में मंद ढाल वाली पर्वत श्रेणियों पर भी सघन अधिवास पाए जाते हैं। इन भागों के निवासी पर्याप्त जल सुविधाओं से तो वंचित रह जाते हैं, किंतु पशु-चारण, वन एवं उत्तम जलवायु की सुविधाएँ उन्हें इन स्थानों पर बसने को प्रेरित करती हैं। इस प्रकार की बस्तियाँ मुख्य रूप से 1200-1500 मीटर की ऊँचाई पर पाई जाती हैं।

(2) अपखंडित या विरल अधिवास - इस प्रकार के अधिवास उन स्थानों पर विकसित हुए हैं, जहाँ धरातलीय विषमताओं, मिट्टी की उर्वरता एवं जल-सुविधाओं के आधार पर कृषि योग्य भूमि दूर-दूर छिटके हुए टुकड़ों में बँट गई है। यह रूप 1800-2250 मीटर तक की ऊँचाई तक मिलता है। यहाँ कृषक, साधारणत: खेतों के मध्य बने हुए छोटे-छोटे आवासों में रहते हैं, जहाँ से वे खेतों की रक्षा भली प्रकार कर सकते हैं। पृथक स्वामित्व वाले खेत कँटीली झाड़ियों, पगडंडियों, छोटी-छोटी रौलियाँ या पत्थर की बनी हुई कच्ची दीवारों द्वारा बँटे होते हैं। प्रत्येक लघु कृषि आवास स्वयं में एकाकी होता है, किंतु सभी मिलकर एक बस्ती बनाते हैं।

(3) एकाकी अधिवास - इस प्रकार के अधिवास समुद्र तल से 2250 मीटर से अधिक ऊँचाई के शिखर क्षेत्रों में दृष्टिगोचर होते हैं। इन भागों में वनों के थोड़े से भाग को काटकर अत्यंत प्रतिकूल परिस्थितियों में कृषि योग्य भूमि तैयार की जाती है और उसके मध्य एकाकी कृषि गृह बना लिया जाता है। इन स्थानों में 'कटील' कृषि ही संभव है। इन क्षेत्रों में हिंसक वन्य जंतुओं से फसलों की रक्षा करनी कभी-कभी प्राण घातक सिद्ध हो जाता है, किंतु प्रकृति की चुनौतियों को अत्यंत धैर्य, सहिष्णुता एवं साहस के साथ इन क्षेत्रों के निवासी अंगीकार कर लेते हैं।

उच्चस्थ शिखर क्षेत्रों में कहीं-कहीं दोहरे या जुड़वाँ ग्रामीण अधिवास पाए जाते हैं। इस स्थिति में ऊपरी तथा निचले ढालों पर समान स्वामित्व वाले दो गाँव बसाए जाते हैं, जिन्हें क्रमश: 'मल्ला' (ऊपरी) या 'तल्ला' (निचला) गाँव कहा जाता है। दोनों गाँवों में प्रत्येक परिवार का एक-एक घर होता है। मल्ला गाँव ग्रीष्म ऋतु में तथा तल्ला गाँव वा शीत ऋतु में प्रयुक्त किया जाता है। इन दोनों गाँवों में वह ऋतुकालीन प्रवास के अनुसार मौसमी फसलें पैदा की जाती हैं।

जौनसारी अधिवासों के प्रतिरूप-जौनसारी पर्वतीय क्षेत्रों में ग्रामीण अधिवासों की स्थापना प्राय: योजनाबद्ध नहीं होती, बल्कि स्थानीय भूमि एवं ढाल की प्रकृति पर निर्भर करती है। मकानों के प्रवेशद्वार प्राय: घाटियों की ओर बनाए जाते हैं। पर्वतीय भागों में सर्वत्र ही सूर्य के प्रकाश की दिशा अधिवासों की स्थापना में प्रमुख तथ्य है। उन भागों में जहाँ कहीं अपेक्षाकृत समतल भूमि खंड उपलब्ध होता है, मकानों का क्रम अव्यवस्थित पाया जाता है। किंतु सीढ़ीनुमा खेतों पर बसे अधिवासों में मकानों की कई पंक्तियाँ होती हैं। इस प्रकार मकानों की कई पंक्तियाँ मिलकर गाँव को लंबाकार रूप प्रदान करती हैं। इस प्रकार के दो-चार या अधिक पंक्तियों वाले गाँव प्राय: दिखाई देते हैं। प्रत्येक गाँव का अपना पूजा स्थल होता है, जो गाँव

के निकट किसी उपयुक्त स्थान पर जल स्रोत के पास बनाया जाता है। पूर्वकाल में स्थापित कुछ ग्रामीण अधिवासों में घरों को तीन श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है।

• प्रथम प्रकार के घर गाँव के थोकदार, मालदार, प्रधान परिवार, उच्च ब्राह्मणों एवं राजपूतों के होते थे, इन्हें ग्राम भूमि के उच्चतम भाग में बनाया जाता था। यह दो मंजिले तथा कभी-कभी तिमंजिले भी बनाए जाते थे। इनमें पशुओं के लिए कोई व्यवस्था नहीं होती थी। गौशालाएँ अलग से बनाई जाती थीं।

• मध्यम श्रेणी के घर निम्न वर्गीय ब्राह्मणों तथा राजपूतों के होते थे, जो प्राय: गाँव के मध्यवर्ती भाग में बनाए जाते थे।

• तीसरी श्रेणी के घर अनुसूचित जाति के लोगों के होते थे, जिन्हें गाँव के निचले भागों में बसाया जाता था।

• जिन गाँवों में सभी निवासी एक ही जाति के होते हैं, उनके गाँव भी जाति के नाम पर अन्य जातियों के श्रेणियों को भी आत्मसात कर लेते हैं।

जौनसारी/पर्वतीय क्षेत्रों की गृह-निर्माण शैलियाँ :

अधिवासों की स्थापना के प्रारंभिक चरणों में वन्य जीवों से सुरक्षा की दृष्टि से गाँव के सारे मकान में ऊँची-ऊँची सुदृढ़ वर्गाकार दीवारों पर भारी किवाड़ों वाली 'खोलियाँ' (फाटक) बनाई जाती थीं, जिन्हें बंद करने पर गढ़ी (किले) के अंदर प्रवेश करना असंभव होता था। इस प्रकार जौनसारी क्षेत्रों के कतिपय गाँव आज भी दुर्गनुमा अधिवास शैली के अवशेष स्वरूप हैं।

गढ़वाल तथा कुमाऊँ दोनों मंडलों के पर्वतीय भागों की गृह-निर्माण शैलियों में लगभग समानता पाई जाती है। प्रवेश द्वारों की खोली पर गणेश या इष्ट देवता की मूर्ति लगाई जाती है। मकानों की दीवारें पत्थरों से बनाई जाती हैं, जिनकी चौड़ाई डेढ़ हाथ (लगभग 65 सेंटीमीटर) रखी जाती है। छतें ढालू बनाई जाती हैं। उन्हें पटालों (स्लेट पत्थर) से पाटा जाता है। पटाले शहतीरों पर रखे लकड़ी या बाँस के छोटे-छोटे तख्तों पर मिट्टी की मोटी तह बिछाकर ठीक उसी प्रकार व्यवस्थित कर दिए जाते हैं, जिस प्रकार मैदानी भागों में खपरैल भी छतों को बनाया जाता है। मकान की छत के सर्वोच्च भाग में लंबाई के अनुरूप 'धुरपोली' (पटालों की पंक्ति) बनाई जाती है। संपन्न व्यक्ति पटालों के स्थान पर टीन की चादरों का प्रयोग करते हैं। आजकल मोटर मार्गों के निकटवर्ती गाँवों तथा सेवा केंद्रों में सीमेंट कंक्रीट की बनी छतों का भी प्रचलन प्रारंभ हो गया है।

प्रत्येक मकान के अग्रभाग में 'गुठ्यार' (चौक) अवश्य होता है, जो समतल चौकोर पत्थरों से पटा होता है। इसका उपयोग पशुओं को बाँधने, अनाज की मँडाई, बारात का स्वागत करने, बैठक करने, पांडव नृत्य तथा अनाज सुखाने में होता है। चौक के तीन और दो फीट ऊँची दीवार (दांदण) बनाई जाती है, जो चौक की रक्षा करती है।

घरों के प्रकार-जौनसारी क्षेत्रों में तीन प्रकार के मकान पाए जाते हैं-

(1) एक मंजिला मकान (भ्यूमुंडा, भियारां या इखंडा)

(2) दुमांजिला मकान (दुखंडा या दीपुड़ा)

(3) तिमंजिला (तीपुड़ा)

जौनसारी समाज आवास निर्माण को बहुत महत्व देता है। प्राय: आवास दो, तीन या कभी-कभी चार मंजिला भी बनाए जाते हैं। मकानों के खंभों एवं किवाड़ों पर उत्कृष्ट नक्काशी की जाती है। मकानों में देवदार की लकड़ी का प्रयोग किया जाता है। छतें स्लेट या पठाल या कहीं-कहीं देवदार के तख्तों से ढँकी रहती हैं। गाँव पहाड़ी ढाल पर इस प्रकार बनाए जाते हैं कि गाँव ऊपर-नीचे नीचे कृषि भूमि हो। पानी के प्राय: दो स्रोतों के निकट गाँव बसाए जाते हैं। महान सीढ़ीदार लंबी पंक्तियों में बनाए जाते हैं। प्रत्येक मकान के आगे बड़ा आँगन तथा फलदार वृक्ष होते हैं, जो इस क्षेत्र की समृद्धि के परिचायक हैं। इस क्षेत्र में संयुक्त परिवार प्रथा विद्यमान है। यहाँ की सामाजिक व्यवस्था में व्यक्ति के जन्म से लेकर मृत्यु तक पूर्ण सहभागिता दिखाई देती है। उसका कोई भी सदस्य स्वयं को असहाय, परित्यक्त अथवा एकाकी महसूस नहीं करता है।

पलायन की जद्दोजहद से यह जनजातीय क्षेत्र भी अछूता नहीं रहा है। आँकड़ों के मुताबिक करीब तीस फीसदी मूल निवासी इस जनजाति क्षेत्र से पलायन कर चुके हैं, जिसका प्रभाव इनकी लोक संस्कृति व अधिवासों

पर पड़ रहा है। परिस्थितियों में परिवर्तन के फलस्वरूप जौनसारी समाज में काफी बदलाव आया है।

निष्कर्ष :

वैश्विक फलक पर इस प्रकार हम कह सकते हैं कि जौनसारी जनजाति की प्रतिष्ठित समृद्ध भौगोलिक, सामाजिक व सांस्कृतिक विरासत इसके गृह व अधिवासों पर पहचान का संकट मँडराने लगा है। जबकि राष्ट्रीय, राज्य एवं अन्य स्तरों पर सरकारों द्वारा इनके विभिन्न क्षेत्रों के उन्नयन हेतु पर विभिन्न लाभकारी योजनाओं का प्रावधान किया गया है। परंतु इन लाभकारी योजनाओं की जौनसारी जनजाति के जनमानस को जानकारी न होने के कारण लाभ उन्हें नहीं मिल पा रहा है।

अत: इस शोध पत्र के द्वारा शोधार्थी उन योजनाओं को सबके समक्ष लाना चाहता है, जिससे विविधता में 'एकता के सूचक' इस जनजाति के अधिवास, आवास के बारे में लोग जान सकें, विभिन्न सरकारें उन्हें अमली जामा पहना सकें और इस क्षेत्र के लोग भी इसका अध्ययन करके या जानकारी प्राप्त करके लाभान्वित हो सकें, जो पलायन की जद्दोजहद से वीरान पड़ रहे हैं। उक्त प्रावधानों के लागू होने व शिक्षा के प्रचार-प्रसार के पश्चात देश-दुनिया से सदियों तक अलग-थलग रही इस जनजाति क्षेत्र के लोगों को विभिन्न मदों में लाभ का अवसर तो मिला, परंतु समृद्ध सामाजिक, भौगोलिक व सांस्कृतिक विरासत को यथावत न रख पाने के कारण अपूरणीय क्षति भी उठानी पड़ी है। बढ़ते पलायन के कारण पारंपरिक पशुपालन व खेती-किसानी पर बड़ा प्रभाव पड़ा है। पलायन की जद में बाहरी संस्कृतियों का कु-प्रभाव पड़ने से जौनसारी आवास, बोली-भाषा के साथ-साथ स्थानीय लोक गीतों, लोक नृत्यों, लोक कथाओं व प्राचीन गृह निर्माण विधाओं पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।

उम्मीद की जा सकती है कि इस पौराणिक व ऐतिहासिक सांस्कृतिक विरासत को भविष्य में सिर्फ इस जनजाति की युवा पीढ़ी विकास की सोच के तहत समन्वय बनाकर सुरक्षा व संरक्षण देकर स्थापित रख सकती है। ❑

संदर्भ सूची :

1. डॉ. बलोदी, राजेंद्र प्रसार, उत्तराखंड समग्र ज्ञानकोश, विनसर पब्लिशिंग कं., देहरादून, उत्तराखंड, 2015, ISBN : 978-81-86844-57-7-1
2. एटकिंसन, ई.टी., द हिमालायन गजेटियर, वॉल्यूम-9, कास्मों पब्लिकेशन, अंसारी रोड, दिल्ली, 1882
3. वैल बी, जंगल लाइफ इन इंडिया, न्यू दिल्ली, 1985
4. मजूमदार, डी.एन, हिमालयन पॉलेड्री : स्ट्रक्चर फंकशनिंग एंड कल्चर चेंज, एशियन पब्लिशिंग हाऊस, न्यूयॉर्क, 1962
5. मियां, गोवर्द्धन सिंह, हिमाचल प्रदेश का इतिहास, मिशिगन : रिलायंस पब्लिशिंग हाउस, रिलायंस बुक्स: यूनिवर्सिटी ऑफ मिशिगन, 1986
6. कुक, विलियम, ट्राइब्स एंड कस्टम ऑफ द वेस्टर्न इंडियन, वॉल्यूम-9, कास्मों पब्लिकेशन, अंसारी रोड, दिल्ली, 1975
7. हसनै, नदीम, जनजातीय भारत, जवाहर पब्लिशिर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2004
8. चौहान, बी.एस., भौतिक विज्ञान, रस्तोगी पब्लिकेशंस, मेरठ
9. कौशिक, डॉ. एस.डी., मानव भूगोल, रस्तोगी एंड कंपनी, शिक्षा साहित्य प्रकाशक, मेरठ
10. नैथानी, डॉ. शिव प्रसाद, उत्तराखंड का ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक भूगोल, पवेत्री प्रकाशन, श्रीनगर, गढ़वाल
11. कठोच, डॉ. यशवंत सिंह, मध्य हिमालय का पुरातत्व, रोहिताश प्रिंटर्स, लखनऊ

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

जनजीवन

सुभाष चंद्र कुशवाहा के गजल संग्रह 'गाँव हुए बेगाने अब' में ग्रामीण जीवन का यथार्थ

युगल किशोर यादव
शोधार्थी, हिंदी विभाग
राजीव गांधी विश्वविद्यालय
अरुणाचल प्रदेश-791112
9101809066
yugal123tsk@rediffmail.com

प्रो. श्याम शंकर सिंह
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
राजीव गांधी विश्वविद्यालय
अरुणाचल प्रदेश-791112
9233652226

शोध सार :

'गजल' अभिव्यक्ति की एक प्राचीन विधा है। गजल एक अत्यंत लोकप्रिय, मधुर और रसीला, मन को आकर्षित करने वाला अंदाज है, जिसके माध्यम से गजलकार प्रेम रूपी कोमल भावनाओं को प्रकट करता है। हृदय में उठने वाली प्रेम की पीड़ा शब्दों के माध्यम से गजल द्वारा प्रकट होती है। किंतु जैसे-जैसे समय परिवर्तित होता गया, वैसे-वैसे मानव मन में उपजने वाली संवेदना जीवन के अन्य विषयों के साथ जुड़ता गई। प्रेम के काल्पनिक संसार में विचरण करने वाला कवि जीवन की वास्तविकता को बहुत करीब से देखने लगा और उसकी अभिव्यक्ति ने काल्पनिक दुनिया को छोड़कर जीवन के यथार्थ भूमि को चुना। हिंदी कविता ने व्यवस्था विरोधी तत्वों, विसंगतियों और विद्रूपताओं को पुरजोर तरीके से पेश किया। हिंदी कविता में दुष्यंत कुमार जैसे सशक्त गजलकार ने गजल के माध्यम से तत्कालीन समाज के आम आदमी की पीड़ा को सशक्त रूप में प्रस्तुत करने में सफलता पाई है। दुष्यंत के पश्चात हिंदी काव्य के क्षेत्र में गजल लिखने की एक परंपरा चल पड़ी। इसी परंपरा में अनेक गजलकार हुए, जिनमें सुभाष चंद्र कुशवाहा एक प्रमुख नाम है। उन्होंने तथाकथित जीर्ण-शीर्ण जनविरोधी व्यवस्था का कड़े शब्दों में विरोध किया। वे शोषित समाज के पक्षधर और मसीहा बनकर उभरे हैं। ग्रामीण चेतना सुभाष चंद्र कुशवाहा के गजलों का केंद्रीय विषय रहा है। गाँव की दुर्दशा का जैसा चित्रण उन्होंने किया है, वह उनका अपना निजी अनुभव रहा है।

बीज शब्द : गाँव, किसान, दहेज, संवेदना, सांप्रदायिकता, भूमंडलीकरण।

मूल आलेख :

हिंदी साहित्य में भारतीय ग्रामीण जीवन को केंद्र में रखकर साहित्य रचे गए हैं, जिनमें रचनाकारों ने ग्राम्य समाज के वास्तविक स्वरूप को उभारा है। उन्होंने यह सिद्ध किया है कि भारत गाँवों का देश है। यह सत्य है कि देश की आबादी का अधिकांश हिस्सा आज भी गाँवों में निवास करता है। गाँव की जीवन शैली किसी भी प्रकार के दिखावेपन और बनावटीपन के भाव से मुक्त सरल-सहज और साधारण है। कृषि कर्म ग्राम्य जीवन की जीविका का मुख्य आधार है। खेतों में पसीना बहते किसान, हरी-भरी फसलें, किसान के आँगन में एक जोड़ी बैल, नदी-

तालाब, बाँस-फूस-खप्पर से बने घर, पैजामा-कुर्ता-धोती पहने और सर पर पगड़ी बांधे ग्रामीण इत्यादि ग्राम्य समाज की छवि को उजागर करते हैं। गाँव कहने से प्राय: यही छवि मन में उभरती है। किंतु वर्तमान समय में ग्रामीण समाज की तस्वीर इससे बिल्कुल भिन्न है। बदलते समय ने गाँव के परिवेश को बदला है। आज का गाँव प्रेमचंद, नागार्जुन, रेणु की रचनाओं में चित्रित गाँव नहीं रहा। समय के साथ ग्रामीण समाज में काफी परिवर्तन आया है। गाँव की स्थिति में सुधार के पक्ष में परिवर्तन की गति अत्यंत धीमी रही है। ग्रामीण समाज में अमीरी-गरीबी, छुआछूत, ऊँच-नीच, जातिवाद, सांप्रदायिकता, धार्मिक अंधता, अंधविश्वास, अशिक्षा, गरीबी, बेरोजगारी की स्थिति आज भी यथावात बनी हुई है। गरीब, मजदूर-किसान, दलित, पिछड़ों तथा ग्रामीण स्त्रियों की स्थिति अत्यंत दयनीय बनी हुई है। तथाकथित ग्रामीण सामाजिक व्यवस्था के षड्यंत्रों एवं कुचक्रों का शिकार आज भी गाँव के सर्वहारा वर्ग हो रहे हैं। अत: ग्रामीण जीवन तथा परिवेश को आधार बनाकर रचना करने वाले ग्राम्य चेतना के चितेरे रचनाकार सुभाष चंद्र कुशवाहा ने अपने गजल संग्रह के माध्यम से तथाकथित व्यवस्था के षड्यंत्रों और कुचक्रों को तोड़ने का प्रयास किया है।

'गजल' उर्दू की एक अत्यंत लोकप्रिय साहित्यिक विधा है, जिसके माध्यम से गजलकार अपने भावों की अभिव्यक्ति करता है। गजल के माध्यम से गजलकार प्रेम रूपी कोमल भावनाओं को प्रकट करता है। हृदय में उठने वाली प्रेम की पीड़ा शब्दों के माध्यम से गजल द्वारा प्रकट होती है। गजल के स्वरूप को इन पंक्तियों के माध्यम से समझा जा सकता है, *''जब कोई शिकारी जंगल में कुत्तों के साथ हिरण का पीछा करता है और हिरण भागते-भागते किसी ऐसी झाड़ी में फँस जाता है, जहाँ से वह निकल नहीं सकता, उस समय उसके कंठ से एक दर्द भरी आवाज निकलती है। उसी करूण स्वर को गजल कहते हैं। इसीलिए विवशता का दिव्यतम रूप में प्रगट होना, स्वर का करुणतम हो जाना ही गजल का आदर्श है।''*[1] इससे सपष्ट होता है कि गजल में करुण रस प्रधान होता है। हृदय में उठने वाला दर्द जब अपनी चरम सीमा को पार कर जाता है, तब वह गजल के रूप में प्रकट होता है। गजल में पहले इश्क, मोहब्बत और प्यार की बातें हुआ करता थीं, किंतु वर्तमान समय में गजल प्रेमाभिव्यक्ति के साथ-साथ जीवन के अन्य विषयों से जुड़ी है। साथ ही गजल उर्दू के अलावा अन्य जुबानों में भी कही जाने लगी है। उर्दू के साथ-साथ हिंदी गजल की लोकप्रियता भी कम नहीं है। हिंदी साहित्य में अनेक गजलकार हुए हैं, जिन्होंने हिंदी गजल को नया मोड़ दिया है, जिनके कारण हिंदी गजल का रूप काफी विकसित हुआ है। हिंदी साहित्य में गजलकारों ने प्रेमिका के प्रति प्रेम की अभिव्यक्ति के स्थान पर आम आदमी के जीवन संघर्ष, सामाजिक विकृतियों, व्यवस्था की विद्रूपताओं और विसंगतियों, शोषण-अत्याचार, प्रशासन की निरंकुशता पर प्रश्न खड़े किए। हिंदी साहित्य में अभिव्यक्ति के लिए विविध विधाएँ उपलब्ध हैं। *''इन विधाओं से 'गजल' नामक काव्य विधा जब दुष्यंत जैसे सशक्त गजलकार के पास आई तो तत्कालीन परिवेश विशेषकर 'आपातकाल' जो श्रीमती इंदिरा गांधी द्वारा भारतीय लोकतंत्र में प्रथम बार घोषित हुआ था, ने गजल को बहुत प्रभावित किया और 'साये में धूप' देने वाली तत्कालीन व्यवस्था पर करारी चोट करने वाली दुष्यंत की गजलें लोक-मानस में ऐसी उतरीं कि प्रत्येक हिंदी गजलकार दुष्यंत की तर्ज पर गजलें कहने लगा।''*[2] इन गजलकारों में सुभाष चंद्र कुशवाहा का नाम भी बड़े आदर के साथ लिया जाता है। सुभाष चंद्र कुशवाहा की गजलें मुख्य रूप से ग्रामीण चेतना से जुड़ी हैं। ग्रामीण समाज के ठोस यथार्थ को उन्होंने प्रस्तुत किया है। उनकी गजलें रूमानी (रोमांटिक) दुनिया की सैर नहीं करतीं, बल्कि गाँव की दुर्दशा और वहाँ की

विसंगतियों से मुठभेड़ करती हैं।

भारत एक कृषि प्रधान देश है। देश की अर्थव्यवस्था कृषि पर निर्भर है। कृषि मुख्य रूप से गाँव की देन है। किसी भी कृषि प्रधान देश की संपूर्ण अर्थव्यवस्था की रीढ़ गाँव का किसान ही होता है। किसान अपने खेतों में दिन-रात मेहनत करता है ताकि देश की अर्थव्यवस्था को गति मिलती रहे-

''खेतों में जो झुका हुआ है/ देश उसी
पर टिका हुआ है''[3]

किंतु किसानों की स्थिति दयनीय है। देश की अर्थव्यवस्था को मजबूती प्रदान करने वाला गाँव का किसान ठगा-सा रह जाता है। यह दुनिया तेज भाग रही है, लेकिन गाँव का किसान आज भी वहीं-का-वहीं पड़ा है। किसान की उपज 'फसल' को विदेशी कंपनियों को बेचकर उद्योगपति 'डॉलर' भुना रहे है, खूब संपन्नता हासिल कर रहे हैं। किंतु किसान की स्थिति एक बंधुआ मजदूर की जैसी हो गई है, जो अपना पेट भरने के लिए भी मजदूरी करने को मजबूर है। व्यवस्था की मार खाकर वह इतना लाचार हो चुका है कि उसकी सारी शक्ति क्षीण हो गई है। एक तरफ किसान के उगाए अन्न को खाकर लोग उमंग और प्रसन्नता से भरे हुए हैं, किंतु दूसरी ओर वही किसान भूख से तड़प रहा है-

''खा-पीकर कुछ चहक रहे हैं/ वह भूखा है,
थका हुआ है''[4]

सोचनीय है कि देश को आर्थिक मजबूती प्रदान करने वाला गाँव और गाँव का किसान आज भी पिछड़ा पड़ा है। आर्थिक विकास की प्रक्रिया समूचे देश में चल तो रही है, किंतु ग्रामीण क्षेत्रों में इसकी गति बहुत धीमी है। सरकार द्वारा बड़े-बड़े वायदे तो किए जाते रहे हैं कि गाँव की सूरत बदलेगी। ऐसी व्यवस्था लाई जाएगी, जिसमें आबादी के एक बहुत बड़े हिस्से को गरीबी रेखा से ऊपर रखा जाएगा। किंतु विडंबना यह है कि आजादी के लगभग 78 वर्षों के पश्चात भी देश की कुल जनसंख्या का आधे से अधिक जनता मुफ्त मिलने वाली राशन की लाइनों में खड़ी मिलती है। सुभाष चंद्र कुशवाहा की गजलें इस सत्य को उद्घाटित करती हैं कि गाँव में आज भी कहीं शादी-ब्याह होता है तो भूख से विलख रहे हरिजन बस्ती के बच्चे जूठी पत्तलों में बचे हुए अन्न से अपना भूख मिटाते नजर आते हैं, तो कहीं कोई बेटी रोटी के खातिर अपने शरीर का सौदा कर आती है। आज भी गाँव की एक तस्वीर ऐसी है, जहाँ लोग भूखों मर रहे हैं, गरीबी से घबराकर 'सल्फास' (जहर) खा रहे हैं-

''कह रहा वो मुल्क से खाने की अब किल्लत कहाँ
पर यहाँ सल्फास खाना भी कोई खाना है क्या''[5]

गाँव में बेरोजगारी की स्थिति इतनी है कि पढ़े-लिखे, शिक्षित युवाओं के लिए रोजगार के उचित अवसर उपलब्ध नहीं हैं। यहाँ तक कि अनपढ़ युवकों के हाथों में भी कोई काम-धंधा नहीं है। फलत: वे असामाजिक बनते जा रहे हैं। चोरी, डकैती, गुंडई कर अपना नाम बना रहे हैं-

''बेकारी है काम ढूँढ़िए/ या गुंडों में नाम ढूँढ़िए''[6]

आर्थिक विकास की प्रक्रिया गाँव के लोगों को उस स्तर तक लाभान्वित नहीं कर पाया है, जितना शहरी जीवन प्रभावित हुआ है। परिणाम यह हुआ कि ग्राम्य समाज को अनेक कठिनाइयों से होकर गुजरना पड़ा है। इसका सबसे गहरा प्रहार गाँव की 'संयुक्त परिवार' नामक संस्था पर हुई। रोजी-रोटी की तलाश ने गाँवों और कस्बों से लोगों को शहरों की ओर पलायन करने को विवश किया। दो जून की रोटी के लिए गाँव का आदमी घर, परिवार से दूर रहने लगा। गाँव में बूढ़े माँ-बाप अकेले रह गए। बेटा अपने बीवी-बच्चों सहित शहर में बस गया। अत: किसी विशेष मौके पर मेहमानों की तरह गाँव आकर वापस शहर चला जाता है। सुभाष चंद्र कुशवाहा ने इस सत्य की ओर ध्यानाकर्षित करते हुए लिखा है-

''मेरे साथ मेरे बच्चे/ केवल गाँव में माई है''[7]

गाँव में माता-पिता की स्थिति ऐसी की हड्डियों में सिहरन पैदा करने वाला पूस का महीना आने वाला है और उन पर घर में केवल एक ही रजाई है। ऐसे में बूढ़े माता-पिता का गुजारा कैसे होगा। लेकिन बेटा करे भी तो क्या, क्योंकि शहर कमाने गया बेटा स्वयं अभावों में गुजारा कर रहा है।

अर्थ लोलुपता की बीमारी अब शहरों से ग्राम तक पहुँच चुकी है। समूचे विश्व में पूंजीवादी सभ्यता के प्रसार

ने धन के महत्व को बढ़ाया है। भारतीय गाँव भी इससे खुद को अछूता नहीं रखा पाया। आर्थिक आमदनी बढ़ाने के लिए व्यक्ति नैतिक-अनैतिक सभी तरह के कार्य करने लगा है। श्रम के प्रति उसकी निष्ठा में कमी आई है। अब गाँव का व्यक्ति मेहनत-परिश्रम के बल पर नहीं, बल्कि छल-कपट, धोखा-धड़ी, षड्यंत्र आदि के द्वारा पूँजी का दोहन करना चाहता है। यही कारण है कि गाँव में अपराध भी बढ़े हैं। *''ऐसे अपराधों में घूसखोरी, जमीन को हड़पना, कालाबाजारी और गबन करना, ठेकेदारी करना, पंचायतों के नाम पर फतवे आदि करना और पैतृक पेशे को छोड़कर नए-नए पेशे अपनाकर अवैध तरीके से धन कमाना जैसे कार्य प्रमुख हैं।''* [8] गाँव के विकास के लिए आए अनुदान की राशि ने भ्रष्टाचार को प्रोत्साहन दिया है, घूसखोरी बढ़ी है, रिश्वतों को चंदे का नाम दिया जा रहा है-

''गंदा है, पर धंधा है, क्यों कहते हो फंदा है
सबने देखा रिश्वत थी, तुम कहते हो, चंदा है'' [9]

वहीं घूसखोरी और भ्रष्टाचार के पैसों को डकारने के लिए ग्राम-प्रधानों द्वारा गरीब ग्रामीणों पर अत्याचार और शोषण की संख्या में बढ़ोतरी हुई है, न्याय व्यवस्था चरमरा गई है-

''परधानों से मिलता न्याय/ या जबरों
का चलता दाँव'' [10]

योजनाओं की पूर्ति केवल कागजों तक ही सीमित रह गई है। पूंजी के महत्व ने मनावीय संवेदनाओं का गला घोंट दिया है। आज गाँव में उन्हीं की पूछ होती है, जिनकी स्थिति धन-बल से मजबूत है-

''रिश्ते-नाते, आस-पड़ोस/ अब तो सब
में रुपिया मूल'' [11]

धन का महत्व आदमी से अधिक हो गया है। एक समय ऐसा भी था, जब गाँव अपनी आत्मीय बोध, बंधुत्व, भाईचारा, परस्पर सहयोग की भावना के एक से एक उत्कृष्ट उदहारण प्रस्तुत किया करता था। भूमंडलीकरण ने समय को इस करवट बदला, जिसके कारण गाँव की आंतरिक स्थिति के साथ-साथ मानवीय आचरण और व्यवहार में भी गहरा बदलाव आया है। आदमी की पहचान बदल गई है, उसका हृदय बदल गया है। संवेदनाएँ मर चुकी हैं, जीवन-मूल्य नष्ट हुआ है, चरित्र का नैतिक पतन हो रहा है। प्रेम, त्याग, बंधुत्व, सहयोग जैसी मानवीय भावनाएँ प्राय: दम तोड़ रही हैं। सुभाष चंद्र कुशवाहा गाँव के भविष्य को लेकर चिंतित हैं, ग्रामीण जीवन संवेदनाविहीन हो जाएगी और अपने वास्तविक पहचान खो देगी-

''दिल में पत्थर घर करेंगे देखना/ आदमी पत्थर रो न पाएँगे
किसी की मौत पर/ आँख के आँसू मरेंगे देखना'' [12]

शहरीकरण गाँव की भूमि पर पैर पसार चुका है। *''नगरों के समीपवर्ती गाँव में नगरीय व्यवहार ग्रामीणों के लिए संदर्भ व्यवहार होते हैं, जिनका अनुकरण करना वे अपनी स्थिति को सुदृढ़ करने के लिए आवश्यक समझते हैं। नगरीय उद्योगों में लगे लाखों ग्रामीणों द्वारा श्रमिकों के रूप में कार्य करने के पश्चात अपने-अपने गाँवों में लौटने पर उन विशेषताओं का प्रसार किया जाता है, जो मूल रूप से नगरीय जीवन-पद्धति की विशेषताएँ होती हैं। इसके फलस्वरूप भी गाँव की परंपरागत जीवन-पद्धति, व्यवहार-प्रतिमानों तथा मूल्यों में परिवर्तन होने लगा है।''* [13] शहरी सभ्यता ने गाँव की आत्मीयता पर करारी चोट की है। इसने महानगरीय जीवन की तरह गाँवों में भी अजनबीपन और बेगानापन को बढ़ाया है। अब न कोई किसी से दिल से बात करना चाहता है, न ही किसी के चहरे से आत्मीयता का भाव झलकता है। सुभाष चंद्र कुशवाहा अपनी गजलों के माध्यम से इस वास्तविकता को उजागर करते हैं कि वर्तमान गाँव में परायपन की जो भावना आई है, वह पहले नहीं थी। मतलब होने पर लोगों की पूछ होती है, अन्यथा हर कोई एक-दूसरे के लिए बेगाने हैं-

''गाँव हुए बेगाने अब/कौन किसे पहचाने अब'' [14]

सुभाष चंद्र कुशवाहा की गजलों में यह चिंता स्पष्टत: देखी जा सकती है कि ग्राम्य समाज अनेक प्रकार की विषमताओं और विद्रूपताओं से ग्रसित है। इनमें जातिवाद और सांप्रदायिकता की भावना ने ग्रामीण समाज को गहराई से प्रभावित किया है। सुभाष चंद्र कुशवाहा कहते हैं कि मजहबी ताकतों का बढ़ना मानव समाज के लिए खतरा है। आजादी से पहले सांप्रदायिक एकता देखने को मिलती थी। राम और रहमान एक ही जगह एक साथ खेलते हुए देखे जा सकते थे, किंतु अब यह एकता टूट चुकी है।

विडंबना है कि 'मंदिरों-मस्जिदों-गुरुद्वारों' से धार्मिक प्रवचनों के स्थान पर सांप्रदायिक हिंसा के आग सुलगाए जा रहे हैं। इन पवित्र प्रार्थना स्थलों पर मजहबी झंडे फहराए जा रहे हैं। इंसानियत की हत्या हो रही है, मजहब की आड़ में महिलाओं की आबरू लूटी जा रही है, बस्तियाँ जल रही है-

''किस जगह मंदिर बनेगा और मस्जिद किस जगह
इस बहस में और कितने चाहिए लोगों के सर''[15]

गाँव का धार्मिक परिवेश ही नहीं, सामजिक परिवेश भी बहुत बदला है। समाज विघटित हुआ है, जातिवादी हिंसा से लोग आज भी पीड़ित हैं, छुआछूत की स्थिति अब भी बनी हुई है, दलित पिछड़े हुए है। सामाजिक रूढ़ियाँ ग्राम्य समाज को अपने जाल में बांधे रखा है, दहेज के अभाव में बेटियों का विवाह करने में कठिनाई आ रही है-

''जाने कब बिटिया को अपनी दुल्हन-सा सजाता देखेंगे''[16]

गाँव की शिक्षा व्यवस्था की स्थिति अत्यंत जर्जर है। सरकारी शिक्षा नीति पर कटाक्ष करते हुए सुभाष चंद्र कुशवाहा कहते हैं कि सरकार बच्चों के लिए उचित और आधुनिक शिक्षा की व्यवस्था करने के बजाए प्रौढ़ शिक्षा पर जोर दे रही है, जबकि देश का भविष्य नई पीढ़ी के कंधों पर है-

''बच्चों से तो बस्ते छीने/ बूढ़े होकर पढ़ते चलिए''[17]

शिक्षा के अभाव में गाँव के भोले-भाले, मासूम लोग धार्मिक आडंबरों और अंधविश्वासों के चक्रव्यूह से निकल नहीं पाते हैं। संतों का वेश बनाकर धर्म के नाम पर कालाबाजारी की जा रही है, पूजा-पाठ का ढोंग रचकर गरीबों को ठगा जा रहा है-

''घंटों पूजा में रहता है/ लगता वह धनवान बहुत है
संतों-सा वह भेष बनाता/ लेकिन वो शैतान बहुत है''[18]

पाश्चात्य संस्कृति का अंधाधुन अनुकरण ग्रामीण समाज को अधिक प्रभावित किया है। पाश्चात्य संस्कृति की नकल को आज आधुनिकता की निशानी मानकर जीवन में उतारा जा रहा है। फलस्वरूप ग्रामीण समाज अपनी परंपरागत सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्यों से पिछड़ता जा रहा है। यह सत्य है कि मशीनीकरण के बहुत से फायदे हुए हैं, किंतु इसने परंपरागत हस्तकलाओं को नष्ट किया है, ग्रामीण लोक कलाओं को क्षति पहुँचाई है। सुभाष चंद्र कुशवाहा व्यंग्य करते हुए लिखते हैं-

''गाँव भले बदहाल हुए/ कंप्यूटर तो आया है''[19]

एक ओर गाँव में आधुनिक मशीनी उपकरणों के आगमन ने संचार क्रांति लाया है तो इसने गाँव की परंपरागत सांस्कृतिक ढाँचे को भी प्रभावित किया है। दादी-नानी के पास बैठकर कहानी सुनने की परंपरा समाप्त हो चुकी है-

''चाहे कंप्यूटर से कोई सीख दे पर आज भी
बच्चों को दादी व नानी की कहानी चाहिए''[20]

टी.वी. की रंगीनियों और फिल्मी बहारों ने गाँव के लोक गीतों फाग, बिरहा, लोरियों को भुला दिया है। आधुनिक उपकरणों ने ग्रामीण मानस को भौतिकवादी बना दिया है।

सुभाष चंद्र कुशवाहा ने आज के बदलते दौर में गाँव की वर्तमान छवि को उजागर करना श्रेयकर माना, क्योंकि वर्तमान समय बदलाव का समय है। परिवर्तन की प्रक्रिया ने समूचे देश को प्रभावित किया है, किंतु भारतीय गाँवों की स्थिति में जमीनी स्तर पर कोई खासा परिवर्तन लक्षित नहीं हो पाया है। सामाजिक विसंगतियों से गाँव का दामन मुक्त नहीं हो पाया है, मानवीय संवेदनाएँ मरी हैं, आदमी-आदमी में फर्क बढ़ा है। सुभाष चंद्र कुशवाहा यथार्थ के गजलकार हैं, इसलिए उन्होंने गाँव के कठोर यथार्थ को उजागर किया है। साथ ही वे आशावादी भी हैं कि गाँव की तस्वीर बदलनी चाहिए। उनकी गजलें जिंदगी की बात कहती हैं। सामजिक बुराइयों से लड़ने की बात कहती हैं। आपसी विवादों को भुलाकर प्यार-मोहब्बत से मिलकर रहने की बात कहती हैं। गाँव की तस्वीर बदलने के लिए समर्पण की बात कहती हैं-

''प्यार की चिट्ठी रखें दिल में उतर कर
दिल में जो नफरत का है वो खत बदल दें''[21]

साथ ही वे यह भी कहते हैं कि जमाने के साथ चलना भी आवश्यक है, अपने वाजिब अधिकारों की समझ होना और उसे प्राप्त करने की मनसा का होना भी आवश्यक है, वरना हक से वंचित रह जाएँगे-

''आगे बढ़ना सीखो, वरना/ हक से वंचित रह जाओगे''[22]

निष्कर्षत: सुभाष चंद्र कुशवाह की गजलें यथार्थ की

भूमि पर गाँव समाज का अवलोकन करती हैं, जो किसी भी प्रकार के दिखावेपन और बनावटीपन की भावना से बिल्कुल मुक्त है। उनकी चिंता गाँव के वास्तविक स्वरूप में आए परिवर्तन को लेकर प्रकट हुई है। गाँव का वास्तविक रूप उसकी आत्मीयता, बंधुत्व, सहयोग और एकता की भावना में निहित है। सुभाष चंद्र कुशवाहा गाँव में जन्मे हैं, ग्रामीण परिवेश में पले-बढ़े हैं। गाँव की पीड़ा, संत्रास और अभाव को उन्होंने बहुत करीब से देखा है। यही कारण है कि उनकी समस्त रचनाओं के केंद्र में ग्रामीण परिवेश है। इनके नायक कड़ी मेहनत और परिश्रम के पसीने से नहाए हुए गाँव के मजदूर और किसान हैं। इन्होंने समाज के पिछड़े, अल्पसंख्यकों और दलितों की अंतहीन पीड़ा को स्वर दिया है, उनके दर्द की मार्मिक अभिव्यक्ति की है। खेत, खलिहान, हल, बैल, किसान, झोपड़ी, कच्चे मकान, नदी, तालाब इत्यादि उनकी गजलों में प्रतीक रूप में आए हैं, जिसके कारण उनकी गजलों में सजीवता आई है। ❑

संदर्भ :

1. डॉ. अर्शद जमाल, गजल क्या है, zarinasani.org, Sep. 11, 2012
2. सुभाष चंद्र कुशवाहा, गाँव हुए बेगाने अब, मेधा बुक्स, दिल्ली, संस्करण-2004, पृष्ठ- 07
3. वही, पृष्ठ-27
4. वही
5. वही, पृष्ठ- 30
6. वही, पृष्ठ- 50
7. वही, पृष्ठ- 75
8. डॉ. मोती लाल, ग्रामीण-परिवर्तन और भैरव प्रसाद गुप्त के उपन्यास, साहित्य भंडार, इलाहाबाद, संस्करण- 2017, पृष्ठ- 17
9. सुभाष चंद्र कुशवाहा, गाँव हुए बेगाने अब, मेधा बुक्स, दिल्ली, संस्करण-2004, पृष्ठ- 29
10. वही, पृष्ठ- 78
11. वही, पृष्ठ- 107
12. वही, पृष्ठ- 92
13. डॉ. मोती लाल, ग्रामीण-परिवर्तन और भैरव प्रसाद गुप्त के उपन्यास, साहित्य भंडार, इलाहाबाद, संस्करण- 2017, पृष्ठ- 27
14. सुभाष चंद्र कुशवाहा, गाँव हुए बेगाने अब, मेधा बुक्स, दिल्ली, संस्करण-2004, पृष्ठ- 31
15. वही, पृष्ठ- 45
16. वही, पृष्ठ- 38
17. वही, पृष्ठ- 55
18. वही, पृष्ठ- 86
19. वही, पृष्ठ- 43
20. वही, पृष्ठ- 20
21. वही, पृष्ठ- 85
22. वही, पृष्ठ- 77

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

प्रसंग

दलित वर्ग के यथार्थ को दर्शाता - गूदड़बस्ती

पूजा धीमान

शोधार्थी
जम्मू विश्वविद्यालय
सहायक प्राध्यापक, राजकीय
महाविद्यालय रियासी (जेएंडके)
पिनकोड-182311
9697677106
poojadhemangm@gmail.com

भारतीय हिंदू समाज वर्ण व्यवस्था की बेड़ियों में जकड़ा हुआ है, जो सदियों से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वर्णों में बँटा चला आ रहा है। इसी व्यवस्था में सबसे निचले पायदान पर शूद्र जातियाँ आती हैं, जो धर्म, शास्त्र और सामाजिक परंपराओं की आड़ में शारीरिक शोषण और मानसिक उत्पीड़न का शिकार होती रही हैं। शूद्र श्रेणी के अंतर्गत एक ऐसा वर्ग भी आता है, जिसके लिए अछूत, अस्पृश्य, अवर्ण, हरिजन आदि शब्दों का प्रयोग किया जाता है। इस वर्ग के लिए 'हरिजन' शब्द महात्मा गांधी द्वारा दिया गया था, जिसका बाबा साहब अंबेडकर ने विरोध किया और 'दलित' शब्द का प्रचार किया।

संक्षिप्त हिंदी शब्द सागर में 'दलित' शब्द का अर्थ है- *''मसला हुआ, मर्दित, दबाया हुआ, रौंदा व कुचला हुआ, विनिष्ट किया हुआ।''*[1]

डॉ. कुसुमलता मेघवाल के अनुसार, *''दलित का शाब्दिक अर्थ है-कुचला हुआ। अत: दलित वर्ग का सामाजिक संदर्भों में अर्थ होगा, वह जाति समुदाय जो अन्यायपूर्वक सवर्णों या उच्च जातियों द्वारा दमित किया गया हो, रौंदा गया हो। दलित शब्द व्यापक रूप में पीड़ित के अर्थ में आता है, पर दलित वर्ग का प्रयोग हिंदू समाज व्यवस्था के अंतर्गत परंपरागत रूप में शूद्र माने जाने वाले वर्णों के लिए रूढ़ हो गया है।''*[2]

दलित लेखक कंवल भारती 'दलित' की परिभाषा देते हुए लिखते हैं कि - *''दलित वह है जिस पर अस्पृश्यता का नियम लागू किया गया है, जिसे कठोर और गंदे काम करने के लिए बाध्य किया गया है। जिसे शिक्षा ग्रहण करने और स्वतंत्र व्यवसाय करने से मना किया गया है और जिस पर सछूतों ने सामाजिक निर्योग्यताओं की संहिता लागू की, वही और वही दलित है, और इसके अंतर्गत वही जातियाँ आती हैं, जिन्हें अनुसूचित जातियाँ कहा जाता है।''*[3]

डॉ. श्यौराज सिंह बेचैन के अनुसार -*''दलित वह है, जिसे भारतीय संविधान ने अनुसूचित जाति का दर्जा दिया है।''*[4]

अत: दलित साहित्य से अभिप्राय उस साहित्य से है, जिसमें दलितों की पीड़ा, जीवन संघर्ष, आक्रोश आदि की अभिव्यक्ति हुई हो। दलित साहित्य डॉ. अंबेडकर के जीवन और साहित्य से प्रभावित है। सर्वप्रथम दलित साहित्य मराठी भाषा में

लिखा गया, परंतु वर्तमान में यह भारत की प्राय: सभी भाषाओं में लिखा जा रहा है।

इक्कीसवीं सदी दलित साहित्य के विकास में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है। वर्तमान में दलित और गैर-दलित लेखकों ने अपनी लेखनी के माध्यम से दलित वर्ग को गुलामी के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए प्रेरित करने के साथ-साथ उनके अधिकारों के प्रति भी जागरूक किया है। आज दलित साहित्य हिंदी साहित्य की लगभग सभी विधाओं में लिखा जा रहा है, जिसमें उपन्यास विधा में भी दलित उपन्यासों ने अपनी विशेष पहचान बनाई है।

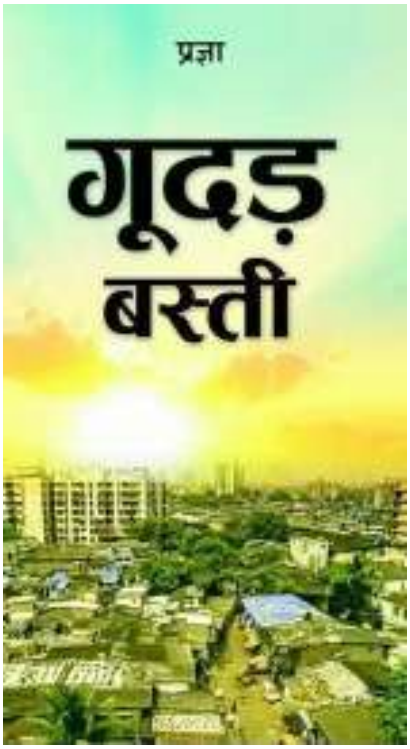

यदि उपन्यासों में दलित विमर्श की बात करें तो प्रेमचंद के कई उपन्यासों में यह पूरी संवेदना के साथ उभरकर सामने आया है। प्रेमचंद के पश्चात ओमप्रकाश वाल्मीकि, मोहनदास नेमिशराय, जयप्रकाश कर्दम, शिव प्रकाश सिंह, गिरिराज किशोर, मन्नू भंडारी आदि ने भी दलित जीवन की विभिन्न समस्याओं को अपने उपन्यासों के केंद्र में रखा है। दलित वर्ग को केंद्र में रखकर उपन्यास लेखन की जो परंपरा हिंदी साहित्य में चली आ रही है, इसमें प्रज्ञा कृत 'गूदड़बस्ती' उपन्यास भी उल्लेखनीय है। इसमें दलित वर्ग के संघर्ष की मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है।

वर्तमान में अर्थ का विशेष महत्व है। आर्थिक जटिलताओं के कारण मनुष्य का जीवन कितना घुटनशील, त्रासद एवं पीड़ादायक हो जाता है, इसका सजीव चित्रण हमें 'गूदड़बस्ती' उपन्यास में देखने को मिलता है। इसमें स्लम एरिया में जीवन यापन कर रहे निम्न जाति के लोगों की आर्थिक विपन्नता को चित्रित किया गया है। यह लोग मेहनत मजदूरी करके बड़ी कठिनाई से अपने परिवार का पेट पालते हैं। इस उपन्यास के प्रमुख पात्र सुरेंद्र के परिवार की आर्थिक स्थिति भी अच्छी नहीं है।

''महीने के आठ-दस दिन बड़ा काम निकल आए तो दिन बदल दूँ घर के। कितनी कोशिश करता हूँ हालात सुधरें तो इस मोहल्ले से अलग रहें पर... ।''[5]

भारत जैसे देश में आज भी सामाजिक भेदभाव चरम पर है। यह भेदभाव केवल स्वर्ण और दलितों में ही नहीं, अपितु हर उच्च-निम्न वर्ग में देखा जा सकता है। इसी के चलते स्वर्ण या उच्च वर्ग के लोग दलितों को अपने साथ न बैठाकर उन्हें जमीन पर बैठाते हैं, और उनके चाय पानी के बर्तन भी अलग रखते हैं। लेखिका प्रज्ञा ने भी अपने उपन्यास में सामाजिक भेदभावों पर पैनी नजर रखी है-

''इतना कि हम उनके चटाई बिछाने का इंतजार भी नहीं करते और जमीन पर जम जाते। उनके घर के लोग तख्त और कुर्सियों पर बैठते।''[6]

वर्तमान में भारत के शिक्षण संस्थानों में दलित विद्यार्थी प्राय: अपमानित होते रहते हैं। आज हमारा देश विकसित होने की ओर अग्रसर है, पर फिर भी ऐसी संकीर्णताएँ समाप्त होने की बजाय नए सिरे से किसी-न-किसी रूप में हमारे समक्ष आ ही जाती हैं, क्योंकि जाति व्यवस्था भारतीय समाज के रोम-रोम में बसी है, जिसका उन्मूलन कोई आसान कार्य नहीं है। विवेच्य उपन्यास में लेखिका ने शिक्षण संस्थानों में दलितों के साथ हो रहे भेदभाव को भी उजागर किया है। सुरेंद्र जब अस्वस्थता के चलते पंद्रह दिन बाद विद्यालय जाता है, तो वासुदेव सर उसके सिर पर हाथ फेरकर प्यार करते हैं, पर वहीं दूसरी ओर आर्या सर गाली-गलौच करते हुए पढ़ाने की बजाए उसे स्कूल की सफाई करने का काम सौंप देते हैं।

''रे सुरेंद्र! हाथ तो अब ठीक हो गया है तो लग जा का कल से काम पर। इस बार का सफाई मॉनीटर तू है

और तेरा पहला काम है कल से एक हफ्ते तक तुझे ही क्लास चमकानी है। जानता है न सफाई ढंग से न हुई तो यह बेंत बोलेगी।''[7]

आर्या सर दलित बच्चों को हीन भावना से ही देखते। वासुदेव सर के बार-बार यह कहने पर कि सर अगर आप इन बच्चों को अच्छे से पढ़ाओगे तो इनका जीवन सँवर जाएगा, तो आर्या सर कहते हैं-

''गटर के कीड़े आसमान छूने से तो रहे।''[8]

सुरेंद्र जब आगे की पढ़ाई के लिए नए स्कूल में जाता है तो उसे वहाँ भी जातिगत भेदभाव का शिकार होना पड़ता है। निम्न जाति का होने के कारण स्कूल की सफाई का जिम्मा उस पर और उसके जैसे दलित विद्यार्थियों को ही सौंपा जाता है।

''नहीं पापा उसके बाद सर ने कहा ये सफाई का जिम्मा बारी-बारी इन पहले वाले लड़कों का रहेगा, बाकियों को काम बाद में बताएँगे। जो लाइन एस.सी. वाली नहीं थी, उसे सर ने कोई काम नहीं बताया। क्यों पापा?''[9]

सिर्फ यही नहीं, स्कूल में जब किसी प्रतियोगिता के लिए सरस्वती वंदना की प्रैक्टिस चल रही होती है तो भारद्वाज सर सभी दलित छात्रों को उसमें से छाँटकर बाहर कर देते हैं।

''अब क्या यही भंगी-चमार रह गए हैं सरस्वती वंदना गाने के लिए। छांटकर सब सालों को बाहर कर दिया मैंने।''[10]

इस भेदभाव को उच्च शिक्षण संस्थान (कॉलेज)में भी देखा जा सकता है। यहाँ भी यह वैसा ही है, जैसे स्कूलों में होता रहा है।

''ये कैसा कूपन है सुरेंद्र? फादर्स डे पर सभी बच्चों को बाँट रहे हैं। चलकर देख, लिस्ट में हमारे नाम के नीचे एस.सी.लिखा है।''[11]

शिक्षण संस्थानों में एक साथ शिक्षा ग्रहण करते युवक युवतियों में प्रेम संबंध स्वाभाविक है, परंतु यदि निम्न जाति का युवक उच्च जाति की युवती से प्रेम कर बैठे तो उसे जातिरक्षक समाज की यातनाओं का सामना करना पड़ता है। विवेच्य उपन्यास के किशोर के साथ भी यही होता है। निम्न जाति का किशोर जब उच्च जाति की रितु को गुलाब का फूल और गुलाबी रंग के लिफाफे में कार्ड डालकर देता है तो वह आग बबूला हो उठती है और किशोर को अपमानित करती है। उसके सब दोस्त मिलकर किशोर की पिटाई भी करते हैं-

''साले! हमारी बराबरी करेगी तू? साला रैगरपुरिया। कहकर साहिल भाटिया ने कसकर एक थप्पड़ किशोर को रसीद किया।''[12]

जाति प्रथा सदियों से भारतीय समाज में चली आ रही है। भक्तिकाल के प्रमुख कवि कबीरदास ने 'जाति न पूछो साधू की, पूछ लीजिए ज्ञान' कहकर इसका विरोध भी किया, पर यह आज भी हमारे समाज में विद्यमान है, जो इसे खोखला कर रही है। भारतीय सामाजिक व्यवस्था ऐसी है कि यहाँ हर जाति अपने से नीची जाति ढूँढ़ ही लेती है। दलितों में भी कई उपजातियाँ पाई जाती हैं। यह भी अपने से नीच समझी जाने वाली जातियों से उसी प्रकार अमानवीय व्यवहार करते हैं, जैसे इनके साथ सवर्णों द्वारा किया गया होता है। विवेच्य उपन्यास में जब वाल्मीकि समाज का रामवीर सुरेंद्र के घर आता है तो उसकी माँ रामवीर के प्रति अस्पृश्यता का भाव रखती है-

''मम्मी ने उसके गिलास को हमारे रोज के बर्तनों से अलग रख दिया।... कई बार मुझे हँसी भी आती कि आर्या सर हमें नीचे समझते और हम रामवीर जैसों को अपने से नीचे समझते हैं।''[13]

सुरेंद्र की बहन मीनू जब कॉलेज पढ़ने जाती है तो वहाँ वाल्मीकि समुदाय के अजय नाम के लड़के से प्रेम कर बैठती है। उसके प्रेम संबंध का पता जब बड़े भाई दिनेश को चलता है तो वह इसका पुरजोर विरोध करता है और अपनी बहन के साथ मारपीट भी करता है। स्वयं दलित होने के बावजूद वह अजय के साथ मीनू के रिश्ते को स्वीकार नहीं करता है।

''पढ़ लिखकर भूसा भर गया है तेरे दिमाग में। अब भंगियों के जाएगी हमारी लड़की ...बहुत बड़ा फर्क है, वो टट्टी उठाने वाले, कूड़ा बीनने वाले, नाला साफ करने वाले।''[14]

इक्कीसवीं सदी के भारत में भी जाति को विशेष महत्व दिया जाता है। जाति व्यवस्था मनुष्यों द्वारा ही बनाई गई है, पर इसने मनुष्य का जीना ही दूभर कर दिया है। निम्न जाति के लोगों और उनके काम को यहाँ हेय दृष्टि से देखा जाता है। यही कारण है कि बहुत से लोग यहाँ जाति बदलकर रहते हैं। विवेच्य उपन्यास में सुरेंद्र का परिवार (और भी बहुत से परिवार) बस्ती में जाति बदलकर रहता है। इस बात का खुलासा पुष्पा करती है।

''तो तू कौन सा बामनों की औलाद है? कुछ कहते नहीं तो यह ना समझियो कि जानते भी नहीं... पंडिज्जी कहलवाने से कोई जात नहीं बदल जाती।''[15]

इस प्रकार विवेच्य उपन्यास में स्लम एरिया में बड़ी मशक्कत से जीवन यापन कर रहे दलित और उनके बच्चों के साथ हो रहे सामाजिक भेदभाव का सजीव चित्रण हुआ है।

आज शोषित वर्ग को स्वयं को अंधकारमय जीवन से बाहर निकालकर शोषक वर्ग के अत्याचारों के विरुद्ध आवाज उठाने की आवश्यकता है। उपन्यास में लेखिका ने सुरेंद्र की माँ और वासुदेव कर के माध्यम से इस बात की ओर संकेत किया है कि शिक्षा ही व्यक्ति में आत्मसम्मान और आत्मविश्वास की भावना जागृत कर सामाजिक भेदभाव को मिटाने में अहम भूमिका निभा सकती है।

''खूब पढ़ना बेटा जिंदगी के रास्ते उसी से निकलेंगे।''[16] ❑

संदर्भ :

1.रामचंद वर्मा, संक्षिप्त हिंदी शब्द सागर, पृ. 468
2. डॉ. कुसुमलता मेघवाल, हिन्दी उपन्यासों में दलित वर्ग, पृ.1
3. डॉ. अमरनाथ, हिंदी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली, पृ.171
4. ओमप्रकाश वाल्मीकि, दलित साहित्य का सौंदर्य शास्त्र, पृ.13
5. प्रज्ञा, गूदड़बस्ती, पृ.13
6. वही, पृ.64
7. वही, पृ.15
8. वही, पृ.27
9. वही, पृ.35
10. वही, पृ.45
11. वही, पृ.102
12. वही, पृ.105
13. वही, पृ.58
14. वही, पृ.110
15. वही, पृ.35
16. वही, पृ.30

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

रामधारी सिंह दिवाकर की कहानियों में विधवा नारी संघर्ष

ललिता देवी

शोधार्थी, हिंदी विभाग
जम्मू विश्वविद्यालय
जम्मू-180006
9596820521
sharmalalita0781@gmail.com

सारांश :

आधुनिक समय में भी भारतवर्ष में विधवा स्त्रियों को आए दिन कई प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। बढ़ती हुई आधुनिकता में भी पुरुष प्रधान समाज स्त्री को अपने अधीन रखकर अपना प्रभुत्व बनाकर रखता है। विधवाओं की स्थिति को सुधारने के लिए अनेक प्रकार के कानून बनाए गए हैं, किंतु इसके परिणाम संतोषजनक दिखाई नहीं देते हैं। आज भी समाज इन्हें हिकारत की दृष्टि से ही देखता है। इनकी स्थिति में सुधार के लिए अनिवार्य है कि इन्हें शिक्षित किया जाए, जिसके परिणामस्वरूप वह अपनी प्रतिभा को पहचान कर आत्मनिर्भर बन सकें।

कुंजी शब्द : आधुनिकता, प्रभुत्व, संतोषजनक, हिकारत, प्रतिभा, आत्मनिर्भर।

मूल आलेख :

भारतीय समाज के अंतर्गत विधवा नारी की दशा अत्यधिक खेदजनक रही है। विधवा होने के उपरांत उसे अपनी खुशियों, इच्छाओं को त्याग कर एक साध्वी की तरह जीवन निर्वाह करना पड़ता है। उसका किसी मांगलिक कार्य पर जाना, अच्छा खाना, पहनना, सजना-सँवरना पूरी तरह से वर्जित ठहराया गया है। पुरुष प्रधान समाज विधवा नारी को अपने अधीन रखने के लिए कठोर नियम बनाए हुए है। हिंदू धर्म के प्राचीन धर्मशास्त्र या स्मृति 'मनुस्मृति' में विधवा नारी के लिए विशेष रूप से कहा गया है, *''विधवा स्त्री को फूल, फल खाकर शरीर क्षीण करना चाहिए। पति के मरने पर व्यभिचार के ख्याल से पर पुरुष का नाम भी न लेय। एक पति की सेवा करने वाली स्त्री, विधवा होने पर अपनी मनोकामनाओं को छोड़ देय, मरण तक ब्रह्मचर्य से रहे और पति सेवा के फल की इच्छा रक्खे।''*[1]

इससे स्पष्ट होता है कि 'मनुस्मृति' में विधवा के पुनर्विवाह का कोई विधान नहीं है। सन 1856 के तहत हिंदू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम में विधवा विवाह को मान्यता तो दी, परंतु इसके उपरांत भी विधवा स्त्री को कितने ही संघर्षों से गुजरना पड़ता है। इसका स्पष्ट चित्रण रामधारी सिंह की कहानियों में दृष्टिगत होता है।

रचनाकार की 'मखान पोखर' कहानी की नायिका दुलरिया अपने अनुसार जीवन व्यतीत करना चाहती है। वह केवल अपने चार साल के वैवाहिक जीवन की सुखी अनुभूतियों को ही अपना संपूर्ण जीवन मान चुकी है। दुलरिया एक स्वाभिमानी, निडर तथा आत्मनिर्भरता का परिचय देतए हुए हमारे समक्ष प्रस्तुत होती है। दुलरिया हमेशा से ही अपने जीवन में कई समस्याओं का सामना करती रही है। पिता उसके

जन्म से इतने प्रसन्न हुए थे कि डेढ़ बीघा जमीन उसके नाम कर देते हैं, किंतु दुलरिया का कम उम्र में विधवा होना उस पर कई जिम्मेदारियों को बढ़ाता है, जिसके परिणामस्वरूप वह उसी खेत में काम करके अपना जीवन निर्वाह करती है। पति की असमय हुई मृत्यु के कारण पिता असहाय दुलरिया को अपने साथ घर ले आते हैं। किंतु पिता का साथ कितने ही समय का था। पिता की मृत्यु के पश्चात वह अपने भाई-भाभियों की आँखों की किरकिरी बन जाती है, जिसका मूल कारण वह जमीन थी, जो उसके पिता दुलरिया के नाम कर गए थे। गाँव के लोगों तथा परिवार वालों से उसे बार-बार यही सलाह दी जाती थी कि उसे दूसरी शादी करके फिर से अपना घर बसा लेना चाहिए। किंतु वह सबका विरोध करते हुए नजर आती है, जिसका स्पष्टीकरण दुलरिया की इन पंक्तियों में मिलता है, *''ना बाऊ, नहीं करूँगी बियाह। एक बेटा है। उसी का मुँह जोहकर निवाह कर लूँगी।''*[2]

दुलरिया दूसरे विवाह के लिए तैयार ही नहीं थी। उसके लिए पति के साथ बिताए गए कुछ सुनहरे पल ही काफी थे। किंतु समाज सदियों से ही स्त्रियों को पिता, पति तथा पुत्र के संरक्षण में ही रखना चाहता है। परंतु दुलरिया ने स्पष्ट कर दिया था कि औरत यदि चाहे तो स्वयं भी अपनी रक्षा कर सकती है, यह जरूरी नहीं कि एक आदमी की छत्रछाया में ही वह सुरक्षित रहे। दुलरिया एक निडर तथा आत्मनिर्भर महिला है। वह अपने लिए कुछ गलत सुनना स्वीकार नहीं करती है। जिसकी अभिव्यक्ति इन पंतियों में होती है, *''जलाकर देखे तो कोई दुलरिया को? छूकर देखे तो?... कच्चे बाँस की तरह दोनों पैर चीर कर न रख दूँ तो एक बाप की बेटी नहीं।''*[3]

पति की मृत्यु हो जाने के बाद विधवा स्त्री का जीवन कहीं से भी सुरक्षित दृष्टिगत नहीं होता। उसके विधवा रूप पर लार टपकाते कामुक प्रवृत्ति के पुरुष परिवार के अंदर और बाहर दोनों जगह विद्यमान रहते हैं। विवेच्य कहानी की नायिका इतनी बेबाक नारी के रूप में दर्शाई गई है, जो अपने खिलाफ उठती हुई हर बुरी नजर का विरोध करना भी जानती है। एक बार राजोसिंह ने उसे अकेले देखकर उसके साथ जबरदस्ती करनी चाही तो दुलरिया ने अकेले ही राजोसिंह का डटकर मुकाबला किया था। *''सिर से घास का बोझा गिर पड़ा और हँसुआ आ गया दुलरिया के हाथ में। सुनसान साँझ में राजोसिंह की चीख पुकार ने आस-पास के लोगों को जब तक एकत्र किया तब तक दुलरिया आगे बढ़ गई थी।''*[4]

दुलरिया उन स्त्रियों में से नहीं है, जो अपने साथ होते हुए अत्याचार को चुपचाप सहन करती हैं, बल्कि अपने विरुद्ध उठती हुई आवाज को ललकारती है। वह अपने जीवन में पारिवारिक, सामाजिक कष्टों को सहन करते हुए अंतिम समय तक संघर्षरत रहती है, दुलरिया के भाई-भाभी भी जमीन के लिए उसे हर प्रत्यक्ष तथा परोक्ष रूप से यातना पहुँचाते हैं। उसे घर से निकालने के लिए भाइयों द्वारा भरसक प्रयास भी किए जाते हैं। परंतु फिर भी दुलरिया अपने भाइयों तथा अपने घर को नहीं छोड़ती है। इतना ही नहीं, गाँव के मुखिया तथा लाल सेना वालों से भी उसे अपनी जमीन तथा भाइयों के घर को छोड़ने की धमकियाँ मिलती हैं। किंतु वह इन सब के उपरांत अपने निर्णय पर अडिग रहती है, जो इन पंक्तियों में स्पष्ट होता है, *''कुछ नहीं बोलती हूँ तो क्या समझते हो मुझको। ढहलेल-बकलेल।... बेसवा पतुरिया। बम पिस्तौल का भय दिखाते हो?... सुन लो। अपने भाई भौजाई का घर-आँगन नहीं छोड़ने वाली हूँ मैं। लड़ूँगी झगड़ूँगी, मुदा रहूँगी इसी आँगन में। कुछ भी है तो मेरे सगे भाई ही।''*[5]

दुलरिया गाँव तथा परिवर वालों से कई प्रकार की बातों को सुनने के बावजूद अपने परिवार को बांधकर रखने में ही लगी रहती है। विवेच्य कहानी के अंतर्गत दुलरिया भारतीय नारी के संपूर्ण गुणों को अपने में समाहित किए हुए है। कहानी में नया मोड़ तब आता है, जब दुलरिया अपने भतीजे के बीमार पड़ने पर 3-4 किलोमीटर पैदल दौड़ते हुए डॉक्टर के पास ले जाती है और भाई के पास पैसा न होने पर दवाइयों का खर्चा भी स्वयं ही करती है। अपने बेटे के लिए दुलरिया का स्नेह देखकर दुलरिया के भाई का बहन के प्रति द्वेष मन परिवर्तित हो जाता है, जिसके कारण आज उसे अपनी बहन की चिंता सताने लगती है। बड़े भईया ने भराई आवाज में दुलरिया से कहा था, *''सुन लो मुन्ना की माँ। एक आँगन में अब से एक ही चूल्हा जला करेगा और किसना (दुलरिया का बेटा) कल से भैंस चराने नहीं जाएगा, स्कूल जाया करेगा।''*[6]

दुलरिया के भाई में यह बदलाव दुलरिया के ही स्नेहिल व्यवहार का परिणाम था, जिसने गाँव के लोगों की बातों को न मानकर कठिन परिस्थितियों में भी अपने परिवार को नहीं छोड़ा था। दुलरिया के चरित्र द्वारा केवल

विधवा नारी के संघर्ष का चित्रण ही नहीं मिलता, बल्कि टूटते परिवार को बचाने वाली एक समर्पित भारतीय नारी का चित्रण भी दृष्टिगत होता है।

'खोयी हुई जमीन' कहानी की नायिका भी विधवा नारी के इसी व्यक्तित्व को प्रस्तुत करती है। विवेच्य कहानी की नायिका भी एक निम्न वर्ग के परिवार से संबंध रखती है। छोटी ही उम्र में पति की मृत्यु के बाद ससुराल की जमीन-जायदाद से बेदखल होकर पिता के साथ वापस मायके लौट आती है। पिता अपनी बेटी को जीवन निर्वाह के लिए पाँच बीघे जमीन देकर इस दुनिया से चले जाते हैं। किंतु पिता के इस दुनिया से जाने से भरे-पूरे परिवार की दुर्गति होती है। जीवन भर परिवार का ख्याल रखने वाली बुआ की स्थिति अत्यधिक करुणामयी बन गई थी। बुआ की करुणा से भरी हुई स्थिति इन पंक्तियों के माध्यम से झलकती है, *''जीवन-भर माँ की ममता बाँटने वाली बड़ी बुआ के लिए क्या अंतिम घड़ियों में भीख का बासी आता खाना ही शेष रह गया था।''*[7]

पिता के गुजर जाने के बाद बुआ की देख-रेख करने वाला कोई नहीं था। पिता ने जो पाँच बीघा जमीन उसके नाम करवाई थी, उस पर उसके भाइयों की नजर थी, जिसको इन पंक्तियों के माध्यम से उद्घाटित किया गया है, *''क्या सारे संबंधों की बुनियाद आदमी की आर्थिक स्थिति ही होती है? भाई और बहन का रिश्ता, बहन और बहन का रिश्ता और ऐसे सारे रिश्ते क्या एकमात्र इसी आधार से सार्थक या निरर्थक होते हैं।''*[8]

आलोच्य कहानी में बुआ की दशा बहुत ही दयनीय है। उसके अपने ही भाई उसके साथ अमानवीय व्यवहार ही नहीं करते, बल्कि उसकी बेटियों को भी नौकरानी बनाकर रखते हैं। भाइयों के लिए केवल धन-दौलत और जमीन-जायदाद का ही मूल्य था, बाकी उनके लिए बहन-भाई के रिश्ते का कोई महत्व नहीं था।

प्रस्तुत कहानी में जहाँ बुआ के अपने ही भाई उसकी जमीन हड़पने के लिए जालसाजी कर रहे थे, वहीं दूसरी तरफ बुआ का छोटा भतीजा उसकी जमीन बचाने में उसकी सहायता करता है। वह बुआ की जमीन उसी के नाम करवा देता है, जिसका स्पष्ट माध्यम अमरेश की इन पंक्तियों में मिलता है, *''अब आपको मुकदमे की तारीखों पर दौड़ना नहीं पड़ेगा बुआ। वह पाँच एकड़ जमीन मैं आपके नाम रजिस्ट्री करने जा रहा हूँ।''*[9] बुआ की अच्छाई और परिवार के प्रति उसका आत्मिक लगाव केवल उसका भतीजा ही समझ पाता है। अमरेश के हृदय में बुआ के प्रति सहानुभूति व संवेदना है। वह उनकी खोई हुई जमीन वापस दिलवाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

निष्कर्षतः कह सकते हैं कि वर्तमान में विधवाओं के प्रति रूढ़िगत विचारधाराओं में बदलाव तो आ रहा है, अपितु यह पर्याप्त नहीं है। दोनों ही कहानियों में अगर विधवाओं की स्थिति में सुधार हुआ है तो यह उसकी अपने परिवार के प्रति निष्ठा, स्नेह एवं लगाव के कारण है, न कि पुरुष के अहंकार व अधिकार के कारण हुआ है। विधवाओं की दशा को सुधारने के लिए शिक्षित वर्ग को रूढ़िवादी विचारधारा रखने वाले लोगों की सोच को बदलकर समाज में विधवाओं के प्रति सहानुभूति को जगाना होगा कि औरत केवल विधवा ही नहीं, सबसे पहले वह भी एक मनुष्य है। जन्म-मृत्यु उसके बस की बात नहीं है। विधवाओं की स्थिति में सुधार के लिए चाहिए कि उन्हें अधिक-से-अधिक शिक्षित कर तथा कला-कौशल में निपुण बनाया जाए, जिससे वह आत्मनिर्भर बन सकें। ❑

संदर्भ :

1.पंडित गिरिजाप्रसाद द्विवेदी, मनुस्मृति, पाँचवाँ अध्याय, पृ. 187
2. रामधारी सिंह दिवाकर, मखान पोखर, पृ. 68
3. वही, पृ. 66
4. वही, पृ. 75
5. वही, पृ. 74
6. वही, पृ. 84
7. रामधारी सिंह दिवाकर, धरातल, पृ. 98
8. वही, पृ. 101
9. वही, पृ. 104

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

रणेन्द्र कृत 'गायब होता देश' उपन्यास में आदिवासी अस्मिता का प्रश्न

लक्ष्मी देवी

शोधार्थी, हिंदी विभाग
जम्मू विश्वविद्यालय
जम्मू-180006
7006061930
ldevi0234@gmail.com

सारांश :

विज्ञान के इस युग में आज भी आदिवासी प्रकृति पर ही आश्रित हैं। हजारों वर्षों से उनकी संपत्ति के मुख्य स्रोत जंगल, पहाड़, घाटियाँ एवं नदियाँ हे रहे हैं। जंगलों तथा पहाड़ों से खाद्य पदार्थ संग्रह करना, नदियों तथा तालाबों से मछली पकड़ना तथा कहीं-कहीं घाटियों व अन्यत्र पहाड़ी ढालों पर कृषि करना ही उनकी आजीविका के प्रमुख साधन रहे हैं। आधुनिक तौर-तरीके बरतने वाले तथा सभ्य कहे जाने वाले लोगों की अपेक्षा सभ्यता की दौड़ में पिछड़ी समझी जाने वाली जनजातियों का सामाजिक एवं आर्थिक जीवन भौगोलिक पर्यावरण के प्रत्यक्ष प्रभाव से ओतप्रोत है। अत: इन्हें जीवन यापन करने के लिए प्रकृति से निरंतर संघर्ष और उदरपूर्ति के लिए कठोर परिश्रम करना पड़ता है।

कुंजी शब्द :

भूमंडलीकरण, अस्मिता, उपयोग, पूँजीपति, हुनरमंद, आशियाना।

मूल आलेख :

आदिवासी जनजातियों की अर्थव्यवस्था उन्नत समाज की अर्थव्यवस्था से नितांत भिन्न होती है। वास्तविकता तो यह है कि यह आधुनिक अर्थ वाले विकास की आरंभिक सीढ़ी पर है और नगरीय समाज विकास के शिखर पर। जब हम नगरीय समाज के परिप्रेक्ष्य में उनका मूल्यांकन करते हैं तो ज्ञात होता है कि जनजातीय समाज अत्यंत सरल है और इनकी आवश्यकताएँ बहुत सीमित हैं। यह अपनी आवश्यकताओं के लिए प्रधानत: प्रकृति पर निर्भर रहते हैं। वन न केवल इनके वांछित प्रिय निवासक्षेत्र रहे हैं, बल्कि आजीविका के स्रोत भी हैं। आरंभिक काल में ये वन इन्हें समुचित शिकार प्रदान करते थे। वनों से प्राप्त कंद, मूल, फल आदि इनके मुख्य भोजन रहे हैं। वनों से इनका इतना तालमेल है कि इनके द्वारा वन्य वस्तुओं के दोहन से परिस्थिकीय-तंत्र को क्षति नहीं पहुँचती थी, बल्कि उनका संरक्षण ही होता था। ये कई उपयोगी वृक्षों को देवता के रूप में स्वीकार कर उनकी रक्षा भी करते थे। औद्योगिक मानव के लिए तो वन विभिन्न कच्चे माल के स्रोत होते हैं। यद्यपि वनों का विस्तार घट रहा है और इनका वनों के दोहन का कानूनन

अधिकार भी घट गया है, फिर भी यह लोग वनों में ही जीवन यापन का सक्षम प्रयास करने में जुटे रहते हैं।

रणेन्द्र का 'गायब होता देश' उपन्यास मुंडा आदिवासियों के जीवन पर केंद्रित है। उपन्यास में आधुनिक विकास के कारण मुंडाओं के कई गाँव लुप्त हो रहे हैं। आज आधुनिक सभ्य समाज का विकास हो रहा है, लेकिन कई आदिवासी जनजातियाँ लुप्त हो गई हैं और कई लुप्त होने के कगार पर हैं। आज शहरों का विकास गाँव की बलि पर, कृषि की बलि पर हो रहा है, उससे विस्थापन की समस्याएँ बढ़ी हैं। आज के दौर में रेलमार्ग, एक्सप्रेस हाईवेमार्ग, खनिज संसाधनों की खुदाई, बांध बनाने, औद्योगिक स्थापना के लिए अनेक विकासमूलक कार्यों के लिए उपजाऊ जमीन अधिग्रहीत की जा रही है और उसी अधिग्रहण की बदौलत बहुत से लोग अपने गाँव में से विस्थापित हो रहे हैं और उस विस्थापन से उनका सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक दृष्टि से पतन हो रहा है, उसी का चित्रण उपन्यासकार ने किया है। उपन्यास में प्राकृतिक संसाधनों की अंधाधुंध लूट करने वाली उपभोगवादी, पूँजीवादी समाज की बात है, जिससे उपन्यास में उत्तर आधुनिक विचारधारा का रूप भी प्रत्यक्ष नजर आता है। 'गायब होता देश' में आदिवासियों के सरना धर्म और मेंगालिथों प्रसंग की भी गहराई से चर्चा हुई है, जिससे यह उपन्यास मुंडा जनजाति के विस्तृत जीवन को दर्शाता है। इस उपन्यास में किस तरह आदिवासियों के जल, जंगल, जमीन पर जबरन अधिकार किया जाता है-यह दर्शाया गया है। वैसे यह उपन्यास विकास विरोधी हलचलों को दिखाने का प्रयत्न करता है, साथ ही किस तरीके से विकास हो रहा है और विकास की आड़ में आदिवासियों को बहलाया जाता है, फुसलाया जाता है उसका चित्रण है।

उपन्यास आज के उपनिवेशवादी दौर में आदिवासी समाज के भूत, वर्तमान और भविष्य के संकट की महागाथा है। भारत में आर्थिक उपनिवेश के क्रम में आदिवासी बहुल क्षेत्र में बहुराष्ट्रीय कंपनियों की स्थापना की जा रही है, जिसके कारण आदिवासी लगातार विस्थापित हो रहे हैं। उक्त उपन्यास में यह स्थिति दुलमी बाँध परियोजना से स्पष्ट होती है - *''इसे पूरा करने के लिए सत्रह गाँवों का अस्तित्व मिट जाएगा। स्थानीय आदिवासियों द्वारा विरोध और सरकारी प्रयास के बीच संघर्ष चलता है। योजना पूरी होने से पहले क्षेत्र को विशेष आर्थिक क्षेत्र (सेज) घोषित कर दिया जाता है। सेज के नाम पर आदिवासियों की जमीन की लूट का धंधा शुरू होता है। यह प्रक्रिया जारी ही है कि इसी बीच रियल स्टेट वालों की नजर इस पर पड़ती है।''*[1]

आदिवासी समुदाय के जागरूक लोगों को अत्याचार का सामना करना पड़ता है। उनके संघर्ष को धूमिल किया जा रहा है। उपन्यास में पात्र वीरेन, परमेलवर पाहन, अनुजा दी, डॉ. सोमेलवर सिंह मुंडा, एतवा दादा, सोनामनी दीदी द्वारा किए जा रहे विरोध को विकास विरोधी कहकर दबाया जाता है और नक्सली घोषित कर इनकी हत्या करवा दी जाती है - *''परमेलवर पाहन तो भारतीय सेना में रहते हुए 1971 में पाकिस्तान के साथ युद्ध में अपनी वीरता के लिए राष्ट्रपति द्वारा वीर चक्र प्राप्त कर चुका है। दुलमी बाँध परियोजना का विरोध करने के कारण नक्सली घोषित कर उसका फर्जी एनकाउंटर कर दिया जाता है।''*[2]

रणेन्द्र ने इस उपन्यास के माध्यम से यह संदेश भी दिया है कि सिर्फ कोकराह ही नहीं, बल्कि भूमंडलीकरण की प्रक्रिया से अपना देश भी धीरे-धीरे गायब होता जा रहा है। हमें जरूरत है भूमंडलीकरण के सही-सही रूपों को पहचानने और उसे स्वीकारने की तभी उचित न्याय हो सकता है।

कॉरपोरेट सेक्टर आदिवासी महिलाओं को शारीरिक भोग के लिए इस्तेमाल करता है। पीड़िता एवं उसके परिवार को भी प्रताड़ित किया जाता है। यहाँ तक कि इनकी हत्या भी कर दी जाती है। उपन्यास में अनुजा नामक स्त्री के साथ थानेदार द्वारा की जा रही जबरदस्ती का विरोध करने पर पाहन बाबा की हत्या कर दी जाती है। एतवा मुंडा की पत्नी के साथ बलात्कार किया जाता है। एतवा द्वारा इसका विरोध करने पर उसको नक्सली घोषित कर दिया जाता है, जो हमारे समाज के विद्रूप चेहरे को दर्शाता है। *''तभी मंगरा माय पर नजर पड़ी। अनुजा-सोमा दी उसे जबरदस्ती कपड़ा पहनाए जा रही थी। वो सब खोल-खोल के नंगे हो जा रही थी। पूरा दहिये नोचल-काटल लग रहा था। एक णे छाती से पट्टी के बाद भी खून टपकिए रहा था। पैरों के बीच से खून की धार। एतना खून कि जहाँ खड़ी थी वहाँ की मिट्टी लाल हो गई थी। पचास-पचास साल की बूढ़ी अधेड़, एंगा-माय के साथ ई अत्याचार कौन राकस लोग किया।''*[3]

लेखक ने उपन्यास में आदिवासी युवतियों की खरीद-फरोख्त की तरफ संकेत भी किया है। कंपनियों की दृष्टि में इस समुदाय का जीवन पशुओं के बराबर है, क्योंकि दवा कंपनी भी अपने डॉक्टरों से मिलकर इन पर अपनी दवाओं का ट्रायल करती है, जो उपन्यास के पात्र किशन दा और अमरेन्द्र मिसिर के इस संवाद से स्पष्ट होता है, जब डॉ. सिन्हा के विषय में कहते हैं-*''ये सिन्हा डॉक्टर जो सरकारी हॉस्पिटल का दवा बेच दे रहा था वे ही अपना प्राईवेट क्लिनिक में मुफ्त में दवा दे रहा है। शक तो होना था सर! खाली कुछ फार्म सब में ढेपा-दस्तख्त लगता है। विशेष बात ई कि ऊ दवइया सब बाजार में नयँ मिलता है।''*[4]

जेम्स मिल के आदिवासियों के साथ सहानुभूति भरे व्यवहार के पीछे उनका षड्यंत्रकारी चरित्र एवं व्यक्तिगत स्वार्थ है। सरकारों की शोषणकारी नीति से आदिवासी इलाकों से अत्यधिक मात्रा में खनिजों का दोहन हो रहा है। विकास की अंधी दौड़ में हम अपने आदिवासी समुदाय के मौलिक अधिकारों को भी नजर अंदाज कर रहे हैं। विकास के इस शोरगुल में आदिवासी व आदिवासी आवाज गायब होती जा रही है- *''उधर सोनामनी दी-नीरज पाहन 'हत्यारे को फांसी' और पाहन बाबा हत्याकांड जाँच के लिए जुलूस, धरना प्रदर्शन करते तो दूसरी ओर दुरगंदड़ बचाओ संघर्ष समिति ने नदी को अतिक्रमण मुक्त, क्लीन किशनपुरग्रीन किशनपुर, गंदी बस्तियों का स्थानांतरण आदि माँगों को लेकर ज्यादा बड़ा जुलूस, प्रदर्शन, सेमिनार, कॉन्फ्रेंस की झड़ी लगा रखी थी। नतीजन सारे शोरगुल बाबा की हत्या के सवाल होकर रह गए। ... उसके बाद आज न किशन दा हैं और न अनुजा सोमा दी का कोई पता। आदिवासियों की गाँवों-बस्तियों का उजड़ना पहले से भी तेजी से हो रहा है।''*[5]

आदिवासी समाज के शोषण का कारण कुछ धनलोलुप आदिवासी ही हैं। आदिवासी समाज में भी एक पूँजीपति वर्ग होता है, जो अपने ही समुदाय के लोगों के अधिकारों से समझौता करता है। किशनपुर में रियल स्टेट के आने के पश्चात आदिवासी जमीनों पर निर्माण के वक्त कुछ फ्लैट आदिवासियों के लिए आरक्षित किए गए थे, जो कि केवल एक साजिश का ही हिस्सा था। फ्लैट तैयार होन के बाद शहरी लोगों को बेच दिए जाते हैं, जो कि आदिवासियों के साथ एक धोखा सिद्ध होता है। उन्हें पुन: अपनी पहले वाली दयनीय स्थिति में रहना पड़ता है कि इसके साथ-साथ आदिवासी समाज को शहर से आए हुए लोगों के घर में मजदूरी करनी पड़ती है और ये शहरी लोग इनका जीवन-स्तर बेहतर होने नहीं देते। उपन्यास में किशनपुर एक्सप्रेस में पत्रकार किशन दा के एक आलेख से यह स्थिति स्पष्ट होती है- *''जब तक यह मलीन बस्तियाँ*

सेवकों-गुलामों की रहवास होती हैं, बर्दाश्त की जाती हैं। लेकिन जैसे ही ये बस्तियाँ खुद मुख्तार होने लगती हैं, हुनरमंद पीढ़ी अपने पैरों पर खड़ी होने लगती है, वे अखरने लगती हैं। जैसे ही काम वाली बाई का बेटा या माली की बेटी बाइक-स्कूटी पर नजर के सामने से फर्राटे से निकलने लगते हैं, वैसे ही जलन की दाह निकलनी शुरू हो जाती है।''[6]

अत: उपन्यासकार ने इसमें यह बतलाने का प्रयास किया है कि किस तरह विकास के नाम पर आज भी मुंडा आदिवासी समाज की सभ्यता और संस्कृति के साथ-साथ उनका अपना आशियाना भी उजाड़ा जा रहा है। जल, जंगल, जमीन और प्राकृतिक संसाधनों का तीव्रगति से दोहन हो रहा है। कभी बांध बनाकर तो कभी बांध तोड़कर। भूमंडलीकरण से उपजा यह निजीकरण व रियल एस्टेट सुरसा की तरह इस तरह मुँह बाए हुए है कि कितनी जल्दी कितना ज्यादा से ज्यादा दोहन कर लिया जाए। आज यही हो रहा है विस्थापन के नाम पर कम से कम कीमतों में आदिवासियों की जमीन हथिया लेना और उन्हें हमेशा के लिए मुसीबतों और ढेर सारी समस्याओं की खाई में धकेल देना। लेखक रणेन्द्र ने 'गायब होता देश' में इन सभी मुद्धों व समस्याओं पर बहुत गंभीर होकर चिंतन किया है। रणेन्द्र ने इस उपन्यास के माध्यम से यह संदेश भी दिया है कि सिर्फ कोकराह ही नहीं, बल्कि भूमंडलीकरण की प्रक्रिया से अपना देश भी धीरे-धीरे गायब होता जा रहा है। हमें जरूरत है भूमंडलीकरण के सही-सही रूपों को पहचानने और उसे स्वीकारने की तभी उचित न्याय हो सकता है। ❑

संदर्भ :

1. शर्मा, डॉ. सत्यपाल (सं.), मीन, टीकम चन्द्र, आदिवासी जीवन संस्कृति, संघर्ष और हिन्दी-साहित्य, प्रोग्रेसिव बुक सेंटर, वाराणसी, प्रथम संस्करण 2016, पृ.-125
2. वही, पृ.-126
3. रणेन्द्र, गायब होता देश, पेंगुइन बुक्स इंडिया, प्रथम संस्करण, 2014, पृ.-158
4. वही, पृ.-228
5. वही, पृ.-164
6. वही, पृ.-219

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

त्रासदी

बाजारवाद के संदर्भ में 'मन्नत टेलर्स'

शिवाली शर्मा

शोधार्थी, हिंदी विभाग
जम्मू विश्वविद्यालय
जम्मू-180006
70061501104
Shivalisharma1000@gmail.com

शोध-सार :

बाजारवादी अर्थव्यवस्था के बढ़ते प्रभाव के कारण दुनिया के सभी देशों में विश्व विजेता बनने की प्रतिस्पर्द्धा लगी हुई है। आर्थिक बदलाव देश में अर्थव्यवस्था के साथ ही सामाजिक परिवेश तथा पारिवारिक परिदृश्य को भी परिवर्तित कर रहा है। बीते कुछ वर्षों से समाज में जो परिवर्तन दिखाई दे रहा है। वह बार-बार मानव मन को उद्वेलित करता है। आधुनिकता की इस अंधी दौड़ ने जनसाधारण को सबसे आधिक प्रभावित किया है। न्यायिक व्यवस्था इनके छोटे- छोटे सपनों को तोड़कर भविष्य को अंधेरे की तरफ धकेल रही है, जिसे लेखिका प्रज्ञा के 'मन्नत टेलर्स' कहानी संग्रह में बखूबी देखा गया है। 'मन्नत टेलर्स' कहानी संग्रह के माध्यम से यह दर्शाने का प्रयास किया गया है कि आज का समय जीवन के लिए अत्यधिक संघर्षमय बना हुआ है, जिसमें प्रत्येक प्रश्नों का समाधान ढूँढ़ना कठिन है। किंतु विपरीत परिस्थितियों को देखते हुए लेखिका आशा की उम्मीदों को बांधते हुए मानव के बढ़ाते हुए मनोबल की ओर इशारा करती है, क्योंकि यह उम्मीद वैसी ही दिखाई दी है जैसे एक बड़ी चट्टान के नीचे कोई नन्हीं-सी कोंपल बाहर निकलने का प्रयास कर रही हो।

कुंजी शब्द :

मीन मेख, अंधड़, चुंधिया, मुद्रा, संत्रास, प्रत्यक्षता, वंचित, जद्दोजहद, विस्थापन, कोंपल।

मूल आलेख :

बाजारवाद व भूमंडलीकरण संसार की पूँजीवादी शक्तियों के प्रभाव से संचारित होने वाली विश्व की आर्थिक प्रक्रिया है, जिसमें विश्व की बाजार व्यवस्था उनके राजनैतिक निर्णय तथा प्रत्येक देश के अर्थ तंत्र को बलपूर्वक विकास के लिए भूमंडलीकरण से न चाहते हुए भी जुड़ना पड़ता है। बाजारवाद के संदर्भ में प्रभा खेतान अपने विचार इस प्रकार अभिव्यक्त करती हैं, *''भूमंडलीकरण वह प्रक्रिया है, जो वित्त पूँजी के निवेश उत्पादन और बाजार द्वारा राष्ट्रीय सीमा में ही वर्चस्वी नहीं, बल्कि सीमा से परे भूमंडलीय आधार पर निरंतर अपना प्रसार करना चाहती है।''*[1]

भूमंडलीकरण एक ओर आम आदमी को भौतिक सुख संपदा की तरफ आकर्षित कर रहा है, वहीं दूसरी ओर वह उसे अपनी माया से भ्रमित कर उसमें बची मानवता को समाप्त कर रहा है, जिससे व्यक्ति अपने निजी स्वार्थ के कारण संवेदनहीन बनता जा रहा है। वह आस-पड़ोस तो दूर, अपने परिवार के सदस्यों को भी समय नहीं दे पाता।

बाजारवाद व भूमंडलीकरण के बढ़ते प्रभाव के कारण अनेक साहित्यकारों ने इसे गंभीरता से लिया तथा अपने-अपने साहित्य में इन ज्वलंत समस्याओं को चित्रित करने का प्रयास किया है, जो कि मनुष्य को संवेदनहीन कर उसे धीरे-धीरे मशीन बनाती जा रही हैं। इसी क्रम में नई लेखिकाओं में अपना प्रमुख स्थान बनाने वाली वरिष्ठ लेखक रमेश उपाध्याय की पुत्री प्रज्ञा हैं, जो साहित्य के क्षेत्र में अपना विशिष्ट स्थान बना रही हैं।

लेखिका के 'मन्नत टेलर्स' कहानी संग्रह की तेरहवीं दस्तक, पिछली गली, मन्नत टेलर्स, जिन्दगी के तार जैसी कहानियाँ बाजारवाद के प्रभाव से प्रभावित हुए समाज के द्वंद्ध को चित्रित करती हैं।

लेखिका का मानना है कि पिछले कुछ दशकों से समाज में जो तेजी से बदलाव आ रहा है, वो चिंताजनक है। भूमंडलीकरण के उदय के साथ अनेक आविष्कार हुए और इन आविष्कारों ने जहाँ एक ओर समाज के जीवन को आसान किया तो वहीं उसे पूरी तरह से मशीनीकरण पर निर्भर रहने के लिए बाध्य भी किया, जो कि उसके शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य को कमजोर कर रहा है। उदाहरण के लिए मोबाइल फोन उपयोगी होने के साथ एक ही घर में रहते हुए पारिवारिक सदस्यों में अलगाव की स्थिति को पैदा करता है, जिसका प्रमाण लेखिका की तेरहवीं दस्तक कहानी की इन पंक्तियों में मिलता है-

''तुम लोग सारे दिन फोन पर ही जमें रहते हो बस। मोबाइल क्या दिलाया आफत ही बुला ली अपने लिए। जरूरत की चीज को तुमने मुसीबत की चीज बना लिया है। अपने लिए भी और हमारे लिए भी।''[2]

वर्तमान में मोबाइल का प्रचलन इतना बढ़ चुका है कि वह हर आयु के व्यक्ति की प्राथमिकता बन गया है। प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह कार्यक्षेत्र में हो या परिवार के बीच में वह फोन चलाने के लिए समय निकाल ही लेता है। यही उसके मनोरंजन का आज प्रमुख साधन बन चुका है। किंतु इसके अत्यधिक प्रयोग से कई परिवारों में तनाव बढ़ रहा है।

तकनीकी युग में पैदा होने के कारण अभिभावक व बच्चों के बीच पीढ़ी का अंतराल का दिखाई देना सामान्य बन चुका है। आजकल की पीढ़ी स्वयं को इतनी योग्य समझती है कि वह अपनी व्यक्तिगत समस्याओं से माता-पिता को दूर रखना चाहती है। वह अपनी परेशानियों के हल सोशल साइट्स पर खोजती है, जो कि इनके व्यक्तित्व को भावनात्मक स्तर से दूर व्यावहारिकता की ओर लेकर जा रहा है।

बाजारवाद की चकाचौंध ने सबसे अधिक देश के युवाओं को भ्रमित किया है, जिसके कारण वह स्वदेश को छोड़कर विदेश की ओर बढ़ रहे हैं। वे वहाँ पर कार्य करके विदेशी मुद्रा कमाना चाहते हैं, जिससे कम समय में यह अपने सपनों को साकार कर सकें। इस तरह के आत्मकेंद्रित निर्णयों की वजह से कई परिवार टूट जाते हैं, जिसे लेखिका ने 'जिन्दगी के तार' नामक कहानी में बखूबी दर्शाया है-

''बहनोई लवली के भाई की तरह ही विदेश में टैक्सी चलाता था पर यहाँ आकर अपने ठाट-बाट, दिखावे और खाने-पीने पर की गई, ऐश से रौनक को चुंबक की तरह खींचने लगा। बहनोई को उसे अपने साथ ले चलने और नोट से नहलाने का सपना रौनक को रास आ गया। अब उसकी एक ही रट थी-यहाँ रहना बेकार है।''[3]

कहानी का पात्र रौनक अपने हठ के कारण घर में अशांति पैदा करता है। वह अपनी पत्नी के विद्रोही स्वरों को दबाने के लिए उसे शारीरिक रूप से प्रताड़ित करता है। यहाँ तक कि वह अपने बच्चों व पत्नी को घर से निकाल देता है।

देश के महानगरों में भूमंडलीकरण का बढ़ता प्रभाव-सा दिखाई दे रहा है, जिसमें बड़ी-बड़ी इमारतें, आलीशान मॉल्स और मल्टीप्लेक्सेस सबसे अधिक जन साधारण के जीवन को प्रभावित कर रहे हैं। फुटपाथ पर छोटी-छोटी रेहड़ी लगाकर परिवार को पालने वाले दिहाड़ीदार मजदूरों को व्यवस्था के कर्मचारी अतिक्रमण का आरोप लगाकर

'मन्नत टेलर्स' की कहानी अंत में करवटें बदलते हुए बाजारवाद की वास्तविकता का परिचय करवा देती है, क्योंकि इसी भूमंडलीकरण ने बड़ी सरलता से कारीगरों के परंपरागत काम-धंधों को बुरी तरह से क्षति पहुँचाई, जिससे प्रभावित होकर कहानी का नायक उन हजारों पाठकों का प्रतिनिधित्व करता है, जिनके मन में बाजारवाद के दुष्प्रभावों से कई प्रकार के प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सभी कारीगर कहानी के पात्र रशीद मियाँ की तरह भाग्यशाली नहीं हो सकते तथा केवल एक के सकुशल जीवन को देखकर हम देश के उन सभी कारीगरों के भविष्य को नजरअंदाज नहीं कर सकते, जोकि बाजारवाद की आँधी के कारण अस्त-व्यस्त हुए हैं।

उन्हें एक स्थान से दूसरे स्थान के लिए खदेड़ देते हैं। जिन्होंने कई वर्षों से एक जगह में रहकर साप्ताहिक हाट लगाकर कठोर परिश्रम से अपनी पहचान बनाई होती है, उन्हें उस क्षेत्र से हटाकर दूसरे स्थान की ओर धकेल दिया जाता है, जिससे उन्हें एक नए स्थान पर नई शुरुआत करने के लिए उन्हें कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। जैसे बार-बार खदेड़े जाने पर आर्थिक तंगी के कारण रेहड़ियों पर कम मात्रा में सब्जी व फल रखकर उनको बेचने का प्रयास करना, जिसमें कई बार तो वह उच्च वर्ग के हाथों अपमान को झेलते हैं, उनकी फल व सब्जी को सस्ता व घटिया भी कहा जाता है। हद तो तब हो जाती है, जब जबरन उनके घरों व बस्ती पर बुलडोजर चलाए जाते हैं, जिसका विरोध करने पर वह सरकारी कर्मचारियों के हाथों शारीरिक दंड व गाली-गलौच का शिकार बनते हैं। शोषित वर्ग के साथ हुई अभद्रता को 'पिछली गली' नामक कहानी की इन पंक्तियों में लेखिका प्रज्ञा द्वारा कि उद्घाटित किया गया है-

''साहब इस देश में गरीबों की सुनवाई कहीं होगी कि नहीं..... ? आज यहाँ से उठा दो कल वहाँ से .....साहब की गर्जना माहौल को चीरकर निकली 'साले' तू बड़ा चौधरी बन रहा है। नेता है क्या इनका ? गार्ड अबे, कहाँ मर गया, उठा के फेंक साले को मुँह उठाके चले आते हैं जाने कहाँ से ? तेरे बाप की जगह है ?''[4]

अफसरगिरी दिखाकर नौकरी का घमंड दिखाने वाले सरकारी कर्मचारी भी अपना रौब असहाय लोगों पर चलाते हैं, वह गरीबी रेखा से नीचे गुजर-बसर करने वालों को कूड़ा-कचरा समझते हैं, जिन्हें हर कोई सरकारी भय दिखाकर एक जगह से हटाकर दूसरे स्थान पर फेंक देता है। कहानी का रामसुमेर भले ही आर्थिक तंगी के कारण शिक्षित नहीं हो पाया, किंतु अपने अधिकारों के प्रति वह पूरा जागरूक है और यही जागरूकता वह अपने पूरे समाज में लाना चाहता है, हालाँकि उसके समूह के सदस्य भी अपने साथ हो रहे अन्याय के प्रति परिचित हैं। इन सबके बावजूद वह डरे, सहमे और खामोश बने रहते हैं, किंतु अकेला होकर भी रामसुमेर व्यवस्था का पुरजोर विरोध करता है। उसके भीतर का साहस हर बार उसे बड़े-बड़े अफसरों से प्रश्न करने पर मजबूर करता है। रामसुमेर सब्जी मंडी में छोटी-सी रेहड़ी लगाकर फल विक्रेता का कार्य करता है और इसी रेहड़ी पर उसका पूरा परिवार पलता है। सरकार द्वारा अचानक रेहड़ी वालों से जमीन छीनकर उन्हें पलभर में ही बेरोजगार बना दिया जाता है। किंतु कहानी का नायक अंत तक साहस बटोर कर पूरी व्यवस्था को चुनौती देते हुए कहता है, *''साहब रोजगार भी छीनते हो और गाली मारपीट भी करते हो। दम है तो किसी लाला की दुकान तोड़ के दिखाओ ? पर साहब पूरी नफरत से उसकी आवाज दबाने के लिए उसे गलियाते रहे।''*[5]

सरकारी कर्मचारी अपने झूठे बल का प्रयोग केवल जनसाधारण पर ही कर सकते हैं। उनकी छोटी-छोटी रेहड़ियों को हटवाने के लिए वह बड़े-बड़े नोटिस निकलवा लेते हैं, किंतु इसके विपरीत आर्थिक रूप से संपन्न तबके पर

वह इस तरह की कार्यवाही वह बड़े अफसरों के दबाव या अपनी नौकरी को बचाने के लिए ही करते हैं। ज्यादातर तो वह उनसे भारी मात्रा में रिश्वत लेकर उस सरकारी योजना को किसी तरह से बंद करने का प्रयास करते हैं। अपनी स्वार्थी प्रवृत्ति के कारण कुछ कर्मचारी तो सरकार को झूठे तथ्य दिखाकर भ्रमित करने का प्रयास करते हैं ताकि वह उच्च वर्ग की संपति को सुरक्षित रख सकें।

भूमंडलीकरण और बाजारवाद मानव के इतिहास में कोई नवीन परंपरा नहीं है। इसका एक मजबूत और ऐतिहासिक आधार देश में पहले से ही मौजूद है, किंतु पुश्तैनी कारीगर जो पूरी मेहनत से अपने हाथों से कपड़ों पर धागा चलाना, उन पर सिलाई कढ़ाई का कार्य करते थे उन्हें बाजारवाद ने रेडीमेड कपड़े लाकर जिस तरह से खदेड़ा है, वह चिंताजनक है। मशीनीकरण ने उनके कामकाज को ठप करके उन्हें बेरोजगार बना दिया है, जिसका सबसे अधिक प्रभाव पुरुष टेलर्स पर पड़ा है। बाजारवाद ने इनसे इनकी पारंपरिक पहचान को छीनकर इन्हें मजदूरी करने के लिए बाध्य किया। पुरुष टेलर्स की आंतरिक पीड़ा को लेखिका ने 'मन्नत टेलर्स' कहानी में बखूबी दर्शाया है –

''ऊँचाई से जब मैंने नीचे की ओर देखा तो दर्जियों के बंद होते धंधे और मोहल्ले में सिलाई मशीन लेकर पुराने कपड़ों को दुरुस्त करते एक आध बेचारे से कारीगर ही दिखाई दिए.....यूज एंड थ्रो के चलन से पुरानी चीजों के साथ हर पुराने चलन को भी लात मारकर फेंक दिया।''[6]

विवेच्य कहानी का नायक बचपन से ही अपने मोहल्ले में रहने वाले रशीद टेलर्स के परिश्रम और उनके कार्य से प्रभावित था, क्योंकि नायक के पिता प्रारंभ से ही अपने पूरे परिवार के कपड़े इन्हीं से सिलवाते थे। रशीद भाई अपने हुनर से सबको हैरान कर देता था, साधारण से साधारण कपड़े पर जब रशीद भाई के हाथ लगते थे तो कपड़े की कीमत कई गुना बढ़ जाती थी। एक दिन अचानक नायक का बाजार में रेडीमेड के बढ़ते हुए प्रचलन को देखकर रशीद भाई के रोजगार की चिंता सताने लगी, हालाँकि वर्तमान में दोनों परिवारों के मोहल्ले बदल चुके थे, किंतु अचानक नायक का रशीद भाई से भावनात्मक संबंध होने के कारण वह उनके रोजगार को लेकर चिंतित हो गया और वह जल्द-से-जल्द उन्हें खोजकर उनकी वर्तमान स्थिति को देखना चाहता था, वह स्वयं को तथा अपने जैसे हजारों नौजवानों को रशीद मियाँ के बेरोजगार होने का कारण मानने लगा। उसे आत्मग्लानि हुई कि वह आखिर क्यों रेडीमेड कपड़ों को अपनी पहली पसंद बताने लगा, क्यों आलस में भरकर यह सोचने लगा कि कौन कपड़ा खरीदेगा, फिर उसे दर्जी से सिलवाएगा? इतना समय कहाँ है उसके पास? यह सभी प्रश्न उसे 'रशीद भाई' के बेरोजगार होने का उत्तरदायी मानने लगे। कहानी की यह पंक्तियाँ नायक की आत्मग्लानि को प्रस्तुत करती हैं-

''अचानक मेरी आत्मा पर पिछले कई बरसों में उजड़ गए दर्जियों और ठप्प पड़ गए उनके काम धंधों में अपना किया कुसूर बहुत नागवार गुजरने लगा। मुझ जैसे कसूरवारों ने ही रशीद भाई जैसों की हालत बदतर बना दी।''[7]

पुराने कारीगरों के काम-धंधों के ठप पड़ जाने से जिनसे उनके प्रतिभा व कौशल के हुए भारी अपमान को सोचकर ही मेरा हृदय काँप उठता है, पता नहीं अपनी गिरती हुई जीवन की गति को बचाने के लिए उन्होंने क्या रास्ता अपनाया होगा। एक मजदूर की तरह मशक्कत की होगी या प्रतिभासंपन्न होते हुए दिहाड़ीदार बनकर ऑटो रिक्शा चालाया होगा। यह सभी प्रश्न नायक को बार- बार परेशान करते हैं, जिनके चलते वह अपने पड़ोसी रशीद भाई को ढूँढ़ने का हर संभव प्रयास करता है ताकि वह उनकी वर्तमान स्थिति से अवगत हो सके। इसके लिए वह सर्वप्रथम उस स्थान का चुनाव करता है, जहाँ रशीद मियाँ मशीनों की खचर-खचर के बीच सिलाई का कार्य किया करते थे। किंतु वर्तमान में उक्त स्थान पर पहुँचकर नायक की उम्मीद बुरी तरह से टूटती है, जिसे कहानी की इन पंक्तियों में दर्शाया गया है-

''अतीत की गली को वर्तमान से तौलते जब मैं 'मन्नत टेलर्स' पर पहुँचा, वहाँ चाय की छोटी-सी दुकान थी। मैंने ध्यान से देखा अवशेष के रूप में 'मन्नत टेलर्स' का बोर्ड भी नदारद था। मेरी उम्मीद पल भर में आकाश से

धरती पर पटक दी गई और उम्मीद की पसलियाँ दर्द से कराहने लगीं।''[8]

बाजार की बढ़ती लोभी अर्थव्यवस्था तथा भूमंडलीकरण की आंधी ने छोटे-छोटे हुनरमंद कपड़ा कारीगरों को बेकारी के ऐसे छोर पर लाकर खड़ा कर दिया है कि उनकी वर्तमान स्थिति मरणासन्न तक पहुँच चुकी है। आत्मकथात्मक शैली में लिखी गई कहानी 'मन्नत टेलर्स' का नायक अपनी खोज को पूर्ण करके अंतत: रशीद मियाँ को ढूँढ़ निकालता है, जहाँ वह उनके बच्चों के सहयोग से अच्छे व संपन्न जीवन देखकर निश्चिंतता व्यक्त करता है, किंतु दूसरे ही पल वह गहरी निराशा में डूब जाता है यह सोचकर कि केवल एक रशीद मियाँ के सुरक्षित बच जाने से जो बाकी अन्य उस शहर या देश के कारीगर हैं, उनके रोजगार के छीने जाने पर वर्तमान में क्या स्थिति रही होगी? यह भाव नायक को पुन: विचलित कर देता है, जो कि इन पंक्तियों में दृष्टिगत होता है-

''मैं खुश था कि रशीद भाई खुश हैं, उनका परिवार खुशहाल है, पर दिमाग के दूसरे कोने में जारी हलचलें मुझे अशांत कर रहीं थीं क्या सब रशीद इतने खुशकिस्मत हैं? अचानक मेरे हाथ में दबा हुआ थैला मुझे बहुत भारी लगने लगा।''[9]

'मन्नत टेलर्स' की कहानी अंत में करवटें बदलते हुए बाजारवाद की वास्तविकता का परिचय करवा देती है, क्योंकि इसी भूमंडलीकरण ने बड़ी सरलता से कारीगरों के परंपरागत काम-धंधों को बुरी तरह से क्षति पहुँचाई, जिससे प्रभावित होकर कहानी का नायक उन हजारों पाठकों का प्रतिनिधित्व करता है, जिनके मन में बाजारवाद के दुष्प्रभावों से कई प्रकार के प्रश्न उठना स्वाभाविक हैं कि प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सभी कारीगर कहानी के पात्र रशीद मियाँ की तरह भाग्यशाली नहीं हो सकते तथा केवल एक के सकुशल जीवन को देखकर हम देश के उन सभी कारीगरों के भविष्य को नजरअंदाज नहीं कर सकते, जोकि बाजारवाद की आँधी के कारण अस्त-व्यस्त हुए हैं। ❑

संदर्भ ग्रंथ :

1. प्रभा खेतान, भूमंडलीकरण ब्रांड संस्कृति और राष्ट्र, पृ -15
2. प्रज्ञा, मन्नत टेलर्स, पृ. 24
3. प्रज्ञा, मन्नत टेलर्स, पृ. 52
4. प्रज्ञा, मन्नत टेलर्स, पृ. 67
5. प्रज्ञा, मन्नत टेलर्स, पृ. 68
6. प्रज्ञा, मन्नत टेलर्स, पृ. 105
7. प्रज्ञा, मन्नत टेलर्स, पृ. 105
8. प्रज्ञा, मन्नत टेलर्स, पृ. 107
9. प्रज्ञा, मन्नत टेलर्स, पृ. 112

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

सामाजिक सरोकार के परिप्रेक्ष्य में 'अकाल सन्ध्या'

आरती देवी

शोधार्थी
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग
केंद्रीय विश्वविद्यालय
जम्मू-180006
7051089459
artidevi18495@gamail.com

सारांश :

साहित्यकार अपने समय व परिवेश से प्रभावित होकर साहित्य का निर्माण करता है। समाज की संरचना परिवर्तित होती है, जिस कारण मनुष्य के सरोकार भी परिवर्तनशील रहते हैं। 21वीं सदी में आधुनिकता सभी धरातलों (सामाजिक, आर्थिक, राजनितिक, धार्मिक व सांस्कृतिक) पर अपनी चरम सीमा पर पहुँची है और प्रत्येक क्षेत्र में नए बदलाव हुए हैं। इन परिवर्तनों ने जहाँ एक ओर मनुष्य के जीवन को सुविधाजनक बनाया, वहीं उसके सामने कई नई समस्याओं एवं चुनौतियों को उत्पन्न किया। कथाकार इन्हीं परिवर्तनों को अपनी रचनाओं में चित्रित कर समाधान की ओर संकेत करता है।

कुंजी शब्द :

सरोकार, मानवीय मूल्य, गाँव, स्त्री विमर्श, भ्रष्टाचार, दलित विमर्श।

मूल आलेख :

समाज में जीवन यापन करते हुए साहित्यकार को जो कुछ भी प्रभावित करता है, उससे प्रेरणा ग्रहण कर वह साहित्य सृजन करता है। साहित्य का सरोकार समाज से होता है। वर्तमान समाज में सामान्य जन को त्रस्त, भयभीत और आतंकित करने वाली अनेक समस्याएँ हैं। रचनाकार साहित्य के माध्यम से उन समस्याओं के समाधान हेतु प्रयासरत रहता है। उसका यही प्रयास सामाजिक सरोकारों के अंतर्गत आता है। इस दृष्टि से रामधारी सिंह दिवाकर का उपन्यास 'अकाल सन्ध्या' विस्तृत और व्यापक है।

रामधारी सिंह दिवाकर का उपन्यास 'अकाल सन्ध्या' 2006 में प्रकाशित हुआ है। ग्रामीण जीवन के कुशल कथाशिल्पी रामधारी सिंह दिवाकर का यह उपन्यास बदलाव की प्रक्रिया से गुजर रहे गाँवों का प्रमाणिक दस्तावेज है। ध्वस्त होती सामंती ग्रामीण व्यवस्था के बरअक्स जो नई समाज व्यवस्था उभरी रही है उसके शुभ-अशुभ पक्षों को कथाकार ने पूरी तन्मयता से उकेरा है। स्थापित मान-मूल्य टूट रहे हैं, लेकिन इनकी जगह जो नई समाज व्यवस्था सामने आ रही है। उसमें सामाजिक मूल्यों की वापसी की चिंताजनक संकेत परेशान करने वाले हैं। जनतांत्रिक चेतना से दीप्त और बदलाव के लिए बेचैन गाँव के इस नए मानस के अंतर्विरोधों को कथाकार ने गहरी मानवीय संवेदना से चित्रित किया है। उपन्यास में

दलित-यथार्थ का वह अनुद्घाटित पक्ष भी खुल कर सामने आया है, जिससे हम अक्सर आँखे चुराते रहे हैं।

गाँव के सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक जीवन से लेखक की गहरी आत्मीयता, सरोकार, संलग्नता का प्रमाण है। गाँव की प्रवंचित आबादियाँ गलत-सही रास्तों से कभी भूलती-भटकती और कभी सही कदमों से चलती हुई आज जिस मुकाम तक आई हैं, वे लड़ाइयाँ अभी भी जारी हैं। दिवाकर जी गाँव पर लिखने वाले अन्य लेखकों से इस अर्थ में भिन्न और विशिष्ट हैं कि उन्होंने अतीत राग से मुक्त होकर आज के बनते हुए गाँव की कथा वहाँ की बोली बानी से सिक्त भाषा में लिखी है।

आज मानवीय मूल्य विघटित होते जा रहे हैं। जहाँ रिश्तों में आत्मीयता थी वहाँ अनात्मीयता ने घर कर लिया है। निजी स्वार्थ सुख-भोग के कारण बेटा-माँ से मुँह मोड़ रहा है। उसके लिए सिर्फ अपना परिवार ही सब कुछ है। माँ-बाप के लिए उसका कोई कर्तव्य नहीं रहा है। आज व्यक्ति समाज में किसी भी तरीके से धन-दौलत कमा कर आगे तो बढ़ना चाहता है, किंतु आत्मीयता की दौलत को अपने से दूर करता जा रहा है। आज संवेदनशीलता की जगह संवेदनहीनता गाँव में फैलती जा रही है। समाज में परिवार के सभी सदस्य मिल-जुल कर आपस में संतुलन बनाए रखते हैं। किंतु आज की बदलती परिस्थितियों में संतुलन के अभाव में कुछ सदस्य पूरा सहयोग नहीं दे पाते। फलत: मूल्य के विघटन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। विवेच्य उपन्यास में मानवीय मूल्य के विघटन को लेखक ने माई के माध्यम से उकेरा है। माई का बेटा नन्दू पढ़-लिख कर अपने परिवार को लेकर अमेरिका चला गया है, जिसका चित्रण माई की इन पंक्तियों में मिलता है, *''वह इतना बड़ा हो गया कि मुझ अकेली माँ को यहाँ गाँव में छोड़कर जाने कितने समुन्दर पार अमेरिका चला गया अपना परिवार लेकर। पैसे की भूख, सुख-भोग की भूख, दुलहिन, पम्मी, नेहा, छोटू सब चले गए।''*[1]

आज के समाज में जो बदलाव आया है, उसका व्यापक प्रभाव बुजुर्ग पीढ़ी पर गहरा पड़ा है। पारिवारिक उपेक्षा का दंश, परिजन बिछोह का संताप और आश्रम रूपी वनवास का दंड भोगते इन बुजुर्गों की समस्याओं को उपन्यास में नन्दू के बापू के माध्यम से चित्रित किया गया है। नन्दू के बापू बीमार हैं और मृत्यु के बेहद करीब हैं। नन्दू और उसकी पत्नी अमेरिका जाने के लिए तैयारी कर रहे हैं। ऐसे समय में जब माँ-बाप को सबसे ज्यादा अपने बेटे की जरूरत है तो बहू कहती है, *''बाबू जी मरते भी नहीं। माई बाबूजी को दिल्ली ले जाने की जिद किए हुई है। इन्हीं के कारण हम लोगों की अमेरिका जाने की तारीख आगे बढ़ती जा रही है।''*[2] माई हैरान होकर बहू की बात सुनती है। नन्दू भी पत्नी की बात का जवाब देते हुए कहता है, *''जब तक बाबू जी का कुछ हो नहीं जाता तब तक जाया भी नहीं जा सकता।''*[3]

लेखक ने वृद्ध अवस्था का यथार्थ अंकन उपन्यास में किया है। शारीरिक रूप से जर्जर वृद्ध अपने परिजनों से आत्मिक लगाव और अनुराग के आकांक्षी होते हैं, लेकिन पारिवारिक उपेक्षा से आहत आज परिवार में बुजुर्गों की स्थिति क्या है- इसे लेखक ने ब ?ड़ी रागात्मकता से व्यंजित किया है।

भारतीय समाज में नारी की स्थिति सदैव एक-सी नहीं रही। नारी आज भी स्वतंत्र नहीं है। उसे कहीं शारीरिक शोषण तो कहीं मानसिक प्रताड़ना दी जाती है। प्रस्तुत उपन्यास में हमें नारी शोषण के अंतर्गत कजरी का चित्रण मिलता है। विधायक भदेसर कितने दिनों से कजरी पर नजर रखे हुआ था। एक दिन कल्लू खलीफा दलित विधायक भदेसर को कजरी के घर ले गया, जिनका चित्रण इन पंक्तियों में मिलता है, *''कल्लू ने विधायक को कजरी के घर में धकेल दिया और किवाड़ लगाकर खड़ा हो गया। मरकसवा गाँव में सारे घर एक-दूसरे से कुछ दूरी पर हैं।''*[4] कजरी के विद्रोह को भी प्रस्तुत उपन्यास में दिखाया गया है, *''अशक्त और विवश कजरी ने बगल में लबनी के पास रखा हँसुआ उठा लिया। हँसुए में रप-रप धार।.... चतुराई से कजरी ने हँसुआ चलाया कि ... छपाक ... । आवाज तो नहीं हुई छपाक की, मगर विधायक जोर-जोर से चिल्लाने लगा - बाप रे बाप। कल्लू खलीफा ने छोड़ा साथ विधायक का और भाग गया।''*[5] इस प्रकार दलित विधायक इस गंदी हरकत के बाद मंत्री बनता-बनता रह गया। सुबह यह खबर समाचार पत्रों में भी छप

गई। *''दलित विधायक द्वारा दलित लड़की का बलात्कार ... विधायक का लिंगोच्छेद ...सत्ताधारी दल का दलित विधायक भदेसर मंत्री बनते-बनते रह गया था।''*[6] कजरी ने कभी भी हार नहीं मानी। इन सबके बावजूद वह निर्भय होकर आगे बढ़ी। फिर भी गाँव के लोग उसे इस हादसे की बात याद कराकर उसे मानसिक प्रताड़ना देते हैं। जब कजरी काम के सिलसिले में अकेले ही पटना जा रही होती है तो कजरी से कहा जाता है क्यों जा रही हो अकेली पटना, कोई मरद नहीं जा रहा गाँव का, तब कजरी कहती है उसे किसी का डर नहीं है। वह अकेली ही जाएगी पटना, तब पतोंरवाली मालकिन के द्वारा कजरी को मानसिक प्रताड़ना दी जाती है, जिनका चित्रण इन पंक्तियों में मिलता है, *''बड़ी सतवन्ती बनती है तूं! कौन नहीं जानता तिरिया चरित्तर को। राम-राम! किससे-किससे मुँह पर कालिख पोतवा चुकी, अब चली हो सतवन्ती बनने।''*[7] कजरी इस बात पर चुप नहीं रहती। वह जवाब देती है, *''आपकी बेटी थी न ललिता जो स्कूल के मास्टर से फँसी थी। क्या लोग नहीं जानते हैं कि पुरैनिया..... ले जाकर महीने का गर्भ गिरवाया गया था।''*[8]

स्पष्ट है लेखक ने उपन्यास में नारी के दो रूप प्रस्तुत किए हैं। नारी सिर्फ शोषण का शिकार नहीं होती, बल्कि उसका विरोध भी करती है। कजरी का भी ऐसा ही रूप सामने आया है। कजरी ने अपने साथ गाँव की दूसरी औरतों को भी जागरूक कर दिया है। जो विद्रोह करती हुई नजर आती हैं और कजरी का साथ देती हैं। कजरी को मानसिक प्रताड़ना भी दी जाती है, परंतु वह सचेत हो उन्हें मुंहतोड़ उतर भी देती है।

राजनीतिक और सामाजिक स्तर पर हुए नैतिकता के ह्रास ने भ्रष्टाचार, शोषण और स्वार्थ की प्रवृत्तियों को जन्म दिया है। भ्रष्टाचार से ही रिश्वतखोरी, भाई-भतीजावाद तथा बेईमानी जैसी सामाजिक प्रवृत्तियाँ उभरती हैं। प्रस्तुत उपन्यास में उपन्यासकार ने राजनीतिक क्षेत्र में फैले भ्रष्टाचार का चित्रण बड़ी बेबाकी से किया है। उपन्यास में डायमंड ने किसी मंत्री के बंगले पर जबरन कब्जा कर लिया है। उलटदास जब विधायक डायमंड के बंगले की तारीफ कर रहे होते हैं, महाविर मियाँ ने उन्हें सही जानकारी देते हुए कहते हैं, *''अरे उलटदास, मिला नहीं है, जबरन कब्जा कर लिया है। बिपिया कह रहा था कि किसी मंत्री को वह बंगला मिला था, लेकिन डायमंड ने उस मंत्री का सामान बाहर फेंक दिया और घुस गया बंगले में। और जब घुस गया तो किसकी हिम्मत जो निकाल दे डायमंड को?''*[9] इस प्रकार लेखक ने स्पष्ट किया कि किस प्रकार नेता अपने कुर्सी का गलत उपयोग कर भ्रष्टाचार करते हैं। वर्तमान समय में भी यही हो रहा है। अधिकतर नेता अपनी सत्ता का गलत इस्तेमाल कर भ्रष्टाचार करते नजर आते हैं। नेता केवल झूठे आश्वासन देकर लोगों को गुमराह करते हैं। केवल वोट लेने के वक्त घोषणाएँ होती हैं। बाद में घोषणाएँ कहीं दबा दी जाती हैं। विवेच्य उपन्यास में बनारसी और किसुनिया को पटना जाना है। लेकिन पटना जाने के लिए उनके पास खर्चा भी नहीं है, कौन देगा उनको पैसे। मंत्री तो पहले घोषणा करते हैं कि परिवार के व्यक्ति के मरने के बाद नौकरी मिलेगी। पैसे दिए जाएँगे, लेकिन बाद में यह घोषणाएँ वैसी-की-वैसी रह जाती हैं। उन्हें लोगों तक पहुँचाया नहीं जाता है, इसका चित्रण हमें प्रस्तुत उपन्यास में बनारसी और किसुनिया के द्वारा मिलता है, *''मुख्यमंत्री तो यों ही घोषणा करते रहते हैं हर हत्या के बाद। एक लाख रुपए और परिवार के व्यक्ति को सरकारी नौकरी। लेकिन शायद ही कोई आश्रित हो जिसका एक लाख रुपए और सरकारी नौकरी मिली हो।''*[10] वर्तमान समय में भी यही हो रहा है। घोषणाएँ होती तो हैं, पर उन्हें पूरा नहीं किया जाता है। अंदर-ही-अंदर घोषणाएँ दबा दी जाती हैं।

प्रस्तुत उपन्यास में जात-पात के नाम पर भी अलग-अलग टोले बनाए गए हैं। जाति के नाम पर टोलों को बाँटा गया है, जिनका चित्रण इन पंक्तियों में मिलता है, *''जात के आधार पर गाँव में अलग-अलग टोले बनवाए। चमराही, केवटाही, मलाह टोली। उधर बटेषनाथ झा ने तीन घर बाभन, दो घर भूमिहार और तीन घर राजपूतों को लेकर ऊँचा टोला ही बना लिया है।''*[11] वर्तमान समय में भी जाति प्रथा एक विकट समस्या के रूप में खड़ी है, जिसका प्रभाव केवल शहरों में ही नहीं, गाँवों में भी देखने को मिलता है। आज दलित भी पढ़-लिख कर अपनी दशा में सुधार कर रहे हैं। फिर भी सवर्ण वर्ग के लोगों को यह बर्दाशत नहीं होता है, जिनका चित्रण इन पंक्तियों में मिलता है, *''छोटी जातियों के लड़कों का इतना लिखना-पढ़ना*

फूटी आँख नहीं सुहाता था सवर्ण टोले के लोगों को।''[12]

विवेच्य उपन्यास वर्तमान समय की राजनीति दोगलेपन को भी उजागर करता है। सवर्ण वोट के अधिकार को सामाजिक व्यवस्था के टूटने का कारण मानते हैं। पंडित खड़गनाथ की बेटी कलावती, दलित बी.डी.ओ. से शादी करती है, दुखी पंडित जी कहते हैं, *''यह कलियुग है ... हम लोग तो सोचते थे कि अभी सनातन धर्म की व्यवस्था चलेगी, लेकिन अकाल सन्ध्या आ गई है। साँझ के पहले साँझ हो गई।''*[13]

बड़का गाँव की माई एक लंबे समय की गवाह है। उसने जमीदारों का वैभव और पतन दोनों देखे हैं। साथ ही दलितों के बेटों को एस.पी, और बी.डी.ओ. बनकर सवर्ण कन्याओं से शादी करते भी देखा है। वह दुखी है कि पद और सत्ता मिलने पर ये लोग भी वही सब कर रहे हैं, जो पहले जमींदार किया करते थे। इसका चित्रण बुद्धन माँझी की इन पंक्तियों द्वारा स्पष्ट होता है, *''मद्धा एक्के बात हजूर.... एक्के बात से चिन्ता होती है कि जो चढ़ गया सिंहासन पर वही राजा! और राजा -राजा एक समान! क्या ब्रामन-राजपूत-भुइंहार, क्या जादव, कुर्मी, चमार-धरकार! ... राजा-राजा एक साथ।''*[14] लेखक पूर्ण रूप से यह स्पष्ट करता है कि वर्तमान समय में दलित भी अब सवर्ण मानसिकता वाला हो गया है।

स्कूल के स्वर्ण जयंती उत्सव में बुद्धन माँझी के माध्यम से लेखक अपना संदेश देता है। डिप्टी सी.एम. प्रो. अनवर हुसैन को मंच पर बैठाकर पूछते हैं कि राज बदलने से गाँव में क्या कुछ असर हुआ है? वह निडरता से कहता है, *''असर नहीं हुआ है तो हम आपके सामने कुर्सी पर कैसे बैठे हैं?''*[15] इस प्रकार लेखक स्पष्ट करता है जिन दलितों को लोग मनुष्य नहीं समझते थे, वे आज न केवल बदल रहे हैं, बल्कि एक होकर अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो गए हैं। उपन्यास बदलाव की प्रक्रिया से गुजर रहे गाँवों का प्रमाणिक दस्तावेज है। ❑

संदर्भ सूची :

1. रामधारी सिंह दिवाकर, अकाल सन्ध्या, पृ. 19
2. वही, पृ. 25
3. वही, पृ. 25
4. वही, पृ. 32
5. वही, पृ. 32
6. वही, पृ. 32
7. वही, पृ. 79
8. वही, पृ. 80
9. वही, पृ. 79
10. वही, पृ. 77-78
11. वही, पृ. 165
12. वही, पृ. 118
13. वही, पृ. 274
14. वही, पृ. 286
15. वही, पृ. 32

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

धरोहर

ओडिशा में भक्ति आंदोलन का उद्भव और विकास

कैलाश पधान

शोधार्थी, हिंदी विभाग, साहित्य संकाय
त्रिपुरा विश्वविद्यालय
सूर्यमणिनगर, 799022
7386584663
kailashpadhan1995@gmail.com

शोध सार :

मध्यकालीन ओडिशा के प्रसिद्ध पाँच संत या पाँच मित्र सामूहिक रूप से 'पंच सखा' के रूप में जाने जाते हैं । पंचसखा में बलराम दास, जगन्नाथ दास, अच्युतानंद दास, यशोबंत दास और शिशु अनंत दास थे। उन्होंने जयदेव के 'गीत गोविंद' द्वारा स्थापित परंपरा का पालन करते हुए चैतन्य के आगमन से पहले ओडिशा में राधा और कृष्ण की भक्ति का प्रचार किया, अपना स्वयं का संप्रदाय शुरू किया तथा वैष्णव धर्म भक्ति की प्रक्रिया और पवित्र महामंत्र हरि नाम का प्रचार-प्रसार किया। देवताओं की पूजा के बजाय आत्मा की प्राप्ति को अधिक महत्व दिया। पंच सखा ने ओडिशा के धार्मिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक इतिहास में एक महान भूमिका निभाई है।

बीच शब्द : भक्ति आंदोलन, पंच सखा।

मूल आलेख :

भक्ति आंदोलनों ने प्राचीन और मध्यकालीन ओडिशा के धार्मिक इतिहास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इतिहासकारों ने इस पर व्यापक प्रकाश डाला है। परिणामस्वरूप, हम तमिलनाडु के अलवार और नयनार आंदोलन, कर्नाटक के वीरशैव एवं हरिदास आंदोलन, महाराष्ट्र के वारकरी आंदोलन जैसे विभिन्न भक्ति आंदोलनों के बारे में बहुत कुछ जानते हैं। राजा प्रताप रुद्र देव के शासन काल से पहले गंगवंश और सूर्यवंश के समय में हिंदू धर्म एवं दर्शन के बारे में लोग परिचित हुए हैं। ग्यारहवीं शताब्दी में राजा चौड़गंग देव के समय में रामानुज ने पुरी आकार विशिष्टाद्वैतवाद मत का प्रचार प्रसार किया। चौड़गंग देव के समय में निंबार्क संप्रदाय के जयदेव ने 'गीत गोविंद' लिखा। उत्तर बिहार के मिथिला में विद्यापति द्वारा लिखे गए राधा और कृष्ण से संबंधित गीत ओडिशा में भी प्रसिद्ध हो गए थे और वास्तव में जयदेव और विद्यापति दोनों के गीतों को चैतन्य ने गहरे रूप से सराहा था। उन्होंने अपने साथियों से बार-बार इन्हें गवाया था। उन्होंने पंचसखा एवं रामानंद चैतन्य के साथ मिलकर धर्म की चर्चा की। ओडिशा के अनेक कवियों ने उस समय 'ब्रजबुलि' में बहुत से पदों की रचना की। रामानंद, बलराम दास आदि कवियों ने राधा-कृष्ण से संबंधित अनेक पद्य ब्रजबुलि में रचे हैं। चैतन्य से मिलने

से पहले, रामानंद राय ने महाभाव प्रकाश लिखा था, जिसमें कृष्ण-राधा को महाभाव का अवतार माना गया है और जगन्नाथ वल्लभ नाटक का वर्णन किया गया है। कृष्ण भक्ति पर एक और काम, जिसे चैतन्य के आगमन से पहले बहुत लोकप्रियता मिली थी, वह मार्कंड दास की 'केसब कोइली' थी। ओडिशा में वैष्णव मत का प्रचार इस ग्रंथ के माध्यम से हुआ है। लोक में प्रचलित है कि उस समय मिथिला के रहने वाले कवि विद्यापति ओडिशा आए थे। चंडीदास की 'ब्रजभाषा' एवं बांग्ला भाषा में लिखी गई पदावली का ओडिशा में बहुत मात्रा में प्रसार हुआ। 14वीं शताब्दी के अंतिम भाग में रामानंद रामानंदी संप्रदाय के प्रचार-प्रसार के लिए पुरी आए थे। 15वीं शताब्दी के प्रथम भाग में कबीर ने पुरी आकार राम-नाम के प्रचार-प्रसार के माध्यम सर्वधर्मसमन्वय का भाव जागृत किया। 16वीं शताब्दी के प्रथम भाग में गोस्वामी तुलसी दास राम-नाम का प्रचार करने के लिए पुरी आए थे। उसी समय गुरु नानक सिख धर्म का प्रचार करने के लिए भी पुरी आए थे। इसके साथ ही 16वीं शताब्दी के मध्य भाग में उदासी संप्रदाय के प्रतिष्ठाता श्री चंद्र, शुद्धाद्वैतवाद मत के जनक वल्लभाचार्य ने पुरी आकर अपने-अपने मत का प्रचार किया। राजा प्रताप रुद्र देव के शासन काल में चैतन्य देव ने पुरी आकार वैष्णव धर्म का प्रचार-प्रसार किया।

बलराम दास, जगन्नाथ दास, अच्युतानंद दास, यशोबंत दास और शिशु अनंत दास पांचों मित्र चैतन्य के संपर्क में आए, जो 1505 में श्री क्षेत्र पुरी पहुँचे और अक्सर उनके अनुयायियों के साथ जुड़े रहे। लगभग 24 साल तक चैतन्य देव ओडिशा में रहे। तिरोधान ओडिशा में ही हुआ है। चैतन्य भागवत में नित्यानंद और रामानंद राय द्वारा बलराम और अच्युतानंद के साथ मिलकर संकीर्तन मनाने का उल्लेख है। उन्होंने चैतन्य के उपदेशों को अपने विचारों के बहुत करीब पाया, क्योंकि चैतन्य ने नगर संकीर्तन की शुरुआत की, जहाँ जाति या सामाजिक वर्ग के आधार पर कोई भेद-भाव नहीं था और कीर्तन के गीत न केवल शास्त्रीय संस्कृत में थे, बल्कि बांग्ला जैसी लोकप्रिय भाषाओं में भी थे। वे ओड़िया के सामान्य और निम्न जाति के लोगों को अधिक भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करते थे। चैतन्य ने निचली जाति के लोगों को भी अपने अनुयायियों के रूप में स्वीकार किया ।

पंच सखाओं की उदारता ब्राह्मणों का विरोध किया,. जिन्होंने ओड़िया समाज को अलग किया था। सारला दास द्वारा संकलित महाभारत, रामायण, भागवत और हरिवंश के अनुवाद बलराम, जगन्नाथ और अच्युतानंद ने किया है। जगन्नाथ दास की ओड़िया भागवत को 'तेली भागवत' कहा जाता है, जो 'निम्न जाति के तेल बनाने वाले का भागवत है।' हालाँकि, साहित्यिक कार्य के अतिरिक्त पंच सखाओं की भागीदारी ओड़िया भाषा और सांस्कृतिक पहचान के विकास, लोगों को एकत्रित करना एवं एकता की भावना को उत्पन्न करने के लिए महत्वपूर्ण थी, जिसने लंबे समय तक इस क्षेत्र की रक्षा की ।

पांचों मित्रों ने वैष्णव धर्म या नवधा भक्ति और हरिनाम का प्रचार किया। देवताओं की पूजा के बजाय आत्मा की प्राप्ति को अधिक महत्व दिया। उनके उपदेश का सबसे महत्वपूर्ण पहलू वैष्णवों के बीच सभी भेद-भावों का उन्मूलन था, चाहे वे किसी भी जाति या पृष्ठभूमि से आए हों। अच्युतानंद, यशोवंत, बलराम और अनंत को जाति-जागरूकता के कारण ब्राह्मणों के कड़े विरोध का सामना करना पड़ा, जिन्होंने जगन्नाथ दास की ओड़िया भागवत को अपमानजनक रूप से 'तेली भागवत' कहा। हालाँकि, यह ओड़िया भागवत इतना लोकप्रिय हो गया कि हर गाँव में एक घर 'भागवत टूँगी' (भागवत का जिस घर मे पाठ किया जाता है) स्थापित हुआ, जहाँ ग्रामीण नियमित रूप से इसका पाठ सुनने के लिए इकट्ठा होते हैं ।

ब्राह्मणों की अत्यधिक रीति-नीति, एकाधिकार, मंदिरों और देवता पूजा पर नियंत्रण के खिलाफ प्रतिक्रिया के रूप में पंच सखाओं ने उपदेश दिया कि भगवान कृष्ण/जगन्नाथ की पूजा 'शून्य' (एक विशेष 'गैर-आकार') के रूप में की जा सकती है। मंदिर में देवता का आगमन हुआ है, इसलिए हर समय हर किसी के लिए वह उपलब्ध हो सकता है। यह समझना महत्वपूर्ण है कि इस तरह की 'शून्यता' भावनाओं, गुणों और रिश्तों से रहित एक अवैयक्तिक शून्यता नहीं है। वास्तव में यह बिल्कुल विपरीत है, जैसे कि जगन्नाथ दास ने रस क्रीड़ा का उपदेश दिया,

अच्युतानंद ने नित्य रस का उपदेश दिया, यशोवंत ने प्रेम भक्ति ब्रह्म गीता का उपदेश दिया और अनंत तुला ने शून्य रस का ।

उन्होंने राधा-कृष्ण को परमात्मा और जगन्नाथ को राधा-कृष्ण की युगल मूर्ति या भाव मूर्ति के रूप में स्वीकार किया और सिखाया कि गुरु ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर की अभिव्यक्ति है। उनके सिद्धांत के अनुसार (जिसे नाथ योगियों और बंगाल में भक्ति की कई परंपराओं सहित कई अन्य समूहों द्वारा भी अभिव्यक्त किया जाता है) मानव शरीर एक सूक्ष्म जगत है, जहाँ सर्वोच्च भगवान निवास करते हैं और जिसमें राधा की सबसे अंतरंग लीलाएँ भी शामिल हैं। कृष्ण जहाँ राधा शुद्ध समर्पित आत्मा हैं और कृष्ण परमात्मा हैं। पंच सखाओं ने अपनी साधना में मंत्र और तंत्र को अपनाकर भक्ति का मार्ग अपनाया। कई पीढ़ियों से अतिबड़ी संप्रदाय के अनुयायियों के बीच मतभेद रहा है। चैतन्य के बंगाली अनुयायी और विशेष रूप से सारस्वत गौड़ीय संप्रदाय के बीच कभी-कभी सीमांत विवरण के ऊपर अत्यंत महत्वपूर्ण दो पदों के क्रम पर अत्यधिक जोर दिया जाता है ।

पुरी में जब अतिबड़ी संप्रदाय और कई अन्य प्राचीन गौड़ीय मठ 'राम मार्ग' से शुरू होने वाले मंत्र का जाप करते थे, तब सारस्वत गौड़ीय इस बात पर जोर देते हैं कि मंत्र को 'कृष्ण मार्ग' से शुरू करना चाहिए ताकि पंक्तियों को उलटने से आपत्तिजनक न हो। यह स्पष्ट नहीं है कि चैतन्य के ईमानदार अनुयायियों को पवित्र नामों का पाठ अपमानजनक कैसे लग सकता है, क्योंकि एक श्लोक को दूसरे से पहले रखा जाता है, यह भी ध्यान में रखते हुए कि निरंतर पाठ से दोनों पदों में से कोई भी पहले नहीं आता है, लेकिन वे एक चक्र या वृत्त बनाते हैं ।

दिवाकर दास द्वारा लिखित जगन्नाथ दास की जीवनी

'जगन्नाथ चरित्रामृत' में कहा गया है कि ओड़िया (उत्कली) और बंगाली (गौड़िया) वैष्णवों के बीच अंतर यह है कि ओड़िया लोग जगन्नाथ के अवतार को सभी अवतारों का स्रोत मानते हैं, जबकि बंगाली कहते हैं कि कृष्ण अवतार हैं। इस तरह के भेद को आसानी से इस बात पर विचार करके दूर किया जा सकता है कि जगन्नाथ स्वयं कृष्ण हैं और विशेष रूप से चैतन्य द्वारा सिखाए गए औचित्य भेदभेद तत्व के प्रकाश में। बंगाली और ओड़िया वैष्णवों के बीच दरार काफी लंबे समय से चली आ रही है और यह बहुत ही कमजोर आधारों पर आधारित है, जो दार्शनिक या धार्मिक से अधिक भावनात्मक है। दिवाकर दास ने लिखा है कि बंगाली भक्त ओड़िया भक्तों से ईर्ष्या करते थे और वास्तव में वर्तमान में हमें ऐसे लोग मिलते हैं। सारस्वत गौड़ीय में वर्णन है कि चैतन्य ने जगन्नाथ दास को 'अतिबड़ी' उपाधि से सम्मानित किया है। इसका अभिप्राय आक्रामक और व्यंग्यात्मक तरीके से था, जबकि हम जानते हैं कि चैतन्य ने कठोर भाव से शिक्षा दी थी और सभी समूहों के लोगों के प्रति अत्यंत विनम्रता का प्रदर्शन किया था।

कुछ लोग यह भी कहते हैं कि रूढ़िवादी समाज के अत्यधिक कर्मकांड और जातिवाद को चुनौती देने वाले अतिबड़ी संप्रदाय के शक्तिशाली प्रभाव को हाल के दिनों में 'महिमा धर्म' नामक ब्राह्मण विरोधी और मूर्तिभंजक आंदोलन द्वारा चरम परिणामों तक पहुँचाया गया था। हालाँकि, यह एक अतिशयोक्ति होगी, क्योंकि महिमा धर्म ने पूरी के जगन्नाथ मंदिर के देवताओं को नष्ट करने के उद्देश्य से आक्रमण किया था। जगन्नाथ की पूजा का सक्रिय रूप से विरोध किया था। यह काफी दूर की बात प्रतीत होती है, क्योंकि सभी अतिबड़ी मठ जगन्नाथ के साथ-साथ अन्य दिव्य रूपों की भी पूजा करते हैं और शास्त्र की पवित्रता को कायम रखते हैं, जिसे महिमा संप्रदाय मान्यता नहीं देता है। अतिबड़ी संप्रदाय के शिष्य उत्तराधिकार की छठी पीढ़ी के आचार्य पुरुषोत्तम दास के पाँच प्रमुख शिष्य थे, जिनमें से पहले मुकुंद दास, बोडो ओड़िया मठ के महंत बने और अन्य चार ने मठ की नई शाखाएँ स्थापित कीं। पुरी में इन्हें सना ओड़िया मठ, राम-हरि दास मठ, वनमाली दास मठ और भागवत दास मठ कहा जाता है ।

मध्यकालीन ओडिशा के प्रसिद्ध पाँच संत या पाँच मित्र सामूहिक रूप से पंच सखा के रूप में जाने जाते हैं । पंच सखा ने ओडिशा के धार्मिक और सामाजिक-सांस्कृतिक इतिहास में एक महान भूमिका निभाई है। सोलहवीं शताब्दी में पाँच कवि बलराम दास, जगन्नाथ दास, अच्युतानंद दास, अनंत दास और जसोबंत दास उभरकर सामने आते हैं। हालाँकि उनकी गतिविधि की तारीखें एक सौ साल तक फैली हुई हैं। उन्हें सामूहिक रूप से 'पंचसखा' के रूप में जाना जाता है, क्योंकि वे एक ही विचार धारा अर्थात उत्कलिया वैष्णववाद का पालन करते थे। जयदेव के 'गीत गोविंद' द्वारा स्थापित परंपरा का पालन करते हुए, उन्होंने चैतन्य के आगमन से पहले ओडिशा में राधा और कृष्ण की भक्ति का प्रचार करने हेतु अपना स्वयं का गौड़ीय संप्रदाय शुरू किया। 'गीत गोविंद' की लोकप्रियता इतनी थी कि राजा पुरुषोत्तम देव ने इसे अपने समय की नई भक्ति धारा के रूप में स्थापित करने की उम्मीद से अभिनव 'गीत गोविंद' नामक अपनी खुद की रचना की नकल लिखी। कई अन्य ओड़िया कवियों जैसे दीनकृष्ण, अभिमन्यु, भक्त चरण, बलदेव और गोपाल कृष्ण आदि ने कृष्ण की रोमांटिक कहानियों के बारे में कविताएँ लिखीं।

बलराम दास :

इनका जन्म 1472 और 1482 के बीच कोणार्क के निकट गोप के एराबंगा गाँव में हुआ था। उनके पिता सोमनाथ महापात्र और माता महामाया देवी थी। कुछ लोग कहते हैं कि वह चंद्रपुर गाँव में पैदा हुए, जहाँ उनकी मुलाकात चैतन्य से हुई। बलराम दास राजा प्रतापरुद्र देव के मंत्री बने, लेकिन चैतन्य से मिलने के बाद उन्होंने सरकारी सेवा छोड़ दी और कुंडलिनी योग, रामानुज आचार्य के मूड में वैधी भक्ति और पवित्र नाम के जप का प्रचार करने के लिए अपने पिछले ज्ञान का उपयोग किया। परमानंद भक्ति के पक्ष में सामाजिक परंपराओं की उपेक्षा के कारण उन्हें कभी-कभी मत्त बलराम भी कहा जाता है।

उन्होंने ब्राह्मणों की नाराजगी के बावजूद जगन्नाथ मंदिर के मुक्ति मंडप में वेदांत पर चर्चा में भाग लिया था और ऐसा कहा जाता है कि वे जिसके सिर को छूते थे वह

तुरंत वेदांत के दर्शन को समझाने में सक्षम हो जाता था। एक दिन एक भिखारी जो गूँगा और बहरा था उसके पास आया और उन्होंने उसके सिर पर हाथ फेरा तो वह न केवल ठीक हो गया और बोलने में सक्षम हो गया, बल्कि उसने तुरंत दर्शनशास्त्र पर चर्चा करनी भी शुरू कर दी। यह भिखारी तब हरि दास के नाम से बलराम का सबसे प्रमुख शिष्य बन गया।

बलराम दास की प्रसिद्ध रचनाएँ 'जगमोहन' या 'दांडी रामायण', 'गीता अबकास', 'भाव समुद्र', 'गुप्त गीता', 'वेदान्त सार', 'मृगुणी स्तुति', 'सप्ताङ योगसार टीका', 'ब्रह्म टीका', 'बाउला गाई गीत', 'कमला लोचन चौतीसा', 'कांता कोइली', 'बेड़ा परिक्रमा', 'ब्रह्मांड भूगोल', 'बज्र कवच', 'जन्ह चूड़ामणि', 'विराट गीत', 'गणेश विभूति', 'अमरकोश गीत', 'लक्ष्मी पुराण' हैं । यह सब ओडिशा में अत्यंत लोकप्रिय हैं। बलराम दास के द्वारा जो मूल मंत्र जप एवं सिखाए गए थे वे कृष्ण मंत्र हैं। उनकी निवास स्थली का नाम 'गंधर्भ मठ' था।

अपने 'बट अबकास' में उन्होंने लिखा है कि भगवान जगन्नाथ की सेवा 64 योगिनियाँ करती हैं। अपनी विराट गीता में, उन्होंने कृष्ण के निराकार रूप को सूर्य के रूप में वर्णित किया है। हालाँकि, शून्य के बारे में उनका विचार काफी विशिष्ट है, क्योंकि इसमें रूप और रिश्ते शामिल हैं। वह एक सामाजिक कार्यकर्ता और सुधारक होने के साथ-साथ एक विशेषज्ञ ज्योतिषी भी थे।

अच्युतानंद दास :

इनका जन्म 1485 में नेमाला, कटक के पास तिलकाना में हुआ था। इनके पिता का नाम दीनबंधु खुंटिया और माता का नाम पद्मावती था। इनके दादा गोपीनाथ मोहंती ने सेवा की थी। गजपति राजा की सेना में बचपन में उनका नाम अगनि रखा गया। जब वे बड़े हुए तो उन्होंने एक रहस्यमय सपना देखा, जहाँ भगवान ने उन्हें गीता, उपनिषद और तंत्र की शिक्षा दी। तुरंत वह तीर्थ यात्रा पर गए और रास्ते में उनकी मुलाकात चैतन्य से हुई और कहा जाता है कि उनसे ही हरिनाम को ग्रहण किया। कुछ लोगों का कहना है कि वह अपने पिता के साथ चैतन्य से मिलने गए थे; तब वे 18 वर्ष के थे ।

अच्युतानंद की दीक्षा के समय चैतन्य ने सनातन गोस्वामी से उनकी देख-भाल करने और उन्हें आध्यात्मिक ज्ञान में प्रशिक्षित करने के लिए कहा। अच्युतानंद रघुराणा चंपति राय की बेटी से विवाह करके धौलीग्राम में रहने लगे। उनके 12 प्रमुख शिष्य थे, जिनमें सबसे प्रमुख रामचन्द्र दास थे। राजा ने उन्हें बांकी मोहाण में कुछ जमीन दे दी। उन्होंने जिस मूल मंत्र का जाप किया और सिखाया वह राधा मंत्र था। अच्युतानंद मुख्य रूप से 'अच्युतानंद मलिका' नामक भविष्यवाणियों की पुस्तक के लिए प्रसिद्ध हैं, जो 13 अध्यायों में विभाजित है। इसमें जगन्नाथ महाप्रभु के स्थानांतरित होने के बाद पुरी शहर के भविष्य के विनाश और कल्कि अवतार की उपस्थिति का वर्णन है; जो ओडिशा से आरंभ होने वाले सभी दुष्टों का विनाश करेगा। अच्युतानंद ने ओड़िया में अनुवाद भी किया और टिप्पणी भी की। 'हरिवंश', 'तत्व बोधिनी', 'शून्य संहिता', 'ज्योति संहिता', 'गोपाल उज्ज्वल', 'वाराणसी गीत', 'अनाकार ब्रह्म संहिता', 'अभ्यदा कवच', 'अस्तगुजरी', 'सरण पंजरा स्तोत्र', 'विप्र चालक', 'मन महिमा' आदि उनके प्रमुख ग्रंथ हैं।

उन्होंने पंच सखाओं (पाँच मित्रों) के प्रचार मिशन के बारे में एक किताब लिखी और रहसंकीर्तन के एक यात्रा समूह का आयोजन किया, जिसके लिए उन्होंने अनेक भजन गीत भी लिखे। ऐसा कहा जाता है कि एक बार उन पर कुछ ईर्ष्यालु ब्राह्मणों ने हमला कर दिया था और उन्होंने बेहद हल्के होकर और हवा में उड़कर अपनी 'लघिमा योग' सिद्धि प्रकट की थी। अच्युतानंद की शिक्षाएँ सगुण और निर्गुण पूजा का एक मिश्रण प्रस्तुत करती हैं, जो द्वैत-अद्वैत के सिद्धांतों, उपनिषदों तथा कुंडलिनी योग के ज्ञान को प्रदर्शित करती हैं। ज्येष्ठ शुक्ल एकादशी को उन्होंने अपना शरीर त्याग दिया ।

अतिबड़ जगन्नाथ दास :

उनका जन्म 1487 की राधाष्टमी के दिन (कुछ लोग 1490 में कहते हैं) पुरी से ब्रह्मगिरि की ओर 14 किलोमीटर दूर कपिलेश्वरपुर या कपिलेश्वर ग्राम (16 पारंपरिक शासन गाँवों में से एक) में हुआ था। चूँकि उनका जन्म राधाष्टमी को हुआ था, इसलिए उनका राधिका से घनिष्ठ संबंध माना

जाता है। उनकी माँ पद्मावती देवी थीं और उनके पिता भगवान दास थे, जो कौशिकी गोत्र से थे। वह भगवान के जगन्नाथ मंदिर में भागवत पुराण का पाठ करते थे। उनकी व्याख्याएँ इतनी आकर्षक थीं कि राजा प्रतापरुद्र ने उन्हें 'पुराण पंडा' की उपाधि दी। 'पुराण पांडा' के पुत्र के रूप में, जगन्नाथ दास अपने पिता के पास बैठते थे और भागवत सीखते थे। एक दिन मंदिर का भ्रमण करते समय चैतन्य श्री मंदिर में बट गणेश देवता के पास बैठे। 18 वर्षीय लड़के को गोप लीला (10वें सर्ग) से ब्रह्म स्तुति का पाठ करते हुए देखा और उसे एक कपड़ा और अतिबड़ी की उपाधि देकर सम्मानित किया ।

जगन्नाथ दास भी लोगों के घरों में भागवत का पाठ करने जाते थे और शारीरिक पहचान के आधार पर कोई भेद-भाव नहीं करते थे, पुरुषों और महिलाओं के साथ समान रूप से मित्रता रखते थे। एक प्रसिद्ध घटना में मेधा और सुमेधा के साथ इस तरह के गोपनीय आदान-प्रदान का वर्णन है। दो महिलाएँ महान आध्यात्मिक शक्ति से संपन्न थीं; जिनके बारे में कहा जाता है कि वे रात में मंदिर बंद होने के बाद अपनी रहस्यमय शक्तियों के साथ जगन्नाथ के दर्शन करने जा रही थीं। कुछ ईर्ष्यालु व्यक्तियों ने जगन्नाथ दास पर अनैतिक व्यवहार (महिलाओं के साथ अवैध संबंध) का आरोप लगाते हुए राजा प्रतापरुद्र से शिकायत की और राजा ने उन्हें पूछताछ के लिए बुलाया। जगन्नाथ दास ने उत्तर दिया कि उनके लिए पुरुषों और महिलाओं के बीच कोई अंतर नहीं है। उन्होंने कहा कि वास्तव में जब वह महिलाओं के साथ संगति कर रहे थे, तो वह वास्तव में खुद को भी एक महिला ही मानते थे।

राजा को इस पर विश्वास नहीं हुआ और जगन्नाथ दास को जेल में डाल दिया गया। उन्होंने एक महिला और रक्षकों के रूप में स्वयं को दिखाया, इससे प्रभावित होकर राजा को इस तरह के असाधारण कार्य में साक्षी होने के लिए बुलाया गया। राजा प्रतापरुद्र को एहसास हुआ कि उन्होंने एक महान भक्त के प्रति अपराध किया है, इसलिए उन्होंने न केवल उन्हें जेल से मुक्त कर दिया, बल्कि उन्होंने अपनी प्रमुख रानी को भक्ति योग की दीक्षा देने के लिए भी कहा। रानी ने जगन्नाथ दास को राजभवन में आमंत्रित किया, जहाँ वह अपना मठ खोल सकते थे, जिसे बड़ ओड़िया मठ कहा जाता था।

कहा जाता है कि नारद मुनि के आदेश से जगन्नाथ दास ने श्रीमद्भागवत का ओड़िया में अनुवाद किया था। इस कार्य ने उनका ओडिशा के सर्वश्रेष्ठ आध्यात्मिक शिक्षक की प्रतिष्ठा दिलाई और आज भी सभी घरों में इसकी पूजा और पाठ कराए जाते हैं। वस्तुः ओडिशा में इस ग्रंथ को तुलसी दास के रामचरितमानस के ही स्तर का माना जाता है।

जगन्नाथ दास ने 'गुप्त भागवत', 'तुला वीणा', 'सोल चपदी', 'चीर चपदी', 'तोला बिना', 'दारु ब्रह्म गीत', पाँचभूत गीता, 'अर्थ कोइली', 'मुगुणी स्तुति', 'अन्नमय कुंडली', 'गोलोक सरोधर', 'भक्ति चंद्रिका', 'काली मलिका', 'इंद्र मलिका', 'नीलाद्रि विलास', 'नित्य गुप्त चिंतामणि', 'श्री कृष्ण भक्ति कल्पलता' आदि पुस्तकें लिखीं। उन्होंने जिस मूल मंत्र का जाप किया और सिखाया वह राम मंत्र था। उन्होंने पुरी में दो मठों की स्थापना की, बड़ ओड़िया मठ और सातलहरी मठ। उनके प्रमुख शिष्य बालिगा दास थे। जगन्नाथ दास का निधन शुक्ल माघ सप्तमी 1557 को हुआ था।

उनके मुख्य शिष्यों में उद्धव, रामचन्द्र, गोपीनाथ, हरि दास, नंदनी आचार्य, वामणी महापात्र, श्रीमती गौरा, गोपाल दास, अखंडला मेकापा, जनार्दन पति, कृष्णा दास, वनमाली दास, गोवर्धन दास, कन्हाई खूँटिआ, जगन्नाथ दास और मधुसूदन दास आदि प्रमुख हैं।

यशोबंत दास :

इनका जन्म 1482 में कटक जिले के अरंगा नंदी गाँव के पास एक क्षत्रीय परिवार में हुआ था। इनके पिता बलभद्र माला और माता रेखा देवी थीं। उन्होंने अरंगा के राजा रघुनाथ चंपत्ति की बहन अंजना देवी से विवाह किया। बाद में उन्होंने संन्यास ले लिया और भारत के कई पवित्र स्थानों की यात्रा की। उन्हें रहस्यमय शक्तियाँ प्राप्त हुईं और वे इच्छानुसार अपना रूप बदलने में सक्षम थे। उन्होंने जिस मूल मंत्र का जाप किया और सिखाया वह श्याम मंत्र था। उन्होंने 'गोविंद चंद्र', 'शिव सरोदय', 'षष्ठी माला', 'प्रेम भक्ति', 'ब्रह्म गीता', 'आत्म परिचय गीता', एक

मलिका ग्रंथ और कई भजन लिखे। गोविंद चंद्र ग्रंथ असम, बंगाल और उत्तर भारत में बहुत प्रसिद्ध हैं। यह मूल रूप से पारंपरिक नृत्य और नृत्य की शिक्षा से संबंधित है, जो वैष्णव परंपरा से जुड़ा है। उनके सबसे अच्छे शिष्य लोही दास थे। कहा जाता है कि प्रसिद्ध संत सालबेग भी उनके शिष्य थे। उन्होंने मार्गसिरा शुक्ल षष्ठी को अपना शरीर त्याग दिया।

शिशु अनंत दास :

उनका जन्म 1488 में भुवनेश्वर के पास बालीपटना गाँव में हुआ था। उनके पिता का नाम कपिल और माता का नाम गौरा देवी था। एक सपने में उन्हें कोणार्क में सूर्य नारायण से चैतन्य से मिलने का आदेश मिला, इसलिए उन्होंने समुदाय से संपर्क किया और नित्यानंद प्रभु से दीक्षा ली। शिशु अनंत दास खंडगिरि में रहते थे, जिसे आज गादी तपोवन आश्रम कहा जाता है। अपनी साधना के माध्यम से उन्होंने रहस्यमय शक्तियाँ प्राप्त कीं और वे इच्छानुसार अपना रूप बदलने में सक्षम थे। आमतौर पर वह एक छोटे बच्चे का रूप धारण कर लेते थे, इसलिए उसका नाम शिशु रखा गया। इस रूप में, वे राजा प्रतापरुद्र की पत्नी का दत्तक पुत्र बन गए, जिसने उसका पालन-पोषण किया। उन्होंने व्यक्तिगत रूप से बालीपटना के मठ में पतित पावन (जगन्नाथ) की मूर्ति पाई। उनके मुख्य शिष्य बरंग दास, हम्सा दास और सिसु दास थे। ओडिशा के सबसे पुराने तथा सबसे महत्वपूर्ण लोकप्रिय ग्रंथों में 'भक्ति मुक्ति दया गीता' उनका ग्रंथ शामिल है। 'शिशु देव गीत', 'अर्थ तरणी', 'उदेभाकर', 'तिरभाकना', एक मलिका और भजन गीत के अनेक ग्रंथ लिखे। उदय भागवत में उन्होंने भगवान जगन्नाथ को राधा और कृष्ण के संयुक्त रूप का वर्णन किया है। हालाँकि, सामान्य आग्रह के अभाव की वजह से वर्तमान में इन पुस्तकों का उचित मूल्यांकन नहीं किया जाता है ।

निष्कर्ष :

भारतवर्ष के विभिन्न प्रांतों के धर्म प्रचारक श्री जगन्नाथ के दर्शन करने के लिए आते थे। उसमें से कुछ पुरी में रहकर प्रचार-प्रसार करने लगे थे। ओडिशा में साहित्य और धर्म की चर्चा की परंपरा अक्षुण्ण भाव में गंगवंश के समय से ही प्रारंभ हुई। हालाँकि, भारत के कुछ हिस्सों में भक्ति आंदोलनों पर इतिहासकारों द्वारा पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है। सोलहवीं सदी के ओडिशा का महान पंचसखा आंदोलन उनमें से एक है। सोलहवीं शताब्दी के पाँच महान ओड़िया संत (पंचसखा), बलराम दास, जगन्नाथ दास, अच्युतानंद दास, यशोबंत दास और शिशु अनंत दास, चैतन्य के समकालीन और सहयोगी थे। वे भगवान जगन्नाथ के भक्त थे और पुरी शहर में रहते थे। सोलहवीं शताब्दी के ओडिशा के सामाजिक-धार्मिक विकास में उनके द्वारा निभाई गई भूमिका का क्षेत्र के बाद के धार्मिक और साहित्यिक इतिहास पर स्थायी प्रभाव पड़ा। सूर्यवंशी गजपति राज्य के साथ उनके घनिष्ठ संबंध के परिणामस्वरूप, वे जगन्नाथ पथ में कई सुधार लाने में सफल रहे। पंच सखाओं ने भी अपना एक अनूठा दर्शन विकसित किया और ओड़िया में साहित्य की कुछ महानतम कृतियों का निर्माण किया। ❑

सहायक ग्रंथ सूची :

1. महान्ति, देवेन्द्र, पंचासखा ओड़िया साहित्य, फ्रेंड्स पब्लिकेशन, कटक, 1965
2. मायाधार, डॉ. मानसिंह, ओड़िया साहित्यर इतिहास, ग्रंथ मंदिर, कटक, 1967
3. महान्ति, डॉ. बंशीधर, ओड़िया साहित्यर इतिहास, भाग-1, कटक, 1970
4. सामंतराय, नटवर, ओड़िशार धर्मधारारे पंचासखा परिकल्पना, वाणी भवन, भुवनेश्वर, 1983
5. नायक, रवि, ओड़िया साहित्यर संक्षिप्त इतिवृत्त, एसबि पब्लिकेशन, कटक, 1985
6. आचार्य, प्रितिश (संपा.), ओड़िशा इतिहास, आम ओड़िशा, प्रकाशन, 2011
7. महाराणा, सुरेन्द्र कुमार, ओड़िया साहित्यर इतिहास, ओड़िया बुक स्टोर, कटक, 2015
8. महान्ति, डॉ. अमूल्य रत्न, श्री जयदेव और श्री चैतन्य, अमन प्रकाशन, कानपुर, 2018
9. पंडा, हरिहर, हिस्टोरी ऑफ उड़ीसा, जनेरिक पब्लिकेशन, यूरोप, थर्ड इडिशन, 2019
10. रथ, बीजय कुमार, कल्चरल हिस्टोरी ऑफ ओडिशा, संदीप प्रकाशन, दिल्ली, 1983
11. प्रधान, अतुल चंद्र, ए स्टडी ऑफ हिस्टोरी ऑफ उड़ीसा, पंचशील पब्लिकेशन, भुवनेश्वर, 1988
12. पाणिग्रही, कृष्णचंद्र, हिस्टोरी ऑफ उड़ीसा, नोशन प्रेस, चेन्नई, 2023

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

चिंतन

संत दादूदयाल की वाणी में आध्यात्मिक चिंतन का स्वरूप

टिंकू छेत्री

शोधार्थी, हिंदी विभाग
पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय
मेघालय, शिलोंग-793022
9864746307
tinkuchetry0175@gmail.com

शोध सार :

प्रस्तुत शोध आलेख में संत दादूदयाल की वाणी में आध्यात्मिक चिंतन के स्वरूप का अध्ययन किया गया है। आलेख में सर्वप्रथम भारतीय आध्यात्मिक चिंतन की परंपरा तथा संत साहित्य में उनके योगदान को प्रस्तुत किया गया। तत्पश्चात संत दादूदयाल की वाणियों में ब्रह्म तथा जीव संबंधित अवधारणा पर चर्चा की गई है। ब्रह्म-जीव के भेद को भी स्पष्ट किया गया है। इसके बाद जगत एवं माया संबंधित दादू के विचार को उजागर किया गया है। दादू की वाणियों में निहित सहज साधना को अभिव्यक्त किया गया है। अंत में शोध निष्कर्ष के माध्यम से दादू के अध्यात्मिक चिंतन को तत्कालीन सामाजिक चेतना तथा वर्तमान में उसकी प्रासंगिकता के रूप में स्थापित किया गया है।

बीज शब्द :

ब्रह्म, जीव, जगत, माया, मोक्ष, आध्यात्मिकता, चिंतन, चेतना, सहज साधना।

मूल आलेख :

भारतीय चिंतन का आधार आध्यात्मिक चिंतन है। आध्यात्मिक चिंतन का संबंध मनुष्य की जिज्ञासा प्रवृत्ति से है। परम तत्व, जीव, माया, जगत को जानने की जिज्ञासा से आध्यात्मिक चिंतन का जन्म हुआ। भारतीय साहित्य में आध्यात्मिक चिंतन की परंपरा अत्यंत प्राचीन रही है। इस चिंतन की प्रवृत्ति भारतीय समाज में परंपरा से विकसित होती रही। वेदों, पुराणों, उपनिषदों में आध्यात्मिक चिंतन के अंश प्राप्त होते हैं। शंकराचार्य के अद्वैत दर्शन ने अध्यात्मिक चिंतन के क्षेत्र में एक नई क्रांति लाई। उन्होंने ब्रह्म एवं जीव को एक ही माना। इससे तात्त्विक चिंतन की परंपरा को गति मिली। मध्यकालीन हिंदी साहित्य में आध्यात्मिक चेतना अपनी पराकाष्ठा पर रही। विशेषकर संत साहित्य में अध्यात्मिक प्रश्नों पर अत्यधिक चर्चा की गई। संतों में अध्यात्म-संबंधी चिंतन स्वभावत: समाहित हो जाता है। इस संबंध में पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल कहते हैं कि *''संत अध्यात्म-विद्या का व्यवहार-सिद्ध स्वरूप है। अध्यात्मवादी तत्त्व-चिंतन जिन महान सिद्धांतों का अन्वेषण और निरूपण करते चले आए हैं, उनकी उसे स्वयं अपने में अनुभूति हुई होती है। उनका उसे शास्त्रीय वाचनिक ज्ञान हो न हो, दर्शन अवश्य होता है। वह अध्यात्म का*

व्याख्याता चाहे न हो, अध्यात्म चेत्ता होता है। वह दृष्टा होता है।''[1] संत कवियों ने परमात्मा, जीव, जगत, माया, मोक्ष आदि के रहस्य को जानने की चेष्टा की। उनका यह प्रयास कोई दार्शनिक सिद्धांत पर आधारित न होकर स्वानुभूति पर आधारित था। ऐसे संत कवियों में दादूदयाल का नाम प्रमुखता से लिया जाता है ।

संत दादूदयाल भक्तिकाल में विकसित संत परंपरा की शृंखला के एक मुख्य कड़ी हैं। उनके द्वारा स्थापित किए गए संप्रदाय को 'दादूपंथ' कहा गया। उनके अनुयायियों में गरीबदास, रज्जब जी, सुन्दरदास, जगजीवन, वाजिद जी, बजना, जनगोपाल, संतदास और जगन्नथ हैं। उन्होंने स्वयं को कबीरदास की परंपरा का कहा है। उनके विचार और साधना में कबीरदास का अत्यधिक प्रभाव पड़ा। दादू कहते हैं कि 'जो मार्ग कबीर का था, उन्होंने जिसकी उपासना की है, उसी मार्ग को मैं मन, वचन एवं कर्म से अपनाऊँगा, किसी अन्य मार्ग को नहीं।'

''जो था संत कबीर का, सोई वर वरिहूँ।
मनसा वाचा कर्मण में और न कहिहूँ।।''[2]

दादू का अध्यात्मिक चिंतन व्यावहारिकता पर आधारित है। उनकी वाणियों में सूक्ष्म अनुभूतियों से उत्पन्न विचार ही सिद्धांत के रूप में परिणत हो गए हैं। उनकी वाणी में अनुभूत सत्य को स्थान मिला है। दादू ने ब्रह्म को कबीर की तरह राम का नाम दिया है। जीव जब ब्रह्म के प्रति समर्पित हो जाता है तो स्वयं को ब्रह्ममय पाता है। इस अध्यात्मिक अनुभूति को दादू ने अवर्णनीय या गूँगे का गुड़ कहा है। दादू का ब्रह्म अनुभवगम्य है, उसे शब्दों में अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता है-

''केते पारिख पचि मुए कीमती कहि न जाइ।
दादू सब हैरान हैं गूंगे का गुड़ खाई।।''[3]

आध्यात्मिक चिंतन में ब्रह्म एवं जीव के प्रश्न का विशेष महत्व है। जीव ब्रह्म का अंश है या नहीं है, अगर है तो ब्रह्म ने जीव को अपने से अलग क्यों किया? सृष्टि का सृजन ब्रह्म ने क्यों किया? जीव और ब्रह्म के संबंध में बाधक क्या है? माया का निर्माण ब्रह्म ने क्यों किया? इत्यादि अनेक प्रश्नों की जिज्ञासा ने दादू को आध्यात्मिक चिंतन के लिए प्रेरित किया। दादू की वाणियों में ब्रह्म एवं जीव से संबंधित ऐसे प्रश्न देखे जा सकते हैं। दादू के अध्यात्मिक चिंतन में ब्रह्म सूक्ष्म है, निरंजन है, निरकार और निर्मल है। वे निर्गुण ब्रह्म के पारंपरिक स्वरूप को ही स्वीकार करते हैं-

''परमब्रह्म परापर सो मम देव निरंजनम्।
निराकार निर्मल तस्य दादू वंदनम् ।।''[4]

दादू का ब्रह्म कबीर के समान है। कबीर ने कहा है कि- 'निर्गुण राम जपहु रे भाई, अविगत की गति लिखि न जाई।' वहीं दादू कहते हैं कि संतों के जीवन का आधार निर्गुण ब्रह्म की उपासना करना ही है। निर्गुण ब्रह्म का फल अगम-अपार है- 'निर्गुण नाऊ फल अगम अपार। सन्तन जीवनि प्राण आधार।' उनका ब्रह्म निर्गुण, निराकार और सबसे भिन्न है, वह पाप-पुण्य से प्रभावित नहीं होता है। निर्गुण होते हुए भी सब कुछ कर सकता है-

''बिन गुण व्यापै सब कीया, संग्रथ आपैं आप।
निराकार न्यारा रहै, दादू पुनि न पाप।।''[5]

आध्यात्मिक चिंतकों ने ब्रह्म को एकमात्र सत्य माना है, उसके अंश को सभी जीवों में तथा उसकी झलक को प्रकृति में देखने का प्रयत्न किया है। सभी जीव आत्माएँ उस परम-तत्व का अंश हैं तो परस्पर विद्वेष कैसा? और यदि जगत निस्सार और क्षण भंगुर ही है तो इससे मोह करना भी निरर्थक ही कहा जा सकता है। दादू कहते हैं कि- हे जीवों तुम व्यर्थ ही दु:ख के दरिया में डूबे जा रहे हो। इस शरीर के भीतर ही देव हैं, उसी में ध्यान लगाओ। दादू शरीर अर्थात काया में ही परमतत्व की सत्ता को स्वीकार करते हैं-

''काया माँहैं अनभै सार। काया माँहैं करै विचार।
काया माँहैं उपजै ज्ञा । काया माँहैं लागै ध्यान।
माया काया माँहैं अमर स्थान। काया माँहैं आतम राम ।।''[6]

दादू का ब्रह्म सर्वव्यापक है, सर्वशक्तिमान है, उसके स्वरूप को पढ़-पढ़कर अनेक पंडित थक गए, लेकिन किसी ने उस ब्रह्म की सीमा को पार नहीं किया, उसके बारे में अनेक मुनियों ने प्रवचन दिए, फिर भी सारी कथा नहीं कह पाए। पानी में प्रवेश कर आँखें खोलकर देखने पर जैसे चारों ओर जल का बिंब दिखाई पड़ता है, ऐसे ही ब्रह्म सभी स्थानों पर विद्यमान है-

''दादू पांणी मांहै पैसि करि देषै दिष्टि उघाड़ि।
जला बिंब सब भरि रह्या, औसा ब्रह्म, विचारि।।''[7]

आध्यात्मिक चिंतक जीव के अस्तित्व, उसके स्वरूप पर चिंतन करता है। जीव की चैत्य शक्ति को आत्मा कहा गया, जो परमात्मा का अंश है। जीव ब्रह्म से विमुक्त होकर संसार में आ गया है। दादू ने जीव ब्रह्म को एक माना है। वे कहते हैं कि *'जीव ब्रह्म द्वै नाहीं।'*[8] जीव और ब्रह्म दोनों अलग-अलग नहीं हैं। जीव के चैतन्य स्वरूप को आत्मा कहा गया है। *'''शंकराचार्य ने जीव को अंत:करण के अविच्छिन्न चैतन्य कहा है। उन्होंने शरीर और इंद्रियों पर शासन करने और कर्मों के फल भोगने वाले आत्मा को जीव माना है और वह चैतन्यस्वरूप है।''*[9] जीव ब्रह्म से विमुत होकर संसार में आ गया, अब वह पुन: ब्रह्म में मिलना चाहता है। सांसारिक माया के बंधनों में बंधा होने के कारण जीव अपने अंशी ब्रह्म से परिचित नहीं हो पाता। जब तक वह ब्रह्म में नहीं मिल जाता, वह जन्म-मरण और माया के बंधन में बंधा रहेगा। उस ब्रह्म की गति को प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि वह सभी प्रकार की कामनाओं से मुक्त हो जाए, उसकी आसक्ति अनासक्ति में परिवर्तित हो जाने पर जीव अपनी गति को छोड़कर ब्रह्म की गति को प्राप्त कर लेगा। दादू कहते हैं कि-

''कुछ न कीजै कांमणां, श्रीगुण, नृगुण होइ।
पलटि जीव थें, ब्रह्म गति, सब मिलि मानैं, मोहि।।''[10]

संतों ने जीव और ब्रह्म को एक माना है। उसकी एकता पर संदेह करना भ्रम है। अधिकतर संत कवियों ने उसे एक स्वीकार किया है। उनका मानना है कि *''ब्रह्म एक ही है, नाम-रूप से युक्त जीव अनेक हैं, जिस प्रकार फल और बीज में, जल और लहर में, छाया और पुरुष में, अक्षर और स्याही में, स्वर्ण और अलंकार में, मिट्टी और*

घड़े में तात्त्विक अंतर नहीं है, उसी प्रकार ब्रह्म और जीव में तात्त्विक अंतर नहीं है। जीव ही ब्रह्म है और जीव में भी तात्त्विक जीव और ब्रह्म में जो भेद दिखाई देता है वह भ्रमजन्य है।''[11] ब्रह्म और जीव के मध्य जो भेद हमें दिखाई पड़ता है, उस भेद को स्पष्ट करते हुए दादू कहते हैं कि–

''दादू जामै मरै सु जीव है, रमिता राम न होइ।
जामण मरण तै रहत हौ, मेरा साहिब सोइ।।''[12]

अर्थात जन्म लेने वाला और मरने वाला जीव है, जो जन्म–मरण से रहित है वह परमात्मा है। जीव जब तक जन्म मरण के इस बंधन में बंधा रहता है, जीवात्मा कहलाता है और जब इससे मुक्त हो जाता है ब्रह्म स्वरूप हो जाता है। कर्मों के वश में रहने के कारण वह जीव बना रहता है और कर्मों से मुक्त हो जाने पर ब्रह्म कहलाता है।

आध्यात्मिक चिंतक को जगत संबंधी प्रश्न विचलित करता रहा है। सृष्टि की उत्पत्ति कब हुई ? कैसे हुई ? किसने की ? वह कैसे विकसित हुई ? उसका रहस्य क्या है ? अंत क्या है ? इत्यादि प्रश्नों की जिज्ञासा को संत कवियों ने शांत करने का प्रयास किया है। जगत की उत्पत्ति के संबंध में दादू कहते हैं कि साईं ने अपने आप से पहले ओंकार को उत्पन्न किया और ओंकार से पंच–तत्वों को। पंच तत्वों से फिर घट की उत्पत्ति हुई और घट से ही विभिन्न प्रकार का विस्तार हुआ। इसी घट को उन्होंने मैं आदि वर्ण–विचारों की उत्पत्ति को भी माना है। उस समर्थ साईं ने यह सबकुछ एक सबद में किया, अगर वह यह सब एक साथ न करता तो वह बलहीन या निर्बल हो जाता–

''पहली कीया आपथै उतपत्ति ओंकार। ओंकार थैं
ऊपजे पंच तत्त आकार।।
पंचतत्तथै घट भया, बहु विधि सब विस्तार। दादू घट थै
उपजै, मैं तै चरण विचार।।
एक सबद सब कुछ किया, ऐसा समरथ सोइ। आगे
पीछे तो करे, जे बलहीणा होइ।।''[13]

जीव एवं ब्रह्म या आत्मा–परमात्मा को पृथक करने वाला आवरण माया है। माया के कारण जीव ब्रह्म से अलग हो जाता है और फिर से उसे ब्रह्म में मिलने के लिए माया से मुक्त होना पड़ता है। माया जीव को अपने वश में करती है और विभिन्न भ्रमों में भुलाती हुई उसे ब्रह्म से विमुख कर देती है।जीवों को सुख एवं विलास का स्वप्न दिखाकर कष्ट देती है। जीवों को दु:ख देकर माया को सुख मिलता है। सारा संसार माया के बंधन में बंधा हुआ है। वह इतनी शक्तिशाली है कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी उससे नहीं बच सके–

''माया सर्पिण सब डसै, कनक कामणी होई।
ब्रह्मा, विश्न महेश लौ, दादू बचे न कोई ।।''[14]

दादू ने माया को मिथ्या कहा है। अज्ञानतावश हम उसे सत्य मान लेते हैं। इसकी प्रतीति उसी प्रकार मिथ्या है जिस प्रकार प्यासा मृग धूप में चमकते हुए रेत को पानी समझ लेता है और व्यर्थ ही उसके पीछे दौड़ता है। जिस घट में ब्रह्म का निवास नहीं होता, वहीं माया का मंगलगान होता है। जब हृदय में ब्रह्म की ज्योति जग उठती है तथा माया का भ्रम दूर हो जाता है। ब्रह्म की ज्योति न जग पाने की अवस्था तक यह माया मन में ही निवास करती है–

''जिहिं घटि ब्रह्म न प्रकटै, तहां माया मंगल गाइ।
दादू जागै जोति जब, तब माया भ्रम विलाइ।।''[15]

दादू की साधना पद्धति सहज है। सहज साधना में अनुभूति को महत्वपूर्ण माना गया है। संत दादू ने कर्म, ज्ञान, योग और प्रेम–भक्ति का सहज समन्वय किया है। उन्होंने अपनी साधना पद्धति में पाखंड एवं असहजता जैसे दुर्बल तत्वों का परिष्कार किया। अंहकार, माया का परित्याग, निर्वैरता, आत्म–समर्पण, निरंतर ब्रह्म का स्मरण आदि सहज साधना करने पर मनुष्य ब्रह्म में विलीन (मोक्ष) हो जाता है। परमात्मा का साक्षात्कार करने के लिए अहं को नष्ट करना अत्यंत आवश्यक है। मनुष्य जब अहं को नष्ट कर देता है, तब उसके तन–मन के सारे विकार समाप्त हो जाते हैं। दादू ने अहं को 'आपा' कहा है। आपा के मिटने पर ही व्यक्ति निरवैरी बन सकता है। दादू जिस मत की शिक्षा देते हैं, उसका सार यही है–

''आपा मेटे हरि भजे, तन मन तजे विकार।
निरवैरी सब जीव सौं, दादू का मत सार।।''[16]

सहज साधना द्वारा ही मन के सारे विकारों, वासनाओं का नाश किया जा सकता है। सुमिरण करने से गुण एवं इंद्रियों की आसक्ति का सहज ही नाश हो जाएगा। उनके

राम रूपी निर्गुण ब्रह्म के सुमिरण से कर्म का पाश भी समाप्त हो जाएगा। दादू कहते हैं-

''सहजैं ही सब होइगा, गुण इंद्री का नास।
दादू राम संभलतां, कटे करम के पास।।''[17]

अत: कहा जा सकता है कि संत दादूदयाल के अध्यात्मिक चिंतन के केंद्र में ब्रह्म, जीव, जगत, माया और मोक्ष रहा है। दादू का ब्रह्म अखंड, पूर्ण, निरंजन, निर्गुण, शून्य, अविनाशी तथा अगोचर है। जीव ब्रह्म का ही अंश है, माया के आवरण के कारण वह ब्रह्म से अलग हो गया। आडंबर एवं आसक्तिरहित जीव सहज साधना द्वारा मोक्ष को प्राप्त कर सकता है। दादू के इस आध्यात्मिक चिंतन में तत्कालीन सामाजिक चेतना निहित है। तत्कालीन समाज में धर्म का स्वरूप सांप्रदायिकता का रूप ग्रहण कर रहा था।

दादू ने परमात्मा को सर्वव्यापी कहकर मंदिरों एवं मस्जिदों को नकारा तथा इन धर्मों में व्याप्त बाह्याडंबरों का विरोध किया। यदि ब्रह्म सर्वव्यापी है और जीव और ब्रह्म में भेद ही नहीं तो हिंदू-मुस्लिम, जाति-पाँति, ऊँच-नीच के भेद का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। जीव को ही ब्रह्म मान दादू ने सभी प्रकार के भेद को निरर्थक स्थापित किया। ब्रह्म सब में विद्यमान है, हमें किसी के साथ अत्याचार नहीं करना चाहिए। दादू के इस आध्यात्मिक चिंतन में मानवता का भाव समाहित है। अध्यात्मिक चिंतन की यह सहजता, समरसता तथा लोक कल्याण की भावना दादू के चिंतन को वर्तमान समाज में प्रासंगिक बनाती है। ❑

संदर्भ :

1. बड़थ्वाल, डॉ. पीताम्बरदत्त, योग प्रवाह, काशी विद्यापीठ, बनारस, संस्करण-2003 ई., पृ.-156
2. चतुर्वेदी, परशुराम (संपा.), दादूदायल ग्रंथावली, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, संस्करण-1966 ई., पृ.-217
3. वही, पृ.- 88
4. वही, पृ.- 216
5. वही, पृ.- 224
6. वही, पृ.- 407
7. वही, पृ.- 47
8. वही, पृ.- 234
9. चौरसिया, डॉ. केशनी प्रसाद, संत साहित्य के दार्शनिक सिद्धांत, हिन्दुस्तान एकेडेमी, इलाहाबाद, संस्करण-1965 ई., पृ.-103
10. चतुर्वेदी, परशुराम (संपा.), दादूदायल ग्रंथावली, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, संस्करण-1966 ई., पृ.-106
11. सिंह, राजदेव, सन्त साहित्य पुनर्मूल्यांकन, आर्य बुक डिपो, नई दिल्ली, संस्करण-1973 ई., पृ.-198
12. चतुर्वेदी, परशुराम (संपा.), दादूदायल ग्रंथावली, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, संस्करण-1966 ई., पृ.-216
13. वही, पृ.- 227-28
14. वंशी, डॉ. बलदेव, दादू जीवन दर्शन, वाणी, प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण-1998 ई., पृ.- 42
15. चतुर्वेदी, परशुराम (संपा.), दादूदायल ग्रंथावली, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, संस्करण-1966 ई., पृ.-140
16. वही, पृ.- 271
17. वही, पृ.- 17

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

लोकरंग

विजयदान देथा की कहानियों का रंगमंच से अंतर्संबंध

प्रोमिला

एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग
अंग्रेजी एवं विदेशी भाषा
विश्वविद्यालय, हैदराबाद-500007
8977961191
promila.du@gmail.com

शोध सार :

भारतीय सभ्यता में कहानी कहने और सुनने, उसे अभिनय संकल्पना में ढालने की परंपरा प्राचीन काल से चली आ रही है। इसके वाचिक-अभिनय में जहाँ औपन्यासिक सूत्रधार उपस्थित रहता है, वहीं कहानी के नाट्य रूपांतरण में नाटककार की अनुपस्थिति दर्ज होती है और अभिनेता द्वारा कथा के नाटकीय प्रसंगों को इस प्रकार उभारा जाता है कि 'कहानी का रंगमंच' रंग जगत की वह विशिष्ट विधा बन जाती है, जिसमें कहानी की शर्तोंनुसार शब्द दृश्य में ढलते हैं, सादगी भरी परिकल्पना मंचन की विशेषता बनती है। हिंदी कहानीकारों से इतर आज राजस्थानी साहित्य के मूर्धन्य हस्ताक्षर विजयदान देथा का नाम भी रंगकर्मियों के लिए अज्ञात नहीं है। देथा की अनेकों कहानियाँ अपनी परिधि त्याग हिंदी नाटककारों, रंगनिर्देशकों की दृष्टि-बोधकता से गुजरते हुए नित्य सार्थक, समकालीन और व्यंजक बनी हुई हैं। किंतु विवेचन रोचक है कि इस पूरी प्रक्रिया में कहानीकार देथा का कैसा संबंध अन्य नाटककारों, नाट्य रूपांतरणकारों तथा नाट्य निर्देशकों विशेषकर हबीब तनवीर, देवेन्द्र राज अंकुर, इरपिन्दर भाटिया और मृणाल पाण्डे से रहा है? सिनेमा और टेलीविजन की तकनीकपरकता से इतर 'रंगमंच' की 'जीवंत' कसौटी पर ये कहानियाँ कितनी सफल-असफल हुई हैं?

बीज शब्द :

लोक, नाट्य रूपांतरण, कहानी का रंगमंच, चाक्षुष-यज्ञ, तकनीक, लेखक, यथार्थवादी शैली, रंगमंच, आलेख।

मूल आलेख :

'लांगा और मंघानयार ग्रुप के साथ कोमल कोठारी और विजयदान देथा दिल्ली तक आए थे और लॉन पर मेरे साथ बैठे रिहर्सल देख रहे थे। मैंने बहुत पहले से सुन रखा था कि बिज्जी को मेरा 'चरन दास चोर' का प्रोडक्शन पसंद नहीं है। इसके अलावा उन्हें एक और शिकायत थी कि कभी उन्हें नाटक के शो में कोई रॉयल्टी नहीं मिली। मैंने मौका गनीमत जानकर चुपचाप दस हजार का एक चेक विजयदान के नाम लिखकर उनकी तरफ बढ़ा दिया, ये कहते हुए कि 'चरनदास चोर' के शो मुद्दत से बराबर चल रहे हैं, आज तक मुझे तौफीक नहीं हुई कि मैं कुछ रॉयल्टी आपकी खिदमत में पेश करता, बस आज यह हकीर (मामूली) रकम पेश

करने का मौका मिला है जो वैसे कम है लेकिन आप इसे कबूल कर लें तो मुझे बहुत खुशी होगी। 'बिज्जी' ने चेक लिए बगैर खामोशी से अपनी नजर कोमल की तरफ घुमा दी। कोमल दा बोले-*'भई, मोहब्बत से दे रहे हैं, ले लो!' और 'बिज्जी' ने चेक उसी खामोशी से स्वीकार कर लिया। फिर मैं बोला कि सुना है आपको मेरी प्रस्तुति पसंद नहीं। विजयदान बड़े लेखक होने के अलावा इंसान की हैसियत से मुझे बहुत पसंद थे-सच्चे, ईमानदार, बेहद शरीफ और वजादार आदमी हैं। मेरे दिल में उनके लिए हमेशा इज्जत का जज्बा रहा है। वो बोले-'तुमने कहानी का अंत खराब कर दिया।'*[1]

हबीब तनवीर का उपर्युक्त दीर्घ कथन केवल नाट्य प्रस्तुति या मूल रचनाकार के आर्थिक अधिकार का विवरण मात्र नहीं बनता, अपने विशिष्ट प्रयोजन के साथ लोक और मार्क्सवाद की सदृश भूमि पर खड़े विजयदान देथा उर्फ 'बिज्जी' तथा हबीब तनवीर के व्यक्तित्वों का लेखा-जोखा देता है। भारतीय साहित्य और अन्य कलाओं की अंतर्निर्भरता तथा अंतर्द्वंद्व पर अनवरत संलाप की प्रत्याशा प्रस्तावित करता है। संश्लेषण की नींव पर मंच और विजयदान के कथा-जगत के मध्य के आदान-प्रदान का खाका खींचता है। साथ ही हिंदी रंगमंच का निमित्त अन्य कला रूपों को स्वयं में विलीन करना है अथवा उन्हें कायांतरित करते हुए नवीन रूपाकारों में ढाल नए दर्शक, नई विशेषता देना, जैसे प्रश्नों का संवाहक बनकर कथा के नाट्य रूपांतरण की प्राचीन परंपरा से लेकर, कहानी के कथ्य आश्रित रंग-आलेख और 'कहानी के रंगमंच' तक की मूलगामी मीमांसा का विस्तीर्ण आधार रचता है, जिसकी परिपाटी मुंशी प्रेमचंद, सआदत हसन मंटो, निर्मल वर्मा से होते हुए हरिशंकर परसाई से विजयदान देथा तक अंकुरित हुई है।

मालचंद तिवाड़ी की दृष्टि में, *'पाँच फुट से एकाध इंच ऊपर निकलता कद। गंदुमी मगर दीप्त रंग। किसी एलियन जीव सदृश भारी पपोटों वाली तीक्ष्ण आँखें। ढलवाँ ललाट से पीछे को जाती विरल-धवल केशावली। चौड़े पाठ की शांतिपुरी धोती पर किसी बढ़ई या राजमिस्त्री जैसा कुर्ता',*[2] की शान रखने वाले देथा की कहानियाँ

शरतचंद्र के पश्चात् अन्तोन चेखव और रवीन्द्रनाथ ठाकुर को साहित्यिक गुरु मानने वाले और 'मेरा मगज मेरे पेट की खुराक न बने' की अभिलाषा रखने वाले देथा की कहानियों की सशक्तता के साथ यह सादगी उनके बड़प्पन और उदारता का वृहत् प्रदेय बनती है, जो बिना आशंका संपूर्ण आश्वस्ति-भाव के साथ हिंदी नाटककारों, रंगकर्मियों को उनसे जोड़ता है। कहा भी गया है, रचनाकार को उसके विचारों, व्यवहार तथा रचनाशीलता के बीच से परखना और उभारना चाहिए। उसे पढ़ने की आवश्यकता होती है, पूजन की नहीं।

मूलत: लोक की कथाएँ हैं, पर ऐसी लोक कथाएँ, जिनमें बुनियादी रहस्य गुण मिश्रित कौतुकी ढंग तो है ही आधुनिक संवेदना और बोध से संवृत वह गहन जीवन तनाव भी है, जो समकालीन कहानीकारों और रंगकर्मियों के लिए अहर्निश चुनौती रहा है, बारंबार उन्हें आकष्ट करता आया है। फलत: 'बिज्जी' की बहुत-सी कहानियों ने नाट्य रूपांतर प्राप्त करके अथवा 'कहानी-रंगमंच' पर अपना दृश्य संसार रचा है।

यद्यपि दोनों ही रंग-जगत की विधाएँ हैं, किंतु नाट्य रूपांतरण में कहानी के पाठ को अपनी वांछनीयतानुसार बदलकर मंच-प्रस्तुति के लिए तैयार किया जाता है। कहानीकार द्वारा प्रणीत रचना की मूल आत्मा को निरापद रखते हुए विधागत ढाँचे को मंचीय बनाया जाता है। जबकि 'कहानी का रंगमंच' जिसकी आज से लगभग पचास वर्ष पूर्व 1975 में देवेन्द्र राज अंकुर ने निर्मल वर्मा की तीन कहानियों, 'डेढ़ इंच ऊपर', 'धूप का टुकड़ा', 'वीकएंड' का 'तीन एकांत' नाम से मंचन कर शुरुआत की थी, में कहानी के आलेख को बिना नाट्य रूपांतरण के मूल रूप में अर्थात कहानीपन के साथ मंच पर प्रस्तुत किया जाता

है। कथा वर्णन या वृत्तांत कथन के तेवर को ही यथासंभव बनाए रखा जाता है ताकि नाट्य क्रिया के सघन क्षणों में भी वह किसी-न-किसी रूप में सूक्ष्मता से विद्यमान रहे। ध्यातव्य है कि इसे कथा-गायन या कथा-वाचन से जोड़ना यथोचित नहीं ठहरता, क्योंकि शनैः-शनैः इसका अपना रंग-व्याकरण विरचित हुआ है। कहानी में निपट लेखक और उसकी पठनीयता में केवल पाठक होता है, जबकि कहानी की किसी भी थियेटर प्रस्तुति में लेखक, रूपांतरणकार, निर्देशक, अभिनेता और दर्शक सम्मिलित रहते हैं। एक कार्यशाला में गिरीश रस्तोगी ने सटीक कहा कि *''सवाल किसी भी रचना को एक नई 'सृष्टि' के रूप में लाने का है-केवल नाटक बना देने का नहीं। कथाकार के कथ्य को, मूल संवेदना को निश्चित रूप से आरंभ से अंत तक रूपांतरण करते समय सुरक्षित रखना है। कोई जरूरी नहीं कि हम उस कृति को ज्यों-का-त्यों अंत तक लेकर चलें-हमारे सामने जटिलताएँ, चुनौतियाँ रंगमंच की हैं। रंगमंच की निरंतर, शर्तें, क्रियातत्व को ध्यान में रखते हुए अगर कुछ या कोई दृश्य या स्थल छोड़ना पड़ता है तो अनिवार्य तौर पर कहीं जोड़ना पड़ता है। चाहे संकेत, चाहे व्यंजनाएं अथवा शब्द, वाक्य या दृश्य भी (चाहे वह शाब्दिक हों, चाहे रंग भाषा द्वारा बुना गया हो) तो वह उस रचना को नष्ट करने के लिए नहीं-उसकी जीवन शक्ति को और ऊर्जा देने के लिए। अगर इस प्रकार के प्रवेश से रचना कहीं भी टूट या बिखर रही है तो यह निश्चय हर रूपांतरकार और निर्देशक की कमी है, अगर मूल रचना और अधिक प्रभावशाली ढंग से नई कृति का रूप धारण करती है-अथवा निर्देशक-रूपांतरकार उसे अपनी काल्पनिक शक्ति से आज के युग से, समय से, वर्तमान चेतना से जोड़कर कुछ भिन्न, संकेत देता है तो उसे रचना को डैमेज करने के अर्थ में नहीं लिया जाना चाहिए।''*[3] चूंकि एक सच्चे रंगकर्मी का प्रयोजन रचना में निहित संवेदनाओं, संभावनाओं, कला, साहित्य के अनूठे संबंधों का विश्लेषण कर अर्वाचीन सौंदर्यबोध के साथ लिखित को दृश्यात्मक बना व्यापक दर्शकों तक पहुँचाना होता है।

मणि कौल, जिन्होंने 1973 में 'दुविधा' बनाई से लेकर 2020 में 'कांचली : लाइफ इन ए स्लॉ' बनाने वाले देदिप्य जोशी तक यद्यपि कई निर्देशकों ने समय-समय पर विजयदान देथा की कहानियों की पर्दे पर पुनर्रचना की है, मुकुल गोस्वामी और सुषमा राजीव (अमिट लालसा) आदि ने कई कहानियों का रेडियो नाट्य रूपांतर तथा उदय प्रकाश आदि ने टेलीविजन हेतु कई धारावाहिक रूपांतरण प्रत्यक्ष किए हैं, किंतु इन तकनीक केंद्रित स्वरूपों से इतर उल्लेखनीय है कि जीवंत चाक्षुष-यज्ञ यानी रंगमंच पर निर्देशकों ने इनके पाठ-पुनर्पाठ से गुजरकर बारंबार अभिव्यक्ति के संयम तथा व्यंजना की तीक्ष्णता के विदग्ध मिश्रण की अनुपम बानगी को गढ़ा है। मानवीयता की रक्षा की असीम चिंता से उपजी 'रिजक की मर्यादा', 'अमिट लालसा','आदमखोर','खीर वाला राज्य','गुणवती','दोहरी जिन्दगी','सच का भ्रम','सिकन्दर और कौआ', 'मनुष्य का गड़रिया', 'फितरती चोर', 'उलझन', 'नागिन तेरा वंश बढ़े', 'मूजी सूरमा', 'चौबोली', 'स्वप्नलोक', 'तीजां और बीजां', 'अनेकों हिटलर', 'एक लोक कथा', 'झूठी आस', 'राजीनामा', 'रोजनामचा', 'रास्ते की तलाश', 'गिरवी जोबन', 'मरीचिका' आदि ढेरों कहानियों को विशाल तिवारी, हिमांशु झांकल, नितीश दूबे, इरपिन्दर पुरी भाटिया, नादिरा बब्बर, उज्ज्वल प्रकाश मिश्रा, प्रदीप राय, प्रसन्ना आदि-आदि ने कभी मूल शीर्षक तथा कभी नए शीर्षक से मंचित किया है। ये बदलाव मुख्यतः निम्न चार रूपों में दृष्टिगत हुए हैं-

पहला, एक कहानी का नाट्य रूपांतरण, जैसे जवाहर कला केंद्र के रंगायन में सुमन कुमार द्वारा 'केंचुली' कहानी का इसी शीर्षक से रचा नाटक।

दूसरा, एक से अधिक कहानियों को नाट्य रूपांतरित कर नाटक में ढालना, जैसे गाजियाबाद उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी तथा थर्टीन स्कूल ऑफ टैलेंट डेवलपमेंट द्वारा हिंदी भवन के सभागार में दो कहानियों 'मनुष्य का गड़रिया' और 'दुविधा' पर आधारित अक्षयवरनाथ श्रीवास्तव के निर्देशन में प्रस्तुत नाट्य रूपांतरण 'एक था गड़रिया'।

तीसरा, एक कहानी का 'कहानी के रंगमंच' रूप में प्रस्तुतिकरण, जैसे जामिया मिलिया विश्वविद्यालय में देवेन्द्र राज अंकुर द्वारा बिना किसी बदलाव के प्रस्तुत 'मूजी सूरमा' कहानी।

चौथा, एक से अधिक कहानियों को एक साथ कहानी के रंगमंच पर उतारना, जैसे रविंद्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय में देवेन्द्र राज अंकुर द्वारा 'अनेकों हिटलर', 'दूजो कबीर' और 'आदमखोर' पर आधारित 'जीवन के रंग बिज्जी के संग' का मंचन।

किंतु दर्शकों द्वारा रूपांतरित कृति से मूल कहानी की कलात्मकता और उत्कृष्टता की अभिकांक्षा के कारणवश किसी महान और श्रद्धेय रचनाकार की कृति का मंच रूपांतरण उतना सरल कार्य नहीं है। हबीब तनवीर रचित 'चरनदास चोर' पर श्याम बेनेगल ने थोड़े बदलाव के साथ नाटक से पहले बाल फिल्म बनाई थी तथा बाद के वर्षों में इसी नाम पर रेडियो नाटक भी प्रसारित किया गया। पर यहाँ यह जानना रोचक है कि बहुप्रशंसित और राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर पुरस्कृत 'चरनदास चोर' नाटक के बनने की भी एक कहानी रही। 'बिज्जी' ने राजस्थान में हबीब तनवीर को चोर की कहानी जबानी सुनाई जोकि बाद में 'उलझन' संग्रह में 'सच्चाई की बिसात' नाम से छपी। तनवीर साहब ने इसे नाटक में ढालने के लिए तीन-चार दिन काम किया, पर दक्ष अभिनेताओं की कमी के कारण यह अविलंब संभावित न हो सका। तदनंतर देथा की सुनाई दूसरी कहानी 'ठाकुर रो रूसनो', क्योंकि मुख्यत: एक ही व्यक्ति पर केंद्रित थी। अत: 'ठाकुर प्रितिपाल सिंह' नाम से गढ़ी और मंचित कर दी। (प्रतिभा अग्रवाल द्वारा संपादित पुस्तक 'हबीब तनवीर : एक रंग व्यक्तित्व' में इस कहानी का नाम 'चोर की सच्चाई' तथा नाटक का नाम 'ठाकुर पृथिपाल सिंह' रेखांकित है।) फिर राजस्थान नाट्य शिविर के कुछ दिनों बाद नवंबर-दिसंबर 1974 में भिलाई की वर्कशॉप के दौरान उस कच्चे रूप को 'चोर-चोर' नाम से खेला और अंतत: इसका शीर्षक बदलकर ठोस आकार के साथ इसे 'चरनदास चोर' नाम दिया। 'बिज्जी' के संग्रह में आज यह 'फितरती चोर' शीर्षक से दर्ज है और इस बहुअर्थी कहानी में चोर का कोई नाम नहीं है।

'चरनदास चोर' नाटक को पहली बार 1975 में दिल्ली के कमानी सभागार में प्रदर्शित किया गया। इसकी नाट्य रूपांतरण की प्रक्रिया पर चर्चा करते हुए हबीब तनवीर लिखते हैं, *''विजयदान देथा ने राजस्थान की एक मशहूर लोक-कथा मुझे सुनाई, जिसमें एक ऐसे चोर की कहानी कही गई थी, जो खेल-खेल में अपने गुरु को वचन दे बैठता है कि 'मैं कभी झूठ नहीं बोलूँगा' और*

अपने आप को इस वचन को निभाने के लिए मजबूर पाता है। नाटक क्योंकि सच के बारे में है और एक ऐसे चोर के बारे में है, जो सच बोलने का संकल्प लेता है और इसे मंच पर छत्तीसगढ़ के लोक-कलाकार प्रस्तुत करने जा रहे थे, इसलिए मैंने छत्तीसगढ़ में प्रचलित सत्यनाम धर्म की परंपरा को इस नाटक की कहानी से जोड़ दिया। सत्यनाम धर्म के मूल प्रतिपादक थे गुरु घासीराम। सत्यनाम धर्म का मूलभूत सिद्धांत है 'सत्य ही ईश्वर है।' इसीलिए मैंने चोर को सत्यनामी बना दिया और उसका नाम चरनदास रख दिया।''[4] नाटक का अंत भी कहानी से भिन्न रखा गया। कहानी में जब रानी कामांध होकर चोर से प्रेम की याचना करती है तो चोर अविचल सुसज्जित पलंग को खाट बता उस पर चढ़ने से मना कर देता है। रानी क्रोधित हो जाती है। *''मानो नागिन की पूँछ पर पाँव पड़ा हो। डसने के लिए अदेर पलटी। यह सच्चाई प्रकट होने पर उसके शील पर कालिक जाएगी। सारा भांडा फूट जाएगा। सिंहासन को आँच लगे, ऐसा साँच भला कौन सहे? कैसे सहे? जोर से चिल्लाई, चोर...चोर...चोर.... । सिपाही चारों ओर से नंगी तलवार लेकर दौड़े। आखिर झूठ ना बोलने की कसम का इस तरह तलवार से अंत हुआ। सत्ता की ताकत के आगे सच की ताकत कब तक ठहरती! रानी के देखते-देखते उन्होंने सत्यवादी चोर के टुकड़े-टुकड़े कर डाले।''*[5] सत्ता और सत्य की नग्न विसंगति यहाँ बेपर्दा होती है। देथा कहते हैं, *''कहानी में, मैं यह बताना चाहता हूँ की रानी बुराई और अत्याचार की प्रतीक है। वह झूठ बोलकर मरवा देने के बाद गुरु से शादी की योजना पेश करती है, और गुरु स्वीकार करता है और उसके साथ शादी कर लेता है यानी बुराई, अत्याचार, झूठ, कपट और भ्रष्टाचार खत्म नहीं होता, बल्कि जारी रहता है, जिससे जूझने और जिसे खत्म करने की आवश्यकता बाकी रहती है। तुमने (हबीब तनवीर) चोर की मृत्यु पर नाटक खत्म करके एक रोमांच पैदा कर दिया।''*[6] पर तनवीर ने माना कि *''मूल कथा में जो तीखापन है, जो धार है वह धार 'नया थियेटर' द्वारा प्रस्तुत किए जाने वाले 'चरनदास चोर' में और अधिक धारदार हो जाती है।''*[7] तथा 'सत्यमेव जयते' का आदर्श रटते देश की व्यवहारिक कुटिल वास्तविक की यही धार निर्देशकों को बार-बार इस कहानी को देश-विदेश में मंचों पर उतारने हेतु प्रेरित करती है। न केवल 'नया थियेटर' वरन् अन्य रंग निर्देशक भी इसे अपने-अपने ढंग से दर्शकों तक पहुँचाते हैं।

देवेन्द्र राज अंकुर 'बिज्जी' की समकालीन जीवन की विंम्बनाओं, विसंगतियों, कुटिलताओं, संबंधों की जटिलताओं, ईर्ष्याओं तथा अविवेक, अहंकार और हिंसक प्रवृत्ति की परतों पर टिकी कई कहानियों जैसे 'दुविधा', 'कागपंथ', 'मूजी सूरमा', 'राजीनामा' 'अनेकों हिटलर', 'दूजौ कबीर' और 'आदमखोर' आदि को कभी एकाकी और कभी कइयों को एकसाथ बिना कथ्य में बड़े बदलावों के मंच पर उतारते हैं, क्योंकि प्रत्येक कहानी का अपना एक व्यक्तित्व और तेवर होता है। अत: 'अंकुर' नाटक की सकल मान्य तकनीकों को छोड़ते हुए कथा के समस्त नाट्य तत्वों को शिथिल करते हैं। मंच सज्जा, अभिनेता के आहार्य अभिनय और अन्य नाट्य-युक्तियों को गौण करके उच्चरित शब्दों पर दर्शक का ध्यान एकाग्र करते हैं। उनकी प्रभावान्विति शब्द आश्रित ठहरती है और ऐसा करने में प्रत्येक कहानी नए कलेवर में ढलती है। वैसे भी *''कोई दो कहानियों की प्रस्तुति एक-जैसी नहीं हो सकती। इसलिए कहानी की प्रस्तुति का फॉर्मूला नहीं हो सकता, जैसा अक्सर नाटक में होता है। हर कहानी अलग ट्रीटमेंट चाहती है। कहानी का एक-एक वाक्य महत्वपूर्ण है। वहाँ कोई घटना ही मुख्य नहीं है, बल्कि घटना को गहरी मानवीय चिंताओं से जोड़कर रखना है। विजयदान देथा की कहानी 'राजीनामा' का भेद नहीं खुलेगा, यदि अंतिम वाक्य अनसुना कर दिया गया, जहां अपने भीतर के सद-असद से लड़ता पात्र अंत में थानेदार हो जाता है तथा लाखों कमाता है। इसी वाक्य पर राजीनामा टिका है।''*[8]

इसी तरह *''बिज्जी की कहानी पढ़कर कई बार यह पाया की ऊपरी तौर पर सीधा व सरल दिखने वाला कथा-क्रम जो पढ़ने के साथ ही बिसर गया प्रतीत होता है, एकाएक अवचेतन के अंधेरे से निकल चेतन को अपनी उपस्थिति से विस्मित कर देता है। और तब उद्घाटित होती है कथा- अपनी संपूर्ण गहराई व शक्ति के साथ''*[9] का विचार रखते हुए इरपिन्दर भाटिया ने भौतिक सुख-सुविधा और संपत्ति के घोर लालच में फँसकर अनजाने में अपने एकमात्र पुत्र तक की हत्या कर डालने वाले कुम्हार दंपति

को दर्शाती देथा रचित लोक कथा 'अमिट लालसा' को रूपांतरण के दो-दो रूपों- पहले टैली-प्ले और फिर 'परिणति' नामक फीचर फिल्म से गुजारकर यथार्थवादी 'मायाजाल' नामक रंगमंचीय नाटक में प्रस्तुत करते हैं, जिसे श्रीराम सेंटर के राजिन्द्रनाथ ने लोक शैली में खेला। देथा की कहानी 'खोजी' एकसाथ दो नाटककारों के लिए अभिप्रेरक बनती है। मृणाल पाण्डेय 'जो राम रचि राखा' में अभिजात्य वर्ग से आने वाले तथा कथित विद्रोहियों एवं क्रांतिकारियों के अंतर्विरोधों का यथार्थवादी शैली में रचे लोक नाट्य रूप में प्रस्तुतीकरण करती हैं तो इसी कथा पर असगर वजाहत का 'वीरगति' नाटक सत्ताधारी वर्ग के चरित्र एवं षड्यंत्र को रेखांकित करते हुए नौटंकी लिखते हैं। किंतु दोनों नाटक निज दृष्टि और वैचारिक भिन्नताओं के कारण एक-दूसरे से पूर्णत: भिन्न अर्थ ध्वनि लेकर उपस्थित होते हैं। कहानी का नया विनियोग यहाँ परिलक्षित होता है। और जब 'बिज्जी' को बिना अनुमति लिए नाटक रचने की जानकारी मिलती है तो वे नाटक के उनकी कहानी से असंबंधित होने की बात एक कागज के पुर्जे पर लिखकर मृणाल पाण्डेय को यह कहते हुए दे देते हैं कि *''यह दिखा देना अपने हिंदी वालों को, चले आते हैं शिकायत करने और तुम्हारे दोस्त भी बनते हैं।''*[10] शरतचंद्र के पश्चात अन्तोन चेखव और रवीन्द्रनाथ ठाकुर को साहित्यिक गुरु मानने वाले और 'मेरा मगज मेरे पेट की खुराक न बने' की अभिलाषा रखने वाले देथा की कहानियों की सशक्तता के साथ यह सादगी उनके बड़प्पन और उदारता का वृहत् प्रदेय बनती है, जो बिना आशंका संपूर्ण आश्वस्ति-भाव के साथ हिंदी नाटककारों, रंगकर्मियों को उनसे जोड़ता है। कहा भी गया है, रचनाकार को उसके विचारों, व्यवहार तथा रचनाशीलता के बीच से परखना और उभारना चाहिए। उसे पढ़ने की आवश्यकता होती है, पूजन की नहीं।

नि:संदेह इस प्रकार विजयदान देथा की कालजयी कहानियों के रंग-फलक पर आने ने भाषा, विधा और क्षेत्रीयता की सीमा से परे गवेषणा का अभिनव वातायन खोला है। एक हलचल पैदा की है। नाट्यकर्मियों द्वारा 'बिज्जी' की प्रत्येक कहानी को अपनी प्रतिभा से नया चेहरा-मोहरा देकर एक नए आस्वाद की सृष्टि का रास्ता विकसित हुआ है। ❑

संदर्भ :

1. हबीब तनवीर, तीन खेल, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, पृ.सं. 2004, पृ.101-102
2. मालचंद तिवाड़ी, लेख-बिज्जी:एक 'एलियन' कथा-व्यक्तित्व, पत्रिका-समकालीन भारतीय साहित्य, सितंबर-अक्टूबर, 2009, पृ.9
3. गिरीश रस्तोगी, नाटक और परिकल्पना, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, पृ.34,
4. हबीब तनवीर, चरनदास चोर, पुस्तकायन प्रकाशन, दिल्ली, सं.1997, पृ.(दो शब्द) 7,8
5. विजयदान देथा, 10 प्रतिनिधि कहानियाँ, किताबघर प्रकाशन, दिल्ली, प्र.सं. 2006, पृ.56
6. हबीब तनवीर, तीन खेल, वाणी प्रकाशन, पृ.सं. 2004, पृ.101-102
7. 'रंग प्रसंग' पत्रिका, हबीब तनवीर से महावीर अग्रवाल की बातचीत, सं. प्रयाग शुक्ल, वर्ष 12, अंक 3, जुलाई-सितंबर 2009, पृ.14
8. संपा. महेश आनंद, कहानी का रंगमंच, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का लेख-कहानी की प्रस्तुति, जो नाटक नहीं, वाणी प्रकाशन, द्वि. सं. 2001, पृ.136
9. इरपिन्दर भाटिया, मायाजाल, पुस्तक सदन, दिल्ली, सं.2000, पृ.आमुख
10. मृणाल पाण्डेय, संपूर्ण नाटक, राधा कृष्ण प्रकाशन दिल्ली, सं.2011, प्रस्तावना

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

दर्पण

इदु मिश्मी लोकसाहित्य : एक विवेचन

मो. जोहुरुल इस्लाम

शोधार्थी, हिंदी विभाग
पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय
शिलोंग, मेघालय-793022
7005951832
mdzohurul141996@gmail.com

शोध-सार :

इदु मिश्मी जनजाति एक ऐसा पर्वतीय जनजातीय समुदाय है, जो अरुणाचल प्रदेश की जनजाति की संस्कृति और परंपराओं में विशिष्ट स्थान रखता है। मिश्मी जनजाति में अपने रीति-रिवाज, खान-पान, संस्कृति, परंपरा आदि को लेकर काफी भिन्नता पाई जाती है। मिश्मी जनजाति में पाई जाने वाली भिन्नता का प्रमुख कारण इस जनजाति का तीन जनजातियों में विभक्त होना है। ये तीन जाति हैं-दिगारु मिश्मी (ताराओ), मीजू मिश्मी (कमान) तथा इदु मिश्मी। इदु मिश्मी जनजाति की सांस्कृतिक परंपरा अत्यंत प्राचीन है। इस क्षेत्र की संस्कृति अपने आप में पूर्ण रूप से स्वस्थ और गहरी है। बहुरंगी संस्कृति तथा समृद्ध परंपराओं एवं प्राकृतिक सुषमा से संपन्न इदु मिश्मी जनजाति का लोक साहिय उन्नत और वैविध्यपूर्ण है। इस जनजाति के लोकगीत और लोक नृत्य की प्रस्तुति सामूहिक रूप से होती है। इनका प्रेम और उल्लास धान कूटते समय एवं फसल काटते समय भी प्रकट होता है। बीज बोते समय और घर बनाते समय इदु मिश्मी जनजाति सामूहिक रूप से अपने पारंपरिक गीत गाती है। नवयुवक और नवयुतियाँ संवाद रूप में प्रेम गीत गाते हैं, जिसमें इनकी सुकुमार कल्पनाओं के साथ-साथ भावनाओं का प्रबल आवेग होता है। इदु मिश्मी लोक कथाओं में अधिकांश धरती, आकाश, सूर्य, चंद्रमा की उत्पत्ति से लेकर जीव-जंतु और भौतिक पदार्थों की उत्पत्ति की कथाएँ वाचिक परंपरा में उपलब्ध हैं। इदु मिश्मी जनजाति में लोक नृत्य की समृद्ध परंपरा मिलती है। इन लोक नृत्यों में सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन की प्रतिध्वनि दृष्टिगोचर होती है। इस प्रकार गाँव के सीधे-साधे लोगों द्वारा लोकोक्तियों और कहावतों का प्रयोग, इदु मिश्मी जनजाति की प्रभावशाली उपस्थिति दर्ज कराता है।

बीज शब्द :

संस्कृति, मिश्मी, मीजू, दिगारु, इदु, कानी, लोचो-ल्हसा, इल्लमों, सिली-लेया, रेह, अपुंग, अनुष्ठान, ईगु, एहो, मोसा अति, गाले मासेलों-जीनु, इन्नियोआती, चेको-नाती, अमब्रिब्रीवु।

मूल आलेख :

लोक साहित्य की परंपरा अत्यंत प्राचीन है। लोक साहित्य के विशिष्ट अंग लोक कथा, लोक गीत, लोक गाथा, लोक नृत्य, लोक नाट्य आदि हैं। लोक

साहित्य अपनी विभिन्न विशेषताओं के कारण महत्वपूर्ण स्थान रखता है। जन संस्कृति का जैसा सच्चा तथा सजीव चित्रण यहाँ उपलब्ध होता है, वैसा अन्यत्र नहीं। इदु मिश्मी में लोक साहित्य के विभिन्न रूप उपलब्ध होते हैं। यही लोक साहित्य इदु समाज को विभिन्न सांस्कृतिक अवसरों पर अभिव्यक्त करते हैं। इदु समाज में विभिन्न प्रकार के धार्मिक अनुष्ठानों में लोक की भूमिका देखी जा सकती है। सभी लोक संस्कृति एवं लोक साहित्य अत्यंत प्राचीन हैं। इदु लोक साहित्य में सरलता, स्वाभाविकता और सरसता दिखाई देती है।

भारत के सुदूर पूर्वोत्तर अंचल में अनूठी विशिष्टताओं को सँजाए हुए अरुणाचल प्रदेश अवस्थित है। यह भारत के सीमांत प्रांत पर स्थित है। अरुणाचल प्रदेश एक जनजातीय प्रदेश है। यहाँ मुख्य रूप से लगभग पच्चीस जनजातियाँ हैं तथा उप-जनजातियों को मिलाकर सौ से भी अधिक जनजातियाँ हैं, जैसे- अपातानी, आदी, न्यीशी, गालो, वांचो, ताई खामती, सिंहफो, ताङ्गसा, नोक्ते मोन्पा, तागिन, आका, सुलुंग, मेम्बा, खाम्बा, शेरदुकपेन आदि। इन जनजतियों के अपने अलग-अलग रीति-रिवाज तथा संस्कृति है। अरुणाचल प्रदेश की जनजातियों में से एक जनजाति है-मिश्मी जनजाति। मिश्मी जनजाति की अधिकतर आबादी लोहित, अंजाव, दिबांग घाटी क्षेत्र में निवास करती है। यह जनजाति मुख्य रूप से तीन भागों में विभाजित है- इदु मिश्मी, दिगारु मिश्मी (ताराओ) और मीजू मिश्मी (कमान)। 'मिश्मी' शब्द की उत्पत्ति कहाँ से हुई, इसका अभी तक कोई ठोस प्रमाण प्राप्त नहीं हुआ है। एक अध्ययन के दौरान यह माना गया है कि *'''मिश्मी' शब्द संस्कृत के 'मिश्रिता' या 'मिश्रित' से आया है। पीली त्वचा तथा जिसकी नाक चपटी हो उसे 'किरातास' या 'मंगोलायड' के नाम से जाना जाता है। जो मिश्रित दिखता हो, उसे मिश्मी कहा गया है।''*[1] मिश्मी जनजाति के नाम से ही इस क्षेत्र को 'मिश्मी हिल्स' इस क्षेत्र को कहा गया। दूसरे अध्ययन में यह बताया जाता है कि *'''मिश्मी' शब्द अंग्रेजों के शासन काल में दिया गया नाम था। ऐसा कहा जाता है कि यह जनजाति 'कानी' (अफीम) के नशे में डूबी रहती थी। इसके चलते मिश्मियों ने अंग्रेजों द्वारा दिए गए अवसर गँवा दिए और उन्हें यह मौका पुन: नहीं मिला। इसलिए अंग्रेजों ने इन्हें 'Miss me '(मिश् मी) कहा।''*[2] कुछ लोग यह भी मानते हैं कि आहोम राज्य के समय मिश्मी जनजाति के लोग मैदानी क्षेत्र में जाकर कुछ अपराध कर और लूट कर पहाड़ों की तरफ भाग आए थे। यह उस समय कि बात है, जब वस्तु-विनिमय प्रणाली का दौर था। आहोम ने इन्हें 'मिसा-मिसी मानु' कहा और इसी का समानार्थी शब्द 'मिश्मी' बना। आश्चर्य की बात तो यह है कि मिश्मी शब्द के बारे में यह जनजाति स्वयं पता नहीं कर पाई है कि यह शब्द कहाँ से आया, क्योंकि यह तो सिर्फ इदु (चूली काटा), मीजू (कमान), दिगारु (ताराओ) से ही खुद को संबोधित करते हैं।

जे.पी. मिल के अनुसार, *'''मि' बर्मी भाषा का शब्द है, जिससे तात्पर्य है 'Men '(आदमी)। वे लोग जो बर्मा की होकांग घाटी तथा काचीन इलाके से होते हुए 18वीं शताब्दी मे यहाँ आकर बस गए थे। मिल ने यह भी लिखा है कि पहले इदु मिश्मी आए फिर दिगारु और अंत में मीजू आकर यहाँ बस गए।''*[3] वहीं डॉ.एन. लेगो का मानना है कि इदु मिश्मी के मेना (उपनाम), लिंग्गी (उपनाम) आदि लोचो ल्हासा से आए थे, इसलिए उनका मानना है कि इदु मिश्मी 'ल्हासा' से आए हैं। तपन कुमार तीनों मिश्मी को बर्मा के काचीन इलाके से जोड़ते हैं। वहीं यहाँ के कुछ पूर्वजों का यह मानना है कि तीनों मिश्मी 'लोचो-ल्हसा' से आए थे। इनके संदर्भ में अलग-अलग लोक कथा प्रचलित है, जहाँ इदु कथा के अनुसार *''इदु फेले 'लोचो-ल्हासा' (तिब्बत) से होते हुए इल्लुमों (लोहित) से होते हुए 'सिली-लेया' (मैदानी भाग) में आकर बस गए। इसे ही कुछ लोगों ने म्यांमार कहा।''*[4] इदु मिथक में 'सिली-लिया' उस मैदानी इलाके को कहा गया है, जहाँ पानी का बहाव रुकता हो और पीछे कि ओर मुड़ जाता हो। यह भी कहा जाता है कि इदु पूर्वजों ने 'सिली-लेया' जाकर, वहाँ के लोगों को मार कर, वापस विश्मनगर की ओर लौट आए थे और यहीं आकर बस गए। 'सिली-लिया' के लोगों को मारने के पश्चात अपने पाप को धोने के लिए इन लोगों ने सफेद मिथुन, सफेद सूअर, सफेद मुर्गी की 'चेको-नाती' नामक एक नदी के सामने जाकर बलि चढ़ाई ताकि इनके पाप धुल सकें और कुछ इस तरह इदु के कुछ लोग दिबांग घाटी में बस गए। गाँव के बुजुर्ग

लोगों से पूछने पर वे बताते हैं कि इदु सर्वप्रथम 'इन्नियोआती' (पूर्वी इलाका जहाँ से सूर्य निकलता है) नामक स्थान में बसे थे और कई लोक कथाओं में इस स्थान का वर्णन मिलता है।

इन पौराणिक कथाओं को देखने से यह ज्ञात होता है कि मिश्मी कहीं और से नहीं आए थे। वे यहाँ के ही मूल निवासी हैं और वे स्वयं विश्वास करते हैं कि वे इन पहाड़ी इलाकों के ही निवासी हैं। कुछ विद्वानों का यह मानना है कि वे म्यांमार या तिब्बत से आए थे। यदि देखा जाए तो पूर्वोत्तर की अधिकतर जनजातियाँ झूम खेती करती हैं और मिश्मी भी झूम खेती करते हैं, इसी के चलते वे एक स्थान से दूसरे स्थान तक आते-जाते रहते हैं, ऐसे ही घूमते-घूमते वे यहाँ आकर बस गए।

मिश्मी भाषा सिनो-तिब्बत, बर्मा परिवार की उपशाखा सिनो बर्मा परिवार की है। इदु मिश्मी की भाषा 'इदु' भाषा कही जाती है। अन्य जनजातियों की भाँति इनकी भी अपनी लिपि नहीं है। इस समाज में इदु भाषा बोलने वालों को दो भागों में विभाजित किया गया है- 'मिदु' और 'मिथु'। मिदु बोलने वाले मुख्य रूप से रोइंग और अनीनी (स्थानों के नाम) में इस भाषा का व्यवहार करते हैं और मिथु हुनली और देसाली(स्थानों के नाम) में बोली जाती है। किंतु मिदु बोलने वालों में भी असमानताएँ दिखाई पड़ती हैं। रोइंग वाले अधिकतर शब्दों के अंत में 'पो, 'वा', 'आ' का उच्चारण करते हैं, जबकि अनीनी वाले 'पे, 'ची' का उच्चारण अधिक करते हैं। वहीं मिथु लोग 'नी' का उच्चारण अधिक करते हैं।

'रेह' और 'केह-मेह-हा' इदु मिश्मी समाज का महत्वपूर्ण त्योहार है। 'रेह' का अर्थ होता है- 'बुलाना'। इसका आयोजन व्यक्तिगत और सामुदायिक स्तर पर किया जाता है। इसमें 'नानी इंतिया' अर्थात माता सूर्य की पूजा की जाती है। इस त्योहार में 'नानी इंतिया' को बलि देने के लिए पर्याप्त संख्या में मिथुन, भैंस, गाय, सूअर, मुर्गी की आवश्यकता पड़ती है। इसके अतिरिक्त इस त्योहार में भारी मात्रा में 'आपोंग' (मदिरा) की आवश्यकता पड़ती है। इस समुदाय के लोगों का मानना है कि वे 'नानी इंतिया' अर्थात माता सूर्य की संतान हैं और उनकी पूजा किए बिना उनका आशीर्वाद प्राप्ता नहीं किया जा सकता है। यह त्योहार व्यक्तिगत एवं सामूहिक तौर पर भी मनाया जाता है। 'रेह' प्रत्येक वर्ष फरवरी के प्रथम सप्ताह में उत्साह और समर्पण के साथ आयोजित किया जाता है। गाँव के बाहर बाँस, पेड़ और फूल-पत्तों से दरवाजे बनाए जाते हैं ताकि दुष्ट शक्तियाँ गाँव में प्रवेश न कर पाएँ। 'रेह' के दौरान 'नानी इंतिया' को प्रसन्न करने के लिए मिथुन की बलि दी जाती है। व्यक्तिगत स्तर पर 'रेह' चार दिनों तक मनाया जाता है। इस दिन सभी रिश्तेदारों को बुलाया जाता है। चार दिनों तक चलने वाले इस 'रेह' का नाम इस प्रकार है-अन्द्रोपू, एयायीह, अरुगो एवं एतोन। इन चार दिनों का अपना महत्व है तथा इन दिनों में कई तरह की धार्मिक क्रियाएँ चलती रहती हैं।

केह-मेह-हा का अर्थ होता है-'नया धान खाना'। इदु समाज में रेह के अतिरिक्त केह-मेह-हा त्योहार मनाया जाता है। फसल जब काट कर घर लाई जाती है तो इस दिन लोग नए चावल के साथ मांस खाते हैं। जिनके पास मांस नहीं होता है, वे धान को जलाकर घर के बाहर फेंक देते हैं। इससे आशय यह कि घर के अंदर दो आत्माएँ रहती हैं- 'मानू ' और 'खिनु'। मानू खिनु से पूछता है कि यह लोग कहाँ जा रहे हैं? खिनु उत्तर देता है कि यह लोग 'सोंजाबो'(अड़वी) लेने जा रहे हैं। खिनु धान को अड़वी कहते हैं, इसलिए यह दोनों धान की आशा में रहते हैं कि कब लोग धान को घर लेकर आएँगे और हम खाएँगे। इसीलिए यह माना जाता है कि पहले इन्हें धान चढ़ाया जाता है। यदि इन्हें धान नहीं चढ़ाया जाता है तो यह क्रोधित हो जाते हैं और घर के किसी भी सदस्य को बीमारी या हानि पहुँचाते हैं। इसलिए केह-मेह-हा अनिवार्य रूप से मनाया जाता है।

लोक साहित्य और लोक संस्कृति किसी भी देश या जाति का दर्पण होते हैं, जिसमें उस देश अथवा जाति की मान्यताएँ, परंपराएँ, प्रथाएँ और रीतियाँ भावात्मक रूप से देखने को मिलती हैं। 'लोक साहित्य' का बोध के अंतर्गत रचना जनमानस द्वारा की जाती है, जिसमें मानव जीवन की अनुभूतियों की अभिव्यक्ति होती है। लोककथा, लोक गीत, लोक गाथा, लोक सुभाषित लोक साहित्य का महत्वपूर्ण अंग हैं। लोक साहित्य में समाज का इतना व्यापक

चिंतन मिलता है कि समाज का पूरा संगठन सांस्कृतिक गतिविधियाँ और अर्थव्यवस्थाएँ विस्तार के साथ प्राप्त होती हैं। डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय के अनुसार, *''सभ्यता के प्रभाव से दूर रहने वाली अपनी सहज व्यवस्था में वर्तमान में जो निरक्षर जनता है, उसकी आशा-निराशा, हर्ष-विषाद, जीवन-मरण, लाभ-हानि, सुख-दुख आदि की अभिव्यंजना जिस साहित्य में प्राप्त होती है, उसे लोक साहित्य कहते हैं। इस प्रकार लोक साहित्य जनता का वह साहित्य है, जो जनता के द्वारा जनता के लिए लिखा गया हो।''*[5]

बहुरंगी संस्कृति तथा समृद्ध परंपराओं एवं प्राकृतिक सुषमा से संपन्न इदु मिश्मी जनजाति का लोक साहित्य उन्नत और वैविध्यपूर्ण है। इदु मिश्मी के लोक साहित्य के अंतर्गत लोक गीत, लोक कथाएँ, लोक सुभाषित, लोक गाथाएँ समाविष्ट हैं। यह उल्लेखनीय है कि इस जनजाति के लोक गीत और लोक नृत्य की प्रस्तुति समूहिक रूप से होती है। धान कूटते समय, फसल काटते समय, बीज बोते समय और घर बनाते समय इदु मिश्मी लोग समूहिक रूप से अपने पारंपरिक गीत गाते हैं। नवयुवक और नवयुवतियाँ संवाद रूप में प्रेमगीत गाते हैं, जिसमें इनकी सुकुमार कल्पनाओं के साथ-साथ भावनाओं का प्रबल आवेग होता है। इदु मिश्मी लोक कथाएँ अधिकांश धरती, आकाश, सूर्य, चंद्रमा की उत्पत्ति से लेकर जीव-जंतु और भौतिक पदार्थों की उत्पत्ति की कथाएँ भी वाचिक परंपरा में उपलब्ध हैं। इदु मिश्मी जनजाति में लोकनृत्यों की समृद्ध परंपरा मिलती है। इन लोक नृत्यों में सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन की प्रतिध्वनि होती है। इसी तरह गाँव के सीधे-सादे लोगों द्वारा लोकोक्तियों और कहावतों का प्रयोग उनकी बातों को प्रभावशाली बनाता है।

''लोक साहित्य के अंतर्गत वह समस्त बोली या भाषागत अभिव्यक्ति आती है, जिसमें आदिम मानस के अवशेष उपलब्ध हों, परंपरागत मौखिक क्रम से उपलब्ध हों, परंपरागत मौखिक क्रम से उपलब्ध बोली या भाषागत अभिव्यक्ति हो, जिसे किसी की कृति न कहा जा सके, जिसे श्रुति ही माना जाता हो और लोक मानस की प्रवृत्ति में समाी हुई हो।''[6] इस दृष्टि से इदु मिश्मी के लोक साहित्य को मुख्यत: चार वर्गों में विभाजित किया जा सकता है- लोक गीत, लोक कथा, लोक गाथा एवं लोक सुभाषित।

लोक गीत :

इदु मिश्मी समुदाय में लोक गीतों की अत्यंत समृद्ध परंपरा है, इन लोक गीतों में हजारों वर्षों के मधुर अनुभव सिमटा हुआ है। लोक गीत जीवन के सभी क्षेत्रों से संबंधित हैं। सदियों से यह मौखिक रूप में इदु मिश्मी समुदाय का मनोरंजन करते आ रहे हैं। इन लोक गीतों में पौराणिक आख्यान, सृष्टि की उत्पत्ति विषयक कथाएँ, जीव-जंतु उत्पत्तिपरक आख्यान, मनोरंजन संबंधी लोक गीत सुनने को मिलते हैं। इदु मिश्मी में पर्याप्त मात्रा में संस्कार गीत, शोक गीत, लोरी गीत, मनोरंजन संबंधी गीत, श्रमपरिहारपरक गीत एवं शिकार संबंधी गीत उपलब्ध होते हैं, एक उदाहरण दृष्टव्य है-

''हो हो हो केह यी जी छो
नुदू हैबो लाची , सायी हेबो लाची
इपी मातो एंदो री - वे - हेबो
एमे - पेमे पृका यी - वे हेबो
इप्री मातों एंदो री - वे हेबो
अथरु अकूयू इप्री नूची हेबा हेबा
हो हो हो हो हो हो''[7]

(अर्थात धान के बीज लगाने का मौसम आ गया है, आओ सभी गाँव वाले मिलकर बीज बोते हैं और कुछ महीनों के बाद 'केह-मेह-री' (धान को पीसना) का समय आ जाएगा। इसलिए चलो सब मिलकर बीज बोते हैं। सब मिलकर 'इमू मेहया-इमू मेगा' (धान को हानि पहुँचाने वाली आत्माएँ) को भगाते हैं ताकि वह हमारी फसलों को नष्ट न करे। इसलिए आओ सब मिलकर इमू मेहया-इमू मेगा को भगाएँ। 'इपी'(पक्षी) और 'पैका'(गोरैया पक्षी) तुम दोनों के लिए हमने खेत के अंतिम भाग में धान लगा दिया है। इसलिए 'नामु' (भाई-बहन) हम सब मिलकर धान को हानि पहुँचाने वाली आत्मा को भगाते हैं और धान के बीज बोते हैं।)

लोक कथा :

इदु मिश्मी समुदाय में हजारों लोक कथाएँ मौखिक परंपरा में उपलब्ध हैं। इन कथाओं में जीवन के सभी पहलुओं के चित्रण हैं। रोचकता इन कथाओं का प्रमुख

गुण हैं। अधिकांश कथाएँ वन एवं वन्य-प्राणियों से संबंधित हैं। इन लोक कथाओं में नैतिक संदेश भी छिपे रहते हैं। प्रकृति से संबंधित, सृष्टि की उत्पत्ति, मनुष्य, पहाड़, पानी, पेड़-पौधे आदि की उत्पत्ति संबंधी लोक कथाएँ अधिक मात्रा में उपलब्ध हैं। भूत-प्रेत, अलौकिक पत्थर, जंगली जानवर संबंधित कथाएँ रोचक होने के साथ-साथ ज्ञानवर्द्धकक भी होती हैं। इदु मिश्मी में नैतिक लोक कथा, अनुष्ठान संबंधी लोक कथा, उत्पत्तिपरक लोक कथा, मनोरंजन संबंधी लोक कथा दिखाई पड़ती हैं। रेह उत्सव की उत्पत्ति संबंधी लोक कथा का एक उदाहरण यहाँ देखा जा सकता है-

''किसी जमाने में अकाल के कारण एक गाँव के सब लोग भूख से मर गए। उनमें से एक 'एपो' (नौकर) बच जाता है। वह भी भूखा-प्यासा रोता रहता है। एक दिन अचानक 'अमब्रिब्रीवु' (पुजारी) अजगर का मांस लेकर गुजर रहा था और तभी उसने एपो को पत्थर के ऊपर रोते हुए देखा और रोने का कारण पूछने लगा। एपो के कहा की मेंने कई दिनों से भोजन नहीं किया है। अमब्रिब्रीवु के हाथ में अजगर के मांस को देखने के बाद एपो उनसे प्रार्थना करता है कि वह उसे कुछ मांस खाने को दें। पुजारी ने कहा कि यदि तुम्हें मांस खाना है तो 'जाहियु' (नदी) से लेकर खाए वहाँ बहुत सारे अजगर का मांस पड़ा हुआ है। कई नदियों और पहाड़ों को पार करने के पश्चात उसे वह स्थान मिल जाता है। नदी के तट पर बैठकर एपो सोचता है कि मांस लेने भीतर कैसे जाए। तभी नदी के बीचों-बीच से एक पक्षी ऊपर निकल आता है और एपो भी उसी पक्षी के निकले हुए रास्ते से मांस लेने जाता है। इस प्रकार अजगर के मांस को काटते समय उसे सिर से एक चमकने वाला पदार्थ मिला और उस पदार्थ को उसने अपने घर लाकर छत पर रख दिया। कुछ दिनों के बाद एपो बीमार पड़ जाता है। कई 'ईगु' (पुजारियों) से उसने पूजा-पाठ करवाया, किंतु उसकी स्थिति ज्यों-की-त्यों बनी रहती है। अंत में अदिजुरु नामक पुजारी को बुलाया गया। पुजारी ने कहा की तुमने घर के किसी कोने में 'पीधि' (धन) छुपा रखा है और वही तुम्हें बीमार कर रहा है। तुम्हें रेह पूजा करनी होगी और अपने सभी रिश्तेदारों को तथा अपने माता-पिता को 'ऐमता' (धन) देना होगा, तभी तुम इस बीमारी से छुटकारा पा सकोगे। इस तरह रेह पूजा करने के पश्चात एपो को बीमारी से छुटकारा मिल जाता है और वहीं से रेह उत्सव की उत्पत्ति होती है।''[8]

लोक गाथा :

लोक गाथाएँ किसी ऐतिहासिक घटना पर आधारित हों, यह आवशयक नहीं। किसी उद्देश्य विशेष के लिए भी लोक गाथाओं का सामने आना संभव है। लोक गाथा में कल्पना की भूमिका अधिक होती है और कल्पना का कोई आधार अवश्य होता है। यह आधार रचयिता के सामाजिक सरोकारों और संस्कारों से भी जुड़ा होता है। लोक गाथा का स्वरूप गीतात्मक होने के साथ-साथ कथात्मक भी होता है। गाथा में गीत वीर पुरुष, उत्पत्ति एवं प्रेम से संबंधित होते हैं। इदु मिश्मी लोक गाथा में उत्पत्तिपरक एवं अनुष्ठान संबंधित गाथाएँ पाई जाती हैं। 'रेह' त्योहार के अवसर पर 'मिथुन की उत्पत्ति' संबंधी गाथाएँ गाई जाती हैं, पहाड़ की उत्पत्ति की गाथा, आपोंग की उत्पत्ति, अनाज की उत्पत्ति संबंधी गाथाएँ प्रसिद्ध हैं। 'मिथुन' (जानवर जो भैंस जैसा दिखता है) की उत्पत्ति की गाथा इस समाज में 'रेह' त्योहार के अवसर पर गाई जाती है। मिथुन की बलि के पश्चात पुजारी मिथुन की उत्पत्ति की गाथा गाते हुए रेह के मालिक के लिए इन्नि दोंदोली (सब के पालक) से मिथुन की वृद्धि की माँग करते हैं। यह गाथा 'साह-आसिछी' के नाम से जानी जाती है। कुछ पंक्तियों के उदाहरण यहाँ दृष्टव्य है-

''अन्नों न के बाह मेगा-आ, आवे पोमो केराह कामा आ
मेंगा दु सीजी वेदा-ला, कामाहो आजा वेडाला
एंब्रो में मृयीतोह वेडाला, ड़ाता मों मेहेसे वेडाला
एंब्रों मापे लाचिमे, डाताला माला गचिमे
एंब्रो में मितुवे मापेको, ड़ाता में मेल्वे माला को
एंब्रों में मितुवे मापेको, ड़ाता ले मालाकों बाचिमे''[9]

लोक सुभाषित :

इदु मिश्मी लोक साहित्य में लोकोक्तियाँ, कहावतें एवं मुहावरे भी मिलते हैं। इदु मिश्मी लोग अनायास ही लोकोक्तियों का प्रयोग करते हैं, बातों-बातों में वे इनका प्रयोग करते हैं। कम शब्दों में अधिक भाव राशि को समेटे

ये लोकोक्तियाँ लोगों को दिशा दिखाती हैं। बुरे कर्म करने से रोकती हैं और सुकर्म की प्रेरणा देती हैं। कुछ लोकोक्तियाँ इस प्रकार हैं-

क. याइकु में ईजी नारु-चा लायी- प्राय: महिलाएँ ही अफवाह फैलाती हैं।

ख. एक्कों-बे-एम्बू आगु यागो लापरामी- पत्नी और बच्चों को गुप्त बातें बताना अच्छा नहीं है।

ग. अरूयी सोची, अब्रायी सोची हुनजी- इसका भावार्थ यह है कि जिस तरह बाँस की जड़ सब कुछ छुपा लेती है, उसी प्रकार गुप्त बातों को भी छिपा लेना चाहिए।

घ. अयुग्रा अतिग्रा, असिपिग्रा अमूपिग्रा- किसी अपने के साथ प्रेम संबंध बनाना और किसी से धन लेकर न लौटाना झगड़े का मुख्य कारण बनता है।

निष्कर्ष :

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि इदु मिश्मी जनजाति एक ऐसी जनजाति है, जिसके विषय में देश के विभिन्न भाषा-भाषियों को बहुत कम जानकारी है। वस्तुत; अरुणाचल प्रदेश की मिश्मी जनजाति एक ऐसा पर्वतीय जनजाति समुदाय है, जो अपनी संस्कृति, परंपरा, रीति-रिवाज, खान-पान आदि में काफी भिन्न है। यह अन्य समुदायों से काफी भिन्न भी है। इस प्रकार इदु मिश्मी समुदाय की अपनी लोक भाषा है और इसी के साथ यह अपने समाज के मूल्यों, परंपराओं एवं मान्यताओं को अभिव्यक्त करता है। इनके लोक साहित्य में स्पष्ट रूप से संस्कृति के जो पक्ष हैं, वह देखने को मिलते हैं। साथ ही साथ उनकी सामाजिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों का परिवेश भी देखा जा सकता है। अन्य भाषाओं की तुलना में मिश्मी क्षेत्र की भाषा में ऊबड़-खाबड़पन की प्रवृत्ति देखी जा सकती है। मिश्मी लोक गीतों में प्रेम-प्रणय अथवा प्रकृति के तमाम ऐसे चित्रण लोक गीतों में प्राप्त होते हैं, जिसका मूल उद्देश्य श्रम को सहज बनाना है। इदु लोक साहित्य में धार्मिक भावना की अभिव्यक्ति देखी गई है। अनेक प्रकार की उत्पत्ति संबंधी कथाओं का उल्लेख कई कहानियों में प्राप्त होता है। मिश्मी लोक साहित्य में स्थानीय देवताओं, प्राकृतिक शक्तियों, जंगल की देवी आदि को केंद्र में रखकर अपनी बात कही गई है। ईश्वरीय शक्ति को खुश करने के लिए बलि आदि की भी चर्चा लोक गीत, लोक कथा एवं लोक गाथा में मिलती है। चमत्कार से उत्पन्न वस्तुओं का उल्लेख यहाँ हुआ है। इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि इनके लोक साहित्य में विविध भावों की अभिव्यक्ति मिलती है। ❑

संदर्भ :

1. Dutta. D. K. The Miju-Mishmis of Aruncahal Pradesh, Government of Arunachal Pradesh, 2012, page-26
2. वही, पृ.- 26
3. वही
4. साक्षात्कार -अखरूबू मिली, 13/10/2020, स्थान- केबाली, रोइंग, अरुणाचल प्रदेश
5. उपाध्याय कृष्णदेव, लोक साहित्य की भूमिका,साहित्य भवन(प्रा.) लिमिटेड, 2017ई., पृ. 22
6. सत्येन्द्र, लोक साहित्य विज्ञान, राजस्थान ग्रंथागार, जोधपुर-2006ई., पृ. 16
7. स्वयं संकलित (13/10/2020) स्थान- केबाली, रोइंग, अरुणाचल प्रदेश
8. वही
9. स्वयं संकलित (23/10/2020) स्थान- एजेंगों, रोइंग, अरुणाचल प्रदेश

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

दर्पण

किन्नर विमर्श की दृष्टि से 'मंगलामुखी' : एक समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ. नूरजहाँ रहमतुल्ला
सहायक अध्यापक, हिंदी विभाग
कॉटन विश्वविद्यालय, गुवाहाटी
9435161974
rupadinory@gmail.com

रित्ती कलिता
शोधार्थी, हिंदी विभाग
कॉटन विश्वविद्यालय, गुवाहाटी
8472846230
rittikalitaxyz@gmail.com

शोध-सार

आखिर ईश्वर ने उसके साथ अन्याय क्यों किया? क्यों हम उन्हें अपने से दूर सामाजिक दायरे से बहार हाशिए पर रखते चले आ रहे हैं? उनके प्रति हमारी सोच में अश्लीलता का चश्मा क्यों चढ़ा रहता हैं? [1]

वर्चस्ववादी समाज व्यवस्था के चलते समाज से हाशिए पर धकेले गये किन्नर समाज को पूर्ण मानव के सभी अधिकार दिलाने की पहल को किन्नर विमर्श कहा जाता है। आधुनिकता की देन यह विमर्श आज साहित्य और समाज में तेजी से अपनी जगह बना रहा है। इस समाज की बहुत सी अनदेखी, अनसुनी किस्से आज साहित्य के माध्यम से सामने आ रही है। किन्नर समाज को साहित्य में प्रतिष्ठित करने में उपन्यास विधा का महत्वपूर्ण योगदान रहा। इस संदर्भ में डॉ लता अग्रवाल और उनके द्वारा किन्नर जीवन पर रचित 'मंगलामुखी' विशेष रूप से उल्लेखनीय है। वर्तमान समय में तथाकथित मूलधारा के समाज के बीच किन्नरों के स्थिति को लेखिका ने यहा अत्यंत हृदयस्पर्शी ढंग से प्रस्तुत किया है। इस रचना में उन्होंने किन्नर समाज के संघर्ष और समस्याओं को उजागर करते हुए यह दिखाने का प्रयास है कि शिक्षा और परिवार का सकारात्मक व्यवहार वह माध्यम बन सकती है, जिससे किन्नरों के प्रति समाज में व्याप्त रूढ़िगत नकारात्मक विचारों को बदला जा सकता है।

बीज शब्द : किन्नर समाज, परिवार, शिक्षा, मानवीयता, मान्यता।

भूमिका :

'हमें हिजड़ा कहकर न पुकारा जाए, आखिर हम भी तो इंसान हैं। हमारे भी नाम हैं हमें इंसान समझा जाए, हमें हमारे नामों से पुकारा जाए।' [2]

महेंद्र भीष्म द्वारा रचित उक्त वाक्य किन्नर विमर्श के उदेश्य को समझता है। आधुनिक युग अपने साहित्यिक और सामाजिक दृष्टिकोण के लिए अपने पूर्ववर्ती युगों से भिन्न रहा। इस दौर में 'स्वतंत्रता,समानता,मैत्री' जैसे शब्दों ने साहित्य और समाज को मुखरित किया। विमर्शों के इस दौर में उन समुदायों को वाणी मिली जिसे समाज सदियों से मूक करार दिया था। इन समुदाय में किन्नर समाज भी शामिल है। अपने लैंगिक भिन्नता के कारण अपमानजनक जीवन जीने के लिए विवश किन्नर समाज को समाज में प्रतिष्ठित कर उनके समस्याओं, जीवन के विविध पहलुओं को

समाज से रूबरू करने में भोपाल निवासी 'डॉ. लता अग्रवाल' का साहित्य महत्वपूर्ण है। 'मंगलामुखी' उनके द्वारा रचित किन्नर जीवन पर आधारित एक महत्वपूर्ण कृति है। लेखिका ने इस पुस्तक के माध्यम से न केवल किन्नर जीवन के समस्याओं को दिखाने का प्रयास किया बल्कि समाज में किन्नरों की सहभागिता और सम्मान की माँग रखी।

मूल पाठ :

प्रतिदिन किंतु सदा है,
एक असफल राग!
प्रतिदिन केवल मिला है,
आंचल में दाग![3]

'गीतिका वेदिका' ने इन पंक्तियों के माध्यम से किन्नर जीवन शब्दबद्ध करने कि कोशिश की। भारतीय साहित्य और समाज में किन्नरों की उपस्थिति प्राचीन काल से ही देखने को मिलता है। 'रामायण', 'महाभारत' पुराणों में किन्नरों की सकारात्मक उपस्थिति इस बात की और संकेत करता है कि उस काल में किन्नर एक सम्माजनक जीवन व्यतीत करते थे। आदि कवि वाल्मीकि द्वारा रचित 'रामायण' का यह वर्णन इस बात की पुष्टि करता है।

यथा जोगु करि विनय प्रनामा, बिदा किए सानुज सब रमा।

नारि पुरुष लघु मध्य बजेरे, सब सनमानि कृपानिधि फेरे।[4]

जब रामचंद्र चौदहवर्ष के लिए वनवास गये थे,तब अन्य अयोध्या वासी के साथ किन्नर समुदाय भी उनके साथ चित्रकूट तक गये थें। अयोध्यावासी को वापस लौटने का आग्रह कर राम ने उक्त वाक्य को कहाँ था। अपने लिए कुछ स्पष्ट आदेश न पाकर किन्नर समुदाय चौदह वर्ष तक रामचंद्र का प्रतीक्षा की। उनके इस समर्पण से अभिभूत होकर राम ने किन्नरों को आशीर्वाद दिया कि कलियुग में उनकी दुआ और ब्दुआ दोनों ही रंग लाएगी। महाभारत में भी किन्नरों का चित्रण देखने को मिलता है। महामहिम भीष्म को परास्त करने वाला और कोई नहीं किन्नर शिखंडी ही थी। इस तरह 'कामसूत्र' में भी किन्नरों का वर्णन मिलता है। इस तरह पौराणिक ग्रंथों में बहुत से स्थानों में किन्नर बार बार आते रहें। मुगल काल किन्नरों के लिए स्वर्ण काल भी कहा जा सकता है, जहाँ परिवार के एक व्यक्ति को किन्नर बना दिया जाता था। अकबर के हरम में किन्नरों का विशेष महत्व था। अंग्रेजों का शासन किन्नर समाज के लिए अंधकार का काल रहा। इस समय उन्हें अपराधियों के श्रेणी में रखा गया, जिससे धीरे धीरे समाज में उनके प्रति नकारात्मक, अपमानजनक दृष्टिकोण फैलने लगा।

सुविधावादी इस समाज में जहाँ संसार की आधी आवादी स्त्री के साथ भेद-भाव परिलक्षित होता है उस दौर में तृतीय लिंग समाज की क्या दशा रही होगी उसका अनुमान भी मार्मिक है। लेकिन आधुनिकता के साथ समाज और साहित्य में किन्नर समाज को स्थान मिलने लगा। धीरे धीरे ही सही, किन्नर समाज के जीवन से उनके समस्या से लोग अवगत होने लगें। साहित्य का योगदान इस दृष्टि से प्रशंसनीय रहा। किन्नर जीवन को अपने साहित्य में स्थान देकर, डॉ. लता अग्रवाल ने किन्नरों के अधिकारों पर, उनके सामर्थ पर पाठक समाज का ध्यान आकर्षित किया। किन्नर समुदाय को गाना, नाचना, भिक्ष माँगना आदि तक सीमित कर देखने वाले तथाकथित मूलधारा के समाज की ऊपर 'मंगलामुखी' उपन्यास एक प्रश्नचिन्ह लगाता है। इस उपन्यास में किन्नर समाज की आंतरिक और बाहरी दोनों समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है, जिसमें परिवार का किन्नर बच्चों के प्रति व्यवहार, गुरु-शिष्य परंपरा, देह व्यापार की समस्या, नकली किन्नरों का मुद्दा आदि शामिल है। इस उपन्यास की सजीवता पर प्रकाश डालती हुई किन्नर पायल कहती है।

'चाहे शिल्पा गुरु हो, महेंद्र हो, सिमरन हो, शालिनी या फिर छंगा हो, यह सभी पात्र हमारे समाज के वो जिन्दा चरित्र हैं जो आज भी हमारे डेरों में आपको मिल जाएँगे । उपन्यास को पढ़ते हुए बार-बार यह महसूस हुआ कि यह कहानी हमारी अपनी है, हमारे साथियों की है।'[5]

मंगलमुखी शब्द का अर्थ है वह व्यक्ति, जिसका दर्शन मात्र ही मंगलकारी हो। इस शीर्षक से लेखिका की किन्नर समाज के प्रति सहानुभूति झलकती है। इस उपन्यास में शिल्पा गुरु, महेंद्री, सिमरन, ममता जैसे किन्नर पात्रों के माध्यम से किन्नर जीवन के विविध पहलुओं को उजागर

किया गया है। भूमिका में लिखती हैं। *'पृथ्वी पर सभी जीव ईश्वर की कृति हैं, इसलिए सभी*

को सम्मान से जीने का अधिकार है।' [6]

उपन्यास की शुरुआत भोपाल के भूजरिया उत्सव से होता है, जहाँ इंद्रदेव की पूजा में किन्नर भी भाग लेते हैं। लेकिन समाज द्वारा उन्हें अपमानित किया जाता है। इसी दौरान 'शकुन', जो गर्भवती है, आत्महत्या का प्रयास करती है। उसे बचाने के लिए जब मूलधारा के कोई व्यक्ति सामने नहीं आता, तब किन्नर समाज आगे आता है ।यह घटना उन लोगों के विचारों पर प्रश्नचिन्ह लगता है, जो किन्नर समुदाय को पूर्ण मनुष्य मानने से अस्वीकार करता है तथा उनके व्यक्तित्व को अपमानजनक समझता है। शकुन और उसके बेटी अनु, किन्नर समुदाय के साथ रहते हुए उनकी मानवीयता और ममता का अनुभव करती हैं। शकुन समझ जाती है कि लोगों द्वारा किन्नर समाज के प्रति बहुत सी गलत बातें प्रचारित है। एक स्थान पर शकुन कहती है। 'गुरु माँ, कभी आपमें अम्मा की ममता दिखाई देती है, तो कभी बापू का प्रेम। समझ नहीं आता कौन-सा रूप सही है।' [7] अनु जो शकुन की बेटी है,आगे चलकर किन्नर समाज को सम्माजनक जीवन दिलाने के लिए प्रयास करती है। कलेक्टर बनने के बाद वह कहती है -'मैं उन सभी वर्गों को समाज की मुख्यधारा से जोड़ना चाहती हूँ, जो किसी न किसी कारण हाशिए पर हैं। एक संपूर्ण समाज तभी बन सकता है, जब सभी को समान अधिकार मिले।'[8] लेखिका अनु पात्र के माध्यम से समाज को किन्नर समाज के प्रति जागरूक करने का प्रयास करती है।

उपन्यास के पात्र किन्नर समाज की विविध समस्याओं को समझने में सहायक हैं। 'सिमरन' जो बचपन से माता-पिता के प्यार से वंचित रही, ने जब 'हरि' से प्रेम किया, तो शादी की रात उसे ठुकराकर उससे मुँह मोड़ लिया। हरि के लिए वह अधूरी थी उसने कहाँ -'साली ! धोखा करती है मेरे साथ, मैं ही पागल था तेरे रूप जाल में फस कर समझ नहीं पाया । तू प्यार मोहब्बत के लिए नहीं बनी, ... तू मेरे क्या किसी मद के काम के लिए नहीं बनी। [9] हरि द्वारा निकली गई सिमरन को अकेली पा कर उसे घर छोड़ने के बहाने दो व्यतियों के रात के अंधेरे में उसके साथ कुकर्म किया। 'शिल्पा गुरु', जो सबको प्रेम से रखती थी, अपने परिवार का प्रेम पाने में असफल रही। बचपन में ही उसके परिवारजनों ने उसे किन्नर समाज के साथ रहने के लिए भेज दिया था। जब कई साल बाद अपनी बहन की शादी में गयी, तो आपने ही लोगों द्वारा अपमानित होकर लौटी । उसकी बहन ने कहाँ- 'दीदी ! माँ-बाबू के जाने के बाद बहुत मुश्किल से जमा है मेरा ब्याह हमें पुरानी जगह ..पुरानी पहचान छोड़नी पड़ी। अब इस दफन हुए रिश्ते की चिंगारी उछालकर मेरे लिए और मुश्किल पैदा मत करो।' [10] 'मणि शर्मा' तथा 'महेंद्रि', जो पढ़ाई में बहुत तेज तथा अच्छे घर से आयी थी, लेकिन केवल किन्नर होने के कारण उससे उसकी पढ़ाई छूत गयी। घरवालों ने उसे सात-आठ वर्ष के आयु में ही किन्नर समाज को दे दिया। इस घटना के कारण वह मूलधारा के प्रत्येक व्यक्ति को नफरत के दृष्टि से देखने लगी। उसका सपना जो छीन लिया मरों ने... उसका भी घर बार था, रिश्ते-नाते थे। [11]

इन पात्रों के माध्यम से लेखिका ने दिखया है कि किस प्रकार किन्नर समाज के लोगों को तथाकथित मूलधारा के समाज, सम-अधिकार तो क्या मानवीयता भी नहीं दिखाते। जिस परिवार के अंश के रूप में उनका जन्म होता है, वे भी उन्हें त्याग कर देते है। शिक्षा की अभाव, रोजगार की अभाव, जीवन जीने की मूलभूत संसाधनों के अभाव के कारण किन्नर समुदाय के लिए नाचना, गाना, नेक माँगना आदि काम ही शेष बच जाता है।

उपन्यास में गुरु की भूमिका और किन्नर समाज की परंपरा पर भी प्रकाश डाला गया है। शिल्पा गुरु के मौत के बाद किन्नर समुदाय अपने ढंग से मातम मानते है। *'कुछ दिन का सोबर मना, सभी किन्नरों ने अपना सिंगार उतार दिया खासकर नये उत्तराधिकारी ने सफेद वस्त्र धारण किये। आखिर गुरु डेरे का प्रमुख होता है ... बाप होता है सबका।'* [12]

इस उपन्यास में किन्नर समाज में व्याप्त देह व्यापार और नकली किन्नरों की समस्या पर भी ध्यान आकर्षित करने का प्रयास किया गया है। 'शालिनी'के माध्यम से देह व्यापार के समस्या को उठाया गया है, जबकि 'चंदा' नामक नकली किन्नर द्वारा समाज में नकली किन्नर के

कारण किन्नर समाज की समस्याओं को दिखाने का प्रयास किया गया है। *नकली बालों की चोटी, सिलिकॉन से बनाई नकली छाती और अंग के सारे कपड़े... जैसे ही अंतिम वस्त्र रज्जू ने खींचा, वहाँ खड़े सभी पुरुष हतप्रभ रह गए।... ये..ये तो आदमी है!* [13] किन्नर जीवन की यथार्थ से रूबरू करती मंगलामुखी किन्नर विमर्श की अन्यतम कृति है। आज सांविधानिक रुप से किन्नरों का एक पहचान है, उनका समाज में अधिकार है लेकिन यह पहचान सामाजिक क्षेत्र में कुछ अलग है। समाज आज भी किन्नर समुदाय को एक अपमानजनक दृष्टि से देखता है। यह समुदाय मूल धारा के पास रहकर भी प्राथमिक शिक्षा से भी वंचित रहता है। सरकार के सुविधा से दूर इस समाज की आधे से भी ज़्यादा लोग आज भी भरपेट खाने के लिए तरसते है। उपन्यास में अग्रवाल जी ने किन्नर जीवन के सभी पहलुओं से पाठक समाज को साक्षात्कार कराने के साथ ही साथ किन्नर समाज को एक असभ्य समाज के रूप में देखने की मानसिकता पर प्रहार किया।

निष्कर्ष :

इस प्रकार, 'मंगलामुखी' किन्नर जीवन की विविध पहलुओं को सजीव रूप में प्रस्तुत करने वाला एक महत्वपूर्ण उपन्यास है। यह दिखाता है कि किस प्रकार शिक्षा ही वह मशाल है, जो किन्नर समाज को सम्माजनक जीवन दिला सकती है। केवल लैंगिक आधार पर भेदभाव न केवल असामाजिक है, बल्कि अमानवीय भी है। किन्नर अस्मिता का प्रश्न सीधे मानवाधिकारों से जुड़ा है। डॉ. लता अग्रवाल का यह कृति समाज को यह सोचने पर मजबूर करता है कि जिनसे दुआएँ माँगी जाती है, उनके साथ अपमानजनक व्यवहार क्यों किया जाता है? क्या यह स्वयं को सभ्य कहने वाले समाज केलिए उचित है! किन्नर भी एक मनुष्य है, आम लोगों की तरह उनलोगों का भी कुछ सपने कुछ लक्ष्य है, जन्मजात कारणों से उन सपनों को तोड़ देना अमानवीय है। आधुनिकता के इस दौर में का प्रकार का भेदभाव संपूर्ण मानव समुदाय के लिए ही एक चेतावनी है। ❑

संदर्भ :

1. (सं) डॉ. सिंह, विजेंद्र प्रताप, गोंड, रवि कुमार 'भारतीय साहित्य एवं समाज में तृतीय लिंगी विमर्श' अमन प्रकाशन, कानपुर(2016) पृष्ठ, 14
2. वही पृष्ठ,16
3. डॉ. पाठक, विनय कुमार, 'किन्नर विमर्श दशा और दिशा' भावना प्रकाशन,दिल्ली (2019 पृष्ठ, 254
4. (सं) भाटी, सुमन 'समाज और किन्नर' साहित्य संचयन,दिल्ली (2019) पृष्ठ, 25
5. डॉ. अग्रवाल, लता 'मंगलामुखी' विकास प्रकाशन कानपूर (2020) पृष्ठ, 8
6. वही, भूमिका
7. वही पृष्ठ, 85
8. वही पृष्ठ,140
9. वही, पृष्ठ, 49
10. वही, पृष्ठ, 63
11. वही, पृष्ठ, 53
11. वही, पृष्ठ, 94
12. वही पृष्ठ, 81

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

অসমীয়া প্রবন্ধ সাহিত্যৰ উদ্ভৱ আৰু অসমৰ সমাজ

ড° চন্দন জ্যোতি চুতীয়া

সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
মনোহাৰী দেৰী কানৈ মহিলা মহাবিদ্যালয়
ডিব্রুগড়-৭৮৬০০১
৬০০০৯২৭৩৭৪
cjyotichutia@gmail.com

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

তত্ত্ব আৰু তথ্য সম্বলিত, যুক্তিনিষ্ঠ, মননশীল গদ্য ৰচনাকে প্রবন্ধ বুলি কোৱা হয়। প্রবন্ধ লেখাৰ মূল উদ্দেশ্যই হৈছে মানুহৰ মনত চিন্তাৰ উদ্রেগ কৰা। আর্থ-সামাজিক, ৰাজনৈতিক, ইতিহাস আদি বিভিন্ন দিশৰ সূক্ষ্ম ব্যাখ্যা তথা বস্তুনিষ্ঠ বিশ্লেষণ প্রবন্ধৰ মাজত বিচাৰি পোৱা যায়। আমেৰিকাৰ বেপ্টিষ্ট মিছনেৰীসকলৰদ্বাৰা 'অৰুনোদই' কাকত প্রকাশ পোৱাৰ পিছতেই আধুনিক অসমীয়া কথা সাহিত্যৰো শুভাৰম্ভণি ঘটে। পৰৱর্তী সময়ত নাথান ব্রাউন, মাইলছ্ ব্রন্সন, এ. কে. গার্নি প্রভৃতি খ্রীষ্টান মিছনেৰীসকলৰ লগতে আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকন, হৰকান্ত বৰুৱা, হেমচন্দ্র বৰুৱা, গুণাভিৰাম বৰুৱা, কমলাকান্ত ভট্টাচার্য্য, লম্বোদৰ বৰা, বলিনাৰায়ণ বৰা, লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱা, চন্দ্রকুমাৰ আগৰৱালা, হেমচন্দ্র গোস্বামী, সত্যনাথ বৰা, কনকলাল বৰুৱা, কালিৰাম মেধি আদি চিন্তাশীল লেখকে অসমীয়া প্রবন্ধ সাহিত্যক একোটা ঐতিহ্য প্রদান কৰে। উদ্ভৱকালীন সময়ৰপৰাই অসমীয়া প্রবন্ধ সাহিত্যত ভিন্ন সামাজিক প্রসংগই স্থান লাভ কৰি অহা দৃষ্টিগোচৰ হৈছে। ভিন্নজন লেখক তথা চিন্তকে সামাজিক সমস্যা আৰু সম্ভাৱনাৰ বিষয়ে তেওঁলোকৰ সাহিত্যকর্মৰ জৰিয়তে উপস্থাপন কৰি আহিছে। প্রস্তুত গৱেষণা-কর্মটিত সমীক্ষাত্মক পদ্ধতি আৰু সাহিত্যৰ সমাজতত্ত্বৰ অন্তর্গত সমাজ-বিশ্লেষণ পদ্ধতিৰ জৰিয়তে অসমীয়া প্রবন্ধ সাহিত্যৰ উদ্ভৱ আৰু উদ্ভৱকালীন অসমীয়া প্রবন্ধ সাহিত্যত সমাজৰ বিভিন্ন দিশৰ সন্ধান বা বিচাৰ কৰিবলৈ প্রয়াস কৰা হৈছে।

০.০ অৱতৰণিকা ঃ

০.১ বিষয়ৰ পৰিচয়

সাহিত্য হৈছে মানুহৰ নান্দনিক আৰু বৌদ্ধিক চিন্তাৰ ক্রিয়াশীল আধাৰ। বহুসময়ত সাহিত্যক এক মতাদর্শগত নির্মিতি (Ideological construct) বুলিও অভিহিত কৰিব পাৰি। সাহিত্যত সমকালীন সমাজ বাস্তৱতাৰ যুগপৎ প্রতিফলন ঘটে। সাহিত্যৰ বিভিন্ন অঙ্গবোৰৰ ভিতৰত প্রবন্ধৰ একোটা সুকীয়া স্থান আছে। সাধাৰণতে গহীন-গম্ভীৰ, চিন্তামূলক ৰচনাকে প্রবন্ধ বুলি কোৱা হয়। বহল অর্থত, তত্ত্ব আৰু তথ্য সম্বলিত, মননশীল, ভাৰসাম্য চিন্তাযুক্ত, পূর্বাপৰ সংগতিপূর্ণ ৰচনাই প্রবন্ধ। প্রবন্ধক মূলতে দুটা ভাগত ভাগ কৰিব পাৰি। যথা - ব্যক্তিগত প্রবন্ধ আৰু ৰম্য ৰচনা। ব্যক্তিগত প্রবন্ধবোৰো আকৌ দুটা ভাগ আছে - বস্তুনিষ্ঠ প্রবন্ধ (Formal or Informative Essay) আৰু ব্যক্তিগত প্রবন্ধ (Familiar or Intimate Essay)। বস্তু বা ব্যক্তিনিষ্ঠ প্রবন্ধত মূলতঃ বিষয়বস্তুৱে প্রাধান্য লাভ কৰা পৰিলক্ষিত হয়। আর্থ-সামাজিক, ৰাজনৈতিক, সাংস্কৃতিক, নৃতাত্ত্বিক আদি ভিন্ন দিশৰ সূক্ষ্ম পর্যবেক্ষণ আৰু যুক্তিপূর্ণ ব্যাখ্যা বস্তুনিষ্ঠ প্রবন্ধৰ মাজত

বিচাৰি পোৱা যায়। সাধাৰণ বিষয় একোটাৰ পৰা সমাজ দৰ্শনলৈকে, কোনো জাতিসত্তাৰ আৰ্থ-ৰাজনৈতিক প্ৰসংগৰপৰা নৃতত্ত্বলৈকে আদি দিশ প্ৰবন্ধ সাহিত্যই সামৰি লয়। কিন্তু, সেই ৰচনাত এক সংগতি থাকিব লাগিব আৰু লেখকৰ সৃজনশীলতা পৰিস্ফূত হ'ব লাগিব। সমান্তৰালভাৱে একোটা নিৰ্দিষ্ট লক্ষ্যৰ মাজেৰে গৈ সেই ৰচনাই পাঠকক সিদ্ধান্তত উপনীত কৰাব পাৰিব লাগিব। প্ৰকৃততে, পঢ়ুৱৈৰ মগজুক স্পৰ্শ কৰি জ্ঞানতৃষ্ণা পূৰ কৰা, যুক্তিনিষ্ঠ, মননশীল, নাতিদীৰ্ঘ ৰচনাকে প্ৰবন্ধ বুলি কোৱা হয়। ভাৰতবৰ্ষত উত্তৰ-ঔপনিৰেশিক যুগত প্ৰবন্ধ ৰচনাৰ ধাৰা আৰম্ভ হয়। আমেৰিকাৰ বেপ্টিষ্ট মিছনেৰীসকলৰদ্বাৰা 'অৰুনোদই' কাকত প্ৰকাশ পোৱাৰ পাছতেই আধুনিক অসমীয়া কথা সাহিত্যৰো শুভাৰম্ভণি ঘটে। প্ৰস্তুত গৱেষণা-কৰ্মটিত অসমীয়া প্ৰবন্ধ সাহিত্যৰ উদ্ভৱ, সমসাময়িক সমাজ আৰু উদ্ভৱকালীন অসমীয়া প্ৰবন্ধ সাহিত্যত অসমৰ সমাজ জীৱনৰ ভিন্ন দিশৰ প্ৰতিফলন সম্পৰ্কে পৰ্যালোচনা কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

০.২ অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব ঃ

সাহিত্যৰ গৱেষণামূলক আলোচনাত প্ৰবন্ধ সাহিত্যই প্ৰয়োজনীয় গুৰুত্ব লাভ কৰা দৃষ্টিগোচৰ নহয়। কিন্তু অসমীয়া প্ৰবন্ধ সাহিত্যৰ এক ঐতিহ্য আছে। প্ৰবন্ধ সাহিত্যই সমকালীন সমাজখনৰ আৰ্থ-সামাজিক, ৰাজনৈতিক দিশৰ ভিন্ন সমল ধৰি ৰখাত গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা পালন কৰি আহিছে। উদ্ভৱকালীন সময়ৰপৰাই অসমীয়া প্ৰবন্ধ সাহিত্যত সমাজৰ ভিন্ন দিশে প্ৰকাশ লাভ কৰি আহিছে। কিন্তু অসমীয়া প্ৰবন্ধ সাহিত্যৰ উদ্ভৱ আৰু সমসাময়িক সমাজ সম্পৰ্কে বিশেষ অধ্যয়ন, পৰ্যালোচনা হোৱা দৃষ্টিগোচৰ হোৱা নাই। গতিকে, সামাজিক বিৱৰ্তনৰ প্ৰকৃত স্বৰূপ উপলব্ধিৰ বাবে অসমীয়া প্ৰবন্ধ সাহিত্যৰ উদ্ভৱ আৰু উদ্ভৱকালীন অসমীয়া প্ৰবন্ধ সাহিত্যত সমাজৰ ভিন্ন দিশৰ উদ্‌ঘাটনৰ নিশ্চয়কৈ প্ৰয়োজন আছে।

০.৩ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

ক) অসমীয়া প্ৰবন্ধ সাহিত্যৰ উদ্ভৱ সম্পৰ্কে আলোকপাত কৰা।

খ) উদ্ভৱকালীন অসমীয়া প্ৰবন্ধ সাহিত্যত সমাজৰ ভিন্ন দিশৰ প্ৰতিফলন ব্যাখ্যা কৰা।

০.৪ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

এই অধ্যয়নত অসমীয়া প্ৰবন্ধ সাহিত্যৰ উদ্ভৱ, সমসাময়িক সমাজ আৰু উদ্ভৱকালীন অসমীয়া প্ৰবন্ধ সাহিত্যত সমাজৰ ভিন্ন দিশৰ প্ৰতিফলন সম্পৰ্কে সামৰি লোৱা হৈছে। সমান্তৰালভাৱে বিষয়ৰ সৈতে সংগতি ৰাখি প্ৰবন্ধ সাহিত্যৰ স্বৰূপ নিৰ্ণয়ৰো প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

০.৫ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

অসমীয়া প্ৰবন্ধ সাহিত্যৰ উদ্ভৱ আৰু অসমৰ সমাজ শীৰ্ষক বিষয়টো অধ্যয়নৰ ক্ষেত্ৰত মূলতঃ সমীক্ষাত্মক পদ্ধতি আৰু সাহিত্যৰ সমাজতত্ত্ব নামৰ বিদ্যায়তনিক শাখাটোৰ অন্তৰ্গত সমাজ-বিশ্লেষণ পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

১.০০ অসমীয়া প্ৰবন্ধ সাহিত্যৰ উদ্ভৱ ঃ

প্ৰকৃষ্ট বন্ধনযুক্ত, নাতিদীৰ্ঘ, চিন্তাৰ ধাৰাবাহিকতা থকা ৰচনাকে প্ৰবন্ধ বুলি কোৱা হয়। "ফৰাছী প্ৰবন্ধকাৰ মিছেল দ্য মতেঁনে এই নতুন সাহিত্যৰ শ্ৰেণীটো উদ্ভাৱন কৰে। তেওঁৰ কিতাপ 'এছেজ'ৰ (১৫৮০) প্ৰথম দুটা খণ্ডত ৯৪টা অধ্যায় আছিল। লিখাবোৰ চুটি আৰু ঘটনানিৰ্ভৰ, অপেক্ষাকৃতভাৱে নৈৰ্ব্যক্তিক আৰু শেষত এটা মতামত দাঙি ধৰে।...তেওঁ প্ৰবন্ধক বিক্ষিপ্ত চিন্তা বুলিও ভাবিছিল আৰু তত্ত্বগধুৰ দীৰ্ঘ ৰচনা ট্ৰিটীজৰ (Treatise) পৰা প্ৰবন্ধক পৃথক কৰি চাইছিল।"[১] ইংৰাজী সাহিত্যত ফ্ৰান্সিস বেকনকে প্ৰবন্ধ সাহিত্যৰ স্ৰষ্টা বুলি কোৱা হয়। বেকনৰ ১৫৯৭ চনত প্ৰকাশিত 'এচেইচ' (Essays) শীৰ্ষক গ্ৰন্থখনৰ দ্বাৰাই ইংৰাজী সাহিত্যত প্ৰবন্ধ সাহিত্যৰ সূচনা হয়। উল্লেখ্য যে, বেকনে মঁতেইনৰ আদৰ্শতে প্ৰবন্ধ ৰচনা কৰিছে যদিও মঁতেইনৰ পৰা কেৱল 'প্ৰবন্ধ' পৰিভাষাটোহে গ্ৰহণ কৰিছে।[২] বেকনৰ সমান্তৰালভাৱেসোতৰ শতিকাৰ ইংৰাজী প্ৰবন্ধ সাহিত্যক নিক'লাছ ব্ৰিটন, থমাছ অভাৰবেৰী আদিয়ে এক নতুন মাত্ৰা প্ৰদান কৰে। পৰৱৰ্তী সময়ত আব্ৰাহাম কাওলি, উইলিয়াম টেম্পল, লৰ্ড হালিফেক্স, জনচন, অলিভাৰ গল্ডস্মিথ, চাৰ্লছ লেম, উইলিয়াম হেজলিট্ আদিয়ে প্ৰবন্ধ সাহিত্যক ভিন্ন বিষয়বস্তু, শৈলী, আংগিক আৰু ভিন্ন মতাদৰ্শৰ সমাহাৰেৰে বিশেষভাৱে সমৃদ্ধ কৰি তোলে।

আমেৰিকান মিছনেৰীসকলৰ অসম আগমন এক তাৎপৰ্যপূৰ্ণ পৰিঘটনা। মিছনেৰীসকলে প্ৰথমে শদিয়াত কিছুদিন কটাই জয়পুৰলৈ আহে। কিন্তু জয়পুৰত থাকি মিছনেৰী কাম-কাজ সুচাৰুৰূপে পৰিচালনা কৰিব নোৱাৰি অৱশেষত শিৱসাগৰলৈ আহি মিছনেৰী প্ৰেছ স্থাপন কৰে। শিৱসাগৰৰ দিখৌৰ পাৰৰ বেপ্টিষ্ট মিছনেৰী প্ৰেছৰ পৰা ১৮৪৬ চনত 'অৰুনোদই সম্বাদ পত্ৰ' প্ৰকাশ কৰি আধুনিক অসমীয়া সাহিত্যৰ ভেটি প্ৰতিষ্ঠা কৰে। প্ৰণিধানযোগ্য যে,

‘অৰুনোদই’ৰ পাততে অসমীয়া প্ৰবন্ধ সাহিত্যই আত্মপ্ৰকাশ লাভ কৰে। নাথান ব্ৰাউন, মাইলছ্ ব্ৰনছন, এ. কে. গার্নি, অলিভাৰ টি. কট্টাৰ আদি বেপ্টিষ্ট মিছনেৰীসকলে খ্ৰীষ্ট ধর্ম প্ৰচাৰৰ উদ্দেশ্যে ‘অৰুনোদই’ত লিখা লেখনিসমূহক সাহিত্যিক মানবিশিষ্ট বুলি ক’ব নোৱাৰিলেও এইসমূহ আধুনিক অসমীয়া সাহিত্যৰ আধাৰস্বৰূপ। নিধি লিবাই ফাৰৱেল এ ‘ন.ল.’ নামেৰে ‘অৰুনোদই’ত নিয়মীয়াকৈ প্ৰবন্ধ চর্চা কৰিছিল। ফাৰৱেলৰ উপৰিও ‘অৰুনোদই’ত প্ৰবন্ধ চর্চা কৰা অনা-খ্ৰীষ্টিয়ান অসমীয়া লেখকৰ ভিতৰত আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকন অন্যতম। সমান্তৰালভাৱে পূর্ণানন্দ শর্ম্মা, সত্যৰাম দেওধাই ফুকন, দয়াৰাম চেতিয়া, কিনাৰাম সত্ৰিয়া, বাতিৰাম দাস আদি লেখকেও ‘অৰুনোদই’ত প্ৰবন্ধ লিখিছিল। হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাই ‘অৰুনোদই’ আলোচনীৰ যোগেদিয়েই আত্মপ্ৰকাশ লাভ কৰে। হেমচন্দ্ৰ বৰুৱা, গুণাভিৰাম বৰুৱা, ৰত্নেশ্বৰ মহন্ত আদিয়ে ‘অৰুনোদই’ৰ পৰৱর্তী সময়ত প্ৰকাশিত ‘আসাম বিলাসিনী’, ‘আসাম বন্ধু’, ‘আসাম নিউচ’ আদি কাকতৰ যোগেদি অসমীয়া প্ৰবন্ধ সাহিত্যক একোটা নতুন মাত্ৰা প্ৰদান কৰে।

‘অৰুনোদই’ত নিধি লিবাই ফাৰৱেল’ৰ ৰচনাই সর্বাধিক প্ৰকাশ পোৱা দৃষ্টিগোচৰ হৈছে। তেওঁৰ ‘তিনিজন ভাইৰ মিস্যনেৰী জাত্ৰা’, ‘নগএগ দ্রোহী লোকৰ চৰিত্ৰ বর্ণনা’, ‘হিন্দুস্থানৰ বুৰঞ্জী’, আব্ৰাহামৰ বিৱৰণ’, ‘পৌল পাঁচনিৰ বিৱৰণ’, ‘পৰম ইস্বৰে সৃষ্টি কৰাৰ কথা’ আদি যথেষ্টসংখ্যক প্ৰবন্ধ ‘অৰুনোদই’ত প্ৰকাশ পাইছিল। আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকনৰ ‘ইংলণ্ডৰ বিৱৰণ’ প্ৰবন্ধটি ‘অৰুনোদই’ত প্ৰকাশিত হৈছিল। উল্লেখ্য যে, ঢেকিয়াল ফুকনৰ ‘অসমীয়া ল’ৰাৰ মিত্ৰ’ গ্ৰন্থখনৰ ‘দুতিয়’ আৰু ‘ত্ৰিতীয়’ কাণ্ডৰ কেইবাটিও প্ৰবন্ধ ‘অৰুনোদই’ত পুনৰ মুদ্ৰিত হৈছিল। এই প্ৰবন্ধসমূহ হৈছে - ‘হিন্দুস্থানৰ নানা প্ৰদেশ’, ‘অসম দেস সত্ৰুৱে আক্ৰমন কৰাৰ কথা’, ‘নানা সংবাদ’, ‘পৰিস্ৰমৰ ফল’, ‘গিয়ানৰ পুত্ৰ অর্থাতমনুস্য’, ‘চিপিও সেনাপতিৰ চৰিত্ৰৰ কথা’, ‘সোনতকৈ শ্ৰম ভাল’ আদি। ‘অৰুনোদই’ত প্ৰকাশিত ঢেকিয়াল ফুকনৰ উপর্যুক্ত প্ৰবন্ধসমূহৰ তলত ‘ল’ৰাৰ মিত্ৰ’ বা ‘অঃলঃমঃ’ বুলি উল্লেখ কৰা হৈছিল।[৩] উল্লিখিত প্ৰবন্ধৰ উপৰিও পুর্নানন্দ সর্মাৰ ‘গ্ৰহনি ৰোগৰ সংখ্যেপ বিবৰণ’, বাতিৰাম দাসৰ ‘অসম লৰা আমেৰিকালৈ জোআৰ কথা’, হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাৰ ‘স্ত্ৰী-শিক্ষা’, গুণাভিৰাম বৰুৱাৰ ‘অচমিয়া ভাসা’ আদি ভালেমান প্ৰবন্ধ ‘অৰুনোদই’ত প্ৰকাশ পাইছিল।

হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাৰ ‘বাহিৰে ৰং চং ভিতৰে কোৱাভাতুৰী’ গ্ৰন্থত তদানীন্তন সমাজত দেখা দিয়া ধর্মীয় গোড়ামী, কুসংস্কাৰ আদি দিশে প্ৰকাশ লাভ কৰিছে। ‘আসাম বন্ধু’ কাকতত গুণাভিৰাম বৰুৱাৰ ‘আসাম-অতীত আৰু বর্তমান’ শীর্ষক এটি ঐতিহাসিক প্ৰবন্ধ প্ৰকাশ পাইছিল। লগতে তেওঁ ‘জোনাকী’ কাকততো কেইবাটাও বুৰঞ্জীমূলক প্ৰবন্ধ লিখিছিল। হেমচন্দ্ৰ-গুণাভিৰামৰ অভ্যুদয়ৰ সময়ছোৱাত চাৰিওকাষে স্বদেশানুৰাগ আৰু জাতীয়তাবোধৰ এক গুঞ্জন শুনিবলৈ পোৱা গৈছিল। সমান্তৰালভাৱে বৃটিছৰ প্ৰত্যক্ষ ছত্ৰছায়াতে অসমত এক শিক্ষিত মধ্যবিত্ত শ্ৰেণীৰ জন্ম হৈছিল। এই শ্ৰেণীটোৱে ইংৰাজ চৰকাৰৰ বিৰুদ্ধাচৰণ কৰা নাছিল। তাৰ পৰিৱর্তে তদানীন্তন অসমীয়া সমাজ তথা মানুহৰ অজ্ঞতা, কুসংস্কাৰ আদি আঁতৰ কৰাটোকে নিজৰ মূল কর্তব্য বুলি বিবেচনা কৰিছিল। গুণাভিৰাম আৰু হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাই তেওঁলোকৰ ৰচনাৰ যোগেদি অসমৰ ভিন্ন সামাজিক সমস্যা উত্থাপন কৰিছিল। ‘গুটিদিয়েক চিন্তাৰ টো’, ‘অসমৰ উন্নতি’ কমলাকান্ত ভট্টাচর্যৰ দুটি চিন্তাশীল প্ৰবন্ধ। লম্বোদৰ বৰাই সেই সময়ৰ কাকতসমূহত বহুকেইটা গুৰুত্বপূর্ণ প্ৰবন্ধ লিখিছিল। বৰাৰ ‘সদানন্দৰ কলাঘুমটি’ শীর্ষক প্ৰবন্ধটোত তীব্ৰ বক্ৰোক্তিমূলকভাৱে অসমীয়া মানুহৰ এলেহুৱা, অকর্মণ্য স্বভাৱটোৰ প্ৰকাশ ঘটিছে। বলিনাৰায়ণ বৰুৱাৰ্থ ‘মৌ’ আলোচনীত ‘উচ্চ শিক্ষা’, ‘অসম ভূমি’ আদি বহুকেইটা সময়োচিত প্ৰবন্ধ লিখিছিল। “অৰুনোদই যুগত অসমীয়া ভাষা সাহিত্যৰ যিটো ভেঁটি গঢ়ি তোলা হৈছিল তাৰ ওপৰত ১৮৮৯ চনত কলিকতাৰ পৰা প্ৰকাশ হোৱা ‘জোনাকী’ কাকতে গঢ়ি তুলিলে আধুনিক অসমীয়া ভাষা সাহিত্যৰ দৌল। অসমীয়া কথা সাহিত্যও প্ৰবন্ধ সম্ভাৰেৰে ঐতিহ্যমণ্ডিত হৈ উঠিল। প্ৰাক্-জোনাকী যুগৰ প্ৰবন্ধ আছিল চিন্তামূলক আৰু বস্তুধর্মী, ‘জোনাকী’ কাকত প্ৰকাশ হোৱাত ইয়াত প্ৰকাশিত প্ৰবন্ধৰাজিৰ জৰিয়তে মনোধর্মী, ব্যক্তিনিষ্ঠ আৰু ৰসাত্মক প্ৰবন্ধই সমাদৰ পালে।”[৪]

লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱা ‘জোনাকী’ যুগৰ এজন শ্ৰেষ্ঠ প্ৰবন্ধকাৰ। সাহিত্যৰ পৰা ৰাজনীতিলৈকে ভিন্ন বিষয়ৰ চিত্তাকর্ষক প্ৰবন্ধ লিখি তেওঁ অসমীয়া সাহিত্যৰ ভঁৰাল টনকিয়াল কৰি তুলিলে। বেজবৰুৱাৰ ‘কৃপাবৰ বৰুৱাৰ কাকতৰ টোপোলা’, ‘কৃপাবৰ বৰুৱাৰ ওভতনি’, ‘বৰবৰুৱাৰ ভাবৰ বুৰবুৰণি’, ‘বৰবৰুৱাৰ বুলনি’, ‘শংকৰদেৱ’, ‘শংকৰদেৱ আৰু মাধৱদেৱ’ আদি ৰচনাত অসমীয়া সমাজৰ বহুমাত্ৰিক প্ৰসংগই স্থান লাভ কৰিছে। সমান্তৰালভাৱে হেমচন্দ্ৰ গোস্বামী, সত্যনাথ বৰা, পদ্মনাথ গোহাঞিবৰুৱা, কনকলাল বৰুৱা, কালিৰাম মেধি

আদি বিদ্বানে ভিন্ন চিন্তাশীল, তত্ত্বগধুৰ প্ৰবন্ধ প্ৰণয়ন কৰিছে। সূৰ্যকুমাৰ ভূঞাই বুৰঞ্জীমূলক প্ৰবন্ধৰে অসমীয়া সমাজক বিশেষভাৱে সমৃদ্ধ কৰি থৈ গৈছে। প্ৰকৃততে 'জোনাকী'ৰ জন্মৰ সময়ৰপৰা দ্বিতীয় বিশ্বযুদ্ধৰ সময়লৈকে অসমৰ আৰ্থ-সামাজিক, ৰাজনৈতিক জীৱনলৈ বহুতো পৰিৱৰ্তন আহে। এই বহুকৌণিক পৰিৱৰ্তনৰ প্ৰভাৱ অসমীয়া সাহিত্যতো পৰে। যাতায়াত ব্যৱস্থাৰ উন্নতিৰ লগে লগে অসমীয়া মানুহৰ বাহিৰৰ পৃথিৱীখনৰ সৈতে সংযোগ স্থাপন হয়। নিত্য-নতুন ধ্যান-ধাৰণাৰ সৈতে অসমীয়া মানুহ পৰিচিত হয়। স্মৰ্তব্য যে, এই সময়ছোৱাতে পূৰ্ব-বংগৰ পৰা অসমলৈ অবাধ প্ৰব্ৰজন সংঘটিত হয়। "আনহাতে ৰাজনৈতিক দিশতো ধীৰে ধীৰে পৰিৱৰ্তনে দেখা দিয়ে। ভাৰতীয় কংগ্ৰেছৰ প্ৰথমতে Domininon Status আৰু পিছত পূৰ্ণ স্বৰাজৰ দাবী, বংগভংগ আন্দোলন, মহাত্মা গান্ধীৰ অভ্যুদয় আৰু স্বৰাজৰ নিমিত্তে একাধিকাৰৰ গণ-আন্দোলনে অসমীয়াক স্বাধীনতা প্ৰয়াসী কৰি তোলে।"[৫] ভাৰতৰ স্বাধীনতা আন্দোলনৰ প্ৰভাৱ অসমীয়া গল্প, কবিতাৰ লগতে প্ৰবন্ধতো বিশেষভাৱে পৰা পৰিলক্ষিত হ'ল। অম্বিকাগিৰী ৰায়চৌধুৰী, জ্ঞাননাথ বৰাৰ দৰে লেখকে তেওঁলোকৰ ৰচনাত অবাধ প্ৰব্ৰজনে অসমৰ আৰ্থ-সামাজিক জীৱনলৈ কঢ়িয়াই অনা অশনি সংকেতৰ প্ৰসংগ যুক্তিপূৰ্ণভাৱে উত্থাপন কৰিছিল। জ্ঞাননাথ বৰাৰ 'আসামত বিদেশী' ইয়াৰ উপযুক্ত প্ৰমাণ। অসমীয়া সাহিত্যত সমালোচনাত্মক প্ৰবন্ধ লেখক হিচাবে বাণীকান্ত কাকতিৰ এক বিশেষ স্থান আছে।

স্বৰাজোত্তৰ সময়ছোৱাত অসমীয়া প্ৰবন্ধ সাহিত্যই এক বহুমাত্ৰিক ৰূপ লাভ কৰা পৰিলক্ষিত হৈছে। সমকালীন সামাজিক প্ৰেক্ষাপটে অসমীয়া লেখকসকলক গভীৰভাৱে প্ৰভাৱিত কৰিছে। বিংশ শতিকাৰ শেষৰ দশককেইটাৰ অসমৰ সামাজিক, ৰাজনৈতিক প্ৰেক্ষাপট যথেষ্ট ঘটনাবহুল। ভাষাভিত্তিক ৰাজ্য পুনৰগঠন প্ৰক্ৰিয়া, খাদ্য আন্দোলন, শোধনাগাৰ আন্দোলন, মাধ্যম আন্দোলন, ছবছৰীয়া অসম আন্দোলন আদিয়ে অসমৰ সামাজিক জীৱন অস্থিৰ কৰি ৰাখে। ভিন্ন উদ্দেশ্যভিত্তিক আন্দোলন, 'সংযুক্ত মুক্তি বাহিনী, অসম'ৰ আৰু 'এনডিএফবি'ৰ জন্ম, পৃথক ৰাজ্যৰ দাবী, স্বায়ত্ত শাসন, মুক্ত বাণিজ্যিক অৰ্থনীতি, প্ৰত্যক্ষ বিদেশী বিনিয়োগ আদি কাৰকসমূহক কেন্দ্ৰ কৰি বিভিন্নজন প্ৰবন্ধকাৰে বিগত সময়ছোৱাত বিশ্লেষণধৰ্মী আৰু প্ৰায়োগিক গ্ৰন্থ প্ৰণয়ন কৰা দৃষ্টিগোচৰ হৈছে।

২.০০ সমসাময়িক সমাজ ঃ

১৮২৬ চনত মান আৰু ইংৰাজৰ মাজত স্বাক্ষৰিত ইয়াণ্ডাবু সন্ধিৰ ফলত অসম ইংৰাজৰ অধীনলৈ যায়। তদানীন্তন অসমৰ সমাজ-ৰাজনৈতিক প্ৰেক্ষাপট যথেষ্ট অস্থিৰ আছিল। মোৱামৰীয়া বিদ্ৰোহ আৰু মানৰ বিধ্বংসী আক্ৰমণৰ পাছত অসমীয়া সমাজে ইংৰাজৰ আগমনত যথেষ্ট সকাহ অনুভৱ কৰিছিল। প্ৰথমাৱস্থাত ইংৰাজৰ সাম্ৰাজ্যবাদী মনোভাৱ অসমীয়া সমাজে উপলব্ধি কৰিব পৰা নাছিল। ব্ৰিটিছে পুৰন্দৰ সিংহক উজনি অসমৰ কৰতলীয়া ৰজা পাতিছিল যদিও কৰ দিব নোৱৰাৰ অজুহাতত সিংহাসনৰ পৰা উচ্ছেদ কৰে। যিহেতু, চাহৰ আৰিষ্কাৰে ব্ৰিটিছ পুঁজিপতিসকলক অসমৰ প্ৰতি উৎসাহিত কৰি তুলিছিল। চৰকাৰী খাজনা বৃদ্ধি, কানিৰ প্ৰচলন আদিয়ে অসমীয়া ৰাইজক সৰ্বস্বান্ত কৰি তোলাৰ সময়তে অন্য এটি সমস্যাই মূৰ দাঙি উঠিল। ১৮৩৬ চনত ইংৰাজ চৰকাৰে প্ৰশাসনৰ সুবিধা অনুযায়ী অসমৰ স্কুল-আদালতৰ পৰা অসমীয়া ভাষা বিতাড়ন কৰি ইয়াৰ ঠাইত বঙলা ভাষা প্ৰবৰ্তন কৰে। ইংৰাজ শাসনৰ সময়ছোৱাত অসমলৈ বংগৰ পৰা এচাম বঙালী চাকৰিজীৱি, ব্যৱসায়ীৰ আগমন ঘটিছিল। সমান্তৰালভাৱে অসমীয়া কিছুসংখ্যক ছাত্ৰয়ো উচ্চ শিক্ষাৰ বাবে কলিকতালৈ ঢাপলি মেলিছিল। ইংৰাজৰ অধীনত সৰু-সুৰা চাকৰি কৰা আৰু কলিকতা প্ৰবাসী অসমীয়াসকলক কেন্দ্ৰ কৰি গঢ় লৈ উঠা অসমীয়া মধ্যবিত্ত সমাজখনে পাশ্চাত্যৰ সংস্পৰ্শত আগবঢ়া ইংগ-বংগীয় মানসিকতাৰ ওচৰত হীনমন্যতাত ভুগিবলৈ আৰম্ভ কৰিছিল।

১৮১৩ চনৰ চাৰ্টাৰ আইনৰ অধীনত বেপ্টিষ্ট মিছনেৰীসকলৰ ব্যৱহাৰিক জ্ঞান বিস্তাৰ আৰু ধৰ্ম প্ৰচাৰৰ উদ্দেশ্যে ভাৰতলৈ আগমন ঘটে। অসমত জেম্‌ছ ৰে নামৰ মিছনেৰীজনে প্ৰথমে খ্ৰীষ্টধৰ্ম প্ৰচাৰৰ প্ৰচেষ্টা চলাইছিল যদিও সফল হ'ব নোৱাৰিলে। পৰৱৰ্তী সময়ত আমেৰিকান খ্ৰীষ্টান মিছনেৰীৰ এই প্ৰদেশলৈ আগমন ঘটে। "অসমৰ উত্তৰ-পূব চুকত শ্বান মিছন চলাবলৈ নাথান ব্ৰাউনে বৰ্মা এৰি কলিকতালৈ আহি লগতে এটা ছাপাখানা আৰু ও. টি. কট্টাৰ নামে প্ৰিন্টাৰক লহত লৈ ১২ নৱেম্বৰ ১৮৩৫ত বঙালী মাঝিৰ নাৱেৰে উজাই যাত্ৰা কৰি ২৩ মাৰ্চ ১৮৩৬ত সদিয়া পায়হি।"[৬] শদিয়াত কিছুদিন থকাৰ পাছত এওঁলোক জয়পুৰলৈ যায় আৰু অৱশেষত শিৱসাগৰত বাহৰ পাতি প্ৰিন্টিং প্ৰেছ স্থাপন কৰে। ইংৰাজে মিছনেৰীসকলক অসমলৈ আদৰণি জনোৱাৰ আঁৰত এক আৰ্থ-ৰাজনৈতিক তাৎপৰ্য নিহিত হৈ আছে।

মিছনেৰীসকলে ব্ৰিটিছৰ অৰ্থনৈতিক পৃষ্ঠপোষকতাও লাভ কৰিছিল। প্ৰণিধানযোগ্য যে, অসমীয়া সমাজত বিদেশী ভাষাৰ যোগেদি খ্ৰীষ্ট ধৰ্ম প্ৰচাৰ কৰাটো যে এক দুৰূহ কাৰ্য সেই কথা মিছনেৰীসকলে সঠিকভাৱেই উপলব্ধি কৰিব পাৰিছিল। আকৌ, সেই সময়ত অসমীয়া ভাষাৰ একেবাৰে শোচনীয় অৱস্থা। মিছনেৰীসকলে দেখিলে যে অসমীয়া ভাষা উদ্ধাৰ কৰি এই ভাষাৰ যোগেদি যদি ধৰ্ম প্ৰচাৰ কৰা নাযায় তেনে তেওঁলোকৰ কাৰ্য সিদ্ধি নহয়গৈ। সেয়ে তেওঁলোকে প্ৰথমতে অসমীয়া ভাষা উদ্ধাৰৰ বাবে যৎপৰোনাস্তি চেষ্টা চলাইছিল।[৭] এনে প্ৰক্ষাপটতে ১৯৪৬ চনৰ জানুৱাৰী মাহত মিছনেৰীসকলে শিৱাসাগৰৰ মিছন প্ৰেছৰপৰা প্ৰথম অসমীয়া সংবাদ পত্ৰ তথা আলোচনী 'অৰুনোদই'ৰ প্ৰকাশ কৰে। 'অৰুনোদই' এ আধুনিক অসমীয়া সাহিত্যৰ ভেটি প্ৰতিষ্ঠা কৰাৰ লগতে অসমীয়া মানুহক বিশ্বৰ সৈতে চিনাকি কৰাই দিলে। সমান্তৰালভাৱে অসমীয়া ভাষাৰ স্বকীয়তা প্ৰতিষ্ঠাৰ ক্ষেত্ৰতো ই বিশেষভাৱে সহায় কৰিলে। 'অৰুনোদই'ৰ প্ৰথম সংখ্যাতে কাকতখনৰ প্ৰকাশৰ উদ্দেশ্য স্পষ্ট কৰি দিয়া হৈছে - 'The Orunodoi , A monthly Paper, devoted to Religion, Science, and General Intelligence.'[৮] "লক্ষণীয় যে যিবোৰ বিষয়ৰ প্ৰতি 'অৰুনোদই' দায়বদ্ধ বুলি ঘোষণা কৰা হৈছে তাৰ ভিতৰত প্ৰথমেই 'Religion'-ৰ উল্লেখ কৰা হৈছে। মিশ্যনেৰী নিয়ন্ত্ৰিত পত্ৰিকাৰ এই ধৰ্মনিষ্ঠা খুবেই স্বাভাৰিক। এই 'Religion' অৱশ্যে সকলো ধৰ্মৰ সমন্বয়ত গঢ় লৈ উঠা কোনো নতুন ধৰ্ম নহয়, ই নিঃসন্দেহে খ্ৰীষ্ট ধৰ্ম।"[৯] 'অৰুনোদই'-এ জন্ম দিয়া অসমীয়া লেখকৰ ভিতৰত আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকন আৰু নিধিৰাম কেওট বা নিধি লিবাই ফাৰৱেল অন্যতম। অসমীয়া খ্ৰীষ্টান নিধি লিবাই ফাৰৱেলৰ যথেষ্টখিনি সাহিত্যিক অৱদান আছে। অসমত আধুনিকতাৰ বীজ ৰোপন কৰা প্ৰথম গৰাকী অসমীয়া ব্যক্তিয়েই হৈছে আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকন। কিন্তু ব্ৰিটিছ সাম্ৰাজ্যবাদৰ প্ৰতি ঢেকিয়াল ফুকনৰো গভীৰ আনুগত্য আছিল। গুণাভিৰাম বৰুৱাৰ 'আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকনৰ জীৱন চৰিত' গ্ৰন্থখনৰ বিবৃতি অনুসৰি নগাঁৱৰ জুনিয়ৰ এচিষ্টেণ্ট পদত থাকোঁতে ঢেকিয়াল ফুকনে ১৮৫৭ চনৰ বিদ্ৰোহত অসমীয়াই ব্ৰিটিছৰ বিৰুদ্ধে সংগ্ৰামত অৱতীৰ্ণ নহ'ব বুলি ব্ৰিটিছ বিষয়াক পতিয়ন নিয়াবলৈ প্ৰচেষ্টা চলাইছিল। উল্লেখ্য যে, অসমীয়া ভাষা পুনঃপ্ৰতিষ্ঠাৰ বাবে ঢেকিয়াল ফুকনে মিছনেৰীসকলৰ সৈতে চেষ্টা কৰিছিল। ১৮৫৩ চনত এ. জে. মফট মিলছ্ অসমৰ প্ৰশাসনিক ব্যৱস্থা পৰ্যবেক্ষণ কৰিবলৈ আহোতে ঢেকিয়াল ফুকনে অসমৰ ভিন্ন সমস্যাৰ সন্দৰ্ভত এখন স্মাৰক পত্ৰ প্ৰদান কৰিছিল। 'Report on the Province of Assam' শীৰ্ষক স্মাৰক পত্ৰখনত অসমীয়া ভাষাৰ প্ৰয়োগ আৰু স্বকীয়তা সম্পৰ্কত ঢেকিয়াল ফুকনে যুক্তি দাঙি ধৰিছিল। ইংৰাজীলৈ অনুবাদ কৰা ৩০ পৃষ্ঠাৰ এই প্ৰতিবেদনখন পাছত 'Observation on the Administration of Assam' নামেৰে প্ৰকাশ পায়।[১০] স্মৰ্তব্য যে, মিলছ এ ১৮৫৪ চনত দিয়া তেওঁৰ প্ৰতিবেদনত অসমীয়া ভাষাৰ সপক্ষে মত প্ৰকাশ কৰা পৰিলক্ষিত হৈছিল। সমান্তৰালভাৱে ঢেকিয়াল ফুকনে ১৮৫৫ চনত 'A Native' ছদ্মনামত অসমীয়া ভাষাৰ স্বকীয়তাৰ সন্দৰ্ভত লিখা 'A Few Remarks on the Assamese Language and Vernacular Education in Assam' শীৰ্ষক পুস্তিকাখন যথেষ্ট গুৰুত্বপূৰ্ণ। উল্লিখিত পুস্তিকাখনৰ লগতে 'ইংলণ্ডৰ বিৱৰণ' শীৰ্ষক প্ৰবন্ধটিৰ যোগেদি আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকনৰ জাতীয়তাবাদী চিন্তাধাৰাৰ প্ৰকাশ ঘটা দৃষ্টিগোচৰ হৈছে।

ব্ৰিটিছ সাম্ৰাজ্যবাদে কঢ়িয়াই অনা ঔদ্যোগিক সাংস্কৃতিক ধাৰাৰ প্ৰত্যক্ষ তত্ত্বাৱধানতে ভাৰতবৰ্ষত এখন অৰ্ধসামন্তবাদী, মধ্যবিত্ত সমাজ গঢ় লৈ উঠিছিল। অসমীয়া মধ্যবিত্ত শ্ৰেণীৰ আগৰণুৱা মণিৰাম দেৱানো সৰ্বপ্ৰথম স্বাধীনতা আন্দোলনৰ প্ৰতি আকৰ্ষিত হোৱা নাছিল। ব্ৰিটিছ ৰাজত্বৰ আদিছোৱাত দেৱানে অসমৰ এজন শীৰ্ষস্থানীয় প্ৰশাসনিক বিষয়া হিচাবে কাৰ্যনিৰ্বাহ কৰিছিল। কিন্তু, পৰৱৰ্তী সময়ত ব্ৰিটিছ সাম্ৰাজ্যবাদী শক্তিৰ বিৰুদ্ধে তেওঁ যি আৰ্থ-সামাজিক, ৰাজনৈতিক প্ৰত্যাহ্বান তথা বিদ্ৰোহৰ সূচনা কৰিলে নিশ্চিতভাৱে তাৰ ঐতিহাসিক মূল্য আছে। ১৮৫৭ চনৰ চিপাহী বিদ্ৰোহৰ সময়ত গোটেই ভাৰততে যি স্বাধীনতাৰ উকমুকনি উঠিছিল, মণিৰাম দেৱানে অসমতো তাৰ প্ৰতিধ্বনি বিয়পাইছিল। দেৱানে কন্দৰ্পেশ্বৰ সিংহক ৰজা পাতি আহোম শাসন পুনৰ প্ৰবৰ্তনৰ পৰিকল্পনা পাঙিছিল। কিন্তু, মণিৰাম বিফল হ'ল আৰু জিলাপ্ৰশাসক কেপ্টেইন হলৰয়দৰ ৰায় অনুসৰি ১৮৫৮ চনৰ ২৬ ফেব্ৰুৱাৰীত তেওঁক ফাঁচি দিয়া হয়। এই সময়ছোৱাত হোৱা বিদ্ৰোহবোৰত সাধাৰণ মানুহ জড়িত হোৱা নাছিল, সম্ভ্ৰান্ত পৰিয়ালবোৰৰ মাজতে ই আৱদ্ধ আছিল।[১১] প্ৰকৃততে ১৮৬০ চন মানৰ পৰা অসমত কৃষক বিদ্ৰোহৰ আৰম্ভণি ঘটে। অত্যধিক খাজনা বৃদ্ধিৰ ফলশ্ৰুতিত ফুলগুৰিৰ ধেৰা, পথৰুঘাটৰ ৰণৰ সূচনা হয়। "কৃষক বিদ্ৰোহবোৰতেই এই অঞ্চলৰ জনসাধাৰণৰ আৰ্থ-ৰাজনৈতিক

চিন্তাধাৰাৰ প্ৰকাশ ঘটিছিল। মণিৰামৰ চিন্তাৰ বিদ্ৰোহী সুৰটোৰ লগত পৰৱৰ্তীকালৰ ৰাজহুৱা বিদ্ৰোহবোৰৰ পোনপটীয়া সম্পৰ্ক নাথাকিলেও দুয়োটাৰ মাজত থকা বৃটিছ বিৰোধী মনোভাৱৰ সাদৃশ্য স্পষ্ট। ইতিমধ্যে ভেটি প্ৰতিষ্ঠা হোৱা মজলীয়া শ্ৰেণীটোৱে মণিৰামৰ বাটেদি আগ নাবাঢ়ি ঢেকিয়াল ফুকনৰ বাটেদি আগ বঢ়াহে দেখা গ'ল আৰু নিতান্ত বোধগম্য কাৰণতে ৰাজনীতিক সীমাৰ বাহিৰত ৰাখিলে।"[১২] বেপ্টিষ্ট মিছনেৰীৰ নেতৃত্বত গঢ় লৈ উঠা অসমীয়া ভাষিক আত্মপৰিচয় প্ৰতিষ্ঠাৰ সংগ্ৰামত অসমীয়া মধ্যবিত্ত সফল হয়। ১৮৭৩ চনত অসমীয়া ভাষাই নিজৰ হেৰুওৱা মৰ্যাদা পুনৰ লাভ কৰে। ভাষিক বিপৰ্যয়ৰ শান্তিপূৰ্ণ মীমাংসাই অসমীয়া সমাজক ভিন্নধৰণে প্ৰভাৱিত কৰা পৰিলক্ষিত হয়। অসমৰ মধ্যবিত্তই ইংৰাজৰ সৈতে এক সহযোগী মনোভাৱ গ্ৰহণ কৰি মাতৃভাষাৰ উন্নতিৰ মাজেদিয়েই জাতিক সেৱা কৰাৰ মানসিকতাৰ সৃষ্টি হ'ল।[১৩] এনে পটভূমিতে ১৮৮৮ চনত কলিকতাত 'অসমীয়া ভাষা উন্নতি সাধনি সভা' প্ৰতিষ্ঠা হয়। উল্লেখ্য যে, ঊনবিংশ শতিকাৰ দ্বিতীয়াৰ্ধত গঢ় লৈ উঠা 'অসম দেশ হিতৈষিণী সভা', 'যোৰহাট সাৰ্বজনিক সভা', 'তেজপুৰ ৰায়ত সভা', নগাঁও ৰায়ত এছোচিয়েশ্যন' আদি ৰাজনৈতিক সংগঠনবোৰে অসমৰ সমাজ-ৰাজনৈতিক প্ৰেক্ষাপটক প্ৰভাৱিত কৰিছিল।

৩.০০ উদ্ভৱকালীন অসমীয়া প্ৰবন্ধ সাহিত্যত সমাজৰ বিভিন্ন দিশ ঃ

নাথান ব্ৰাউন, মাইলছ্ ব্ৰন্সন, এ. কে. গাৰ্নি প্ৰভৃতি মিছনেৰীসকলে 'অৰুনোদই'ত গদ্য আৰু পদ্যত লিখা ৰচনাসমূহে আধুনিক অসমীয়া সাহিত্যৰ ভেটি স্থাপন কৰে। খ্ৰীষ্টধৰ্ম প্ৰচাৰ কৰাই এই ৰচনাসমূহৰ মূল উদ্দেশ্য আছিল। অসমীয়া খ্ৰীষ্টিয়ান নিধি লিবাই ফাৰৱেল, বাতিৰাম দাসৰ লগতে আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকন, পূৰ্ণানন্দ শৰ্ম্মা, সত্যৰাম দেওধাই ফুকন, দয়াৰাম চেতিয়া, কিনাৰাম সত্ৰিয়া আদি চিন্তাশীল লেখকে অসমীয়া প্ৰবন্ধ সাহিত্যক একোটা ঐতিহ্য প্ৰদান কৰে। 'অৰুনোদই'ৰ উপৰিও পৰৱৰ্তী সময়ত প্ৰকাশ পোৱা 'আসাম বিলাসিনী', 'আসাম বন্ধু', 'আসাম নিউচ' আদি কাকতত হেমচন্দ্ৰ বৰুৱা, গুণাভিৰাম বৰুৱা, কালিৰাম বৰুৱা প্ৰভৃতি লেখকসকলৰ সমসাময়িক সামাজিক প্ৰেক্ষাপটক কেন্দ্ৰ কৰি লিখা ভিন্ন বাস্তৱধৰ্মী প্ৰবন্ধ প্ৰকাশ পাইছিল। কানিৰ প্ৰচলন, ফুলগুৰিৰ কৃষক বিদ্ৰোহ, ভূগোল আৰু ইতিহাস, নীতি উপদেশমূলক, স্ত্ৰী শিক্ষা আদি দিশক কেন্দ্ৰ কৰি লিখা প্ৰবন্ধ 'অৰুনোদই'ত প্ৰকাশ পাইছিল। প্ৰকৃততে, উদ্ভৱকালীন অসমীয়া প্ৰবন্ধ সাহিত্যত তদানীন্তন অসমৰ সমাজ-ৰাজনৈতিক প্ৰেক্ষাপটকেন্দ্ৰিক বহুবোৰ প্ৰসংগৰ প্ৰকাশ ঘটিছে বুলি ক'ব নোৱাৰি। 'অৰুনোদই'ৰ প্ৰকাশৰ মুখ্য উদ্দেশ্য আছিল খ্ৰীষ্ট ধৰ্ম প্ৰচাৰ কৰা আৰু বাৰ্তালোচনীখনে এক নিৰ্দিষ্ট ৰাজনৈতিক দৃষ্টিকোণক প্ৰতিনিধিত্ব কৰাৰ প্ৰসংগটোও অস্বীকাৰ কৰিব নোৱাৰি। 'অৰুনোদই'ৰ এই ৰাজনৈতিক দৃষ্টিকোণে সেই সময়ৰ শিক্ষিত শ্ৰেণীটোক প্ৰভাৱিত কৰি তুলিছিল বুলি ভবাৰ অৱকাশ আছে। "দেখা যায়, এই দেশীয় লেখকৰ কেতবোৰ ৰচনাত বৃটিছ বন্দনাৰ সুৰ বেছ উগ্ৰ আৰু উলংগ। ঔপনিৱেশিক শিক্ষা ব্যৱস্থাই গঢ় দিয়া শিক্ষিত মানসে ৰাজশক্তিৰ প্ৰতি কি মনোভাৱ পোষণ কৰিছিল তাৰ সুন্দৰ সাক্ষ্য আছে এই লেখাবোৰত।...নিধি লেৰি ফাৰৱেল আৰু বাতিৰাম দাসৰ দৰে অসমীয়া খ্ৰীষ্টান লেখকৰ বৃটিছ-ভক্তিৰ গুৰিত আমেৰিকান মিশ্যনেৰীৰ উদগনি আৰু শিক্ষাৰ কিছু প্ৰভাৱ আছিল।"[১৪]

'অৰুনোদই'ৰ যোগেদিয়েই আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকনৰ সাহিত্যিক হিচাবে আত্মপ্ৰকাশ ঘটে। অসমৰ স্কুল-আদালতত অসমীয়া ভাষাৰ পুনৰ প্ৰবৰ্তনৰ ক্ষেত্ৰত ঢেকিয়াল ফুকনৰ গুৰুত্বপূৰ্ণ অৱদান আছে। 'অৰুনোদই'ত আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকনৰ 'ইংলণ্ডৰ বিৱৰণ' (এপ্ৰিল, ১৮৪৭) শীৰ্ষক এটি প্ৰবন্ধ প্ৰকাশ পাইছিল। এই প্ৰবন্ধটিত যিদৰে ঢেকিয়াল ফুকনৰ স্বদেশানুৰাগ আৰু অধ্যয়নলব্ধ অতল জ্ঞানৰ প্ৰকাশ ঘটিছে, একেদৰে ব্ৰিটিছ সাম্ৰাজ্যবাদৰ প্ৰতি থকা তেওঁৰ গভীৰ আনুগত্যবো প্ৰকাশ ঘটা দৃষ্টিগোচৰ হৈছে। আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকনে এখন আধুনিক অসম গঢ়ি তোলাৰ সপোন দেখিছিল যদিও ঔপনিৱেশিক ব্যৱস্থাৰ বান্ধোনত থাকি তেনে এখন অসম যে কেতিয়াও গঢ়ি তুলিব নোৱাৰি এই স্বাভাৱিক সত্যটো উপলব্ধি কৰাত তেওঁ যেন ব্যৰ্থ হৈছিল। উল্লিখিত প্ৰবন্ধটিত ঢেকিয়াল ফুকনে ইংৰাজ জাতিৰ অতীত আৰু বৰ্তমানৰ পৰিচয় দিয়াৰ লগতে অসমীয়াৰ দুৰৱস্থাৰ কাৰণসমূহ চিনাক্ত কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা পৰিলক্ষিত হৈছে। ঢেকিয়াল ফুকনে অসম দেশ তথা অসমীয়াৰ দুৰৱস্থাৰ কাৰণসমূহ বিশ্লেষণ কৰি মূলতঃ চাৰিটা দিশ উত্থাপন কৰিছে। ফুকনে প্ৰথমেই বিদ্যাৰ প্ৰসংগ উনুকিয়াইছে। তেওঁৰ মতে, পূৰ্বপুৰুষসকলে বিদ্যাৰ আলচ কৰিছিল যদিও বৰ্তমান অসমীয়াই সংস্কৃত নাইবা ইংৰাজী একো বিদ্যা নলৈ অজ্ঞানী হৈ পৰিছে। দ্বিতীয়তে, ফুকনে কৃষি আৰু শিল্পকৰ্মত অসমীয়াসকল ইংৰাজৰ দৰে পাৰ্গত হৈ উঠাৰ প্ৰসংগ উত্থাপন

কৰিছে। ফুকনৰ দৃষ্টিকোণ অনুসৰি, অসমীয়াৰ দুৰৱস্থাৰ তৃতীয় কাৰণটো হৈছে -"তোমালোকৰ (অসমীয়াৰ) ভিতৰত বানিজ্যৰ অনুসিলন নিচইকৈ নাই, সকলে ধন মাটিত পুতি থৈ ভাল পাই, কিন্তু জিহৰ পৰা সেই ধনেৰেই ধন হই, তাক নিচিন্তে। ইংৰাজৰ সভ্যতাৰ ঘাই এক হেতু বানিজ্য, এতেকে জদি ধনৱন্ত হ'ব খোজা, তেন্তে, সম্প্রতি বানিজ্যত প্রবর্ত হোআ। ক্রিসি কৰম নে বার্হিলে বানিজ্যও নে বার্হে, সেই নিমিতে দুইকো অনুসিলন কৰিবলৈ জতন কৰা।"[১৫] দেশৰ হিতৰ কথা চিন্তা নকৰাটো অসমীয়াসকলৰ দুৰৱস্থাৰ চতুর্থ কাৰণ বুলি ফুকনে উল্লেখ কৰিছে।

আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকনৰ অসমীয়া ল'ৰাৰ মিত্র গ্রন্থখনৰ 'দুতিয়' আৰু 'ত্রিতীয়' কাণ্ডৰপৰা কেইবাটাও প্রবন্ধ 'অৰুনোদই'ৰ বিভিন্ন সংখ্যাত পুনৰ মুদ্রিত হৈছিল। এই প্রবন্ধসমূহ মূলতঃ ভূগোল আৰু নীতিকথামূলক। ফুকনে তেওঁৰ 'পৰিস্রমৰ ফল', 'সোণতকৈ স্রম ভাল', 'উপদেশ বাক্য' আদি ৰচনাত অসমীয়া ছাত্রসকলক উদ্দেশ্যি ভিন্ন নীতি উপদেশ আগবঢ়াইছে। সমান্তৰালভাৱে ভূগোল সমন্ধীয় ৰচনা 'অসম দেসৰ বিবৰণ' শীর্ষক লেখাটিত ফুকনে কামৰূপ, দৰঙ্গ, নগাঁও, শিৱসাগৰ, লক্ষীমপুৰ, খাচিয়া, জয়ন্তীয়া পাহাৰ, গোৱালপাৰা আদি জিলাৰ সেইসময়ৰ চাৰিসীমাৰ মাটিকালি, জনসংখ্যাৰ লগতে সংশ্লিষ্ট প্রদেশসমূহত উৎপাদিত ভিন্ন শস্যৰ সম্ভেদ দাঙি ধৰিছে। উল্লেখ্য যে, উল্লিখিত লেখাটিত অসমৰ বিভিন্ন জিলাৰ লোকসকলৰ খাদ্যাভ্যাস আৰু ব্যৱসায়-বাণিজ্যৰ প্রসংগও লেখকে উনুকিয়াইছে।

'অৰুনোদই'ত নিধি লিবাই ফাৰৱেলৰ যথেষ্টসংখ্যক প্রবন্ধ প্রকাশ পাইছিল। তেওঁৰ প্রবন্ধসমূহ মূলতঃ খ্রীষ্টধর্ম বিষয়ক। কিন্তু, ফাৰৱেলৰ 'নগএগ্র দ্রোহী লোকৰ চৰিত্র বর্ণনা' শীর্ষক প্রবন্ধটিত মূলতঃ ফুলগুৰিৰ ধেৰাৰ কৃষক বিদ্রোহৰ প্রসংগৰ প্রকাশ ঘটিছে। ফাৰৱেলৰ 'হিন্দুস্থানৰ বুৰঞ্জী' প্রবন্ধটি 'অৰুনোদই'ত খণ্ড, খণ্ডকৈ প্রকাশ পাইছিল। 'অৰুনোদই'ৰ প্রথম সংখ্যাতে 'দ্দ' (বাতিৰাম দাস ?) নামৰ লেখকগৰাকীয়ে 'কানিৰ বিবৰণ' শীর্ষক এটি প্রবন্ধ লিখিছিল। এই প্রবন্ধটিত কানি বৰবিহে সেই সময়ৰ সমাজত কেনে নেতিবাচক প্রভাৱ পেলাইছিল তাৰ বিবৰণ দাঙি ধৰা হৈছে। সমান্তৰালভাৱে কানিৰ কবলত পৰি মানুহে কিদৰে নিজৰ সন্তানকো বিক্রী কৰিবলৈ কুণ্ঠাবোধ নকৰিছিল, তাৰ দৃষ্টান্ত প্রবন্ধটিত প্রকাশ পাইছে। 'অৰুনোদই'ত কানি বৰবিহৰ উপৰিও অন্য ৰাগিয়াল দ্রব্য ব্যৱহাৰৰ অপকাৰিতাৰ বিষয়েও প্রবন্ধ প্রকাশ পাইছিল। ১৮৪৬ চনৰ জুন সংখ্যাত প্রকাশ পোৱা 'ফটিকাৰ বিবৰণ' শীর্ষক ৰচনাটিত লেখকে ৰাগিয়াল বস্তুৰপৰা সকলোকে আঁতৰি থাকিবলৈ পৰামর্শ আগবঢ়াইছে। উল্লেখ্য যে, সেই সময়ছোৱাত অসমীয়া সমাজত দেখিবলৈ পোৱা নানা ব্যভিচাৰৰ কথাও 'অৰুনোদই'ত প্রকাশ পাইছিল। 'আঃ' নামৰ লেখকগৰাকীয়ে তেওঁৰ 'বিভিসাৰ বিসয়ক' প্রবন্ধটিৰ যোগেদি অসমীয়া সমাজত ঠাই পোৱা নানা ব্যভিচাৰৰ দৃষ্টান্ত আঙুলিয়াই দি সিবিলাকৰপৰা সকলোকে আঁতৰি থাকিবলৈ অনুৰোধ কৰা দৃষ্টিগোচৰ হৈছে।

অসমৰ প্রাকৃতিক সম্পদৰ বর্ণনা সম্বলিত ৰচনাও 'অৰুনোদই'ত প্রকাশ পাইছিল। 'ৰ' নামেৰে নিজৰ পৰিচয় দাঙি ধৰা লেখকগৰাকীৰ 'লোৰ বিৱৰণ' শীর্ষক আলোচনাটিত লো উৎপন্ন হোৱা ঠাই, লোৰ বিৱৰণ, মূল্য আদি দিশে প্রকাশ লাভ কৰিছে। যথা - "...অসম দেসৰ সকলো পর্বতত লো আচে, কিন্তু অসমিয়া মানুহে তাক বুজ নে পাই এলাহ কৰি থাকে, অনেক বনিয়াৰ বহু উপকাৰি এনে লো বিচাৰকৈ পর্বত নে খানে, আপোনাৰ অর্থ বার্হিবলৈ, আৰু দেসৰ উপকাৰ হবলৈকো কোনেও একো পুৰুসার্থ নকৰে।"[১৬] 'অৰুনোদই'ত প্রকাশ পোৱা ভিন্ন ৰচনাত অসমত শিক্ষা বিস্তাৰৰ প্রয়োজনীয়তাৰ প্রসংগ উত্থাপন হোৱা পৰিলক্ষিত হৈছে। তদানীন্তন অসমীয়া সমাজখনত বিদ্যা শিক্ষাৰ দিশটোৰ গুৰুত্ব একেবাৰেই নাছিল বুলিব পাৰি। তত্রাচ, 'অৰুনোদই'-এ 'গিয়ান সভা আৰু স্কুলৰ বিবৰণ' (চেপ্তেম্বৰ, ১৮৪৬), 'লৰাবিলাকক পর্হিবলৈ সিকোৱা বাপেক মাকৰ উচিত' (ডিচেম্বৰ, ১৮৪৯) আদি প্রবন্ধৰ যোগেদি অসমত শিক্ষা বিস্তাৰৰ এক সচেষ্ট প্রয়াস কৰিছিল।

১৮৪৯ চনৰ আগষ্ট সংখ্যাৰ 'অৰুনোদই'ত প্রকাশ পোৱা বাতিৰাম দাসৰ 'অসম লৰা আমেৰিকালৈ জোআৰ কথা' শীর্ষক প্রবন্ধটিত অসমীয়া ল'ৰাই আমেৰিকালৈ গৈ কিদৰে জন্মভূমিৰ কথা সোঁৱৰণ কৰিছে তাৰ চমু বৃত্তান্ত প্রকাশ পাইছে। ১৮৫৪ চনৰ ডিচেম্বৰ সংখ্যাৰ 'অৰুনোদই'ত পুর্নানন্দ সর্মাৰ 'গ্রহনি ৰোগৰ সংখ্যেপ বিবৰণ' শীর্ষক প্রবন্ধটি প্রকাশ পাইছিল। এই প্রবন্ধটিত লেখকে তদানীন্তন সময়ছোৱাত অসমত হোৱা গ্রহণী ৰোগৰ বিৱৰণ দাঙি ধৰিছে। লেখকৰ ভাষাত -"এই দেসত প্রাই মানুহৰ গ্রহনি ৰোগ হৈ থাকে, আৰু ভাল দৰৱ খাবলৈ নো পোআত অনেক মানুহ মৰে; বিসেসকৈ কানিয়া মানুহৰ ৰোগ হ'লে প্রায় জিয়া টান। আৰু বচৰৰ ভিতৰত শিৱসাগৰ জিলাত সম্প্রতি অনেক মানুহৰ

সেই ৰোগ হৈ দুখ পাইছে; কোনো কোনো দৰব খাই পলমে ভাল হৈচে আৰু হব, কোনো কোনো মানুহৰ ভাল ন হই, লাহে লাহে সেই ৰোগে মাৰিবৰো উপাই কৰিচে।"[১৭]হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাৰ 'স্ত্ৰী-শিক্ষা' শীৰ্ষক এটি গুৰুত্বপূৰ্ণ প্ৰবন্ধ 'অৰুনোদই' (মেই, ১৮৬১)ত প্ৰকাশ পাইছিল।

'আসাম বন্ধু' সংবাদপত্ৰত প্ৰকাশিত ভিন্ন লেখাত সেই সময়ৰ সমাজখনৰ বহুমাত্ৰিক দিশৰ উপস্থিতি লক্ষ্য কৰা গৈছে। 'আসাম বন্ধু'ৰ প্ৰথম বছৰ চতুৰ্থ আৰু পঞ্চম সংখ্যাত ৰত্নেশ্বৰ মহন্তৰ 'স্বাধীনতা নে স্বেচ্ছাচাৰ' শীৰ্ষক এটি প্ৰবন্ধ প্ৰকাশ পাইছিল। এই প্ৰবন্ধটিত লেখকে বিশেষভাৱে নাৰীৰ মৰ্যাদাবোধ সম্পৰ্কে আলোকপাত কৰা দৃষ্টিগোচৰ হৈছে। ৰত্নেশ্বৰ মহন্তই 'আসাম বন্ধু'ত নাৰীৰ সামাজিক স্থিতি সম্পৰ্কে কেইবাটাও প্ৰবন্ধ লিখিছিল। এই প্ৰবন্ধসমূহত মূলতঃ স্ত্ৰী শিক্ষাৰ দিশটোৱে বিশেষ গুৰুত্ব লাভ কৰিছে। উল্লেখ্য যে, 'আসাম বন্ধু'ৰ প্ৰথম বছৰ দ্বিতীয় সংখ্যাত মহন্তৰ 'ক্ষেতি' শীৰ্ষক একোটা গুৰুত্বপূৰ্ণ প্ৰবন্ধ প্ৰকাশ পাইছিল। প্ৰবন্ধটিত লেখকে কৃষি ক্ষেত্ৰত অসমীয়া সমাজখন পিছপৰি থকাৰ প্ৰসংগ উত্থাপন কৰিছে। সমান্তৰালভাৱে লেখকে কৃষি ক্ষেত্ৰত আগবাঢ়িবলৈ অসমীয়াই কি কৰিব লাগিব তাৰ দিহা দিবৰো যত্ন কৰিছে।

"সময়ৰ লেখেৰে 'মৌ' সংবাদপত্ৰৰ আয়ুস বৰ ক্ষন্তেকীয়া যদিও প্ৰকাশিত সংখ্যাকেইটাৰ মাজেদি তদানীন্তন অসমীয়া সমাজখনৰ বিষয়েও ভালেখিনি তথ্য লাভ কৰিব পাৰি। বিশেষকৈ সেই সময়ৰ সমাজত নাৰীৰ স্থান, শিক্ষা, ভৌগোলিক দিশ, অৰ্থনৈতিক অৱস্থা আৰু খাদ্যাভাসৰ ওপৰত প্ৰকাশ পোৱা ৰচনাসমূহত এনে তথ্যসমূহ সন্নিৱিষ্ট হৈ আছে। ইবোৰৰ বিশ্লেষণদ্বাৰা সমসাময়িক সমাজ ব্যৱস্থাৰ কিছু সম্যক আভাস লাভ কৰিব পাৰি।"[১৮] 'মৌ'ত প্ৰকাশিত লেখাসমূহৰ ভিতৰত 'ইংৰাজী শিক্ষা', 'উচ্চ শিক্ষা', 'চাহ বাগিচাৰ কুলি' আদি অন্যতম। ইয়াৰে 'চাহ বাগিচাৰ কুলি' শীৰ্ষক প্ৰবন্ধটিত অসমৰ চাহ বাগানৰ জনজীৱনৰ চিত্ৰ প্ৰকাশিত হৈছে। উপৰ্যুক্ত পৰ্যালোচনাসমূহৰ ভিত্তিত প্ৰতীয়মান হৈছে যে, উদ্ভৱকালীন অসমীয়া প্ৰবন্ধ সাহিত্যত সমাজৰ ভিন্ন দিশে প্ৰকাশ লাভ কৰিছে।

৪.০০ উপসংহাৰ ঃ

শিৱসাগৰৰ মিছনেৰী প্ৰেছৰপৰা ১৮৪৬ চনত প্ৰকাশিত 'অৰুনোদই সম্বাদ পত্ৰ'ৰ পাততে অসমীয়া প্ৰবন্ধ সাহিত্যই আত্মপ্ৰকাশ লাভ কৰে। 'অৰুনোদই'ত প্ৰবন্ধ চৰ্চা কৰা খ্ৰীষ্টিয়ান আৰু অনা-খ্ৰীষ্টিয়ান লেখকসকলৰ ভিতৰত নাথান ব্ৰাউন, মাইলছ্ ব্ৰনছন, এ. কে. গাৰ্নি, অলিভাৰ টি. কট্টাৰ, নিধি লিবাই ফাৰৱেল, আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকন, পূৰ্ণানন্দ শৰ্ম্মা, সত্যৰাম দেওধাই ফুকন, দয়াৰাম চেতিয়া, কিনাৰাম সত্ৰিয়া, বাতিৰাম দাস আদি অন্যতম। হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাই 'অৰুনোদই' আলোচনীৰ যোগেদিয়েই আত্মপ্ৰকাশ লাভ কৰে। হেমচন্দ্ৰ বৰুৱা, গুণাভিৰাম বৰুৱা, ৰত্নেশ্বৰ মহন্ত, কমলাকান্ত ভট্টাচাৰ্য, লম্বোদৰ বৰা আদিয়ে পৰৱৰ্তী সময়ত অসমীয়া প্ৰবন্ধ সাহিত্যক এক নতুন মাত্ৰা প্ৰদান কৰে। 'জোনাকী' যুগৰ এজন শ্ৰেষ্ঠ প্ৰবন্ধকাৰ হৈছে লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱা। বেজবৰুৱাৰ লগতে হেমচন্দ্ৰ গোস্বামী, সত্যনাথ বৰা, পদ্মনাথ গোহাঞিবৰুৱা, কনকলাল বৰুৱা, কালিৰাম মেধি, সূৰ্যকুমাৰ ভূঞা আদি বিদ্বানে চিন্তাশীল, তত্ত্বগধুৰ প্ৰবন্ধ প্ৰণয়েৰে অসমীয়া সমাজ আৰু সাহিত্যক বিশেষভাৱে ঋদ্ধ কৰিলে। অম্বিকাগিৰী ৰায়চৌধুৰী, জ্ঞাননাথ বৰাৰ দৰে লেখকে তেওঁলোকৰ ৰচনাত অবাধ প্ৰব্ৰজনে অসমৰ আৰ্থ-সামাজিক, ৰাজনৈতক জীৱনলৈ কঢ়িয়াই অনা অশনি সংকেতৰ প্ৰসংগ যুক্তিপূৰ্ণভাৱে উত্থাপন কৰিছিল। উদ্ভৱকালীন অসমীয়া প্ৰবন্ধ সাহিত্যত সমাজৰ ভিন্ন দিশে প্ৰকাশ লাভ কৰিছে। কানিৰ প্ৰচলন, ফুলগুৰিৰ কৃষক বিদ্ৰোহ, তদানীন্তন অসমৰ ভূগোল আৰু ইতিহাস, সেই সময়ৰ সমাজত নাৰীৰ স্থান, শিক্ষা, কৃষি, অৰ্থনৈতিক অৱস্থা আৰু খাদ্যাভাস, অসমীয়া সমাজত ঠাই পোৱা নানা ব্যভিচাৰৰ দৃষ্টান্ত, অসমৰ চাহ বাগানৰ জনজীৱন আদি প্ৰসংগ বিশেষভাৱে উল্লেখযোগ্য। যিদৰে পাৰস্পৰিক যোগসূত্ৰৰ যোগেদি অসমীয়া সমাজৰ বাস্তৱ ভিত্তি গঢ় লৈ উঠিছে, ঠিক একেদৰে সেই বাস্তৱৰ বহুকৌণিক উপস্থাপনেৰে অসমীয়া প্ৰবন্ধ সাহিত্যৰ ভেটি নিৰ্মাণ হৈছে। ❑

প্ৰসংগ সূত্ৰ ঃ

১. কিশোৰ ভট্টাচাৰ্য, প্ৰবন্ধ সাহিত্যত আধুনিকতা, ব্যক্তি সমাজ আৰু সাহিত্য, পৃ-১২৪
২. দিব্যজ্যোতি বৰা, নগেন শইকীয়াৰ প্ৰবন্ধ, গৱেষণা গ্ৰন্থ, অপ্ৰকাশিত, পৃ-৩৬
৩. বসন্ত কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য, অৰুনোদই যুগৰ সাহিত্য, পৃ-৫৫
৪. যতীন বৰা, 'অসমীয়া প্ৰবন্ধ সাহিত্যৰ ঐতিহ্য', ঐতিহ্য ঃ অসমীয়া সাহিত্য, পৃ-২২০
৫. সত্যেন্দ্ৰনাথ শৰ্মা, অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত, পৃ-২৮৩

৬. মহেশ্বৰ নেওগ (সংকলিত আৰু পুনঃসম্পা.),অৰুনোদই ১৮৪৬-১৮৫৪, ভূমিকা, পৃ-.৭৫
৭. শৈলেন বৰকটকী, অসমীয়া মধ্যশ্রেণী (ঊনবিংশ শতিকাৰ পৰা বিংশ শতিকাৰ আদিভাগলৈ), পৃ-৬৭
৮. মহেশ্বৰ নেওগ (সংকলিত আৰু পুনঃসম্পা.), পূর্বোল্লিখিত, পৃ-৮
৯. প্রসেনজিৎ চৌধুৰী, অৰুনোদই, পৃ-৫৮
১০. ভৰজিৎ বায়ন, অসমীয়া সাহিত্যৰ বুৰঞ্জী, পৃ-৬৮৬
১১. তিলক বৰা, অম্বিকাগিৰী ৰায়চৌধুৰীৰ জীৱন আৰু সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক অধ্যয়ন, পৃ-৪০
১২. উল্লিখিত, পৃ-৪০
১৩. উল্লিখিত, পৃ-৩৮
১৪. প্রসেনজিৎ চৌধুৰী, পূর্বোল্লিখিত, পৃ-২৩-২৪
১৫. মহেশ্বৰ নেওগ (সংকলিত আৰু পুনঃসম্পা.), পূর্বোল্লিখিত, পৃ-৩১
১৬. উল্লিখিত , পৃ-৭৮-৭৯
১৭. উল্লিখিত, পৃ-১৯১
১৮. ধ্রুৱজ্যোতি গোস্বামী, ঊনবিংশ শতিকাৰ অসমীয়া সংবাদপত্রত প্রতিফলিত সমাজ আৰু সাহিত্য (প্রাক্-ৰোমাণ্টিক যুগৰ চাৰিখন সংবাদপত্রৰ বিশেষ অধ্যয়ন প্রসংগত), গৱেষণা গ্রন্থ, অপ্রকাশিত, পৃ-১৪২

সহায়ক গ্রন্থপঞ্জী ঃ

আহমেদ, ছালিম আলি (সম্পা.) ঃ ঐতিহ্য ঃ অসমীয়া সাহিত্য, যোৰহাট, প্রকাশক - হেৰিটেজ আছাম, প্রথম প্রকাশ মে' ২০০৭
কলিতা, ৰমেশ চন্দ্র ঃ স্বাধীনতা আন্দোলন আৰু অসম, গুৱাহাটী, অসম প্রকাশন পৰিষদ, প্রথম প্রকাশ - ডিচেম্বৰ, ২০০৮
চৌধুৰী, প্রসেনজিৎ ঃ অৰুনোদই, গুৱাহাটী, ষ্টুডেণ্ট ষ্টৰচ, ছেপ্তেম্বৰ, ২০১৪ নেওগ, মহেশ্বৰ
(সংকলিত আৰু পুনঃসম্পা.) ঃ অৰুনোদই ১৮৪৬-১৮৫৪, গুৱাহাটী, প্রকাশক - অসম প্রকাশন পৰিষদ, প্রথম সংস্কৰণ-ছেপ্তেম্বৰ, ১৯৮৩
বৰকটকী, শৈলেন ঃ অসমীয়া মধ্যশ্রেণী (ঊনবিংশ শতিকাৰ পৰা বিংশ শতিকাৰ আদিভাগলৈ) অসমীয়া সমাজ আৰু সংস্কৃতিৰ ইতিহাস, গুৱাহাটী, নৱজীৱন প্রকাশন, প্রথম প্রকাশ - ৩১ অক্টোবৰ, ২০০০
বৰা, তিলক ঃ অম্বিকাগিৰী ৰায়চৌধুৰীৰ জীৱন আৰু সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক অধ্যয়ন, গুৱাহাটী, দিব্য প্রকাশন, প্রথম প্রকাশ-ফেব্রুৱাৰী, ২০০১
বায়ন, ভৰজিৎ ঃ অসমীয়া সাহিত্যৰ বুৰঞ্জী (প্রথম খণ্ড), গুৱাহাটী, প্রকাশক-নৱজ্যোতি গোস্বামী, মা-লক্ষ্মী পাব্লিকেশ্যন, চতুর্থ সংস্কৰণ, জুলাই-২০১৮
ভট্টাচার্য, কিশোৰ ঃ ব্যক্তি সমাজ আৰু সাহিত্য, গুৱাহাটী, অসম প্রকাশন পৰিষদ, প্রথম প্রকাশ - ডিচেম্বৰ, ২০০৮
ভট্টাচার্য, বসন্ত কুমাৰ ঃ অৰুণোদই যুগৰ সাহিত্য, গুৱাহাটী, চন্দ্র প্রকাশ, প্রথম প্রকাশ-২০০৬
শইকীয়া, নগেন (পুনঃ সম্পা.) ঃ আসাম বন্ধু, গুৱাহাটী, অসম প্রকাশন পৰিষদ, দ্বিতীয় প্রকাশ-ডিচেম্বৰ, ২০১৩
শর্মা, সত্যেন্দ্রনাথ ঃ অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত, গুৱাহাটী, সৌমাৰ প্রকাশ, দশম সংস্কৰণ পুনৰ মুদ্রণ, ২০২০

অপ্রকাশিত গৱেষণা গ্রন্থ ঃ

গোস্বামী, ধ্রুৱজ্যোতি ঃ ঊনবিংশ শতিকাৰ অসমীয়া সংবাদপত্রত প্রতিফলিত সমাজ আৰু সাহিত্য (প্রাক্-ৰোমাণ্টিক যুগৰ চাৰিখন সংবাদপত্রৰ বিশেষ অধ্যয়ন প্রসংগত), অপ্রকাশিত গৱেষণা গ্রন্থ, গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়, ২০০৪
বৰা, দিব্যজ্যোতি ঃ নগেন শইকীয়াৰ প্রবন্ধসাহিত্য ঃ এক সমীক্ষাত্মক অধ্যয়ন, অপ্রকাশিত গৱেষণা গ্রন্থ, ডিব্রুগড় বিশ্ববিদ্যালয়, ২০১৮

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

আপাতানি ভাষাৰ কাৰক আৰু কাৰকসূচক ৰূপৰ ব্যৱহাৰ

ড° ৰাহুল কুলি
সহকাৰী অধ্যাপক
অসমীয়া বিভাগ, সুৰেন দাস মহাবিদ্যালয়, হাজো
৮৬১৮৫০৯২১৪
luhar.kuli@gmail.com

চুমি কাথাৰ
সহকাৰী অধ্যাপিকা
অসমীয়া বিভাগ, সুৰেন দাস মহাবিদ্যালয়, হাজো
৮০১১১১২৪৯৩
sumikathar2@gmail.com

সংক্ষি প্তসাৰ ঃ

উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চলৰ অৰুণাচল প্ৰদেশৰ নামনি সোৱণশিৰি জিলাত বসবাস কৰা এটা প্ৰধান জনগোষ্ঠী হ'ল—আপাতানি। নামনি সোৱণশিৰি জিলাৰ জিৰ' উপত্যকাত আপাতানি ভাষী লোকসকলৰ মূল বসতি স্থল। এই অঞ্চলটোক আপাতানি উপত্যকা (Apatani Valley) হিচাপেও জনা যায়। জিৰ' উপত্যকাৰ উপৰিও পাপুমপাৰে জিলাৰ বিভিন্ন ঠাই, যেনে—নাহৰলগুণ, বান্দৰদেৰা, দুইমুখ আৰু কামলা জিলাৰ ৰাগা অঞ্চলতো কিছু আপাতানি জনগোষ্ঠীয় লোক বসবাস কৰি থকা দেখা যায়। আপাতানি জনগোষ্ঠীয় লোকসকলে ঘৰুৱা জীৱনত আপাতানি ভাষা ব্যৱহাৰ কৰে। কিন্তু ব্যৱসায়-বাণিজ্য, শিক্ষা-দীক্ষাৰ ক্ষেত্ৰত বিশেষকৈ হিন্দী আৰু ইংৰাজী ভাষা ব্যৱহাৰ কৰে। ফলস্বৰূপে সম্প্ৰতি নৱপ্ৰজন্মৰ মাজত আপাতানি ভাষাৰ ব্যৱহাৰ কমি আহিছে। লগতে আপাতানি ভাষাটোৰ বিষয়ে এতিয়ালৈকে বিজ্ঞানসম্মত অধ্যয়ন হোৱা নাই। সেয়েহে ভাষাটো সংকটাপন্ন অৱস্থালৈ গতি কৰিছে। গতিকে এই ভাষাটো অধ্যয়নৰ জৰিয়তে সংৰক্ষণ আৰু সম্প্ৰসাৰণ কৰাৰ গুৰুত্ব আহি পৰিছে। এই উদ্দেশ্য আগত ৰাখিয়ে এই পত্ৰখনত আপাতানি ভাষাৰ কাৰক আৰু কাৰকসূচক ৰূপৰ ব্যৱহাৰ সম্পৰ্কে আলোচনা দাঙি ধৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

বীজ শব্দ ঃ *ৰূপতত্ত্ব, ৰূপসাধন, কাৰক আদি।*

০.১ অৱতৰণিকা ঃ

নামনি সোৱণশিৰি জিলা অৰুণাচল প্ৰদেশৰ এখন অন্যতম জিলা। জিলাখনৰ সদৰ ঠাই হৈছে জিৰ' উপত্যকা। নামনি সোৱণশিৰি জিলাখন ১৯৮০ চনত পূৰ্বৰ সোৱণশিৰি জিলাক উজনি আৰু নামনি অংশ পৃথক কৰি সৃষ্টি কৰা হৈছিল। এই জিলাৰ মাটিকালি ৩৪৬০ বৰ্গ কিলোমিটাৰ। জিলাখনৰ চাৰিসীমা এনেধৰণৰ— উত্তৰে উজনি সোৱণশিৰি আৰু কুৰুং-কুমে জিলা, দক্ষিণে পাপুমপাৰে আৰু অসম, পূবে পশ্চিম ছিয়াং আৰু উজনি সোৱণশিৰি জিলাৰ কিছু অংশ আৰু পশ্চিমে কুৰুং-কুমে আৰু পাপুমপাৰে জিলা অৱস্থিত। নামনি সোৱণশিৰি জিলাখন জিৰ'-১ আৰু জিৰ'-২ এই দুটা প্ৰধান মহকুমাৰে গঠিত। জিলাখনক আকৌ সাতটা ৰাজহচক্ৰ— জিৰ'-১ (সদৰ), পুৰণি জিৰ', য়াচুলি, পিষ্টানা, য়াজালি, ডিড্ আৰু পাৰাম পুতুত (লোথ) বিভক্ত কৰা হৈছে। ২০১১ চনৰ লোকপিয়ল অনুসৰি নামনি সোৱণশিৰি জিলাৰ মুঠ জনসংখ্যা ৮৩,০৩০ জন।[১] নামনি সোৱণশিৰি জিলাত অতীজৰে পৰা স্বকীয় ভাষিক আৰু সাংস্কৃতিক উপাদানেৰে আপাতানি, নিচি আৰু হিল মিৰি জনগোষ্ঠীয় লোকসকলে বসবাস কৰি আছে।

অৰুণাচল প্ৰদেশৰ নামনি সোৱণশিৰি জিলাত বসবাস কৰা এটা প্ৰধান জনগোষ্ঠী হ'ল—আপাতানি। ভাষাবিদ বেনেডিক্ট, টিয়ানশ্বিন জেকবচন চুন, ৰবার্ট চাফিৰ, জেমছ মেটিছফ, ডেভিদ ব্ৰেডলি, নগেন ঠাকুৰ, উপেন্দ্ৰনাথ গোস্বামী, ভীমকান্ত বৰুৱা, প্ৰমোদ চন্দ্ৰ ভট্টাচার্য্য আদি লোকসকলে আগবঢ়োৱা চীন-তিব্বতীয় ভাষা পৰিয়ালৰ শ্ৰেণীবিভাজনৰ ভিত্তিত ক'ব পাৰি যে, চীন-তিব্বতীয় ভাষা পৰিয়ালৰ অন্তৰ্গত তিব্বতবৰ্মী শাখাৰ উত্তৰ-অসম উপশাখাৰ এটা অন্যতম ভাষা হ'ল আপাতানি ভাষা। নামনি সোৱণশিৰি জিলাৰ জিৰ'-১ আৰু জিৰ'-২ এই দুয়োখন মহকুমা তথা সংমণ্ডলত আপাতানি ভাষী লোকসকলৰ মূল বসতি স্থল। এই অঞ্চলটোক আপাতানি উপত্যকা (Apatani Valley) হিচাপেও জনা যায়। জিৰ' উপত্যকাৰ উপৰিও পাপুমপাৰে জিলাৰ বিভিন্ন ঠাই, যেনে—নাহৰলগুণ, বান্দৰদেৱা, দুইমুখ আৰু কামলা জিলাৰ ৰাগা অঞ্চলতো কিছু আপাতানি জনগোষ্ঠীয় লোক বসবাস কৰি থকা দেখা যায়। ২০১১ চনৰ লোকপিয়ল অনুসৰি আপাতানি জনগোষ্ঠীৰ জনসংখ্যা ৪৩,৭৭৭ জন।[২] আপাতানি জনগোষ্ঠীয় লোকসকলে ঘৰুৱা জীৱনত আপাতানি ভাষা ব্যৱহাৰ কৰে। কিন্তু ব্যৱসায়-বাণিজ্য, শিক্ষা-দীক্ষাৰ ক্ষেত্ৰত বিশেষকৈ হিন্দী আৰু ইংৰাজী ভাষা ব্যৱহাৰ কৰে। সাম্প্ৰতিক নৱপ্ৰজন্মৰ মাজত আপাতানি ভাষাৰ ব্যৱহাৰ কমি আহিছে। লগতে আপাতানি ভাষাটোৰ বিষয়ে এতিয়ালৈকে বিজ্ঞানসন্মত অধ্যয়ন হোৱা নাই। ফলস্বৰূপে ভাষাটো সংকটাপন্ন অৱস্থালৈ গতি কৰিছে।

'আপাতানি' শব্দটো পোন প্ৰথমবাৰৰ বাবে হাইমেনডৰ্ফে তেওঁৰ "*The Apa Tanis and Their Neighbours*" নামৰ গ্ৰন্থখনত উল্লেখ কৰিছে।[৩] টি. কানি, পি.চি. কালা, ৰীমা টাদু আদি লোকসকলৰ মতে ব্যুৎপত্তিগতভাৱে 'আপাতানি' শব্দটো 'আপা' আৰু 'তানি' এই দুটা শব্দৰ পৰা গঠন হৈছে। প্ৰথম 'আপা' শব্দটো এটা উপসর্গ। ই যিকোনো মানুহৰ নামৰ আগত সন্মান বা মৰমৰ চিহ্ন হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰে। আনহাতে পিছৰ 'তানি' শব্দটোৱে মানুহ বা তেওঁলোকৰ কিংবদন্তি পূৰ্বপুৰুষ আবুতানি বা তানিৰ পৰা উদ্ভৱ হৈছে। ই মানৱ জাতিৰ অর্থ প্ৰকাশ কৰে।[৪] যিকিনহওক আপাতানিসকলে পূৰ্বতে নিজকে 'তানি' বুলি পৰিচয় দিছিল। যাৰ অর্থ হ'ল তেওঁলোকৰ পূৰ্বপুৰুষ। ঔপনিৱেশিক বিষয়াসকলেহে প্ৰথমে আপাতানি শব্দটো পোন প্ৰথমে ব্যৱহাৰ কৰে। অৱশ্যে এতিয়াও তেওঁলোকে নিজকে 'তানি' বুলি পৰিচয় দিহে ভাল পায়।

পৃথিৱীৰ প্ৰত্যেকটো ভাষাৰ ৰূপতত্ত্বৰ ক্ষেত্ৰত সুকীয়া বিশেষত্ব দেখিবলৈ পোৱা যায়। তিব্বতবৰ্মী ভাষাৰ অন্যতম আপাতানি ভাষাৰ ৰূপতত্ত্বৰ গাঁথনিক দিশত কিছুমান সুকীয়া বৈশিষ্ট্য পৰিলক্ষিত হয়। আপাতানি ভাষাৰ ৰূপতত্ত্বৰ অন্তৰ্গত কাৰকৰ ৰূপসাধনত সুকীয়া বিশেষত্ব বিদ্যমান। সেয়েহে আমাৰ এই গৱেষণা পত্ৰখনৰ মাজেদি আপাতানি ভাষাৰ কাৰক আৰু কাৰকসূচক ৰূপৰ ব্যৱহাৰ সম্পর্কে আলোকপাত কৰিবলৈ যত্ন কৰা হৈছে।

০.২ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

আপাতানি ভাষাৰ কাৰকৰ প্ৰকাৰ আৰু প্ৰয়োগ সম্পর্কে আলোকপাত কৰাই আমাৰ এই গৱেষণা পত্ৰখনৰ মূল উদ্দেশ্য।

০.৩ **অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ**

আপাতানি ভাষাৰ কাৰক আৰু কাৰকসূচক ৰূপৰ ব্যৱহাৰ—শীর্ষক এই গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰোঁতে তথ্য আহৰণ আৰু তথ্য বিশ্লেষণৰ কাৰণে বেলেগ বেলেগ পদ্ধতি অৱলম্বন কৰা হৈছে।

০.৩.১ তথ্য আহৰণ পদ্ধতি ঃ

এই গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰোঁতে তথ্য আহৰণৰ ক্ষেত্ৰত ক্ষেত্ৰভাষাবিজ্ঞানৰ লগত জড়িত ক্ষেত্ৰ অধ্যয়ন পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে। ক্ষেত্ৰ অধ্যয়নত তলত দিয়া পদ্ধতিসমূহ গ্ৰহণ কৰা হৈছে।

- নমুনা সংগ্ৰহ পদ্ধতি
- সাক্ষাৎকাৰ পদ্ধতি

নমুনা সংগ্ৰহ পদ্ধতি ঃ

গৱেষণা পত্ৰখনৰ বাবে প্ৰয়োজনীয় সমলসমূহ সংগ্ৰহ কৰোঁতে নমুনা সংগ্ৰহ পদ্ধতিও গ্ৰহণ কৰা হৈছে। বিভিন্ন সমল ব্যক্তিৰ পৰা কিছুমান শব্দ আৰু বাক্যৰ নমুনা সংগ্ৰহ কৰা হৈছে। শব্দ, বাক্যৰ নমুনা সংগ্ৰহ কৰিবলৈ লিখিত আনুষ্ঠানিক প্ৰশ্নসূচী আৰু অলিখিত অনানুষ্ঠানিক প্ৰশ্নসূচীৰ দ্বাৰা সমল সংগ্ৰহ কৰা হৈছে।

সাক্ষাৎকাৰ পদ্ধতি ঃ

গৱেষণা পত্ৰৰ প্ৰয়োজনীয় তথ্য আহৰণ কৰোঁতে সাক্ষাৎকাৰ পদ্ধতিৰো সহায় লোৱা হৈছে। বিশেষকৈ প্ৰশ্নসূচী পূৰ কৰিবলৈ সাক্ষাৎকাৰ পদ্ধতি অৱলম্বন কৰা হৈছে। সমল সংগ্ৰহ কৰোঁতে নির্দিষ্ট প্ৰশ্নমালাৰ ভিত্তিত আৰু সুনির্দিষ্ট বিষয় ভিত্তিত সাক্ষাৎ গ্ৰহণ কৰা হৈছে। প্ৰয়োজন সাপেক্ষে অনির্দিষ্ট প্ৰশ্নমালা আৰু পুনৰাবৃত্তিমূলক প্ৰশ্নমালাৰ সহায় লোৱা হৈছে।

০.৩.২ তথ্য বিশ্লেষণ পদ্ধতি ঃ

আপাতানি ভাষাৰ কাৰক আৰু কাৰকসূচক ৰূপৰ ব্যৱহাৰ—শীৰ্ষক গৱেষণা কৰ্মত তথ্য বিশ্লেষণৰ বাবে প্ৰধানকৈ দুটা পদ্ধতি গ্ৰহণ কৰাহৈছে।

- বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতি
- বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি

• বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতি ঃ

ভাষাৰ গাঁথনিক দিশৰ বিশ্লেষণৰ বাবে ব্যৱহাৰ কৰা বিজ্ঞানসন্মত পদ্ধতি হ'ল বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতি। কোনো এটা ভাষাৰ বিশেষ সময়ত প্ৰচলিত ৰূপ সম্পৰ্কে বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতিৰ সহায়ত বিশ্লেষণ কৰা হয়। এই পদ্ধতিৰ অন্তৰ্গত এটা তাত্ত্বিক দিশ হ'ল ৰূপতত্ত্ব। আপাতানি ভাষাৰ ৰূপতত্ত্ব বিশ্লেষণৰ বাবে বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতিৰ দুটা শাখাক সামৰি লোৱা হৈছে—

ক) সংজ্ঞানাত্মক ৰূপতত্ত্ব (Cognitive Approach of Morphology)

খ) গঠনাত্মক ৰূপতত্ত্ব (Structural Approach of Morphology)

ক) সংজ্ঞানাত্মক ৰূপতত্ত্ব (Cognitive Approach of Morphology) ঃ

সংজ্ঞানাত্মক ৰূপতত্ত্বৰ মতে, ভাষা পৰিৱৰ্তনশীল। কোনো ভাষাৰ ক্ষেত্ৰত গাঁথনিক যিবোৰ নীতি-নিয়ম থাকে সেইবোৰৰ কোনো এটা প্ৰকাৰেই স্থায়ী নহয়। সময়ৰ লগে লগে ভাষাৰ পৰিৱৰ্তন দেখিবলৈ পোৱা যায় আৰু তাৰ ভিত্তিতেই ভাষাৰ নীতি-নিয়মবোৰ গঢ় লৈ উঠে। সকলো নীতি-নিয়ম ভাষাৰ ব্যৱহাৰৰ ভিত্তিতে গঢ়ি উঠে। সেয়ে আপাতানি ভাষাৰ কথিত ৰূপটোৰ সমল সংগ্ৰহ কৰি এই গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত সম্পন্ন কৰিবলৈ সংজ্ঞানাত্মক ৰূপতাত্ত্বিক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

খ) গঠনাত্মক ৰূপতত্ত্ব (Structural Approach of Morphology) ঃ

গঠনাত্মক ৰূপতত্ত্বই ভাষাৰ বিভিন্ন উপাদানবোৰ তন্ন তন্নকৈ বিচাৰি উলিয়াই সেইবোৰৰ বিজ্ঞানসন্মত বিশ্লেষণ আগবঢ়ায়। বিশেষকৈ গঠনাত্মক ৰূপতত্ত্বই শব্দ, শব্দগঠন, ৰূপ, ৰূপৰ প্ৰকাৰ, শব্দৰ ৰূপসাধন ইত্যাদি সম্পৰ্কে অধ্যয়ন আগবঢ়ায়। সেয়ে আপাতানি ভাষাৰ ৰূপতত্ত্বৰ অন্তৰ্গত কাৰকৰ সম্পৰ্কে আলোচনা কৰোঁতে গঠনাত্মক ৰূপতাত্ত্বিক পদ্ধতিবো সহায় লোৱা হৈছে।

• বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি

আপাতানি ভাষাৰ কাৰকৰ ৰূপসাধনৰ দিশসমূহ আলোচনা কৰোঁতে তথ্য বিশ্লেষণৰ বাবে বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

০.৩ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

ভাষাবিজ্ঞানৰ অন্যতম এটা দিশ ৰূপতত্ত্বৰ অন্তৰ্গত বিষয় হৈছে কাৰক। প্ৰত্যেক ভাষাৰে কাৰকৰ ৰূপসাধন প্ৰক্ৰিয়া সুকীয়া সুকীয়া। আপাতানি ভাষাতো কাৰকৰ ৰূপসাধনৰ নিজস্ব বৈশিষ্ট্য আছে। এই গৱেষণা পত্ৰখনত আপাতানি ভাষাৰ কাৰকৰ প্ৰকাৰ আৰু কাৰকসূচক ৰূপৰ ব্যৱহাৰৰ সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা হৈছে।

১.০ আপাতানি ভাষাৰ ভাষিক স্থিতি ঃ

ভাষাৰ ভাষিক জনসংখ্যা ক্ৰমে নিম্নগামী হোৱা, ওচৰ-চুবুৰীয়া ভাষাৰ প্ৰভাৱ, বিজ্ঞানসন্মত চিন্তা-চৰ্চাৰ অভাৱ ইত্যাদি কাৰণত পৃথিৱীৰ বহু ভাষাই সংকটাপন্ন অৱস্থালৈ গতি কৰিছে আৰু কিছুমান ভাষাৰ বিলুপ্তি ঘটিছে। সম্প্ৰতি উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চলৰ কেইবাটাও জনগোষ্ঠীৰ ভাষা সংকটাপন্ন অৱস্থাত পোৱা গৈছে। আপাতানি ভাষাৰ ভাষিক স্থিতি সকটাপন্ন। UNESCO-ৰ প্ৰতিবেদন অনুসৰি পৃথিৱীৰ বিভিন্ন বিপদাপন্ন ভাষাসমূহৰ তালিকাত আপাতানি ভাষাও অন্তৰ্ভুক্ত হৈছে। UNESCO-ৰ EGIDS (Expanded Graded Intergenerational Disruption Scale) এই বিশেষ মাপনীৰ প্ৰতিবেদন অনুসৰি আপাতানি ভাষাটো সম্প্ৰতি এটা সংকটাপন্ন বা বিপদাপন্ন ভাষা।[৫] বৰ্তমান ভাষাটো এই প্ৰজন্মৰ লোকসকলে সুন্দৰভাৱে ব্যৱহাৰ কৰে যদিও নৱ-প্ৰজন্মৰ মাজত ক্ৰমান্বয়ে ভাষাটোৰ ব্যৱহাৰ কমি আহিছে। তদুপৰি শৈক্ষিক ক্ষেত্ৰতো ভাষাটো ব্যৱহাৰ নকৰে। তলত 'Ethnologue' ৰ দ্বাৰা প্ৰকাশিত আপাতানি ভাষাৰ ভাষিক স্থিতি নিৰূপণৰ চিত্ৰ দাঙি ধৰা হৈছে—

বৈখিক চিত্ৰ নং ঃ ১ Ethnologue-ত আপাতানি ভাষাৰ অৱস্থিতি

আপাতানি ভাষাটো বর্তমান যি বিপন্নপ্রায় পর্যায় পাইছেগৈ তাৰ মূলতে কেইটামান গুৰুত্বপূর্ণ কাৰণ নিহিত হৈ আছে। তলত সেই সম্পর্কে আলোচনা কৰা হ'ল—

• লিপি আৰু সাহিত্য ঃ

আপাতানি ভাষা এটা লিপিহীন ভাষা। আপাতানি লোকসকলৰ মাজত মুখে-মুখে ভাষাটো প্ৰচলন হৈ আছে। অৱশ্যে সম্প্ৰতি তেওঁলোকে ভাষাটোক লিখিত ৰূপ দিবৰ কাৰণে ৰোমান লিপিক সংশোধন কৰি নিজৰ লগত খাপ খোৱাই ব্যৱহাৰ কৰে। এই সংশোধিত ৰোমান লিপি 'Apatani Cultural and Literary Society' ৰ উদ্যোগত 'Popi Sarmin Society' য়ে প্ৰস্তুত কৰা এই লিপিটো 'আপাতানি ভাষা উন্নয়ন সমিতি (Apatani Language Development Committee)ৰ সিদ্ধান্ত মৰ্মে গ্ৰহণ কৰে।

আপাতানি জনগোষ্ঠীৰ লোক-সাহিত্য যথেষ্ট চহকী। বিভিন্ন লোকগীত, সাধু কথা, প্ৰবাদ-প্ৰবচন, মন্ত্ৰ আদি আপাতানি বয়োজ্যেষ্ঠসকলৰ মাজত কথিত ৰূপত প্ৰচলন হৈ আছে। বিশেষকৈ তেওঁলোকৰ মাজত মুখে-মুখে প্ৰচলিত কাহিনীসমূহ হ'ল, পৃথিৱীৰ জন্মৰ কাহিনী, সূর্য (দঃঞিঃ) আৰু পৌলৰ (চন্দ্ৰ) সৃষ্টিৰ কাহিনী, পৃথিৱী, ডাৱৰ, মেঘ, বৰষুণ, আবুতানিৰ সৃষ্টিৰ কাহিনী, ম্যোকো উৎসৱ পালনৰ কাহিনী, অন্যান্য বাঘ, হাতী, সাপ আদিৰ জন্মৰ কাহিনীসমূহ উল্লেখযোগ্য।

• খ্ৰীষ্টান ধর্মৰ প্ৰভাৱ ঃ

সমগ্ৰ বিশ্বজুৰি খ্ৰীষ্টান ধর্মৰ আগ্ৰাসনে বর্তমান সময়ত সৰু সৰু জনগোষ্ঠীৰ ভাষা-সংস্কৃতিৰ প্ৰতি ভাবুকি কঢ়িয়াই আনিছে। আপাতানি জনগোষ্ঠীয় সমাজখনো এই ক্ষেত্ৰত ব্যতিক্ৰম নহয়। আপাতানি জনগোষ্ঠীৰ গৰিষ্ঠ সংখ্যক লোকে নিজৰ দঃঞিঃ-পৌল ধর্ম এৰি খ্ৰীষ্টান ধর্ম-সংস্কৃতি আকোঁৱালি লোৱা দেখিবলৈ পোৱা যায়। ফলত ভাষিক ক্ষেত্ৰখনতো এই পৰিৱর্তনে প্ৰভাৱ বিস্তাৰ কৰিছে।

ভাষাই সংস্কৃতিৰ উপাদানবোৰ কঢ়িয়াই ফুৰে। আপাতানি জনগোষ্ঠীৰ নৱ-প্ৰজন্মৰ মাজত নিজৰ সংস্কৃতিৰ সমলৰাজিৰ চিন্তা-চৰ্চাৰ অভাৱে অচিৰেই সেইবোৰ নিঃশেষ হোৱাৰ সম্ভাৱনা প্ৰকট কৰি তুলিছে। মিছনেৰীসকলৰ বৃহৎ আকাৰৰ অত্যাধুনিক গীর্জাঘৰ নির্মাণ, ইংৰাজী মাধ্যমৰ বিদ্যালয় স্থাপনৰ জৰিয়তে ধর্মীয় শিক্ষা প্ৰদান কৰা ইত্যাদি সমষ্ট কার্যকলাপে ক্ৰমান্বয়ে আপাতানি জনগোষ্ঠীৰ নৱ-প্ৰজন্মৰ মাজত ইংৰাজী ভাষা প্ৰীতিৰ মনোভাৱ গাঢ় কৰি তোলা পৰিলক্ষিত হৈছে। ফলত নিজ ভাষাৰ পৰিৱর্তে ইংৰাজী আৰু হিন্দী ভাষাই গ্ৰাস কৰিছে।

• ভাষিক সচেতনহীনতা ঃ

আপাতানিসকলৰ মাজত নিজৰ ভাষাৰ তাৎপর্য আৰু ইয়াৰ সম্প্ৰসাৰণৰ বিষয়ে সচেতন লোকৰ সংখ্যা কম। তেওঁলোকৰ মাজত এতিয়াও নিজ ভাষা-সংস্কৃতিৰ সংৰক্ষণ-সংবর্দ্ধনৰ দৰে ভাৱৰ উন্মেষ ঘটা নাই। আনহাতে নৱ-প্ৰজন্মই ঘৰুৱা পৰিৱেশৰ বাদে শিক্ষা-দীক্ষা, ৰাজহুৱা কাম-কাজ সকলোতে ইংৰাজী আৰু হিন্দী ভাষা ব্যৱহাৰ কৰাৰ ফলস্বৰূপে ভাষাটো নিজে ভালদৰে বুজি আনকো বুজাই ক'বপৰা লোকৰ সংখ্যা কমি আহিছে। তদুপৰি তেওঁলোকৰ আঞ্চলিক বিদ্যালয়সমূহতো আপাতানি ভাষা পঢ়োৱা নহয়। প্ৰাথমিক বিদ্যালয়ৰ পৰাই ইংৰাজী আৰু হিন্দী ভাষাক পাঠদানৰ মাধ্যম হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰে। গতিকে নতুন প্ৰজন্মই ইংৰাজী আৰু হিন্দী দুয়োটা ভাষাক শিকিবলৈও বহুত বেছি আগ্ৰহী। ফলস্বৰূপে ভাষিক সচেতনহীনতাই ক্ৰমান্বয়ে আপাতানি ভাষাৰ প্ৰতি ভাবুকি স্বৰূপ হৈ পৰিছে।

• বহুভাষিকতা

আপাতানি ভাষাৰ ভাষিক স্থিতি দুর্বল হোৱাৰ ক্ষেত্ৰত বহুভাষিক স্থিতিয়ে যথেষ্ট প্ৰভাৱ বিস্তাৰ কৰিছে। ভাষাৰ বিকাশৰ ক্ষেত্ৰত বহুভাষিক পৰিস্থিতিয়ে সমস্যাৰ সৃষ্টি কৰিছে। আপাতানি জনগোষ্ঠীৰ লোকসকলে ঘৰুৱা পৰিৱেশতহে আপাতানি ভাষা ব্যৱহাৰ কৰে। দৈনন্দিন জীৱনত প্ৰয়োজনীয় সামগ্ৰী ক্ৰয়, বেপাৰ-বাণিজ্য, শিক্ষা-দীক্ষা আদি বিভিন্ন কাৰণত যোগাযোগ স্থাপন তথা কাম-কাজ কৰিবলৈ ভাৱ বিনিময়ৰ বাবে হিন্দী আৰু ইংৰাজী ভাষা ব্যৱহাৰ কৰে। অৱশ্যে এটা সময়ত আপাতানি লোকসকলে অসমীয়া ভাষী লোকসকলৰ লগত ভাৱ-বিনিময় কৰিবলৈ বহুলোকে অসমীয়া ভাষা ব্যৱহাৰ কৰিছিল। কিন্তু সম্প্ৰতি তেনে লোকৰ সংখ্যা নিচেই তাকৰ।

আপাতানি ভাষাৰ কোনো লিখিত পাঠ্যক্ৰমৰ ব্যৱস্থা নাই। সেয়েহে বিদ্যালয়, মহাবিদ্যালয়, চৰকাৰী কার্যালয় আদিত ইংৰাজী আৰু হিন্দী ভাষাৰ সমান্তৰালভাৱে ব্যৱহাৰ কৰে। যাৰ ফলস্বৰূপে আপাতানি ভাষাৰ ব্যৱহাৰ নৱপ্ৰজন্মৰ মাজত কমি আহিছে।

• বিজ্ঞানসম্মত চিন্তা-চৰ্চাৰ অভাৱ

বিজ্ঞানসম্মত চিন্তা-চৰ্চাইহে ভাষা এটাক মান্যতা প্ৰদান কৰে। আপাতানি ভাষাৰ বিজ্ঞানসম্মত অধ্যয়ন নোহোৱাৰ বাবে ইয়াৰ গাঁথনিক দিশৰ সম্পর্কে জানিব পৰা নাই। দুই এখন

ব্যাকৰণ, অভিধান আৰু হাতপুথিৰ বাহিৰে এই ভাষাৰ লিখিত সাহিত্য পোৱা নাযায়; গতিকে ই পর্যাপ্ত নহয়। সাম্প্রতিক সময়ছোৱালৈকে বিজ্ঞানসন্মত চিন্তা-চর্চাৰ অভাৱৰ কাৰণে আপাতানি ভাষাৰ উন্নয়নৰ গতি স্তিমিত হৈ পৰিছে।

আপাতানি ভাষাটো এটা সুকীয়া বৈশিষ্ট্য সম্পন্ন ভাষা। আপাতানি ভাষাৰ গাঁথনিক দিশৰ পদ্ধতিগত আৰু ক্ষেত্রভিত্তিক সমলৰ বিশ্লেষণৰ জৰিয়তে অধ্যয়ন হ'লেহে ভাষাটোৰ অন্তর্গত তথ্যবোৰ পোহৰলৈ আহিব। আপাতানি ভাষাৰ ৰূপতত্ত্বৰ অন্তর্গত দিশসমূহ, যেনে— ৰূপ, ৰূপসমূহৰ গঠন, ৰূপসাধনৰ প্রক্রিয়া, শব্দ, শব্দ গঠনৰ বিভিন্ন প্রক্রিয়া, বদ্ধৰূপসমূহৰ প্রয়োগ আদি সম্পর্কীয় অধ্যয়নে ভাষাটোৰ বিশেষত্বসমূহ উদ্‌ঘাটন কৰাৰ লগতে অন্যান্য ভাষা-ভাষীলোকসকলেও ভাষাটোৰ সম্পর্কে জ্ঞাত হ'ব। বিজ্ঞানসন্মত দৃষ্টিৰে ভাষাটোৰ ৰূপতত্ত্বৰ অন্তর্গত কাৰকৰ বৈশিষ্ট্যসমূহ পোহৰলৈ অনাৰ উদ্দেশ্য আগত ৰাখি **'আপাতানি ভাষাৰ কাৰক আৰু কাৰকসূচক ৰূপৰ ব্যৱহাৰ'**—শীর্ষক বিষয়টিত আলোচনা কৰিবলৈ যত্ন কৰা হৈছে।

২.০ আলোচনা আৰু ফলাফল ঃ

কাৰকে সাধাৰণতে নামপদ বা নাম বাক্যাংশৰ সৈতে ক্রিয়াপদৰ সম্পর্ক স্থাপন কৰে। ই পদ সাধনমূলক সর্গ। আপাতানি ভাষাটো এনে কাৰকবাচক ৰূপ পোৱা যায়। আপাতানি ভাষাত নামপদ আৰু ক্রিয়াপদৰ সম্বন্ধৰ ভিত্তিত কাৰক সাত প্রকাৰৰ। সেইকেইটা হ'ল—কর্তা কাৰক, কর্ম কাৰক, কৰণ কাৰক, নিমিত্ত কাৰক, অপাদান কাৰক, সম্বন্ধপদ আৰু অধিকৰণ কাৰক। আপাতানি ভাষাত এই সাত প্রকাৰ কাৰকৰ বিভিন্ন কাৰকবাচক ৰূপ পোৱা যায়। তলত কাৰক আৰু সম্বন্ধপদ অনুযায়ী আপাতানি ভাষাৰ কাৰক আৰু কাৰকসূচক ৰূপবোৰ তালিকাত দেখুওৱা হ'ল—

আপাতানি ভাষাৰ কাৰক	
কাৰক	**কাৰকসূচক ৰূপ**
কর্তা	-Ö, -si
কর্ম	-Ö, -mi
কৰণ	-l
নিমিত্ত	-pa/-mi
অপাদান	-k ki/-s ki/-h ki
সম্বন্ধপদ	-ka/-k[1]
অধিকৰণ	-h

তালিকা নং ১ ঃ আপাতানি ভাষাৰ কাৰক অনুসৰি প্রয়োগ হোৱা কাৰকসূচক ৰূপ

আপাতানি ভাষাৰ কাৰকৰ ৰূপসাধনৰ কিছুমান বৈশিষ্ট্য দেখিবলৈ পোৱা যায়। সেইবোৰ হ'ল—

• আপাতানি ভাষাত কাৰকসূচক ৰূপবোৰ বিশেষ্য, বিশেষণ, সর্বনাম, সংখ্যাবাচক বিশেষ্য আদি শব্দৰ মূল ৰূপ বা শব্দটোৰ গাতে লগ-লাগি বহি ভিন্ ভিন্ পদৰ ধাৰণা দিয়ে।

• আপাতানি ভাষাত কাৰকসূচক ৰূপবোৰ একবচন বা লিংগ নিৰপেক্ষ ৰূপৰ ক্ষেত্রত মূল ৰূপটোৰ সৈতে সংযোগ হয় আৰু বহুবচনাত্মক ৰূপৰ ক্ষেত্রত প্রথমে বহুবচনাত্মক ৰূপবোৰ যোগ হয়; তাৰ পিছতহে কাৰকসূচক ৰূপ বহে।

• আপাতানি ভাষাত কর্তা আৰু কর্ম কাৰকত {-Ö} কাৰকসূচক ৰূপ সংযোগ কৰিও কাৰক নির্ণয় কৰা হয়।

• কর্ম আৰু নিমিত্ত কাৰকত সম কাৰকসূচক ৰূপৰ প্রয়োগ হয়।

তলত আপাতানি ভাষাৰ কাৰকসূচক ৰূপবোৰৰ ব্যৱহাৰ দেখুওৱা হ'ল—

স্বৰান্ত শব্দ [miju] 'মানুহ'

বিভক্তি কাৰক	**একবচন**	**বহুবচন**
প্রথমা কর্তা (Nominative)	miju Ö miju-si	মানুহেmiju-ata÷-Ö মানুহবোৰে মানুহে miju-ata÷-si মানুহবোৰে
দ্বিতীয়া কর্ম (Accusative)	miju-Ö মানুহক miju-mi মানুহক	miju-ata÷-Ö মানুহবোৰক miju-ata÷-mi মানুহবোৰক
তৃতীয়া কৰণ (Instrumental)	miju-l মানুহৰ দ্বাৰা	miju-ata÷-l মানুহবোৰৰদ্বাৰা
চতুর্থী নিমিত্ত (Purposive)	miju-pa/mi মানুহলৈ	miju-ata÷-pa/mi মানুহবোৰলৈ
পঞ্চমী অপাদান (Ablative)	miju-k ki মানুহৰপৰা miju-s ki মানুহৰপৰা miju-h ki মানুহৰপৰা	miju-ata÷-k ki মানুহবোৰৰপৰা miju-ata÷-s ki মানুহবোৰৰপৰা miju-ata÷-h ki মানুহবোৰৰপৰা
ষষ্ঠী অধিকৰণ (Locative)	miju-h মানুহত	miju-ata÷-h মানুহবোৰত
সপ্তমী সম্বন্ধপদ (Genitive)	miju-ka/k[1] মানুহৰ	miju-ata÷-ka/k[1] মানুহবোৰৰ

তালিকা নং ২ ঃ কাৰক অনুসৰি স্বৰান্ত শব্দত কাৰকসূচক ৰূপৰ একবচন আৰু বহুবচন দুয়োটা ৰূপত প্রয়োগ

তলত আপাতানি ভাষাৰ বিভিন্ন কাৰকসূচক ৰূপবোৰৰ ব্যৱহাৰ উদাহৰণসহ দেখুওৱা হ'ল —

২.১ কর্তাকাৰক (Nominative)ঃ

কর্তাই সাধাৰণতে ক্রিয়া সম্পাদনা কৰে। ই ক্রিয়াপদৰ লগত অন্য নামপদৰ সম্বন্ধক বুজায়। আপাতানি ভাষাত

বিশেষ্য আৰু প্ৰাণীবাচক সৰ্বনাম পদৰ লগত কাৰকসূচক ৰূপবোৰ ব্যৱহাৰ হয়। আপাতানি ভাষাৰ কৰ্তাৰ ৰূপসাধন প্ৰক্ৰিয়াবোৰ হ'ল—

• শূন্য বিভক্তি {-Ö} সংযোগ কৰি কৰ্তা কাৰকৰ ৰূপসাধন।

• নামপদৰ পাছত কৰ্তা কাৰকসূচক ৰূপ {-si} প্ৰয়োগ কৰি কৰ্তা কাৰকৰ ৰূপ সাধন।

{-Ö} — কাৰকবাচক ৰূপ যোগ কৰি—

jala~ baine. 'শিল ঘূৰণীয়া।'
শিল-Ö ঘূৰণীয়া
miju s¹d. 'মানুহ মৰে।'
মানুহ-Ö মৰে
p¹ta g d. 'চৰাই উৰে।'
চৰাই -Ö উৰে

{-si } কাৰকবাচক ৰূপ যোগ কৰি —

ram-si puri d 'ৰামে পঢ়িছে।'
ৰাম কাৰ.ৰূ.পঢ় কাল.ৰূ.
hime-si h Õd . 'ল'ৰাটোৱে ওখ হয়।'
ল'ৰা কাৰ.ৰূ. ওখ অৱ.ৰূ.
kag-si m mi damb¹ne. 'কাগোৱে তাক মাৰিলে।'
কাগো কাৰ.ৰূ.তেওঁ কাৰ.ৰূ. মৰা কাল.ৰূ.

২.২ কৰ্মকাৰক (Accusative) ঃ

কৰ্তাই যাৰ ওপৰত ক্ৰিয়া সম্পাদনা কৰে সেয়ে; কৰ্ম কাৰক। কৰ্ম কাৰকে ক্ৰিয়াৰ ধাৰণা দিয়ে। আপাতানি ভাষাত কৰ্ম কাৰকৰ ৰূপসাধন কৰিবলৈ {-Ö} আৰু {-mi} কাৰকসূচক ৰূপ যোগ হয়। উদাহৰণস্বৰূপে—

আপাতানি ভাষাৰ কৰ্মৰ ৰূপসাধন প্ৰক্ৰিয়াবোৰ হ'ল—

• শূন্য বিভক্তি {-Ö} সংযোগ কৰি কৰ্ম কাৰকৰ ৰূপসাধন।

• নামপদৰ পাছত কৰ্ম কাৰকসূচক ৰূপ {-mi} প্ৰয়োগ কৰি কৰ্ম কাৰকৰ ৰূপ সাধন।

• শূন্য বিভক্তি {-Ö} সংযোগ কৰি কৰ্ম কাৰকৰ ৰূপসাধন ঃ

আপাতানি ভাষাত কৰ্ম কাৰকত কৰ্তাক বিশেষভাবে উপস্থাপন কৰি কৰ্মক সাধাৰণভাবে দেখুৱালে কৰ্ম কাৰকৰ ৰূপটো উহ্য হৈ থাকে। উদাহৰণ—

m s¹hid¹ pab¹ ne. 'তেওঁ গৰুটো হত্যা কৰিলে।'
তেওঁ গৰুটো Ö কটা দে/দি কাল.ৰূ.
amid¹ ÷¹i d¹b¹ ne 'মেকুৰীটোৱে মাছ খাই দিলে।'
মেকুৰীটো Ö মাছ খা দে/দি কাল.ৰূ.
tabu par Ö d¹b¹ ne. 'সাপে কুকুৰা খাই দিলে।'
সাপ Ö কুকুৰা খা দে/দি কাল.ৰূ.

• {-mi} কাৰকবাচক ৰূপ ব্যৱহাৰৰ জৰিয়তে কৰ্ম কাৰকৰ ৰূপসাধন ঃ

আপাতানি ভাষাত কৰ্ম কাৰকৰ ৰূপসাধন কৰিবলৈ কৰ্মবাচক নামপদৰ পাছত {-mi} কাৰকসূচক ৰূপ ব্যৱহাৰ কৰা হয়। উদাহৰণ—

abah¹ ÷ -mi gab¹ ne. 'দেউতাই মোক গালি পাৰিলে।'
দেউতাই মই কাৰ.ৰূ. গালি দে/দি কাল.ৰূ.
jasi sudu ture m mi b¹t. 'এগিলাচ পানী তাইক দিয়া।'
পানী গিলাচ শ্ৰেণী.নিৰ্দে.ৰূ. তাই কাৰ.ৰূ.দে্ আদে.ৰূ.
arÕ miju-mi mubrj b¹la. 'দুখীয়া মানুহক দান কৰিবা।'
দুখীয়া মানুহ কাৰ.ৰূ. দান দে/দিয়া কাৰ্য

২.৩ কৰণ কাৰক (Instrumental) ঃ

আপাতানি ভাষাত যিহৰ দ্বাৰা বা যাৰ দ্বাৰা কৰ্তাই ক্ৰিয়া সম্পাদন কৰে সেয়াই হ'ল কৰণ কাৰক। আপাতানি ভাষাত প্ৰাণী আৰু অপ্ৰাণীবাচক বিশেষ্য পদবোৰৰ লগত কাৰকসূচক ৰূপবোৰৰ সংযোগ হয়। আপাতানি ভাষাৰ কৰণৰ কাৰকসূচক ৰূপ {-l} যোগ কৰি কৰণ কাৰকৰ ৰূপসাধন কৰা হয়। উদাহৰণ—

{-l} কাৰকবাচক ৰূপ যোগ কৰি—

m pat¹ ilj-l pax¹b¹ne. 'তেওঁ তৰোৱালেৰে বাঘ মাৰিলে।'
তেওঁ বাঘ তৰোৱাল কাৰ.ৰূ. মৰা কাল.ৰূ.
m bize-l ude m¹b¹ ne. 'সি বাঁহেৰে ঘৰ সাজিলে।'
সি বাঁহ কাৰ.ৰূ. ঘৰ সজা কাল.ৰূ.
n ala-l d¹j . 'তুমি হাতেৰে নাখাবা।'
তুমি হাত কাৰ.ৰূ. খা. নঞ.ৰূ.

আপাতানি ভাষাত সাধাৰণতে সম্বন্ধপদৰ কাৰকসূচক ৰূপ{-ka}ৰ পাছত সৈতে, লগত আদি বুজোৱা অনুপদ{agi÷} ৰূপ সংযোগ কৰিও কৰণ কাৰকৰ অৰ্থ প্ৰকাশ কৰা হয়। আধুনিক ভাষাবিজ্ঞান অনুযায়ী কৰণ কাৰকৰ সৈতে সম্পৰ্ক থকা এই ধৰণৰ কাৰকবোৰক সহযোগ কাৰক বুলিব কোৱা হয়। টি.পি. আব্ৰাহামে আপাতানি ভাষাৰ সহযোগ কাৰক সম্পৰ্কে আলোচনা কৰিছে।[৬] উদাহৰণ—

÷ aba-ka agi÷ h in~te.
মই দেউতা কাৰ.ৰূ. বদ্ধ.ৰূ. যা কাল.ৰূ.
'মই দেউতাৰ লগত গৈছিলোঁ।'

inka mjiub m -ka aba~ ka agi÷ h du.
সেই মানুহজন তেওঁৰ ভায়েক কাৰ. ৰ্ধ. বদ্ধ.ৰ্ধ. থাকে
'সেই মানুহজন তেওঁৰ ভায়েকৰ লগত থাকে।'
m -ka ami agi÷ h m mi kapat.
তেওঁ কাৰ.ৰ্ধ. মেকুৰী কাৰ.ৰ্ধ.বদ্ধ.ৰ্ধ. তেওঁ কাৰ.ৰ্ধ. দেখ্ কাল.ৰ্ধ.
'তেওঁক তাৰ মেকুৰীৰ সৈতে দেখিছিলোঁ।'

উল্লেখনীয় যে, সহযোগ কাৰক সূচক ৰূপ {agi÷} ৰ পিছত {-h} বদ্ধৰূপ এটা সংযোগ হৈ গঠন কৰা হয়।

২.৪ নিমিত্ত কাৰক (Dative) ঃ

আপাতানি ভাষাত উদ্দেশ্য, লক্ষ্য, দিশ, নিমিত্ত আদি অর্থত ক্রিয়াৰ লগত শব্দৰ যি সম্পর্ক বুজায় সেয়াই নিমিত্ত কাৰক। আপাতানি ভাষাত নিমিত্তকাৰকৰ কাৰকসূচক ৰূপ {-pa/-mi} যোগ কৰা হয়। উল্লেখনীয় যে, আপাতানি ভাষাত কর্ম কাৰক আৰু নিমিত্ত কাৰকত সমৰূপ কাৰকসূচক ৰূপ {mi}-ৰ ব্যৱহাৰ পোৱা যায়। উদাহৰণস্বৰূপে—

{-pa} কাৰকবাচক ৰূপৰ প্রয়োগ ঃ

m mi in~-pa s¹t. 'তাক যাবলৈ দিয়া।'
তেওঁ/তাই/সি কাৰ.ৰ্ধ. যা কাৰ.ৰ্ধ.দিয়া
÷ ardal ude-pa in~kur talji ku.
'মই কাইলৈ ঘৰলৈ উভতি যাম।'
মই কাইলৈ ঘৰ কাৰ.ৰ্ধ. যা উভতা কাল.ৰ্ধ.
ane api~ m¹du-pa in~ne. 'মায়ে ভাত ৰান্ধিবলৈ গৈছে।'
মায়ে ভাত ৰন্ধা কাৰ.ৰ্ধ.যা কাল.ৰ্ধ.

{-mi} কাৰকবাচক ৰূপৰ প্রয়োগ ঃ

aba-mi ilij sje bub¹t¹.
'দেউতালৈ তৰোৱাল এখন আনিছিলোঁ।'
দেউতা কাৰ.ৰ্ধ. তৰোৱাল এখন আন কাল.ৰ্ধ.
m lu aki-mi j med.
'তেওঁলোকে কুকুৰলৈ মাংস বিচাৰিছে।'
তেওঁলোকে কুকুৰ কাৰ.ৰ্ধ. মাংস বিচাৰ. কাল.ৰ্ধ.
÷ -mi pulje r¹-b¹te. 'মোলৈ কাপোৰ কিনিবা।'
মই কাৰ.ৰ্ধ. কাপোৰ কিনা কাল.ৰ্ধ.

২.৫ অপাদান (ablative Case)ঃ

য'ৰ পৰা বা যিহৰদ্বাৰা সম্পন্ন হয় সেয়াই হ'ল অপাদান কাৰক। আপাতানি ভাষাত আপাদান কাৰকৰ কাৰকসূচক ৰূপ তিনিটা পোৱা যায়। যেনে—{-k ki, -s ki আৰু -h ki}। আপাতানি ভাষাৰ অপাদান কাৰকৰ ৰূপসাধন প্রক্রিয়াবোৰ হ'ল—

• সাধাৰণভাৱে কোনো এটা উৎসৰ নির্দেশ কৰিবলৈ {-k ki} ৰূপ যোগ কৰা হয়।

• নিকটস্থ উৎসৰ পৰা সম্পন্ন হোৱাৰ ক্ষেত্রত অপাদান কাৰক নির্দেশ কৰিবলৈ {-s ki} ৰূপ যোগ কৰা হয়।

• দূৰৱর্তী উৎসৰ পৰা সম্পন্ন হোৱাৰ ক্ষেত্রত অপাদান কাৰক নির্দেশ কৰিবলৈ {-h ki} ৰূপ যোগ কৰা হয়।

আপাতানি ভাষাত সাধাৰণ উৎসৰ পৰা সম্পন্ন হোৱাৰ ক্ষেত্রত আপাদান কাৰক নির্দেশ কৰিবলৈ {-k ki} ৰূপ যোগ কৰা হয়। উদাহৰণ—

{-k ki} কাৰকবাচক ৰূপৰ প্রয়োগ ঃ

san¹-kki am¹ huid. 'গছৰপৰা আম সৰিছে।'
গছ কাৰ.ৰ্ধ. আম সৰিছে
embi~-k ki m¹d. 'চাউলৰপৰা মদ বনায়।'
চাউল কাৰ.ৰ্ধ. মদ কৰ্ নির্দে.ৰ্ধ.

আপাতানি ভাষাত নিকটস্থ উৎসৰ পৰা সম্পন্ন হোৱাৰ ক্ষেত্রত অপাদান কাৰক নির্দেশ কৰিবলৈ {-s ki} ৰূপ যোগ কৰা হয়। উদাহৰণ—

{-s ki} কাৰকবাচক ৰূপৰ প্রয়োগ ঃ

sika-sm ki lat. 'ইয়াৰপৰা লোৱা।'
ইয়াৰ কাৰ.ৰ্ধ. ল্ কাল.ৰ্ধ.
n sika table-s ki p ta lat.
'তুমি এইখন টেবুলৰপৰা কিতাপ লোৱা।'
তুমি এইখন টেবুল কাৰ.ৰ্ধ. কিতাপ ল্ কা.ৰ্ধ.

আপাতানি ভাষাত দূৰৱর্তী উৎসৰ পৰা সম্পন্ন হোৱাৰ ক্ষেত্রত অপাদান কাৰক নির্দেশ কৰিবলৈ {-h ki} ৰূপ যোগ কৰা হয়। উদাহৰণ—

{-h ki} কাৰকবাচক ৰূপৰ প্রয়োগ ঃ

inka-h ki lat. 'সেইটোৰপৰা লোৱা।'
সেইটো কাৰ.ৰ্ধ. ল্ কাল.ৰ্ধ.
int -h ki lat. 'সৌৱাৰপৰা লোৱা।'
সৌৱা কাৰ.ৰ্ধ. ল্ কাল.ৰ্ধ.
÷ zir -h ki aÔadu. 'মই জিৰ'ৰপৰা আহিছোঁ।'
মই জিৰ' কাৰ.ৰ্ধ. আহ কাল.ৰ্ধ.

২.৬ সম্বন্ধপদ (Genitive) ঃ

আপাতানি ভাষাৰ বাক্যত এটা পদৰ লগত পদৰ অর্থাৎ এটা নামপদৰ লগত আন এটা নাম পদৰ ইটো-সিটোৰ অধিকাৰৰ ভিতৰত বা ইটো-সিটোৰ অংগ বা অংশ সম্বন্ধ

স্থাপন কৰিবলৈ সম্বন্ধ পদ ব্যৱহাৰ কৰা হয়। আপাতানি ভাষাত সম্বন্ধপদ বুজাবলৈ {-ka/-k¹} ৰূপ ব্যৱহাৰ কৰা হয়। উদাহৰণস্বৰূপে—

{-ka} কাৰকবাচক ৰূপৰ প্ৰয়োগ ঃ

÷ nu-ka lemba. 'আমাৰ গাঁও।'
আমি কাৰ.ৰূ গাঁও

÷ -ka p ta. 'মোৰ কিতাপ।'
মই কাৰ.ৰূ কিতাপ

bize-ka ude. 'বাঁহৰ ঘৰ।'
বাঁহ কাৰ.ৰূ. ঘৰ

{-k¹} কাৰকবাচক ৰূপৰ প্ৰয়োগ ঃ

tama-k¹ h anji d . 'তামাৰ দুটা সন্তান আছে।'
তামা কাৰ.ৰূ. দুটা সন্তান অৱ.ৰূ.

jari-k¹ ude pe÷nji d . 'য়াৰিৰ দুখন ঘৰ আছে।'
য়াৰি কাৰ.ৰূ. ঘৰ দুখন অৱ.ৰূ.

take-k¹ s¹t¹ d rnji da. 'তাকেৰ দুটা হাতী আছে।'
তাকে কাৰ.ৰূ. হাতী দুটা অৱ.ৰূ.

২.৭ অধিকৰণ (Locative Case) ঃ

আপাতানি ভাষাত কৰ্তা আৰু কৰ্মই যাৰ ওপৰত ক্ৰিয়া কৰে অৰ্থাৎ স্থান, কাল, পাত্ৰ যিহৰ আধাৰত ক্ৰিয়া সম্পাদনা কৰা হয় তাক বুজাবলৈ অধিকৰণ কাৰকসূচক ৰূপ ব্যৱহাৰ কৰা হয়। আপাতানি ভাষাৰ অধিকৰণ কাৰক সূচাবলৈ{-h} কাৰকসূচক ৰূপ যোগ কৰা হয়। উদাহৰণস্বৰূপে—

{-h } কাৰকবাচক ৰূপৰ প্ৰয়োগ ঃ

m ude-h dudu. 'তেওঁ ঘৰত থাকিল।'
তেওঁ ঘৰ কাৰ.ৰূ. থাক্ কাল.ৰূ.

m ka m re-h s¹ne. 'তেওঁৰ হাবিত মৃত্যু হ'ল।'
তেওঁ হাবি কাৰ.ৰূ. মৃত্যু কাল.ৰূ.

m turla-h t t¹b¹ne. 'তেওঁ মগত মদ ঢালি দিলে।'
তেওঁ মগ কাৰ.ৰূ. মদ ঢালি দে কাল.ৰূ.

আপাতানি ভাষাত অধিকৰণ কাৰকৰ স্থান-কাল-পাত্ৰৰ ভিতৰৰ অৱস্থানৰ কথা প্ৰকাশ কৰিবলৈ নামপদৰ পাছত{ura}ৰূপ যোগ কৰি তাৰপাছত অধিকৰণ কাৰকসূচক{-h }ৰূপৰ প্ৰয়োগ কৰা হয়। উদাহৰণ —

m ude-k¹ ura-h du. 'তেওঁ ঘৰৰ ভিতৰত আছে।'
তেওঁ ঘৰ কাৰ.ৰূ. ভিতৰ কাৰ.ৰূ. আছে

nesuÕ-k¹ ura-h em du.'ভঁৰালৰ ভিতৰত ধান আছে।'
ভঁৰাল কাৰ.ৰূ. ভিতৰ কাৰ.ৰূ.ধান আছে

তেনেদৰে কোনো স্থান বাহিৰত বুজাবলৈ নামপদৰ পাছত{ag}ৰূপ যোগ কৰি তাৰপাছত অধিকৰণ কাৰকসূচক{-h } ৰূপৰ প্ৰয়োগ কৰা হয়। উদাহৰণ—

m lu lemba-k¹ ag -h s la d.
'তেওঁলোকে গাঁৱৰ বাহিৰত খেলিছে।'
তেওঁলোক-Ö গাঁও কাৰ.ৰূ.বাহিৰ কাৰ.ৰূ.খেলা কাল.ৰূ.

ude-k¹ ag -h du t . 'ঘৰৰ বাহিৰত বহ।'
ঘৰৰ বাহিৰ কাৰ.ৰূ. বহ্ আদে.ৰূ.

ঠিক তেনেদৰে অধিকৰণ কাৰকত স্থান বুজাবলৈ ক্ৰমে, {aka~} (তলত), {hataÖ}(আগত), {k¹l¹~}(পাছত) আদি ৰূপ নামপদৰ পাছত সংযোগ কৰি তাৰ পাছত অধিকৰণ কাৰকসূচক{-h }ৰূপৰ প্ৰয়োগ কৰা হয়। উদাহৰণ—

ude-k¹ aka~-h alji dud . 'ঘৰৰ তলত গাহৰি থাকে।'
ঘৰ কাৰ.ৰূ. তল কাৰ.ৰূ. গাহৰি থকা অৱ.ৰূ.

n hataÖ-h in~tsij . 'তুমি আগত নাযাবা।'
তুমি আগত কাৰ.ৰূ.যা নঞ.ৰূ.

n k¹l¹~ h -pa in~tsi. 'তুমি পাছলৈ যাবা।'
তুমি পাছত কাৰ.ৰূ. যা কাল.ৰূ.

৩.০ উপসংহাৰ ঃ

আপাতানিসকল অৰুণাচল প্ৰদেশৰ এক আদিম জনগোষ্ঠী। ভাষাবিদ গ্ৰীয়াৰ্চন, প'ল কে. বেনেডিক্ট, জেমছ মেটিছফ, ডেভিদ ব্ৰেডলি, টিয়ান্শ্বিন্ জেকবচন চুন, ৰবাৰ্ট চাফিৰ, উপেন্দ্ৰনাথ গোস্বামী, ভীমকান্ত বৰুৱা আদি লোকসকলে আগবঢ়োৱা মন্তব্যৰ আধাৰত আৰু আমাৰ ক্ষেত্ৰভিত্তিক অধ্যয়নৰ অন্ততঃ আপাতানি ভাষাৰ মূল সম্পৰ্কে ক'ব পাৰি যে, আপাতানি ভাষাক চীন-তিব্বতীয় ভাষা পৰিয়ালৰ তিব্বতবৰ্মী শাখাৰ 'উত্তৰ-অসম' বা 'তানি' উপশাখাত সাঙুৰিব পাৰি। বৰ্তমান 'তানি' ভাষা হিচাপে প্ৰতিষ্ঠা লাভ কৰা চীন-তিব্বতীয় ভাষা পৰিয়ালে মিচিং, গাল', নিচি, আপাতানি, আদি, হিলমিৰি, তাগিন, অকা, মিচিমি, পাদাম, মিঞং আদি বিভিন্ন ভাষাবোৰক সামৰি লয়। এই জনগোষ্ঠীয় লোকসকলে 'আবুতানি' বা 'আবতানি' নামে এজন পূৰ্বপুৰুষৰ পৰা তেওঁলোকৰ জন্ম বুলি বিশ্বাস কৰে।

UNESCO-ৰ প্ৰতিবেদন অনুসৰি সম্প্ৰতি আপাতানি ভাষাৰ ভাষিক স্থিতি সংকটাপন্ন। বৰ্তমান ভাষাটো এই প্ৰজন্মৰ লোকসকলে সুন্দৰভাৱে ব্যৱহাৰ কৰে যদিও নৱ প্ৰজন্মৰ মাজত ক্ৰমে ভাষাটোৰ ব্যৱহাৰ কমি আহিছে। বিশেষকৈ

আপাতানি লোকসকলৰ লিপিৰ অভাৱ, বহুভাষিক পৰিস্থিতি, বিজ্ঞানসন্মত চিন্তা-চর্চাৰ অভাৱ, খ্ৰীষ্টান ধর্মৰ প্ৰভাৱ আৰু ভাষিক সচেতনতাৰ অভাৱে ভাষাটোক সংকটাপন্ন অৱস্থালৈ গতি কৰিছে। গতিকে এনে সংকটাপন্ন ভাষাৰ ভাষাতাত্ত্বিক বিশেষত্বসমূহ অধ্যয়নৰ লগতে সংৰক্ষণৰ যথেষ্ট গুৰুত্ব আছে। সেয়ে আমাৰ এই অধ্যয়নে আপাতানি ভাষাৰ ৰূপতত্ত্বৰ অন্তর্গত কাৰকৰ বৈশিষ্ট্যসমূহ কিছু হ'লেও উদ্‌ঘাটন কৰিছে বুলি নিশ্চয়কৈ ক'ব পাৰি।

৩.১ প্ৰাপ্ত সিদ্ধান্ত ঃ

☞ আপাতানি ভাষাত সম্বন্ধপদকে ধৰি সাত প্ৰকাৰ কাৰকৰ বিভিন্ন কাৰকবাচক ৰূপ পোৱা যায়। সেইকেইটা হ'ল— কর্তা {-Ö, -si}, কর্ম {-Ö, -mi}, কৰণ {-l }, নিমিত্ত {-pa/-mi}, অপাদান {-k ki, -s ki, -h ki}, সম্বন্ধপদ {-ka/k[1]} আৰু অধিকৰণ {-h }। কর্ম আৰু নিমিত্ত কাৰকত সম কাৰকসূচক ৰূপ ব্যৱহাৰ হয়।

☞আপাতানি ভাষাত আপাদান কাৰকৰ কাৰকসূচক ৰূপ তিনিটা পোৱা যায়। সেইকেইটা হেছে— {-k ki, -s ki আৰু -h ki}। সাধাৰণভাৱে কোনো এটা উৎসৰ নির্দেশ কৰিবলৈ {-k ki} ৰূপ যোগ কৰা হয়। নিকটস্থ উৎসৰ পৰা সম্পন্ন হোৱাৰ ক্ষেত্ৰত অপাদান কাৰক নির্দেশ কৰিবলৈ {-s ki} ৰূপ যোগ কৰা হয়। দূৰৱর্তী উৎসৰ পৰা সম্পন্ন হোৱাৰ ক্ষেত্ৰত অপাদান কাৰক নির্দেশ কৰিবলৈ {-h ki} ৰূপ যোগ কৰা হয়। ❑

পাদটীকা ঃ

১. https://lowersubansiri.nic.in/, 23.10.2023, 9.12am.
২ . https://www. censusindia.gov.in, 25.08.2023, 10.15pm.
৩ . C.V. F. Haimendorf, *The Apa Tanis and Their Neighbours,* p. 45
৪. T. Kani, *The Advancing Apatanis of Arunachal Pardesh,* p. 8
৫. https://www.ethnologue.com/language/apt/,11.03.2023,8.5pm.
৬. T.P.Abraham. *Apatani Grammar,* p. 51

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

Abraham, P. T. *Apatani Grammar*.Mysore: CIIL,1985. Print.
- -. *Apatani-English-Hindi dictionary*. Mysore: CIIL,1987. Print.
Bouchery, Pascal. *Dictionary of the Apatani Language*. France: University of Poitiers, 2016. Print.
Donyi, Habung. *Anglo-Apatani Dictionary*. Arunachal Pradesh: Frontier Publishers and Distributors, 2008. Print.
Fûrer-Haimendorf, Christoph V. *The Apa Tanis and their Neighbors*. 1st ed., published by Free Press of Glencoe, London, 1962.
Kani, Takhe. *English-Apatani Dictionary*. Arunachal Pradesh: Frontier Publishers and Distributors,1995. Print.
- -. *The Apatani Grammar*. Arunachal Pradesh: Frontier Publishers and Distributors,1994. Print.
- - . *The Advancing Apatanis of Arunachal Pradesh*. 1st ed., published by Purbadesh Mudran Rehabari, Guwahati, 1993.
Sai, Tasso. *A Guide to the Apatani Language*.Arunachal Pradesh: Director of Research, Arunachal Pradesh, 1983. Print.
Simon, I. M. *An introduction to Apatani*. Shillong: Director of Information and Public Relations, Govt. of Arunachal Pradesh,1972. Print.

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

বিষ্ণুপ্রসাদ ৰাভাৰ ‘মিছিং কনেঙ্’ উপন্যাসত লোক পৰিৱেশ্য কলাৰ প্রসংগ

ৰিচা চুতিআ
গৱেষক, লোকসংস্কৃতি গৱেষণা বিভাগ, গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
৯৮৫৯৮- ৪৪৮৩৭
richaps91@gmail.com

ড° দীপামণি বৰুৱা দাস
সহযোগী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ, গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
৭৬৩৬০-১৭২১১
rakhimoni36@gmail.com

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

অসমীয়া সাহিত্যৰ ইতিহাসৰ সুদীর্ঘ পৰিক্রমাত বিভিন্নজনে নিজা নিজা সৃষ্টিৰে অসমীয়া সাহিত্যক সু-সমৃদ্ধ কৰি আহিছে। সেইসকলৰ ভিতৰত বিষ্ণুপ্রসাদ ৰাভা অন্যতম। সংস্কৃতিসম্পন্ন ব্যক্তিত্বৰ অধিকাৰী পুৰুষ বিষ্ণুপ্রসাদ ৰাভাৰ প্রতিভা বহু বর্ণময়। ৰাভাই কর্মময় জীৱনৰ বিভিন্ন বিষয়বস্তুক লৈ বিভিন্ন ধৰণৰ সাহিত্য সৃষ্টি কৰিছে। তাৰ ভিতৰত উপন্যাস অন্যতম। ‘মিছিং কনেঙ্’ বিষ্ণুপ্রসাদ ৰাভাৰ দ্বাৰা ৰচিত এখন উপন্যাস।

লোকসংস্কৃতিৰ অন্তর্গত গুৰুত্বপূর্ণ বিভাগ হৈছে লোক পৰিৱেশ্য কলা। নৃত্য-নাট্য-গীত-বাদ্যৰ সমন্বয়ত পৰিৱেশ্য কলাৰ জন্ম। পৰিৱেশ্য কলাই পৰিৱেশিত লোকৰ দ্বাৰা জনসমাজত লোকবিশ্বাস, লোককথা আদিৰ জৰিয়তে লোকজীৱনত খোপনি পুতি লয়।

পৰম্পৰা আৰু ঐতিহ্যৰ প্রতি শ্রদ্ধাশীল বিষ্ণুপ্রসাদ ৰাভাই আধুনিক অসমীয়া সাহিত্যৰ সংস্কৃতিক সমৃদ্ধি কৰিবলৈ যাওঁতে লোকসংস্কৃতিৰ বিভিন্ন প্রসংগই ঠাই পাইছে। তেখেতৰ মিছিং কনেঙ্ উপন্যাসখন মিছিং জনগোষ্ঠীৰ আধাৰত ৰচিত এখন সামাজিক উপন্যাস। উপন্যাসখনত লোকসংস্কৃতিৰ অন্যতম বিভাগ লোকপৰিৱেশ্য কলাৰ সমল বিদ্যমান। উপন্যাসখনত মিছিং সমাজত প্রচলিত পৰম্পৰাগত আলি-আয়ে-লুগাং, পঃৰাগ উৎসৱ, নিচুকনি গীত, গুমৰাগ নৃত্য, অইনিতমৰ লগত বিভিন্ন লোকবাদ্যৰ প্রয়োগ কৰি পৰম্পৰা এটা ধৰি ৰখাৰ প্রয়াসৰ কথা বর্ণনা কৰা হৈছে। তাকে মুখ্য আৰু গৌণ তথ্যৰ আধাৰত বিচাৰ-বিশ্লেষণ আগবঢ়াবলৈ যত্ন কৰা হৈছে।

বীজ শব্দ ঃ লোক পৰিৱেশ্য কলা, সমাজ, সংস্কৃতি, জীৱন।

০.০০ অৱতৰণিকা ঃ

০.০১ বিষয়ৰ পৰিচয় ঃ অসম আৰু অসমীয়াৰ হকে যি কেইগৰাকী প্রতিভাশীল পুৰুষে নিজৰ কর্মৰাজিৰে অসমীয়া জনমানসত মহান ব্যক্তিৰূপে পৰিচয় লাভ কৰিছে সেইসকলৰ ভিতৰত বিষ্ণুপ্রসাদ ৰাভাৰ নাম সততে স্মৰণীয়। নিজ প্রতিভা আৰু সাধনাৰ বলেৰে আত্মপ্রতিষ্ঠা লভা বিষ্ণুপ্রসাদ ৰাভাৰ কৃষ্টি, সংস্কৃতি, ঐতিহ্যৰ প্রতি থকা অনুৰাগ তেওঁৰ সৃষ্টিকর্মৰ মাজত মূর্তিমান হৈ আছে। অলেখ প্রতিভা নিহিত হৈ থকা বিষ্ণুপ্রসাদ ৰাভা আছিল ক্রমে কবি, গীতিকাৰ, গায়ক, সুৰকাৰ, অভিনেতা, নাট-পৰিচালক, বাদক, চিত্রশিল্পী, নৃত্যবিদ, নর্তক, খেলুৰে, ব্যৱসায়ী, গৱেষক, ভাষাবিদ, সমাজ সংস্কাৰক,

ৰাজনীতিবিদ হোৱাৰ উপৰি হোজা কৃষক বনুৱাৰ প্ৰকৃত বন্ধু।

বিষ্ণুপ্ৰসাদ ৰাভাই কলিকতাত অধ্যয়ন কৰি থকা অৱস্থাতেই সংবাদ সেৱাৰ যোগেদি সাহিত্য চৰ্চাত মনোনিৱেশ কৰে। পৰৱৰ্তী সময়ত সাহিত্যিকৰূপে পৰিচিতি লভা ৰাভাৰ গীত, কবিতা, গল্প, উপন্যাসত জনজাতীয় জীৱন আৰু সংস্কৃতিৰ সমল বহু পৰিমাণে সিচঁৰতি হৈ আছে।

সমাজ, সাহিত্য আৰু সংস্কৃতিৰ ভিতৰত এৰাব নোৱৰা সম্বন্ধ। কোনো সাহিত্যিকেই তেওঁৰ সমসাময়িক সমাজৰ প্ৰভাৱৰ পৰা আঁতৰি থাকিব নোৱাৰে। যিহেতু সংস্কৃতি হ'ল এটা জাতিৰ জীৱনৰ ধাৰা আৰু এটা ক্ৰমোন্নতিশীল জাতিৰ জাতীয় সম্পদ হ'ল ভাষা আৰু সাহিত্য। সেইগতিকে এগৰাকী সাহিত্যিকৰ সৃষ্টিকৰ্মত সংস্কৃতিৰ প্ৰতিফলন ঘটাটো অত্যন্ত স্বাভাৱিক।

আধুনিক অসমীয়া সাহিত্যৰ ৰূপ আৰু ৰীতি পাশ্চাত্যধৰ্মী হ'লেও ইয়াৰ ভিতৰতে অসমৰ সাহিত্য নিজা মাটিৰ ৰসেৰে পুষ্ট হৈ থলুৱা ধ্যান-ধাৰণাৰে গঢ় লৈ উঠিছে। সম্প্ৰতি অসমীয়া সাহিত্যই এক সু-সমৃদ্ধ ৰূপ লাভ কৰিছে। দেখা যায় উপন্যাসৰ মূল ভিত্তি নাগৰিক সভ্যতা আৰু নাগৰিক জীৱন হ'লেও অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্য লোকসাংস্কৃতিক জীৱনৰ পৰা কেতিয়াও আঁতৰি থাকিব পৰা নাই। লোকসাংস্কৃতিক উপাদান বুলি ক'লে উৎসৱ-পাৰ্বন, সাজ-সজ্জা, ৰীতি-নীতি, পৰম্পৰাগত গীত-মাত, সাঁথৰ, প্ৰবচন, সাধুকথা, লোকাচাৰ, ভৌতিক সংস্কৃতি, লোক পৰিৱেশ্য কলা আদিবোৰক বুজায়। এই উপাদানসমূহে আধুনিক সাহিত্যৰ বিভিন্ন বিভাগতো প্ৰসংগ অনুসৰি ঠাই পাই আহিছে। উপন্যাসৰ ক্ষেত্ৰখন যিহেতু বিস্তৃত, সেয়ে উপন্যাসৰ কাহিনীৰ প্ৰসংগত লোকসংস্কৃতিৰ বিভিন্ন দিশৰ প্ৰতিফলন বাৰুকৈয়ে ঘটে।

বিষ্ণুপ্ৰসাদ ৰাভাৰ 'মিছিং কনেঙ্' এখন লেখতল'বলগীয়া উপন্যাস। উপন্যাসখন মিছিং জনগোষ্ঠীৰ আধাৰত ৰচিত। উপন্যাসখনত লোকসংস্কৃতিৰ অন্যতম বিভাগ লোকপৰিৱেশ্য কলাৰ বিভিন্ন সমলৰ প্ৰয়োগ লক্ষ্য কৰা যায়। সেয়ে বিষ্ণুপ্ৰসাদ ৰাভাৰ 'মিছিং কনেঙ্' উপন্যাসত লোক পৰিৱেশ্য কলাৰ প্ৰসংগ বিষয়টো অধ্যয়নৰ বাবে গ্ৰহণ কৰা হৈছে।

১.০১ বিষয় অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য আৰু গুৰুত্ব ঃ

বিষ্ণুপ্ৰসাদ ৰাভাৰ সাহিত্যৰ অন্যান্য দিশৰ তুলনাত উপন্যাসৰ সংখ্যা তেনেই তাকৰ। গীত-মাত-নাটক আদি সম্পৰ্কে বিভিন্ন আলোচনা হোৱা দেখা গৈছে। উপন্যাসখনৰ বিষয়ে সামগ্ৰিক আলোচনা হোৱা পৰিলক্ষিত হৈছে। আমাৰ আলোচনাত উপন্যাসখনত পৰিৱেশ্য কলাৰ বিভিন্ন প্ৰসংগ ক'ত, কেনেদৰে উপস্থাপিত হৈছে সেয়া অধ্যয়ন কৰা হ'ব।

১.০২ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

সাহিত্যিকসকলে তেওঁলোকৰ নিৰ্মিতিত মানৰ সংস্কৃতিৰ বিভিন্ন দিশ তুলি ধৰা দেখা যায়। বিষ্ণুপ্ৰসাদ ৰাভাৰ 'মিছিং কনেঙ্' উপন্যাসৰ মাজত পৰিব্যপ্ত হৈ থকা পৰিৱেশ্য প্ৰসংগৰ দিশটোত গুৰুত্ব আৰোপ কৰা হৈছে। কিছু গীত-মাতৰ উল্লেখ কৰা হৈছে। গীত-নৃত্য আদি কলাই মানুহৰ সাংস্কৃতিক প্ৰগতিত অৰিহণা যোগাই আহিছে। বিষয়ৰ পৰিধিলৈ লক্ষ্য ৰাখি কেৱল উপন্যাসত প্ৰতিফলিত হোৱা লোক পৰিৱেশ্য কলাকহে অধ্যয়নৰ পৰিসৰৰ আওতালৈ অন্য হৈছে।

১.০৩ বিষয় অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

বিষ্ণুপ্ৰসাদ ৰাভাৰ 'মিছিং কনেঙ্' শীৰ্ষক গৱেষণীয় বিষয়টো আলোচনা কৰোঁতে বৰ্ণনাত্মক আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি গ্ৰহণ কৰা হৈছে। পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰাৰ সময়ত এনেদৰে আগবঢ়া হৈছে —

ক) সমল সংগ্ৰহ ঃ আলোচনাৰ কাৰণে মুখ্য সমল হিচাপে বিষ্ণুপ্ৰসাদ ৰাভাৰ মিছিং কনেঙ্ উপন্যাসখন লোৱা হৈছে।

খ) পৰ্যবেক্ষণ আৰু বিশ্লেষণ ঃ উপন্যাসখনত প্ৰাপ্ত পৰিৱেশ্য কলাসমূহ সূক্ষ্মভাৱে নিৰীক্ষণ কৰি বিশ্লেষণৰ ক্ষেত্ৰত প্ৰাসংগিক গ্ৰন্থ অধ্যয়ন কৰি সমগ্ৰ বিষয়টোক নিজস্ব দৃষ্টিভংগীৰে উপস্থাপন কৰিবলৈ চেষ্টা কৰা হৈছে।

গ) সিদ্ধান্ত গ্ৰহণ ঃ শেষত প্ৰাপ্তফলৰ ভিত্তিত এক নিৰ্দ্দিষ্ট সিদ্ধান্তত আহিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

২.০০ অধ্যয়নৰ মূল আলোচনা ঃ

২.০১ মিছিং কনেঙ্ উপন্যাস ঃ লোক পৰিৱেশ্য কলাৰ প্ৰসংগ

লোক পৰিৱেশ্য কলা লোকসংস্কৃতিৰ অবিচ্ছেদ্য অংগ। সংগীত-নৃত্য-নাট্য এই ত্ৰি-ধাৰাৰ সমাহাৰত পৰিৱেশ্য কলা সম্পূৰ্ণ। ই লোকায়ত সমাজ জীৱনৰ সৃষ্টি। লোক পৰিৱেশ্য কলা এটা জাতি বা এখন সমাজৰ আপুৰুগীয়া সম্পদ। সেয়ে লোক পৰিৱেশ্য কলাই লোকজীৱনৰ সুখ-দুখ, হাঁহি-কান্দোন, চিন্তা-ভাৱনা আদি প্ৰকাশত বিশেষ ধৰণে সহায় কৰে।

'মিছিং কনেঙ্' বিষ্ণুপ্রসাদ ৰাভাই ৰচনা কৰা উপন্যাস। উপন্যাসখন মিচিং জনসমাজৰ পটভূমিক লৈ লিখা। উপন্যাসখনত আধাৰ স্বৰূপে আছে এটা প্রেমৰ কাহিনী। ডেকা কুমং আৰু গাভৰু পাৰছলীৰ পাৰস্পৰিক প্রেমৰ আদর্শেৰে উপন্যাসৰ কাহিনীভাগ গঠিত হৈছে।

'মিছিং কনেঙ্'ত বিষ্ণুপ্রসাদ ৰাভাই মিছিং সমাজৰ সামাজিক-সাংস্কৃতিক দিশটো পৰিস্ফুট হোৱাৰ উপৰি ৰাজনৈতিক দিশকো সামৰি লৈছে। মিচিংসকলৰ স্বকীয়তাৰ বাহক সাজ-পাৰ, আ-অলংকাৰ, নৃত্য-গীত, উৎসৱ-পার্বনৰ উল্লেখে মিচিং সমাজৰ সাংস্কৃতিক দিশটোক ওচৰৰ পৰা দৃষ্টিপাত কৰাত সহায় কৰিছে। 'মিচিং কনেঙ্'ত সোৱণশিৰী নৈৰ পাৰৰ মিচিং সমাজৰ কথিত ভাষা, সাংস্কৃতিক আহিলাৰ নামোল্লেখ, উৎসৱ-পার্বণ, গীত-মাতৰো সুকীয়া বৈশিষ্ট্য প্রতিফলিত হৈছে।

মিচিং লোকসমাজক আধাৰ হিচাপে লৈ ৰচনা কৰা 'মিছিং কনেঙ্' উপন্যাসত লোকজীৱনৰ অন্যতম দিশ লোক পৰিৱেশ্য কলাৰ সুন্দৰ প্রতিফলন ঘটিছে। উপন্যাসখনত মিচিং সমাজত প্রচলিত পৰম্পৰাগত আলি-আয়ে-লৃগাং, পঃৰাগ উৎসৱ, নিচুকনি গীত, গুমৰাগ নৃত্য, অইনিতম আদিৰ প্রয়োগে অমল স্বাক্ষৰ বহন কৰিছে।

অসমীয়া লোকজীৱনত নিচুকনি গীতে এক বিশেষ স্থান দখন কৰি আহিছে। নিচুকনি গীতক 'ধাইনাম' বুলিও কোৱা হয়। প্রতিগৰাকী মাকে নিজৰ কেঁচুৱাটোক শুৱাবলৈ অথবা কন্দা বন্ধ কৰিবলৈ মৰমসনা মাতেৰে নাম গায়। সেই মৰমসনা মাতৰ গীত শুনি কান্দি থকা কেঁচুৱাটো টোপনি যাবলৈ বাধ্য হয়।

অসমত বসতি কৰা মিচিং জনগোষ্ঠীৰ লোকসকলৰ মাজতো নিচুকনি গীতৰ প্রচলন আছে। বিষ্ণুপ্রসাদ ৰাভাই 'মিচিং কনেঙ্' উপন্যাসত নায়িকা পাৰছলীয়ে ককায়েকৰ কেঁচুৱাটোক 'ৰিবি' চাদৰখনেৰে মেৰিয়াই বান্ধি বোকোচাত লয় আৰু ঘৰৰ আগফালৰ বাৰাণ্ডাহেন 'টুংগং' চাঙত মৌসনা মাতেৰে গুণগুণাই কেঁচুৱাটোক জোকাৰি জোকাৰি গায়—

'ওমেওৱা কাপ্য়কা।
পেক-কউ-আৱে বাদ্মাদা
বাদ্য়েমিল কাপ্লাঙ্কা দেই।'

ভাবার্থ ঃ "সোণটি ঐহু নেকান্দিবা।
কপোতীয়ে উমনি লৈছে, পোৱালি ফুকা নাই
ওলালেহে কান্দিবা।[১]..."

অসম এখন কৃষিপ্রধান ৰাজ্য। অতীজৰে পৰা অসমৰ কৃষিজীৱী লোকসকলে কৃষিকর্মৰ বিভিন্ন স্তৰত বিভিন্ন উৎসৱ-পার্বণ পালন কৰি আহিছে। উৎসৱ-পার্বন লোকজীৱনৰ এৰাব নোৱৰা অংগ। মিচিংসকল কৃষিজীৱী লোক। 'মিছিং কনেঙ্' উপন্যাসখনত মিচিংসকলৰ হিয়াৰ আমঠু আলি-আয়ে-লৃগাং আৰু পঃৰাগ উৎসৱৰ এটি বর্ণনা বিশদভাৱে দাঙি ধৰিছে—

"আলিয়াই লৃগাং" সেইদিনা; গোটেই গাঁওখনতেই উছৱমুখৰ হৈ উখল-মাখল লাগে পুৱতি নিশাৱে পৰা।[২]...

"আলি" মানে আলু শিপা, য়াই মানে গুটি বা ফল, 'লৃগাং' মানে সিঁচা পোতা আৰম্ভ কৰা। 'আলিয়াই লৃগাং' মানে আলু পুতি গুটি সিঁচি খেতি আৰম্ভ কৰা। সেইদিনাৰ পৰা খেতি আৰম্ভ।"

মিচিংসকলে আলি-আয়ে-লৃগাঙৰ দিনা পুৱাতে ঘৰৰ গৃহস্থই লৃগাঙৰ প্রয়োজনীয় সামগ্রী যেনে— হাতত দা, কোৰ, আহুধানৰ বীজ লৈ পথাৰলৈ আগবাঢ়ে। এইবোৰ কৰোঁতে সদায় অতি ভক্তি সহকাৰে পালন কৰে যাতে খেতিকর্মত কোনো বিঘিনি নঘটে। উপন্যাসত আছে—

"গাঁওবুঢ়াই নিজৰ পথাৰলৈ গৈ পূব চুকত এহাত দীঘল এহাত বহল এবর্গহাত মাটি কোৰেৰে খান্দে, মাটিৰ চপৰাবোৰ ভাঙি ফুৰফুৰীয়া কৰে। পূব চুকত ফুল ছিগা পিৰ' কাঁহিবনৰ আগডাল ভালকৈ পোতে; গুঁজে, সেই চহা মাটিডৰাত আহুধানৰ বিধান কঠীয়া ধান জনাই সেৱা চেদী (বেদী) মেলোঁ'— পুৰুষ প্রকৃতি, 'কার্ত্তাং-কার্চিংক্' দেৱ-দেৱী, দঞি-পল্'— বেলি, জোন, 'ৰোগীজী মৰাং' পোক-পৰুৱা সকলোকে সাক্ষী কৰি সিঁচি দিয়ে আৰু লগে লগে প্রার্থনা কৰে।"

"চিল' আৰু চিন্দা চেদী-বাবু, মেল'-নানে
কার্চিং কার্ত্তাক্, দৎি-পল',
ৰোগ্জী মেৰাং নলো আপ্পিঙে
তাদ্দাক্ কালাঙ্কা?
চিল' আলি আয়ে লিগত দুনেকে
ৰুজে পাতা ৰেলামতেইকা
ৰুজেমা পাতা ৰেলা মায়েইকা।"

অর্থাৎ, আজি 'চেদী' পিতৃ, মেল। মাতৃ, কার্চিং কার্ত্তাক, বেলি, জোন, কীট-পতঙ্গ। তোমালোক সকলোৱে শুনিচা, দেখিছা আজি আলুগুটি সিঁচা আৰম্ভ কৰিছোঁ। ভালবোৰ আহক, বেয়াবোৰ গুচি যাওক।[৩]

পাঁচদিনীয়াকৈ চলা আলি-আয়ে-লৃগাং উৎসৱত মিচিংসকলে খোৱা-বোৱা ধুমধামেৰে কৰাৰ লগতে ৰং-ৰহইচত মতলীয়া হৈ অইনিতম গায়, গুমৰাগ নৃত্য কৰে।

বিষ্ণুপ্রসাদ ৰাভাই 'মিছিং কনেঙ্' উপন্যাসত মিচিং সমাজৰ পৰম্পৰাগত আলি-আয়ে-লৃগাং উৎসৱৰ লগতে গুমৰাগ নৃত্য, অইনিতমৰ বিষয়ে সুন্দৰ উপস্থাপন কৰিছে—

"জাউৰীয়ে জাউৰীয়ে 'অইনিতম' চেনেহৰ নাম চৌপাশে মৰম-চেনেহ ঢালি বিয়পি পৰে। দীঘলীয়াকৈ লেহেতীয়াই কৰুণ ৰস নিঙাৰি ৰং ছেওত পেলাই উলাহৰ সুৰ বিৰিঙি উঠে। "গুম্ৰাগ গুমৰাগ্' কৈ গিৰ গিৰাই 'দুমদুম'— ঢোল বাজি উঠে। তালৰ তালে তালে ছাবে ছাবে কান্ধৰ সমানে দুয়োফালে কিলাকুটি মেলি হাত দুখন উপৰমুৱাকৈ ৰাখি হাতৰ মুঠি মেলি, মাজে মাজে নমাই দুয়োপাশে ইফাল-সিফালকৈ ওলোমাই নচুৱাই লাৱনি দেহাত লহৰ তুলি, বিধ বিধ ৰকম তৰহ তৰহ লাচ, ঠাঁচৰ সাঁচ কাটি ভঙী তুলি নাচে সেই ৰংদৈ ৰং বাউলী মিছিং গাভৰুসকলে; কঠীয়া তোলা, ভূঁই ৰোৱা, ধান দোৱা, সূতা কটা, তাঁত বটা, কাপোৰ বোৱা কিমান ধৰণৰ যে নাচ।[৪]"

গোৱাত পাকৈত, নাচত পাৰ্গত পাৰছলীয়ে আৱেগ ঢালি সুৱদী সুৰত অইনিতম গায় লেহেতীয়াকৈ,

তম্মীলা তাৎগেলা আওৱে মেঙা চুমেকুম্
চ'লি চানান প-দ-পে লেনে মিকছে দিদুবং
দিগ্নে মিৰ্ছি তায়লয়কম কাত্তেম্ মৰংকা
ঙক্কে দয়িং তাৎপেমি ল-ঙক্কে ৰুইপে গিলাংকা

অর্থাৎ— "তোমাৰ ইননি-বিননি শুনি নিজৰ বিষয়ে ভাবি-গুণি গাঁঠি চিন্তি থাকোঁতে ধাৰাসাৰ বৰষুণৰ দৰে মই জোলোকে জোলোকে কেঁচা চকুলো টুকিছোঁ... অচিন জীউহু তুমি জ্বলা জুইত ঘিউ নাঢালি মোৰ দুখৰ কথা জানিবলৈ হেঁপাহ কৰিছা যদি মোৰ কাষ চাপাচোন[৫]..."

এনেদৰেই পাৰছলীয়ে ঐনিতম গাই মিলন আৰু বিৰহ প্রকাশ কৰিছে।

সাধাৰণতে মিচিংসকলে নৈৰ পাৰত চাং ঘৰ সাজি গাঁও পাতি বসতি কৰে। উপন্যাসখনত ঘৃণাসুঁতি আৰু সোৱণশিৰি নৈৰ পাৰত বসতি কৰা গাঁও দুখনে স্থান পাইছে। নৈৰ সিপাৰৰ পৰা মিচিংসকলৰ ঐনিতমৰ সুৰ ভাঁহি আহিছে। ইয়ে কাহিনী বিন্যাসত বাৰুকৈয়ে সহায়ক হৈছে।

ৰিণিকি ৰিণিকি কোনোবা গাভৰুৰ 'অয়্-নিতম ভাঁহি আহে— দূৰ দূৰণিৰ পৰা—

"এ, লে" পল 'লিচাদুং বেলে' দঞে অৱাদুং
চয়ং পাক্দম পাকদুব' আচিনাঙে অদুবং।"...

অর্থাৎ, দূৰ-দূৰণি, পূবফালে জোনায়ে ৰঙচুৱা ৰহণ সানিছে দূৰ-দূৰণিত পশ্চিমে বেলিয়ে লহিয়াইছে, কুলি-কেতেকীয়ে ইনাই-বিনাই গাইছে আৰু সেই ইননি-বিননিয়ে কাৰোবাৰ হিয়াত মিলনৰ হাবিলাষ জগাইছে।[৬]"...

ঐনিতম ফাঁকিৰ কোনোবা গাভৰুৰ আপোনজনক পোৱাৰ হাবিয়াসৰ লগতে প্রকৃতিৰ মনোমোহা চিত্রও প্রকাশিত হৈছে।

পঃৰাগ মিচিং জনগোষ্ঠীসকলৰ কৃষিভিত্তিক উৎসৱ। সাধাৰণতে খেতি চপোৱাৰ পিছত উদ্যাপন কৰা এই উৎসৱ মিচিংসকলৰ অতি মৰমৰ, অতি চেনেহৰ পৰৱ। 'মিছিং কনেঙ্'ত ঔপন্যাসিকে পঃৰাগ উৎসৱৰ বিশদ বিৱৰণ দিয়াৰ উপৰি এই উৎসৱৰ লগত জড়িত গীত-মাতবোৰ উল্লেখ কৰিছে।

পৰাগ উছৱ ঃ

এই উছৱৰ কাৰণে ডেকা-গাভৰুসকলে বৰ হেঁপাহ কৰে, কাৰণ দৰাচলতে তেওঁলোকৰহে উছৱ। সেই কাৰণে দেহে-কেহে সিহঁতে এই পৰাগৰ কাৰণে লাগে... এমাহৰ আগৰে পৰা। মৰং ঘৰৰ চাল নতুনকৈ নতুন নতুন খেৰেৰে ছোৱা হয়, মজিয়াত ন-মাটি তুলি ভালকৈ যতনাই সমান কৰি থোৱা হয়। পুৰণি বেৰবোৰ সলাই, নতুন বেৰ লগাই লিপি পুচি সমানকৈ নিমজ চিলচিলীয়া কৰা হয়। কাষতে এটা ভঁৰালঘৰো সজোৱা হয়। তাত সিহঁতে পোৱা ধান-চাউল, মাটি কলাই, ৰঙালাও, কোমোৰা যি পায় সেই ভঁৰালত ভৰাই যতনেৰে থয়।[৭]"

উপন্যাসখনত পৰাগ উৎসৱৰ বিৱৰণৰ উপৰি নৃত্য-গীতৰ কথাও উল্লেখ কৰিছে। পৰম্পৰাগত বাদ্য বজাই নৃত্য-গীতৰ মাজেৰে ৰং-ৰহইচ কৰাৰ দৃশ্য অতিকে মনোমোহা। উপন্যাসত উল্লেখ থকা অনুসৰি—

"মুৰঙৰ বাহিৰে এটা খোলাত দুম্দুম ঢোল বাজে, তাল, টকা, পেঁপা বাজি উঠে, ডেকাসকলে কিৰিলি পাৰি ৰেৰ্ৰা ৰেৰ্ৰা মাতেৰে চিঞৰি গগন ফালে, জোনোৱালী, ৰূপোৱালী জোনৰ পোহৰত ৰূপত জীৱন্ত গাভৰুজাকে গাত লহৰ তুলি নাচে।[৮]"

"কুমঙৰ ঢোলৰ কোবত পাৱ্ছলীৰ নাচত হাতৰ আঙুলিৰ পৰা বিজুলী জিলিকে, তিৰবিৰায়, চিকমিকায়।"

আকৌ উপন্যাসৰ এঠাইত "মুৰঙৰ ভিতৰত 'গুম্ৰাগ গুম্ৰাগ' ধ্বনিৰে ঢোল বাজি উঠে। কুমঙৰ যাদুকৰী হাতৰ মাৰিৰ কোব খাই 'দুম্দুমে' দমদমাই গৰজে।... তালৰ তালে তালে টকাৰ ছাবে ছাবে, পাৱ্ছলীৰ নাচে বিজুলীৰ দৰে চিকমিকায়। গাভৰুহঁতৰ হাত চাপৰিৰ উজান উঠে, ডেকাসকলে ৰেঙ্কা ৰেঙ্কা' চিঞৰি কিৰিলি পাৰে।[৯]"

এনেদৰে বিষ্ণুপ্রসাদ ৰাভাই উপন্যাসখনত মিচিং জনগোষ্ঠীৰ পৰম্পৰাগত উৎসৱত গীত-নৃত্যৰ জৰিয়তে উপন্যাসখনৰ কাহিনীভাগ আগৱঢ়াই নিছে। গীতবোৰৰ জৰিয়তে চৰিত্রবোৰৰ মনৰ অনুভৱ প্রকাশ, প্রকৃতি চিত্রণ আদিবোৰৰ এটা স্বাভাৱিক পৰিৱেশ পৰিলক্ষিত হয়। ইয়াৰ মাজেদিয়েই উপন্যাসখনৰ স্বকীয়তা ফুটি উঠিছে।

উপন্যাসখনৰ পাতে পাতে মিচিং সমাজৰ প্রেম, সংঘাত, সংগ্রাম, জাতিটোৰ বিভিন্ন সাংস্কৃতিক দিশ উজলি উঠিছে।

লোক পৰিৱেশ্য কলাৰ উপাদানসমূহে পূর্ণতা পায় বাদ্যযন্ত্রৰ সহযোগত। বিষ্ণুৰাভাই তেওঁৰ উপন্যাসত লোক পৰিৱেশ্য কলাৰ সতে লোকবাদ্যৰ সুপ্রয়োগ ঘটাইছে। 'মিছিং কনেঙ্'ত প্রয়োগ হোৱা কেতবোৰ বাদ্যযন্ত্রৰ নিদর্শন—

"গাঁৱৰ এচুকৰ পৰা 'পেম্পা' পেঁপাৰ ইননি-বিননি ৰিণিকি-ৰিণিকি ভাঁহি আহে।" [১০]

আনচুকৰ পৰা 'দুমদুম' ঢোলৰ গুম্ৰাগ গুম-গুমনিয়ে বতাহৰ ঢৌত কঁপনি তোলে। [১১]

"এচাম ডেকাই কিৰিলি মাৰে, 'দুমদুম' ঢোল বাজি উঠে, পেম্পা পেঁপাই টিহিটি টিহিটি সুৰদী সুৰীয়া মাতেৰে বিনায়।" [১২]

"গুম্ৰাগ-গুম্ৰাগ' কৈ গিৰগিৰাই 'দুমদুম' ঢোল বাজি উঠে।[১৩]

"পেম্পা পেঁপাই বিনায়, পেটৰ চেপাত ফোঁপোলা বাঁহৰ চুঙা 'দুম্পক' গুমগুমায়। 'গুংগাং' গগনাই গভীৰ সুৰত গংগঙায়।" [১৪]

"মুৰঙৰ ভিতৰত 'গুমৰাগ গুমৰাগ' ধ্বনিৰে ঢোল বাজি উঠে।" [১৫]

মুৰঙৰ বাহিৰে এটা খোলাত দুমদুম ঢোল বাজে, তাল, টকা, পেঁপা বাজি উঠে, ডেকাসকলে কিৰিলি পাৰি ৰেঙ্কা ৰেঙ্কা মাতেৰে চিঞৰি গগন ফালে।" [১৬]

এনেদৰে বিষ্ণুৰাভাই 'মিছিং কনেঙ্' উপন্যাসৰ কাহিনীৰ প্রয়োজনত চৰিত্রসমূহৰ মনৰ আৱেগ-অনুভূতি প্রকাশৰ মাধ্যম গীত-মাত-নৃত্যৰ প্রসংগত বাদ্যযন্ত্রৰ প্রয়োগ কৰাটো মনকৰিবলগীয়া।

৩.০০ সামৰণি ঃ

মিচিং জনসমাজৰ বৃহৎ অংশ আৱৰি থকা লোক পৰিৱেশ্য কলাৰ সমলেৰে পৰিপূর্ণ এখন উপন্যাস 'মিছিং কনেঙ্' বিভিন্ন পৰম্পৰাগত উৎসৱ-পার্বন, নৃত্য-গীত-মাত আদিৰ উপৰি পৰম্পৰাগত সাজ-পাৰ, ভৌতিক সংস্কৃতি আদি দিশসমূহৰ উল্লেখে ঔপন্যাসিকে মিচিং সমাজখনক প্রতিফলন কৰাৰ চেষ্টা পৰিলক্ষিত হয়। উপন্যাসখনৰ আলোচনাৰ অন্তত তলত দিয়া সিদ্ধান্তবোৰত উপনীত হ'ব পৰা যায় — ক) লেখকৰ পৰম্পৰা আৰু ঐতিহ্যৰ প্রতি থকা শ্রদ্ধাশীল মনোভাৱৰ পৰিচয় পোৱা গৈছে।

খ) অসমীয়া লোকসমাজৰ বিশেষকৈ মিচিং জনগোষ্ঠীৰ সমাজ-সংস্কৃতিৰ প্রতিফলনে সাংস্কৃতিক চেতনাবোধৰ পৰিচয় বহন কৰিছে।

গ) লোকগীত, লোকনৃত্য, লোকবাদ্য আদি সমলৰ প্রয়োগে অসমীয়া সংস্কৃতিৰ প্রাচুর্যতাৰ কথা জানিব পৰা গৈছে।

পাদটীকা ঃ

১, যোগেশ দাস (সম্পা.) বিষ্ণুপ্রসাদ ৰাভা ৰচনাসম্ভাৰ (প্রথম খণ্ড), পৃ. ৬৪৫
২. উল্লেখিত, পৃ. ৬৪৫
৩. উল্লেখিত, পৃ. ৬৪৮
৪. উল্লেখিত, পৃ. ৬৫০
৫. উল্লেখিত, পৃ. ৬৫০
৬. উল্লেখিত, পৃ. ৬৫৪
৭. উল্লেখিত, পৃ. ৬৫৮
৮. উল্লেখিত, পৃ. ৫৬৯
৯. উল্লেখিত, পৃ. ৬৬০

১০. উল্লেখিত, পৃ. ৬৪৯
১১. উল্লেখিত, পৃ. ৬৪৯
১২. উল্লেখিত, পৃ. ৬৪৯
১৩. উল্লেখিত, পৃ. ৬৫০
১৪. উল্লেখিত, পৃ. ৬৫০
১৫. উল্লেখিত, পৃ. ৬৬০
১৬. উল্লেখিত, পৃ. ৬৫৯

মূল উৎস ঃ

দাস, যোগেশ (সম্পা.)। বিষ্ণুপ্রসাদ ৰাভা ৰচনা সম্ভাৰ (প্রথম খণ্ড)। গুৱাহাটী ঃ জ্যোতি প্রকাশন, ২০০৮। মুদ্রিত।

প্রসংগ পুথি ঃ

দাস, তিলক। বিষ্ণুৰাভা এতিয়া কিমান ৰাতি। গুৱাহাটী ঃ চন্দ্র প্রকাশ, ২০১৪। মুদ্রিত।
দেৱী, হেমলতা। বিষ্ণুপ্রসাদ ৰাভা ব্যক্তিত্ব আৰু প্রতিভা। গুৱাহাটী ঃ অসম প্রকাশন পৰিষদ, ২০১৬। মুদ্রিত।
বৰুৱা, বিৰিঞ্চি কুমাৰ। অসমৰ লোকসংস্কৃতি। গুৱাহাটীঃ বীণা লাইব্রেৰী; ২০০২। মুদ্রিত।
ভট্টাচার্য, নলিনীধৰ (সম্পা.)। বিষ্ণুপ্রসাদ ৰাভা ঃ জীৱন আৰু কৃতি। গুৱাহাটী ঃ চেতনা প্রকাশ, ১৯৮৫। মুদ্রিত।
হাজৰিকা, ভূপেন। বিষ্ণু ককাইদেউ। গুৱাহাটী ঃ এছ, এইছ, শৈক্ষিক ন্যাস, ২০১৪। মুদ্রিত।
হাজৰিকা সূর্য্য (সম্পা.)। ভিন্নজনৰ দৃষ্টিত বিষ্ণুপ্রসাদ ৰাভা। গুৱাহাটীঃ এছ, এইছ, শৈক্ষিক ন্যাস, ২০০৮। মুদ্রিত।

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

তিৰাসকলৰ লালিলাং গীতত প্রতিফলিত সমাজ-জীৱন ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন

ড° কণিমা পাঠক

সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
জাগীৰোড মহাবিদ্যালয়
জাগীৰোড (অসম)-৭৮২৪১০
০৮৪৭১৯২৫৪৬৯
kanimapathak6@gmail.com

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

সাহিত্য হৈছে সমাজৰ প্রতিছবি। গতিকে সাহিত্যত সমাজৰ সকলো দিশ প্রতিভাত হয়। পৃথিৱীত মানৱৰ আৰ্ৱিভাৱৰ লগে লগে ভাষা আৰু সাহিত্যৰো সৃষ্টি হয়। লিখিত সাহিত্যৰ বহুত আগতেই মৌখিক বা লোকসাহিত্যৰ ৰচনা হয়। লোকসাহিত্যৰ ৰচক হৈছে লোকসমাজ । লোকসমাজে লোকসমাজকে সমল হিচাপে লৈ লোক সাহিত্যৰ ৰচনা কৰে। গতিকে লোকসাহিত্যৰ জড়িয়তে লোকসমাজৰ সকলো দিশ প্রকাশ পায়। লোকসাহিত্যক অধ্যয়নৰ সুবিধা অনুসৰি দুটা ভাগত ভাগ কৰা হয়। যেনে — গেয় সাহিত্য আৰু কথ্য সাহিত্য । গেয় সাহিত্যৰ অন্তর্গত লোকগীতসমূহ লোক মনৰ পৰিচায়ক।

মধ্য অসমৰ ডিমৰীয়া অঞ্চলত প্রচলিত তিৰা জনগোষ্ঠীৰ এবিধ লোক গীত হৈছে লালিলাং গীত। এই গীতত অসমৰ তিৰা জনগোষ্ঠীৰ লোকজীৱন তথা লোক মনৰ প্রকাশ পায়। এই গীত সমূহ মূলতঃ যৌনগন্ধীযুক্ত।।

তিৰা জনগোষ্ঠীক পাহাৰীয়া তিৰা আৰু ভৈয়ামৰ তিৰা আদি দুটা ভাগত ভাগ কৰা হয়। আমাৰ আলোচনাত কেৱল ভৈয়ামৰ, বিশেষকৈ মধ্য অসমৰ (মৰিগাঁও-কামৰূপ জিলাৰ মধ্যত অৱস্থিত) ডিমৰীয়া অঞ্চলত প্রচলিত তিৰাসকলৰ লোক জীৱন প্রকাশক লালিলাং গীতসমূহকহে লোৱা হৈছে। বিভিন্ন কিতাপ-পত্র আৰু সমল ব্যক্তিৰ জড়িয়তে আলোচনাটো বর্ণনাত্মক, বিশ্লেষণাত্মক আৰু তুলনামূলক পদ্ধতিৰ সহায়ত কৰা হৈছে।

সূচক শব্দ ঃ লালিলাং গীত, তিৰা জনগোষ্ঠী, লোক সংস্কৃতি, লোক সমাজ, লোক সাহিত্য, লোক মন আৰু কৃষি।

অৱতৰণিকা ঃ

তিৰা জনগোষ্ঠী অসমৰ জনগোষ্ঠীসমূহৰ ভিতৰত অন্যতম। তিব্বতবর্মী ভাষাৰ অন্তর্গত এই তিৰা জনগোষ্ঠী অসমৰ বিভিন্ন ঠাইত সিচঁৰিত হৈ আছে। বসতিৰ স্থান অনুসৰি তিৰাসকলক দুটা ভাগত ভাগ কৰা হয়; যেনে— পাহাৰীয়া তিৰা আৰু ভৈয়ামৰ তিৰা। পোন প্রথমতে তিৰাসকল পাহাৰতে বসবাস কৰিছিল যদিও বিভিন্ন কাৰণত পৰৱর্তী সময়ত ভৈয়ামলৈও প্রৱর্জিত হয়। তিৰা জনগোষ্ঠীৰ উৎপত্তিৰ সম্পর্কে বিভিন্ন লোককথা তথা কথিত আছে যে —মহাদেৱে এদিন লাওপানী খাই নিচা ধৰাত বাটতে

পৰি থকা আৱস্থাত দুয়ো কোৱাৰিয়েদি মুখৰ লালবীজ ওলাইছিল। মহাদেৱৰ সেই লালটিৰ পৰাই পুৰুষ আৰু স্ত্রী দুয়োজনাৰ সৃষ্টি হয়। লালটিৰ পৰা উদ্ভৱ হোৱা বাবেই এওঁলোকক লালুং বুলি কোৱা হয়। লালুং জনগোষ্ঠীৰ দুটা নাম আছে। লালুং বা তিৱা সম্প্রদায়টোক নিজস্ব ভাষাত 'তিৱা' আৰু আসমীয়াত ইয়াক 'লালুং' বুলি কোৱা হয়।

অসমৰ বিভিন্ন প্রান্তত তিৱাসকলৰ বসতি পোৱা যায়; যেনে— মৰিগাঁও জিলা, নগাঁও জিলা, কাৰ্বি আংলং কামৰূপ জিলা, ধেমাজী, তিতাবৰ আৰু চুবুৰীয়া মেঘালয় ৰাজ্যতো তিৱাসকলৰ বসতি দেখিবলৈ পোৱা যায়। পাহাৰৰ তিৱাসকলেই ভৈয়ামলৈ আহিছে; যদিও কালক্রমত ভৈয়ামৰ তিৱাসকল আৰু পাহাৰৰ তিৱাসকলৰ মাজত উৎসৱ-অনুষ্ঠান আৰু ৰীতি-নীতি পালনত কিছু পার্থক্য পৰিলক্ষিত হয়। ২০১১ চনৰ লোকপিয়ল আনুসৰি তিৱাসকলৰ মুঠ জনসংখ্যা ৩,৭১,০০০ জন, অসমত ২,০০,৯১৫ জন আৰু মৰিগাঁও জিলাত ১,০৯,৫৩০ জন। (enm wikipedia.org/wiki/Tiwa 27/09/2023)

তিৱাসকলৰ সমাজ সংস্কৃতিলৈ দৃষ্টি নিক্ষেপ কৰিলে আমি দেখো যে তিৱাসকলৰ সমাজখন সুন্দৰ ৰূপে চলাই নিবলৈ একোখনকৈ খেল থাকে। এই খেলসমূহক দুটা ভাগত বিভক্ত কৰা হয়। সমাজৰ বয়োজেষ্ঠ সকলক লৈ গঠন কৰা খেলটো হ'ল বুঢ়া খেল আৰু ডেকাসকলক লে গঠন কৰা খেলটোৰ নাম ডেকাখেল। বুঢ়াখেলত দলৈজনেই মুখ্য। এওঁৰ তলতে অনান্য বিষয়ববীয়াসকল থাকে। তিৱাৰ বিধি - বিধান আৰু গাঁৱৰ নিয়ম অনুসৰি এওঁলোকে সমাজৰ বিভিন্ন কাম-কাজবোৰ চলায়। আনহাতে চাংদলৈ হ'ল ডেকাখেলৰ মুৰব্বীজন। এওঁৰ তলতে আন আন বিষয় - ববীয়াসকলে তিৱা সমাজত পৰম্পৰাগত ভাৱে চলি অহা উৎসৱ - পার্বনবোৰত প্রয়োজন হোৱা, বাদ্য-যন্ত্র, সাজ-পাৰ, খাদ্য-সম্ভাৰ আদি যোগান ধৰে। (ডেকা পংকজকুমাৰ ঃ তিৱাজনগোষ্ঠী ভাষা সাহিত্য - সংস্কৃতি পৃষ্ঠা ঃ ৯৬)

তিৱাসকলৰ এটি জনপ্রিয় অনুষ্ঠান হ'ল চামাদি বা ডেকাচাং। এই অনুষ্ঠানত নাৰীসকলক প্রৱেশ কৰিবলৈ দিয়া নহয়। সমাজৰ বয়োজেষ্ঠ লোকসকলে এই অনুষ্ঠানত তিৱা সমাজৰ ডেকাসকলক ভবিষ্যৎ জীৱন আৰু সমাজৰ বিভিন্ন ধৰণৰ জ্ঞান দিয়ে। তিৱাসকলৰ আন এটা অন্যতম অনুষ্ঠান হ'ল নুবাৰ বা বৰঘৰ। এই বৰঘৰত ঘৰৰ প্রধানজনৰ তত্ত্বাৱধানত পূজা-পার্বন আৰু মাংগলিক অনুষ্ঠানসমূহ অনুষ্ঠিত কৰে। ইয়াৰোপৰি সন্তান জন্ম হ'লে পৰিয়ালৰ সকলোৱে অশৌচ পালন কৰে। পৰিয়ালৰ কোনো ব্যক্তিৰ মৃত্যু হ'লে নিজ বংশৰ বাবে পাতি লোৱা ভেটিত বংশৰ লোকসকলক দাহন কৰা হয়। একে বংশৰ মাজত তিৱা সমাজত বিয়া পাতিবলৈ দিয়া নহয় । তেওঁলোকৰ বিবাহ - পদ্ধতিত হোম - পোৱা নহয়। ল'ৰাবোৰক ঘৰজোঁৱাই ৰাখি আৰু ছোৱালীবোৰক পলুৱাই নি তিৱা সমাজত বিবাহ উদ্‌যাপন কৰা হয়।

তিৱাসকল সাধাৰণতে উৎসৱ প্রিয়। বছৰটোৰ বিভিন্ন সময়ত বিভিন্ন ধৰণৰ উৎসৱ তেওঁলোকে পালন কৰি আহিছে। এই উৎসৱসমূহ প্রধানকৈ কৃষিভিত্তিক। 'ফা মহাদেউ' হ'ল তিৱাসকলৰ প্রধান উপাস্য দেৱতা। তিৱাসকলে 'ফা মহাদেউকে' সমস্ত জগতৰ সৃষ্টিকর্তা বুলি বিশ্বাস কৰে। 'ফা মহাদেউ'ৰ বাহিৰেও অন্য দেৱ - দেৱীসকলকো তেওঁলোকে পূজা অর্চনা কৰে। তেওঁলোক পূজাত মদ ব্যৱহাৰ কৰে আৰু কুকুৰা চৰাই, গাহৰি বলি - বিধান দিয়ে। তিৱাসকলে পালন কৰা বিভিন্ন ধৰণৰ উৎসৱসমূহ হ'ল - ছংখং, খাপ্লাং, ৰাৱা, ছগৰা মিছাৰা, লাংখন পূজা, ৰানা ঝুৰা উৎসৱ, ববত উৎসৱ ইত্যাদি।

অধ্যয়নৰ পৰিসৰঃ

তিৱাসকলক যিহেতু দুটা ভাগত বিভক্ত কৰা হয়। পাহাৰ আৰু ভৈয়ামৰ তিৱাসকলৰ সুকীয়া সুকীয়া সাহিত্যৰ বা সংস্কৃতিৰ ক্ষেত্রত পার্থক্য পোৱা যায়। কিন্তু আমাৰ আলোচনাত অধ্যয়নৰ সুবিধাৰ বাবে কেৱল মধ্য অসমৰ ডিমৰীয়া অঞ্চলৰ তিৱাসকলৰ লালিলাং গীতত প্রকাশিত হোৱা তিৱাসকলৰ সমাজ জীৱনৰ সম্পর্কেহে আলোচনা কৰা হৈছে ।

অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য আৰু লক্ষ্য ঃ

- এই অধ্যয়নৰ যোগেদি তিৱাসকলৰ সমাজ আৰু সংস্কৃতিৰ সম্পর্কে অধ্যয়ন হ'ব।
- লালিলাং গীতৰ অধ্যয়নৰ যোগেদি তিৱাসকলৰ লোকজীৱন সম্পর্কে বিতংভাৱে অধ্যয়ন কৰা হ'ব।
- লোকগীতসমূহ যিহেতু লোকসমাজৰ লোকমনৰ পৰিচায়ক, সেই গতিকে লালিলাং সমূহৰ অধ্যয়নৰ

জৰিয়তেওঁ তিৱাসকলৰ লোকমন সম্পর্কে অৱগত হ'ব পৰা যায়।

মূলতে এই অধ্যয়নৰ জৰিয়তে ডিমৰীয়া অঞ্চলৰ তিৱাসকলৰ সমাজ-সংস্কৃতি, বেশ-ভূষা, লোকমন ইত্যাদি সম্পর্কে বিশ্লেষণ কৰাই হৈছে আমাৰ আলোচনাৰ মূল উদ্দেশ্য আৰু লক্ষ্য।

অধ্যয়নৰ উৎস আৰু পদ্ধতি ঃ

আলোচনাটো প্ৰস্তুত কৰোতে বিষয় সম্পৰ্কীয় বিভিন্ন কিতাপ পত্ৰৰ সহায় লোৱা হৈছে। লগতে কোনো কোনো ক্ষেত্ৰত ক্ষেত্ৰ অধ্যয়নৰ বাবে সমল ব্যক্তিৰো সাক্ষাৎকাৰ লোৱা হৈছে।

আলোচনাটো বৰ্ণনাত্মক, বিশ্লেষণাত্মক, আৰু তুলনামূলক পদ্ধতিৰ দ্বাৰা সম্পন্ন কৰা হৈছে।

বিষয়বস্তু ঃ

লোকসাহিত্যৰ ৰচক হৈছে লোকসমাজ। লোকসমাজে লোকসমাজকেই সমল হিচাপে লৈ লোকসাহিত্য ৰচনা কৰে। গতিকে লোকসাহিত্যৰ জৰিয়তে লোকসমাজৰ সকলো দিশ প্ৰকাশ পায়। লোকগীত সমূহ লোকমনৰ পৰিচায়ক। অসমৰ কৃষিজীৱি লোকসকলে সময়ে-সময়ে বিভিন্ন লোকউৎসৱ পালন কৰি আহিছে। এই উৎসৱসমূহৰ ভিতৰত মাঘ বিহুৰ উৰুকা দিনা পালন কৰা সমূহীয়া মৎস্য চিকাৰ অন্যতম। এই পৰম্পৰাটি উলহ-মালহেৰে মধ্য অসমৰ অন্তৰ্গত ডিমৰীয়া অঞ্চলতো পালন কৰা দেখিবলৈ পোৱা যায়। প্ৰাচীন কালৰে পৰা ৰজাৰ দ্বাৰা শাসিত এই অঞ্চলটিত কাৰ্বি, বড়ো, তিৱা, ৰাভা, নেপালী, গাৰো, কোচ, আদি মানুহে মিলিত হৈ মাঘ বিহুৰ উৰুকা দিনা সমূহীয়াভাৱে মাছ ধৰিবলৈ যাওঁতে যৌনগন্ধিযুক্ত যিবিলাক গীত গায়; সেইবিলাককে লালিলাং বা কেঁচা বিহুগীত বোলে।

লালিলাং শব্দটো আচলতে ক'ৰ পৰা কেনেকৈ আহিছে সঠিককৈ ক'ব পৰা নাযায়। ইয়াৰ প্ৰকৃত অৰ্থনো কি সেয়াও দৃষ্টিগোচৰ নহয়, কিন্তু পৰম্পৰাগত ভাৱেই লালিলাং শব্দটোৱেই এই গীতখিনিক লৈ ব্যৱহাৰ হৈ আহিছে। সেয়ে, হয়তু লালিলাং বুলিয়েই এই নিৰ্দিষ্ট গীতখিনিক বুজা যায়। ডিমৰীয়া অঞ্চলত সাধাৰণতে লিংলাং শব্দ এটাৰ ব্যৱহাৰ দেখা যায়। কাৰোবাৰ মাজত প্ৰেমৰ সম্পৰ্ক গঢ়ি উঠিলে ঠাট্টাৰ সুৰত এই শব্দটো ব্যৱহাৰ কৰা হয়। এই লিংলাংৰ পৰাই লালিলাং শব্দটো হৈছে বুলি অনুমান কৰিব পাৰি।

লালিলাং গীত বুলি কলে সাধাৰণতে ডিমৰীয়া অঞ্চলত প্ৰচলিত অতি অকথ্য বিহুগীত খিনিকে বুজা যায়। নৈ, বিল, খাল, চৰণীয়া পথাৰ আদিক পটভূমি হিচাপে লৈ এই গীতসমূহক ৰচনা কৰা বাবেই ইয়াক হাবিতলীয়া গীত বুলিও নামাকৰণ কৰা হয়। লালিলাং হ'ল এই অকথ্য বিহুগীত খিনিক বুজাবৰ নিমিত্তে ডিমৰীয়া বাসীয়ে দি লোৱা পোছাকী নাম। মাঘবিহুৰ উৰুকাদিনাখন বিলত মাছ মাৰিবলৈ যাওঁতে নাইবা ভেলাঘৰ ৰখোতে এই গীতসমূহ গোৱা হয়। এই গীতসমূহ গাই গাই ডিমৰীয়া ৰজাক ভেৰাকুছি, বাঁহতলা, বামফৰ আৰু কুলাজাৰি ৰাইজে পাৰশালি বিললৈ আদৰি নিয়ে। তেনেদৰে তেতেলীয়া ৰজাক ব'মানী বিলৰ পাৰলৈ লতাবৰী, ৰাজাখাত আৰু কটৌজাৰি লালিলাং নাচনী দলবোৰে আদৰি নিয়ে। আনহাতে পৰম্পৰা অনুসৰি ডিমৰীয়া ৰজাই নিৰ্বাচন কৰি দিয়া জনজাতীয় নাচনীয়া দলৰ গাঁও দেউলগুৰি, ভেৰাগাঁও, সেনাবৰ আৰু নোৱা গাঁৱৰ ৰাইজে নাচি-নাচি গৈ জালিশৰা বিলৰ পাৰত উপস্থিত হয়গৈ। বিলৰপাৰত ৰজাই বা নাচনীয়া দলৰ গুৰিয়ালজনে ডিমৰীয়া পঞ্চদেৱতাক সোঁৱৰি বাঁহ গছৰ জেং আৰু তামোল-পানৰ টোপোলাটো পানীত পুতি দিয়াৰ পাছত ৰাইজে হৰি ধ্বনি এটা দিলেহে জাকৈ, প'ল লৈ পানীত মাছ মাৰিবলৈ নামে। পানীত নামি আনন্দত মতলীয়া হৈ লালিলাং গীত গায় আৰু ঢোল পেপাৰ ছেৰে-ছেৰে নৃত্য কৰে।

মাছমৰা শেষত মাঘবিহুৰ উৰুকাৰ দিনা ৰাতি ডেকাসকলে মিলি ভোজভাত খায় আৰু লালিলাং গীত গাই নৃত্য কৰি আনন্দ কৰে —

"প্ৰথমে প্ৰণামো ঐ আই সৰস্বতী ঐ
দ্বিতীয়ে প্ৰণামো ঐ হৰি
.....
খালৈ দাঙি দাঙি ঐ চাং ।। "

মাছ চিকাৰৰ লগত জড়িত এই গীতসমূহ যদিও যৌন উত্তেজক গীত তথাপি সামাজিক জীৱনৰ বিভিন্ন কথাই এই গীতবিলাকৰ মাজেদি প্ৰকশিত হৈছে। কৃষিজীৱি লোকসকলক যৌন উত্তেজক নৃত্য-গীতৰ লগত মাটিৰ উৰ্বৰা শক্তিৰ বৃদ্ধিৰ কথাটো বিশ্বাস কৰি আহিছে। মাছ প্ৰজননৰ প্ৰতীক। মাছ শিকাৰৰ লগত জড়িত এই গীতবোৰে সমাজৰ বিভিন্ন দিশৰ ইঙ্গিত দি আহিছে। প্ৰাচীন কালৰে পৰা মানুহৰ মুখে-মুখে প্ৰচলিত হৈ অহা লালিলাং গীতসমূহৰ যোগেদি নাৰীৰ মনৰ আশা আকাঙ্খা, আৱেগ - অনুভুতি, মাছ মৰাৰ বিভিন্ন কৌশল, ডেকা - গাভৰুৰ প্ৰেম - প্ৰণয়, দৈহিক সম্পৰ্ক, কৃষি, সাজপাৰ, খাদ্যসম্ভাৰ, আদি সমাজ জীৱনৰ বিভিন্ন চিত্ৰ সুন্দৰ ৰূপত ফুটি উঠিছে----

"পাৰশালি বিললৈ খলা ৰজা আহিছে
মাৰি যাং লেচেৰী খ'পা

মাছ উজুৱাদি ডেকামখা উজাব
মাৰি থং খালৈৰে স'পা
দুবনী ব'মনী দুয়ো বায়ে - ভনী
অমৰা নথবি দ'মাই
অমৰা তলিতে ধৰিম গবা মাৰি
বাপেৰে বুলিব জঙাই ।।"

লালিলাং গীতসমূহৰ জৰিয়তে সেই সময়ৰ সমাজখনৰ ৰাজনৈতিক অর্থনৈতিক, সাংস্কৃতিক, কূটনৈতিক আদিৰ চিত্র সুন্দৰৰূপত ফুটি উঠা দেখিবলৈ পোৱা গৈছে।

কৃষিকেন্দ্রিক জনসমাজে পূর্ৱতে আহু আৰু শালি খেতি কৰি যে জীৱন - নির্বাহ কৰিছিল তাৰ আভাস এই গীতসমূহৰ জৰিয়তে পাব পাৰি।

আহুৰে আশাতে ঐ শালি নাৰখিলং ঐ
তুঁহত নাৰাখিলং ঐ জুই,
তোৰে আশাতে ঐ বনীয়েৰক নানিলং ঐ
সুন্দা চাঙত থাকিলং ঐ শুই ।
ওয়ে হেৰা নেমুটেঙা
আমি হলং ডঁৰিকনা
অজলা বাপেকৰ ঐ চনা ।

অসমীয়া সমাজত আউসী, পূর্ণিমা, একাদশী তিথিত হাল বাব নাপায় বুলি যি বিশ্বাস চলি আহিছে তাৰো আভাষ ডিমৰীয়া বাসীৰ মাজতো আছে বুলি এই গীত সমূহৰ জৰিয়তে জানিব পাৰি ----

লালুঙৰ লেলেপাং কছাৰীৰ কেলেপাং
মিকিৰৰ ঘনে ঘনে গাঁঠি।
একাদশী নমানং পূর্ণিমা নামানং
হালকো নকৰং খতি ।।

সমাজত সততে দেখিবলৈ পোৱা যায় যে মাক - দেউতাকৰ আৱস্থা যিয়েই নহওঁক কিয় মাকদেউতাকে ছোৱালীক সদায় অভিজাত্যৰে ভৰা ভাল ঘৰ এখনত বিয়া দিব বিচাৰে। ডিমৰীয়া অঞ্চলতো যে এই ব্যৱস্থা আছে তাক এই লালিলাং গীতটোৰ জৰিয়তে জানিব পাৰি -----

কলঙৰ পাৰতে পকা জলকীয়া
তললৈ মাৰিলে শিয়া
বাপেৰে নৰকী মায়েৰে নৰকী
নিগুৰুলৈ নিদিয়ে বিয়া ।।

সমাজত সততে দেখিবলৈ পোৱা শাও - শপনী, গালি - গালাজ পৰম্পৰাগতভাৱে ডিমৰীয়া সমাজতো যে পূর্ৱৰে পৰা চলি আহিছে, তাৰ উদাহৰণো আমি এই গীতৰ পৰাই পাঁও --

শগুনৰ শাওতে বুঢ়া গৰু নমৰে
ৰবাব টেঙাৰ ভিতৰৰ জিম.....

ডিমৰীয়া অঞ্চলটি খাচীপাহাৰৰ ওচৰতে অৱস্থিত হোৱা বাবে খাচী সকলৰ বিবাহ পদ্ধতিৰ প্রভাৱ ইয়াত পৰা দেখা যায়। খাচীয়াসকলৰ নিচিনাকৈ এই অঞ্চলটিতো ল'ৰাক ঘৰজোঁৱাই কৰি ৰখা দেখিবলৈ পোৱা যায়। কিন্তু ডিমৰীয়া সমাজখন পিতৃপ্রধান হোৱা বাবেই ল'ৰাই এই নিয়ম, সহজে মানি ল'ব নিবিচাৰে।

কুঁহাৰৰ কপিয়া লালুঙৰ ঘজিয়া
ৰাখিম মৰকীয়া কৰি
কেনেকে ৰাখিবি তই হেৰ ঢেপেলী
যাম গৈ হেঙাৰে ভাঙি ।

এই গীতসমূহৰ জৰিয়তে ডিমৰীয়া অঞ্চলৰ গাতে লাগি থকা ডিগাৰুপৰীয়া আর্থসামাজিক দিশটোও লালিলাং গীতসমূহত প্রাণ পাই উঠিছে। এই ডিগাৰু নৈৰ আশে পাশে থকা কেইবাখনো গাঁৱৰ লগতে তাত বাস কৰা অধিবাসীসকলৰ সৰলতাৰে ভৰা জীৱন - যাপন, প্রাকৃতিক পৰিৱেশ, বৰবিলা বিল আদিৰ বর্ণনাও এই গীতসমূহত পোৱা যায়।

পাণবাৰী পাহাৰৰ ঐ তামোল ঢোনাছালি ঐ
বৰবিলা বিলৰে ঐ মাছ,
পলকো ভাঙি যাং জালকো চিঙি যাং ঐ
চেনাইকে ধৰি যাং ঐ পাছ ।

লালিলাং গীতৰ ভাষা হ'ল লোকভাষা। খিলঞ্জীয়া লোকসকলৰ মুখৰ ভাষা । এই গীতবোৰত ব্যৱহাৰ হোৱা উপমা, অলংকাৰবোৰ ডিমৰীয়া অঞ্চলত বসবাস কৰা মানুহৰ মনৰ বহিঃ প্রকাশ মাথো। এই গীতবোৰত ব্যৱহাৰ হোৱা কিছুমান শব্দ অশ্লীল বা অবাইচ হ'লেও মাছ মাৰোতে বা ভেলাঘৰত গালে দোষণীয় বুলি নধৰে । অৱশ্যে বেলেগ স্থানত গোৱা লালিলাংবোৰ মার্জিত ধৰণৰ হয়। এই গীতবোৰত ব্যৱহাৰ হোৱা শব্দসমূহ ডুমুৰালী। এই ডুমুৰালী শব্দসমূহ ডিমৰীয়া অঞ্চলত প্রচলিত।

ডিমৰীয়া অঞ্চলত প্রচলিত লালিলাং গীতৰ সুৰ মিশ্রিত সুৰ। এই গীতসমূহত সকলো সম্প্রদায়ৰ লোকে ভাগ লয় যদিও কার্বি, তিৱা আৰু বড়োসকলৰ প্রভাৱ বেছি। থলুৱা বড়োসকলে নিজ ভাষা নকয় বাবেই লালিলাংৰ সুৰত কাৰবি আৰু তিৱাসকলৰ সুৰে প্রাধান্য লাভ কৰা দেখা যায়। মাছ মাৰিবলৈ যোৱা মানুহখিনি কোচ, কার্বি, তিৱা, বড়ো, গাৰো,

ৰাভা আদি হোৱাৰ বাবেই এই গীতসমূহৰ সুৰো হৈছে মিশ্রিত সুৰ। এনে মিশ্রিত সুৰকেই কোৱা হয় লালিলাংৰ সুৰ ৰাডুমুৰালী সুৰ।

সাহিত্যিক সৌন্দর্য্যৰে ভৰপুৰ মাটিৰ গোন্ধ থকা এই গীতসমূহৰ লগত অসমীয়া সমাজত প্রচলিত বিহুগীতৰ কিছু সাদৃশ্য দেখিবলৈ পোৱা যায়। লালিলাং গীতবোৰ গাওঁতে কিছুমান গীতত ঈশ্বৰ বা দেৱ-দেৱীক সম্বোধন কৰি আৰম্ভ কৰা হয়। যেনে -

'প্রথমে প্রণামো আই সৰস্বতী ঐ....'

তেনেদৰে হুচৰি গীতটো প্রথম ঈশ্বৰক সম্বোধন কৰা হয়। অৱশ্যে লালিলাং গীতৰ দৰে হুচৰিবোৰত অশ্লীল শব্দ নাথাকে। এই হুচৰি সমূহ মার্জিত ধৰণৰ -

"কৃষ্ণাইৰ মূৰতে বকুল ...
... নিয়ৰ পাই
মৰহি গ'ল।"

লালিলাং গীত সমূহত প্রেম-প্রণয়, মিলনৰ তীব্র আকাঙ্খা, বিৰহৰ উত্তাপ থকাৰ দৰে বিহুগীতবোৰতো প্রেমৰ সুৰ বা প্রণয়, কমোৱা তুলাৰ দৰে উৰি ফুৰা মনৰ সম্যক প্রকাশ দেখিবলৈ পোৱা যায়।

আদিম কালৰে পৰা মুখ বাগৰি অহা লোকগীতসমূহৰ ভিতৰত মধ্য অসমত প্রচলিত লালিলাং উজনি অসমৰ শিৱসাগৰ জিলাৰ অঞ্চল বিশেষত প্রচলিত অঘাইতং গীত, উজনি আৰু নামনি অসমত প্রচলিত বনঘোষা আৰু দৰঙত প্রচলিত নাঙেলী গীতৰ মাজত সাদৃশ্য দেখা যায়। এই গীতসমূহত যৌনগন্ধী ভাৱধাৰা মুক্ত ৰূপত ফুটি উঠিছে। এই গীতসমূহৰ মাজেদি সমাজ জীৱনৰ ছবি সুন্দৰ ৰূপত প্রকাশ ঘটা দেখা যায়। যৌৱনত ভৰি দিয়াৰ লগে-লগে ডেকা-গাভৰুৰ মনত যি অনুভূতিৰ উদয় হয়, সেই ভাৱ অনুভূতিবোৰেই গীতৰ মাধ্যমেৰে প্রকাশ হয় বাবেই এনে গীতৰ বিষয়বস্তু প্রায় সমপর্যায়ৰ।

লালিলাং গীতবোৰত যেনেকৈ কৃষি ব্যৱস্থা, মাছ মৰাৰ বিভিন্ন পদ্ধতি, প্রেম-প্রণয়ৰ কথা, নাৰীৰ মনৰ আকাংক্ষা, বিভিন্ন লোকৰ লগত ডিমৰীয়া বাসীৰ সম্পর্ক প্রকাশিত হৈছে। তেনেকৈয়ে অঘাইতং গীততো মাছ, বিল, জাকৈ, খালৈ আদিৰ লগতে যৌন জীৱনৰ চিত্র ৰূপায়িত হৈছে -

"টোমাৰা পাহাৰত ঐ খৰি মই লুৰিলং ঐ
চেৰ পাই আগুৰি ঐ খায়,
এৰীয়া কাপোৰত ঐ মন নবহিলা ঐ
কাঠখোলা চৰাইটিক ঐ পায়।
.....
কৰঙলত চটুৰৈ ঐ খাক।"

উক্ত গীত ফাঁকিত যিদৰে ডিমৰীয়া চিত্র এখনিৰ লগতে মাছ মৰা আৰু কৰঙনৰ কথা আছে ঠিক একেধৰণেৰে তলৰ অঘাইতং গীত ফাঁকিটো মাজৰ জৰিয়তে কৰঙনৰ প্রসংগ আনিছে -

জকাই ৰাঙলী খালৈ ৰাঙলী
ৰাঙলী বিলৰ মাছ।
তাতোকৈ ৰাঙলী পাই এৰি আহিনো
দুয়ো কৰঙনৰ মাজ।।

নাঙলী গীতটো মাছক প্রজনন প্রতীক হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰিছে। লালিলাং আৰু অঘাইতং গীতৰ দৰে এই গীততো কৰঙনৰ কথা আছে।

এনেদৰে আলোচনা কৰিলে দেখা যায় যে, লালিলাং গীত, নাঙলীগীত আৰু অঘাইতং গীতৰ মাজত প্রেম-প্রণয়, বিবাহ, খাদ্য সম্ভাৰত ব্যৱহাৰ কৰা বাঁহ গাজ, তামোল-পাণ আদি বিভিন্ন বিষয়বস্তুৰ প্রয়োগ গীতসমূহৰ মাজত হৈছে।

সামৰণি ঃ

পৰিশেষত ক'ব পাৰি যে, এই গীত সমূহ ডিমৰীয়া বাসীৰ লগতে সমগ্র অসমবাসীৰে আপুৰুগীয়া সম্পদ। অশ্লীলতা বা অমার্জিত যেন লাগিলেও এই গীত সমূহৰ মাজত গভীৰতম তাৎপর্য নিহিত হৈ আছে। এই গীতসমূহ অধ্যয়নৰ জৰিয়তে ডিমৰীয়া অঞ্চলৰ তিৰাসকলৰ সমাজ-সংস্কৃতি, লোকজীৱন, লোকমন, বেশ-ভূষা, খাদ্যসম্ভাৰ তেওঁলোকে পালন কৰা ৰীতি-নীতি, উৎসৱ পার্বন আদি বিভিন্ন দিশৰ সম্পর্কে জনাযায়।

ডিমৰীয়া অঞ্চলৰ সমাজ-সংস্কৃতি, আচাৰ-অনুষ্ঠান, নদীৰ নাম, ঠাইৰ নাম, সমাজ ব্যৱস্থা, গ্রাম্য সমাজৰ লোকমন ইত্যাদি কথা সুন্দৰকৈ প্রকাশ পাইছে। লালিলাং গীতসমূহে এফালে লোকমনৰ পৰিচায়ক আনফালে এইসমূহৰ সামাজিক মূল্যও প্রকাশ পাইছে। লোকসাহিত্য যিহেতু সমাজৰ দাপোন ঠিক সেইদৰে লোকসাহিত্যৰ অন্তর্গত এই লোকসামাজৰ গীত তথা মধ্য অসমত প্রচলিত লালিলাং গীতসমূহৰ জড়িয়তেও মধ্য অসমৰ সমাজ-জীৱন দাপোনৰ দৰে প্রতিভাত হোৱা পৰিলক্ষিত হৈছে। এই গীতসমূহ মধ্য অসমৰ তিৰা লোকসকলৰ জীৱন বুৰঞ্জী বুলিও ক'ব পৰা যায়। ❑

সমল ব্যক্তি ঃ

নাম	বয়স	বৃত্তি	স্থান
মুৰুলীধৰ দাস	৭৮	সমাজ সেৱক	ডিমৰীয়া
যোগেন কলিতা	৭৩	প্ৰবক্তা	মালয়বাৰী

প্রসঙ্গ গ্রন্থ ঃ

কাকতি, নাৰায়ন কুমাৰ ৰাডু । ***তিৰা ৰাজ্যৰ বুৰঞ্জী***। সম্পা.। প্রথম প্রকাশ। তিৰা স্বায়ত্ত পৰিষদৰ হৈ কার্য্যবাহী শ্রীযুত ৰমাকান্ত দেউৰীৰ দ্বাৰা প্রকাশিত তিৰা স্বায়ত্ত পৰিষদ, অসম মৰিগাঁও, **২০১৬। প্রকাশিত।**

গগৈ, লোকেশ্বৰ। ***তিৰা সংস্কৃতিৰ ৰূপৰেখা***। সম্পা.। প্রথম প্রকাশ। শ্রী উদ্ধৰ সেনাপতি, সভাপতি, তিৰা মাথন লাই তখ্রা, শিলচাং ঃ নগাঁও, ১৯৮৯। প্রকাশিত।

ডেকা, পংকজ কুমাৰ । ***তিৰা জনগোষ্ঠীৰ ভাষা সাহিত্য - সংস্কৃতি***। সম্পা.। প্রথম প্রকাশ। গুৱাহাটী ঃ কস্তুৰী প্রীণ্টার্ছ, ২০১৫। প্রকাশিত।

দাস, মুৰুলীধৰ (সম্পা.) ঃ পাঁচকুৰি লালিলাং। দ্বিতীয় প্রকাশ। গুৱাহাটী ঃ ক্ষেত্রী, ২০০৯। প্রকাশিত।

দেউৰী মনেশ্বৰ। ***মৰিগাঁও জিলাৰ লোকসংস্কৃতি***। সম্পা.। অসম সাহিত্য সভাৰ ৬০ তম মৰিগাঁও অধিবেশনৰ আদৰণি সমিতিৰ হৈ প্রকাশন উপসমিতিৰ দ্বাৰা প্রকাশিত।

নাথ,প্রফুল্ল কুমাৰ। ***অসমৰ জনগোষ্ঠীয় ঐতিৰ্য্য***। সম্পা.। প্রথম প্রকাশ। গুৱাহাটী ঃ বিনোদ নাম পানবজাৰ, গুৱাহাটী, ২০০৯। প্রকাশিত।

বৰুৱা, দীপকজ্যেতি। ***অসমৰ সমাজ সংস্কৃতি আৰু সাহিত্য***। সম্পা.। প্রথম প্রকাশ, জাগীৰোড মহাবিদ্যালয়ৰ প্রকাশন কোষ, ২০১৪। প্রকাশিত।

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

স্বাধীনোত্তৰ ভাৰতৰ শিক্ষা নীতিত মূল্যবোধ শিক্ষাৰ ভূমিকা ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন

পূর্ণিমা পাদি

সহকাৰী অধ্যাপিকা, শিক্ষাতত্ত্ব বিভাগ
যোৰহাট মহাবিদ্যালয় (একত্রিত)
ডাক ঃ যোৰহাট, পিন ঃ ৭৮৫০০১
৬০০১৬৪০৮৯০
punima.padi1234@gmail.com

সাৰাংশ ঃ

শিক্ষা হৈছে মানৱ জাতিৰ আটাইতকৈ শ্রেষ্ঠতম উপহাৰ। শিক্ষাই ব্যক্তিৰ শাৰীৰিক, মানসিক, আধ্যাত্মিক, নৈতিক বিকাশ সাধনৰ ওপৰত সমাজত প্রচলিত সামাজিক ব্যাধিসমূহ আঁতৰ কৰাৰ লগতে শান্তিৰ পৰিৱেশ বৰ্তাই ৰখাত সহায় কৰে। মূল্যবোধ শিক্ষা বুলিলে শিশুৰ বা ব্যক্তিৰ মাজত মানৱতাবাদৰ ভাৱ, আনৰ লগতে নিজৰ জাতিৰ মংগলৰ প্রমূল্য যেনে - আধ্যাত্মিক, অর্থনৈতিক, সৌন্দর্যবোধক, সামাজিক আদিক মানুহৰ জীৱন প্রক্রিয়াৰ ক্ষেত্রত গুৰুত্ব উপলব্ধি কৰোৱা প্রচেষ্টা। মূল্যবোধৰ অবিহনে মানুহে সুস্থ সৱল সমাজ তথা ব্যক্তিত্ব বিকাশৰ কথা ভাৱিব নোৱাৰি। প্রাচীন কালৰে পৰা সময়ে সময়ে মূল্যবোধৰ শিক্ষাৰ গুৰুত্ব আৰু প্রয়োগশীলতাৰ সম্পর্কে ব্যাখ্যা কৰি আহিছে। কেৱল ব্যক্তিৰে নহয় এখন সুস্থ, নিকা সমাজ বা ৰাষ্ট্র গঠনৰ ব্যবেও মূল্যবোধৰ গুৰুত্ব অপৰিহার্য।

মূল্যবোধ শিক্ষাৰ প্রয়োজনীয়তাৰ প্রতি দৃষ্টি ৰাখি স্বাধীনোত্তৰ ভাৰতত শিক্ষা নীতিসমূহ ইয়াৰ প্রাসংগিকতা সম্পর্কে বিভিন্ন পৰামর্শ প্রদান কৰিছে। গৱেষণা-পত্রখনত স্বাধীনোত্তৰ ভাৰতৰ শিক্ষাৰ নীতিসমূহে মূল্যবোধ শিক্ষাৰ বিকাশ আৰু প্রসাৰৰ ক্ষেত্রত কেনেধৰণৰ ভূমিকা হাতত লৈছে সেই সম্পর্কে আলোকপাত কৰা হৈছে। লগতে মূল্যবোধ শিক্ষাই কেনেদৰে ছাত্র-ছাত্রীৰ, শিক্ষক আৰু শিক্ষাব্যৱস্থাৰ গুণগত মানদণ্ড বিকাশত সহায় হৈছে সেই সম্পর্কে দাঙি ধৰাৰ চেষ্টা কৰা হৈছে। আৰু একবিংশ শতিকাত মূল্যবোধ শিক্ষাৰ গুৰুত্ব প্রাসংগিকতাৰ দিশতো আলোকপাত কৰা হৈছে।

বীজ শব্দ ঃ শিক্ষা, মূল্যবোধ, স্বাধীনোত্তৰকাল, শিক্ষানীতি।

০.১ অৱতৰণিকা ঃ

শিক্ষা মানুহৰ মনোৰম আৱিষ্কাৰ, ই শিক্ষাৰ অবিহনে মানৱ কল্যাণ সাধন অর্থহীন হৈ ৰয়। শিক্ষাই অভিজ্ঞতাৰ পুনৰ সংশোধন সাধন কৰে আৰু নিজকে আত্ম-উপলব্ধি, আত্মধাৰণা, সংযম কৰিব শিকায়। মূল্যবোধ শিক্ষা হৈছে এখন সমাজে গুৰুত্বপূর্ণ বুলি ভবা ধাৰণাসমূহৰ বিষয়ে শিকোৱা আৰু শিকাৰ এক প্রক্রিয়া। এই শিক্ষণৰ প্রক্রিয়াৰ লগত ভিন্ন ভিন্ন হ'ব পাৰে। ইয়াৰ আন্তর্নিহিত লক্ষ্য অনুসৰি ছাত্র-ছাত্রীসকলে কেৱল মূল্যবোধসমূহ বুজি পোৱাই নহয়, সেইবোৰক তেওঁলোকৰ মনোভাৱ, আচৰণত প্রতিফলিত কৰা আৰু ভাল নাগৰিকত্ব আৰু নৈতিক অভ্যাসৰ জৰিয়তে সমাজলৈ অৰিহণা

যোগোৱা।

শিক্ষা কেৱল তথ্য আহৰণৰ প্ৰক্ৰিয়া নহয়, শিক্ষাৰ যোগেদি মানৱ চৰিত্ৰ গঠনৰ ধাৰণা পাব পাৰি। সমাজৰ প্ৰতিজন ব্যক্তিয়ে শিক্ষাৰ জৰিয়তে চৰিত্ৰ বিকাশ সাধন মনৰ শক্তি বৃদ্ধি, বুদ্ধিৰ বিস্তাৰ, আত্মনিৰ্ভৰশীল হ'ব বিচাৰে। এই ক্ষেত্ৰত মূল্যবোধ শিক্ষাই সমাজৰ লগত সমাযোজিত কৰি বহনক্ষম পৰিৱেশৰ বিকাশ সাধন কৰাত সহায় কৰে।

কোনো এক বস্তু, ঘটনা বা পৰিস্থিতিৰ পৰিপ্ৰেক্ষিতত শুদ্ধ বা অশুদ্ধ, উপযপক্ত বা অনুপযুক্ত প্ৰয়োনীয় বা অপ্ৰয়োজনীয় আদিক শিক্ষাৰ যোগেদি বিচাৰ কৰিব পৰা প্ৰক্ৰিয়াই হ'ল মূল্যবোধ শিক্ষা। মূল্যবোধ শিক্ষাই বাস্তৱসন্মত আৰু ব্যাপকতা বুজি পোৱা আৰু ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলক তেওঁলোকৰ ব্যক্তিগত আৰু সামাজিক জীৱনত দায়িত্বশীল নাগৰিক হ'বলৈ শিকায়।

ভাৰতবৰ্ষত শিক্ষাৰ প্ৰেক্ষাপটত মূল্যবোধৰ প্ৰসাৰ অতুলনীয়। স্বাধীনতাৰ পূৰ্বে বৈদিক শিক্ষা ব্যৱস্থাত ইয়াৰ জনপ্ৰিয়তা আৰু প্ৰমূল্যবোধৰ বিকাশেই শিক্ষাৰ অন্যতম উদ্দেশ্য আছিল। ঠিক তেনেদৰে বৌদ্ধ আৰু মুছলমান যুগৰ শিক্ষা ব্যৱস্থাতো মূল্যবোধৰ ধাৰণা উৰ্দ্ধত আছিল। ইয়াৰ উপৰিও ভাৰতৰ সামাজিক-সাংস্কৃতিক পৰম্পৰা, সাংস্কৃতিক ভিত্তি, ধৰ্ম, সংবিধান আদিৰ মাধ্যমেৰে জনসাধাৰণক মূল্যবোধৰ প্ৰয়োজনীয়তাক উপলব্ধি কৰায়। এই ক্ষেত্ৰত অভিভাৱক, শিক্ষক, শিক্ষানুষ্ঠান, গণমাধ্যম চৰকাৰ স্বেচ্ছাসেৱী সংগঠনেও মূল্যবোধ বিকাশৰ ক্ষেত্ৰত কেতবোৰ প্ৰসংশনীয় পদক্ষেপ হাতত লোৱা দেখিবলৈ পোৱা যায়।

স্বাধীনোত্তৰ ভাৰতত মূল্যবোধ শিক্ষাৰ প্ৰসাৰৰ গতিধাৰা বাহাল ৰাখিবৰ বাবে আৰু সমাজ বা ব্যক্তিৰ প্ৰয়োজন সাপেক্ষে সময়ে সময়ে বহুতো শিক্ষানীতি প্ৰস্তুত কৰি আহিছে। লগতে ছাত্ৰ-ছাত্ৰীক প্ৰমূল্যবোধৰ উপলব্ধিৰ বাবে যাৱতীয় ব্যৱস্থা লোৱাত দৃষ্টিগোচৰ হয়।

এই গৱেষণা-পত্ৰখনত বিশেষকৈ শিক্ষা নীতি বা আয়োগে কেনেধৰণৰ পদক্ষেপ লোৱা হৈছে সেই সম্পৰ্কে বিশ্লেষণ কৰাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

০.২ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

"স্বাধীনোত্তৰ ভাৰতৰ শিক্ষা নীতত মূল্যবোধ শিক্ষাৰ ভূমিকা ঃ এখন বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন" শীৰ্ষক গৱেষণা-পত্ৰখনৰ আলোচনাৰ প্ৰধান উদ্দেশ্যসমূহ হ'ল ঃ—

১) স্বাধীনোত্তৰ ভাৰতৰ শিক্ষা নীতিসমূহত উল্লেখ কৰা মূল্যবোধ শিক্ষাৰ অধ্যয়ন।

২) একবিংশ শতিকাত মূল্যবোধ শিক্ষাৰ গুৰুত্ব সম্পৰ্কে অধ্যয়ন।

০.৩ অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব ঃ

এই গৱেষণা-পত্ৰখনৰ যোগেদি ভাৰতবৰ্ষত স্বাধীনতাৰ পিছত মূল্যবোধ শিক্ষাৰ বিকাশৰ বাবে শিক্ষা নীতি বা আয়োগসমূহে কেনেধৰণৰ ব্যৱস্থা হাতত লৈছে সেই সম্পৰ্কে জ্ঞাত হ'ব পাৰিব। ইয়াৰ উপৰিও মূল্যবোধৰ প্ৰসাৰ আৰু প্ৰয়োজনীয়তাৰ প্ৰমূল্য ছাত্ৰ-ছাত্ৰী, শিক্ষক-শিক্ষয়ত্ৰীক উপলব্ধি কৰোৱা আৰু মূল্যবোধৰ গতিধাৰাবাহাল ৰাখিবৰ বাবে কেনেধৰণে আগবাঢ়িব লাগিব সেই সম্পৰ্কে অনুধাৱন কৰোৱাৰ চেষ্টা কৰা।

০.৪ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

গৱেষণা-পত্ৰখনিৰ মূল বিষয়ে আলোচনা কৰোঁতে প্ৰধানকৈ বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি গ্ৰহণ কৰা হৈছে যদিও প্ৰয়োজন সাপেক্ষে বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতিত গ্ৰহণ কৰা হ'ব। লগতে গৱেষণা-পত্ৰখনি প্ৰস্তুত কৰোতে গৌণ পদ্ধতি যেনে- কিতাপ, গৱেষণাপত্ৰ, ইণ্টাৰনেট, বাতৰি কাকত, সাক্ষাৎকাৰৰ কথোপকথন আদিৰ বিভিন্ন মাধ্যমৰ সহায়ত লোৱা হৈছে।

১.০ স্বাধীনোত্তৰ ভাৰতৰ শিক্ষা নীতিত মূল্যবোধ শিক্ষাৰ ভূমিকা ঃ

সমগ্ৰ বিশ্বত মূল্যবোধ শিক্ষাৰ প্ৰয়োজনীয়তা আৰু প্ৰাসংগিকতাৰ ওপৰত গুৰুত্ব আৰোপ কৰি বিভিন্ন সময়ত বহুতো নীতি বা আয়োগে মূল্যবোধ শিক্ষাৰ বিকাশৰ দিশ উত্থাপন কৰি আহিছে। ব্যক্তিৰ গুণগত মানদণ্ড বিকাশ সাধনৰ বাবে শিক্ষাৰ নীতিসমূহ উল্লেখনীয় পদক্ষেপ গ্ৰহণ কৰি আহিছে। স্বাধীনতাৰ পিছৰে পৰা ভাৰতবৰ্ষত মূল্যবোধ শিক্ষাৰ ওপৰত যথেষ্ট গুৰুত্ব প্ৰদান কৰা দেখিবলৈ পোৱা যায়। গৱেষণা-পত্ৰখনত নীতি বা আয়োগে প্ৰদান কৰা পৰামৰ্শৰাজীৰ সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা হ'লঃ—

১) বিশ্ববিদ্যালয় শিক্ষা আয়োগ (১৯৪৮-১৯৪৯)

এই আয়োগৰ নেতৃত্বত আছিল ড° সৰ্বপল্লী ৰাধাকৃষ্ণণ। এই আয়োগৰ পৰামৰ্শ অনুসৰি ঃ—

(ক) উপদেশ পদ্ধতিৰ সহায়ত ব্যক্তিগত উদাহৰণ, দৈনন্দিন জীৱন আৰু কৰ্মৰ যোগেদি মূল্যবোধ শিক্ষা প্ৰদান কৰা।

(খ) শুদ্ধ আৱেগ, ভাল নৈতিক চৰিত্ৰ গঠনৰ যোগেদি ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ অভ্যাস গঢ়ি তোলা।

(গ) নৈতিক শিক্ষাৰ ব্যৱস্থা উন্নত সাধনৰ বাবে

বিদ্যালয়ত মহান ব্যক্তিত্বৰ জীৱনী অধ্যয়ন, প্ৰাৰ্থনা, ধৰ্মীয় আদৰ্শ শিক্ষা সহযোগিতা আগবঢ়োৱা আদি দিশৰ ওপৰত গুৰুত্ব দিয়া।

২) মাধ্যমিক শিক্ষা আয়োগ (১৯৫২-১৯৫৩)

মাধ্যমিক শিক্ষা আয়োগৰ সভাপতি আছিল ড০ লক্ষ্মণস্বামী মুদালিয়াৰ। এই আয়োগে মূল্যবোধ শিক্ষা বিকাশৰ বাবে তলত দিয়া ধৰণে পৰামৰ্শ আগবঢ়াইছিল ঃ—

(ক) ছাত্ৰ-ছাত্ৰীক চৰিত্ৰ আৰু ব্যক্তিত্ব গঠনৰ প্ৰশিক্ষণ প্ৰদান।

(খ) ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ সম্পূৰ্ণ সম্ভাৱনাৰ উপলব্ধি কৰোৱা।

(গ) সম্প্ৰদায়ৰ কল্যাণত বৰঙণি আগবঢ়োৱা আৰু সমাজৰ সামগ্ৰিক বিকাশৰ বাবে ধৰ্মীয় শিক্ষাৰ কবলৰ পৰা শিক্ষা মুক্ত কৰা।

(ঘ) নৈতিক নিৰ্দেশনাৰ বাবে সম্বন্ধিত পদ্ধতিৰে ব্যক্তিৰ মাজত মূল্যবোধৰ গুৰুত্ব সম্পৰ্কে অৱগত কৰা।

৩) শ্ৰী প্ৰকাশ কমিটি (১৯৫৯) ঃ

কেন্দ্ৰীয় শিক্ষা উপদেষ্টা মণ্ডলীয়ে ১৯৫৯ চনত ধৰ্মীয় আৰু নৈতিক নিৰ্দেশনাৰ ওপৰত এখন কমিটি গঠন কৰে। সেই কমিটিখনক শ্ৰীপ্ৰকাশ কমিটি নামেৰে জনা যায়।

এই কমিটিৰ মূল্যবোধ শিক্ষাৰ ওপৰত এনেদৰে মন্তব্য আগবঢ়াইছিল ঃ—

(অ) মূল্যবোধ শিক্ষাপ্ৰদানৰ বাবে প্ৰাথমিক বিদ্যালয়ত সপ্তাহত দুটা শ্ৰেণী, মাধ্যমিক বিদ্যালয়ত এটা শ্ৰেণী আৰু বিশ্ববিদ্যালয় পৰ্যায়ত নিয়মীতভাৱে এই শিক্ষা প্ৰদানৰ ব্যৱস্থা গ্ৰহণ কৰা।

(আ) নৈতিক আৰু আধ্যাত্মিক শিক্ষা প্ৰদানৰ বাবে সংৰচা প্ৰস্তুত কৰা।

(ই) সঠিক পাঠদান আৰু শিক্ষণৰ জৰিয়তে বেয়া অভ্যাস আৰু অনৈতিক আচৰণ দূৰ কৰা।

৪) আৱেগিক সংহতি কমিটি (১৯৬১) ঃ

১৯৬১ চনৰ মে' মহৰ শেষৰ ফালে আৱেগিক সংহতি কমিটি গঠন কৰা হৈছিল। ড০ সম্পূৰ্ণানন্দৰ অধ্যক্ষতাত এই কমিটিখন পৰিচলনা কৰিছিল। এই কমিটিৰ পৰামৰ্শ অনুসৰিঃ—

(১) জাতীয় জীৱনত আৱেগিক সংহতিৰ বিকাশৰ বাবে শিক্ষা প্ৰক্ৰিয়াৰ ব্যৱস্থা কৰা।

(২) সকলো যুৱক আৰু বিশেষকৈ বিদ্যালয় আৰু মহাবিদ্যালয়ৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ বাবে ইতিবাচক শৈক্ষিক কাৰ্যসূচীৰ ব্যৱস্থা গ্ৰহণ কৰা।

(৩) বৈচিত্ৰ্যৰ মাজত ঐক্য নীতিৰ ওপৰত শিক্ষা ব্যৱস্থা প্ৰতিষ্ঠা কৰা।

৫) শিক্ষা আয়োগ (১৯৬৪-১৯৬৬) ঃ

১৯৬৪-৬৬ চনৰ শিক্ষা আয়োগে শিক্ষা আৰু ৰাষ্ট্ৰীয় উন্নয়নৰ এপৰত গুৰুত্ব আৰোপ কৰিছিল। ড০ ডি.এচ. কোঠাৰীযে সকলো ধৰ্মৰ মূল্যবোধ, গণতন্ত্ৰ, সমাজবাদ আৰু সমতাৰ ওপৰত গুৰুত্ব আৰোপ কৰিছিল।

এই আয়োগে মূল্যবোধ শিক্ষা বিকাশৰ ওপৰত তলত উল্লেখ কৰা ধৰণে পৰামৰ্শ আগবঢ়াই ঃ—

(১) সামাজিক আৰু নৈতিক মূল্যবোধৰ বাবে শিক্ষাৰ ব্যৱস্থা কৰিব লাগে।

(২) প্ৰয়োজনীয় মূল্যবোধৰ অৱক্ষয়ৰ বাবে উদ্বেগ প্ৰকাশ কৰা।

(৩) শিক্ষা আৰু জাতীয় বিকাশৰ ধাৰণা ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ মাজত বীজ ৰূপণ কৰা।

(৪) বিজ্ঞান আৰু প্ৰযুক্তিবিদ্যাৰ যোগেদি দক্ষতা অৰ্জন কৰাৰ লগতে নৈতিক আৰু মানৱীয় মূল্যবোধৰ সু ম বিকাশ সাধন।

(৫) প্ৰত্যক্ষ নৈতিক নিৰ্দেশনা প্ৰদানৰ পৰামৰ্শ প্ৰদান কৰা।

৬) ৰাষ্ট্ৰীয় শিক্ষা নীতি (১৯৮৬) ঃ

ৰাষ্ট্ৰীয় শিক্ষা নীতিৰ মতে ভাৰতবৰ্ষ হ'ল বহু ধৰ্ম অৰ্থাৎ ধৰ্মনিৰপেক্ষ ৰাষ্ট্ৰ, ইয়াত বিশেষ এটা ধৰ্মক প্ৰাধান্য দিয়া অসম্ভৱ। এই নাতিয়ে নৈতিক শিক্ষা শব্দটোক ব্যাপক অৰ্থ প্ৰদান কৰিছিল। এই নীতিয়ে শিক্ষাক সামাজিক আৰু নৈতিক মূল্যবোধৰ যোগেদি প্ৰদান কৰাৰ পোষকতা কৰিছিল। ইয়াৰ মতে শিক্ষাৰ যোগেদি সৰ্বসাধাৰণ ঐক্য আৰু সংহতিৰ দিশেৰে সাৰ্বজনীন আৰু চিৰন্তন মূল্যবোধক প্ৰতিপালন কৰাৰ ওপৰত গুৰুত্ব আৰোপ কৰে।

৭) ৰাষ্ট্ৰীয় শিক্ষা গৱেষণা আৰু প্ৰশিক্ষণ পৰিষদ (NCERT) **ৰ দ্বাৰা আয়োজিত উচ্চ পৰ্যায়ৰ মূল্যবোধ ভিত্তিক শিক্ষাৰ আলোচনাচক্ৰ (১৯৯১) ঃ**

১৯৯১ চনৰ আলোচনা চক্ৰৰ মতে তলত উল্লেখ কৰা ধৰণে পৰামৰ্শ আগবঢ়াইছিল ঃ—

(১) গতিশীলতা নীতিৰ ভিত্তি সমগ্ৰ দেশতে মূল্যবোধভিত্তিক শিক্ষাৰ ব্যৱস্থা কৰা।

(২) ছাত্ৰ-ছাত্ৰী আৰু শিক্ষকসকলৰ মাজত মূল্যবোধৰ

বিকাশৰ বাবে ৰাজ্যিক পর্যায়ত শিক্ষকসকলক প্রশিক্ষণৰ বাবে শিক্ষক দিকবিন্যাসৰ বিশেষ কার্যসূচীৰ ব্যৱস্থা কৰা।

(৩) মূল্যবোধভিত্তিক শিক্ষক শিক্ষাৰ কার্যসূচীত সংযত পদ্ধতিৰ ওপৰত গুৰুত্ব প্রদান।

৮) ৰাষ্ট্রীয় শিক্ষা নীতি-কর্ম আঁচনি (১৯৯২) ঃ

১৯৯২ চনৰ কর্ম আঁচনি অনুসৰি মাধ্যমিক পর্যায়কে ধৰি বিদ্যালয় শিক্ষাৰ সকলো পর্যায়তে মূল্যবোধ শিক্ষাৰ বিভিন্ন উপাদানক পাঠ্যক্রমত ওকত্রিত কৰিবলৈ চেষ্টা কৰিছিল।

৯) মূল্যবোধ শিক্ষা ঃ শিক্ষকৰ বাবে হাতপুথি (কেন্দ্রীয় মাধ্যমিক শিক্ষা পৰিষদ (CBSE), **১৯৯৭) ঃ**

কেন্দ্রীয় মাধ্যমিক শিক্ষা পৰিষৰ বাবে প্রস্তুত কৰা শিক্ষকৰ হাতপুথিত মূল্যবোধ শিক্ষাৰ বিকাশৰ বাবে কেতবোৰ দিশ উল্লেখ কৰিছিল।

(১) শিক্ষা প্রক্রিয়াত মূল্যবোধ শিক্ষা অন্তর্ভুক্তিৰ বাবে প্রতিশ্রুতি প্রদান।

(২) শিক্ষার্থীয়ে আভ্যন্তৰীণ কৰা প্রয়োজনীয় মূল্যবোধৰ প্রতিফলন কৰা।

১০) বিদ্যালয় শিক্ষাৰ বাবে ৰাষ্ট্রীয় পাঠ্যক্রম সংৰচনা (২০০০) ঃ

এই আঁচনিৰ মতে —

(ক) পাঠ্যক্রমত মূল্যবোধ ভিত্তিক শিক্ষা অন্তর্ভূক্ত কৰাৰ বাবে প্রয়োজনীয় ব্যৱস্থা গ্রহণ কৰা।

(খ) শিক্ষাৰ মূল্যবোধ ভিত্তিক কর্মৰ পুনৰ আৰম্ভণি কৰা।

১১) মূল্যবোধ শিক্ষা ঃ শিক্ষকৰ বাবে হাতপুথি (CBSE, **২০০৩) ঃ**

আঁচনি অনুসৰি মৌলিক প্রয়োজন আৰু মূল্যবান বিনিয়োগ স্বৰূপে স্বীকৃতি প্রদানৰ বাবে মূল্যবোধ সিক্ষাৰ ব্যৱস্থ্যা কৰা।

১২) ৰাষ্ট্রীয় পাঠ্যক্রম সংৰচনা (NCF,২০০৫) **ঃ**

ৰাষ্ট্রীয় পাঠ্যক্রম সংৰচনা, ২০০৫ ৰ মতে —

(১) সমাজত শান্তি, মনৱীয়তা আৰু সহনশীলতা মনোভাৱ বিকাশৰ বাবে মূল্যবোধৰ প্রসাৰিত কৰা।

(২) পাঠাক্রম অনুসৰি বয়সৰ উপযুক্ত পর্যায়ৰ সকলো ছাত্র-ছাত্রীৰ মাজত মূল্যবোধ শিক্ষা প্রদান কৰাটো প্রয়োজনীয়।

(৩) অবিৰত আৰু বিস্তৃত মূল্যায়ন (CCE) সম্বন্ধিত শিক্ষকৰ হাতপুথি (CBSE, ২০০৯) মতে গুণগত জীৱনৰ নির্ণায়ক স্বৰূপে মূল্যবোধক প্রতিফলিত কৰা আৰু দহটা নীতি তালিকাযুক্ত আৰু প্রতিটোৰ বিৱৰণ প্রদান কৰা যিবোৰ মূল্যবোধৰ সংৰচনা গঠন কৰিব।

১৪) ৰাষ্ট্রীয় শিক্ষা নীতি (NEP), **২০২০ ঃ**

ৰাষ্ট্রীয় শিক্ষা নীতি, ২০২০ ৰ জৰিয়তে শিক্ষাৰৰ ব্যাপক পৰিৱর্তনৰ কল্পনা কৰা হৈছে। K. Kasturirangan ৰ অধ্যক্ষাত কেন্দ্রীয় কেবিনেট ২০২০ চনৰ ২৯ জুলাই ৰাষ্ট্রীয় শিক্ষানীতি অনুমোদন জনায়। প্রৱেশ, সমতা, গণগত মান, ব্যয়সাধ্যতা আৰু জবাবদিহিতাৰ মূল স্তম্ভসমূহৰ ওপৰত নির্মিত। এই নীতিয়ে মূল্যবোধ শিক্ষাৰ বিকাশৰ বাবে তলত উল্লেখ কৰা ধৰণে পৰামর্শ আগবঢ়ায় ঃ—

১) মূল্যবোধ শিক্ষা প্রৱর্তনক সহায় কৰিব পৰা উৎসসমূহ ঃ

নতুন শিক্ষা নীতি ২০২০ৰ এক অবিচ্ছেদ্য অংশ হিচাপে গঢ় লৈ উঠিছে। এই নীতিয়ে মূল্যবোধ শিক্ষা প্রৱর্তনৰ বাবে বিদ্যালয়ত কর্মশালৰ জৰিয়তে মূলসুঁতিলৈ লৈ অনাৰ প্রয়াসৰ দিশ উল্লেখ কৰিছে। লগতে NGO সমূহ বিদ্যালয়সমূহৰ কার্য্য পৰিকল্পনা, কর্মশালা, সামগ্রী স্থাপন কৰাত সহযোগী উৎস হিচাপে কাম কৰিব।

২) পাঁচটা মানৱীয় মূল্যবোধ ঃ

নতুন শিক্ষা নীতি, ২০২০ এ ৫টা সার্বজনীন মূল্যবোধ-সত্য, শান্তি, অহিংসা, প্রেম আৰু সৎ আচৰণৰ কথা বিশেষভাৱে উল্লেখ কৰা হৈছে। ইয়াৰ জৰিয়তে ছাত্র-ছাত্রীৰ দেশ-প্রেম, ভাল আদর্শ, সার্বজনীন প্রর্থনা, আত্মনিয়ন্ত্রণ, কর্তব্যবোধ, সেৱাৰ ইচ্ছা, দায়বদ্ধতা, সৃষ্টিশীলতা আদি গুণৰ বিকশিত কৰিব লাগিব।

৩) পূর্ব বাল্যকাল ঃ

নতুন শিক্ষানীতি, ২০২০এ উল্লেখ কৰিছে যে সেই সময়ছোৱাত ছাত্র-ছাত্রীক ভাল অভ্যাস, মূল্যবোধ, অনুশাসন, আচৈ-ব্যৱহাৰ, সহায়ক হোৱা, বন্ধুত্বপূর্ণ, ভাগ-বতৰা কৰিবলৈ শিকা, ইজনে সিজনৰ প্রতি যত্ন আৰু চিন্তা আদি মূল্যবোধৰ ওপৰত গুৰুত্ব দিয়া উচিত।

৪) বিদ্যালয়ত ছাত্র-ছাত্রীক দৈনন্দিন আত্মবিকাশৰ অভ্যাস, প্রার্থনা, ধ্যন যোগ, পূজাৰ অভ্যাসত প্রতিষ্ঠিত হোৱ, অনুশাসন, নৈতিকতা, সৎ আচৰণ আদি কামবোৰক উৎসাহ প্রদান কৰা।

ওপৰত উল্লেখিত নীতি, আঁচনি, আয়োগসমূহে মূল্যবোধ শিক্ষাৰ গুৰুত্ব আৰু উপযোগিতাৰ পৰিচয় বহন কৰিছে। সময় আৰু সমাজৰ পৰিৱর্তনৰ লগে লগে মূল্যবোধৰ

দৃষ্টিভংগীও সাল-সলনি হোৱা পৰিলক্ষিত হয়। আমি সিমানেই আধুনিকীকতাৰ পথেৰে আগবাঢ়ি নাযাওঁ কিয় সমাজৰ প্ৰমূল্যবোধে দেশখনৰ অলংকাৰ ৰূপে থিয় দি দেশৰ স্বাৰ্থত, ব্যক্তিৰ স্বাৰ্থ, সমাজখনক সূচাৰু ৰূপে পৰিচালনা কৰাৰ ক্ষেত্ৰত মূল্যবোধৰ শিক্ষা একমাত্ৰ আহিলা হিচাপে গুৰুত্বতা বহন কৰে।

২.০ একবিংশ শতিকাত মূল্যবোধ শিক্ষাৰ গুৰুত্ব ঃ

বৰ্তমান আধুনিক বস্তুবাদী সমাজখনে আমাৰ জীৱন ধাৰণৰ মানদণ্ড উন্নতি সাধন কৰিছে যদিও জীৱনৰ মূল্যবোধ সমপৰ্যায়ভাৱে উন্নতি সাধন কৰিব পৰা নাই। জ্ঞানৰ বিস্ফোৰণ, বিজ্ঞান আৰু প্ৰযুক্তি বিজ্ঞান, জনসংখ্যা বিস্ফোৰণৰ পৰিপ্ৰেক্ষিতত মানুহে বস্তুগত পৃথিৱীক প্ৰকৃত সুখ বুলি ভাৰি ভুল ফথেৰে অগ্ৰসৰ হোৱা দেখিবলৈ পোৱা গৈছে।

যোৱা শতিকাৰ শেষ দশকৰ পৰা সমাজৰ সকলো পৰ্যায়তে আৰু সকলো দিশতে মানৱীয় মূল্যবোধৰ অৱক্ষয়ৰ দিশে গতি কৰা পৰ্য্যবেক্ষিত হৈছে।

ঠিক একে ধৰণে একবিংশ শতিকাত ইয়াৰ প্ৰভাৱ দিনক দিনে বাঢ়ি যাব ধৰিছে। ইয়াৰ মূল কাৰণসমূহ হ'ল ঃ— অন্যায়, ক্ষমতাৰ বধন, সংবেদনশীলতা, ৰুছি আৰু আচৰণৰ অৱনতি, লোভ, দুৰ্নীতি, কৃপণতা, শোষণ, বৰ্জন, লুণ্ঠন, ছলনা চোৰাং বেপাৰ, চুৰি, ছদ্মবেশ, মানৱ অধিকাৰ অপব্যৱহাৰ আদি। ইয়াৰ ফলস্বৰূপে ব্যক্তিৰ মনৰ শান্তি নোহোৱা হৈছে আৰু সমাজৰ প্ৰতিটো ক্ষেত্ৰতে সামাজিক, সাংস্কৃতিক, ধৰ্মীয়, আৱেগিক, নৈতিক, বৌদ্ধিক, আধ্যাত্মিক আৰু ৰাজনৈতিক মূল্যবোধৰ অৱক্ষয় হৈছে। মানুহে শক্তিৰ অৱব্যৱহাৰ কৰিবলৈ কুণ্ঠাবোধ নকৰা হৈছে।

সেয়েহে ২১ শতিকাত মূল্যবোধৰ গুৰুত্বৰ বীজ ৰূপণ কৰিবৰ বাবে সমাজৰ প্ৰত্যেকজন ব্যক্তিয়ে উদাৱভাৱে সততা, ন্যায়, সহযোগিতাৰে কাম কৰিব লাগিব। তলত গুৰুত্ব সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা হ'ল ঃ—

১) পৰিৱেশৰ লগত সুস্থ সমাযোজনা (Healthy adjustment with Enviroment) ঃ

ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলে যিকোনো সমাজৰ পৰিস্থিতিৰ লগত নিজকে সুস্থভাৱে সমাযোজিত কৰিবৰ বাবে মূল্যবোধ শিক্ষাৰ প্ৰয়োজন। মূল্যবোধ শিক্ষাৰ যোগেদি বিভিন্ন সামাজিক গুণ যেনে ঃ- সহযোগিতাৰ ধৈৰ্য্য, স্বাধীনতা, বন্ধুত্ব, ধৰ্মনিৰপেক্ষতা আজিদ আয়ত্ব কৰি বাস্তৱ জীৱনত প্ৰয়োগ কৰিব পাৰে।

২) সাংস্কৃতিক বিকাশ (Cultural Development) ঃ

মূল্যবোধ আৰু সংস্কৃতি দুয়োটাই এটাই আনটোক প্ৰভাৱিত কৰে। শিক্ষাৰ ওপৰত প্ৰতিষ্ঠিত মূল্যবোধ সংস্কৃতিৰ বিকাশ যথেষ্ট সহায় কৰে। মূল্যবোধ শিক্ষাৰ যোগেদি সমাজৰ সাংস্কৃতিক পৰম্পৰা ৰক্ষা কৰাৰ লগতে আন এটা প্ৰজন্মলৈ সংৰক্ষণ আৰু আগবঢ়াই নিয়াটো সহায় কৰে। ই ব্যক্তিৰ মনত চিৰন্তন সত্য আৰু সুন্দৰৰ মনোভাৱ সৃষ্টি কৰিব পাৰে।

৩) দ্বন্দ্ব সমাধান (Solving Conflicts) ঃ

বৰ্তমান সমাজত জাতি, বৰ্ণ, ধৰ্ম, প্ৰদেশ সংস্কৃতি আৰু প্ৰথাৰ নামত পৰম্পৰাগত আৰু আধুনিক দৃষ্টিভংগীৰ মাজত কেতবোৰ দ্বন্দ্ব দেখিবলৈ পোৱা যায়। এই দ্বন্দ্ববোৰে সমাজখনৰ বিকাশত বাধাৰ প্ৰাচীৰ হৈ থিয় দিয়ে। সেয়েহে সমাজৰ বিকাশৰ বাবে মূল্যবোধ শিক্ষাৰ গুৰুত্ব অপৰিসীম।

৪) ছাত্ৰৰ ভৱিষ্যতৰ বাবে প্ৰস্তুত কৰা (Preparing students for the future) ঃ

জ্ঞান আহৰণেই কেৱল আৰু একমাত্ৰ লক্ষ্য হ'ব নোৱাৰে। শিশুৰ বা ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ বিকাশৰ বাবে জ্ঞান আহৰণৰ সমভাৱে নৈতিক, আধ্যাত্মিক মূল্যবোধৰ বিকাশ সাধন কৰিব লাগিব। এই দিশত মূল্যবোধ শিক্ষাই যথেষ্ট সহায় কৰে।

৫) যুৱ-উশৃংখলতাৰ সমস্যা সমাধান (Solving the Problem of Youth Unrest) ঃ

মূল্যবোধ শিক্ষা অবিহনে দেশৰ ভৱিষ্যতৰ গুৰি ধৰোতাঁ ৰূপী যুৱক-যুৱতীসকল বৰ্তমান সময়ত বিভিন্ন ক্ষেত্ৰত বিপথগামী হোৱা পৰিলক্ষিত হৈছে। যাৰ ফলস্বৰূপে যুৱ উশৃংখলতা দিনক দিনে বৃদ্ধি পাব ধৰিছে।

মূল্যবোধ শিক্ষাৰ অভাৱত সন্তানে মাক-দেউতাক অথবা অভিভাৱকক শ্ৰদ্ধা নকৰা, শিক্ষকক বেয়া ব্যৱহাৰ কৰা, মদ্যপান কৰা, অসামাজিক কাৰ্যত লিপ্ত হোৱা আদিবোৰ গুৰুতৰ ব্যাধি দেখা দিছে। সেয়েহে একবিংশ শতিকাত মূল্যবোধ শিক্ষাৰ প্ৰয়োজনীয়তা বৃদ্ধি পাইছে। এনেধৰণৰ ব্যাধিৰ পৰা নিৰ্মূলৰ ক্ষেত্ৰত সহায় কৰে।

৬) গণতান্ত্ৰিক গুণাৱলীৰ বিকাশ (Development of Democratic Qualities) ঃ

মূল্যবোধ শিক্ষাই ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ মাজত কেতবোৰ গণতান্ত্ৰিক গুণাৱলী যেনে - ব্যক্তিৰ মৰ্যাদা, সমতা, ন্যায়, স্বাধীনতা, সহযোগিতা, ভ্ৰাতৃত্ববোধ, সহানুভূতি আদি বিকশাই তোলে। গণতন্ত্ৰৰ সফলতাৰ বাবে গণতান্ত্ৰিক মূল্যবোধ অপৰিহাৰ্য।

বিশ্বৰ এগৰাকী বিখ্যাত বৈজ্ঞানিক এলবার্ট আইনষ্টাইনৰ মতে, "আমাৰ সাধাৰণ জীৱনৰ নীতিগত আৰু নৈতিক অৱয়বৰ বাবে এক ইতিবাচক আকাংক্ষা আৰু প্ৰচেষ্টাঅত্যাধিক গুৰুত্বৰ বিষয়। আমি যদি অতীতৰ সভ্যতা-সংস্কৃতিবোৰক বাদ দি বৰ্তমানক আদৰিব খোজো, তেতিয়া সমাজৰ মূল্যবোধৰ অৱক্ষয় ঘটিব।

৩৩.০ উপসংহাৰ ঃ

ওপৰৰ আলোচনাৰ পৰা ক'ব পাৰি যে মূল্যবোধ শিক্ষাই ব্যক্তিক প্ৰত্যাহ্বানমূলক পৰিস্থিতিত সঠিক সিদ্ধান্ত গ্ৰহণৰ দক্ষতা বৃদ্ধি কৰাত সহায় কৰে। লগতে ইতিবাচক মনোভাৱ, সামাজিক দক্ষতা, সমালোচনাত্মক চিন্তাধাৰাৰ বিকাশ সাধনত সহায় কৰে। ভাৰতৰ শিক্ষানীতি আৰু আয়োগৰ পৰামৰ্শৱলী সমূহৰ পৰা গম পোৱা গ'ল যে সমাজ, দেশ আৰু ৰাষ্ট্ৰৰ সুস্থ পৰিচালনাৰ ক্ষেত্ৰত মূল্যবোধৰ গুৰুত্ব অপৰিহাৰ্য।এই গৱেষণা-পত্ৰৰ যোগেদি ছাত্ৰ-ছাত্ৰীক মূল্যবোধ শিক্ষাৰ প্ৰসাৰ আৰু প্ৰয়োজনীয়তাৰ সম্ভেদ দিয়াৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে। কেৱল মূল্যবোধ শিক্ষা নীতি বা আয়োগৰ লিখিত ৰূপত সীমাবদ্ধ নাথাকি, শ্ৰেণীকোঠাত প্ৰায়োগিক ব্যৱস্থাৰ প্ৰয়োজনীয়তা বৰ্তমান সময়ত যথেষ্ট দৰকাৰ হৈছে।

সেয়েহে অতীতৰ সভ্যতা সংস্কৃতিক একবিংশ শতিকাত ধৰি ৰাখিবৰ বাবে সমাজত মূল্যবোধ শিক্ষাৰ গুৰুত্ব বহু পৰিমাণে আছে। মূল্যবোধ শিক্ষাৰ অবিহনে যুৱ প্ৰজন্মৰ মাজত সামাজিক আৰু মানৱীয় মূল্যবোধৰ সংঘাতৰ সৃষ্টি হ'ব।

গতিকে চৰকাৰৰ লগতে অভিভাৱক আৰু সমাজেও মূল্যবোধ বিকাশৰ বাবে জনসাধাৰণৰ মাজত সজাগতাৰ সৃষ্টি কৰিব লাগিব। চৰকাৰী গুৰুত্বপূৰ্ণ আঁচনিসমূহ প্ৰণয়নৰ লগতে প্ৰাথমিক পৰ্যায়ৰ পৰা উচ্চ শিক্ষালৈ পাঠ্যক্ৰমত ইয়াৰ প্ৰয়োজনীতা সম্পৰ্কে লিপিবদ্ধ কৰিব লাগিব আৰু বিভিন্ন সহ-পাঠ্যক্ৰমিক কাৰ্য্যাৱলীৰ যোগেদি ছাত্ৰ-ছাত্ৰীক মূল্যবোধৰ বিকাশ সাধনৰ গৰুত্ব দিব লাগিব। ❑

সহায়ক গ্ৰন্থসূচী ঃ

১) চলিহা, বেদকুমাৰ, শইকীয়া তৰুণ, শইকীয়া ৰুনু, স্বাধীনোত্তৰ কালৰ ভাৰতৰ শিক্ষা, বিদ্যাভৱন, মহাত্মা গান্ধী পথ, যোৰহাট-১।

২) Ali, Lokman (2016), Emerging Issues and Trends in Indian Education. Ashok Book Stall, Panbazar, Guwahati-1

৩) Gupta, N.L.(2000). Human Values in Education. Concept Publishing Company, New Delhi-110059.

৪) Sarma, M.K. (2011). Higher Secondary Education (Part-II). Jyoti Prakashan, Jaswant Road, Panbazar, Guwahati-781001.

৫) Chand, J. (2007). Value Education. Anshah Publishing House, Delhi-110092

৬) Bhardwaj, T.R. (1999). Education of Human Values. New Delhi, Mittal Publication

৭) Ravi, Samuel (2015). Education in Emerging India. New Delhi, PHI Learning Private Limitd.

৮) Soundararajan, M.S. Rajalakshmi, R. (2023). Himalaya Publishing House.

৯) Gupta & Sood & Tiwari & Kaushikee & Jindal. P (2017). Value Education. New Delhi, Vikas Publishinh House PVT.LTD.

১০) https:\\www.dailyassm.com\2023\07\ba-3rd-sem-education-major-chapter-3.html.

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

কৃষক বিদ্রোহ ঃ সমকালীন আলোচনী আৰু অন্যান্য প্রসংগ - এক বিশ্লেষণ

ৰাজেন দাস

গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
ডিব্রুগড় বিশ্ববিদ্যালয়
ডিব্রুগড়, অসম, পিন ঃ ৭৮৬০০৪
৯১০১২২১৪৩৬
rajendas3687@gmail.com

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

অসম মুলুকত ব্রিটিছসকলে নিজৰ সাম্ৰাজ্য বিস্তাৰ কৰিবলৈ উঠিপৰি লাগিছিল। সেইক্ষেত্রত তেওঁলোকে প্রথমৱাস্থাৰ ধাৰণাৰ সলনি কৰিব বুলি অসমৰ জনতাই ভাব নাছিল। অৱশ্য মানৰ আক্রমণতকৈ তেওঁবিলাকে সকাহ দিয়া ধৰণৰ অৱস্থাক অদূৰদর্শিতাৱে আদৰি লৈছিল। অসমত বাণিজ্যিকভাৱে সফল হোৱাৰ বাট মোকলাই লৈছিল আৰু সফলো হৈছিল। যদিও সাধাৰণ কৃষকৰ পৰা নানান বিদ্রোহৰ বাবেও সাজু হৈ আছিল। ১৮২৬ চনত ইয়াণ্ডাবু সন্ধি সম্পন্ন হয় আৰু এই চুক্তিৰ চর্ত অনুসৰি অসমৰ শাসনভাৰ ব্রিটিছসকল অর্থাৎ অসমৰ শাসনভাৰ ইষ্ট ইণ্ডিয়া কোম্পানীৰ হাতলৈ যায়। এই কার্যৰ লগে লগে আহোমসকলে অসমত শাসন কৰি অহা ছশবছৰীয়া ৰাজত্বকালৰ অৱসান ঘটিলে। ইয়াৰ পিছৰে পৰা অসমত ব্রিটিছসকলৰ ঔপনিৱেশিক শাসনৰো আৰম্ভণি ঘটে। এই ঔপনিৱেশিক শাসনে অসমৰ ৰাজনৈতিক ক্ষেত্রখনত বিশেষকৈ—"১৮২৬ খ্রীষ্টাব্দৰ পৰা প্রথম দহ বছৰ কাল অসমৰ ৰাজনৈতিক অৱস্থা আছিল অস্থিৰ। ১৮২৮ খ্রীষ্টাব্দত নামনি অসম স্থায়ীভাৱে বৃটিছ শাসনাধীন কৰা, ১৮১৮ আৰু ১৮৩০ খ্রীষ্টাব্দত পিয়লি ফুকন—গোমধৰ কোঁৱৰ—ধনঞ্জয় বৰগোহাঁইৰ নেতৃত্বত হোৱা বৃটিছৰ বিৰুদ্ধে সশস্ত্র বিদ্রোহ, ১৮৩৩ খ্রীষ্টাব্দত পুৰন্দৰ সিংহক উজনি অসমৰ কৰতলীয়া ৰজা হিচাপে দিয়া নিযুক্তি, ১৮৩৪ খ্রীষ্টাব্দত অসমৰ আয়ুক্ত হিচাপে জেনেৰেল জেনকিন্সৰ যোগদান, ১৮৩৮ খ্রীষ্টাব্দত পুৰন্দৰ সিংহক ৰজা ভাঙি উজনি অসমক স্থায়ীভাৱে বৃটিছৰ অধীনলৈ অনা কার্য আৰু ১৮৩৯ খ্রীষ্টাব্দত বৰসেনাপতিৰ ৰাজ্য বৃটিছ ৰাজ্যৰ অন্তর্ভূক্তি—এই ৰাজনৈতিক ঘটনাৱলীয়েই পিছৰ এশ বছৰৰ অসমৰ ভাগ্য নির্ণয় কৰি দিলে।" (উৎস-নগেন শইকীয়া, অৰুণোদয়ৰ পৰা জোনাকীলৈ, পৃ.৬) অসমৰ কৃষকসকলে প্রাপ্য অধিকাৰৰ বাবে প্রতিবাদ কৰিবলৈ আগবাঢ়ি আহিছিল। অসমক কেইবাখনো জিলাত ইয়াৰ প্রভাৱ পৰিলক্ষিত হৈছিল। চৰকাৰৰ সৈতে কোনো আপোচ নকৰা সাধাৰণ কৃষকসকলে ৰাইজমেলৰ জৰিয়তে মিলিত হৈ চৰকাৰৰ বিৰুদ্ধে বিদ্রোহ ঘোষণা কৰি পৰৱর্তী প্রজন্মলৈ নিদর্শন দাঙি ধৰিছিল। এইখিনি প্রসংগতে উল্লেখ কৰিব পাৰি— "ঊনবিংশ শতিকাৰ দ্বিতীয়ার্ধত নামনি অসমৰ ৰাজনৈতিক ইতিহাসৰ বহু পৃষ্ঠা নিঃসন্দেহে কৃষক বিদ্রোহসমূহে অধিকাৰ কৰি আছে। ১৮৫৭ চনৰ ব্যর্থতাৰ পিছত অসমত ৰাজনৈতিক নেতৃত্ব শূণ্য পৰিৱেশ এটা সৃষ্টি হোৱাত সর্বসাধাৰণৰ কৃষক ৰাইজে

ইংৰাজৰ বিৰুদ্ধে প্ৰতিবাদৰ ভাষা লৈ ওলাই আহিছিল। ঔপনিৱেশিক চৰকাৰৰ নতুন অৰ্থনৈতিক নীতিৰ ফলত জুৰুলা হোৱা কৃষকসকলে নামনি অসমৰ অবিভক্ত নগাঁও, দৰং আৰু কামৰূপ জিলাৰ কেবাঠাইতো মুকলি প্ৰতিবাদ কৰি, শাসন যন্ত্ৰৰ নিৰ্যাতনৰ সন্মুখীন হৈ সাহস আৰু আত্মত্যাগৰ মাজেদি পিছৰ প্ৰজন্মৰ বাবে মুক্তি সংগ্ৰামৰ পথ মুকলি কৰি থৈ গৈছিল।" (উৎস-কমলাকান্ত ডেকা (সম্পা.), ঊনবিংশ শতিকাৰ অসমৰ কৃষক বিদ্ৰোহ, শৰৎ হাজৰিকাৰ 'নগাঁও জিলাৰ কৃষক বিদ্ৰোহ', পৃ.১৬)

আমাৰ গৱেষণা পত্ৰখনত অসমৰ কৃষক বিদ্ৰোহ আৰু সমকালীন কাকত-আলোচনী এই সম্পৰ্কে উপস্থাপন কৰা হৈছে। ইয়াত অধ্যয়নৰ সুবিধাৰ বাবে অৰুণোদই, জোনাকী, আসাম বন্ধু, মৌ আৰু ঊষা আদিৰ লগতে সমকালীন ভাৰতৰ দুই এখন আলোচনীক আলোচনাৰ প্ৰসংগত সহায় লোৱা হৈছে।

সূচক শব্দ ঃ অসম, বিদ্ৰোহ, কৃষক, সমকালীন কাকত-আলোচনী, ঊনবিংশ শতিকা, সামাজিক, ৰাজনৈতিক আদি।

০.০১. অধ্যয়নৰ পৰিসৰ আৰু পদ্ধতি ঃ

গৱেষণা পত্ৰখনত ঐতিহাসিক বিশ্লেষণাত্মক আৰু ব্যাখ্যাত্মক পদ্ধতিৰ সহায় গ্ৰহণ কৰা হৈছে।

০. ০ আৰম্ভণি ঃ

০.১ ঊনবিংশ শতিকাৰ কৃষক বিদ্ৰোহ আৰু সমকালীন কাকত-আলোচনী আৰু ভাৰতৰ অন্যান্য কাকত-আলোচনী কৃষক বিদ্ৰোহ ঃ

ইয়াণ্ডাবু সন্ধিৰ চৰ্তৰ পিছতেই অসম ব্ৰিটিছৰ অধীন হ'ল। অসমত ইষ্ট ইণ্ডিয়া কোম্পানীয়ে ১৮৩৯ চনৰ সময়ছোৱাত চাহখেতি কৰিবলৈ আৰম্ভ কৰে। চাহখেতি কৰি অৰ্থনীতিৰ মুনাফা অৰ্জন কৰা ব্ৰিটিছসকলৰ এটা কাৰণ আৰু আসাম কোম্পনীক অসমত চাহ-বাৰী পাতি চাহৰ কুঠি বহুৱাবলৈ আদেশ দিছিল আৰু ইয়াত পট্টাৰ কিছুমান চৰ্ত আছিল। ইয়াৰে এটা চৰ্ত এনেকুৱা আছিল যে 'কোম্পানীয়ে পট্টা পোৱা মাটিত আফু-খেতি কৰিব নোৱাৰিব।' (উৎস-বেণুধৰ শৰ্মা, মণিৰাম দেৱান,পৃ.১০৫) সম্পদ উৎপাদন আৰু উৎপাদনৰ প্ৰক্ৰিয়াৰ দিশটো বেহা-বেপাৰৰ সৈতে জড়িত হৈ থাকে। ৰাষ্ট্ৰ বা ৰজাঘৰৰ নীতি আৰু প্ৰৱৰ্তিত পদ্ধতি অনুসৰি নিয়ন্ত্ৰিত হয়। বৃটিছসকলে অসমৰ কৃষকসকলক অৰ্থনৈতিকভাৱে শোষণ কৰাৰ অন্তৰালত ৰাজনৈতিক ক্ষমতা আছিল। ব্ৰিটিছে অসম দখললৈ নিয়াৰ লগে লগে খেল-পাইক প্ৰথা আঁতৰিল। কৃষক বিদ্ৰোহ ব্ৰিটিছে আৰোপ কৰা বৰ্ধিত খাজনাৰ বিৰুদ্ধে ক্ষোভৰ বহিঃপ্ৰকাশ। ভাৰতৰ অন্যান্য অঞ্চলতো আলোড়নৰ সৃষ্টি কৰিছিল। ভাৰতৰ অন্যান্য আলোচনী, বাতৰি কাকতত কৃষক বিদ্ৰোহৰ ঘটনাই স্থান লাভ কৰিছিল। সেইসমূহৰ ভিতৰত—শিশিৰকুমাৰ ঘোষে প্ৰকাশ কৰা অমৃত বজাৰ পত্ৰিকা[The Amrit Bazar Patrika, 20feb.1868], দ্য ষ্টেটমেণ্ট[The Statesman, 1875, Robert Knight] আদি। ১৮৯২-৯৩- চনৰ সময়ত প্ৰকাশিত বংগবাসী, সহাচাৰ, সঞ্জিৱনী, হিতবাদী আদি বেংগলী বাতৰি কাকতত কৃষকসকলৰ আৰ্থিক দুৰৱস্থাৰ কথা প্ৰকাশপাইছিল। ইয়াৰ উপৰি Reis and Rayyet,1894, Sambhusaran Mukharji, দ্য ইণ্ডিয়ান নেশ্যন [The Indian Nation, 1931, Maharja Darbhanga, Maharja Sir Kameshwar Singh], দ্য হিন্দু পেট্ৰিইট (The Hindu Patriot,1895,5feb), দ্য ইণ্ডিয়ান নেশ্যন (The Indian Nation, 1894,21april) আদিত কৃষক বিদ্ৰোহ সম্পৰ্কীয় তথ্য প্ৰকাশ পাইছিল। অসমৰ অৰুণোদয় (১৮৪৬),আসাম-বন্ধু (১৮৮৫), মৌ (১৮৮৬) আদি আলোচনীত কৃষক বিদ্ৰোহৰ বিষয়ে সমৰ্থন পোৱা নাছিল। সেই সম্পৰ্কে জানিব পাৰি এইদৰে—'আশ্চৰ্যজনক কথা এইটোৱেই যে তৎকালীন অসমীয়া মধ্যশ্ৰেণীটোৱে ব্যক্তিগতভাৱেই হওক বা সমূহীয়াভাৱেই হওক এই বিদ্ৰোহবোৰত যোগ দিয়াতো দূৰৈৰ কথা আনকি সমৰ্থনো আগবঢ়োৱা নাছিল। বৰং অসমীয়া ক'লা চাহাবে তেনে বিদ্ৰোহক নিষ্ঠুৰভাৱে দমন-উৎপীড়ন কৰাত চৰকাৰক সহায়হে কৰিছিল। সেই সময়ৰ বৰপেটাৰ মহকুমাধিপতি মাধৱচন্দ্ৰ বৰদলৈয়ে বিদ্ৰোহী কৃষকক হালে হালে সাঙুৰি হাল টানিবলৈ দিছিল আৰু সাত্বিক পণ্ডিত হেমচন্দ্ৰ গোস্বামীয়ে বকো-ছয়গাঁও অঞ্চলত 'অসমীয়া কৃষকৰ ওপৰত কৰা অত্যাচাৰত নিখুঁটভাৱে পৌৰাহিত্য কৰিছিল।" (উৎস-শৈলেন বৰকটকী, অসমীয়া মধ্যশ্ৰেণী, প্ৰথম প্ৰকাশ, ৩১ অক্টোবৰ, ২০০০,পৃ.৪২) "১৮২৬ চনত স্বাধীনতা হেৰুৱাৰ আগলৈকে অসমৰ অৰ্থনীতি আছিল সম্পূৰ্ণ স্বতন্ত্ৰভাৱে প্ৰতিপালিত এক সহজ-সৰল প্ৰক্ৰিয়া। ব্ৰহ্মপুত্ৰ উপত্যাকাৰ বিস্তৃত এলেকা উমৈহতীয়া ৰাজনৈতিক শাসনৰ অধীনলৈ অনাৰ বাবে প্ৰচেষ্টা চলোৱা আহোমসকলেই অঞ্চলটোৰ অৰ্থনীতিকো এক সুসংহত ৰূপ দিছিল। কোনোধৰণৰ জটিলতালৈ নোযোৱাকৈ সহজ-সৰল উপায়েৰে সেউজ সমৃদ্ধিশালী অসমৰ প্ৰাকৃতিক সম্পদসমূহৰ সদ্ব্যৱহাৰ

নিশ্চিত কৰাটোৱেই আছিল আহোম অর্থনীতিৰ মূল বৈশিষ্ট্য।" (উৎস-পৰাগ কুমাৰ দাস, স্বাধীন অসমৰ অর্থনীতি, 'দুই' পৃ.২৭) ধর্মৰ লগতে আর্থ-সামাজিক আৰু খাজনা বৃদ্ধিৰ কাৰণে মোৰামৰীয়া বিদ্রোহ, ফুলগুৰিৰ কৃষক বিদ্রোহ(লে.ছিংগাৰ), জয়ন্তীয়া কৃষক বিদ্রোহ (মেককেব), উত্তৰ কামৰূপ বা ৰঙিয়াৰ কৃষক বিদ্রোহ (মেকেবি) লচিমাৰ কৃষক বিদ্রোহ (মাধৰ চন্দ্র বৰদলৈ), পথৰুঘাটৰ কৃষক বিদ্রোহ (মিষ্টাৰ এণ্ডাৰছন) অসম ৰায়ত (ছাৰ উইলিয়াম ৰর্ড) আৰু জয়ন্তীয়া কৃষক বিদ্রোহ (নেতা-উকিয়াং নংবা) সংঘটিত হৈছিল। কৃষক বিদ্রোহসমূহ ভূমি নিৰিখ বৃদ্ধিৰ কাৰণে কানাড়া জিলাৰ কৃষক বিদ্রোহ(১৮৩০), খাজনা বৃদ্ধিৰ কাৰণত নীল বিদ্রোহ (১৮৬০), জমিদাৰৰ বিৰুদ্ধে পাবনাৰ কৃষক বিদ্রোহ (১৮৭২), ভূমি জৰীপ বৃদ্ধিৰ কাৰণত খাণ্ডেজ চার্ভে ৰায়তছ (১৮৭৫) আৰু টকা ধাৰে লোৱা মহাজনৰ বিৰুদ্ধে ডেক্কান ৰায়ত (১৮৭৫) আদি বিদ্রোহ সংঘটিত হোৱা দেখা যায়। "ছোটনাগৰপুৰ অঞ্চলৰ বিভিন্ন আদিবাসীসকলে খাজনা বৃদ্ধিৰ প্রতিবাদকল্পে ১৮৩১ চনতেই ঐক্যবদ্ধ বিক্ষোভৰ সূচনা কৰিছিল। ১৮৫৫-৫৬ চনত চাওতালীসকলে সিবু আৰু কানু নামৰ দুই ভ্রাতৃৰ নেতৃত্বত কৰা বিদ্রোহ, ১৮৭১ আৰু ১৮৮২ চনত খেৰওৱাৰ বিদ্রোহ, ১৮৭৭ চনত চর্দাৰী বিদ্রোহ, ১৮৯৫ চনত বিৰচা মুণ্ডাৰ নেতৃত্বৰ উলগুলান বিদ্রোহ, ১৮৫৯ চনত নীল বিদ্রোহ আদি কৃষক বিদ্রোহৰ মূল কাৰণ হ'ল অর্থনৈতিক।" (উৎস-কমলাকান্ত ডেকা (সম্পা.), ঊনবিংশ শতিকাৰ অসমৰ কৃষক বিদ্রোহ, 'অসমৰ কৃষক বিদ্রোহ আৰু ৰাইজমেল', পৃ.৬৩)

১.০ ০ সমকালীন কাকত-আলোচনী ঃ

ঊনবিংশ শতিকাৰ আলোচনীসমূহত কৃষক বিদ্রোহৰ প্রসংগই স্থান লাভ কৰিছিল। আলোচনীসমূহত লেখা লেখকৰ ৰচনাৰাজিত কৃষক বিদ্রোহে পাবলগীয়া সমর্থন লাভ কৰা নাছিল। কাৰণ এই কৃষক বিদ্রোহসমূহক গাঁৱৰ সাধাৰণ জনতাৰ মাজৰ পৰা নির্গত হোৱা প্রজাবিদ্রোহ বুলি এটি ধাৰণাই গঢ় লৈ উঠিছিল। চৰকাৰৰ কতৃপক্ষৰ তৰফৰ পৰা এনে বিদ্রোহ আন আন ঠাইলৈ বিয়পি যোৱাৰ ক্ষেত্রত বাধাৰ প্রাচীৰৰূপে থিয় দিছিল। "আশ্চর্যজনক কথা এইটোৱেই যে তৎকালীন অসমীয়া মধ্যশ্রেণীটোৱে ব্যক্তিগতভাৱেই হওক বা সমূহীয়াভাৱেই হওক এই বিদ্রাহবোৰত যোগ দিয়াতো দূৰৈৰ কথা আনকি সমর্থনো আগবঢ়োৱা নাছিল। ৰবং অসমীয়া ক'লা চাহাবে তেনে বিদ্রোহক নিষ্ঠুৰভাৱে দমন-উৎপীড়ন কৰাত চৰকাৰক সহায়হে কৰিছিল। সেই সময়ৰ ৰৰপেটাৰ মহকুমাধিপতি মাধৱচন্দ্র ৰৰদলৈয়ে বিদ্রোহী কৃষকক হালে হালে সাঙুৰি হাল টানিবলৈ দিছিল আৰু সাত্বিক পণ্ডিত হেমচন্দ্র গোস্বামীয়ে বকো-ছয়গাঁও অঞ্চলত 'অসমীয়া কৃষকৰ ওপৰত কৰা অত্যাচাৰত নিখুঁটভাৱে পৌৰাহিত্য কৰিছিল।" (উৎস-শৈলেন ৰৰকটকী, অসমীয়া মধ্যশ্রেণী, প্রথম প্রকাশ,৩১ অক্টোবৰ, ২০০০,পৃ.৪২)

২.০১ অসমৰ আলোচনীত কৃষক বিদ্রোহৰ প্রসংগ উপস্থাপনঃ

কৃষকসকলে নিজৰ শ্রমদান কৰি কৃষিকার্য সম্পাদন কৰে। সেই সম্পাদনৰ ওপৰত বর্ধিত খাজনা বৃদ্ধিয়ে অসন্তুষ্টিৰ সৃষ্টি কৰিছিল। আৰু তাৰ বাবে তেওঁবিলাকে প্রতিবাদ কৰিছিল। ব্রিটিছ চৰকাৰৰ বর্ধিত খাজনাৰ বিৰুদ্ধে ভাৰতবর্ষৰ ভিতৰত অসমত পোনতে এনে বিদ্রোহৰ জুইকুৰা উমি উমি জ্বলিছিল। ব্রিটিছ ৰাজহ বৃদ্ধিৰ বাবে অসমত প্রথমবাৰৰ বাবে ১৮৬১ চনত কৃষক বিদ্রোহ হৈছিল। নগাঁও জিলাৰ ফুলগুৰিত পোনপ্রথমবাৰৰ বাবে এই কৃষক বিদ্রোহ সংঘটিত হৈছিল। এই বিদ্রোহৰ মূল কাৰণ অর্থনৈতিক। এই কৃষক বিদ্রোহত ফুলগুৰি অঞ্চলৰ অনুসূচিত জাতি, লালুং, কছাৰী আদিসকলৰ লগতে ৰায়তসকলৰ ভিতৰত লালুংসকলৰ ভূমিকা মন কৰিবলগীয়া। আফুখেতি চৰকাৰে বন্ধ কৰি দিয়াৰ বাবে ৰাইজমেলৰ জৰিয়তে কৃষকসকলে প্রতিবাদ জনাবলৈ উঠিপৰি লাগিছিল। ফুলগুৰি কৃষক বিদ্রোহৰ ঘটনাৱলীক ব্রিটিছ চৰকাৰে বিয়পি যাবলৈ বাধা প্রদান কৰিছিল। নগএগা ৰাইকে কৰা কানীয়া বিদ্রোহ বুলি প্রচাৰ কৰি সদৌ ৰাইজৰ পৰা আন্দোলনৰ গতিক উহ্য কৰিব বিচাৰিছিল যদিও সফলতা লাভ কৰা নাছিল। অৱশ্যে তেওঁলোকে বহু কৃষকক হত্যা, লাঞ্ছনা, গঞ্জনা, শোষিত, কলিয়াপানীত দিয়া, সশ্রম কাৰাদণ্ড দিয়া ইত্যাদি কার্য ক্ষীপ্রতাৰে সমাপন কৰিছিল। অসমৰ প্রথম বার্তালোচনী অৰুণোদয় কাককত সেই নগএগা লোক, সেই কৃষকৰ তথ্য ন.ল.ফ (নিধি নিবাই ফাৰৱেল) ছদ্মনামত প্রকাশিত হৈছিল এনেদৰে—

২.০১.১ অৰুণোদয় ঃ

ক) ন. ল. ফ-নগএগা দ্রোহী লোকৰ চৰিত্র বর্ণনা (উৎস-১৬ শ বছৰ, অৰুণোদই, নম্বৰ, ১১,১৮৭১) অৰুণোদইত প্রকাশ পাইছিল এইদৰে—-"আমাৰ মানুহৰ উপকথাত যেনেকৈ কয় বোলে মৌপিয়া চটকে পর্বত নাই বুলি ঢোল যেন কণী পাৰে চুঙ্গাৰ বাদুলী।" লগতে (নিধি লিবাই

ফাৰৰেল) তেওঁ (ন.ল.ফ) বিদ্রোহীসকলক কৈছিল যে ' মহৰ সিংগত কঁকীলা দাঁৰ মৰা মানুহ' বুলিও উপহাস কৰিছে। (উৎস-স্মৃতিগ্রন্থ,পথৰুঘাট ঃ কৃষক স্বহীদ দিৱস, ২০১৭, পৃ.৪৮) "ইংৰাজী ১৭৯৩ সনৰ পৰা ই দেশত আফিঙ্গ বা কানী লোকে ব্যৱহাৰ কৰিবলৈ ধৰিলে। এবং তাৰ কৃষিও সৰ্ব্বত্রে ব্যাপ্ত হ'ল। ইয়াক ব্যৱহাৰৰ পৰা দেশীয় লোক দুৰ্ব্বল আৰু অলস হই গ'ল। ইয়াৰ কৃষি নিবাৰণ কৰিলে তাৰ ব্যৱহাৰ হ্রাস হ'ব অথচ ৰাজস্বৰো বৃদ্ধি হ'ব এই ভাবি ১৮৬০ সনত কানীৰ ক্ষেতি নিষেধ কৰা হ'ল।" (উৎস-গুণাভিৰাম বৰুৱা, আসাম বুৰঞ্জী, 'ত্রয়োদশ অধ্যায়' পৃ.১৩৩)এই বিদ্রোহক আনকি সেই সময়ৰ কাকত "*অৰুনোদই* পত্রিকায়ো অনুসন্ধান পৰ্যন্ত নকৰাকৈয়ে বিদ্রোহীসকলক বিদ্রূপ কৰিছিল।" (উৎস-লক্ষ্মীনাথ তামুলী, ভাৰতৰ স্বাধীনতা সংগ্রামত অসমৰ অৱদান, 'কৃষক বিদ্রোহ ঃ ৰাজৰ বিৰুদ্ধে ৰাইজ',পৃ.৪৫) বিদ্রূপ কৰিছিল সেই কথা স্পষ্ট কৰিবলৈ আমি মাত্র এটি তথ্যৰ সন্ধান কৰিব লাগিব। য'ত অসমৰ মানুহে কানি সেৱন কৰাৰ তথ্য প্রকাশিত হৈছিল। তালিকা নং—০১

গোৱালপাৰাত	৯।৭	সেৰ—১৪৬৮৪	টকা
কামৰূপত	১৩০।৩	"— ১৯০১০৭	"
দৰঙ্গত	১৮৭।০	"— ২৫৮৭.০	"
নগাওঁত	২৩১। মোন—	৩১ ৫৭৯	"

(আলোচনীখনত স্পষ্টকৈ দেখা নগ'ল)

শিৱসাগৰত	৩৭৮।৫	।ছঃ ৪৯৯৮৪৩	"
লক্ষীমপুৰত	৩৯৮।২	সেৰ— ৫৮১৮৫৭	"
মোট	১৩৩০।৭	ছটাক— ৮৫৫৮০	

(উৎস- ঊষা, শ্রীসূর্যকুমাৰ ভূঞা, সম্পা., ১৯ জেঠ, ১৮৩০ শঁক, সোমবাৰ, 'কানিৰ অপকাৰিতা' কমলাকান্ত বৰদলৈ, পৃ.১৪৬)

২.০১.২ আসাম-বন্ধু ঃ

ৰাজনৈতিক আৰু অর্থনৈতিক,গুণাভিৰাম বৰুৱা, মোৱামৰীয়া বিদ্রোহ, ব্রিটিছ সু-শাসন আৰু সংবাদ এই সম্পর্কীয় দিশ পোহৰলৈ আনিছে—"এটি শিক্ষিত শ্রেণীটিয়ে সমকালীন ৰাজনৈতিক আৰু অর্থনৈতিক ঘটনা-প্রৱাহতকৈ অধিক গুৰুত্ব দিছিল অসমীয়া ভাষা, সাহিত্য আৰু জাতীয়তাৰ আত্মপৰিচয় প্রতিষ্ঠাৰ ওপৰত। সেইবাবে, এই সময়ৰ অসমীয়া মধ্যবিত্ত শিক্ষিতৰ মাজত কোনো প্রকাৰৰ সুকীয়া ৰাজনৈতিক দৃষ্টিভংগী গঢ় লৈ উঠা নাছিল; বৰং ব্রিটিছ বিৰুদ্ধে হোৱা "ৰাইজমেল" বা তেনে ধৰণৰ বিদ্রোহাত্মক কার্য সমর্থন কৰা নাছিল। আনকি গুণাভিৰাম বৰুৱাই মোৱামৰীয়া বিদ্রোহৰ বিৱৰণ দিওঁতেও ব্রিটিছে তেতিয়াই অসম অধিকাৰ কৰা হ'লে ভাল আছিল বুলি মন্তব্য কৰিছিল। হেমচন্দ্র বৰুয়ায়ো মি.এগিউ চাহাবৰ প্রতি থকা তেওঁৰ সশ্রদ্ধ-প্রীতিৰ ভাৱ তেওঁৰ "আত্ম-জীৱন চৰিত" ত উল্লেখ কৰি গৈছে। গুণাভিৰাম বৰুয়ায়ো ডেভিড স্কট আৰু জেনেৰেল জেনকিন্সৰ নাম শ্রদ্ধাৰে লৈছে। তদুপৰি, "ব্রিটিছ সু-শাসনৰ নিমিত্তে সকলো প্রকাৰে লোকৰ সুখ-সন্তোষ" হোৱা বুলি আৰু " এই দেশৰ অৱস্থা ক্রমে সকলো বিষয়তে উন্নত হ'বলৈ" ধৰা বুলি[৩১] বিশ্বাস কৰা গুণাভিৰামে ১৮৬০ খ্রীঃত কানিৰ খেতি নিষিদ্ধ কৰা আইন আৰু আয়কৰ বহুওৱা আইনৰ পক্ষে, আৰু মণিৰাম দেৱান-পিয়ালি বৰুৱাৰ বিদ্রোহৰ বিপক্ষেই প্রকাৰন্তৰে নিজৰ মত পোষণ কৰি গৈছে। আনকি, তেওঁ দেৱান আৰু বৰুৱাৰ নামো উল্লেখ নকৰি "দুজনৰ প্রাণদণ্ড" হোৱাৰ সংবাদহে বুৰঞ্জীত দি গৈছে।" (আসাম-বন্ধু, নগেন শইকীয়া, সম্পা.ভূমিকা দ্রষ্টব্য) ব্রিটিছৰ পক্ষত বহু অসমৰ ব্যক্তি হাতে হাত মিলাইছিল। সেইসমূহৰ ভিতৰত ...গুণাভিৰাম বৰুৱাই ১৮৬১ চনৰ ফুলগুৰিৰ কৃষক বিদ্রোহীসকলে যথোচিত শাস্তি পোৱা বুলি ব্রিটিছৰ পক্ষাৱলম্বনহে কৰিছিল। গুণাভিৰাম বৰুৱাই ১৮৯৩-৯৪ চনত দৰঙৰ কৃষক বিদ্রোহীসকলে প্রকাশ কৰা প্রচাৰ পত্রিকা আৰু গোহাৰি পত্রবিলাক ব্রিটিছৰ বিষয়াৰ বোধগম্য হোৱাকৈ তর্জমা কৰি দিছিল।" (উৎস-স্মৃতিগ্রন্থ,পথৰুঘাট ঃ কৃষক স্বহীদ দিৱস,২০১৭, পৃ.৪৮)

২.০১.৩মৌ ঃ

ব্রিটিছ অসমৰ আর্থ-সামাজিক সমস্যা, ইংৰাজ শাসনে ঠাই দখল কৰিছিল। সেই সম্পর্কে পোৱা যায় এইদৰে— "...বৰং ব্রিটিছ অসমৰ আর্থ-সামাজিক সমস্যাৰ কথাহে আলোচনা কৰিব বিচাৰিছিল। মধ্যশ্রেণীর্ভূক্ত আন আন বুদ্ধিজীৱীৰ দৰে সেয়েহে তেওঁ "মৌ"ৰ ও "ইংৰাজীক দেশৰ পৰা একে বেলিয়ে খেদিব নোখোজে। ভাৰতৰ মংগলৰ নিমিত্তে ভালে দিনলৈকে ইয়াত ইংৰাজ শাসন লাগতিয়াল" বুলি মত প্রকাশ কৰিছিল।" (উৎস-স্মৃতিগ্রন্থ,পথৰুঘাট ঃ কৃষক স্বহীদ দিৱস,২০১৭, পৃ.৪৮-৪৯)

২.০১.৪ জোনাকী ঃ

ব্রিটিছ গৱর্ণমেণ্ট, তেওঁবিলাকৰ শাসনত বান্ধ খাই থকা কর্মচাৰীয়ে অন্যায় বিৰুদ্ধে ক'ত মাত মাতিব। সেই সময়ৰ অর্থাৎ ঊনবিংশ শতিকাৰ সময়ছোৱাৰ চৰকাৰী শাসনৰ তলত থকা ব্যক্তিসকলৰ মুক্ত কণ্ঠ ৰুদ্ধ কৰি ৰাখে—..তেন্তে আমি

মুক্ত কণ্ঠে স্বীকাৰ কৰিবলগাত পৰো যে সদাশয় গৱর্ণমেণ্টৰ তলত থাকি আমাৰ একোৰে অভাৱ নাই আৰু গৱর্ণমেণ্টৰ গুৰিত অসন্তোষ প্ৰকাশ কৰিবলৈকো একো নাই।" (স্মৃতিগ্ৰন্থ,পথৰুঘাট ঃ কৃষক স্বহীদ দিৱস, ২০১৭, পৃ.৪৯)

২.০১.৫ বিজুলী ঃ

গুণাভিৰাম বৰুৱা, ৰত্নেশ্বৰ মহন্তকে আদি কৰি সূর্যকুমাৰ ভূঞালৈকে নানাজনে এই বিদ্রোহৰ বিৱৰণ দি গৈছে। সাম্ৰাজ্যবাদী ধ্যান-ধাৰণাত বন্দী এইসকলৰ দৃষ্টিকোণ আছিল ঘাইকৈ শাসকীয় দৃষ্টিকোণ। স্বভাৱতে শাসক শ্ৰেণীৰ গুণানুকীর্তন আৰু বিদ্রোহীসকলৰ প্ৰতি অৱমাননা তেওঁলোকৰ ৰচনাত প্ৰচ্ছন্ন। শাসকবৰ্গই সাধাৰণ প্ৰজাৰ ওপৰত চলোৱা শোষণ-নির্যাতন এওঁলোকে লঘু কৰি চাইছিল, শাসক-শাসিতৰ মাজ হোৱা শ্ৰেণী-সংঘর্ষৰ ওপৰত তেওঁলোকে দিয়া নাছিল কোনো ধৰণৰ গুৰুত্ব। মোৱামৰীয়া বিদ্রোহৰ এনে শাসকীয় ব্যাখ্যাত সেই সিদিনালৈ আচ্ছন্ন হৈ আছিল অসমৰ বিদ্বৎমণ্ডলী। এনে ব্যাখ্যাৰ পৰা মুক্ত হ'ব নোৱাৰি আনি নালাগে লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ দৰে ব্যক্তিয়েও লিখিছিল, 'কেনেকৈ মৰাণে অসম ধ্বংসিলে' জাতীয় কবিতা।" (চন্দ্রপ্রসাদ শইকীয়া (সম্পাদক), গৰীয়সী,ষষ্ঠ বছৰ, পঞ্চম সংখ্যা, ফে.১৯৯৯)

২.০১.৬. সোমপ্রকাশ ঃ

কৃষকসকলৰ মাজত অর্থনৈতিক শোষণ, অসন্তোষ আৰু উত্তেজনাই ৰাজনৈতিক দিশত সক্রিয় তথা সচেতন কৰি তোলে। কৃষকসকলে ব্রিটিছৰ প্ৰবল শক্তি উফৰাই দিয়াৰ প্রত্যহ্বান জনাই। তেওঁলোকে নিজা অধিকাৰৰ বিৰুদ্ধে স্বতন্ত্র প্রতিবাদ কৰি আহিছিল। কলিকতাৰ পৰা প্রকাশিত 'সোমপ্রকাশ'ত এই বিদ্রোহৰ ইতিবাচক পর্যালোচনা হৈছিল। আমাৰ আলোচনাত চমুকৈহে আলোচনা কৰাৰ প্রয়াস কৰা হৈছে।

৩.০০ অসমৰ মুষ্টিমেয় লোকৰ ধাৰণাত বিদ্রোহ চিন্তা-চর্চাঃ

ডিম্বেশ্বৰ নেওগ, দণ্ডিনাথ কলিতা, অমলেন্দু গুহ আদিয়ে এই বিদ্রোহক বিভিন্ন ধৰণে আখ্যায়িত কৰিছিল। ডিম্বেশ্বৰ নেওগে এই বিদ্রোহৰ ক্ষেত্রত কৈছে যে এই বিদ্রোহ 'জনসাধাৰণৰ বাবে আৰু জনসাধাৰণৰ দ্বাৰা কৰা প্রথম আর্থ-সামাজিক ৰাজনৈতিক আন্দোলন' (The First socio-poltical movement made for the people and by the people), দণ্ডিনাথ কলিতাই কৈছে যে এই বিদ্রোহ হৈছে জনপ্রিয় আন্দোলন' (Popular movement) আৰু 'বৈষ্ণৱবাদৰ পৰা মায়ামৰীয়া বিদ্রোহ'লৈ গ্রন্থত অমলেন্দু গুহদেৱে এই বিদ্রোহক মার্ক্সীয় দৃষ্টিভংগীৰে ব্যাখ্যা কৰিবলৈ প্রয়াস কৰিছে।ফুলগুৰি বিদ্রোহৰ সময়ত নগএগা ৰাইজক মণিৰামে দেৱানে সহযোগিতা কৰিবলৈ নগএগা ৰাইজক উদ্বুদ্ধ কৰিছিল, তেওঁ কলিকতালৈ যাওঁতে কলঙেদি আহিছিল। আৰু তেওঁ ৰহাৰ ৰহিয়া বৰুৱাৰ সৈতে বিদ্রোহৰ আলোচনাত মিলিত হৈ কলিকতালৈ ৰাওনা হৈছিল। ....নামৰ 'বুৰঞ্জীত উল্লেখ আছে যে, ৰহাৰ ৰহিয়াল বৰুৱাৰ স'তে গোপনে কেইবাখনো মেল বহিছিল। এনে মেলবোৰত টোপাকুছি, সৰা, খাইগড়, বাৰপূজীয়া আৰু মিকিৰগাঁৱৰ পাঁচোৰজা আৰু মায়ং, কুমৈ, নেলী, বঘৰা, ঘগুৱা, তেতেলীয়া আৰু শুখনাগুৰীয়াৰ সাতোৰজাৰ উপৰিও চহৰী, উত্তৰখোলা আৰু গোভাৰ কটকী, জাগীয়াল গোহাঁই, কপিলী উপত্যাকাৰ লস্কৰসকল আৰু নগাঁৱৰ সকলো অংশৰ নেতৃস্থানীয় ডা-ডাঙৰীয়া আনকি মৌজাদাৰ সকলেও অংশগ্রহণ কৰি বিপ্লৱী সংগঠনৰ বিষয়ে আলোচনা কৰিছিল।" (উৎস-মিলেশ্বৰ পাটৰ, ইতিহাস চেতনা, 'কৃষক বিদ্রোহ-ফুলগুৰি ধেৰাঃ তিৰা ৰজাসকলৰ ঐতিহাসিক ভূমিকা' পৃ.১০-১১)

৪.০০ উচ্চ শিক্ষাক্ষেত্রত কৃষক বিদ্রোহৰ চিন্তা-চর্চা ঃ

"অসমত অস্থিৰ পৰিস্থিতিৰ বাবে অসমৰ লগত কোম্পানীৰ ব্যৱসায় ক্ষতিগ্রস্ত হৈছে।" (উৎস-ওম প্রকাশ গাট্টাণী, যোৰহাট প্রতিষ্ঠাৰ পৰা ভাৰতৰ স্বাধীনতালৈ (১৭৯৪-১৯৪৭),অসমীয়া অনুবাদ, শৈলেন গোস্বামী, প্রকাশন, গ্রন্থসংস্কৃতি, তৃতীয় সংস্কৰণ, ছেপ্তেম্বৰ, ২০১৫, পৃ.৪৪) মণিৰাম দেৱানে এই চাহৰ ব্যৱসায় অসমত গঢ়ি তুলিছিল। পৰৱর্তী সময়ত মণিৰামে দেৱানে ইংৰাজৰ বিৰুদ্ধে বিদ্রোহ কৰা, পূর্বৰ আহোম শাসন আৰু সেই শাসনৰ উদ্ধাৰ বিৰুদ্ধে যুঁজ দিবলৈ গৈ ফাঁচিকাঠত উলমিব লগা হৈছিল। সেই সম্পর্কে বৌদ্ধিকভাৱে **ডিব্রুগড় বিশ্ববিদ্যালয়ৰ বুৰঞ্জী বিভাগত গৱেষণাৰ দৰে বৌদ্ধিক আৰু উচ্চস্তৰীয়** চিন্তা-চর্চা হৈছে।—"Maniram started his carreer as a most loyal servant of the British extending his help to the government even to suppeess the early liberation movements organized by the members of the erstwhile nobility against the British regime. He expected progress and prosperity for his countryman under the 'benign' rule of the British.But that was something impossible under a colonial rule. No

sooner Maniram realized this than defected from the Government and looked to the past, the erstwhile Ahom Government with its traditional rights and previleges.He brooded hopes of restoring this old Government and looked for supporters.Then came the Great Rebellion of 1857. In the wake of the Rebellion, he attempted to take up arms to overthrow the British rule. But before his plan could be materialized, the secret was divulged. Man iram was arrested and thrown to the gallows along with his lietenant Piyali Barua in February 1858."(source-Ajit kumar Dutta, Maniram dewan and the contemporary Assamese Society, p.1)

ইউনিভাৰ্চিটি অব বেংগলৰ বুৰঞ্জী বিভাগত Peasant Unrest and Uprising in the Brahmputra Valley of Assam: A Case study of Erstwhile Kamrup, Darrang and Nowgong (1858-1894) শীৰ্ষক গৱেষণা কৰ্ম ২০১০ চনত ড° বিজয় কুমাৰ সৰকাৰৰ তত্ত্বাৱধনাত কমল চন্দ্ৰ পাঠকে সম্পন্ন কৰিছে। য'ত ভাৰতৰ কৃষক আন্দোলন, ব্ৰিটিছ শাসন, অসমৰ কৃষক বিদ্রোহত ইয়াৰ প্ৰভাৱ, অসমীয়া মধ্যবিত্ত শ্ৰেণী, এই শ্ৰেণীৰ সৈতে বিদ্রোহ, ইয়াত অংশগ্ৰহণ, ১৮৬১ চনৰ ফুলগুৰিৰ কৃষক বিদ্রোহ, ১৮৯৩-৯৪ চনৰ কৃষক আন্দোলন, এই আন্দোলনসমূহ গঢ়ি তুলিবলৈ ৰাইজমেল, ইয়াত সকলো জাতি,ধৰ্ম, বৰ্ণৰ লোকৰ একত্ৰিকৰণ ইত্যাদি দিশ গ্ৰন্থখনত পোৱা যায়। উল্লিখিত ৰাইজমেল ব্ৰিটিছ চৰকাৰৰ বৰ্ধিত খাজনাৰ বাবে প্ৰতিবাদ কৰিবলৈ গাঁও পঞ্চায়তৰ দৱে গঢ়ি তোলা হৈছিল। সেই সময়ত ৰাইজমেলসমূহে কৃষকসকলক ব্ৰিটিছৰাজৰ শোষণ-শাসনৰ বিৰুদ্ধে যুঁজ দিবলৈ যথেষ্ট সহায় কৰিছিল। "Raij-mel was the highet and developed form of the Mel system. According to Maccabe, an English official, gaonpanchyat organized with the object of social issue developed gradually and took the name of Raij-mel later on. He describe the Raij-mel as an embodiment of collective strength of the people." (Source-Kamal chandra Pathak, Peasant Unrest and Uprising in the Brahmputra Valley of Assam: A Case study of Erstwhile Kamrup, Darrang and Nowgong (1858-1894, p.196)

ব্ৰিটিছসকলে খাজনা, ভাষা, শিক্ষা, মূল্য, গোচৰ, কুটীৰ শিল্প ইত্যাদি দিশত অসমৰ জনতাক এক চাপত ৰাখিছিল যাৰ ফলত অসমৰ মুষ্টিমেয় জনতাই প্ৰাপ্যৰ বাবে সংগ্ৰাম, অন্যায়ৰ বিৰুদ্ধে গৰজি উঠিবলৈ বাট হেৰুৱাই পেলাইছিল। এখন সম্ভাব্য আহোম শাসন ব্যৱস্থা আৰু ব্ৰিটিছ শাসন ব্যৱস্থা আৰু মিলচ ৰিপৰ্টত তুলি ধৰা ৰাজহ বৃদ্ধিৰ দুখন তালিকা তলত উল্লেখ কৰা হ'ল—

তালিকা নং—০২

আহোম শাসন ব্যৱস্থা	**ব্ৰিটিছ শাসন ব্যৱস্থা**
১. খাজনা দিয়া উপায় হিচাপে ধান, চাউল আৰু শস্য দিয়াৰ ব্যৱস্থা	১. চিকাৰ্দপ
২.অসমীয়া মানুহৰ জাত্যান্তৰ আৰু ধৰ্মান্তৰ হোৱাৰ ভয় দেখি ইংৰাজীৰ ভাষাৰ বিপক্ষে থিয় দিছিল।	২. ইংৰাজী শিক্ষাৰে শক্তিশালী শাসক দল গঠন
৩.অসমীয়া আৰু সংস্কৃত শিক্ষাত গুৰুত্ব আৰু গীতা-জ্যোতিষ-ব্যাকৰণৰ প্ৰচুৰ প্ৰচলন	৩. বাংলা ভাষা অফিচ, কাছাৰী, স্কুলত প্ৰচলন
৪.কুটীৰ শিল্প উৎকৰ্ষত গুৰুত্ব	৪. ইংলেণ্ডৰ পৰা কলৰ তৈয়াৰী বস্তু ভাপ জাহাজেৰে ভাৰতলৈ আমদানি,কলিকতা-গুৱাহাটী-অসমৰ বজাৰ দখল
৫. ইংৰাজৰ বিৰুদ্ধে থিয়	৫. ৰজা-ৰাণী, ডা ডাঙৰীয়াৰ পৰা সা-সুবিধা কাঢ়ি নিয়ে
৬. ধান -চাউলৰ মূল্য ৰজাৰদিনত ভাৰসাম্য	৬. ইংৰাজৰ দিনত মূল্য বৃদ্ধি
৭. গোচৰৰ বিচাৰৰ সময় সীমা পষেক	৭. দীঘলীয়া, জুলুমদায়ক, নানা মেৰপেচ

নামনি অসমৰ কামৰূপ, দৰং আৰু নগাঁও জিলা আৰু উজনি অসমৰ শিৱসাগৰ আৰু লক্ষীমপুৰ জিলাৰ ৰাজহৰ এখন তুলনামূলক তালিকা প্ৰস্তুত কৰা হ'ল—

তালিকা নং-০৩

Kamroop	2,52,991	3	6 1/2	2,95,998	3	9
Durrung	1,35,453	8	0	1,57,795	6	8
Nowgong, ...	1,10,314	6	2	1,28,873	12	5
Seebsagur	80,843	2	11	1,14,463	4	2
Luokimpoor....	34,729	14	9	46,553	8	2
Total,...	6,14,882	3	4 1/2	7,43,689	3	3

[A.J.Moffatt Mill's Report on the Province of Assam, p5]

৫.০০ **উপসংহাৰ ঃ**

গৱেষণা পত্ৰখনৰ পৰা কিছুমান সিদ্ধান্ত উপনীত হ'ব পাৰি। সেইসমূহ—

ক) কৃষক বিদ্ৰোহসমূহে সফলতা লাভ কৰিব পৰা নাছিল কাৰণ চৰকাৰী পক্ষই সেয়া দমন কৰিছিল যদিও বিদ্ৰোহৰ জুই উমি উমি জ্বলি আছিল সেইসমূহ কিন্তু চৌদিশে প্ৰচাৰ হোৱা নাছিল।

খ) বিদ্ৰোহকালীন সময়ছোৱাত আলোচনীসমূহেও বা-বাতৰি পৰিৱেশন বা প্ৰচাৰৰ দিশত সদ্দিচ্ছা দেখুওৱা নাছিল কাৰণ চৰকাৰী পক্ষৰ হস্তক্ষেপ আৰু নিজস্ব স্বৰূপ প্ৰকাশৰ ভয়-ভীত দিশটো সংপৃক্ত আছিল।

গ) তালিকা নং—০১, ০২,০৩ ত স্পষ্টকৈ দেখা যায় যে কৃষকসকলে পান কৰা কানিৰ পৰিমাণ বৃদ্ধি আৰু আহোম শাসন ব্যৱস্থা আৰু ব্ৰিটিছ শাসন ব্যৱস্থাৰ এখন সম্ভাব্য দিশ অন্তৰ্ভুক্ত কৰা হৈছে। তালিকাখনত সন্নিবিষ্ট দিশসমূহ আৰু কামৰূপ, দৰং, নগাঁও, শিৱসাগৰ আৰু লখিমপুৰ জিলাত ৰাজহ বৃদ্ধি , শাসন-শোষণ দিশ জড়িত হৈ আছে, সেয়ে আমি ভাবিবলৈ থল পাওঁ যে ব্ৰিটিছ চৰকাৰে তেওঁলোকৰ শাসনৰ স্বৰূপ স্পষ্ট হোৱাৰ অৱকাশ দিয়া নাছিল। সেইকাৰণে কাকত-আলোচনীসমূহতো সেই সমকালীন কৃষক বিদ্ৰোহৰ বাতৰিসমূহ পৰিৱেশন হৈছিল যদিও সদ্দিচ্ছাৰ অভাৱ পৰিলক্ষিত হৈছিল। একে সময়ত কৃষকসকলক এলেহুৱা অকামিলা কৰি বাণিজ্যিক দিশৰ মুনাফাত গুৰুত্ব প্ৰদান কৰিছিল আৰু আনফালেদি তেওঁবিলাকে অসম মুলুকৰ চৰকাৰী চাকৰিয়াল তথা শিক্ষিত মুষ্টিমেয়সকলৰ হাত-মুখ বান্ধি ৰাখিছিল। অদূৰ ভৱিষ্যতে কৃষক বিদ্ৰোহকালীন সময়ৰ সমাজ-ৰাজনৈতিক প্ৰভাৱ পেলোৱা দিশখিনি বিচাৰ-বিশ্লেষণ কৰি চোৱাৰ প্ৰয়োজন আছে। এইসমূহ অনুদ্ঘাৰিত তথ্য গোটাই কৃষক বিদ্ৰোহ ইয়াৰ সুদূৰ প্ৰসাৰী প্ৰভাৱ, প্ৰসাৰৰ পৰা কি কি কাৰকে ক্ৰিয়া কৰিছিল আৰু ইয়াৰ অন্তৰালত কি কি দিশ সংযুক্ত হৈ থাকিব পাৰে সেইসমূহ অধ্যয়নৰ থল আমাৰ চমু আলোচনাত নিশ্চয়কৈ ৰৈ গৈছে বুলিব পাৰি। সেইসমূহ বিচাৰ-বিশ্লেষণৰ জৰিয়তে অসমৰ ইতিহাসৰ নতুন নতুন তথ্য পোহৰলৈ আহিব পাৰি এই দিশ বিস্তৃত তথা গভীৰকৈ গৱেষণামূলক দৃষ্টিৰে সেয়েহে অধ্যয়ন কৰিব পাৰি। ❑

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

ওম প্ৰকাশ গাট্টাণী, যোৱহাট প্ৰতিষ্ঠাৰ পৰা ভাৰতৰ স্বাধীনতালৈ (১৭৯৪-১৯৪৭),অসমীয়া অনুবাদ, শৈলেন গোস্বামী, প্ৰকাশন, গ্ৰন্থসংস্কৃতি, তৃতীয় সংস্কৰণ, ছেপ্তেম্বৰ, ২০১৫ ।

মহেশ্বৰ নেওগ, অৰুনোদই ১৮৪৬-১৮৫৪, সংকলিত আৰু পু.সম্পা , অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, ডিচেম্বৰ, ২০০৩।

ডম্বৰুধৰ নাথ ,অসম বুৰঞ্জী, 'আহোম ৰাজ্যৰ অৱনতি আৰু পতন মোৱামৰীয়া বিদ্ৰোহ আৰু মানৰ আক্ৰমণ (১৭৬৯-১৮২৬), বিদ্যা ভৱন,পৰিবৰ্ত্তিত আৰু পৰিবৰ্ধিত সংস্কৰণ,২০১৮ চন।

পৰাগ কুমাৰ দাস, স্বাধীন অসমৰ অৰ্থনীতি, আলিবাট সংস্কৰণ, নৱেম্বৰ, ২০১৮ চন।

বৰকটকী শৈলেন অসমীয়া মধ্যশ্ৰেণী, প্ৰথম প্ৰকাশ, ৩১ অক্টোবৰ, ২০০০

কমলাকান্ত ডেকা (সম্পা.), ঊনবিংশ শতিকাৰ অসমৰ কৃষক বিদ্ৰোহ, নান্দনিক সাহিত্য চ'ৰা, প্ৰথম প্ৰকাশ, ফেব্ৰুৱাৰী, ২০০৮ চন।

মিলেশ্বৰ পাটৰ, ইতিহাস চেতনা, প্ৰথম প্ৰকাশ, ডিচেম্বৰ, ২০২২ চন।

সহায়ক আলোচনী ঃ

ঊষা, শ্ৰীসূৰ্যকুমাৰ ভূঞা, সম্পা., ১৯ জেঠ, ১৮৩০ শঁক।

চন্দ্ৰপ্ৰসাদ শইকীয়া (সম্পাদক), গৰীয়সী,ষষ্ঠ বছৰ, পঞ্চম সংখ্যা, ফে.১৯৯৯ ।

সহায়ক গৱেষণা গ্ৰন্থ ঃ

Ajit kumar Dutta, Maniram dewan and the contemporary Assamese Society, Published by Anupoma Dutta,Sun Printers,Jorhat, Augusta,1990.

Kamal chandra Pathak, Peasant Unrest and Uprising in the Brahmputra Valley of Assam: A Case study of Erstwhile Kamrup, Darrang and Nowgong.,20.07.2010.

সহায়ক প্ৰতিবেদন ঃ

A.J.Moffatt Mills, Report on the Province of Assam,Publication Board of Assam, second edition, april,1984.

সাংকেতিক চিহ্ন ঃ

সম্পা. ঃ সম্পাদনা	পৃ. ঃপৃষ্ঠা	খ্ৰীঃ ঃ খীষ্টাব্দ
পুন.সম্পা. ঃ পুনসম্পাদিত	ফে. ঃ ফেব্ৰুৱাৰী	ন.ল.ফ ঃ নিধি লিবাই ফাৰৱেল

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

প্রণৱজ্যোতি ডেকাৰ গল্প ঃ বিষয়-বৈচিত্র্য আৰু কথনশৈলী

জ্যোতিষ্মান দাস

সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
তেজপুৰ বিশ্ববিদ্যালয়
নপাম, তেজপুৰ-৭৮৪০২৮
৮৬৩৮৫-৫৯০৭৪
jyotishmandas001@gmail.com

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

এগৰাকী সাহিত্যিক, চিন্তাবিদ, গৱেষক, অভিধান-প্ৰণেতা, শিক্ষাবিদ হিচাপে ড° প্ৰণৱজ্যোতি ডেকাই (১৯৩৯-) স্বৰাজোত্তৰ কালৰ অসমৰ বৌদ্ধিক ইতিহাসক বিশেষভাৱে সমৃদ্ধ কৰিছে। *কৈলাসনাথ, একুৰি বছৰৰ গল্প*(১৯৯৬), *এজাক এলেহুৱা কাউৰীৰ সাধু*(২০১২), *বেৰাবিছ লাছ আৰু অন্য গল্প*(২০১৩), *বিহুৱতী চৰাই আৰু অন্য গল্প*(২০১৬), *ড° প্ৰণৱজ্যোতি ডেকাৰ শ্ৰেষ্ঠ গল্প*(২০২১) আদি গল্প-সংকলনেৰে উত্তৰ-ৰামধেনু যুগৰ অন্যতম শ্ৰেষ্ঠ গল্পকাৰ হিচাপে তেখেতে অসমীয়া সাহিত্যৰ ইতিহাসত গুৰুত্বপূৰ্ণ স্থান অধিকাৰ কৰিছে। গল্পৰ বিষয়বস্তু, পৰিস্থিতি, কথনশৈলী, ভাষা আদি সকলো দিশৰে পৰা আধুনিক যুগৰ অসমীয়া গল্পকাৰসকলৰ ভিতৰত নিঃসন্দেহে তেখেত এক বিস্মৃত ব্যতিক্ৰম। প্ৰণৱজ্যোতি ডেকাৰ গল্পৰ জৰিয়তেই অসমীয়া গল্পৰ পৰিসৰত যথাৰ্থ ৰূপত নিম্নবৰ্গীয় চেতনাৰো সূচনা হৈছে বুলিব পাৰি। প্ৰান্তীয় (Marginal) পৰিৱেশ-পৰিস্থিতি আৰু নিম্নবৰ্গীয় (Subaltern) সমাজ-জীৱনৰ কথকতাই তেখেতৰ গল্পত বিশেষ গুৰুত্ব লাভ কৰি আহিছে। গল্পসমূহত প্ৰান্তৱৰ্তী চৰ-অঞ্চল, নগৰৰ সমীপৱৰ্তী বস্তি, স্পৰ্শকাতৰ সীমান্তৱৰ্তী এলেকা, দুৰ্গম সন্ত্ৰাসজৰ্জৰ পাৰ্বত্য অঞ্চল, জমিদাৰকালীন গ্ৰামাঞ্চল আদি বিভিন্ন পৰিৱেশৰ সাৰ্থক ৰূপায়ণ দেখা যায়। চৰিত্ৰৰ কথোপকথনৰ বিশেষ প্ৰাধান্য থকা প্ৰণৱজ্যোতি ডেকাৰ গল্পত প্ৰায়ে এক ব্যংগাত্মক আৰু হাস্যৰসাত্মক প্ৰকাশভংগী পৰিলক্ষিত হয়। স্বভাৱজাত ব্যংগ অথবা ৰসাল বৰ্ণনাৰ মাজেৰে তেখেতে বলিষ্ঠ ৰূপত সমকালীন সমাজখনৰ ৰূঢ় বাস্তৱতাৰ প্ৰকাশ কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। গল্পৰ পৰিৱেশ-পটভূমিক অধিক বাস্তৱিকতা প্ৰদান কৰি তেখেতে স্থানীয় ঔপভাষিক ৰূপ, মিশ্ৰিত ভাষা আদিৰ প্ৰয়োগ কৰিছে। কিন্তু, তেখেতৰ গল্প সম্বন্ধীয় বিদ্যায়তনিক অধ্যয়ন অতি সীমিত। এই গৱেষণা-পত্ৰখনৰ জৰিয়তে প্ৰণৱজ্যোতি ডেকাৰ গল্পৰ বিষয়-বৈচিত্র্য, আংগিকগত দিশ আৰু ভাষা সম্পৰ্কে এক সামগ্ৰিক অধ্যয়নৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

বীজ-শব্দ ঃ

অসমীয়া সাহিত্য, গল্প, নিম্নবৰ্গ, প্ৰণৱজ্যোতি ডেকা, বিষয়বস্তু, প্ৰকাশভংগী

প্ৰস্তাৱনা ঃ

বিংশ শতিকাৰ সত্তৰ দশকৰপৰা অসমীয়া গল্প-সাহিত্যত *ৰামধেনু*ৰ ঐতিহ্য-প্ৰৱাহী ধাৰাটোৰ সমান্তৰালকৈ একাংশ নবীন গল্পকাৰৰ আত্মপ্ৰকাশেৰে অসমীয়া গল্পৰ যি নতুন পৰিমণ্ডলৰ সূচনা হয়, তাৰ আধাৰত অসমীয়া গল্পৰ 'ৰামধেনু-পৰৱৰ্তী যুগ' অথবা 'উত্তৰ-

ৰামধেনু যুগ' নামৰ নতুন যুগ এটাৰ ধাৰণা একাংশ সমালোচক-আলোচকে আগবঢ়াইছে। *ৰামধেনুৰ* অৱলুপ্তিৰ পাছত সাহিত্যৰ নতুন যুগ সৃষ্টিকাৰী *ৰামধেনুৰ* স্থান আৰু ভূমিকা গ্ৰহণ কৰিব নোৱাৰিলেও *মণিদীপ* (১৯৬০-), *আমাৰ প্ৰতিনিধি* (১৯৬০-), *নৱযুগ* (১৯৬৩-), *নতুন প্ৰতিনিধি* (১৯৬৫-), *সংলাপ* (১৯৭১-), *নতুন পৃথিৱী* (১৯৭১-), *প্ৰকাশ* (১৯৭৫-), *সংজ্ঞা* (১৯৭৫-) ৰ দৰে আলোচনীয়ে সৃষ্টি কৰা বৌদ্ধিক পৰিৱেশতেই এচাম গল্পকাৰে গল্পৰ বিষয়, আংগিক, প্ৰকাশভংগীত কৰা নতুন পৰীক্ষা-সম্পৰীক্ষাৰে ৰামধেনু-যুগীয় অসমীয়া গল্পৰ বলয়ৰ পৰা আঁতৰি অহাৰ যি সচেতন প্ৰয়াস কৰিছিল—সেই প্ৰয়াসেৰেই অসমীয়া সাহিত্যত কেইগৰাকীমান ব্যতিক্ৰম গল্প-কথকৰ আৱিৰ্ভাৰ হয়। সত্তৰ দশকৰ অসমীয়া গল্পৰ পটভূমি সন্দৰ্ভত উপেন্দ্ৰনাথ শৰ্মাই কৰা এটি মন্তব্য এই প্ৰসংগত প্ৰণিধানযোগ্য। তেখেতে লিখিছে—"সত্তৰ দশকত পু�ৰণিচাম গল্পকাৰে নিজৰ সৃষ্টিকাৰ্যলৈ নতুনত্ব আনিব পৰা নাই। তৰুণসকলেও গোষ্ঠী আৰু গণ্ডীভুক্ত চিন্তা এৰি সাহিত্যৰ বহল পৰিধিত বিচৰণ কৰা নাই।"("চুটিগল্প-১৯৫০-১৯৯০", *অসমীয়া সাহিত্যৰ বুৰঞ্জী*, ষষ্ঠ খণ্ড, এবিলেক, পৃ.৪৭৪) এনে প্ৰেক্ষাপটত প্ৰণৱজ্যোতি ডেকাই ব্যংগাত্মক কথন-শৈলীৰ দ্বাৰা ৰূঢ় বাস্তৱৰ কথকতাৰে বিচিত্ৰ অভিজ্ঞতালব্ধ যিখন সুকীয়া গল্পৰ জগত বিগত সময়ছোৱাত নিৰ্মাণ কৰিছে, সেয়া ৰামধেনু-পৰৱৰ্তী যুগৰ অসমীয়া গল্প-সাহিত্যৰ বাবে ইতিমধ্যে এক ঐশ্বৰ্যত পৰিণত হৈছে। হোমেন বৰগোহাঞিৰ ভাষাত—"ষাঠিৰ দশকত অসমীয়া গল্প সাহিত্যৰ আটাইতকৈ ডাঙৰ আৱিষ্কাৰ হ'ল প্ৰণৱজ্যোতি ডেকা।" (*অসমীয়া গল্প সংকলন*-দ্বিতীয় খণ্ডৰ পাতনি)। 'ৰজকিনী ৰূপ' শীৰ্ষক আত্মজৈৱনিক গল্পটোত লেখকে প্ৰদান কৰিছে *ৰামধেনুৰ* ঐতিহ্য প্ৰৱাহী গল্পকাৰসকলৰ সৈতে থকা তেখেতৰ গল্পৰ পাৰ্থক্য আৰু 'গল্পৰ জগৎ'ৰ ভিন্ন চৰিত্ৰৰ এক আভাস—

"ভবেন শইকীয়া, হোমেন বৰগোহাঁই, লক্ষ্মীনন্দন বৰা, এইবোৰ ডাঙৰ লিখক। তেখেতসকলৰ কেবাখনো পৃথিৱী আছে। এখন নিজৰ বাবে, আনখন পাঠক-পাঠিকা আৰু তৃতীয়খন গল্পৰ নায়ক-নায়িকাৰ বাবে। মোৰ মাত্ৰ এখন জগৎ। সেই জগতৰ মানুহবোৰ বৰ সুবিধাৰ নহয়। কামবোৰো উচিত অনুচিতৰ নিয়ম মানি নকৰে। ফলত সকলোৰে অসুবিধা।"

ৰামধেনুৰ 'বাস্তৱতা'তকৈ 'অধিক বাস্তৱবাদী' হোৱাৰ এই প্ৰৱণতাটিয়েই প্ৰণৱজ্যোতি ডেকাৰ গল্পৰ জগতখনক প্ৰদান কৰিছে এক সুকীয়া আয়তন আৰু বিশিষ্টতা। বাস্তৱিক অভিজ্ঞতাকেই গল্প লিখনৰ প্ৰধান অৱলম্বন হিচাপে গ্ৰহণ কৰা গল্পকাৰৰ স্পষ্ট মত—"বাস্তৱ অভিজ্ঞতাহীন লিখকৰ গল্প দুপাত পঢ়াৰ পাছতে আছল মুগা আৰু নাইলন মুগাৰ মাজৰ পাৰ্থক্যৰ দৰে জেল্-জেলাই ওলাই আহে।" (*বেওৰাৰিছ লাচ অন্য গল্পৰ* পাতনি) কিন্তু গল্পকাৰৰ দ্বাৰা কথিত বাস্তৱৰ মাজত সততে অনুভূতিপ্ৰৱণ পাঠকে আশা কৰা ভাৱপ্ৰৱণতা বিচাৰি পোৱা নাযায়। পাঠক মুখামুখি হয়—এনে এক বাস্তৱৰ, যি বাস্তৱ বহুসময়ত পাঠকৰ কাম্য নহয়। গল্পকাৰ প্ৰণৱজ্যোতি ডেকাই তেখেতৰ বিচিত্ৰ অভিজ্ঞতাপূৰ্ণ জীৱন পৰিক্ৰমাত প্ৰত্যক্ষ কৰা ৰূঢ় বাস্তৱ সাধাৰণ পাঠকৰ বাবে চমৎকাৰিত্য সৃষ্টিৰ সচেতন প্ৰয়াস বুলি ধাৰণা হোৱাটোও স্বাভাৱিক। উল্লিখিত গল্পসংকলনৰ পাতনিতে তেখেতে লিখিছে—

"...নাৰী নিৰ্যাতনৰ ওপৰত লিখা গল্পৰ যেতিয়া বজাৰত গৰম জিলাপি যেন চাহিদা, তেনে কালত কোনো কোনো নাৰীয়ে অনিচ্ছুক পুৰুষৰ শোৱনি কোঠাত ৰাতি প্ৰৱেশ কৰি, তেখেতৰ কামনা পূৰণ নকৰিলে, 'হাল্লা লগাই দিব' বুলি কৰা ভীতি প্ৰদৰ্শনৰ গল্পৰ চাহিদা ক'ত থাকিব? আমি সাত বছৰীয়া ছোৱালীয়ে, তেৰ বছৰৰ ককায়েকক দালাল ৰূপে ৰাখি যৌন বেশ্যালি কৰা কিশোৰ কালতে নিজ চকুৰে দেখিছোঁ।"

'নিজ চকুৰে দেখা' বুলি দাবী কৰা এনে কিছুমান স্বল্পচৰ্চিত ঘটনা-পৰিঘটনাৰ অৱলম্বনেৰেই গল্পকাৰে গল্প লিখিছে, নিৰ্মাণ কৰিছে এখন বৰ্ণাঢ্য আৰু ব্যতিক্ৰম গল্পৰ বৈচিত্ৰ্যময় এখন জগৎ।

২. প্ৰণৱজ্যোতি ডেকাৰ গল্পৰ বিষয়-বৈচিত্ৰ্য আৰু কথনশৈলীৰ বিশ্লেষণ ঃ

প্ৰণৱজ্যোতি ডেকাৰ গল্পৰ বিচিত্ৰ, বৰ্ণাঢ্য আৰু ব্যতিক্ৰম জগতখনৰ লক্ষ্যণীয় বহু দিশৰ ভিতৰত এটা উল্লেখযোগ্য বিশেষত্ব হৈছে— তথাকথিত মূলসূঁতিৰ বাহিৰত বৈ যোৱা প্ৰান্তীয়, নিম্নবৰ্গীয় সমাজ বাস্তৱৰ জটিল জীৱনপ্ৰৱাহ, সংঘাত-সংশয়, অন্তৰ্দ্বন্দ্ব-বৰ্হিদ্বন্দ্ব, জীৱনবোধ আৰু সামাজিক প্ৰমূল্যৰ সাৰ্থক ৰূপায়ণ ঃ গল্পকাৰৰ গল্পত প্ৰাণ পাই উঠিছে "যোৱা কুৰি বছৰৰ ভিতৰত বেশ্যা-বস্তিত বাস কৰি, কট্টৰ বস্তুবাদী 'কোঠাৰালী', 'বেগম', 'মাহীদেউ' বা বেশ্যাগৃহৰ 'বাইদেউ' হৈ উঠা" **বেওৰাৰিছ লাছ**ৰ চাজিনা বেগম, চৰবাসী সন্মান-সচেতন দৰিদ্ৰ কৃষক চনু মিঞা (**কাফন**), মদপী ইমৰান পানী-মিস্ত্ৰীৰ ভাগিন বস্তিৰ কিশোৰ 'নান্হা ফিৰিষ্টা' আৰফানৰ

কৈশোৰৰ 'যৌন অন্বেষণৰ যাত্রা'(**অনিৰ্গম পথ**), প্রজন্মৰ পাছত প্রজন্ম জমিদাৰৰ বহতীয়া হৈ শেষত পকা বাঁহৰ এটা পূর্ণহতীয়া কোবেৰে যজ্ঞেশ্বৰ চৌধুৰীক বাগৰাই পেলোৱা ধনেশ্বৰৰ জীৱন-গাঁথা(**বৈহ্‌তা**)। গল্পকাৰে ব্যক্তি-জীৱন আৰু সমাজ-জীৱনৰ এনে কেতবোৰ ৰূঢ় বাস্তৱিক অভিজ্ঞতা আৰু পৰিৱেশৰ চিত্রায়ণ কৰিছে—যি বাস্তৱ পাঠকৰ বাবে হৈ পৰে চমৎকাৰী, বিস্ময়কৰ আৰু পীড়াদায়ক—গল্পকাৰৰ ভাষাত তেখেতৰ গল্প "নাৰিকলৰ লাড়ুত কামোৰ মৰাত কটংকৈ দাঁতত শিল লগাৰ গল্প।"—কাৰণ গল্পকাৰে বাস্তৱক ৰঙীন কাঁচৰ মাজেৰে নাচাই উদঙাই দিছে নগ্ন-বাস্তৱক, যি পাঠকক উপলব্ধিৰ এক গভীৰ স্তৰত দ্রৱীভূত কৰি চিন্তা-চেতনাক প্রৱলভাৱে জোকাৰি থৈ যায়। গল্পকাৰৰ গল্পত সততে পৰিলক্ষিত হোৱা নঞৰ্থক সমাপ্তিয়ে জীৱন আৰু বাস্তৱ সম্পর্কেও পাঠকক সজাগ আৰু সচেতন কৰি তোলে; আনহাতে গল্পৰ স্থান, পৰিৱেশ, চৰিত্র অনুযায়ী উপযুক্ত ঔপভাষিক বা লোক কথন-ভংগীৰ প্রয়োগে প্রণৱজ্যোতি ডেকাৰ গল্পক প্রদান কৰিছে এক বিশিষ্ট ৰূপ—প্রয়োজনত গল্পকাৰে গল্পৰ যথোপযুক্ত পৰিৱেশ নির্মাণৰ স্বার্থত প্রয়োগ কৰিছে অসমীয়া-হিন্দী-বাংলা-মৈমনসিঙীয়াৰ মিশ্র কথিত ৰূপবোৰ। উল্লেখযোগ্য যে গল্পকাৰে তেখেতৰ 'ৰাজনীতি'(১৯৭৫)শীর্ষক গল্পত পোন প্রথমবাৰৰ বাবে কামৰূপ জিলাৰ সর্থেবাৰী অঞ্চলত ব্যৱহৃত উপভাষাৰ প্রয়োগ কৰে। গল্পকাৰ প্রণৱজ্যোতি ডেকা মধ্যবিত্তীয় দৃষ্টিভংগী আৰু মানসিকতাৰ এজন ক্ষুৰধাৰ সমালোচক। সেয়েহে মধ্যবিত্তীয় মানসিকতাৰ সংকীর্ণ নৈতিক-চৰিত্রৰ উন্মোচন তেখেতৰ গল্পৰাজিত বিশেষভাৱে লক্ষ্যণীয়। আনহাতে গল্প ক'ৰৰ বাবে গল্পকাৰে নির্মাণ কৰিছে—বৌদ্ধিক শ্লেষাঘাত আৰু ব্যংগাত্মক ভাষাৰ একব্যতিক্রম আৰু নির্মেদ কথনশৈলী, যি কথনশৈলীত লক্ষ্য কৰা যায় অজস্র ভাৱ, চিন্তা, অনুভূতি, স্মৃতি আৰু খণ্ডিত অভিজ্ঞতাৰ বিচিত্র সমাহাৰ—আন্তৰিক উপলব্ধি আৰু বাস্তৱ অভিজ্ঞতাৰ সার্থক ঐক্যসাধন। যি কথনশৈলীৰ মাজেৰে বিবৃত হৈছে—'ৰামধেনু-যুগ'ৰ সচৰাচৰ পৰিচিত পৰিৱেশ আৰু সংঘাতৰ সলনি অপৰিচিত পৰিৱেশত অনালোচিত আৰু অল্পচর্চিত প্রসংগ কিছুমানৰ অৱতাৰণাৰে নির্মাণ কৰা ভিন্ন স্বাদৰ-সুকীয়া বিষয়ৰ বহু কাহিনী-উপকাহিনী।

প্রণৱজ্যোতি ডেকাই প্রান্তীয় চৰিত্রৰ জীৱন-শৈলীৰ সূক্ষ্ম অধ্যয়ন, সমাজ-বাস্তৱৰ গভীৰ পর্যবেক্ষণ আৰু উল্লিখিত ব্যতিক্রম কথন-শৈলীৰ অৱলম্বনেৰে বৈচিত্র্যপূর্ণ কাহিনী আৰু বর্ণাঢ্য চৰিত্রৰে ভৰা যিখন গল্পৰ জগতৰ নির্মাণ কৰিছে সেয়া অসমীয়া গল্পসাহিত্যৰ ইতিহাসত এক বিস্ময়কৰ ব্যতিক্রম।

ৰেওৱাৰিছু লাছ গল্পকাৰৰ এটি উল্লেখযোগ্য আৰু বহু চর্চিত গল্প। গল্পটোৰ পটভূমি নির্মিত হৈছে—বজাৰৰ কোণ এটাত পদপথত পৰি থকা এটা মৃতদেহক কেন্দ্র কৰি। য'ত মুখ্য চৰিত্র—'চাজিনা বেগম'। অচিনাক্ত শৱদেহটোক কেন্দ্র কৰি হোৱা কথোপকথনেৰে গল্পটোৰ কাহিনীভাগ আগবাঢ়িছে। কোনো চৰিত্রই ৰাষ্টাৰ সোমাজত পৰি থকা শৱদেহটোক লৈ প্রতিক্রিয়া ব্যক্ত কৰিছে, কোনোৱে শৱদেহটোৰ উপস্থিতিক সহজেই গ্রহণ কৰিছে, কোনোবা দুজনমানে কাৰোবাৰ প্রতি অভিযোগ আনিছে আৰু বেছিসংখ্যকে সময় নষ্ট নকৰি নিজা দৈনন্দিন কর্মত ব্যস্ত হৈ পৰিছে ঃ

"এইটো কি লাছ নেকি?"

"ইয়াত কিয় এনেকৈ পৰি আছে? most unhygienic!

"আমাৰ মিউনিচিপালিটিৰ কাম এনেকুৱাই।"

যেতিয়া 'কোঠাৱালী' চাজিনা বেগমে আৱিষ্কাৰ কৰিছে সেই লাছটো একালৰ তাইৰে স্বামী মতি ড্রাইভাৰৰেই হয়—যি মতি ড্রাইভাৰে অবৈধ সম্পর্কেৰে নিজে চপাই লোৱা বিপদ আৰু বদ্‌নামৰ বাবে "জোৱান, খুবচুৰত-মাইকী মানুহ, কাচ্চা-বাচ্চা নাই, নিজৰ খানা উলিয়াই ল'ব" বুলি ঘৈনীয়েক চাজিনাক গলিৰ কুঠৰী এটাতে নিঃসহায় কৰি এৰি থৈ গুচি গৈছিল। তাৰ পাছতে আৰম্ভ হৈছিল—চাজিনাৰ জীৱনৰ 'কোঠাৱালী'-অধ্যায়। বস্তি অঞ্চলত নাৰীৰ অৱদমিত সামাজিক স্থানৰ ছবিখন গল্পটোত স্পষ্ট ৰূপত প্রকাশিত হৈছে আৰু এই সামাজিক অৱদমনক "আব্বাজানেও হেনো ডেকা কালত মাকক এনেদৰে মাৰ ধৰ কৰিছিল।...কাম যেনেকৈ কৰিছিল, খঙো তেনেকৈ কৰিছিল" বুলি কৰা উপলব্ধিৰে স্বীকাৰ কৰি লোৱাৰ প্রৱণতাৰেই অধিকাৰী আছিল চাজিনা বেগম। মতি ড্রাইভাৰে চাজিনাক কৰা চৰম বিশ্বাসঘাতকতাৰ পিছতো মতিৰ লাচটোক হিন্দু নিয়মেৰে সৎকাৰ কৰি মুক্তি দিয়াৰ চিন্তা কৰা চাজিনাই কিন্তু যেতিয়া কনিষ্টবলৰ মুখেৰে "..লাছ যদি নালাগে হস্পিতালত বিক্রি কৰি দিবি' বুলি শুনিছে, মৃতদেহটো হাস্পতালত বিক্রী কৰি দুটকা অর্জন কৰাৰেই সিদ্ধান্ত গ্রহণ কৰিছে।

প্রেম, আৱেগ, সম্পর্ক, আন্তৰিকতাৰ স্থানত সর্বশেষত আর্থিক প্রয়োজনীয়তাৰ বিষয়টোৱেই লাভ কৰিছে প্রাধান্য। দাৰিদ্রতা আৰু অভাৱগ্রস্ততাই কোঙা কৰা, চিৰদিন শোষণ

আৰু নিষ্পেষণৰ বলি হৈ অহা এগৰাকী নিঃসহায় সৰ্বহাৰা নাৰীৰ এই উপলব্ধি পাঠকৰ বাবে অস্বাভাৱিক হৈ পৰা নাই, বৰঞ্চ হৈ উঠিছে অধিক গ্ৰহণযোগ্য আৰু তাৎপৰ্যপূৰ্ণ—"দশৰথে মাজে মাজে একো নাজানো বুলি কৈছিল যদিও চাজিনা বেগমে ওৰেবাটে সুধি গ'ল, হস্পিতালত কিমান টকা দিয়ে। লগে লগে দিয়ে নে পিছত গৈ আনিব লাগে। ডাক্তৰক কিবা দিবা লাগিব নেকি? দুৱা মানুহ আৰু শকত মানুহৰ লাছৰ বাবে একে পইছাই দিয়ে নেকি?" (**ৰেওৰাৰিছ লাচ**)

গল্পটোত উন্মোচিত হৈছে এখন প্ৰান্তীয় সমাজৰ সামাজিক বিন্যাস, নাৰীৰ নিম্ন স্থানিক অৱস্থান, নিম্নবৰ্গীয় নাৰীৰ মনস্তাত্ত্বিক দ্বন্দ্ব আৰু অভাৱগ্ৰস্ত ব্যক্তিমনৰ ব্যৱহাৰিক (Practical) উপলব্ধি।

দীঘল-গল্প **অনিৰ্গম পথ**ৰ প্ৰ'টাগনিষ্ট আৰফানৰ অভিজ্ঞতা আৰু উপলব্ধিৰ মাজেৰে প্ৰকাশিত হৈছে বস্তি অঞ্চলৰ জীৱন, যৌৱন, শিক্ষা, প্ৰতিবাদ, বিপ্লৱ, অন্যায়ৰ ঘটনাবহুল বহু অধ্যায়। আৰফান চৰিত্ৰটোৰ মাজেৰে কৈশোৰ-মনস্তত্ত্ব, বিশেষকৈ যৌনতাকেন্দ্ৰিক অনুসন্ধিৎসাৰ ৰূপায়ণ স্পষ্ট ৰূপত হৈছে। যি আৰফানে, মোমায়েকৰ 'গুদাৰ অসুখ'ৰ হেতু 'না মৰদ' হৈ গ'লে মামীয়েকৰ শাৰিৰীক প্ৰয়োজন পূৰণৰ বাবে প্ৰয়োজনীয় 'মৰদ'ৰ স্থানত নিজকে ভাৱি শিহৰিত হৈছে—'ওবেদুৰ'ৰ পৰা শিকিছে পুৰুষবাদী যৌনশিক্ষাৰ আদিপাঠ। তথাকথিত মেইন্‌ষ্টিমত নাৰীবাদ, নাৰী স্বাধীনতাৰ চৰ্চাই ব্যাপক গুৰুত্ব লাভ কৰিলেও মহানগৰীৰ উপকণ্ঠত নাৰীৰ এই নিম্ন স্থান আৰু মানক গল্পকাৰে নিৰ্ভেজাল ৰূপত তুলি ধৰিছে। অন্যহাতে, এইক্ষেত্ৰত মহিলাৰ দৃষ্টিভংগীও পুৰুষবাদৰ সহায়ক। যিদৰে **ৰেওৰাৰিছ লাছ**ৰ চাজিনা বেগমে মতি ড্ৰাইভাৰে তাইক কৰা শাৰিৰীক অত্যাচাৰ স্বাভাৱিক বুলি পতিয়ন গৈছে, একেদৰে **অনিৰ্গম পথ**ত মদাহী স্বামীৰ মাৰ খাই বিচনাত পৰি থকা আৰফানৰ মামীয়েক আৰু ওচৰ-চুবুৰীয়া মহিলাই খবৰ ল'বলৈ অহা মানুহক কেন্দ্ৰ কৰি কৰা গুজব্ মনকৰিবলগীয়া—"আকৌ মোকেই কয়—'ইচ্ আৰু এনেকৈ মাৰিব লাগে নে? ৰাতি আমাৰ মাষ্টৰ নাছিল, নহ'লে মই তেতিয়াই পঠিয়াই দিলোঁ হয়।' মই আকৌ পেহীটি ৰ'ব নোৱাৰি শুনাই দিলোঁ দিয়া—'নিকা কৰি অনা মৰদেহে মাৰিছে। পৰৰ মৰদে মৰা নাই নহয়।' তথাপি নামানে সেইজনীয়ে, চাওঁ চাওঁ বুলি বডিছটো দাঙি পিঠিৰ দাগকেইটাও চালে। তাতেই আকৌ কিমান ইচ্ ইচ্, উচ্ উচ্। কিবা মলম দিব লাগে হেনো। 'কোবৰ দাগকেইটা দেখি বিবিজানৰ একেবাৰে গা পিৰ্‌পিৰাই গ'ল যেন পাওঁ।...' পেহীটিয়ে মন্তব্য দিলে।"

লেখকে গল্পটোত বহুতো খণ্ডিত ঘটনাক জোৰা লগাইছে। বস্তিৰ দৈনন্দিন জীৱন-প্ৰৱাহৰ ছবি এখন সাৰ্থক ৰূপত চিত্ৰিত হোৱাৰ লগতে গল্পটোত আছে নিকটৱৰ্তী শিক্ষানুষ্ঠানৰ পয়ালগা এখন ছবি—য'ত শিক্ষকৰ জাতিগত বৈষম্যমূলক আচৰণেই বস্তিৰ কিশোৰক স্কুল এৰিবলৈ উৎসাহিত কৰিছে। শিক্ষকৰ দৃষ্টিত—"আঠগাঁৱৰ ইমৰান আলি চাইকেল মিস্ত্ৰিৰ ভাগিনে কি পঢ়ি-শুনি হাকিম-মন্ত্ৰুপ হ'ব, সেই চাইকেল মিস্ত্ৰিয়েই হ'ব।" গল্পকাৰে গল্পটোত আগবঢ়োৱা 'কমিউনিজম'ৰ বিদ্ৰূপাত্মক ব্যাখাও মনকৰিবলগীয়া—'কমিউনিজম'ৰ অব্যৱহাৰিকতাৰ প্ৰতি গল্পকাৰ অতি সচেতন। সেয়েহে বহু গল্পতে তথাকথিত প্ৰগতিবাদক গল্পকাৰে ব্যংগ কৰিছে। এইক্ষেত্ৰত লেখকৰ স্থিতি আৰু যুক্তিও স্পষ্ট— "আমাৰ দ্বাৰা শৈশৱ আৰু চেমনীয়া কালত কে'বাগৰাকী মুখেৰে অগ্নিবৰষা বিপ্লৱী, সামন্ত ভূস্বামী বিৰোধী, মাৰ্ক্সবাদী ব্যক্তিক লগ পোৱা গৈছিল। আমাৰ প্ৰাপ্ত বয়সত, আৰু তেখেতসৱৰ মাজ বয়সত দেখো, প্ৰায় প্ৰতিজনেই একোজনকৈ 'নগৰীয়া ভূস্বামী' হৈ উঠিছে আৰু মাহৰ প্ৰথম সপ্তাহতে তেখেতৰ ভাৰালৈ দিয়া ঘৰৰ কেৰেয়া বিচাৰি ওলায়। ঘৰ কেৰেয়ালৈ দিয়া আৰু মাটি কেৰেয়ালৈ দিয়াৰ মাজত মাৰ্ক্সীয় দৰ্শনৰ যি সূক্ষ্ম পাৰ্থক্য আছে, তাকে চিন্তাৰে ধৰিব নোৱাৰাৰ হেতুকে আমাৰ দ্বাৰা 'প্ৰগতিবাদী সাহিত্য' সৃষ্টি কৰাটো সম্ভৱ হৈ নুঠিল।" (*ৰেওৰাৰিছ লাছ আৰু অন্যান্য গল্পৰ* পাতনি)

'কমিনিউজম'ৰ তাত্ত্বিক দুৰ্বলতা, ব্যৱহাৰিক সীমাবদ্ধতা আৰু স্বাৰ্থজড়িত প্ৰয়োগ 'আলী মাষ্টৰ' চৰিত্ৰটোৰ মাজেৰে প্ৰকাশিত হৈছে। যি আলী মাষ্টৰে বস্তিৰ 'গৰীৱ' মানুহখিনিৰ আস্থা লাভ কৰাৰ বিপৰীতে ককৰ্থনাৰহে সন্মুখীন হৈছে—"বেইমানীহু বহুত দেখিছোঁ তেনে ইমানদাৰ। ইদ্রিছ চাচাই কি কয় জান? এই কমুনিচবোৰ বহি খোৱা বঙালীৰ বুধি..।" শ্ৰমজীৱী মানুহৰ জীৱনবোধ, বস্তিক কেন্দ্ৰ কৰি গঢ়ি উঠা বেআইনী কাম, বিপথে পৰিচালিত হোৱা এচাম নতুন পুৰুষৰ জীৱন-যাত্ৰা আদিৰ উপস্থাপনেৰে বস্তিৰ দৈনন্দিন জীৱন-প্ৰৱাহৰ এখন পূৰ্ণাংগ পট অংকন কৰাৰ লগতে গল্পকাৰে নিঁখুত ৰূপত বস্তিৰ কদৰ্য পৰিৱেশৰ আভাস দাঙি ধৰিছে—

"ভৰলুৰ পাৰৰ পৰা, তিনিদাল বাঁহৰ সাঁকোৰ ওপৰেৰে গেলা নলাটো পাৰ হৈ বস্তিত সোমাব লাগে। অলপ জোৰ বৰষুণ

দিলেই সাঁকোৰ ওপৰেৰে পানী বয়। গোটেই গুৱাহাটীৰ নলাৰ গেলা পানী আহি ঘৰবোৰত সোমায়। ভৰলুৰ সিপাৰে গুৱাহাটী মিউনিছিপালিটিৰ গু পেলোৱা পথাৰ। কেতিয়াবা বেছি বৰষুণ দিলে বা হেলাতে জামাদাৰে গু বৈ অনা গৰু গাড়ীখন নৈৰ পাৰতে লুটিয়াই গুখিনি তাতেই পেলাই থৈ যায়।"

খাটিখোৱা মানুহৰ জীৱনৰ কিছুমান চৰম উপলব্ধিৰ সার্থক উপস্থাপন প্রণৱজ্যোতি ডেকাৰ গল্পত মনকৰিবলগীয়া। **কাফন** গল্পৰ চুনু মিঞাৰ চৰৱ পূর্ব-বংগমূলীয় মানুহ। ভায়েকৰ চিকিৎসাৰ বাবে চহৰলৈ আহিছে—ডাক্তৰ দত্তৰ পৰামর্শ অনুসৰি দৈনিক দৰৱ কিনি দিছে। কিন্তু কেইবাদিনৰ অন্ততো যেতিয়া ভায়েক আছ্মত ঠিক হোৱা নাই, ডাক্তৰৰ পৰামর্শক আওকান কৰি চুনু মিঞাই ভায়েকক লৈ যাবলৈ ওলাইছে। ডাক্তৰ যেতিয়া অমান্তি হৈছে—অৱশেষত চুনু মিঞাই এখন থান কাপোৰ কিনি আনি ডাক্তৰৰ হাতত দি যিটো মন্তব্য কৰিছে সেই মন্তব্যৰ মাজেৰে দাৰিদ্রতাৰ ভয়াবহ স্বৰূপ আৰু পেটৰ ভাত মুকলোৱাৰ তাড়না, আত্মসন্মান আৰু পাৰিবাৰিক দায়বদ্ধতাৰ সন্মুখত কেনেদৰে আত্মীয়জনৰ আগন্তুক মৃত্যুও স্বাভাৱিক হৈ পৰে সেয়া উন্মোচিত হৈছে —"আমাৰ ভাই বাচবোনা। আল্লা ডাকৃছে তাৰে। পানী বাঢ়ছে, আমি এইখানে ৰৈতে পাৰব না। ই যাগাৰ মুল্লা কৈছে, মুফতে গোৰ দিব তোমাৰ ভাইৰে। তবে কাফনেৰ কাফৰটা দিয়া যাওঁ। আমাৰ কাছে ত্রিশটা টাহা আছে, দাৱাই কিনলে আৰ কাফনেৰ পইচা নাই। ঘৰেৰ লোগে কৈছে কাফনটা আগে কিনবাৰ লাইগা। আমাৰ ভাই মৈৰা গেলে মুল্লাৰে কাফৰটা দিয়া দিবেন। আমি যাইগা। চালাম বাবু।"

এফালে পানী বাঢ়িছে, আনফালে এয়া 'ধান কাইট্বাৰ সময়', এই সময়ত দৰিদ্র চুনু মিঞাৰ বাবে ধান কটাতো বেছি জৰুৰী—পৰিয়াল, সন্তান-সন্ততিৰ ভৱিষ্যতৰ চিন্তাৰ সন্মুখত ৰুগীয়া ভায়েক আছ্মতৰ চিকিৎসাত সময় ব্যয় কৰি থকাটো চুনু মিঞাৰ বাবে জৰুৰী হৈ থকা নাই। যিদৰে চাজিনা বেগমে মতি ড্রাইভাৰৰ শৱদেহ বিক্রী কৰিবলৈ ওলাইছে, চুনু মিঞাই ভায়েকক হস্পিতালত মৰিবলৈ এৰি থৈ যাব ওলাইছে—ইয়াৰ কাৰণ চৰিত্রদুটাৰ আৱেগ-অনুভূতিহীন মন নহয়—বিবেকৰ তুলাচনীত, সন্মুখৰ প্রেক্টিকেল্ পৃথিৱীখনৰ প্রেক্ষাপটত, দাৰিদ্রতা আৰু দায়বদ্ধতাৰ গধুৰ ভৰৰ সন্মুখত আৱেগ-অনুভূতিৰ হ্রাসমান ওজনৰ স্বাভাৱিক ফলশ্রুতি।

অৱশ্যে গল্পকাৰে যে চৰিত্রৰ এনে আৱেগ-অনুভূতিহীন কার্যৰ উপস্থাপনেই কৰিছে তেনে নহয়—গল্পকাৰৰ গল্পত মানৱীয় আৱেগ-অনুভূতিৰে প্রোজ্জ্বল বহু চৰিত্রৰ সমাৱেশ লক্ষ্যণীয়। বন্যাপিড়িত এলেকাত ঘৰৰ ছালৰ ওপৰত থাকি অকলে গাওঁখন ৰখি থকা নিঃকিন মানুহজনে দূৰণিবটীয়া গাঁৱত জাহাজত উঠি 'ৰিলিফ' দিবলৈ যোৱা হাকিমজন ভোকত থকা বুলি বুজি কেইমুঠিমান চিৰা আন্তৰিকতাৰে আগবঢ়াইছে। (**ৰিলিফ**), পুতেক-বোৱাৰীয়েকে ট্রেইনত এৰি থৈ যোৱা পংগু বৃদ্ধা মাতৃগৰাকীক নিজা ঘৰত বিনা পইচাৰে থৈ অহা দায়িত্ব কান্ধ পাতি লৈছে ষ্টেচনৰ এজন দৰিদ্র কুলীয়ে (**নিলিখা গল্প**)। এই গল্পবোৰত থকা গভীৰ মানৱীয়তাই পাঠকৰ অন্তৰত দ সাঁচ বহুৱাই থৈ যায়।

জমিদাৰকালীন সময়ৰ এখন প্রান্তীয় সমাজৰ প্রেক্ষাপটত নিম্নবর্গীয় বৈহ্তা-শ্রেণীৰ জীৱন-যন্ত্রণাৰ ৰূপায়ণেৰে লিখা **বৈহ্তা** প্রণৱজ্যোতি ডেকাৰ এটা অতি গুৰুত্বপূর্ণ গল্প। গল্পটোত উন্মোচিত হৈছে মাটি দখলক কেন্দ্র কৰি হোৱা ক্ষমতাৰ ৰাজনীতি, বাহুবলৰ যুঁজ, চৌধুৰী-বৈহ্তা(বহতীয়া)ৰ মাজৰ দমনমূলক সম্পর্ক, প্রতিশোধ আৰু প্রতিহিংসাৰ সার্থক উপস্থাপনেৰে কৰা জমিদাৰকালীন সময়ৰ সমাজজীৱনৰ এখন নির্মম ছবি। ডাঙৰবাপা(চৌধুৰী)য়ে যেতিয়া বৈহ্তা(বহতীয়া) ধনেশ্বৰহঁতৰ ঘৰ-বাৰী উচন কৰাৰ পৰিকল্পনা কৰিছে তেতিয়া ধনেশ্বৰৰ পুতেক সর্বেৰ(নতুন প্রজন্মৰ প্রতিনিধি) দৰে এচাম স্বাভাৱিকতে উদ্বিগ্ন আৰু প্রতিবাদী হৈ পৰিছে। কিন্তু চৌধুৰী পৰিয়ালৰ দোষৰ ভাৰ নিজে বহন কৰি জেল খাটি অহা চৌধুৰী পৰিয়ালৰ বিশ্বস্ত আজ্ঞাবাহী ধনেশ্বৰ প্রথম অৱস্থাত নিজা সিদ্ধান্তত অটল—"সাতপুৰুষ চধ্ৰী আঁহাৰ খাইছু। আজি ডাঙৰ বাপাৰ মানুহৰ লগত কাইজা নক্রু। গতে জীৱন অন্যৰ পাই চধ্ৰীথেৰ মাটি দখল লৈ দিছু। আজি যদি মই মোৰ মাটি এৰি নেদু, মোক পাপে চুব"।

কিন্তু মাটি দখল কৰিবলৈ আহি ধনেশ্বৰৰ পুতেক সর্বেলৈ বন্দুক টোৱোঁৱা চৌধুৰীক এটা 'পকা বাঁহৰ টাঙোনৰ পূর্ণহতীয়া কোব'এৰে যেতিয়া বগৰাই পেলাইছে, তাৰ মাজেৰে ধনেশ্বৰৰ অজ্ঞাতেই মন-মগজুত প্রৱহিত হৈ থকা ক্ষোভ আৰু প্রতিবাদ তাৎপর্যপূর্ণৰূপত বহিঃপ্রকাশিত হৈছে। অনাকাংক্ষিত গুৰুতৰ ঘটনাটোৰ পাছতেই সমৱেত ৰাইজ তাৰ পৰা পলায়ন কৰা পৰত "নাযাউ যা। মই গেলি শটু কাউৰ শগুণে চুৱা কৰ্বো' বুলি শটোক ৰক্ষণাবেক্ষণ দি থকা ধনেশ্বৰ চৰিত্রটো 'বেওৰাৰিছ

লাচ'ৰ 'চাজিনা'ৰ দৰেই বিচিত্ৰ ৰূপত পাঠকৰ সমুখত ধৰা দিছে। ব্যক্তিমনৰ বিৰোধাভাষ(paradox)ৰ সার্থক কথনেৰে পাঠকৰ মনত এই যি আনুভূতিক জোকাৰণি গল্পকাৰে সৃষ্টি কৰে—গল্পকাৰৰ কৃতিত্বও এইখিনিতেই। ধনেশ্বৰৰ এই মানসিক দ্বন্দ্ব আৰু প্রতিক্রিয়া সচৰাচৰ গল্পত পৰিলক্ষিত হোৱা শ্রেণীদ্বন্দ্বৰ প্রতিফলন নহৈ চৰিত্রটোৰ একক ব্যক্তিমনৰ জটিল মানসিকতাক প্রতিনিধিত্ব কৰিছে। বিশিষ্ট সমালোচক কৃষণ ৰায়ানে গল্পটোৰ এই সুকীয়া চৰিত্রৰ এক গভীৰ পর্যালোচনা তেখেতৰ গ্রন্থ *The Burning Bush*(BR Publication, New Delhi, 1988)ত আগবঢ়াইছে। তেখেতৰ ভাষাত— Is the story just yet another dramatization of the rich versus poor conflict, a statement of the ineluctable predicament of the disadvantaged -- like Jogesh Das's 'The Death of the Underdog' or Mahim Bora's 'Three Minus Three'? Or is it, like Lakshminath Bezbarua's 'The Hookah', a footnote to the history of the decay of the Assamese gentry? I am afraid neither of these readings would do, because the focus in Deka's story is throughout on Dhaneswar as a person and not on society or class. Despite the tittle of the story, Dhaneswar does not represent the serf class -- indeed he takes a line opposed to that of the other serfs and is contemptuos of them; he represents only himself. He, and not the class or the age to which he belongs, is the theme of the story. (p.115-116)

গল্পকাৰ ডেকাৰ গল্পৰ পৰিৱেশ প্রধানতঃ প্রান্তীয়, আৰু এই প্রান্তীয়তাৰ পটভূমিও বিশেষভাৱে লক্ষ্যণীয়। উদাহৰণস্বৰূপে বংগবিভাজনৰ পাছত পৰিত্যক্ত হোৱা এখন 'অর্দ্ধ-চহৰ-অর্দ্ধ গাঁও'ৰ গল্প **পোহা বাঘ** বা নাগালেণ্ডৰ কোনোবা এটা কোণৰ এটা গীর্জাঘৰক কেন্দ্র কৰি লিখা গল্প **ইশ্বৰৰ মহিমা** অথবা 'বাট্টা, মুনাফা আৰু দাও'ৰে নিয়ন্ত্রণ কৰা **মোৰে চহৰ**। বেআইনী ব্যৱসায়ৰ নায়ক 'পোহা বাঘ' গল্পৰ প্রধান চৰিত্র এসময়ৰ জমিদাৰ ৰায়-পৰিয়ালৰ মালী আৰু সম্প্রতি অঞ্চলৰ প্রতিষ্ঠিত ব্যৱসায়ী দশৰথ্ সিং হাজৰা। জমিদাৰ তনয় অজয় প্রতাপ ৰয় আৰু দশৰথ্ সিং হাজৰাৰ সম্পর্কৰ ব্যতিক্রম চৰিত্রই গল্পটোৰ মূল উপজীব্য। গল্পকাৰে লিখিছে— "দশৰথ সিং আৰু ৰায় পৰিয়ালৰ সম্বন্ধটো ঠিক কিতাপত বর্ণনা কৰা জমিদাৰ ৰায়তৰ তিক্ত শোষণৰ সম্বন্ধ যেন নালাগিল। জমিদাৰৰ প্রতি অন্ধ সামন্ত আনুগত্য থকা যেনো নালাগিল, আকৌ প্রগতিবাদী সাহিত্যৰ অন্ধ ক্রোধো নেদেখিলো।"

এই সম্পর্ক এনে এক সম্পর্ক য'ত জমিদাৰ তনয় হৈ পৰিছে দশৰথ্ সিং হাজৰাৰ 'পোহা বাঘ'। পোহাত খৰচ আছে, কিন্তু লগতে আছে বাঘ পোহাৰ বিশেষ মর্যাদা। জমিদাৰ তনয়ৰ প্রতি বাহিৰত থকা দশৰথৰ অগাধ ভক্তি আৰু ভিতৰত থকা প্রতিশোধৰ ভাৱৰ দ্বাৰা এটা জটিল সম্পর্কক উপস্থাপন কৰা হৈছে।

যদিও প্রণৱজ্যোতি ডেকাৰ বহু গল্পত অসমৰ প্রান্তীয় সমাজজীৱনে বিশেষ স্থান লাভ কৰিছে, কিন্তু অসমৰ বস্তি, চৰ, ৰেড্‌লাইট এৰিয়াৰ গল্পৰ কথক প্রণৱজ্যোতি ডেকাই **তিনিটা বীভৎস গল্পত** কৈছে—ৰাছিয়াৰ লেনিনগ্রাডৰ দুর্ভিক্ষৰ কথা। 'তিনিটা বীভৎস গল্প'ৰ প্রথম দুটা ক্রমে আগ্রাপীনা ইয়োচিপভ্‌না আৰু ভেলেন্টিনৰ কাহিনী। আগ্রাপীনা ইয়োচিপভ্‌নাৰ কাহিনী ঐতিহাসিক অক্টোবৰ বিপ্লৱৰ 'মহান' বৈপ্লৱিক ইতিহাসৰ আঁৰত ৰৈ অত্যাচাৰ-শোষণ, দুর্ভিক্ষৰ কাহিনী। বিপ্লৱৰ ফলশ্রুতিত সর্বহাৰা হোৱা, বিপ্লৱীৰ অত্যাচাৰ-উৎপীড়নৰ সন্মুখীন হোৱা 'সদাগৰ শ্রেণী'ৰ আগ্রাপীনাৰ পৰিয়ালে কেনেদৰে পৰৱর্তী সময়ত চৰম দৰিদ্রতা আৰু দুর্ভিক্ষৰে যুঁজিব লগীয়া হৈছিল, ৰুটিৰ বাবে দেহ বিক্রী কৰিবলগীয়া হৈছিল, বিক্রী কৰিবলগীয়া হৈছিল বংশৰ শেষ চিহ্ন 'সোণৰ হাঁতঘড়ী'টোও—তাৰ মর্মন্তুদ দলিল আৰু আৱেগিক কাহিনী গল্পটোত বিবৃত হৈছে। লেখকে ব্যক্ত কৰিছে 'মহান অক্টোবৰ বিপ্লৱ'ৰ সেই প্রেক্ষাপটক যাৰ কথা ইতিহাসত লিখা হোৱা নাই, লিখা হোৱা নাই *The 900 Days*ত—"আৰে সেইখন কিতাপ বীৰত্বব্যঞ্জক কিতাপ, তাত লিখা আছে জানো সেই অভাৱ-অনাটন দুর্ভিক্ষৰ দিনত, য'ত নগৰৰ এক তৃতীয়াংশ মানুহ অৱৰোধ কালত নাখাই মৰিছিল, সেইখন নগৰতে, একে সময়তে, চুৰি-ডকাইটি, লুট-পাট, ক'লা বজাৰ, বেশ্যালি চলি আছিল।"(তিনিটা বীভৎস গল্প)

—এই বিভীষিকাময় পৰিস্থিতিৰেই স্বীকাৰ হৈছিল ভেলেন্টীন। লেনিনগ্রাডৰ দুর্ভিক্ষই ভেলেন্টীনৰ বায়েকলৈ কঢ়িয়াই আনিছিল অকাল মৃত্যু। যি সময়ত এচকল ৰুটিৰ বাবে হাহাকাৰ কৰিবলগীয়া হৈছিল ভেলেন্টীনৰ পৰিয়াল। তদুপৰি অসমৰ সমাজ-ৰাজনীতিক জোকাৰি যোৱা 'গুপ্তহত্যা'ৰ অনুসন্ধানৰ বাবে অহা এগৰাকী বহিৰাগত বিষয়াই সন্মুখীন হোৱা প্রত্যাহ্বান-প্রতিবন্ধকতাৰ উপস্থাপনেৰে লিখা 'তিনিটা বীভৎস গল্প'ৰ 'গুপ্তহত্যা' শীর্ষক শেষৰটো গল্প গল্পকাৰৰ ভাষাত— "বীভৎস অসমৰ সৃষ্টিকর্তা ৰাজনৈতিক

নেতা, পুলিচৰ বিষয়া আৰু তেখেতসকলে এৰি থৈ যোৱা লেদেনা উকটিব লগা হোৱা শান্তিৰক্ষক বিষয়াসৰৰ নামত উৎসৰ্গিত।"

ক্ষমতাকেন্দ্রিক ৰাজনীতি, দুর্নীতিগ্রস্ততা আৰু তাত চেপা খাই বিপর্যস্ত হোৱা সাধাৰণ মানুহৰ জীৱনগাঁথাক খুউব সাৱলীল ৰূপত প্রণৱজ্যোতি ডেকাই **ৰাজনীতি, দলগুৰি গাঁৱৰ কুকুৰা চুৰিৰ কেচ, কৈলাসনাথ**ৰ দৰে গল্পত প্রকাশ কৰিছে। এটা শিৱলিংগক কেন্দ্র কৰি হোৱা ক্ষমতা-ৰাজনীতিৰ জটিল সমীকৰণ উন্মোচিত হৈছে 'কৈলাসনাথ' গল্পত। মূলতঃ প্রভাৱশালী নেতা ৰমাকান্ত চৌধুৰী আৰু এম.এল.এ সোণেশ্বৰ দাসৰ ব্যক্তিগত স্বার্থজড়িত শত্রুতাৰ বাবেই কেনেদৰে চহৰত নতুনকৈ গঢ়ি উঠা শিৱলিংগ এটাক কেন্দ্র কৰি জনসাধাৰণ দুটা ভাগত ভাগ হৈ পৰিছে—তাৰ সার্থক ৰূপায়ণ গল্পকাৰে কৰিছে। একেদৰে 'দলগুৰি গাঁৱৰ কুকুৰা চুৰিৰ কেচ'ত প্রতিফলিত হৈছে ৰাজধানীৰ পৰা গাঁৱৰ তৃণমূল পর্যায়লৈ শিপাই থকা দুর্নীতিগ্রস্ততা আৰু কুটিল ৰাজনীতিৰ স্বৰূপ। স্বাভাৱিক ব্যংগ আৰু শ্লেষৰ প্রয়োগেৰে গল্পকাৰে গল্পটোক সাৱলীল ৰূপত নির্মাণ কৰিছে।

মধ্যবিত্তীয় জীৱনবোধ আৰু মানসিকতাৰ সমালোচক আৰু কথক হিচাপে প্রণৱজ্যোতি ডেকাৰ যে এক সুকীয়া স্থান আছে সেয়া ইতিমধ্যে কোৱা হৈছে। তেখেতে গল্প কিয় লিখে তাৰ কাৰণ বিশ্লেষণ কৰি লিখা আত্মজীৱনীৰ এটা অংশত লিখিছে—"...গল্পৰ পাঠকক সকিয়াই দিবলৈ যে পৃথিৱীৰ সকলো মানুহেই, বুজন সংখ্যক অসমীয়া বুদ্ধিজীৱীৰ নৈতিকতা লৈ জীৱন যাপন নকৰে।" (*সোণৰ চামুচ মুখত লৈ*, পৃ.৩৭৮) তথাকথিত ভদ্রলোকৰ ভণ্ডামিৰ প্রকাশ হৈছে **ভদ্রলোক** গল্পত। **দে দে ৰাম দিলা দে ৰাম**ত বিবৃত হৈছে জেষ্ঠ নাগৰিকৰ বাৰৰ এটা আড্ডা। আত্মজৈৱনিক গল্পটোৰ মাজেৰে প্রকাশিত হৈছে গল্পকাৰৰ মধ্যবিত্তীয় মানসিকতাৰ চোকা সমালোচনা, নিজা যৌৱনৰ আদি পর্বৰ প্রেম-যৌনতামিশ্রিত অভিজ্ঞতাৰ প্রতিফলন। আনহাতে **ৰজকিনী ৰূপ** প্রধানতঃ এটা প্রেম আৰু যৌৱন-বিষয়ক গল্প। নতুনকৈ প্রেমত পৰা এগৰাকী কিশোৰীৰ সৈতে প্রেমৰ বর্ণাঢ্য অভিজ্ঞতাৰে পুষ্ট লেখকৰ প্রেম সম্পর্কীয় আলাপ গল্পটোৰ মাজেৰে প্রকাশিত হৈছে। মধ্যবিত্তীয় সংস্কাৰৰ সূক্ষ্ম বর্ণনা সততে গল্পকাৰৰ গল্পত পৰিলক্ষিত হয়— "তাই ক'ত বহিব চাই, সুবিধাৰ আসন নেদেখি কোঠালীৰ ভিতৰলৈ গৈ মূঢ়া এটা উলিয়াই আনি, ফ্রকটো চান কৰি ভৰিৰ তললৈ আনি ভৰি দুখন লগ লগাই পোন হৈ বহিল। তাৰ পাছত ক'লে, "কওঁক"। মই বুজিলো, প্রশান্তৰ ঘৈণীয়েকে জীয়েকক সংস্কাৰ মতেই ভালকৈ তুলিছে। "ডাঙৰৰ লগত সমান আসনত নবহিবা। ফ্রকটো টানি ল'বা। ভাল ছোৱালীয়ে ভৰি মেলি নবহে।....ইত্যাদি ইত্যাদি।" (ৰজকিনী ৰূপ)

উল্লেখযোগ্য যে অসমৰ বৌদ্ধিক আৰু শৈক্ষিক ক্ষেত্রখনৰ দুৰৱস্থা অসমৰ এখন অন্যতম উচ্চ শিক্ষানুষ্ঠানত অধ্যাপনা কৰাৰ সুবাদত গল্পকাৰে পোনপটীয়াকৈ প্রত্যক্ষ কৰিছে। গতিকে তাৰ প্রতি বিষোদ্গাৰ আৰু কঠোৰ সমালোচনা বিভিন্ন গল্পত সততে পৰিলক্ষিত হয়।—

"এম.এ পাছ কৰি সি কলেজত সোমাল। অধ্যাপক হৈ বিয়া কৰালে। আদহীয়া হ'ল, দুখনমান গল্প, উপন্যাসো লিখিছিল। তাৰ পাছত সেইবোৰ বাদ দি ছাত্র টিউচন আৰু অর্থকাৰী 'নোট' লিখাত লাগিল। কলেজৰ বিভাগৰ মুৰব্বী হ'ল। এতিয়া অসমৰ কলেজীয়া অধ্যাপকৰ ৰাজনীতিত এজন লেখত ল'বলগীয়া নেতা।" (ৰজকিনী ৰূপ)

উর্বশীৰ বৃত্তিত মধ্যবিত্তীয় জীৱনৰ অর্থনৈতিক প্রসংগ আৰু বিবাহ-বর্হিভূত সম্পর্কৰ জটিলতা, প্রতিশোধ-প্রতাৰণাৰ এখন বাস্তৱ ছবি প্রকাশিত হৈছে। প্রণৱজ্যোতি ডেকাৰ গল্পৰ পৰিৱেশ-চিত্রণো মধ্যবিত্তীয়-নৈতিকতাৰ দৃষ্টিৰে অদর্শনীয়-অস্পৃশ্য। ইম্পিৰিয়েল বাৰৰ আন্ধাৰ চুক (উর্বশীৰ বৃত্তি) বা বয়োবৃদ্ধৰ মদৰ-আড্ডাস্থলী (দে দে ৰাম দিলা দে ৰাম)ৰ পৰিৱেশত গল্পৰ বর্ণনা কৰা প্রণৱজ্যোতি ডেকাই তেখেতৰ গল্পত পূর্বকালৰ গল্পকাৰৰ গল্পত স্থান নোপোৱা অনালোচিত বহু প্রসংগৰ অৱতাৰণা কৰিছে। ডেকাৰ গল্পত মুক্তভাৱে প্রকাশিত হৈছে— পর্ণগ্রাফীৰ মান বিচাৰ কৰা নিজা অভিজ্ঞতাৰ কথা (**ইশ্বৰৰ মহিমা**), এচকল ৰুটিৰ বাবে দেহ-ব্যৱসায়ত নামিবলগীয়া হোৱা উন্নত দেশৰ কোনো নাৰীৰ জীৱন-গাঁথা (**তিনিটা বীভৎস গল্প**), স্মাগলাৰৰ-পৃথিৱীত থকা মানৱীয়তাৰ কাহিনী (**মোৰে চহৰ**), অনাঘ্রাতা কুসুমৰ কুমাৰীত্ব মোচনৰ টোপ দি গুৱাহাটীৰ কোনো গলিলৈ নৈতিক চৰিত্র হানিৰে ডকাইতি কৰাৰ সুযোগৰ অপেক্ষাত ৰৈ থকা কোনো যুৱকৰ কাহিনী (**নাম-মাহাত্ম্য**)। শক্তিশালী প্রকাশভংগীৰে আঢ্যৱন্ত মানুহৰ আধুনিক জীৱন-পৰিক্রমাৰ যন্ত্রণা আৰু নৈৰাশ্যৰ ৰূপায়ণেৰে লিখা **সোধা নহ'ল** গল্পকাৰৰ আন এটা উল্লেখযোগ্য গল্প।

শ্রীকৃষ্ণৰ শেষ দিনটো আৰু **এজাক এলেহুৱা কাউৰীৰ সাধু** শীর্ষক গল্প দুটাত ক্রমে পুৰাকথা আৰু এটা সাধুকথাক

আশ্রয় কৰি গল্পকাৰে একোটা নতুন কাহিনী কৈছে। 'শ্রীকৃষ্ণৰ শেষ দিনটো'ত শ্রীকৃষ্ণৰ স্বগতোক্তিৰ মাজেৰে কুৰুক্ষেত্ৰ যুদ্ধৰ পৰৱৰ্তী কালত যাদৱ-বংশৰ অধঃপতনৰ কাহিনী প্ৰকাশিত হৈছে। পশু-পালন বৃত্তিত জড়িত যাদৱ বংশক আজীৱন কষ্ট-ত্যাগেৰে শ্রীকৃষ্ণই এটা উন্নত জাতি হিচাপে প্ৰতিষ্ঠা কৰাৰ পাছত উত্তৰসুৰীয়ে এতিয়া 'আপোনালোকে গৰু চৰাইছিল' বুলি কৰা অপমানৰ সন্মুখীন হ'বলগীয়া হৈছে। শত্ৰুবিহীন যাদৱবংশই দুই শিবিৰত বিভক্ত হৈ ভাতৃঘাতী সংঘৰ্ষ—ক্ষমতাৰ যুদ্ধত লিপ্ত হৈ আত্মধ্বংসী যজ্ঞৰ আৰম্ভ কৰিছে। ইয়াৰে কোনোবা এটা শিবিৰৰ চক্ৰান্ততেই ব্যাধৰ কাড়বিদ্ধ হৈ মৃত্যুবৰণ কৰা শ্রীকৃষ্ণৰ আত্মকথন, আত্মসমালোচনা আৰু আত্মোৎলব্ধিৰ মাজেৰে প্ৰজন্মৰ সংঘাত, ক্ষমতাৰ যুদ্ধই অনা কৰুণ পৰিসমাপ্তিৰ ৰূপায়ণ গল্পকাৰে কৰিছে। 'এজাক এলেহুৱা কাউৰীৰ সাধু'য়েও বহন কৰিছে প্ৰজন্মৰ সংঘাতৰ চিত্ৰ। বৃদ্ধ অভিজ্ঞতাসমৃদ্ধ কাউৰী বায়সৰ দূৰদৰ্শী পৰামৰ্শ নামানি 'প্ৰগতিবাদী' কৰিৎকৰ্মা নিৰ্দেশিত সহজ পথেৰে আগবঢ়াৰ ফলশ্ৰুতিত অবন্তী ৰাজ্যৰ কাউৰী-সমাজলৈ আহি পৰা বিপদৰ মাজেৰে তথাকথিত সোৱোপা প্ৰগতিশীলতাক গল্পকাৰে সমালোচনাৰ কেন্দ্ৰ কৰি লৈছে। গল্পটোত প্ৰজন্মৰ ব্যৱধানে অনা ৰুচিবোচৰ আৰু মূল্যবোধৰ পৰিৱৰ্তনৰো আভাস দাঙি দিয়া হৈছে। পু�ৰাকথা আৰু লোককথাৰ পুনৰকথনেৰে লিখা এই গল্পদুটাৰ সুকীয়া চৰিত্ৰই গল্পকাৰ হিচাপে প্ৰণৱজ্যোতি ডেকাৰ অসাধাৰণ দক্ষতা আৰু আংগিকগত বিচৰণ-পৰিসৰৰ ব্যাপকতাৰো প্ৰমাণ দাঙি ধৰে।

৩. সামৰণি ঃ

সত্তৰ দশকৰ পৰা পৰিৱৰ্তিত পৰিস্থিতিৰ প্ৰেক্ষাপটত *ৰামধেনু* যুগৰ উদাৰতাবাদ কেনেদৰে গভীৰ অন্তৰ্মুখী, পীড়াদায়ক আৰু ৰহস্যময় ৰূপ পৰিগ্ৰহণ কৰিছে সেই সম্পৰ্কে হীৰেন গোহাঁয়ে "Assamese in 1971" শীৰ্ষক *Indian Literature*(অক্টোবৰ-ডিচেম্বৰ সংখ্যা, ১৯৭২)ত প্ৰকাশিত এটি নিবন্ধত সবিস্তাৰে আলোচনা কৰিছে। এই পৰিৱৰ্তিত পৰিস্থিতিয়ে মধ্যবিত্তীয় ভণ্ডামি আৰু নৈতিকতাৰ সংকীৰ্ণ স্বৰূপৰ প্ৰতি তীক্ষ্ণ ব্যংগাত্মক দৃষ্টিক যি অনুপ্ৰেৰণা প্ৰদান কৰিছে সেই প্ৰেক্ষাপটতেই প্ৰণৱজ্যোতি ডেকাই ব্যংগ-ভাষাক কলাত্মক আৰু কাৰিকৰী ভাৱে এক উন্নত স্তৰলৈ নি গল্প লিখিছে আৰু অসমীয়া গল্পসাহিত্যক প্ৰদান কৰিছে বিশেষ সমৃদ্ধি। হীৰেন গোহাঁইৰ ভাষাত—On the other hand, while the liberalism of the Ramdhenu period was not without broad, if confused social awareness and rich human sympathy, the liberalism of the present day is deeply introverted, anguished and mystical. It is verging on the borders of cynical despair ennui. On the other hand the new situation has also inspired the sharp satirical eye for hypocrisy and cant. Pranabjyoti Deka has brought the art of satire to a new level of technical excellence and perceptive power. Even the humanists of older generation cock a wary eye now and then at the scene before them. মানুহৰ মুখাপিন্ধা-চৰিত্ৰৰ নিৰ্দয় উন্মোচনৰ লগত অনুভূতিৰ নিয়ন্ত্ৰিত তিক্ততাৰ সমন্বয় সাধনেৰে(দ্ৰষ্টব্যঃ "...combines ruthless exposure of pretense with a controlled bitterness of feeling." , উল্লিখিত প্ৰবন্ধ) সামগ্ৰিকভাৱে প্ৰণৱজ্যোতি ডেকাৰ গল্প হৈ পৰিছে—ৰূঢ় বাস্তৱৰ ব্যংগাত্মক কথকতা। ❑

গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

ডেকা, প্ৰণৱজ্যোতি. *ড° প্ৰণৱজ্যোতি ডেকাৰ শ্ৰেষ্ঠ গল্প*, বান্ধৱ, ২০২১.

—. *বেওৰাবিছ লাছ আৰু অন্য গল্প*, বান্ধৱ, ২০১৩.

—. *সোণৰ চামুচ মুখত লৈ*, বান্ধৱ, ২০১৬.

বৰা, অপূর্ব, সম্পা. *অসমীয়া চুটিগল্প ঃ ঐতিহ্য আৰু বিৱৰ্তন*, যোৱহাট কেন্দ্ৰীয় মহাবিদ্যালয় প্ৰকাশন, ২০১২.

Guha, Ranajit, and Gayatri C. Spivak. *Selected Subaltern Studies*. Oxford UP, 1988.

Rayan, Krishan. *The Burning Bush*. D.K.Publishers, 1988.

পত্ৰিকা ঃ

Indian Literature , October-December 1972, Vol. 15, No. 4 (October-December 1972), pp. 8-14 Published by: Sahitya Akademi

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

অসমৰ শোণিতপুৰ জিলাৰ কৈশোৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ মানসিক স্বাস্থ্যৰ ওপৰত এক অধ্যয়ন

ধ্ৰুৱজ্যোতি বৰা
বিষয় শিক্ষক
চাৰিআলি বালিকা উচ্চতৰ মাধ্যমিক বিদ্যালয়
বিশ্বনাথ, অসম- পিন ৭৮৪১৭৬
৯৬৭৮২২৭০০৯
dhrubajyoti.borah@kkhsou.in

ড° প্ৰণৱ শইকীয়া
সঞ্চালক (ভাৰপ্ৰাপ্ত) সহযোগী অধ্যাপক
ইন্দিৰা মিৰি শিক্ষা অধ্যয়ন সত্ৰ
কৃষ্ণকান্ত সন্দিকৈ ৰাজ্যিক মুক্ত
বিশ্ববিদ্যালয়, গুৱাহাটী, অসম
pranabsaikia@kkhsou.in

সাৰাংশ ঃ

সফল জীৱনৰ অন্যতম গুৰুত্বপূৰ্ণ পূৰ্বচর্ত হৈছে মানসিক স্বাস্থ্য। মানসিকভাৱে সুস্থ ব্যক্তি এজনক উদ্বিগ্নতা, দুখ, ঈর্ষা, অপৰাধবোধ, আৰু আন আন আৱেগ যেনে ভয়, খং আদিয়ে আৱৰি নাৰাখে। মানসিকভাৱে সুস্থ ব্যক্তিয়ে নিজৰ সামাজিক আচৰণত সামঞ্জস্য ৰাখিব পাৰে আৰু বিভিন্ন পৰিস্থিতিৰ সৈতে সমাযোজন কৰাৰ ক্ষমতা লাভ কৰে। কৈশোৰ কালৰ সময়ছোৱা হৈছে জীৱনৰ পৰিৱর্তনশীল পর্যায়।

যেতিয়া এজন ব্যক্তিয়ে এই পৰিৱর্তনশীল পর্যায়ত প্ৰৱেশ কৰে, তেতিয়া তেওঁৰ বাবে মানসিক চাপৰ সৃষ্টি হয়। কিশোৰ-কিশোৰী ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলে বিভিন্ন কাৰণত মানসিক স্বাস্থ্যজনিত সমস্যাৰ সৈতে মুখামুখি হয়, সেইবোৰৰ ভিতৰত কিশোৰ-কিশোৰীসকলে সহপাঠীৰ সৈতে সুস্থ সংযোগ গঢ়ি তোলা, বিদ্যালয় আৰু পৰিয়ালৰ দাবী পূৰণ কৰা আৰু পৰিৱেশৰ লগত নিজৰ জীৱন খাপ খুৱাই ল'ৰলৈ অসুবিধাৰ সন্মুখীন হোৱা ইত্যাদি। দীর্ঘদিনীয়া অসুস্থতা, বা সুস্থ মানসিক স্বাস্থ্যৰ অভাৱে কিশোৰ-কিশোৰীৰ জীৱনত গভীৰ প্ৰভাৱ পেলাব পাৰে, যাৰ ফলত তেওঁলোকৰ জীৱনত হতাশা, উদ্বেগ, মনোযোগৰ বিকাৰ বা আনকি আত্মহত্যাৰ প্ৰৱণতাৰ দৰে গুৰুতৰ সমস্যাৰ সৃষ্টি হয়। মানসিক স্বাস্থ্যৰ সমস্যাৰ দ্বাৰা শৈক্ষিক প্ৰদর্শনত প্ৰভাৱ পৰে।

সেয়েহে এই অধ্যয়নৰ যোগেদি শোণিতপুৰ জিলাৰ বালিপৰা শিক্ষাখণ্ডত আমাৰ সমৃদ্ধিশালী দেশৰ ভৱিষ্যত স্বৰূপ কিশোৰ-কিশোৰীসকলৰ মানসিক স্বাস্থ্যৰ মূল্যায়নৰ এক প্ৰয়াস কৰা হৈছে। এই অধ্যয়নটো সম্পূর্ণ কৰিবলৈ বর্ণনাত্মক আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি প্ৰয়োগ কৰা হৈছে আৰু উৎসসমূহ মূলতঃ প্ৰাথমিক আৰু গৌণ উভয় উৎস ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। বালিপৰা শিক্ষাখণ্ডৰ ৬০ জন ছাত্ৰ ছাত্ৰীক যাদৃচ্ছিক ভাৱে বাচনি কৰি তেওঁলোকৰ ওপৰত ড° সুষমা তালেছাৰা আৰু ড° আখতাৰা বানোৱে নির্মাণ কৰা মানসিক স্বাস্থ্যৰ স্কেলৰ গৱেষকৰ দ্বাৰা কৰা অসমীয়া অনুবাদ সংস্কৰণৰ সহায়ত উত্তৰদাতাসকলৰ পৰা প্ৰাথমিক তথ্য সংগ্ৰহ কৰা হয়। আৰু গৌণ তথ্যসমূহ বিভিন্ন প্ৰকাশন আৰু ৰেকর্ড, কিতাপ, আলোচনী, ইন্টাৰনেট আদিৰ পৰা লাভ কৰা। সংগৃহীত তথ্যসমূহ বিভিন্ন পৰিসাংখ্যিক পদ্ধতি যেনে গড়, প্ৰামাণিক বিচ্যুতি আৰু t-মান আদিৰ যোগেদি বিশ্লেষণ কৰা হৈছিল। এই গৱেষণাত দেখা গ'ল কিশোৰ কিশোৰী ছাত্ৰ-ছাত্ৰী সকলৰ মানসিক স্বাস্থ্যৰ অৱস্থা মধ্যমীয়া হোৱাৰ লগতে তেওঁলোকৰ মাজত লিংগগত পার্থক্য দেখা পোৱা

গৈছে।

প্রাধান্যমূলক শব্দ- মানসিক স্বাস্থ্য, কিশোৰ-কিশোৰী, মাধ্যমিক, ছাত্ৰ, উদ্বেগ, বিষণ্ণতা আদি।

১. প্ৰস্তাৱনাঃ

মানসিক স্বাস্থ্যৰ ধাৰণাটো মানুহৰ বিৱৰ্তনৰ দৰেই পুৰণি। সুস্থ মনৰ ব্যক্তিয়ে জীৱনৰ প্ৰতিটো দিশতে সুখ বিচাৰি পায়। ভাল মানসিক অৱস্থাৰ এজন ব্যক্তিয়ে নতুন ধাৰণা অন্বেষণ কৰিবলৈ সৃষ্টিশীলতা ব্যৱহাৰ কৰিব পাৰে আৰু অধিক কাম সফলতাৰে সাধনৰ সুযোগ ল'ব পাৰে। আধুনিক যুগত ৰাষ্ট্ৰসংঘৰ আৰম্ভণিৰ পিছতেই মানসিক স্বাস্থ্যৰ ধাৰণাটোৱে আন্তঃৰাষ্ট্ৰীয় পৰ্যায়ত গ্ৰহণযোগ্যতা অৰ্জন কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। ১৯৪৬ চনত বিশ্ব স্বাস্থ্য সংস্থাৰ সংবিধানে "স্বাস্থ্যক কেৱল ৰোগ বা অসুস্থতাৰ অনুপস্থিতি নহয়, সম্পূৰ্ণ শাৰীৰিক মানসিক আৰু সামাজিক সুস্থতাৰ অৱস্থা বুলি সংজ্ঞায়িত কৰিছিল। ইয়াৰ উপৰিও মানসিক স্বাস্থ্য বজাই ৰখাটোৱে ব্যক্তিৰ সংহতি আৰু সম্পূৰ্ণতাৰ তাৎপৰ্যৰ ওপৰত গুৰুত্ব আৰোপ কৰে। এই সাধাৰণ শব্দটোৱে আত্ম-কাৰ্যক্ষমতা, স্ব-শাসন, দক্ষতা, আত্ম-নিৰ্ভৰশীলতা, আৰু নিজৰ বৌদ্ধিক আৰু আৱেগিক সম্ভাৱনাৰ আত্ম-বাস্তৱায়ন আদি বিভিন্ন ধাৰণা সামৰি লৈছে। মানসিক স্বাস্থ্যৰ ইতিবাচক দিশসমূহ হ'ল আত্মনিয়ন্ত্ৰণ, আত্মবিশ্বাস আৰু সুখ, মিলাপ্ৰীতি, আত্মসন্মান, আন্তঃব্যক্তিগত সম্পৰ্ক পূৰণ, জীৱন-সন্তুষ্টি, ইত্যাদি। আমাৰ শাৰীৰিক, মানসিক, আৱেগিক আৰু সামাজিক কল্যাণৰ সকলো দিশ মানসিক স্বাস্থ্যৰ অন্তৰ্গত। জীৱনটো দিক্ নিৰ্ণয় কৰাৰ সময়ত আমাৰ চিন্তাধাৰা, আৱেগ আৰু আচৰণৰ ওপৰত মানসিক স্বাস্থ্যই প্ৰভাৱ পেলায়। আনহাতে অসুস্থ মানসিক স্বাস্থ্যই মানুহক দৈনন্দিন কাৰ্য সম্পাদন কৰাত কঠিন প্ৰত্যাহ্বানৰ মুখামুখি কৰি তোলে আৰু ইয়াৰ বলি হোৱা লোকসকলে জীৱন উপভোগ কৰাত ব্যৰ্থ হয়। উত্থান-পতন মানুহৰ জীৱনত স্বাভাৱিক পৰিঘটনা, কিন্তু হতাশা আৰু দুখ যদি দীৰ্ঘদিন ধৰি থাকে আৰু নাযায়, তেন্তে সেয়া মানসিক ৰোগৰ লক্ষণ হ'ব পাৰে। ইয়াৰ উপৰিও ই আমাৰ সিদ্ধান্ত গ্ৰহণ, আন্তঃব্যক্তিগত পাৰস্পৰিক ক্ৰিয়া-কলাপ আৰু মানসিক চাপৰ প্ৰতিক্ৰিয়াত প্ৰভাৱ পেলায়। দুখ, নিসংগতা, অসহায়তা, শূণ্যতা, অস্থিৰতা, নিৰ্জীৱতা আদি মানসিক ৰোগৰ লক্ষণ। শৈশৱ আৰু কৈশোৰৰ পৰা প্ৰাপ্তবয়স্ক আৰু বৃদ্ধাৱস্থালৈকে জীৱনৰ প্ৰতিটো পৰ্যায়তে মানসিক স্বাস্থ্যৰ গুৰুত্ব আছে। উন্নত মানসিক স্বাস্থ্যৰ ব্যক্তিৰ আৱেগিক স্থিৰতা, সম্পূৰ্ণ আৰু সৃষ্টিশীল জীৱন যাপন কৰাৰ ক্ষমতা, জীৱনৰ অনিবাৰ্য সমস্যাসমূহ চম্ভালিব পৰা ক্ষমতা আদি ভাল গুণ থকা প্ৰায়ে দেখা যায়। এজন ব্যক্তি শাৰীৰিকভাৱে সুস্থ হোৱা, অন্য ব্যক্তিৰ লগত উৎকৃষ্ট সম্পৰ্ক থকা, সমাজলৈ অৰ্থপূৰ্ণ অৱিহণা যোগোৱা, দক্ষতাৰে কাম কৰা আৰু নিজৰ নিজৰ সম্পূৰ্ণ সম্ভাৱনাক বিকশিত কৰিবলৈ নিৰন্তৰ প্ৰচেষ্টা চলোৱা, আদিয়ে ব্যক্তিজনৰ জীৱনৰ মানসিক চাপৰ সৈতে সমাযোজন কৰাত সহায় কৰে। সাধাৰণতে, মানসিকভাৱে সুস্থ ব্যক্তি এজনে নিজকে ভাল পায় বুলি ধৰিব পাৰি। আনহাতে, অসামঞ্জস্যহীন ব্যক্তিৰ এটা সাধাৰণ লক্ষণ নিজৰ প্ৰতি প্ৰবল অপছন্দ হিচাপে লক্ষ্য কৰিব পাৰি। ভাল মানসিক অৱস্থাৰ ব্যক্তিয়ে বিশ্বাস কৰে যে তেওঁক আনে ভাল পায় আৰু তেওঁক সমাজৰ সদস্য হিচাপে গ্ৰহণ কৰে। মানসিক ভাৰসাম্যহীন ব্যক্তিজনে অৱশ্যে একেবাৰে বেলেগ ধৰণে সঁহাৰি দিব পাৰে। শৈশৱ আৰু কৈশোৰ কালৰ কম বয়সত যিকোনো মানসিক ভাৰসাম্যহীনতাই এজন ছাত্ৰ বা ছাত্ৰীৰ আৰু তেওঁৰ পৰিয়ালৰ বাবে দুখ-কষ্টৰ সৃষ্টি কৰে, কিয়নো ই সামাজিক, মানসিক আৰু শৈক্ষিক বৃদ্ধিৰ বাবে গুৰুতৰ ভাবুকি কঢ়িয়াই আনিব পাৰে। ইয়াৰ সৈতে বহুতো স্বাস্থ্যজনিত বিপদৰ সম্পৰ্ক থাকিব পাৰে, য'ত আত্মহত্যাৰ প্ৰৱণতা, মানসিক চাপ, হতাশা, শৈক্ষিক বেয়া প্ৰদৰ্শন, আৰু শেষত ঘৰুৱা বিসংগতিপূৰ্ণ পৰিৱেশ আদিও অন্তৰ্ভুক্ত কৰিব পাৰি। মানসিক স্বাস্থ্য হৈছে আৱেগিক আৰু মানসিক সুস্থতাক সামৰি লোৱা ব্যক্তিৰ সামগ্ৰিক সুস্থতা। ব'ইমে (১৯৫৫) কৈছে, "মানসিক স্বাস্থ্য হৈছে সামাজিক কাৰ্যকলাপৰ এনে এক অৱস্থা আৰু স্তৰ যিটো সমাজিকভাৱে গ্ৰহণযোগ্য আৰু ব্যক্তিগতভাৱে সন্তুষ্টিদায়ক।" মানসিক ৰোগত আক্ৰান্ত ব্যক্তিয়ে বন্ধু-বান্ধৱ, পৰিয়ালৰ সদস্যৰ প্ৰতি আগ্ৰহ হেৰুৱাই ভাগৰুৱা, টোপনি অনুভৱ কৰে আৰু আনকি ভোক হেৰুৱাই নেতিবাচক চিন্তাৰ কৱলত পৰে। যদিও মানসিক অৱস্থাৰ দুৰ্বলতাৰ লক্ষণসমূহ ব্যক্তিভেদে বেলেগ বেলেগ হয়, তথাপিও মানসিক স্বাস্থ্যৰ লক্ষণসমূহ আগতীয়াকৈ ধৰা পৰিলে চিকিৎসা কৰাত আৰু মানসিক ৰোগৰ লক্ষণসমূহ নিৰ্মূল কৰাত বহুখিনি সহায়ক হ'ব পাৰে।

i) কৈশোৰ কাল ঃ

গৰ্ভধাৰণৰ পৰা মৃত্যুলৈকে সকলো মানুহেই বৃদ্ধি আৰু বিকাশৰ কেইবাটাও পৰ্যায়ৰ মাজেৰে পাৰ হয় আৰু প্ৰতিটো

পর্যায়তে নিজস্ব স্বকীয় বৈশিষ্ট্য থাকে। কৈশোৰ হৈছে বাল্যকাল আৰু প্ৰাপ্তবয়স্কৰ মাজৰ এটা জীৱন পর্যায় যিটো লেটিন বাক্যাংশ "adolescere" ৰ পৰা লোৱা হৈছে, যাৰ অর্থ হৈছে "পৰিপক্কতালৈ বিকশিত হোৱা।" মনোবিজ্ঞান বিশ্বকোষ (১৯৮৮) ৰ মতে কৈশোৰ কাল প্ৰায় ১১ পৰা ১৩ বছৰৰ পৰা আৰম্ভ হয় আৰু ১৮ পৰা ২১ বছৰলৈকে থাকে।

শৈশৱ আৰু পৰিপক্কতাৰ মাজৰ পৰিৱর্তনৰ সময় হ'ল কৈশোৰ। যেতিয়া এজন ব্যক্তি শিশুৰ পৰা প্ৰাপ্তবয়স্কলৈ পৰিৱর্তিত হয়, তেতিয়া শাৰীৰিক আৰু মানসিক পৰিৱর্তনৰ সময় আহি পৰে। শিশুৰ নির্ভৰশীলতাৰ পৰা স্ব-শাসনলৈ পৰিৱর্তন গোটেই কৈশোৰ কালত ঘটে। শাৰীৰিক আৰু সামাজিক পৰিৱর্তনৰ লগত অভ্যস্ত হ'বলৈ প্ৰচণ্ড প্ৰচেষ্টাৰ প্ৰয়োজন। এই পর্যায়টোক দীর্ঘদিন ধৰি কিশোৰ-কিশোৰী আৰু তেওঁলোকৰ পিতৃ-মাতৃ উভয়ৰে বাবে বিকাশৰ এক কঠিন সময় বুলি গণ্য কৰা হয় কাৰণ শাৰীৰিক আৰু জ্ঞানমূলক বিকাশৰ ত্বৰান্বিত গতি বা অভিভাৱকৰ আৰু সমাজৰ দাবীৰ পৰিৱর্তনে কিশোৰ-কিশোৰীসকলৰ মানসিক ভাৰসাম্য বিঘ্নিত কৰে।

ii) কিশোৰ-কিশোৰী আৰু মানসিক স্বাস্থ্যৰ মাজৰ সম্পর্কঃ

কৈশোৰ কাল হৈছে মানুহৰ জীৱনৰ আটাইতকৈ গুৰুত্বপূর্ণ সময়। ই সপোন, প্ৰেম, ৰোমাঞ্চ আৰু দুঃসাহসিক অভিযানৰ প্ৰাচুর্যতাৰে ভৰপূৰ এক বিভ্ৰান্তিকৰ সময়। কিশোৰ-কিশোৰীসকলে স্বাধীনতা, স্ব-শাসন আৰু স্বাধীনতাৰ বাবে হাহাকাৰ কৰে আৰু পিতৃ-মাতৃৰ কর্তৃত্বৰ শিকলিৰ পৰা মুক্ত হ'ব বিচাৰে।

দ্ৰুত শাৰীৰিক মানসিক বৃদ্ধিয়ে তেওঁলোকক প্ৰায়ে বিচলিত কৰে আৰু তেওঁলোকে নিজাববীয়াকৈ পৃথিৱীখন অন্বেষণ কৰিবলৈ ভাল পায়। ইয়াৰ ফলত বহুতো সমস্যাৰ সৃষ্টি হয়। কিশোৰ-কিশোৰীসকলৰ দ্ৰুত মানসিক আৰু শাৰীৰিক পৰিবর্তনৰ সময়ত পৰিৱেশৰ লগত নিজকে খাপ খুৱাই ল'বলৈ যাওঁতে কিছুমান অসুবিধা আৰু প্ৰত্যাহ্বানৰ মুখামুখি হয়। কৈশোৰ কালত সমনীয়াৰ হেঁচা, নিজৰ ব্যক্তিত্ব আৱিষ্কাৰ কৰা আদি কেইবাটাও কাৰণত মানসিক চাপৰ সৃষ্টি হয়। তেওঁলোকৰ পৰিয়ালৰ মাজৰ সম্পর্কৰ মানদণ্ড আৰু সহপাঠীৰ সৈতে থকা সম্পর্কৰ দ্বাৰাও তেওঁলোক বহু পৰিমাণে প্ৰভাৱিত হয়। হিংসা(বিশেষকৈ যৌন নির্যাতন আৰু গুণ্ডাগিৰি), কঠোৰ অভিভাৱকত্ব, আৰু উল্লেখযোগ্য আর্থিক দৈন্যতা মানসিক স্বাস্থ্যৰ বাবে প্ৰতিষ্ঠিত বিপদ। আজি কালি দেখা গৈছে কিশোৰ-কিশোৰীসকল আক্ৰমণাত্মক, স্বার্থপৰ, বিশৃংখল হৈ পৰিছে আৰু ড্ৰাগছ, নিকোটিন আদিৰ প্ৰতি আসক্ত হৈছে, যিটো সমাজৰ বাবে আৰু সামগ্ৰিকভাৱে জাতিটোৰ বাবে অতি বিপদজনক। গতিকে কিশোৰ-কিশোৰীসকলৰ সমস্যাসমূহ অধ্যয়ন কৰি তেওঁলোকৰ মানসিক স্বাস্থ্যৰ মূল্যায়ন কৰাটো সাম্প্ৰতিক সময়ৰ এক আহ্বান বুলি বিবেচিত হৈছে।

১.১ সমস্যাৰ বিবৃত্তিঃ

কৈশোৰ অৱস্থাৰ ক্ৰমবর্ধমান জটিল সমাজিক পৰিৱেশৰ লগতে দৈনন্দিন জীৱনত দেখা দিয়া নিত্য-নতুন প্ৰতিযোগিতাই কিশোৰ-কিশোৰীসকলৰ মাজত অপৰিসীম মানসিক চাপৰ সৃষ্টি কৰে।

কিশোৰ-কিশোৰী সকলে এই পৰিস্থিতিৰ সৈতে কেনেদৰে সন্মুখীন হয় আৰু এই শাৰীৰিক আৰু সামাজিক পৰিৱর্তনে তেওঁলোকৰ মানসিক স্বাস্থ্যত কি প্ৰভাৱ পেলায়- এইটোৱেই বর্তমানৰ অধ্যয়নৰ মূল ক্ষেত্ৰ। বর্তমানৰ গৱেষণাৰ সমস্যাটো এনেদৰে উল্লেখ কৰা হৈছে-"অসমৰ শোণিতপুৰ জিলাৰ কৈশোৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ মানসিক স্বাস্থ্যৰ ওপৰত এক অধ্যয়ন।"

১.২ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্যঃ

i) কৈশোৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ মানসিক স্বাস্থ্যৰ অৱস্থাৰ মূল্যায়ণ কৰা।

ii) কৈশোৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ মানসিক স্বাস্থ্যৰ ওপৰত লিংগৰ প্ৰভাৱ অধ্যয়ন কৰা।

১.৩ ব্যৱহৃত শব্দ বা ধাৰণাৰ কার্যকৰী সংজ্ঞা ঃ

(ক) মানসিক স্বাস্থ্যঃ এনে এক "সুস্থতাৰ অৱস্থা য'ত প্ৰতিজন ব্যক্তিয়ে নিজৰ সম্ভাৱনাক উপলব্ধি কৰে, জীৱনৰ স্বাভাৱিক চাপৰ সৈতে সমাযোজন কৰিব পাৰে, উৎপাদনশীল আৰু ফলপ্ৰসূভাৱে কাম কৰিব পাৰে, আৰু নিজৰ সমাজলৈ অৰিহণা যোগাব পাৰে" ("বিশ্ব স্বাস্থ্য সংস্থা") বর্তমান অধ্যয়নত মানসিক স্বাস্থ্য শব্দটোৱে শোণিতপুৰ জিলাৰ বালিপৰা শিক্ষাখণ্ডৰ একাদশ আৰু দ্বাদশ শ্ৰেণীৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলে ড° সুষমা তালেছাৰা আৰু ড° আখতাৰ বানোৱে নির্মাণ কৰা মানসিক স্বাস্থ্যৰ স্কেলত লাভ

কৰা নম্বৰক বুজাইছে।

(খ) কিশোৰঃ বিশ্ব স্বাস্থ্য সংস্থাৰ নির্দেশনা অনুসৰি "কিশোৰ বয়স হৈছে শৈশৱ আৰু প্ৰাপ্তবয়স্কৰ মাজৰ বৃদ্ধি আৰু বিকাশৰ পৰিৱৰ্তনশীল পৰ্যায়।" একে সময়তে "বিশ্ব স্বাস্থ্য সংস্থা" এ "কিশোৰ-কিশোৰীক ১০ ৰ পৰা ১৯ বছৰৰ ভিতৰৰ যিকোনো ব্যক্তি বুলি সংজ্ঞায়িত কৰিছে। কিশোৰ শব্দটোৱে বৰ্তমানৰ অধ্যয়নত সামৰি লোৱা বিদ্যালয়সমূহৰ একাদশ আৰু দ্বাদশ শ্ৰেণীত অধ্যয়ন কৰা ১৬ ৰ পৰা ১৮ বছৰৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীক বুজাইছে।

(গ) সমস্যাঃ এই অধ্যয়নত সমস্যাৰ অর্থ হ'ব কিশোৰ-কিশোৰীসকলে অসুস্থতা, নিসংগতা, হতাশা, মানসিক চাপ, শোষণ, নির্যাতন, পলায়নবাদী প্ৰৱণতা, সংকোচ, হীনমান্যতা আৰু অন্যান্য কঠিন পৰিস্থিতিৰ ৰূপত অনুভৱ কৰা অসুবিধা।

(ঘ) উচ্চতৰ মাধ্যমিক বিদ্যালয়ঃ উচ্চতৰ মাধ্যমিক বিদ্যালয় বুলিলে সেইবোৰ বিদ্যালয়ক বুজোৱা হয় য'ত প্ৰথমৰ পৰা দ্বাদশলৈকে সকলো শ্ৰেণী নিজৰ প্ৰতিষ্ঠানিক কাঠামোৰ ভিতৰত আৰু এটা উমৈহতীয়া চৌহদ থাকে। বৰ্তমানৰ অধ্যয়নত উচ্চতৰ মাধ্যমিক বিদ্যালয়সমূহে শোণিতপুৰ জিলাৰ বালিপৰা শিক্ষা খণ্ডৰ ভিতৰৰ একাদশ আৰু দ্বাদশ শ্ৰেণীলৈকে থকা মাধ্যমিক বিদ্যালয় সমূহক বুজাইছে।

১.৪ গৱেষণাৰ আনুমানিক সিদ্ধান্ত ঃ

কৈশোৰ ল'ৰা আৰু ছোৱালীৰ মানসিক স্বাস্থ্যৰ মাজত কোনো বিশেষ পার্থক্য দেখা নাযায়।

১.৫ পদ্ধতি আৰু উৎস ঃ

এই গৱেষণা পত্ৰখন লিখাৰ বাবে ইয়াত বর্ণনাত্মক আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি প্ৰয়োগ কৰা হৈছে আৰু উৎসসমূহ মূলতঃ প্ৰাথমিক আৰু গৌণ উভয় উৎস ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। প্ৰশ্নাৱলীৰ সহায়ত উত্তৰদাতাসকলৰ পৰা প্ৰাথমিক তথ্য সংগ্ৰহ কৰা হয়। আৰু গৌণ তথ্যসমূহ বিভিন্ন প্ৰকাশন আৰু ৰেকর্ড, কিতাপ, আলোচনী, ইন্টাৰনেট আদিৰ পৰা লাভ কৰা হয়।

i) নমুনা ঃ অধ্যয়নৰ বাবে বালিপৰা শিক্ষাখণ্ডৰ বিভিন্ন উচ্চতৰ মাধ্যমিক বিদ্যালয়ৰ একাদশ আৰু দ্বাদশ শ্ৰেণীৰ ৩০ জন পুৰুষ আৰু ৩০ জনী মহিলা ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ নমুনা যাদৃচ্ছিক ভাৱে বাচনি কৰা হৈছিল।

ii) গৱেষণাৰ সঁজুলি ঃ এই গৱেষণাৰ বাবে ড° সুষমা তালেছাৰা আৰু ড° আখতাৰ বানোৱে নির্মাণ কৰা মানসিক স্বাস্থ্যৰ স্কেলৰ গৱেষকৰ দ্বাৰা কৰা অসমীয়া অনুবাদ সংস্কৰণ ব্যৱহাৰ কৰা হয়। ইয়াত ৫৫ টা বিবৃতি আছে আৰু ৫ টা বিকল্প আছে। সেইবোৰ হ'ল ক) সদায় খ) প্ৰায়ে গ) কেতিয়াবা ঘ) কমেইহে আৰু ঙ) কেতিয়াও নহয়। স্কেলৰ কিছুমান বক্তব্য ইতিবাচক যাৰ নম্বৰ ৪ ৰ পৰা ০ আৰু কিছুমান নেতিবাচক বক্তব্য যিবোৰৰ নম্বৰ ০ ৰ পৰা ৪ ।

iii) তথ্য বিশ্লেষণৰ কৌশলঃ অধ্যয়নত মূলতঃ বিভিন্ন পৰিসাংখ্যিক পদ্ধতি যেনে গড়, স্বতন্ত্ৰতাৰ মাত্ৰা (df) প্ৰামানিক বিচ্যুতি আৰু t-মান আদিৰ যোগেদি বিশ্লেষণ কৰা হৈছিল।

১.৬ অধ্যয়নৰ সীমা নির্ধাৰণ ঃ

i) এই অধ্যয়নত কেৱল অধ্যয়ন শোণিতপুৰ জিলাৰ বালিপৰা শিক্ষাখণ্ডৰ মাজত সীমাবদ্ধ।

ii) এই অধ্যয়নত কেৱল অধ্যয়ন এলেকাৰ ১৬-১৮ বছৰ বয়সৰ উচ্চতৰ মাধ্যমিকৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ মাজত সীমাবদ্ধ।

iii) এই অধ্যয়নত মাত্ৰ ৬০ জন কিশোৰ-কিশোৰী ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ মাজত সীমিত।

১.৭ তথ্যৰ ফলাফল আৰু পৰিসংখ্যাগত ব্যাখ্যা ঃ

বৰ্তমানৰ অধ্যয়ন ড° সুষমা তালেছাৰা আৰু ড° আখতাৰ বানোৱে নির্মাণ কৰা মানসিক স্বাস্থ্যৰ স্কেলৰ গৱেষকৰ দ্বাৰা কৰা অসমীয়া অনুবাদ সংস্কৰণ ব্যৱহাৰ কৰি কিশোৰ-কিশোৰীসকলৰ মানসিক স্বাস্থ্যৰ অৱস্থাৰ মূল্যায়ন কৰা হৈছে। শোণিতপুৰ জিলাৰ বালিপৰা শিক্ষাখণ্ডৰ মাধ্যমিক বিদ্যালয়সমূহৰ পৰা ছাত্ৰ-ছাত্ৰী নমুনাৰ মানসিক স্বাস্থ্যৰ অৱস্থা পৰীক্ষা কৰিবলৈ ব্যৱহাৰ কৰা মানসিক স্বাস্থ্য স্কেলৰ তথ্যসমূহ নির্বাচন কৰি মাত্ৰ অবিন্যস্ত নম্বৰ (Raw score) পৰিসৰ হিচাপে উপস্থাপন কৰা হৈছে। কিশোৰ-কিশোৰীসকলৰ মানসিক স্বাস্থ্যৰ অৱস্থা জানিবলৈ স্কুল, ঘৰ আৰু সমনীয়া গোট সম্পর্কীয় কাৰণৰ ভিত্তিত, (মানক সঁজুলিত সংজ্ঞায়িত কৰা অনুসৰি) এটা সাত পইন্ট গুণগত মাপকাঠী ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। এইবোৰ তলত দিয়া টেবুলত উপস্থাপন কৰা হৈছে ঃ

টেবুল-১ অসমৰ শোণিতপুৰ জিলাৰ বালিপৰা শিক্ষাখণ্ডৰ মাধ্যমিক বিদ্যালয়ত অধ্যয়ন কৰা কিশোৰ-কিশোৰী সকলৰ মানসিক স্বাস্থ্যৰ অৱস্থা-

ক্রমিক নম্বৰ	অবিন্যস্ত মানৰ মাত্রাৰ পৰিসৰ স্কুল, ঘৰ আৰু সমনীয়াৰ সম্পৰ্ক	সম্পূৰ্ণ স্কেলৰ অবিন্যস্ত প্রসাৰ	Z-মানৰ পৰিসৰ	ছাত্র ছাত্রীৰ সংখ্যা	গ্রেড	মানসিক স্বাস্থ্যৰ স্তৰ
১	৫৭ আৰু তাৰ ওপৰৰ	১৭০ আৰু তাৰ ওপৰৰ	+২.০১ আৰু তাৰ ওপৰৰ	১	A	অত্যন্ত ভাল
২	৫২ৰ পৰা ৫৬ লৈ	১৫৫ ৰ পৰা ১৬৯ লৈকে	+১.২৬ ৰ পৰা +২.০০ লৈ	৫	B	বহুত ভাল
৩	৪৭ৰ পৰা ৪১ লৈ	১৪০ ৰ পৰা ১৫৪ লৈকে	+০.৫১ ৰ পৰা +১.২৫ লৈ	১৪	C	ভাল
৪	৪০ ৰ পৰা ৪৬ লৈ	১২০ ৰ পৰা ১৩৯ লৈকে	-০.৫০ ৰ পৰা +০.৫০ লৈ	২৫	D	মধ্যমীয়া
৫	৩৫ৰ পৰা ৩৯ লৈ	১০৫ ৰ পৰা ১১৯ লৈকে	-১.২৫ৰ পৰা -০.৫১ লৈ	৮	E	বেয়া
৬	৩০ৰ পৰা ৩৪ ল	৯১ ৰ পৰা ১০৪ লৈকে	-২.০০ ৰ পৰা +১.২৬ লৈ	৫	F	অতি বেয়া
৭	২৯ আৰু তাৰ তলৰ	৯০ আৰু তাৰ তলৰ	-২.০১ আৰু তাৰ তলত	২	G	অত্যন্ত বেয়া

টেবুল-১ Z-মানৰ পৰা স্পষ্ট যে নমুনা সংগ্রহ কৰা ৬০ জন ছাত্র-ছাত্রীৰ ভিতৰত অধিকাংশ ছাত্র-ছাত্রী (২৫) মধ্যমীয়া স্বাস্থ্যৰ আছিল, আৰু পৰৱর্তী সর্বাধিক সংখ্যক ছাত্র-ছাত্রী (১৪) Z-মান (+০.৫১ ৰ পৰা +১.২৫) ৰ ভিতৰত পৰে, যিয়ে ভাল মানসিক স্বাস্থ্যৰ ইংগিত দিয়ে। মাত্র ১ জন ছাত্রই (মুঠ ৬০ জনৰ ভিতৰত) উৎকৃষ্ট মানসিক স্বাস্থ্যৰ সর্বোচ্চ Z-মানৰ পৰিসৰত আছিল। নমুনা সংগ্রহ কৰা ছাত্র-ছাত্রীসকলৰ অধিকাংশই ভাল, মধ্যমীয়া আৰু দুর্বল মানসিক স্বাস্থ্যৰ শ্রেণীত পৰে।

তলৰ চিত্র-১ শোণিতপুৰ জিলাৰ বালিপৰা শিক্ষাখণ্ডৰ কিশোৰ-কিশোৰীসকলৰ মানসিক স্বাস্থ্যৰ অৱস্থা অধ্যয়নৰ বাবে ব্যৱহাৰ কৰা মানসিক স্বাস্থ্য স্কেলৰ তথ্য অনুসৰি দেখুওৱা হৈছে।

টেবুল- ২ চলক, নমুনাৰ আকাৰ, গড়, প্ৰামাণিক বিচ্যুতি (sd) স্বতন্ত্ৰতাৰ মাত্ৰা (df) পৰিসংখ্যাগত পৰীক্ষা আৰু মূল্য, আৰু তাৎপৰ্য স্তৰৰ সৈতে-

চলকসমূহ লিংগ	এন (N)	গড়	প্ৰামাণিক বিচ্যুতি(sd)	স্বতন্ত্ৰতাৰ মাত্ৰা (df)	পৰিসংখ্যা পৰীক্ষা আৰু মান	তাৎপৰ্যৰ স্তৰ (Two tail Test)
ল'ৰা	৩০	৫১.৫৭	১৯.৯৬	৫৮	t=০.৩৪	গুৰুত্বপূৰ্ণ নহয় ০.০৫ স্তৰত
ছোৱালী	৩০	১৪৯.৩৭	২৩.০৭			

টেবুল- ২ ত প্ৰকাশ পাইছে যে কিশোৰ ল'ৰাৰ গড় মান (১৫১.৫৭) ছোৱালীৰ গড় মান (১৪৯.৩৭)**ত কৈ বেছি যেন লাগে কিন্তু t** মান ০.৩৪য়ে ইংগিত দিয়ে যে ল'ৰা আৰু ছোৱালী কিশোৰৰ মাজত গড় পাৰ্থক্য ০.০৫ স্তৰত গুৰুত্বপূৰ্ণ নহয়। সেয়েহে গৱেষণাৰ আনুমানিক সিদ্ধান্ত- *"কিশোৰ ল'ৰা-ছোৱালীৰ মানসিক স্বাস্থ্যৰ মাজত কোনো বিশেষ পাৰ্থক্য নাই"*- গ্ৰহণ কৰা হয়। অৰ্থাৎ অধ্যয়ন কৰা নমুনাটোৰ এই তথ্যই এই সিদ্ধান্তত উপনীত হ'ল যে কিশোৰ ল'ৰা-ছোৱালীৰ মানসিক স্বাস্থ্যৰ অৱস্থাৰ কোনো বিশেষ পাৰ্থক্য নাই।

তলৰ চিত্ৰত-২ ত কিশোৰ ল'ৰা-ছোৱালীৰ মানসিক স্বাস্থ্যৰ অৱস্থাৰ গড় পাৰ্থক্য দেখুওৱা হৈছে।

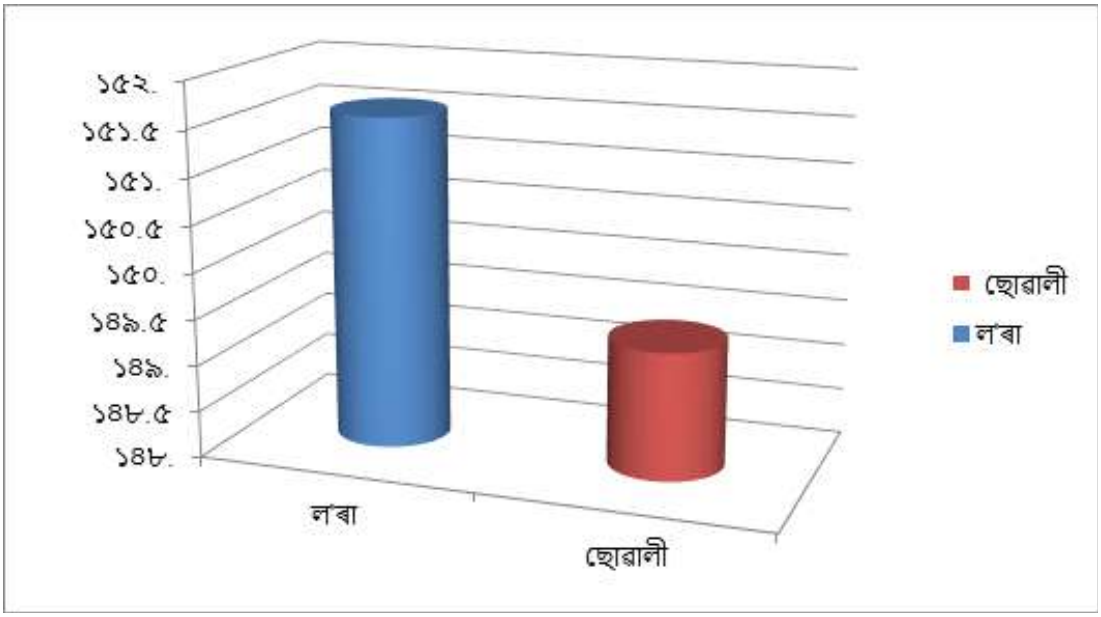

১.৮ ফলাফলসমূহ ঃ

গৱেষণাৰ আনুমানিক সিদ্ধান্তৰ মূল্যায়নৰ বাবে গড় আৰু প্ৰামাণিক বিচ্যুতিৰ দৰে বৰ্ণনাত্মক পৰিসংখ্যাৰ লগতে t-টেষ্টৰ দৰে আনুমানিক পৰিসংখ্যা ব্যৱহাৰ কৰা হৈছিল। মূল ফলাফলসমূহ তলত দিয়া ধৰণৰ।

i) অধ্যয়নৰ পৰা স্পষ্ট যে বালিপৰা শিক্ষা খণ্ডত কিশোৰ-কিশোৰী ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ মানসিক স্বাস্থ্যৰ অৱস্থা মধ্যমীয়া।

ii) পৰিসংখ্যা বিশ্লেষণ অনুসৰি কিশোৰ-কিশোৰী ল'ৰা-ছোৱালীৰ মাজত মানসিক স্বাস্থ্যৰ গড় পাৰ্থক্য যথেষ্ট। ছোৱালীতকৈ ল'ৰা মানসিকভাৱে সুস্থ।

iii) বৰ্তমানৰ অধ্যয়নত কেইবাটাও কাৰণ উন্মোচিত হৈছে যিয়ে তেওঁলোকৰ মানসিক স্বাস্থ্যৰ ওপৰত প্ৰভাৱ পেলাই যেনে বিদ্যালয়ৰ পৰিৱেশ, শিক্ষকৰ আচৰণ, বিদ্যালয় প্ৰশাসনৰ অতি কঠোৰতা, প্ৰতিযোগিতাৰ হেঁচা, অতিৰিক্ত পাঠ্যক্ৰমৰ বোজা, পৰীক্ষাৰ মানসিক চাপ ইত্যাদি। একেদৰে, পিতৃ-মাতৃ বা অভিভাৱকৰ অতি সুৰক্ষামূলক প্ৰকৃতি, অত্যাধিক স্বাধীনতা, নিয়ন্ত্ৰণ, শাস্তি, অন্যায় বা আংশিক আচৰণৰ ওপৰত তেওঁলোকৰ মানসিক স্বাস্থ্য প্ৰভাৱিত হয়।

১.৯ পৰামৰ্শঃ

কিশোৰ-কিশোৰীসকল মানসিক স্বাস্থ্যজনিত সমস্যাৰ সন্মুখীন হ'বলগীয়া হয় কাৰণ-নিৰ্যাতন, দৰিদ্ৰতা বা হিংসাকে ধৰি আৱেগিক, শাৰীৰিক আৰু সামাজিক পৰিৱৰ্তন। মানসিক স্বাস্থ্যৰ সমস্যাসমূহ সমাধানৰ বাবে তলত দিয়া ধৰণে কিছুমান পৰামৰ্শ আগবঢ়োৱা হৈছে-

i) কিশোৰ-কিশোৰীসকলৰ সামাজিক আৰু সুস্থ আৱেগিক বিকাশৰ বাবে বিদ্যালয়সমূহত সঠিক নিৰ্দেশনাৰ লগতে সময়ে সময়ে মানসিক স্বাস্থ্য সেৱাৰ সুবিধা আগবঢ়োৱাটো প্ৰয়োজনীয়।

ii) তেওঁলোকক নিৰুৎসাহিত কৰাতকৈ পিতৃ-মাতৃআৰু আত্মীয়সকলে তেওঁলোকৰ প্ৰচেষ্টাক সমৰ্থন কৰা উচিত।

iii) কৈশোৰ কালছোৱাক সৃষ্টিশীল আৰু ফলপ্ৰসুভাৱে আগবঢ়াই নিবলৈ অভিভাৱকৰ মৰম আৰু যত্নৰ সৈতে সঠিক নিৰ্দেশনা থাকিব লাগে।

১.১০ সামৰণি ঃ

এখন সমাজত কিশোৰ-কিশোৰী আৰু যুৱ জনসংখ্যাই এটা গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা পালন কৰে। এখন দেশৰ জনসংখ্যা ভৱিষ্যতৰ জনগাঁথনি, সামাজিক, অৰ্থনৈতিক আৰু ৰাজনৈতিক বিকাশ কিশোৰ-কিশোৰীৰ ওপৰত নিৰ্ভৰশীল। তেওঁলোকৰ মানসিক স্বাস্থ্যৰ যত্ন লোৱাটো আৰু প্ৰয়োজনীয়তাসমূহ পূৰণ কৰাটো কেৱল দেশৰ আৰ্থ-সামাজিক উন্নয়নত অৱিহণা যোগোৱাই নহয়, অন্যান্য সামাজিক প্ৰত্যাহ্বানসমূহ দূৰ কৰি জনসাধাৰণৰ জীৱন ধাৰণৰ মান উন্নত কৰাতো অৱিহণা যোগায়। কিশোৰ-কিশোৰীসকলে যাতে নিজৰ সামাজিক আচৰণৰ সামঞ্জস্য ৰাখি বিভিন্ন পৰিস্থিতিৰ সৈতে সমাযোজন কৰাৰ ক্ষমতা লাভ কৰে, উদ্বিগ্নতা, দুখ, ঈৰ্ষা, অপৰাধবোধ, আৰু আন আন আৱেগ যেনে ভয়, খং আদি নিজৰ নিয়ন্ত্ৰণত ৰাখি জীৱনৰ সুষমা উপভোগ কৰিব পাৰে তেনে এক সুস্থ সবল সামাজিক বাতাবৰণ সৃষ্টি কৰাটো সকলোৰে প্ৰধান দায়িত্ব আৰু কৰ্তব্য হোৱা উচিত। বিষয়টোৰ গভীৰতালৈ লক্ষ্য কৰি, আন আন জিলা, চহৰ বা অঞ্চলৰ বিভিন্ন বয়সৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ মাজতো সাক্ষাৎকাৰ কৌশল, কেছ-ষ্টাডি আদি নানান পদ্ধতিৰ প্ৰয়োগেৰে কিশোৰ-কিশোৰী সকলৰ মানসিক স্বাস্থ্যৰ ওপৰত অধিক অধ্যয়নৰ থল দেখা যায়। ❑

তথ্যসূত্র ঃ

(2022, February 28). *What Is Mental Health?* MentalHealth.gov. Retrieved August 25, 2022, from https://www.mentalhealth.gov/basics/what-is-mental-health

Bor, W., Dean, A. J., Najman, J., & Hayatbakhsh, R. (2014). Are child and adolescent mental health problems increasing in the 21st century? A systematic review. *Australian & New Zealand Journal of Psychiatry*. https://doi.org/10.1177/0004867414533834

WHO (n.d.). Mental health: Strengthening our response. World Health Organization. https:// www.who.int/news-room/fact-sheets/detail/mental-health-strengthening-our-response

The World health report: 2001: Mental health: New understanding, new hope. World Health Organization. https://apps.who.int/iris/handle/10665/42390

National Institute of Mental Health & Neuro Sciences, Bengaluru, (n.d.). National mental health survey of India. http://indianmhs.nimhans.ac.in/

Blakemore, S.-J. (2019). Adolescence and mental health. The Lancet, 393(10185), 2030–2031. https://doi.org/10.1016/S0140-6736(19)31013-X

Roach, A. (2018). Supportive Peer Relationships and Mental Health in Adolescence: An Integrative Review. Issues in Mental Health Nursing, 39(9), 723–737. https://doi.org/ 10.1080/01612840.2018.1496498

Waghmare, R. D. (2019). Effect of Mental Health on Adolescence. The International Journal of Indian Psychology, Volume 7(Issue 3), 473–482. https://doi.org/10.25215/0703.051

Boehm, B. W. (1955). The role of psychiatric social work in mental health (2nd ed.). Norton, New York.

(n.d.). Positive Mental Health. Encyclopedia.com. https://www.encyclopedia.com/social-sciences/encyclopedias-almanacs-transcripts-and-maps/positive-mental-health

(n.d.). Mental Health: Definition, Components and Indicators. Psychology Discussion. https:// www.psychologydiscussion.net/health/mental-health-definition-components-and- indicators/2068

Best, J. W. (1981). Research in Education. 4th edition, New Delhi, Prentice Hall of India Pvt. Ltd.

Crow and Crow. (2006). Educational Psychology.2nd edition, New Delhi, Surjeet Publication

Kothari, C. (2005). Research methodology: Methods & techniques. New Delhi, India: New Age Publishers.

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

সৌম্যদ্বীপ দত্তৰ 'অৰণ্যৰ ছাঁ-পোহৰ' গ্ৰন্থ ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন

জ্যোতি বড়া

গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
অসম বিশ্ববিদ্যালয়, ডিফু চৌহদ
৮৬৩৮৯৭০৩০৭
jyotiborah271@gmail.com

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

মানুহ আৰু প্ৰকৃতিৰ সম্পৰ্ক অতি নিবিড়। এই সম্পৰ্কক সাহিত্যৰ মাজেৰে তুলি ধৰাৰ স্বাৰ্থতে অসমীয়া সাহিত্যত প্ৰকৃতি সাহিত্য নামেৰে এটা নতুন ধাৰাৰ সৃষ্টি হৈছে। শেহতীয়াকৈ প্ৰকৃতিৰ ওপৰত চলা নানান নিৰ্যাতনৰ ফলত প্ৰকৃতিৰ যি ক্ষতি হ'বলৈ আৰম্ভ কৰিছে সেই ক্ষতি নিবাৰণৰ বাবে এচাম লোকে সাহিত্যক গুৰুত্বপূৰ্ণ মাধ্যম হিচাপে বিবেচনা কৰিছে। ফলত প্ৰকৃতি সাহিত্যত মানুহ আৰু প্ৰকৃতিৰ সম্পৰ্ক বৰ্ণনৰ লগতে প্ৰকৃতি সংৰক্ষণৰ ধাৰণাও যোগ দিয়া দেখা যায়। অসমীয়া সাহিত্যত এই ক্ষেত্ৰত নাম ল'ব পৰা মুষ্টিমেয় ব্যক্তিসকলৰ ভিতৰত সৌম্যদ্বীপ দত্ত আগৰণুৱা। আধুনিকতাই মানৱ জাতিলৈ কঢ়িয়াই অনা পৰিৱৰ্তনৰ ফলত মানুহবোৰ আত্মকেন্দ্ৰিক আৰু স্বাৰ্থলোভী হৈ প্ৰকৃতিৰ ওপৰত অত্যাচাৰ চলোৱাৰ যি প্ৰৱণতা বৃদ্ধি পাইছে সেই প্ৰৱণতা ৰোধ কৰাৰ ক্ষেত্ৰত তেওঁ বহুতো কৰ্মপন্থা হাতত লৈছে। প্ৰকৃতি সংৰক্ষণ আন্দোলনৰ প্ৰসাৰতাৰ বাবে তেওঁ লোৱা কৰ্মপন্থাবোৰৰ ভিতৰত বৌদ্ধিকভাৱে কৰা এটা প্ৰচেষ্টা হৈছে প্ৰকৃতি বিষয়ক সাহিত্য ৰচনা। যিবোৰ সাহিত্যৰ মাজেৰে তেওঁ প্ৰকৃতিপ্ৰেম, প্ৰকৃতি সংৰক্ষণ, প্ৰকৃতিৰ ওপৰত চলোৱা অত্যাচাৰে আনিব পৰা ভয়ংকৰ পৰিস্থিতিৰ ধাৰণাসমূহ জনসমাজৰ আগত তুলি ধৰিবলৈ যত্ন কৰিছে। এই উদ্দেশ্যেৰে ৰচনা কৰা সাহিত্যৰ ভিতৰত তেওঁৰ 'অৰণ্যৰ ছাঁ-পোহৰ' গ্ৰন্থখন অন্যতম। উক্ত গৱেষণা পত্ৰখনত এই গ্ৰন্থখনৰ বিষয়ে সামগ্ৰিক আলোচনা আগবঢ়োৱাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

বীজ শব্দ - সাহিত্য, প্ৰকৃতি, সংৰক্ষণ, সৌম্যদ্বীপ দত্ত ইত্যাদি।

০.০ অৱতৰণিকা ঃ-

অসমীয়া সাহিত্যৰ ধাৰাসমূহৰ ভিতৰত শেহতীয়াকৈ চৰ্চালৈ অহা এটা বিষয় হৈছে প্ৰকৃতি সাহিত্য। যিবোৰ প্ৰকৃতিবিষয়ক সাহিত্য ভ্ৰমণৰ অভিজ্ঞতাৰ ভিত্তিত ৰচিত সেইবোৰক আমি প্ৰকৃতিবিষয়ক ভ্ৰমণ সাহিত্য বুলি ক'ব পাৰো। প্ৰকৃতিবিষয়ক ভ্ৰমণ সাহিত্য বাস্তৱ অভিজ্ঞতাৰ ভিত্তিত ৰচিত হোৱাৰ বাবে পঢ়ুৱৈৰ মাজত ই দ্ৰুতগতিত জনপ্ৰিয়তা অৰ্জন কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। আৰম্ভণিৰে পৰা সাম্প্ৰতিক সময়লৈকে সাহিত্যৰ এই ধাৰাটোক সমৃদ্ধ কৰাত বহু সাহিত্যিকে অবিহণা যোগোৱা পৰিলক্ষিত হয়। সেই সাহিত্যিকসকলৰ ভিতৰত এগৰাকী উল্লেখযোগ্য ব্যক্তি হৈছে সৌম্যদ্বীপ দত্ত। তেওঁ অসমৰ বন, বন্যপ্ৰাণী আৰু পৰিৱেশ সংৰক্ষণৰ লগত ওতপ্ৰোতভাৱে জড়িত হৈ আছে। লগতে সৌম্যদ্বীপ দত্ত হৈছে উত্তৰ-পূৱ-ভাৰতৰ পৰিৱেশ সংৰক্ষণকাৰী গোষ্ঠী 'নেচ্চাৰ্চ বেকন'ৰ সঞ্চালক তথা বৌদ্ধ সংস্কৃতিৰ এজন গৱেষক। ১৯৮৮ চনত

অসমৰ ইতিহাসত প্ৰথমবাৰৰ বাবে সমগ্ৰ অসম ব্যাপি হোৱা পৰিৱেশ সচেতনতা অভিযানৰ নেতৃত্ব সৌম্যদ্বীপ দত্তই বহন কৰিছিল।

সৌম্যদ্বীপ দত্তই সাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰখনতো নিজৰ অৰিহণা আগবঢ়াইছে। বিশেষকৈ প্ৰকৃতিবিষয়ক ভ্ৰমণ সাহিত্য আৰু বৌদ্ধ সংস্কৃতি সম্পৰ্কীয় গ্ৰন্থ প্ৰণয়ণ কৰি সাহিত্যিক হিচাপে তেওঁ নিজকে প্ৰতিষ্ঠা কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। প্ৰকৃতিবিষয়ক ভ্ৰমণ তথা বৌদ্ধ সংস্কৃতিৰ গৱেষণাৰ আধাৰত বৰ্তমানলৈকে দত্তৰ ইংৰাজী আৰু অসমীয়া ভাষাত ৰচিত প্ৰায় ৪১ খন গ্ৰন্থ প্ৰকাশ হৈছে। এই গ্ৰন্থসমূহত আমি উত্তৰ পূৱ ভাৰতৰ উপৰিও পৃথিৱীৰ বিভিন্ন প্ৰান্তৰ অৰণ্য ভ্ৰমণ কৰি পোৱা প্ৰকৃতি সম্পৰ্কীয় ঘটনা-পৰিঘটনা তথা অভিজ্ঞতাৰ বৰ্ণন আৰু বৌদ্ধ সংস্কৃতি সম্পৰ্কে সবিশেষ তথ্য সন্নিৱিষ্ট কৰা দেখিবলৈ পাইছো। উক্ত আলোচনাত সৌম্যদ্বীপ দত্তৰ প্ৰকৃতিবিষয়ক ভ্ৰমণ সাহিত্যৰ অন্তৰ্গত 'অৰণ্যৰ ছাঁ-পোহৰ' গ্ৰন্থখনৰ সামগ্ৰিক বিশ্লেষণ আগবঢ়োৱা হৈছে।

০.২ গৱেষণাৰ পৰিসৰ -

সৌম্যদ্বীপ দত্তৰ '*অৰণ্যৰ ছাঁ-পোহৰ*' গ্ৰন্থ ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন শীৰ্ষক বিষয়টিৰ গৱেষণাৰ পৰিসৰত গ্ৰন্থখনৰ প্ৰেক্ষাপট আৰু বিষয়বস্তু, গ্ৰন্থখনত প্ৰতিফলিত অৰণ্যৰ চিত্ৰ, প্ৰকৃতিপ্ৰেম, পৰিৱেশ আন্দোলনৰ ছবি, ভিন্ন প্ৰাকৃতিক পৰিৱেশৰ মাজত তুলনা আৰু শিল্প-সৌন্দৰ্য ইত্যাদি দিশৰ আলোচনাক সামৰি লোৱা হৈছে।

০.৩ গৱেষণাৰ উদ্দেশ্য -

- সৌম্যদ্বীপ দত্তৰ গ্ৰন্থখনৰ প্ৰেক্ষাপট আৰু বিষয়বস্তু কেনেধৰণৰ বিচাৰ কৰা।
- গ্ৰন্থখনত অৰণ্যৰ চিত্ৰ কিদৰে প্ৰকাশ পাইছে তাক দাঙি ধৰা।
- গ্ৰন্থখনত প্ৰকৃতি প্ৰেমৰ ছবি কেনেদৰে প্ৰকাশ পাইছে তাক দাঙি ধৰা।
- গ্ৰন্থখনত কিদৰে পৰিৱেশ আন্দোলনৰ ছবি দাঙি ধৰা হৈছে সেই দিশৰ বিচাৰ কৰা।
- গ্ৰন্থখনৰ শিল্প-সৌন্দৰ্য্যৰ আলোচনা কৰা।

০.৪ গৱেষণাৰ গুৰুত্ব -

প্ৰকৃতিপ্ৰেমী লোকসকলে প্ৰকৃতি সংৰক্ষণ আন্দোলনৰ প্ৰসাৰৰ বাবে লোৱা ভিন্ন কৰ্মপন্থাসমূহৰ ভিতৰত সাহিত্য ৰচনাও উল্লেখযোগ্য। অসমীয়া ভাষাত এনে সাহিত্য ৰচনা কৰা লোকৰ সংখ্যা কম যদিও যি কম সংখ্যক লোকে এনে সাহিত্য ৰচনা কৰিছে সেইসমূহৰো চৰ্চা সাহিত্যৰ আন ধাৰাবোৰৰ তুলনাত নগণ্য হোৱা দেখা যায়। গতিকে জনসাধাৰণৰ মাজত পৰিৱেশ সংৰক্ষণৰ বাবে কৰা সাহিত্যিক আন্দোলনে শিপাব পৰা নাই। নিৰ্বাচিত গৱেষণা বিষয়টিৰ চৰ্চাই প্ৰকৃতি আন্দোলনক ব্যাপকতৰ ৰূপ দিয়াৰ ক্ষেত্ৰত অৰিহণা যোগাব। গতিকে বিষয়টোৰ গৱেষণাৰ গুৰুত্ব আছে।

০.৫ গৱেষণা পদ্ধতি -

গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰোতে মূলতঃ বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি আৰু প্ৰয়োজনসাপেক্ষে বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

০.৬ গৱেষণা প্ৰশ্ন -

- গ্ৰন্থখনৰ প্ৰেক্ষাপট আৰু বিষয়বস্তু কেনেধৰণৰ?
- গ্ৰন্থখনত অৰণ্যৰ চিত্ৰ কিদৰে প্ৰকাশ পাইছে?
- গ্ৰন্থখনত প্ৰকৃতি প্ৰেমৰ ছবি কিদৰে ফুটি উঠিছে?
- গ্ৰন্থখনত পৰিৱেশ আন্দোলনৰ ছবি কিদৰে প্ৰতিফলিত হৈছে?
- গ্ৰন্থখনত শিল্প-সৌন্দৰ্য্য কিদৰে প্ৰকাশ পাইছে?

১.০ প্ৰেক্ষাপট আৰু বিষয়বস্তু -

২০০৩ চনৰ নৱেম্বৰ মাহত প্ৰকাশিত 'অৰণ্যৰ ছাঁ-পোহৰ' গ্ৰন্থখন পূৰ্বে বিভিন্ন বাতৰি কাকতত প্ৰকাশিত প্ৰবন্ধৰ একত্ৰ সংকলন। গ্ৰন্থখনত সন্নিৱিষ্ট প্ৰবন্ধসমূহ অসমৰ লগতে দেশ-বিদেশৰ অৰণ্য ভ্ৰমণৰ প্ৰেক্ষাপটত ৰচনা কৰিছে। গ্ৰন্থখনৰ মূল বিষয়বস্তু হৈছে প্ৰকৃতি। ১৮৩ পৃষ্ঠা যোৱা গ্ৰন্থখনত সন্নিৱিষ্ট মুঠ ১২ টা প্ৰবন্ধৰ প্ৰতিটোতে লেখকৰ ভ্ৰমণৰ দ্বাৰা লব্ধ অভিজ্ঞতা, অনুভূতি আৰু তথ্য বিস্তৃতৰূপত বৰ্ণনা কৰা পৰিলক্ষিত হয়। ভ্ৰমণ সাহিত্য বুলি ক'লে সাধাৰণতে এখন ঠাইৰ ভ্ৰমণৰ আধাৰত লিখা লেখনিক বুজা যায় আৰু সেই লেখাত নিৰ্দিষ্ট ঠাইখণ্ডৰ সামগ্ৰিক দিশৰ বৰ্ণনা উপলব্ধ হয়। কিন্তু সৌম্যদ্বীপ দত্তৰ 'অৰণ্যৰ ছাঁ-পোহৰ' গ্ৰন্থখনত বিশেষভাৱে অগ্ৰাধিকাৰ দিয়া হৈছে প্ৰাকৃতিক দিশটোকহে। সেয়েহে গ্ৰন্থখনক প্ৰকৃতিবিষয়ক ভ্ৰমণ সাহিত্য বুলি ক'ব পাৰি। গ্ৰন্থখনত সামাজিক, ৰাজনৈতিক, অৰ্থনৈতিক, সাংস্কৃতিক ইত্যাদি দিশৰ এৰাব নোৱাৰা প্ৰসংগৰ কেৱল উল্লেখহে কৰা দেখা যায়।

২.০ 'অৰণ্যৰ ছাঁ-পোহৰ' গ্ৰন্থৰ সামগ্ৰিক বিশ্লেষণ -

২.১ অৰণ্যৰ চিত্ৰ -

এখন অৰণ্যৰ সৃষ্টি হয় বিভিন্ন উপাদানৰ সমাহাৰত। সেই উপাদানসমূহ হৈছে বিভিন্ন প্ৰজাতিৰ উদ্ভিদ, পশু-পক্ষী,

পোক-পতংগ, জলাশয়, জল-প্রপাত, হ্রদ, নদ-নদী,বায়ু-প্রবাহ ইত্যাদি। এই সকলোবোৰ উপাদানৰ বিষয়ে আমি 'অৰণ্যৰ ছাঁ-পোহৰ' গ্ৰন্থখনত দেখা পাওঁ। লেখকে বাস্তৱসন্মত আৰু তথ্য সমৃদ্ধ কৰি গ্ৰন্থখনৰ প্ৰতিটো প্ৰবন্ধতে অৰণ্যৰ এই উপাদানসমূহক উপস্থাপন কৰিছে। ইয়াৰ ভিতৰত কিছু উদ্ভিদ, জীৱ-জন্তু পৃথিৱীৰ পৰা বিলুপ্ত হোৱাৰ উপক্ৰম হৈছে। লেখকে এই বিলুপ্ত হ'ব ধৰা প্ৰজাতিবোৰক গ্ৰন্থখনৰ জৰিয়তে সংৰক্ষণৰো পদক্ষেপ গ্ৰহণ কৰিছে বুলিব পাৰি।

'অৰণ্যৰ ছাঁ-পোহৰ' গ্ৰন্থখনত লেখকে অৰণ্যৰ বৰ্ণনাৰ যোগেদি কেতিয়াও কোনো কালে অৰণ্য দেখি নোপোৱা এগৰাকী পাঠকৰ মনত এখন অৰণ্যৰ চিত্ৰ আঁকি দিবলৈ সক্ষম হৈছে। অৰণ্য এখনৰ ভিতৰচ'ৰাৰ সবিশেষ কেৱল এজন অৰণ্যপ্ৰেমী আৰু অৰণ্যৰ সৈতে সংপৃক্ত হৈ থকা ব্যক্তিয়েহে সজীৱ অংকণ কৰা সম্ভৱ। গ্ৰন্থখনত অৰণ্যৰ প্ৰতিটো উপাদানৰ বিষয়ে দিয়া বৰ্ণনাই দত্তৰ প্ৰকৃতিৰ সৈতে থকা নিবিড় সম্পৰ্কৰ বিষয়ে অনুধাৱন কৰাত সহায় কৰিছে। তাৰোপৰি সাহিত্যৰ ভাষাৰে তেওঁ অৰণ্যৰ যি জীৱন্ত বৰ্ণনা দাঙি ধৰিছে পাঠকক আকৰ্ষণ কৰাত সেই বৰ্ণনাই সবল ভূমিকা গ্ৰহণ কৰিছে।

চিনানডুৱা উপত্যকাৰ অৰণ্যৰ বৰ্ণনাত লেখকে লিখিছে, "*সেউজীয়া পাহাৰেৰে আৱৰা এটি মনোৰম পাহাৰৰ এটা কাষত এই ৰিচার্চ চেণ্টাৰটো। ওখ-চাপৰ টৌৰ দৰে ইয়াৰ ভূমি ভাগৰ ওপৰত বাৰ্জ, মেপেল, পাইন ইত্যাদি। গছ-গছনিৰে আবৃত অৰণ্য, ইয়াৰ কোনো কোনো স্থানত বিস্তীৰ্ণ ঘন জংঘলেৰে চিত্ৰৰ দৰে সজোৱা যেন লাগে। সৰু সৰু একাৰেঁকা ৰাস্তাবিলাক পাহাৰৰ এঢলীয়া ৰঙা ৰঙৰ সুন্দৰ সুন্দৰ ঘৰবিলাকৰ গেটলৈকে গৈছে।*" (দত্ত, *অৰণ্যৰ ছাঁ-পোহৰ*, পৃষ্ঠা-১৭)। এই বৰ্ণনাখিনিৰ জৰিয়তে লেখকৰ চকুত অৰণ্যৰ সৌন্দৰ্য কিদৰে প্ৰকাশ পাইছে তাৰ ছবি ভাঁহি উঠিছে। অৰণ্যখনৰ গছ-গছনি, ৰাস্তা-ঘাট সম্পৰ্কে কৰা বাস্তৱিক বৰ্ণনাই পাঠকক অৰণ্যৰ সৌন্দৰ্যৰ আভাস দিব পাৰিছে।

অৰণ্যত গছ-গছনিৰ সেউজীয়া পাতৰ দৰে শুকান সৰি পৰি থকা পাতখিলায়ো কি মনোৰম পৰিৱেশ সৃষ্টি কৰিব পাৰে সেয়া কেৱল অৰণ্যপ্ৰেমী বা প্ৰকৃতিপ্ৰেমী এজন ব্যক্তিয়েহে দৃষ্টি নিক্ষেপ কৰাব পাৰে। লেখকে 'আমেৰিকাৰ চিনানডুৱা উপত্যকাৰ কিছু স্মৃতি' শীৰ্ষক প্ৰবন্ধটোত লিখিছে এনেদৰে - "*অতিপাত ঠাণ্ডা আৰু পাহাৰৰ ওপৰত বতাহ বলিছিল। শুকান পাত আৰু বতাহৰ শব্দত এক মোহময়ী পৰিৱেশ সৃষ্টি হৈছিল। স্থানে স্থানে জমা হোৱা মেঘ অৰণ্যৰ ভিতৰত প্ৰৱেশ কৰি অৰণ্যক কিছু ৰহস্যময়ী কৰি তুলিছিল। বনৰীয়া চৰাই আৰু স্কাঙ্কৰ বাহিৰে অন্য কোনো প্ৰাণীৰ প্ৰতি আমাৰ দৃষ্টি আকৰ্ষণ হোৱা নাই। কিন্তু নতুন পৰিৱেশৰ আনন্দই আমাক মোহিত কৰি পেলাইছিল।*" (উল্লিখিত, পৃষ্ঠা-২০)।

গ্ৰন্থখনত লেখকে অৰণ্যৰ উপাদানসমূহৰ বিষয়ে দিয়া বৰ্ণনাত তেওঁ পাঠকৰ বিশ্বাসযোগ্য আৰু নিৰ্ভৰযোগ্যতাৰ বাবে তথ্যসমৃদ্ধকৈ উপস্থাপনৰ প্ৰয়াস কৰা দেখা যায়। উদাহৰণস্বৰূপে, 'আমেৰিকাৰ চিনানডুৱা উপত্যকাৰ কিছু স্মৃতি' প্ৰবন্ধটোত জুল'জিকেল পাৰ্কত প্ৰায় পাঁচ হেজাৰ বন্যপ্ৰাণী আৰু পাঁচশ বিভিন্ন প্ৰজাতি আছে বুলি প্ৰকাশ কৰিছে। চিনানডুৱা উপত্যকাত ৩০০০ একৰ অঞ্চলব্যাপী এটা গৱেষণা প্ৰতিষ্ঠান ব্যাপ্ত হৈ আছে। এই প্ৰতিষ্ঠানটোত লুপ্ত হৈ গৈ থকা প্ৰাণীবোৰৰ কৃত্ৰিম প্ৰজনন কৰি অৰণ্যত এৰি দিয়া হয় বুলি তেওঁ উল্লেখ কৰিছে। এই ধৰণৰ কৃত্ৰিম প্ৰজননৰ দ্বাৰা উৎপাদন কৰা প্ৰাণীবোৰ হৈছে - বান্দৰ, জেব্ৰা, পাণ্ডা, কেংগাৰু, আফ্ৰিকাৰ এনটিলোপ, অৰেক্স হৰিণ, বনৰীয়া ঘোঁৰা ইত্যাদি। এনে পদ্ধতিৰে পৃথিৱীৰ পৰা বিলুপ্ত হ'ব ধৰা প্ৰাণীবোৰ সংৰক্ষণৰ চেষ্টা চলোৱাৰ প্ৰসংগ লেখকে বুজাব বিচাৰিছে। লেখকে গ্ৰন্থখনত কেইবাটাও প্ৰবন্ধৰ জৰিয়তে পৃথিৱীৰ অৰণ্যসমূহত থকা ভিন্ন প্ৰজাতিৰ জীৱ-জন্তু, পশু-পক্ষী, পোক-পতংগৰ ধাৰণা দিবলৈ যত্ন কৰা দেখা গৈছে। উদাহৰণস্বৰূপে, 'ওৱাকামজাৰ দেশত' শীৰ্ষক প্ৰবন্ধটোত তেওঁ ৪৫০ প্ৰজাতিৰ চৰাই, ১৫০ প্ৰজাতিৰ পখিলা, ১০০ প্ৰজাতিৰ সৰিসৃপ, ৬০ প্ৰজাতিৰ উভচৰ, ৮০০০ তকৈ অধিক পতঙ্গ কলম্বিয়াত থকাৰ কথা উল্লেখ কৰিছে।

২.২ প্ৰকৃতিপ্ৰেম ঃ

সাধাৰণতে এজন ব্যক্তিয়ে প্ৰকৃতিৰ বিষয়ে গ্ৰন্থ এখন লিখাতেই ব্যক্তিজনৰ প্ৰকৃতি প্ৰেমৰ উমান পাব পাৰি। তাৰ উপৰি গ্ৰন্থখনত দত্তই প্ৰকৃতিৰ পক্ষে অহা সমস্যা আৰু ইয়াৰ সমাধানৰ বাবে ল'ব পৰা ব্যৱস্থাবোৰৰ বিষয়ে উনুকিয়াই দেখাইছে। নৱ-প্ৰজন্মক প্ৰকৃতিৰ প্ৰতি আকৰ্ষণ কৰিবলৈ তথা প্ৰকৃতি সংৰক্ষণৰ আন্দোলন সু-গাঢ় কৰাৰ ক্ষেত্ৰত সাহিত্যৰ মাজেৰে লেখকে এক আন্দোলনৰ সৃষ্টি কৰাৰ চেষ্টা কৰিছে। এই দিশৰ পৰা আমি লেখকৰ প্ৰকৃতি প্ৰেমৰ উমান পাব পাৰো।

'অৰণ্যৰ ছাঁ-পোহৰ' গ্ৰন্থখনত লেখকৰ প্ৰকৃতিপ্ৰীতিৰ নিদৰ্শন হিচাপে প্ৰথমেই মনলৈ অহা এটা ঘটনা হৈছে গুৱাহাটীৰ চিৰিয়াখানাত হোৱা ঘটনাটো। ঘটনাটো আছিল এনেধৰণৰ - "*এটা ল'ৰাই মুখৰ পৰা জ্বলন্ত চিগাৰেটৰ টুকুৰা*

এটা বান্দৰবোৰৰ পিঞ্জৰাৰ ভিতৰত দলিয়াই দিয়ে আৰু নিমাখিত বান্দৰটোৱে বুজি নোপোৱাৰ ফলত চিগাৰেটটোত ভৰি দিয়াৰ ফলত বান্দৰটোৰ ভৰিখন পুৰি ৰঙা ছাল ওলাই গৈছিল। এই কাণ্ড দেখি লেখকে সহ্য কৰিব নোৱাৰি ল'ৰাটোলৈ চোঁচা মাৰি গৈছিল।" (উল্লিখিত,পৃষ্ঠা-৩৭)।

দ্বিতীয়তে, লেখকে প্ৰকৃতিৰ ওপৰত কৰা সূক্ষ্ম অধ্যয়ন। তেওঁ কৰা সূক্ষ্ম অধ্যয়নৰ বাবে মূহূৰ্ততে ভিন্ন ঠাইৰ প্ৰকৃতিৰ মাজৰ পাৰ্থক্য বুজি উঠে। তেওঁ লিখিছে "*আমাৰ অৰণ্যবোৰত মই বিশাল মহিৰূহ, ছল্লিশৰ পৰা আশী ফুটলৈ ওখ ওখ গছ চাই অভ্যস্ত। নদীৰ পাৰে পাৰে বালিচাপৰিবোৰত ঘাঁহ, বন-বননি আদি থাকে এইটোৱেই স্বাভাৱিক। কিন্তু এইয়া এক অন্যৰূপৰ অৰণ্য। এই অৰণ্যত যিটোৱে মোক সৰ্বপ্ৰথম আকৰ্ষিত কৰিলে সেইটো হৈছে এই অৰণ্যৰ গছবোৰৰ উচ্চতা ১৮,১৯ ফুটতকৈ বেছি নহ'ব আৰু অৰণ্যখন ইমান ডাঠ যে সেইফালেৰে মানুহৰটো প্ৰশ্নই নুঠে বহুত স্থলচৰ প্ৰানীবো সেই অৰণ্যত প্ৰৱেশ কৰা টান।*" (উল্লিখিত,পৃষ্ঠা-৯৮)। প্ৰকৃতিৰ ওপৰত কৰা এনে সূক্ষ্ম নিৰীক্ষণ কেৱল এজন প্ৰকৃতিপ্ৰেমীৰ দ্বাৰাহে হ'ব পাৰে।

সাধাৰণতে মানুহে যেতিয়া কোনো ঠাই ভ্ৰমণৰ বাবে যায় তেতিয়া তেওঁলোকে বিশেষভাৱে গুৰুত্ব দিয়ে সামাজিক, সাংস্কৃতিক, অৰ্থনৈতিক ইত্যাদি দিশত। কিন্তু সৌম্যদ্বীপ দত্তই এই দিশবোৰক যদিও লেখনিবোৰত স্থান দিছে কিন্তু তেওঁ বিশেষকৈ গুৰুত্ব দিয়ে প্ৰাকৃতিক পৰিৱেশৰ ওপৰত। ইয়াৰ নিদৰ্শন আমি গ্ৰন্থখনৰ প্ৰতিটো প্ৰবন্ধত কৰা প্ৰকৃতিৰ বাস্তৱধৰ্মী বৰ্ণনাবোৰত দেখা পাইছো। লেখকৰ প্ৰকৃতিৰ সৈতে যি আবেগ জড়িত হৈ আছে সেই আবেগৰ ফলশ্ৰুতিত তেওঁৰ কলমত প্ৰকৃতিৰ জীৱন্তৰূপ অংকণত সফল হৈছে। লেখকে বিভিন্ন ঠাইত পৰিৱেশ সংৰক্ষণ সম্পৰ্কে দিয়া বক্তব্যবোৰতো তেওঁৰ প্ৰকৃতিৰ প্ৰতি থকা দায়বদ্ধতা ফুটি উঠা দেখা যায়। উদাহৰণস্বৰূপে, লেখকে কলম্বিয়াত হোৱা আন্তৰ্জাতিক সন্মিলনত ভাৰতৰ হৈ প্ৰতিনিধিত্ব কৰোতে প্ৰদান কৰা বক্তৃতাটোৰ কথা ক'ব পাৰি। তেওঁ কৈছিল- "*পৃথিৱীৰ প্ৰায় বেছিভাগ অশান্তিৰ মূল কাৰণ প্ৰাকৃতিক সম্পদক কেন্দ্ৰ কৰি। প্ৰকৃতিক সম্পদৰ সু-সমবন্টন, সংৰক্ষণ আৰু পৰিবৰ্ধনৰ দ্বাৰা পৃথিৱীৰ অনেক অশান্তি তথা সমস্যাৰ সমাধান কৰিব পৰা যায়। তাৰ বাবে বিশ্বৰ সকলো দেশে ঐক্যবদ্ধভাৱে এখনে আনখনক সহযোগিতা কৰি যাব লাগিব।*" (উল্লিখিত,পৃষ্ঠা-২৮)।

২.৪ পৰিৱেশ আন্দোলনৰ ছবি -

গ্ৰন্থখনত সন্নিবিষ্ট প্ৰতিটো প্ৰবন্ধই লেখকৰ ভ্ৰমণ অভিজ্ঞতা আধাৰিত। এই ভ্ৰমণবোৰলৈ গৈ লেখকে বিভিন্ন অনুষ্ঠান প্ৰতিষ্ঠানত পৰিৱেশ সম্পৰ্কীয় বক্তৃতা প্ৰদান কৰিছে। সেই বক্তৃতাসমূহৰ মাজেৰে লেখকে আৰম্ভ কৰা পৰিৱেশ আন্দোলনৰ ছবিখন স্পষ্টকৈ প্ৰকাশ হোৱা দেখা যায়।

গ্ৰন্থখনৰ শেষত 'অৰণ্যৰ ছাঁ-পোহৰ' শীৰ্ষক প্ৰবন্ধটোত 'যোৰ নাগৰা' নামৰ গাঁওখনত কৰা পৰিৱেশ সংৰক্ষণ আন্দোলনটো অহিংসভাৱে গঢ়ি তোলাত লেখকে নেতৃত্ব লোৱাৰ কথা উল্লেখ আছে। আন্দোলনটো আছিল এনেধৰণৰ- "*চোৰাংচোৰা ব্যৱসায়ীবোৰে ৰাতি গছ কাটি যাব আৰু দিনত গাঁৱৰ ৰাইজে মিলি কাটি লুকুৱাই যোৱা গছবোৰ বিচাৰি আনি থ'ব এনেদৰে চোৰাংচোৰা ব্যৱসায়ীসকলৰ সন্মুখত অহিংসভাৱে প্ৰত্যাহ্বান হৈ থিয় দিছিল।*" (উল্লিখিত,পৃষ্ঠা-১৮১)। চোৰাং ব্যৱসায় কৰাৰ মূল কাৰণ হৈছে অধিক মুনাফা আদায় আৰু নিজৰ স্বাৰ্থ পূৰণ। যেতিয়া সেই কামটোৰ পৰা লাভৰ পৰিৱৰ্তে লোকচান হ'বলৈ আৰম্ভ কৰিব তেতিয়া তেওঁলোকে চোৰাং ব্যৱসায় এৰিবলৈ বাধ্য হ'ব। এইদৰে লেখকে পৰিৱেশ আন্দোলনৰ বাবে লোৱা পদক্ষেপৰ এটা অংশ গ্ৰন্থখনত দাঙি ধৰিছে।

২.৫ প্ৰাকৃতিক পৰিৱেশৰ তুলনা ঃ

এখন ঠাইৰ পৰিৱেশৰ লগত অন্য এখন ঠাইৰ সামগ্ৰিকভাৱে কিছুমান দিশৰ মিল থাকিলেও নিজস্ব কিছুমান সুকীয়া বৈশিষ্ট্যও দেখা যায়। 'অৰণ্যৰ ছাঁ-পোহৰ' গ্ৰন্থখনত লেখকে ভিন্ন প্ৰাকৃতিক পৰিৱেশৰ মাজত থকা সাদৃশ্য-বৈসাদৃশ্যবোৰৰ কথা সুন্দৰকৈ প্ৰকাশ কৰিছে।

লেখকে গ্ৰন্থখনত অসমৰ অৰণ্য আৰু আমেৰিকাৰ অৰণ্যৰ মাজত বৈসাদৃশ্য দেখুৱাইছে এনেদৰে- "*ইয়াৰ অৰণ্য অসমৰ দৰে নহয়। অসমৰ অৰণ্যৰ ভূমিভাগ ভিন্ন লতা, গুল্ম, বেত-বাঁহ ইত্যাদিৰে পৰিপূৰ্ণ। কিন্তু ইয়াত অৰণ্যৰ ভূমিভাগ প্ৰায় সম্পূৰ্ণভাৱে পৰিষ্কাৰ, কেৱল অজস্ৰ শুকান পাত পৰি আছে। কোনো কোনো স্থানত পথাৰৰ ফাঁকে ফাঁকে কিছু বনৰীয়া, অপূৰ্ব ধুনীয়া ফুল ফুলি আছে আৰু আছে সেউজীয়া ঘাঁহ। এজন অসমীয়াৰ চকুত এই অৰণ্য একেবাৰে নতুন বুলি ধাৰণা হ'ব।*" (উল্লিখিত,পৃষ্ঠা-১৯)।

কলম্বিয়াৰ ৰাজধানী বগোটা চহৰৰ পৰা এক কিলোমিটাৰ দূৰত 'চিয়া' নামৰ এখন গাঁও আছে। এই গাঁওখনৰ প্ৰাকৃতিক পৰিৱেশৰ লগত অসমৰ পৰিৱেশৰ

সাদৃশ্য-বৈসাদৃশ্যৰ কথা লেখকে উল্লেখ কৰিছে এনেদৰে, "*প্ৰকৃতিগতভাৱে অদ্ভুত মিল অসমৰ লগত কিন্তু ৰাস্তা-ঘাট আৰু ঘৰবাৰীবোৰ আৰু পৰিপাটি। অসমৰ দেশৰ গৰুৰ ব্যৱহাৰৰ পৰিৱৰ্তে 'চিয়া' গাঁৰত ঘোঁৰাৰ ব্যৱহাৰ কৰা দেখা যায়।*" (উল্লিখিত, পৃষ্ঠা-৪৪)

বিজ্ঞানৰ আৱিস্কাৰ, ক্ষমতালোভী মন, স্বাৰ্থপৰতা আৰু ব্যক্তিকেন্দ্ৰিকতাই প্ৰকৃতিৰ প্ৰতি যি ভাবুকি আনিছে সেয়া কেৱল কোনো এখন ঠাইত নহয়। ই সমগ্ৰ বিশ্বৰ বাবে সমস্যা হৈ পৰিছে। "*কলম্বিয়াৰ গৌৰৱ 'ওৱাকামজা' চৰাইটো ক্ৰমে বিলুপ্তিৰ পথে গৈছে আৰু ইয়াৰ মূল কাৰণ ইহঁতৰ বাসস্থান ধ্বংস বুলি গ্ৰন্থখনত উল্লেখ আছে।*" (উল্লিখিত, পৃষ্ঠা-৪৪)। কথাষাৰৰ পৰা বুজিব পাৰি প্ৰকৃতিৰ প্ৰতি অহা ভাবুকি সমগ্ৰ বিশ্বতে সৃষ্টি হৈছে। যিদৰে কলম্বিয়াত 'ওৱাকামজা' চৰাইৰ বিলুপ্তি হৈছে তেনেদৰে অসমত 'এশিঙীয়া গঁড়' বিলুপ্তিৰ পথত।

লেখকে দেখুওৱা আন এটা সাদৃশ্য হৈছে, ৰাতিপুৱাৰ পৰিৱেশবোৰ সকলোবোৰ ঠাইতে একেই। অসমত যিদৰে চৰাইৰ মাতত মানুহ সাৰ পায়, শুই উঠিয়েই বাহিৰলৈ আহি বিভিন্ন চৰাইৰ মাতৰ কোলাহলেৰে পৰিপূৰ্ণ পৰিৱেশ দেখা পায় তেনেদৰে জুকু উপত্যকাত থাকি পোৱা অভিজ্ঞতাৰ পৰা লেখকে ৰাতিপুৱাবোৰ এটা পৰিৱেশৰ বৰ্ণনা কৰিছে। "*পিছদিনাই ৰাতিপুৱাই টোপনিৰ পৰা সাৰ পাই বাহিৰলৈ ওলাই আহি চৰাইৰ কোলাহলেৰে পৰিৱেশ মুখৰিত, ট্ৰগোন নামৰ চৰাইটোৰে একেৰাহে সুহুৰি বজাই আছিল, কাষৰ অৰণ্যৰ পৰা ভাহি আহিছিল যমডাকিনীৰ মাত। কেইবাটাও ব্লু-ৰক-থ্ৰাচ পাথৰৰ ওপৰত জঁপিয়াই ফুৰিছে।*" (উল্লিখিত, পৃষ্ঠা-৬৪)। এনেদৰে ৰাতিপুৱা দেখা পৰিৱেশৰ বৰ্ণনাৰ লগত অসমৰ পৰিৱেশৰ সাদৃশ্য উপলব্ধি কৰিব পাৰি।

২.৬ শিল্প-সৌন্দৰ্য ঃ

২.৬.১ ভাষাশৈলী ঃ

সাহিত্যৰ বিচাৰ কৰাৰ ক্ষেত্ৰত ইয়াৰ ভাষাশৈলী সম্পৰ্কে অধ্যয়ন কৰাটো অতি প্ৰয়োজনীয়। সৌম্যদ্বীপ দত্তৰ 'অৰণ্যৰ ছাঁ-পোহৰ' গ্ৰন্থখনৰ ভাষাশৈলী যদি আমি বিচাৰ কৰিবলৈ যাওঁ তেতিয়া আমি দেখিম যে গ্ৰন্থখনত শব্দগত দিশত-তৎসম শব্দ ঃ- হস্ত, হ্ৰদ, ব্যাপ্ত, প্ৰশস্ত, প্ৰান্তৰ, শিৰস্ত্ৰাণ, তুষাৰ, তুষ্টা ইত্যাদি। বিদেশী শব্দ ঃ- ডি চি, পাৰ্ক, ৰিচাৰ্চ, ল'জ, ফটো, ভিছা, ট্ৰেভেল, অৰ্ডাৰ, ব্ৰীজ ইত্যাদি। দেশী শব্দ ঃ- চকী, মেজ, ঘৰ-বাৰী, খেৰ, মাটিৰ ঘৰ, চৌকা, গোহালিঘৰ, ভঁৰাল, চালি, শাক ইত্যাদি। অনুৰূপ শব্দ ঃ- ওচৰে-পাজৰে, জধে-মধে, খক্-মক্, লুল্টুং-ঘুল্টুং, ঢিমিক-ঢামাক ইত্যাদি। অনুকাৰ শব্দঃ- দুপ্ দুপ্, খট্ খট্, কুলু কুলু, ফুচ্ ফুচ্, দুম্ দুম্, ঢং ঢং, শি শি, ধপ্ ধপ্, ঠুক ঠাক, খচ্ খচ্, ঝন্ ঝন্ ইত্যাদিৰ ব্যৱহাৰ কৰা দেখা গৈছে।

ৰূপগত দিশত বিভক্তি, প্ৰত্যয়, অলংকাৰ, চিত্ৰকল্প ইত্যাদিবোৰৰ বহুল প্ৰয়োগ কৰিছে।

বিভক্তি -

- নিজমে(-এ) মোক যোৰ-নাগৰাৰ ৰাস্তা দেখু�ৱাই(-ই) দিলে।
- চাৰিওফালে ডাঙৰ ডাঙৰ শিলেৰে(-এৰে) আবৃত।
- দিনত বান্দৰবোৰে ইয়াত আমলখি খাবলৈ(-লৈ) আহে।

প্ৰত্যয় -

- পৰপ্ৰত্যয় - বান্দৰবোৰ (-বোৰ), বাঘিনী (-অনী), হাতীটো (-টো) ইত্যাদি।
- পূৰ্বপ্ৰত্যয় - প্ৰতিৰক্ষা (-প্ৰতি), অপৰিচিত (-অ), আজীৱন (-আ) ইত্যাদি।
- নিৰ্দিষ্টতাবাচক প্ৰত্যয় - পাহাৰখন (-খন), গ্ৰহটো (-টো), ছোৱালীজনী (-জনী) ইত্যাদি।
- বহুবচনাত্মক প্ৰত্যয় - হৰিণাবোৰ (-বোৰ) ইত্যাদি।

অলংকাৰ -

- উপমা - "অৰ্ধচন্দ্ৰাকৃতিৰ কিছুমান চকী-মেজ সজোৱা আছে।"

"বিমোহিত কৰা প্ৰাকৃতিক সৌন্দৰ্য, ফুলৰ সমাৰোহ, পাহাৰে আগুৰা ভাসমান তুলাখণ্ডৰ দৰে মেঘৰাশি।"

চিত্ৰকল্প - "অতিপাত ঠাণ্ডা আৰু পাহাৰৰ ওপৰত বতাহ বলিছিল। শুকান পাত আৰু বতাহৰ শব্দত এক মোহময়ী পৰিৱেশ সৃষ্টি হৈছিল। স্থানে স্থানে জমা হোৱা মেঘ অৰণ্যৰ ভিতৰত প্ৰৱেশ কৰি অৰণ্যক কিছু ৰহস্যময়ী কৰি তুলিছিল।"

২.৬.২ গদ্যশৈলী ঃ

সৌম্যদ্বীপ দত্তই গ্ৰন্থখনত সহজ-সৰল কথ্যভাষাৰ ব্যৱহাৰ কৰিছে। তেওঁ ৰচনাত সাধাৰণতে যিবোৰ শব্দৰ অসমীয়া প্ৰতিশব্দ আছে সেইবোৰ তেনেদৰে ব্যৱহাৰ কৰাৰ চেষ্টা কৰিছে যদিও তেওঁ কোনো কোনো ঠাইত অনিচ্ছা স্বত্বেও হয়তো অসমীয়াৰ প্ৰতিশব্দ থকাৰ পাছতো ইংৰাজী, হিন্দী শব্দৰ প্ৰয়োগ হৈ যোৱা দেখা গৈছে। যেনেঃ- গৰীৰ, হস্পিতাল, স্কুল ইত্যাদি। বাক্যৰ ব্যৱহাৰৰ ক্ষেত্ৰতো প্ৰয়োজন সাপেক্ষে চুটি বাক্য আৰু প্ৰয়োজন সাপেক্ষে দীঘল বাক্যৰ ব্যৱহাৰ কৰা দেখা গৈছে।

৩.০ **উপসংহাৰ ঃ**

আলোচনাৰ শেষত উপনীত হোৱা সিদ্ধান্তসমূহ হৈছেঃ-

* '**অৰণ্যৰ ছাঁ-পোহৰ**' গ্ৰন্থখন লেখকৰ প্ৰথমখন ভ্ৰমণমূলক আৰু অসমৰ বাহিৰে পৃথিৱীৰ বিভিন্ন ঠাইৰ অৰণ্যৰ পটভূমিত ৰচিত।

* গ্ৰন্থখন তথ্যভিত্তিক আৰু ভ্ৰমণভিত্তিক হোৱা বাবে ই পাঠকক বিশ্বাসযোগ্যতা আৰু নিৰ্ভৰযোগ্যতা প্ৰদান কৰিব পাৰিছে।

* গ্ৰন্থখনত প্ৰাকৃতিৰ সৌন্দৰ্য, প্ৰকৃতিৰ বিভিন্ন প্ৰজাতিৰ উপাদান, প্ৰকৃতিলৈ অহা ভাবুকি, প্ৰকৃতি সংৰক্ষণৰ বাবে নৱ প্ৰজন্মই ল'ব পৰা পদক্ষেপ, পৃথিৱীৰ পৰা বিলুপ্ত হৈ যোৱা বিভিন্ন প্ৰাণীৰ প্ৰসংগ উত্থাপন কৰিছে। ফলত গ্ৰন্থখনে পাঠকক সহজতে আকৰ্ষণ কৰা দেখা গৈছে।

* প্ৰাকৃতিক পৰিবেশলৈ অহা বিভিন্ন সমস্যাৰ ফলত বন্যপ্ৰাণীবোৰৰ যি দুৰৱস্থা হৈছে সেয়া গ্ৰন্থখনত সুন্দৰকৈ উপস্থাপন কৰা হৈছে।

* গ্ৰন্থখনৰ জৰিয়তে পৃথিৱীৰ বিভিন্ন ঠাইৰ প্ৰাকৃতিক পৰিৱেশৰ মাজত সাদৃশ্যৰ লগতে বহুতো বৈসাদৃশ্য থকাৰ কথা জানিব পৰা গৈছে।

* গ্ৰন্থখন শিল্প সৌন্দৰ্যৰ দিশৰ পৰাও পাঠকক আমোদ দিব পৰা ধৰণৰ হৈছে।

* গ্ৰন্থখনৰ জৰিয়তে প্ৰকৃতি সংৰক্ষণৰ চিন্তা বিস্তাৰ কৰাত যথেষ্ট সহায় কৰিব বুলি ক'ব পাৰি।

* অসমীয়া কাহিনীবিযুক্ত সাহিত্যৰ ধাৰাটো সমৃদ্ধ কৰাত গ্ৰন্থখনে গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা গ্ৰহণ কৰিছে। ❑

গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

মুখ্য সমল -

দত্ত, সৌম্যদ্বীপ। ***অৰণ্যৰ ছাঁ-পোহৰ***। বনলতা, ডিব্ৰুগড়, ২০০৩

গৌণ সমল -

কোঁৱৰ, অৰ্পণা। ভাষাবিজ্ঞান উপক্ৰমণিকা। ডিব্ৰুগড়, গুৱাহাটী, ২০০৮

উল্লিখিত । প্ৰাচীন অসমীয়া গদ্যশৈলী। বনলতা, ডিব্ৰুগড়, ২০১৪

বৰা, লীলাৱতী শইকীয়া। অসমীয়া ভাষাৰ ৰূপতত্ত্ব। বনলতা, গুৱাহাটী, ২০১৫

ৰাজখোৱা, অৰবিন্দ (সম্পা.)। অসমীয়া প্ৰকৃতি সাহিত্য আৰু সৌম্যদ্বীপ দত্ত। বান্ধৱ প্ৰকাশন, গুৱাহাটী, ২০২১

ৱেবচাইট ঃ https://as.m.wikipedia.org

https://bn.m.wikipedia.or

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

ইয়াৰুইঙ্গম উপন্যাসত প্রতিফলিত টাংখুল সমাজৰ চিত্র ঃ এক পর্যালোচনা

পৰেশ দাস

গৱেষক
কুমাৰ ভাস্কৰ বর্মা সংস্কৃত আৰু পুৰাতন অধ্যয়ন বিশ্ববিদ্যালয়
পিন-৭৮১৩৩৭
৭৬৩৮০০১৮২৮
pareshdasnlp@gmail.com

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্যত বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্যৰ স্থান বিশেষভাৱে উল্লেখযোগ্য। ১৯২৪ চনত জন্মলাভ কৰা ভট্টাচার্য এগৰাকী ঔপন্যাসিক, গল্পকাৰ, নিবন্ধকাৰ, শিক্ষাবিদ আৰু সু-সাংবাদিক। অসমীয়া ভাষা-সাহিত্যলৈ এখেতৰ অৱদান অনেক।

ভট্টাচার্যৰ প্রথম উপন্যাস ৰাজপথে ৰিঙিয়ায় (১৯৫৫)। এইখন উপন্যাসৰ জৰিয়তে উপন্যাস জগতত নাম প্রতিষ্ঠা কৰা ঔপন্যাসিক গৰাকীয়ে পৰৱর্তী সময়ত উপন্যাসৰ বাবেই জ্ঞানপীঠ বঁটা আৰু সাহিত্য অকাডেমী বঁটা লাভ কৰে।

নগা জনগোষ্ঠীৰ বিভিন্ন ফৈদৰ ভিতৰত টাংখুলসকল অন্যতম। ইয়াৰুইঙ্গম উপন্যাসখনৰ মূল পটভূমিও হৈছে দ্বিতীয় বিশ্বযুদ্ধই বিধ্বস্ত কৰা মণিপুৰৰ এখন টাংখুল নগা গাঁও। টাংখুল নগাগোষ্ঠীৰ সমাজখনক গভীৰভাৱে অধ্যয়ন কৰি উপন্যাসখনত সুন্দৰকৈ বর্ণনা কৰিছে। বিশেষকৈ টাংখুল নগাসকলৰ দৈনন্দিন জীৱনৰ ৰীতি-নীতি, আচাৰ-ব্যৱহাৰ, বিশ্বাস-অন্ধবিশ্বাস আদি অনেক দিশ উপন্যাসখনৰ মাজত বর্ণিত হৈছে। তদুপৰি প্রকৃতি চিত্রণ, ভাষা আৰু সংলাপ, চৰিত্র, প্রেম আদিও শক্তিশালী ৰূপত দেখিবলৈ পোৱা যায়।

উপন্যাসখনৰ মাজত প্রতিফলিত হোৱা টাংখুল সমাজখনক পোহৰলৈ অনাৰ প্রয়াসেই আমাৰ গৱেষণা পত্রৰ উদ্দেশ্য। বিষয়বস্তু আলোচনা কৰাৰ ক্ষেত্রত বর্ণনাত্মক আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

বীজ শব্দ ঃ ইয়াৰুইঙ্গম, সমাজ, টাংখুল, নগা জনগোষ্ঠী।

০.০০ অৱতৰণিকা ঃ

০.০১ বিষয়ৰ পৰিচয় ঃ

ইয়াৰুইঙ্গম মানে ৰাইজৰ শাসন। ই এটা নগা শব্দ। ইয়াৰুইঙ্গম বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্যৰ এখন উল্লেখযোগ্য উপন্যাস। টাংখুল নগা সমাজৰ কিছু ঘাট-প্রতিঘাট, সুখ-দুখ, তেওঁলোকৰ জীৱনত পৰা যুদ্ধৰ ভয়াৱহতা আৰু অন্য হাতেদি বিচ্ছিন্নতাবাদী আন্দোলনৰ প্রভাৱ উপন্যাসখনৰ মাজেদি ফুটি উঠিছে।

উপন্যাসৰ পটভূমি উত্তৰ-পূর্বাঞ্চলৰ টাংখুল নগাসকলৰ সমাজখন। যিখন সমাজক যুদ্ধই ভস্মীভূত কৰিছিল। সেয়েহে ক'ব পাৰি টাংখুল সমাজখনেই উপন্যাসখনৰ মূল বিষয়বস্তু।

উপন্যাসখনৰ মাজত ফুটি উঠা সমাজখন কেৱল নগাসকলৰ সমাজ নহয়।

বিশ্বমানৱৰ সার্বজনীন ভাৱ অনুভূতি ফুটি উঠা এখন সমাজ। য'ত মানৱীয় আবেদন, প্রেম, হত্যা, হিংসা সকলোবোৰ ফুটি উঠিছে। লগতে টাংখুলসকলৰ মাজত প্রচলিত ৰীতি-নীতি, উৎসৱ-পার্বণ, বিশ্বাস-অবিশ্বাস, ধ্যান-ধাৰণা আদি সকলোবোৰ বাস্তৱ ৰূপত প্রতিফলিত হৈছে।

আমাৰ আলোচ্য গৱেষণা পত্রত টাংখুল নগাসকলৰ সমাজখনৰ বিষয়ে আলোচনা কৰা হৈছে।

০.০২ পূর্বকৃত অধ্যয়নৰ খতিয়ান ঃ

গৱেষণা প্রত্রখন প্রস্তুত কৰোঁতে বিষয়ৰ লগত সংগতি থকা গ্রন্থ, আলোচনী অধ্যয়ন কৰা হৈছিল। অধ্যয়ন কৰা তেনে কিছু গ্রন্থ-আলোচনী হৈছে —

(ক) নগেন শইকীয়াৰ সম্পাদিত '**এশ বছৰৰ অসমীয়া উপন্যাস**' গ্রন্থখনত ইয়াৰুইঙ্গমৰ বিষয়ে আলোচনা আছে।

(খ) মলয়া খাওগুৰ '**ড° বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্য আৰু তেওঁৰ উপন্যাস**' নামৰ গ্রন্থত ইয়াৰুইঙ্গম উপন্যাসৰ আলোচনা আগবঢ়াইছে।

(গ) গোবিন্দ প্রসাদ শর্মাই '**বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্য ঃ ঔপন্যাসিক**' গ্রন্থত ইয়াৰুইঙ্গম উপন্যাসৰ আলোচনা কৰিছে।

(ঘ) শোণিত বিজয় দাসে সম্পাদনা কৰা কথা গুৱাহাটী পঞ্চম বর্ষৰ চতুর্থ সংখ্যাটো আছিল বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্য বিষয়ক। ইয়াৰুইঙ্গমউপন্যাসৰ কেইবাটাও গুৰুত্বপূর্ণ লেখা আছে।

(ঙ) Jadabendra.blogspot.com ত যাদবেন্দ্র বৰাই ইয়াৰুইঙ্গমত প্রতিফলিত টাংখুল সমাজৰ চিত্রৰ বিষয়ে এটা দীঘলীয়া প্রবন্ধ লিখিছে।

(চ) প্রমোদচন্দ্র ভট্টাচার্যৰ সম্পাদিত '**অসমৰ জনজাতি**' গ্রন্থত টাংখুল নগাসকলৰ বিষয়ে শ্রী বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্যই এটা নাতিদীর্ঘ প্রবন্ধ লিখিছে।

তদুপৰি মহেশ্বৰ নেওগৰ 'অসমীয়া সাহিত্যৰ ৰূপৰেখা', সত্যেন্দ্রনাথ শর্মাৰ 'অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত', দিলীপ বৰাৰ 'এশ বছৰৰ অসমীয়া উপন্যাসত জনজাতীয় জীৱন' আদি গ্রন্থত কম-বেছি পৰিমানে ইয়াৰুইঙ্গমৰ আলোচনা পোৱা যায়।

০.০৩ অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব আৰু উদ্দেশ্য ঃ

অসমীয়া সাহিত্যত উপন্যসৰ জড়িয়তে নিজক প্রতিষ্ঠা কৰা ঔপন্যাসকসকলৰ ভিতৰত বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্য অন্যতম। তেওঁৰ ৰচিত 'ইয়াৰুইঙ্গম' উপন্যাস প্রথমখন সাহিত্য অকাডেমী বঁটাপ্রাপ্ত উপন্যাস হিচাপে ইয়াৰ গুৰুত্ব সদায় থাকিব। তদুপৰি কোনো এটা জনজাতিৰ বিষয়ে আমি জানিবলৈ ইচ্ছা কৰোঁ। এইখন উপন্যাসত বিশেষকৈ নগা সকলৰ অন্যতম ফৈদ টাংখুলসকলৰ সমাজখন ফুটি উঠিছে। সমাজখনৰ বিষয়ে আলোচনাৰ জৰিয়তে যিবোৰ নতুন দিশ পোহৰলৈ আহিব সিয়ে বিষয়বস্তুৰ গুৰুত্ব বহন কৰিব।

গৱেষণা পত্রৰ মূল উদ্দেশ্য হ'ল—

(ক) টাংখুল নগাসকলৰ বিষয়ে জানিবলৈ আৰু বুজি উঠিবলৈ যত্ন কৰা।

(খ) উপন্যাসখনত প্রকট হোৱা টাংখুল সমাজখনক পোহৰলৈ অনাৰ প্রয়াস।

(গ) টাংখুল নগাসকলৰ মাজত থকা সুকীয়া কিছু বিশেষত্ব উলিয়াই অনাৰ প্রয়াস আদিয়েই মূল উদ্দেশ্য।

০.০৪ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

ইয়াৰুইঙ্গম উপন্যাসত প্রতিফলিত টাংখুল সমাজৰ চিত্র ঃ এক অধ্যয়ন উক্ত বিষয়টোৱে পৰিসৰৰ ভিতৰত লেখকৰ জীৱন আৰু সাহিত্যকৃতি, টাংখুল নগাসকলৰ পৰিচয়, পটভূমি, বিষয়বস্তু আদি দিশসমূহ সামৰি ল'ব।

০.০৫ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

গৱেষণাৰ পত্রৰ আলোচ্য বিষয়টো বর্ণনা কৰোঁতে বর্ণনাত্মক আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে। তথ্য সংগ্রহৰ বাবে মুখ্য আৰু গৌণ উৎসৰ সহায় লোৱা হৈছে।

১.০০ বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্যৰ জীৱন আৰু সাহিত্যকৃতি ঃ

প্রথমগৰাকী জ্ঞানপীঠ বঁটা বীজয়ী অসমীয়া সাহিত্যিক বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্য। ১৯২৪ চনত তেখেতৰ জন্ম হৈছিল। তেওঁ আছিল একাধাৰে কবি, নিবন্ধকাৰ, গল্পকাৰ, সম্পাদক, ঔপন্যাসিক, শিক্ষাবিদ, সাংবাদিক। অসমীয়া ভাষা-সাহিত্যলৈ তেখেতৰ অৱদান অনেক। তেওঁৰ উল্লেখযোগ্য সাহিত্যকৃতিসমূহ হ'ল—

উপন্যাস ঃ ৰাজপথে ৰিঙিয়ায় (১৯৫৫), প্রতিপদ, শতঘ্নী (১৯৬৫), আই (১৯৬০), ইয়াৰুইঙ্গম (১৯৬০), মৃত্যুঞ্জয় (১৯৭০) আদি।

গল্পপুথি ঃ কলং আজিও বয়(১৯৬২), সাতসৰী(১৯৬৩), খিৰিকী কাষৰ আসন (১৯৯৪)।

কবিতাপুথি ঃ সান্ধ্যস্বৰ(১৯৯০)।

ভ্রমণ কাহিনী ঃ সীমাই আমনি কৰে(১৯৭৫)।

সাহিত্য সংস্কৃতি বিষয়ক ঃ ডেৰশ বছৰৰ অসমীয়া সংস্কৃতিত এভূমুকি (১৯৭৮), Human and satire in Assamese Literature.

এখেতে ১৯৬১ চনত ইয়াৰুইঙ্গম উপন্যাসৰ বাবে সাহিত্য অকাডেমী বঁটা আৰু ১৯৭৯ চনত মৃত্যুঞ্জয় উপন্যাসৰ বাবে জ্ঞানপীঠ বঁটা লাভ কৰে।

২.০০ বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্যৰ ইয়াৰুইঙ্গম উপন্যাসত প্রতিফলিত টাংখুল সমাজৰ চিত্র ঃ

সমাজ হৈছে এক সামাজিক সম্পর্কেৰে জড়িত ব্যক্তিৰ এটা গোট। এইখন সমাজেই কিছুমান কার্য বা কথাক গ্রহণযোগ্য বা অগ্রহণযোগ্য বুলি আচৰণ বিধি নির্মাণ কৰে।

বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্যই বিশেষ এখন সমাজক কেন্দ্র কৰি ইয়াৰুইঙ্গম উপন্যাস ৰচনা কৰিছে। সেই সমাজখন হৈছে টাংখুল নগা সমাজ। সেয়ে বিষয়টোৰ ভিতৰলৈ সোমোৱাৰ আগতে জনগোষ্ঠীটোৰ লগত পৰিচয় হ'ব লাগিব। তলত বিতংভাৱে আলোচনা কৰিবলৈ যত্ন কৰা হৈছে।

২.০১ টাংখুল নগাসকলৰ চমু পৰিচয় ঃ

টাংখুলসকল তিব্বতবর্মী জনগোষ্ঠী। এওঁলোকে উত্তৰ-পূবাঞ্চলৰ মণিপুৰ ৰাজ্যৰ উখ্রুল জিলা, কামজং জিলা, ম্যানমাৰৰ কিছু অংশত এওঁলোকে বসবাস কৰে। টাংখুল শব্দটো বিশেষ এটা উৎপত্তি তত্ত্ব অনুসৰি Thankhul (থানখুল)'ৰপৰা উৎপত্তি হৈছে।

আন নগাসকলৰ তুলনাত টাংখুল সকলৰ সুকীয়া বৈশিষ্ট পৰিলক্ষিত হয়—

(ক) টাংখুলসকলে ছাগলী নাখায়।

(খ) নগাসকলৰ ভিতৰত কেৱল টাংখুল সকলৰ মাজতহে গাভৰু চাং আছে।

(গ) মৃতকৰ শৱ সৎকাৰ বাহিৰত কৰে। নির্দিষ্ট জোখৰ, শিলে ভৰা গাঁতত মৰাশ পোতে।

(ঘ) পৰাপক্ষত একে ফৈদৰ মাজত নৰহত্যা কৰিব নোৱাৰিছিল। আকস্মিক হত্যাৰ বাবে ৬ টালৈকো গৰু জৰিমনা ভৰিব লগীয়া হৈছিল।

(ঙ) তেওঁলোকে ধান, মাহ-আলু, কচু আদি সকলোবোৰ খেতিয়েই কৰে।

(চ) সামাজিক গাঁথনিৰ ক্ষেত্রত টাংখুল সমাজ পিতৃপ্রধান। গোট হৈছে তেওঁলোকৰ পৰিয়াল। বৰপুত্র পুৰণি ঘৰৰ অধিকাৰী হয় আদি।

(ছ) বাৰী তিৰোতাই দেউৰেককো স্বামী হিচাপে গ্রহণ কৰিব পাৰে।

(জ) ৰছি টনা খেল টাংখুলসকলৰ প্রিয় খেল। মালযুজোঁ তেওঁলোকৰ মাজত প্রচলিত।

(ঝ) দুমুখীয়া যাঠী আৰু দা টাংখুলসকলৰ প্রধান অস্ত্র।

২.০২ ইয়াৰুইঙ্গম উপন্যাসৰ পটভূমি ঃ

ঔপন্যাসিক বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্যই এবছৰ টাংখুল সমাজত শিক্ষকতা কৰিছিল। যাৰ বাৱে উখ্রুলৰ টাংখুল সমাজখনৰ লগত তেওঁৰ এক নিবিড় সম্পর্ক গঢ়ি উঠিছিল। নগা সমাজৰ বিভিন্ন ৰীতি-নীতি, আচাৰ-ব্যৱহাৰ, উখ্রুলৰ পৰিৱেশৰ লগত ঘনিষ্ঠ সম্পর্ক গঢ়ি উঠিছিল। যুদ্ধই বৰ বেয়াকৈ টাংখুলসকলৰ ক্ষতি কৰিছিল। সকলোবোৰ দেখি তেওঁ যি সৃষ্টি কৰিছিল সেয়াই ইয়াৰুইঙ্গম।

দ্বিতীয় মহাসমৰৰ বিভিষিকাই ইউৰোপৰ লগতে সমগ্র বিশ্বতে আলোড়নৰ সৃষ্টি কৰিছিল। যুদ্ধ, হত্যা, ধ্বংস যজ্ঞই হাহাকাৰ সৃষ্টি কৰিছিল। সহজ-সৰল নগাসকলৰ জীৱন বিষময় কৰি তুলিছিল। লেখকে এবছৰীয়া শিক্ষকতাৰ অভিজ্ঞতাৰে সকলোবোৰ অনুধাৱন কৰিছিল। তাৰে পৰিপ্রেক্ষিতত 'ইয়াৰুইঙ্গম' লিখি উলিয়াইছিল। এয়াই উপন্যাসখনৰ মূল পটভূমি।

২.০৩ ইয়াৰুইঙ্গম উপন্যাসৰ বিষয়বস্তু ঃ

সাধাৰণ অর্থত সমগ্র টাংখুল সমাজখনেই উপন্যাসখনৰ মূল বিষয়বস্তু। ইয়াৰ কাহিনী আৰম্ভ হৈছে ৰাজনৈকিত ঘটনা এটাক কেন্দ্র কৰি। যাৰ বাবে ক'ব পাৰি উপন্যাসখনৰ ঘাই বিষয়বস্তু ৰাজনৈতিক অস্থিৰতা। য'ত দ্বিতীয় বিশ্বযুদ্ধই থান-বান কৰি শেষ কৰা এটা জনগোষ্ঠীৰ বিষয়ে ইয়াত উপস্থাপিত হৈছে। বিশেষকৈ টাংখুল নগা সমাজৰ সামাজিক জীৱন ধাৰণ প্রণালী, ধর্মীয় ধ্যান-ধাৰণা, পৰকীয়া প্রেমৰ পৰিণতি, লোক-বিশ্বাস আদি অনেক বিষয়ৰ সফল ৰূপায়ণ উপন্যাসখনৰ মাজত প্রতিফলিত হৈছে।

উপন্যাসখনৰ বিষয়বস্তুৰ লগত সংগতি ৰাখি বিভিন্নজনে মন্তব্য প্রকাশ কৰিছে। এইক্ষেত্রত হীৰেন গোহাঁই, নগেন শইকীয়া আদিৰ মন্তব্য উল্লেখযোগ্য।

হীৰেন গোহাঁইৰ সদর্থক মন্তব্য হ'ল—

"উপন্যাসখনে কেৱল অচিন-অজান জনগোষ্ঠী এটাক আমাৰ হৃদয়ক সুবিধা কৰি দিয়া নাছিল, বিশ্ব মানৱৰ মাজত থকা সাধাৰণ কেতবোৰ ভাৱ-অনুভূতিও আলোকপাত কৰিছিল।"[১]

তেওঁ আকৌ ক'লে—

"উপন্যাসখন কেৱল নগা বিদ্রোহ সম্পর্কিত নহয়। তাত অংশগ্রহণ কৰা ব্যক্তিসমূহৰ যেনে ফানিটফাং, চাৱেংলা আদি ব্যক্তি জীৱনৰ নানা দন্দ্ব-সংঘাত, সাফল্য-ব্যর্থতা, আশা-

নিৰাশা জীৱন্ত ৰূপত বিবৃত কৰি বিশাল পটভূমি বাস্তৱতা তথা তথ্যগত সমৃদ্ধি সজীৱ কৰি তুলিছে গ্ৰন্থকাৰে।"[২]

নগনে শইকীয়া কৈছে—

"ইয়াৰুইঙ্গমে যুদ্ধ, হত্যা, হিংসাৰ বিভীষিকাৰ ছবি আৰু শব্দৰ যোগেদি প্ৰেম আৰু অহিংসাই সপোন এটাৰ ফালে বাট দেখুৱাই দিছে। তাৰ মাজত ফুটি উঠিছে সংশয়হীন বিশ্বাসৰ পোহৰৰ আভাস।' [৩]

গতিকে একাষাৰে ক'ব পাৰি টাংখুল নগাসকলৰ বিশ্বাস-অবিশ্বাস, ৰীতি-নীতি, ধ্যান-ধাৰণা, প্ৰেম-প্ৰণয় অৰ্থাৎ সমগ্ৰ টাংখুল সমাজখনেই উপন্যাসখনৰ বিষয়বস্তু।

২.০৪ ইয়াৰুইঙ্গম উপন্যাসত প্ৰতিফলিত টাংখুল সমাজৰ চিত্ৰ ঃ

বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্যই এবছৰ টাংখুলসকলৰ মাজত শিক্ষকতা কৰিবলৈ সুবিধা পাইছিল। সেই সময়তে টাংখুল সমাজখনক তেওঁ গভীৰভাৱে অধ্যয়ন কৰিবলৈ সুযোগ পাইছিল। লেখকে নিজেই এইদৰে মন্তব্য দি গৈছে— "টাংখুল নগাবিলাকৰ লগত বাস কৰোঁতে তেওঁলোকৰ বিচিত্ৰ জীৱনৰ ভিতৰ চৰাত সোমাবলৈ যত্ন কৰিছিলো। দৃষ্টিয়ে যিমান দূৰ চাব পাৰে সিমান দূৰলৈকে মানুহবোৰৰ অন্তৰ জগতখন চাবলৈ যত্ন কৰিছিলো।" (বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য ঃ ইয়াৰুইঙ্গম ঃ মোখনী)

ইয়াৰ পৰা বুজিব পাৰি দ্বিতীয় মহাসমৰৰ পাছত থাকি যোৱা যিখন সমাজ সেইখন সমাজহে বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্যই দেখিবলৈ পাইছিল বা উপন্যাসখনত বৰ্ণনা কৰিছে। গতিকে ক'ব পাৰি সেইখন সমাজ ৰাজনৈতিক অস্থিৰতাই গ্ৰাস কৰি থোৱা এখন বিধ্বস্ত সমাজ।

ললিত কুমাৰ বৰুৱাই "সমগ্ৰ টাংখুল নগা সমাজখনেই উপন্যাসখনৰ মূল চৰিত্ৰ" ।(কথা গুৱাহাটীঃ পঞ্চম বৰ্ষ.চতুৰ্থ সংখ্যা, ২০১৩, পৃ-৬) বুলি কৈছে। নগা সমাজৰ সামাজিক জীৱন ধাৰণ প্ৰণালী, ধৰ্মীয় ধ্যান-ধাৰণা, প্ৰেম-প্ৰণয়, লোক-বিশ্বাস আদি সমাজৰ দিশবোৰ বাস্তৱ সন্মতভাৱে উপন্যাসিকে ৰূপায়িত কৰিছে। যেনে—

(ক) দ্বিতীয় বিশ্বযুদ্ধৰ সময়ছোৱাত বহুতো জাপানী সৈন্যই টাংখুল ভূমিও অধিকাৰ কৰি লৈছিল। ফলত টাংখুল নগা সমাজৰ আৰ্থ-সামাজিক, ৰাজনৈতিক, শৈক্ষিক আদি সকলো ক্ষেত্ৰলৈ বিপৰ্যয় নামিছিল। তেওঁলোকে বাসগৃহ এৰি পলাই থাকিব লগীয়া হৈছিল। সেই সময়ত বহুতো টাংখুল যুৱতীক জাপানী সৈন্যই ধৰ্ষণ কৰি টাংখুল সমাজৰ পবিত্ৰতাক পাপলৈ পৰিণত কৰিছিল। তেনেকৈয়ে বহুতো পতিতা নাৰীৰ সৃষ্টি হৈছিল। টাংখুল সমাজত পতিতা নাৰীৰ স্থান একেবাৰে নগণ্য। উপন্যাসখনত চাৰেংলা চৰিত্ৰটোৰ যোগেদি সেই চিত্ৰ ফুটাই তুলিবলৈ যত্ন কৰিছে। তলৰ কথাখিনিৰ মাজত সেয়া স্পষ্টকৈ ফুটি উঠিছে— "হঠাতে তাই কোনোবাই কথা পতা শুনি টিলাটোৰ তললৈ ঘূৰি চাই দেখিলে নাজেক, ঙাঠিঙখুই আৰু ৰিশ্বাঙে তাইলৈ চাই কিবা আলোচনা কৰি আছিল। আজি এবছৰে তাই গাঁৱৰ মানুহৰ মুখ দেখা নাই। সিহঁতে হাবিত ঘৰ কৰি আছে বুলি শুনিছে, কিন্তু কোনো দিনে লগ পাবৰ বাবে তাইৰ অৱসৰ ওলোৱা নাছিল। সিহঁতে তাইক জানো আগৰ দৰে গ্ৰহণ কৰিব? যুদ্ধৰ আগতে তাইক গঞাই গাঁৱত গোলাপ ফুল বুলি জোকাইছিল; আজি তাই মৰহিল, জাপানীয়ে তাইৰ দেহা চুৱা কৰিলে। এই কলঙ্কৰভাগী হৈ তাই আৰু গাঁৱৰ মুকলিমূৰীয়া জীয়ৰী হৈ থাকিব নোৱাৰে। তাই পাপী, তাই কলঙ্কিনী, তাই পতিতা।"(বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য ঃ ইয়াৰুইঙ্গম ঃ পৃ-৬)

(খ) জনজাতীয় সমাজৰ এটা সামাজিক অনুষ্ঠান হ'ল ডেকাচাং। এই ডেকাচাঙত অবিবাহিত পুৰুষসকল থাকিব লাগে বুলি তেওঁলোকৰ কিছুমান অলিখিত নিয়ম আছে। টাংখুল নগাসকলৰ মাজতো ডেকাচাং আছে। আটাইতকৈ গুৰুত্বপূৰ্ণ কথাটো হ'ল নগাসকলৰ বিভিন্ন ফৈদৰ ভিতৰত কেৱল টাংখুল সকলৰ মাজতহে গাভৰু চাং আছিল। উপন্যাসখনতো গাভৰু চাঙৰ প্ৰসংগ উল্লেখ আছে—

"...সেই পশু সৈন্যবোৰৰ কামনাৰ বহ্নিৰ আগত তাৰ আশৈশৱ প্ৰীতিৰ পাত্ৰীজনীক পুৰি ছাই হৈ যাবলৈ সি দিব নোৱাৰে। সি তাইক নি এৰি দিব নোৱাৰে। সি তাইক নি গাভৰু চাঙত ৰাখিবগৈ। "(বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য ঃ ইয়াৰুইঙ্গম ঃ পৃ-৮)

(গ) টাংখুল নগাসকলে নকৰা খেতি নাই বুলিবই পাৰি। আলু, কচু, আদা, ধান আদি সকলোবোৰেই তেওঁলোকে কৰিছিল। কিন্তু জাপানী সৈন্যবোৰে সকলোবোৰ খেতি চপোৱাৰ আগতেই লৈ যায়। কেৱল সিমানেই নহয় টাংখুল যুৱতীসকলক সিহঁতে বেয়া ব্যৱহাৰ কৰিছিল। যাৰ বাবে যুৱকসকলে নিৰাপত্তা দিবলগীয়া হৈছিল। ধৰ্ষিতা হোৱাৰ ভয়ত যুৱতীসকলৰ মন আতংকই বেঢ়ি ৰাখিছিল। উপন্যাসখনত তাৰ ভয়াৱহ বৰ্ণনা এনেদৰে দিয়া হৈছে—

"গাঁৱৰ সকলোৰে ধান একেলগে এটা ভঁৰালত থৈ তাৰপৰা ধান বাটি দিবৰ বাবে গাওঁবুঢ়াৰ গাত ভাৰ দিলে।

যোৱাবাৰ খেতি সম্পূৰ্ণকৈ চপাব নোৱাৰিলে সিহঁতে। সমানে আধা সৈন্যবোৰে কাটি লৈ গ'ল। এতিয়া যিটো ভঁৰাল আছে সেইটোতো সৈন্যবোৰৰ চকু পৰিছিল। কিন্তু তাৰ আগতে জানিবা জাপানীবোৰ গ'লগৈ।"(বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচার্য ঃ ইয়াৰুইঙ্গম ঃ পৃ-১০)

"গাভৰু চাঙত গাভৰুবোৰে বিশেষ সাৱধানে চলিব লগাত পৰিছিল। নিজৰাৰপৰা পানী আনোতে, পথাৰত ধান চপাওঁতে, খৰি আনিবলৈ যাওঁতে, সকলোতে সিহঁতক ডেকাহঁতে পহৰা দিছিল। ধৰ্ষিতা বা পতিতা হোৱা আতংকই সিহঁতৰ মুকলিমূৰীয়া জীৱনক সম্পূৰ্ণৰূপে সংকুচিত কৰি ৰাখিছিল।"(বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচার্য ঃ ইয়াৰুইঙ্গম ঃ পৃ-১০)

(ঘ) খ্ৰীষ্টান ধৰ্মৰ প্ৰচাৰ আৰু প্ৰসাৰে টাংখুল সমাজখনক বৃহৎ পৰিৱৰ্তন সাধন কৰিলে। টাংখুল নগাসকল খ্ৰীষ্টান-অখ্ৰীষ্টান দুটা ভাগত বিভক্ত হ'ল। খ্ৰীষ্টান ধৰ্মৰ প্ৰভাৱত নগা সমাজৰ গা ধন লোৱা প্ৰথা শিথিল হ'ল। খ্ৰীষ্টান ধৰ্ম গ্ৰহণ কৰাৰ পাছত বহুতো টাংখুল ডেকাই অজাতি ছোৱালীও বিয়া কৰাই আনিলে। নাজেকৰ দৰে পুৰণি চামে এই সকলোবোৰ কাললৈ হৈছে বুলি গণ্য কৰে। সেয়ে তেওঁ কৈ উছিছিল—

"বোপাই পাৰোতে মই সদায় কওঁনে যে এই খ্ৰীষ্টান ধৰ্ম আৰু ইংৰাজী শিক্ষা এইবোৰে আমাক ধ্বংস কৰিলে। গাওঁবোৰৰ মানুহবোৰ ভাগ-ভাগ হ'ল।"(বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচার্য ঃ ইয়াৰুইঙ্গম ঃ পৃ-২৬)

(ঙ) টাংখুলসকলে শালি খেতিও যে কৰিছিল তলৰ বাক্যটোৱে ইংগিত দিয়ে—

" ভূই ৰোৱা ছোৱালীবোৰে তেতিয়াও গীত গাই আছিল।"(বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচার্য ঃ ইয়াৰুইঙ্গম ঃ পৃ-২৮)

(চ) ঘৰৰ সন্মুখত টাংখুল সকলৰো চোতাল আছিল। ধান মেলা, খৰি মেলা, মৰণা মৰা, সমূহীয়াভাৱে আলোচনা কৰিবলৈ চোতাল ব্যৱহাৰ কৰা হয়। মানুহৰ ভাগ্যখনকো কেতিয়াবা চোতালৰ লগত তুলনা কৰা হয়। উপন্যাসখনত চোতালৰ প্ৰসংগ এনেদৰে দাঙি ধৰা হৈছে—

"অলপ পৰৰ পিছত বাহিৰৰ চোতালত মানুহবোৰৰ কথা-বতৰা শুনিবলৈ পালে (ৰিশ্বাঙে)। সিহঁত আজি পথাৰলৈ যোৱা নাই নেকি?"(বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচার্য ঃ ইয়াৰুইঙ্গম ঃ পৃ-২৯)

(ছ) সমাজ এখনত ওচৰ চুবুৰীয়াৰ মাজত হাই-কাজিয়া, দ্বন্দ্ব থাকেই। কেতিয়াবা মাৰপিটো হয়। টাংখুল সকলৰ মাজতো মাটি-বাৰী এইবোৰক লৈ যে কাজিয়া হয় ফানিটফাঙে ৰিশ্বাঙক কোৱা এই কথাখিনিয়ে প্ৰমাণ দিয়ে—

"তোৰ দেউতাৰৰ সৈতে ঙাঠিঙখুইৰ বহুত দিনৰ কাজিয়া। মাটি এটুকুৰা লৈ দুয়ো ঘৰৰ মাজত প্ৰবল কাজিয়া হৈছিল। মাটিতে বোলে দুই গোষ্ঠীৰ মাজত মাৰ পিটো হৈছিল। তোৰ দেউতাৰৰ গাত এটা যাঠিৰ খোচো লাগিছিল।"(বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচার্য ঃ ইয়াৰুইঙ্গম ঃ পৃ-৩৫)

(জ) অন্ধবিশ্বাস লোক সমাজৰ এক গুৰুত্বপূৰ্ণ উপাদান। এই অন্ধবিশ্বাস লোকসমাজত প্ৰাচীন কালৰেপৰা চলি আহিছে। টাংখুলসকলেও লোকবিশ্বাসক মানে। উপন্যাসখনত সু-স্পষ্ট বৰ্ণনা আছে। বসন্ত ৰোগত ছিটা ল'ব লাগে বুলি বাৰম্বাৰ কোৱাৰ পাছতো নাজেকৰ দৰে ব্যক্তিয়ে বিশ্বাসেই নকৰে। বৰঞ্চ খংহে কৰিছিল। এটা উদাহৰণ হ'ল—" তেন্তে যি কৰ কৰ তহঁতে; মই মেলত ভাগ নলওঁ।" (বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচার্য ঃ ইয়াৰুইঙ্গম ঃ পৃ-৩৯)

(ঝ) অবৈধ প্ৰেম সকলো সমাজতে নিয়মৰ বৰ্হিভূত। টাংখুল সকলৰ মাজতো অবৈধ প্ৰেমৰ বাধা আছে। খাটিংলাৰ লগত গোপনে দৈহিক সম্পৰ্ক গঢ়ি তোলাৰ পাছত ৰিশ্বাঙে অনুতাপ কৰিছিল এনেদৰে—"যেতিয়া মানুহে গম পাব এই অবৈধ প্ৰেমৰ কাহিনী, তেতিয়া তাক সমাজে কৈফিয়ৎ তলব কৰিব। তাৰ সু-নামো নষ্ট হ'ব।"(বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচার্য ঃ ইয়াৰুইঙ্গম ঃ পৃ-৪৬)

(ঞ) ঔপন্যাসিকে নাজেকৰ জৰিয়তে টাংখুল নগাৰ দৈহিক বৰ্ণনা এনেদৰে দিছে—

" তাৰ (ৰিশ্বাং) চেহেৰাটো দৈত্যৰ দৰে। চুলিকোচা খাইলাখ টাংখুল নগা দৰে কটা। পিচফালৰ টিকনীডাল পৰা, কানৰ ওপৰলৈ ভালেমান ঠাই চুলি চাটি থোৱা আছে। কানৰ বিন্ধাৰ জৰা দুটা ডাঙৰ পিতলৰ আঙুঠি ওলমি পৰিছে। চুলিবোৰ ডাঠ, চুটি আৰু ওখ। ডিঙিত এধাৰ মুণ্ডমালা।" (বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচার্য ঃ ইয়াৰুইঙ্গম ঃ পৃ-৫১,৫২)

(ট) টাংখুল নগা সমাজত প্ৰচলিত মৃত্যু আৰু শৱ দেহ সৎকাৰৰ নীতি-নিয়মো সুকীয়া। তেওঁলোকে বিশ্বাস কৰে ছিৰই পৰ্বতৰ নামনিয়েদি মৃতকৰ ভূতটো গৈ কাজাইৰাম বা স্বৰ্গ পায়গৈ। ৰাইজক ৰৰভোজ এটা নিদিয়ালৈকে মৃতকৰ ভূতটো গাঁৱতে থাকে বুলি সিহঁতে বিশ্বাস কৰে। মৃতকৰ হৈ কৰৰত মদ-মাংস দিয়াটো আক নিয়ম। নাজেকে মৃত্যু আগতে কোৱা কথাখিনিয়ে তাৰ এক আভাস দিয়ে। নাজেকে কৈছিল—"কাথি কাচাম ভোজৰ দিনলৈকে মই তহঁতৰ লগতে থাকিম। সেই দিনলৈকে যেন মোক তহঁতে অশান্তি নিদিয়।" (বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচার্য ঃ ইয়াৰুইঙ্গম ঃ পৃ-৭২)

(ঠ) নগা সমাজত এসময়ত নৰমুণ্ড চিকাৰ প্ৰথা আছিল। টাংখুল সকলৰ মাজতো এটা সময়ত আছিল বুলি উপন্যাসখনৰ বিষয়বস্তুৰ বৰ্ণনাই কয়। যেনে—"লাহে-লাহে সি(ভিডিচেলী) মন কৰিলে, কাষৰ নাজেকৰ ঘৰটোৰ মুখৰ বেৰখনত কিছুমান মৰা মানুহৰ মূৰ জিলিকি আছে। মনে মনে মূৰ কেইটা গণি সি মুখেৰে অস্ফুট ভাবেৰে ক'লে, 'বাইশটা'।"(বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য ঃ ইয়াৰুইঙ্গম ঃ পৃ-৯১,৯২)

তদুপৰি উপন্যাসখনৰ মাজত টাংখুল সমাজৰ আৰু বহুতো ৰীতি-নীতি, উৎসৱ-পাৰ্ৱণ, বিভিন্ন ধৰ্মীয় বিশ্বাস (মৃতকৰ শ্ৰাদ্ধত ম'হ বলি দিয়ে), ভূত-প্ৰেত আদি বহুতো দিশ উপন্যাসখনৰ মাজেদি প্ৰকাশিত হৈছে। ৰিশ্বাং, জীৱন মাষ্টৰ দৰে চৰিত্ৰৰ যোগেদি এখন পোহৰৰ সমাজ গঢ়ি উঠাৰ সম্ভাৱনাৰ ইংগিত দিছে।

এনেদৰেই টাংখুল সমাজৰ বিভিন্ন দিশ কম বেছি পৰিমাণে উপন্যাসখনৰ মাজত ৰক্ষিত হৈছে।

৩.০০ উপসংহাৰ ঃ

বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য কেৱল অসমৰে নহয়; ভাৰতৰে এগৰাকী প্ৰথম শ্ৰেণীৰ সাহিত্যিক। তাৰ উৎকৃষ্ট নিদৰ্শন হিচাপে ইয়াৰুইঙ্গম উপন্যাসৰ নাম ল'ব পাৰি। জনজাতীয় বিশেষ এখন সমাজক কাহিনীৰ মাজেৰে বৰ্ণনা কৰাত ঔপন্যাসিকগৰাকী সফল হৈছে। 'ইয়াৰুইঙ্গম উপন্যাসত প্ৰতিফলিত টাংখুল সমাজৰ চিত্ৰ ঃ এক অধ্যয়ন'বিষয়টি আলোচনাৰ অন্তত বিশেষ কিছুমান সিদ্ধান্তত উপনীত হ'ব পাৰি।

যেনে—

(ক) যুদ্ধই জুৰুলা কৰা টাংখুল সকলৰ ক্ষুভ আৰু হতাশা নিৰ্মোহভাৱে অংকন কৰিছে ঔপন্যাসিকে।

(খ) দ্বিতীয় মহাযুদ্ধৰ শেষৰছোৱা আৰু ভাৰতবৰ্ষই স্বাধীনতা লাভ কৰাৰ প্ৰথমছোৱাৰ কেইটামান বছৰৰ টাংখুল সমাজখন ইয়াত বৰ্ণনা কৰা হৈছে।

(গ) যদিও বহুতো চৰিত্ৰৰ সমাৱেশ ঘটিছে তথাপি টাংখুল নগা সমাজখনকহৈ উপন্যাসৰ মূল চৰিত্ৰ বুলি আখ্যা দিব পাৰি

(ঘ) উপন্যাখনৰ চৰিত্ৰবোৰ কাল্পনিক অথচ বাস্তৱ সমাজৰ বিভিন্ন চৰিত্ৰৰ একো একোটা প্ৰতিভূ।

(ঙ) যদিও টাংখুল সমাজখনক কেন্দ্ৰ কৰি উপন্যাসখন লিখিছে তাৰ মাজেদি বিশ্বমানৱৰ সমাজখনহে অংকিত হৈছে।

(চ) গাভৰুচাং টাংখুল সকলৰ অন্যতম একক বিশেষত্ব। এনেধৰণৰ অনেক বিশেষত্বৰে ইয়াৰুইঙ্গম এখন শ্ৰেষ্ঠ উপন্যাস। ❑

প্ৰসংগসূত্ৰ ঃ

১. গোহাঁই, হীৰেন। "ইয়াৰুইঙ্গম' সম্পৰ্কে দুআষাৰ"। কথা গুৱাহাটী। (সম্পাঃ) শোণিত বিজয় দাস। পঞ্চম বৰ্ষ, চতুৰ্থ সংখ্যা (২০১৩) ঃ পৃ.৫।
২. উপৰুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৫
৩. উপৰুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.১২

গ্ৰন্থপঞ্জীঃ

মুখ্য উৎসঃ

ভট্টাচাৰ্য, বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ। ইয়াৰুইঙ্গম। লয়াৰ্ছ বুক ষ্টল। গুৱাহাটীঃ সপ্তম প্ৰকাশ, ১৯৯৮। মুদ্ৰিত।

গৌণ উৎসঃ

খাওন্দ, মলয়া। ড° বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য আৰু তেওঁৰ উপন্যাস। সাহিত্য প্ৰকাশ। ট্ৰিবিউন বিল্ডিংছ। গুৱাহাটী ঃ প্ৰথম প্ৰকাশ, ১৯৯৬। মুদ্ৰিত।
ঠাকুৰ, নগেন (সম্পা.)। এশ বছৰৰ অসমীয়া উপন্যাস। জ্যোতি প্ৰকাশন। গুৱাহাটী ঃ পুনৰ মুদ্ৰণ, ২০১৮। মুদ্ৰিত।
নেওগ, মহেশ্বৰ। অসমীয়া সাহিত্যৰ ৰূপৰেখা। চন্দ্ৰ প্ৰকাশ। গুৱাহাটী-১, ২০১০। মুদ্ৰিত।
বৰপূজাৰী, জিতাঞ্জলি। অসমীয়া উপন্যাসত জনজাতীয় জীৱন। চন্দ্ৰ প্ৰকাশ। গুৱাহাটীঃ ১। প্ৰথম প্ৰকাশ, ১৯৯৯। মুদ্ৰিত।
ভট্টাচাৰ্য, প্ৰমোদ। অসমৰ জনজাতি। কিৰণ প্ৰকাশন। ধেমাজিঃ তৃতীয় সংস্কৰণ, ২০০৮। মুদ্ৰিত।
শইকীয়া, নগেন। গৱেষণা পদ্ধতি পৰিচয়। কৌস্তুভ প্ৰকাশন। ডিব্ৰুগড়ঃ ১৯৯৬। মুদ্ৰিত।
শৰ্মা, গোৱিন্দ প্ৰসাদ। বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য ঃ ঔপন্যাসিক। বনলতা। গুৱাহাটী ঃ ১, ২০১৪। মুদ্ৰিত।

আলোচনীঃ

দাস, শোণিত বিজয়। কথা গুৱাহাটী ঃ পঞ্চম বৰ্ষ, চতুৰ্থ সংখ্যা। ছেপ্তেম্বৰ-অক্টোবৰ, ২০১৩। মুদ্ৰিত।

অন্যান্যঃ

Jadabendra.blogspot.com
https://as.m.wikipedia.org

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

মিচিং জনজাতিৰ পৰম্পৰাগত বাসস্থান ঃ এটি অধ্যয়ন

মৃগাক্ষী বৰা

স্নাতকোত্তৰ, অসমীয়া বিভাগ
কটন বিশ্ববিদ্যালয়
ঠিকনা ঃ বিশ্বনাথ জিলা, গহপুৰ
পিন- ৭৮৪১৭৮
৯৩৯৪৭১১৭১৩
mrigakhiborah365@gmail.com

সংক্ষিপ্ত-সাৰ ঃ

আদিম কালত মানুহৰ কোনো স্থায়ী বাসস্থান নাছিল, গাত কাপোৰ পিন্ধা নাছিল। অৰণ্যৰ মাজত থাকি প্ৰকৃতিৰ পৰাই ফল-মূল সংগ্ৰহ কৰি আৰু চিকাৰ কৰি খাদ্য সংগ্ৰহ কৰিছিল। এঠাইৰ পৰা আন ঠাইলৈ ঘূৰি গুহাত বাস কৰি তেওঁলোকে জীৱন নিৰ্বাহ কৰিছিল। কিন্তু কালক্ৰমত মানুহে কৃষিকাৰ্য কৰিবলৈ ল'লে যাৰ ফলত স্থায়ী বসবাস কৰিবলৈ লয়। এঠাইৰ পৰা আন ঠাইলৈ ঘূৰি নুফুৰি ঘৰ-দুৱাৰ সাজি বসবাস কৰিবলৈ আৰম্ভ কৰিলে। কোনো এটা জাতিৰ সমাজ- সংস্কৃতিৰ লগত বাসস্থান নিবিড়ভাবে জড়িত হৈ থাকে। কিয়নো এটা জাতিৰ বসবাস প্ৰণালী ভৌগোলিক পৰিৱেশ আদিয়ে জাতিৰ সংস্কৃতি নিৰ্মাণত এক বিশেষ ভূমিকা পালন কৰে। ভাৰতবৰ্ষৰ উত্তৰ-পূৱ দিশত অৱস্থিত অসম আৰু অৰুণাচল প্ৰদেশৰ কেইখনমান ঠাইত অতীতৰে পৰা বসবাস কৰি অহা জনগোষ্ঠী সমূহৰ ভিতৰত মিচিংসকল অন্যতম। শ শ বছৰৰ পূৰ্বে মিচিংসকলে পৰ্বত-পাহাৰতে বসবাস কৰিছিল। পাহাৰত পোৱা না না সা-সৰঞ্জামে চাংঘৰ নিৰ্মাণ কৰিছিল। পিছতহে বিভিন্ন কাৰণত তেওঁলোকে ভৈয়ামৰ নদী কাষৰীয়া ঠাইলৈ আহি নদীৰ পাৰত ওখ ওখ চাংঘৰ সাজি তাতে বসবাস কৰিবলৈ লয়। তেতিয়াৰে পৰাই নৈৰ পাৰেই হ'ল মিচিংসকলৰ পৰম্পৰাগত বাসস্থান।

মিচিং জনগোষ্ঠীৰ সমাজ-সংস্কৃতিৰ বিভিন্ন বিষয়লৈ বিভিন্ন পণ্ডিত, সমালোচক, গৱেষকে সময়ে সময়ে বিভিন্ন ধৰণৰ আলোচনা আগবঢ়াইছে। কিন্তু বাসস্থান সম্পৰ্কীয় আলোচনা তেনেই তাকৰ। তদুপৰি আলোচনা সমূহ বিস্তৃতও নহয়। সেয়েহে 'মিচিং জনগোষ্ঠীৰ পৰম্পৰাগত বাসস্থান ঃ এটি অধ্যয়ন' আলোচনা পত্ৰখনৰ জৰিয়তে মিচিং জনগোষ্ঠীৰ পৰম্পৰাগত বাসস্থান সম্পৰ্কীয় বিচাৰ বিশ্লেষণত কিঞ্চিত সহায়ক হ'ব বুলি আমাৰ আশা থাকিল।

বীজ শব্দ ঃ

জনজাতি, বাসস্থান, ঘৰদুৱাৰ

অৱতৰণিকা ঃ

ইতিহাসে ঢুকি নোপোৱা কালৰে পৰাই সুজলা-সুফলা এইখন উত্তৰ পূৰ্বাঞ্চললৈ প্ৰব্ৰজনৰ সোঁত বৈ আহিছে। ইয়াৰে বহুসংখ্যকে ইয়াত স্থায়ীভাবে বসতি কৰিছে আৰু কোনোৱে তেওঁলোকৰ চিহ্ন ৰাখি আঁতৰি গৈছে । এনে না না জাতি-জনজাতিৰে ভৰা এইখন সোণৰ অসমৰ এটা উল্লেখযোগ্য জনগোষ্ঠী হ'ল 'মিচিং'সকল। নৃতাত্ত্বিক বিচাৰত

মিচিংসকল মংগোলীয় গোষ্ঠীৰ আৰু ভাষাতাত্ত্বিক বিচাৰত চীন তিব্বতীয় ভাষা গোষ্ঠীৰ তিব্বত বর্মীয় শাখাৰ উত্তৰ অসমবর্মী শাখাৰ অর্ন্তগত। বিভিন্ন গৱেষকসকলে ঠাৱৰ কৰা মতে চীন দেশৰ দক্ষিণ-পূৱ অঞ্চলৰ পৰাই ভাৰতলৈ মিচিংসকলৰ আগমন ঘটে।

মিচিংসকলৰ আদিম বাসস্থান আছিল আবৰ পাহাৰ (বর্তমান আৰুণাচল প্রদেশৰ অন্তর্ভূক্ত)। তাৰ পৰাই তেওঁলোক সমতল ভূমিলৈ নামি আহি ব্রহ্মপুত্রৰ উত্তৰ পাৰত সোৱণশিৰিৰ পাৰে পাৰে বসবাস কৰিবলৈ আৰম্ভ কৰিছিল। তাৰ পিছত লাহে লাহে শদিয়াৰ পৰা ধনশিৰিলৈ সিচঁৰিত হৈ পৰিছিল। নদীৰ লগত তেওঁলোকৰ সম্পর্ক এৰাব নোৱাৰা সম্পর্ক। সেয়ে তেওঁলোকৰ বাসস্থানো নৈৰ পাৰে-পাৰে। ঘৰ-দুৱাৰ, সাজ-পাৰ, আ-লংকাৰ, বয়নশিল্প, খাদ্যভাস, লোককলা, ভাষা, উৎসৱ- অনুষ্ঠান আদি চহকী ঐতিহ্যৰে সমৃদ্ধ মিচিং জনজাতিৰ বাসস্থান, চাংঘৰ নির্মাণ, নৈৰ পাৰত বসবাস কৰাৰ কাৰণ আদিবোৰ আলোচনাৰ বিষয়বস্তু হিচাপে লোৱা হৈছে।

অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

সাংস্কৃতিক বৈশিষ্ট্যবোৰে জাতি অথবা জনজাতিৰ সৌন্দর্য্যবোধ, শিল্প চেতনা, ভাৱ-অনুভূতি, ঐতিহ্য আদিৰ দৃশ্যমান ৰূপ প্রকাশ কৰে। অধ্যয়নটিত সমগ্র মিচিং সংস্কৃতিক আধাৰ হিচাপে লৈ মিচিং জনগোষ্ঠীৰ পৰিচয়, ঐতিহ্য, তেওঁলোকৰ পৰম্পৰাগত বাসস্থান, ঘৰ-দুৱাৰ সম্পর্কে আলোচনা দাঙি ধৰা হৈছে। প্রস্তাৱিত আলোচনা কর্মটিৰ উদ্দেশ্য হ'ল --

বর্ণাঢ্য সংস্কৃতিৰ অধিকাৰী মিচিংসকলৰ পৰম্পৰাগত বাসস্থান, ঘৰ-দুৱাৰ আদি আলোচনাৰ জৰিয়তে মিচিংসকলৰ শিল্পচেতনা, সৌন্দর্য্যবোধ আৰু জীৱন-ধাৰণৰ সম্পর্কে জানিব পাৰোঁ ।

মিচিংসকল কেতিয়াৰ পৰা আহি কেনেদৰে নদীকূলত বাস কৰিবলৈ লয় আৰু বর্তমান মিচিংসকল বিশেষভাৱে

বর্ণাঢ্য সংস্কৃতিৰ অধিকাৰী মিচিংসকলৰ পৰম্পৰাগত বাসস্থান, ঘৰ-দুৱাৰ আদি আলোচনাৰ জৰিয়তে মিচিংসকলৰ শিল্পচেতনা, সৌন্দর্য্যবোধ আৰু জীৱন-ধাৰণৰ সম্পর্কে জানিব পাৰোঁ ।

মিচিংসকল কেতিয়াৰ পৰা আহি কেনেদৰে নদীকূলত বাস কৰিবলৈ লয় আৰু বর্তমান মিচিংসকল বিশেষভাৱে ক'ত ক'ত সিঁচৰিত হৈ আছে, তাৰ বিষয়ে বিশেষ তথ্য একো পোৱা নাযায়। গতিকে ক্ষেত্র অধ্যয়নৰ জৰিয়তে এই সম্পর্কে তথ্য দাঙি ধৰাই গৱেষণাৰ মূল উদ্দেশ্য।

মিচিং জনজাতি বাসস্থানৰ লগত জড়িত চাংঘৰৰ বিভিন্ন দিশ বিচাৰ-বিশ্লেষণ কৰা।

অধ্যয়ন পদ্ধতি ঃ

'মিচিং জনজাতিৰ পৰম্পৰাগত বাসস্থান ঃ এটি অধ্যয়ন' শীর্ষক আলোচনাটিৰ ক্ষেত্রত ঘাইকৈ অৱলম্বন কৰা পদ্ধতি সমূহ হ'ল-

(ক) বর্ণনাত্মক পদ্ধতি (Descriptive Method)

(খ) বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি (Analitical Method)

বর্ণনাত্মক পদ্ধতিৰে অধ্যয়ন কৰোঁতে ভাষাটোৰ বর্তমান কথিত ৰূপত প্রচলন হৈ থকা ৰূপটো সামৰি লোৱা হৈছে।

উক্ত আলোচনাটিৰ ক্ষেত্রত ক্ষেত্রঅধ্যয়নৰ দ্বাৰা আহৰণ কৰা তথ্য সমূহ বিশেষ ভাৱে আলোচনা আগবঢ়োৱা হৈছে। এই ক্ষেত্রত সঙ্গীহৃত তথ্য সমূহৰ বিচাৰ বিশ্লেষণ কৰি বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰে সিদ্ধান্ত আগবঢ়োৱা হৈছে।

এই গৱেষণা বিষয়টোৰ বিষয়বস্তুৰ লগত সংগতি ৰাখি তাৰ লগত জড়িত বিভিন্ন আলোচনা প্রবন্ধৰ সহায় লোৱা হৈছে। কিন্তু গৱেষণা কার্য্যটিৰ ক্ষেত্রত মুখ্যত ক্ষেত্রভিত্তিক অধ্যয়নৰ জৰিয়তে সমল সংগ্রহ কৰি বিজ্ঞানসম্মত অধ্যয়নেৰে আলোচনা প্রস্তুত কৰা হৈছে।

মিচিং জনজাতিৰ চমু পৰিচয় ঃ

বাৰেৱহণনীয়া কলা কৃষ্টি-সংস্কৃতিৰে সমৃদ্ধ মিচিংসকল আর্যভিন্ন জনগোষ্ঠীসমূহৰ ভিতৰত অন্যতম। অসমৰ ভূমিপুত্র মিচিংসকল নৈপৰীয়া জনজাতি হিচাপে পৰিচিত। জনসংখ্যাৰ ফালৰ পৰা মিচিংসকল অসমৰ দ্বিতীয় বৃহৎ জনগোষ্ঠী। মিচিং জনগোষ্ঠীৰ লোকসকলৰ শৰীৰ গঠন হটঙা আৰু পাহোৱাল, ভৰিৰ কলাফুল নোদোকা, মখমণ্ডল বহল, নাক চুটি আৰু চকু উখহা আৰু সৰু সৰু, গা ৰ বৰণ পীত বৰণ, চুলিবোৰ ঠিয়। মিচিংসকলে নিজকে সাধাৰণতে মিচিং বুলিয়েই পৰিচয় দিয়ে। বিশেষকৈ ভৈয়ামৰ মিচিংসকলে নিজকে কোনোপধ্যেই মিৰি বুলি পৰিচয় নিদিয়ে। তৰুণচন্দ্র পামেগামৰ মতে, 'মি' ৰ অর্থ হ'ল মানুহ আৰু 'চিং' ৰ অর্থ ভাল বা বগা। গতিকে মিচিং শব্দৰ অর্থ হ'ল 'আমি ভাল মানুহ' বা 'বগা মানুহ' । যিহেতু নিজকে শ্রেষ্ঠ বুলি ভবাটো সকলোৰে এটা স্বভাৱ। সেয়ে শান্ত আৰু সহজ- সৰল মিচিংসকলেও নিজকে ভাল মানুহ বুলি পৰিচয় দিছিল। কিন্তু আমাৰ দুয়োজন গুৰুৱে মিচিং জনগোষ্ঠীটোক বুজাবলৈ মিৰি শব্দৰহে ব্যৱহাৰ কৰিছিল। ইয়াৰ উপৰি আহোম বুৰঞ্জী, অসম

বুৰঞ্জী, দৰং ৰাজবংশাৱলী, অসমীয়া মন্ত্ৰ সাহিত্য, ডাকৰ বচন আদিতো মিৰি শব্দৰ উল্লেখ আছে। আনকি ভাৰতবৰ্ষৰ সংবিধানৰ ষষ্ঠ অনুচ্ছেদৰ জনজাতিৰ তালিকাত মিচিংসকলক 'মিৰি' বুলিহে সন্নিবিষ্ট কৰা আছে ।

মিচিংসকলৰ ঐতিহাসিক পটভূমি ধূসৰ কিয়নো তেওঁলোকৰ নিজা কোনো লিখিত বুৰঞ্জী নাই। মিচিংসকলৰ পূৰ্ব্ব বাসস্থান সম্পৰ্কে বিভিন্ন পণ্ডিতে মত প্ৰকাশ কৰি আহিছে। "মিচিংসকলে নিজকে 'কিঃলৃং কাংগী' (স্বৰ্গৰ দৰে এখন ঠাই বুলি বহুতে কয় যদিও বৰ্তমান অৰুণাচল প্ৰদেশস্থ কৰ্বক' অঞ্চল)ৰ পৰা সোণ ৰূপৰ জখলাৰে নামি অহা বুলি ভাবে। সোণ ৰূপৰ জখলাৰ নাম যথাক্ৰমে মাঃয়িং আৰু ' মাংকং' আছিল বুলি কয় । সম্ভৱতঃ পাহাৰৰ ওখ টিলাৰ পৰা সোণ বৰণীয়া আৰু ৰূপৰ বৰণৰ দুডাল লতাৰ সহায়ত তেওঁলোকে ভৈয়ামলৈ নামি আহিছিল।"[১] মিচিংসকলৰ প্ৰবজনৰ সময় সম্পৰ্কতো কোনো সঠিক তথ্য পাবলৈ নাই ।

আমেৰিকাৰ সমাজশাস্ত্ৰবিদ ড° ডব্লিউ চি. স্মিথৰ গ্ৰন্থ (Ao Naga Tribes of Assam : A study in Ethmology and Sociology (London, 1925)) ত উল্লেখিত তিৰ্ব্বতবৰ্মীয় ভাষা-ভাষী জনগোষ্ঠীসমূহৰ ১৩টা সাংস্কৃতিক বৈশিষ্ট্যৰ কথা ড° সুনীতি কুমাৰ চট্টোপাধ্যায়ে তেখেতৰ Kiratata Jana-Kriti: The Indo-Mongoloids : Their Contribution to the History and Culture of India, (1974, P.57) নামৰ গ্ৰন্থত আঙুলিয়াইছে। সেইবোৰৰ ভিতৰত সাতোটা বৈশিষ্ট্য প্ৰাচীন মিচিং সমাজত পোৱা যায়। সেইবোৰ হৈছে

১। অবিবাহিত যুৱকৰ বাবে উমৈহতীয়া শোৱনিঘৰ (মিচিং সমাজত যুৱক-যুৱতী উভয়ৰ বাবে উমৈহতীয়া শোৱনিঘৰ আছিল)।
২। চাংঘৰ
৩। প্ৰাক-বৈবাহিক যৌনতাৰ স্বাধীনতা
৪। আহাৰ হিচাপে গাখীৰৰ প্ৰতি বিতৃষ্ণা
৫। শক্তিশালী ৰাজনৈতিক সংগঠনৰ অভাৱ
৬। সহজ তাঁতশালৰ প্ৰচলন
৭। আদিম পদ্ধতিত কৃষিকাৰ্য সম্পাদন

মিচিংসমাজ সাধাৰণতে এঘাৰটা খেল বা ফৈদত বিভক্ত। সেইয়া হৈছে - পাগৰ, চাঃয়াং বা চায়েঙ্গীয়া, চামগুৰীয়া, মঃয়িং বা ময়েঙ্গীয়া, দাম্বুগ, দৌলু, অয়ান, তেমাৰ বা তামাৰ, বংকোৱাল, বিহিয়া, বেবেজিয়া । ইয়াৰে চামগুৰীয়া, বিহিয়া, বংকোৱাল, বেবেজিয়া আৰু তেমাৰ বা তামাৰ লোকসকলক একেটা খেলৰ বুলি ক'ব পাৰি কিয়নো এওঁলোকে বিশেষ্যপদ, সম্বন্ধবাচক শব্দকে ধৰি কিছুমান ধাতুৰ ব্যৱহাৰৰ বাহিৰে অসমীয়া ভাষাকেই দৈনন্দিন জীৱনত ব্যৱহাৰ কৰে ।

মিচিং সংস্কৃতিত বিভিন্ন শিল্পকলা আৰু কুটীৰ শিল্পৰ প্ৰচলন হৈ আহিছে। কুটীৰ শিল্পৰ ভিতৰত বয়নশিল্পই হ'ল মিচিংসকলৰ অতিকৈ প্ৰয়োজনীয় শিল্প। বয়নশিল্পত মিচিংসকল অতি চহকী । অতি কম বয়সৰ পৰাই মিচিং ছোৱালীয়ে কাপোৰ বোৱাৰ অভ্যাস কৰে। কৃষিজীৱি মিচিংসকলৰ বিভিন্ন উৎসৱ-পাৰ্বনৰ ভিতৰত আলি-আই লৃগাং, দৱৰ পূজা, পঃৰাগ, আঃমৰাগ আদিবোৰ অন্যতম।

ধৰ্মৰ ক্ষেত্ৰত চাবলৈ গ'লে মিচিংসকল 'দঃঞিঃ-পল' অৰ্থাৎ চন্দ্ৰ-সূৰ্য্যক ভগৱান হিচাবে বিশ্বাস কৰে। চন্দ্ৰ-সূৰ্য্যকে সাক্ষী কৰি মিচিংসকলে তেওঁলোকৰ সকলো ধৰ্মীয় কাৰ্য সম্পন্ন কৰে। চন্দ্ৰ -সূৰ্য্যক মিচিংসকলে অতীজৰে পৰা তেওঁলোকৰ পিতৃ-মাতৃ হিচাপে বিশ্বাস কৰি আহিছে।

মিচিংসকলৰ ভৌগোলিক অৱস্থান আৰু জনসংখ্যা ঃ

নদীৰ লগত আজন্ম সম্বন্ধ থকা মিচিংসকলে পৰ্বতৰ পৰা অসমৰ সমতল ভূমিলৈ নামি আহি বিশেষকৈ ব্ৰহ্মপুত্ৰৰ উত্তৰ পা�ৰত বসতি স্থাপন কৰিছিল। তাৰ পিছত তেওঁলোকৰ জনসংখ্যা ব্ৰহ্মপুত্ৰৰ দুয়োপাৰে বিয়পি পৰে। এনেদৰে বহু বছৰৰ পিছতো সাম্প্ৰতিক কালতো মিচিংসকল উজনি অসমতে বসবাস কৰি আহিছে । আজি-কালি অৱশ্যে চাকৰি, ব্যৱসায় বা অন্য কাৰণবশতঃ মিচিংলোকে অসমৰ প্ৰতিখন প্ৰধান নগৰ মহানগৰত বসবাস কৰিছে।

অসমৰ শদিয়াৰ পৰা শোণিতপুৰৰ ভৰলীলৈকে একোটা বৃহৎ অঞ্চল সামৰি মিচিংসকলে অতীতৰে পৰা বসবাস কৰি অহাৰ কথা তেওঁলোকৰ মিচিং লোকগীত সমূহতো উল্লেখ আছে এনেদৰে-

'অদিয়া তলক্‌কী বুৰুলি অই বলপী
মিচিং অইয়া ৰীঙমী দুপিদচুলা দুবনী।

ভাবাৰ্থ ঃ শদিয়াৰ পৰা আৰম্ভ কৰি ভৰলী নদীলৈকে মিচিংসকল বিস্তৃত হৈ আছে।'[২]

' অসমৰ শেহতীয়া ভৌগোলিক মানচিত্ৰ আৰু প্ৰশাসনীয় জিলা অনুসৰি মিচিংসকলৰ প্ৰধান বাসভূমি হিচাপে এঘাৰখন জিলাৰ নাম উল্লেখ কৰিব পাৰি। সেই কেইখন হ'ল - তিনিচুকীয়া, ডিব্ৰুগড়, শিৱসাগৰ, চৰাইদেউ, যোৰহাট, গোলাঘাট, শোণিতপুৰ, বিশ্বনাথ, লখিমপুৰ, মাজুলী আৰু

ধেমাজি। এই জিলাকেইখনৰ ভিতৰত ধেমাজি জিলাতেই মিচিং জনসংখ্যাৰ শতকৰা হাৰ সৰ্বাধিক আৰু বসতিও ঘন। ২০১১ চনৰ লোক প্ৰতিবেদন অনুসৰি অসমত মিচিং জনসংখ্যা ৬,৮৭,৮৩৬ ।[৩]

ভাৰতীয় সংবিধানৰ ভৈয়াম অনুসূচীত জনজাতিৰ তালিকাত বড়ো-কছাৰীসকলৰ পিছতেই মিচিংসকল দ্বিতীয় বৃহত্তম জাতি। বৰ্তমান মিচিং জনগোষ্ঠীৰ জনসংখ্যা ১২ লাখৰো অধিক।

মিচিং জনজাতিৰ পৰম্পৰাগত বাসস্থান ঃ

প্ৰবজনৰ লগত মানৱ জীৱনৰ ঘনিষ্ঠ সম্পৰ্ক আছে। যুগে যুগে প্ৰবজনে মানৱ সভ্যতাৰ ওপৰত বিভিন্ন ধৰণে স্বাক্ষৰ ৰাখি থৈ ছে। কোনো একোটা জাতিয়ে পূৰ্বতে কোনো এখন ঠাইত বসবাস কৰে আৰু বিভিন্ন কাৰণত বেলেগ বেলেগ স্থানলৈ প্ৰবজন কৰাৰ প্ৰমাণ পোৱা যায়। মিচিং জনজাতিও ইয়াৰ ব্যতিক্ৰম নহয়। বিভিন্ন গৱেষক সকলে ঠাৱৰ কৰা অনুসৰি চীন দেশৰ দক্ষিণ-পূৱ অঞ্চলৰ পৰা ভাৰতবৰ্ষলৈ মিচিংসকলৰ আগমন ঘটিছিল।

মিচিংসকলৰ আদিম বাসস্থান আছিল অসমৰ উত্তৰ-পূৱত থকা আবৰ পাহাৰ । তাৰ পৰাই পিছত ভৈয়ামলৈ নামি আহি লাহে লাহে সমগ্ৰ উজনি অসমতে বিয়পি পৰে। এনেদৰে লুইতৰ দুয়োপাৰে ক্ষেত্ৰান্তৰী পদ্ধতিত খেতি কৰি উজনি অসমতে কেন্দ্ৰীভূত হৈ বাস কৰিবলৈ লয়।

নদীৰ ওপৰতে নিৰ্ভৰশীল, নদীকেই আশ্ৰয় হিচাপে লোৱা মিচিংসকল সাধাৰণতে জনসমাগমৰ পৰা দূৰৈত নৈৰ পাৰৰ চৰ-চাপৰিতে বাস কৰি ভাল পায়। এওঁলোক নদীৰ পৰা কেতিয়াও বিচ্ছিন্ন নহয়। বিশাল ব্ৰহ্মপুত্ৰ আৰু ইয়াৰ নদী, উপ-নদী যেনে- দিখৌ, দিচাং, জাঁজী, বুঢ়ী দিহিং, ডিব্ৰু, সোৱণশিৰি, ৰঙানদী, ডিক্ৰং, ভৰলী, জীয়া ধনশিৰি, চেঁচা, পিচলা, লোহিত, টুনী, জীয়াঢল, খেৰকটা, লাইকা, চাৰিকড়িয়া, শিঙৰা আদিৰ পাৰে পাৰে গঢ় লৈ উঠা মিচিং গাওঁবোৰ অসমৰ সাংস্কৃতিক আৰু সমাজ জীৱনৰ এৰাব নোৱাৰা অংশ ।

যি কি নহওক, বৰ্তমান মিচিং লোকসকল চাকৰি, ব্যৱসায় বা আন কাৰণবশতঃ অসমৰ প্ৰায় সকলো জিলাৰ চহৰত বসবাস কৰিব লৈছে যদিও শেহতীয়া ভৌগোলিক মানচিত্ৰ অনুসৰি মিচিং জনজাতিৰ প্ৰধান বাসভূমি হিচাপে তিনিচুকীয়া, ডিব্ৰুগড়, শিৱসাগৰ, ধেমাজি, চৰাইদেউ, যোৰহাট, গোলাঘাট, শোণিতপুৰ, বিশ্বনাথ, লখিমপুৰ আৰু মাজুলী এই এঘাৰখন জিলাক চিনাক্ত কৰিব পাৰি । বৰ্তমান ধেমাজি জিলাতেই মিচিং জনসংখ্যা বেছি। কিন্তু পূৰ্বতে মাজুলীত বহু সংখ্যক মিচিংলোকে বসবাস কৰিছিল। ১৯৫০ চনত যেতিয়া প্ৰলয়ংকৰী ভূমিকম্প হৈছিল তাৰ পিছত মাজুলীখন একেৰাহে বানপানী আৰু গৰাখহনীয়াৰ কবলত পৰে। সেয়ে মাজুলীত থকা বহু সংখ্যক মিচিং লোকে জোনাই, যোৰহাট, গোলাঘাট আদি ঠাইত বসবাস কৰিব লয়।

প্ৰবজনৰ দ্বাৰা পৰ্বত-পাহাৰৰ কষ্টকৰ জীৱন পৰিত্যাগ কৰি এতিয়া ভৈয়ামতেই এওঁলোকে বসতি কৰিবলৈ ল'লে যদিও মিচিংসকল এতিয়াও অসম নাগালেণ্ডৰ সীমামূৰীয়া ঠাই আৰুণাচল প্ৰদেশৰ ডিচাংভেলী, লোহিত, পাচিঘাট, পূৱ চিয়াং জিলা আদি পাহাৰীয়া অঞ্চলতো সিচঁৰিত হৈ আছে। তথাপি মিচিংসকলৰ পৰম্পৰাগত বাসস্থান বুলি ক'লে আমি ব্ৰহ্মপুত্ৰ আৰু তাৰ উপনদীসমূহকে আদি কৰি নদীৰ পাৰে পাৰে সজা ওখ ওখ চাংঘৰসমূহকে বুজোঁ । নৈৰ পাৰত শাৰী শাৰীকৈ সজা এই চাংঘৰ সমূহে নিৰ্দেশ কৰে মিচিং সংস্কৃতিৰ স্বকীয়তা। গতিকে নদীকূলেই হ'ল মিচিং জনজাতিৰ পৰম্পৰাগত বাসস্থান। পাহাৰতেই হওঁক বা ভৈয়ামতেই হওঁক নদীৰ আশে-পাশেই মিচিংসকলে চাংঘৰ সাজে। মিচিংসকলে নদীৰ পাৰতেই বসবাস কৰাৰ কাৰণসমূহ যদি বিশ্লেষণ কৰো তেনে কিছুমান কাৰণ দৃষ্টিগোচৰ হয়।

প্ৰথমতে, পাহাৰত বসবাস কৰি থকা কালত মিচিংসকলে আন জনজাতিৰ দৰেই ঝুম খেতি কৰিছিল। যাৰ বাবে তেওঁলোকে সঘনে খেতিৰ মাটি সলনি কৰি থাকিব লাগে আৰু এঠাইৰ পৰা আনঠাইলৈ গৈ বসবাস কৰিব লগা হয়। এনে কষ্টকৰ জীৱনৰ পৰা হাত সাৰিবলৈ হয়তো মিচিংসকলে সমভূমিলৈ নামি আহিছিল। যাতে কোনো সাৰ প্ৰয়োজন নকৰাকৈ কম কষ্টতে ভাল খেতি কৰিব পাৰে।

দ্বিতীয়তে, মিচিং জনজাতি প্ৰধানতঃ কৃষিজীৱি। অতীজৰে পৰা এওঁলোকে পশুপালনৰ বাবে গৰু, ম'হ, গাহৰি, হাঁহ, কুকুৰা আদিবোৰ পোহে। কিন্তু পাহাৰত গৰু-ম'হৰ বাবে পৰ্যাপ্ত পৰিমাণৰ ঘাঁহ-বন নাথাকে, থাকিলেও দূৰ-দূৰণিলৈ গৈ হে পশু চৰাব লাগে। ইয়াৰ উপৰিও পাহাৰত হিংস্ৰ জীৱ-জন্তুৰ উপদ্ৰৱত পশুপালন অতি কঠোৰ। সেয়েহে মিচিংসকলে যাতে গৰু, ম'হৰ বাবে খাদ্যৰ নাটনি নহয় তাৰ বাবে ঘাঁহ-বনৰ প্ৰাচুৰ্য থকা নদীৰ কাষৰ সুবিধাজনক আৰু নিৰাপদ চৰ-চাপৰিতে চাংঘৰ সাজি বাস কৰিবলৈ লয়।

তৃতীয়তে, বহিঃৰাজ্যৰ আক্ৰমণৰ পৰা ৰক্ষা পাবলৈ মিচিংসকল আহোমসকলৰ (ৰজাঘৰীয়া) শৰণাপন্ন হয়।

বিভিন্ন জনশ্রুতিমতে আহোমসকলেই মিচিংসকলক নদীকূলত বসবাস কৰিবলৈ দিলে।

চতুর্থতে, আহোম শাসন ব্যৱস্থাৰ পাইক প্রথাত ভিন ভিন মাটিৰ বাবে পাইকৰ পৰিমাণ ভিন ভিন আছিল। 'আহোম শাসন ব্যৱস্থাত প্রতি পাইকে দুপুৰাকৈ খেতিৰ মাটি পাইছিল। বাৰী মাটিৰ কাৰণে কোনো খাজানা দিব নালাগিছিল। সেইদৰে জলডোবা মাটিত কোনোবাই খেতি কৰিলে তাৰো খাজানা দিব নালাগিছিল। নৈৰ পানীয়ে বুৰাই পেলোৱা দ-ঠাইত চাংঘৰ সাজি বাস কৰা মিচিংসকলে খাজানা দিব নলগীয়া দ মাটিত খৰালি হাল বাই ফাগুণ-চ'ত মাহত বাও ধান সিঁচি দিছিল আৰু আঘোণ-পুহমহীয়া পানী শুকাই গ'লে সেই ধান দাই আনিছিল। এই সুবিধাটোৰ বাবেই হয়তো তেওঁবিলাকে দ-চানেকীয়া ঠাই বাছি লৈছিল আৰু বাও খেতিত গুৰুত্ব দিছিল।'[৪]

পঞ্চমতে, মিচিংসকলৰ পৰম্পৰাগত বিভিন্ন খাদ্যসম্ভাৰৰ ভিতৰত মাছ হ'ল অন্যতম। মাছ তেওঁলোকৰ প্রিয়। ৰৌ, ৰৰালী, কুঢ়ি, শ'ল, শিঙী, শিঙৰা, পাভ, নাৰ, বাহু, কান্ধুলী, চেঙেলী, গৰৈ, মাগুৰ, কাৰৈ, পুঠি, খলিহনা আদি বিভিন্ন সৰু ডাঙৰ মাছেই তেওঁলোকৰ প্রিয়। এনে মাছ সিদ্ধ কৰি, চুঙাত দি, পুৰি, ভাপত দি, টেঙাদি, খৰিকাত দি, ভাজি তেওঁলোকে খাদ্য হিচাপে গ্রহণ কৰে। তেওঁলোকৰ সমাজত মাছৰ চাহিদালৈ লক্ষ্য কৰি সহজে আৰু ঠাইতে মাছ পাবৰ বাবে হয়তো তেওঁলোকে নদীৰ কাষতে চাংঘৰ সাজি বাস কৰিছিল।

ষষ্ঠতে, অতীত কালত যাতায়তৰ একমাত্র সুবিধা আছিল নৌকাবিহাৰ। অর্থাৎ নাওঁৰ দ্বাৰা এখন ঠাইৰ পৰা আন এখন ঠাইলৈ বিভিন্ন কাৰণত যাতায়ত কৰিব পাৰিছিল। অতীতত ৰাস্তা পদূলিৰ অভাৱ, অত্যাধিক হাবি-বননি, বনৰীয়া জীৱ-জন্তুৰ ভয় আদিবোৰ কাৰণতে নৌকাযাত্রাই সবাতোকৈ সুবিধাজনক আছিল। সেয়ে হয়তো যাতায়তৰ সুবিধাৰ কাৰণে মিচিংসকল পাহাৰৰ খলা-বমা, বাট-পথ নাইকীয়া অসুবিধাজনক ঠাইৰ পৰা নদীকূলৰ সমতল অঞ্চলত বসবাস কৰিবলৈ লৈছিল।

নদী প্রিয় মিচিং জনজাতিৰ জীৱনৰ হাঁহি-কান্দোন, ঘাত-প্রতিঘাত, বিৰহ-বেদনা, মিলন-বিচ্ছেদ আদি বিষয় নদীৰ প্রবাহমান গতিৰ দৰেই তেওঁলোকৰ জীৱনত সংপৃক্ত হৈ আছে। সেয়ে নদী তেওঁলোকৰ আপোন। প্রকৃতিয়ে তেওঁলোকক যিমানেই কষ্ট নিদিয়ক কিয়, তথাপি মিচিংসকল নৈৰ কাষতে থাকিব। নৈক এৰি কেতিয়াও তেওঁলোক নাযায়।

বিভিন্নজন গৱেষকৰ মতামত আৰু আমাৰ ক্ষেত্র অধ্যয়নৰ আধাৰত বিভাজন কৰা মিচিংসকলৰ এঘাৰটা খেল বা ফৈদ কেইটাৰ বাসস্থানেই পৰম্পৰাগত বাসস্থান ভৌগোলিক বাসস্থান পর্যবেক্ষণ কৰি ডেল্টনে মিচিংসকলক দুটা ভাগত ভাগ কৰিছিল। সেইয়া হ'ল-

১। ভৈয়ামৰ মিচিং

২। পাহাৰীয়া মিচিং

ভৈয়ামৰ মিচিংসকলৰ বাসস্থান ঃ

ভৈয়ামৰ মিচিংসকল পৰম্পৰাগত ভাৱে উজনি অসমতে বসবাস কৰি আহিছে। প্রাচীন কালত পর্বত-পাহাৰতে বসবাস কৰিছিল যদিও পাহাৰৰ অটব্য অৰণ্যৰ মাজত পানীৰ সহজলভ্যতা নাছিল, যাতায়তৰ অসুবিধা, খেতি-বাতি আৰু পশুপালন আদি না না কাৰণত মিচিংসকল ভৈয়ামলৈ নামি আহে। ভৈয়ামৰ মিচিংসকল কেনেদৰে অসমৰ এঘাৰখন জিলাৰ বিভিন্ন স্থানত বসবাস কৰি আহিছে তাৰ বিষয়ে তালিকাৰ দ্বাৰা দাঙি ধৰিবলৈ চেষ্টা কৰা হ'ল।

তালিকাখনত মিচিংসকলৰ বিভিন্ন ফৈদ আৰু তেওঁলোকৰ পৰম্পৰাগত বাসস্থানৰ তথ্য উল্লেখ কৰা হৈছে। এই ক্ষেত্রত বিশেষকৈ ক্ষেত্র অধ্যয়নক প্রধান সমল হিচাপে গ্রহণ কৰা হৈছে।

পাহাৰীয়া মিচিংসকলৰ বাস স্থান ঃ

পাহাৰৰ লগত মিচিংসকলৰ আজন্ম সম্বন্ধ আছে। মিচিংসকলৰ পূর্বপুৰুষ আছিল পাহাৰীয়া। তিব্বতীয়া ভাষাত 'মি' মানে মানুহ আৰু 'ৰি' মানে পাহাৰ। অর্থাৎ পাহাৰৰ লোক। বর্তমানো কিছুসংখ্যক মিচিংলোক পাহাৰীয়া অঞ্চলতে বসবাস কৰি আছে। পাহাৰত বাস কৰা এইসকল মিচিংলোকে নদীৰ আশে-পাশে ওখ চাংঘৰ সাজি বাস কৰে। পাহাৰত বাস কৰি অহা এইসকল মিচিংৰ ৰীতি-নীতি, জীৱন-ধাৰণ প্রণালী, ঘৰ-দুৱাৰ সাজ-পাৰ বিভিন্ন কাৰণত ভৈয়ামৰ মিচিংসকলতকৈ অলপ হ'লেও বেলেগ হোৱা দেখা যায়।

সেইয়া হৈছে -

(ক) ভৌগোলিক পৰিৱেশে কোনো এটা জাতিৰ খাদ্য তালিকাত নির্ণায়ক ভূমিকা পালন কৰে। অসমৰ ভৈয়ামৰ মিচিংসকলৰ প্রধান খাদ্য ভাত (আপিন)। ইয়াৰ লগত তেওঁলোকে না না শাক-পাচলি, মাছ-মাংসও খাদ্য ৰূপে গ্রহণ কৰে। কিন্তু পাহাৰীয়া মিচিংসকলৰ বাবে ধানখেতি কৰাটো

ফৈদ বা খেল	জিলা	গাওঁ
পাগ্ৰ	ধেমাজি	লেকু জেলাম, ৰতনপুৰ, পুৰণা জেলাম, মহমৰা, ৰামধন গাঁও, তৰাজান, চিলাপথাৰ, কুলাজান, অকাজান, চেঙাজান, ৰেখা চাপৰি,মাজৰবাৰী, শান্তিপুৰ, চিমেনচলা, গেলুৱা, কাননগুৰি, জোনাইৰ আগম দলুংগাঁও, ৰিগবি, দেউৰীঘাট, কৰৈকৰী আদি।
	লখিমপুৰ	উত্তৰ লখিমপুৰৰ কেইখনমান গাঁও যেনে- কপাগ, খৰাচাপৰি, বৰষাচাপৰি আদি
	যোৰহাট	গেজেৰা গাঁও আদি।
	গোলাঘাট	হাতীখুলি, কুৰুৱাবাহী, অফলা গাঁও আদি
	মাজুলী	কমলাবাৰী, বৰগএগ, নলনিপথাৰ আদি
চাঃয়াং বা চায়েঙ্গীয়া	ধেমাজি	ৰিগ্বি গাঁও, মিলনপুৰ, তৰাজান, চিকাৰী গাঁও আদি
	তিনিচুকীয়া	আলিমূৰ, কালি গাঁও, নামচিং গাঁও, ঘূনাসুঁতিৰ ওচৰৰ বিভিন্ন গাঁও আদি
	লখিমপুৰ	কাংকন চাপৰি, মঘোৱা চুক, পতমূলা চুক, ভৰতচুক, বানচিৰাম চুক, কালিচাপৰ, তিনিঘৰীয়া গাঁও, চুমনি গাঁও, মেদক গাঁও, ভাটিমেদক গাওঁ কোঁৱৰবাৰী আদি।
মঃয়িং বা ময়েঙ্গীয়া	লখিমপুৰ	ৰঙানদী পাৰৰ বহু গাঁওত বাস কৰে।
	বিশ্বনাথ জিলা	গহপুৰ মহকুমাৰ হেলেম ৰাজহ চক্ৰৰ অৰ্ন্তগত গাঁও - টকৌবাৰী, এৰাসূঁতি, জৰিগুৰি, হাতীমৰা, গহপুৰৰ চাৰিঘৰীয়া মিৰি গাঁও, টেঙাখোৱা গাঁও, বিশ্বনাথ চাৰিআলি ৰাজহচক্ৰৰ বিহুমাৰি, মিয়ালমাৰি আদিবোৰ গাঁওত বাস কৰে।
	শোণিতপুৰ	জীয়াভৰলী পাৰে পাৰে থকা বহুকেইখন মিচিং গাঁও।
	মাজুলী	মাজুলী বহু কেইখন গাঁও ।
	যোৰহাট	আওনামুখ মিচিং গাঁও আদি।
	গোলাঘাট	টেঙনিগাঁও, ৰঙাগড়া, বৰপথাৰ, পানীখেতি গাঁও, ভেলগুৰি গাঁও, বজালক চেৰেলি গাঁও, অজয় নগৰ, বালিজান নজান আদি।
চামগুৰীয়া	লখিমপুৰ	পহুমৰা গাঁও, কুলামন মিৰি গাঁও, নাওবৈচাৰ বামুণদলনি মিৰি গাঁও, ন-ভগনীয়া গাঁও, গেন্ধালি গাঁও আদি।
	ধেমাজি	ওখমাটি, নাহৰবাৰী, মিমাং গাঁও আদি।
দাম্বুগ	ধেমাজি	ভলুকাগুৰি, কোলাজান গাঁও, কেদি দাম্বুগ আৰু কুলি মংকু নামৰ এইকেইখন দাম্বুগ ফৈদৰ গাঁও।
	লখিমপুৰ	সোৰণশিৰি নদীৰ পাৰৰ বহুকেইখন গাঁও যেনে- কপাগ চাপৰি, খৰা চাপৰি, বৰষামুখ, ফুলবাৰী দাম্বুগ গাঁও আদি।
দীলু	যোৰহাট	এৰাসূঁতি গাঁও, গড়মূৰ দাম্বুগ গাঁও, দুঘৰীয়া দাম্বুগ গাঁও, দাম্বুকিয়াল গাঁও আদি ।
	ডিব্রুগড়	লাচন গাঁও, বসাই গাঁও, জোন গাঁও আদি।
	শিৱসাগৰ	মৰাণ ৰাজহ চক্ৰৰ অৰ্ন্তগত গাঁও - ৰামনগৰ মিৰি গাঁও, বালিখুটি আদি। শিৱসাগৰ ৰাজহচক্ৰৰ অৰ্ন্তগত গাঁও- গড়ভগা মামল গাঁও, লিগিৰিবাৰী, আলিচিঙা, বলমা মিৰিগাঁও, মাজবাৰী। ইয়াৰ উপৰিও ডিমৌমুখৰ বহুকেইখন গাঁও- ভঁকুৰি চাপৰি, লাচনগাঁও, ধাইবাৰী, মিৰিপথাৰ, শামুকজান আদি
অয়ান	লখিমপুৰ	ঘূণাসুঁতি, চামপৰা গাঁও, আয়েঙীয়া গাঁও আদি ।
তেমাৰ বা তামাৰ	ধেমাজি	বৰাজান, নাহৰবাৰী মিৰি গাঁও
	লখিমপুৰ	বঙালমৰা, তেমাৰ গাঁও, পিঠাগুৰি, মেৰাগুৰীয়া, কাছজুলি আদি
	গোলাঘাট	তেমাৰ গাঁও, ধনশিৰি, নৈগাঁও, নিকনি খোৱা গাঁও গুতুংগাঁও, চ'গুৰি, ভকতচাপৰি, বৰতলা গাঁও, এনে বিভিন্ন গাঁওত তেমাৰ বা তামাৰ ফৈদৰ মিচিংসকলে বাস কৰি আহিছে।
বিহিয়া	ধেমাজি	জোনাই মহকুমাৰ কঠালগুৰি, লমানজান এনেবোৰ গাঁও ।
	গোলাঘাট	বালিজান, আমটেঙা, ভকতচাপৰি, ধোৱাহাটী, বহিখোৱা , পাণবাৰী, সাপখাটী আদি গাঁওত বিহিয়া মিচিংসকল আছে।
বংকোৱাল	গোলাঘাট	বংকোৱালসকল পৰম্পৰাগতভাৱে অতিতৰে পৰা গোলাঘাট জিলাতে বসবাস কৰি আহিছে। যেনে- বংকোৱাল গাঁও, বংকোৱাল বৰটিকা আদি।
বেবেজীয়া	লখিমপুৰ	লখিমপুৰৰ দক্ষিণ-পূৱত থকা বেবেজীয়া নামৰ ঠাইত এই ফৈদৰ লোকে বাস কৰে।
	গোলাঘাট	গোলাঘাট জিলাৰ ধনশিৰি আৰু ব্ৰহ্মপুত্ৰৰ সংগমস্থানত বেবেজীয়া নামৰ এখন গাঁও আছে।

উপযোগী নহয় যাৰ বাবে পাহাৰত ঝুম খেতি কৰি পোৱা আলু, কচু, গোমধান, কনিধান আদিবোৰ প্ৰধান খাদ্য ৰূপে গ্ৰহণ কৰে।

(খ) ঘৰ দুৱাৰ নিৰ্মাণৰ ক্ষেত্ৰত পাহাৰীয়া মিচিংসকলে চাংঘৰত বাস কৰে যদিও ভৈয়ামৰ মিচিংসকলে চাংঘৰতকৈ তুলনামুলকভাৱে ওখ হয়। কিয়নো পাহাৰত বনৰীয়া জীৱ-জন্তুৰ পৰা ৰক্ষা পাবলৈ তেওঁলোকে ওখ ওখকৈ চাংঘৰ সাজে।

(গ) পাহাৰত খেৰ সিমান উপলব্ধ নহয়। যাৰ বাবে পাহাৰীয়া মিচিংসকলে চাংঘৰ সাজোতে খেৰৰ সলনি পাহাৰত সহজে উপলব্ধ টকৌগছৰ পাত ব্যৱহাৰ কৰে।

মিচিং জনজাতিৰ পাগৰ, দাম্বুগ, চাঃয়াং বা চায়েঙ্গীয়া আৰু অযান ফৈদৰ মিচিংসকলৰ কিছু সংখ্যক এতিয়াও অসম আৰু অৰুণাচল প্ৰদেশৰ পাহাৰসমূহত বসবাস কৰি আছে। তলত তালিকাৰ দ্বাৰা বিভাজন কৰি তাৰ আভাস দিবলৈ চেষ্টা কৰা হৈছে।

মিচিংসকলৰ পৰম্পৰাগত ঘৰ-দুৱাৰ ঃ

চাংঘৰ জনজাতীয় সমাজৰ এটা আপুৰুগীয়া সম্পদ। ইয়াক বাদ দি জনজাতিসকলে জীৱন ধাৰণ প্ৰণালীৰ অন্য কথা বা বিষয়ৰ উত্থাপন হ'বই নোৱাৰে। প্ৰায়বোৰ জনজাতিয়েই চাংঘৰত বাস কৰে। অসমত চাংঘৰ সজা ব্যৱস্থা অতি পুৰণি। অসমীয়া মানুহৰ সমাজত তেওঁলোকৰ মূল্যবান সম্পদ, খেতিৰ শস্য আদিবোৰ চাং সাজি তাত সযতনে ৰখাৰ পৰম্পৰা, খাদ্য সামগ্ৰী শুকুৱাই ৰখাৰ পৰম্পৰা পুৰণি কালৰ পৰাই আছে ।

বাঁহেৰে নিৰ্মিত চাংঘৰটিয়েই হ'ল মিচিং জনজাতিৰ পৰম্পৰাগত বাসস্থান। নদীৰ পাৰৰ বান অধ্যুষিত অঞ্চলত বসবাস কৰে বাবেই এওঁলোকে চাংঘৰত থাকে বুলি ভাৱিব পাৰি যদিও ইয়াৰ অন্য কিছুমান কাৰণো আছে। সেইয়া হৈছে-

(ক) পূৰ্বতে পাহাৰত বসবাস কৰাৰ সময়ত অটব্য অৰণ্যত হিংস্ৰ জীৱ-জন্তুৰ উপদ্ৰৱৰ পৰা ৰক্ষা পাবলৈ ওখ গছৰ ফেৰেঙনিত টঙীঘৰ সাজি থাকিবলৈ লৈছিল। এনেদৰে বহু যুগ ধৰি গছৰ ওপৰতে ঘৰ সাজি থকাৰ কাৰণে হয়তো ভৈয়ামলৈ আহিও তেওঁলোকে চাংঘৰ সাজিয়েই বাস কৰিবলৈ লয়।

(খ) চাংঘৰ সাজিবলৈ প্ৰয়োজন হোৱা কেঁচা সামগ্ৰীবোৰ কম খৰচী।

(গ) যিহেতু মিচিংসকলৰ প্ৰিয় খাদ্য মাছ গতিকে মাছ

তালিকা - ২

মিচিংসকলৰ বাসস্থান ঃ পাহাৰীয়া অঞ্চল

ফৈদ বা খেল	ৰাজ্য	জিলা	ঠাই বা গাওঁ
পাগ্ৰ	অসম আৰু অৰুণাচল প্ৰদেশ	ধেমাজি	অসম আৰু অৰুণাচল সীমান্তত থকা কেমিগাঁও, লেকু জেলাম, চিমেনমুখ আদিবোৰ পাহাৰীয়া গাঁওত আছে
দাম্বুগ	অসম আৰু অৰুণাচল প্ৰদেশ	লখিমপুৰ	লখিমপুৰ আৰু অৰুণাচল সীমান্তৰ ৰঙানদীৰ পাৰত ৰামপুৰ, ৰাজগড়ৰৰ পাহাৰীয়া ঠাইবোৰ।
চাঃয়াং বা	অসম আৰু অৰুণাচল প্ৰদেশ	পূৰ চিয়াং	গাদুম গাঁও, মেৰ গাঁও, চেকাম, নামচিং গাঁও, কংকুল গাঁও, ৰৰঙণি গাঁও
চায়েঙ্গীয়া		নামনি ডিবাং নামচাই (অতীত লোহিত)	পাগনাম, ১ নম্বৰ কাঃলৃং গাঁও আমপুৰ, ২ নম্বৰ কাঃলৃং গাঁও, কেবা গাঁও কাংকান গাঁও, মেঃকেং গাঁও, চিটপানী গাঁও, চেলাত, তাককাম, জেনতু গাঁও ডিৰাক আদি
অয়ান অৰুণাচল প্ৰদেশ	অসম আৰু	পূৰ চিয়াং	অয়ান গৃঃতু, তাপৃদ অয়ান, অয়ান জেলম আদি

ধৰি শুকুৰাই ৰাখিবলৈ চাংখনকে সুবিধাজনক ঠাই হিচাপে বাছি লৈছিল।

(ঙ) নদীৰ পাৰত বসবাস কৰাৰ বাবে বানপানীৰ পৰা ৰক্ষা পাবৰ বাবে চাংঘৰ সাজি বাস কৰে।

সামৰণি ঃ

অধ্যয়নটিত সমগ্ৰ মিচিং সংস্কৃতিক আধাৰ হিচাপে লৈ মিচিং জনগোষ্ঠীৰ পৰিচয়, ঐতিহ্য আৰু তেওঁলোকৰ পৰম্পৰাগত বাসস্থানৰ বিষয়ে অধ্যয়ন কৰা হ'ল। যিহেতু কোনো এটা জাতিৰ ভৌগোলিক অৱস্থানৰ লগত জাতিটোৰ সমাজ-সংস্কৃতি ওতঃ প্ৰোতঃভাৱে জড়িত। গতিকে 'মিচিং জনগোষ্ঠীৰ পৰম্পৰাগত বাসস্থান ঃ এটি অধ্যয়ন' শীৰ্ষক বিষয়টি গৱেষণাৰ বিষয় হিচাপে গ্ৰহণ কৰা হৈছে। ❑

পাদটীকা ঃ

১। দলে, বসন্ত কুমাৰ ঃ মিচিং সমাজ-সংস্কৃতিৰ সমীক্ষা, পৃঃ ১২
২। কাগয়ুং, ভৃগুমুনি (সম্পা০) ঃ মিচিং সংস্কৃতিৰ আলেখ্য, পৃঃ ১৮২
৩। দলে, বসন্ত কুমাৰ ঃ প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃঃ ২৩
৪। গগৈ, লীলা ঃ অসমৰ সংস্কৃতি, পৃঃ ১১৫

গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

কাগয়ুং, ভৃগুমুনি (সম্পা০)। মিচিং সংস্কৃতিৰ আলেখ্য। সংশোধিত আৰু পৰিবৰ্ধিত সংস্কৰণ, গুৱাহাটী, ১৯৮৯
গগৈ, লীলা। অসমৰ সংস্কৃতি। বনলতা প্ৰকাশন, গুৱাহাটী, দ্বাদশ সংস্কৰণ, ২০১৯
দলে, বসন্ত কুমাৰ। মিচিং সমাজ-সংস্কৃতিৰ সমীক্ষা। চন্দ্ৰ প্ৰকাশন, পাণবজাৰ, গুৱাহাটী, ২০০৮
পায়েং, সদানন্দ। মিচিং জনজাতি সমাজ আৰু সংস্কৃতি। জাগৰণ সাহিত্য, নগাঁও, প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০১১
পেগু, অই আপ্পুল গণেশ। ৰহনীয়া মিচিং সমাজ আৰু সংস্কৃতি। প্ৰথম সংস্কৰণ, গোগামুখ, প্ৰকাশ- ১৯৯৬

গৱেষণা গ্ৰন্থ ঃ

দলে, তৰুলতা ঃ মিচিং জনগোষ্ঠীৰ ধৰ্মীয় পৰম্পৰা ঃ এটি অধ্যয়ন,গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয় ২০২৩

সংবাদ দাতা ঃ হৰেণ পেগু, চাৰিঘৰীয়া গাওঁ, গহপুৰ বিশ্বনাথ জিলা
মৌচুমী পেগু, আলিমুৰ চাপৰি, লখিমপুৰ
ডিম্পল টায়ে, গোগামুখ, মিৰি গাওঁ, লখিমপুৰ

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

অসমীয়া ভাষাত প্রত্যয়ৰ প্রয়োগ

নীলাক্ষি দাস

গৱেষক ছাত্রী, অসমীয়া বিভাগ
মহাপুৰুষ শ্রীমন্ত শংকৰদেৱ বিশ্ববিদ্যালয়
নগাঁও, অসম
৮৬৩৮৩৮৯৬০৪
dasnilakhi392@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

অসমীয়া ভাষাত প্রত্যয়ৰ প্রচুৰ প্রয়োগ পৰিলক্ষিত হয়। এই প্রত্যয় হৈছে মূলত প্রকৃতিৰ লগত যোগত হৈ নতুন শব্দ সৃষ্টি কৰিব পৰা সর্গ। এই প্রকৃতিসমূহ ধাতুৰ পিছত অথবা নাম শব্দৰ পিছত সংযোগ হৈ নতুন নতুন শব্দৰ সৃষ্টি কৰে। মূলতপ্রকৃতিৰ সংযোগত নতুন নতুন শব্দ সাধন কৰিব পৰা বাবে ইয়াক শব্দ সাধনৰ সর্গ বুলিও কোৱা হয়। উদাহৰণস্বৰূপে- অসমীয়া ভাষাত 'বাট' এটা মুক্তৰূপ অর্থাৎ প্রকৃতি। এই মুক্তৰূপৰ লগত '-অৰুৱা' প্রত্যয় সংয়োগ কৰাৰ ফলত 'বাটৰুৱা' শব্দৰ গঠন হ'ল। একেদৰে 'ফুল' শব্দৰ লগত '-অনি' প্রত্যয়ৰ সংযোগত 'ফুলনি' শব্দটো সাধিত হৈছে। তদুপৰি '√খা'ৰ লগত '-অন' প্রত্যয় যোগৰ ফলত নতুন শব্দ 'খাৱন'ৰ সৃষ্টি হৈছে। অর্থাৎ নাম শব্দ আৰু ধাতু এই দুয়োৰে পিছত প্রত্যয় সংযোগৰ ফলত নতুন শব্দৰ সৃষ্টি হৈছে। এনেদৰে অসমীয়া ভাষাত প্রত্যয়ৰ সংযোগত প্রচুৰ শব্দ সাধন হোৱা দেখা যায়।

বীজ শব্দ ঃ অসমীয়া, প্রত্যয়, ধাতু, প্রতিপাদিক।

০.০ প্রস্তাৱনা ঃ

পৃথিৱীৰ প্রত্যেক ভাষাতে আকৃতিৰ প্রয়োগ পৰিলক্ষিত হয়। আকৃতিসমূহ তেনেই সৰু। যেনে- 'ম্' আৰু 'আ'ৰ সংযোগত 'মা'ৰ সৃষ্টি হৈছে। এই আকৃতিসমূহৰ সংযোগতে প্রাকৃতিৰ সৃষ্টি হয়। অর্থাৎ প্রাকৃতি হৈছে এটা বা বেছি বর্ণ লগ হৈ অর্থ প্রকাশ কৰিব পৰা গোট। যেনে- 'ব', 'ও' আৰু 'ধ'ৰ সংযোগত 'বোধ' প্রাকৃতিৰ সৃষ্টি হৈছে। এই প্রাকৃতিক মূলত দুই ভাগত বিভক্ত—

১) সর্গ

২) প্রকৃতি

প্রাকৃতিৰ সংযোগৰ ফলত ভিন ভিন অর্থবহ ৰূপৰ সৃষ্টি হ'লে তাক প্রকৃতি বুলি কোৱা হয়। আনহাতে "প্রকৃতিৰ লগত যিবোৰ প্রাকৃতি যুক্ত হৈ অর্থবহ ভিন্ন ৰূপৰ সৃষ্টি কৰি বাক্যত ব্যৱহাৰৰ উপযোগী কৰি তোলে তেনে প্রাকৃতিবোৰকে 'সর্গ' বোলা হৈছে।"[১] প্রকৃতিসমূহ হৈছে স্বয়ং অর্থবহ ৰূপ। "কিন্তু প্রকৃতি বা মূল নোহোৱাকৈ কেৱল সর্গ লগ হ'লেই কোনো শব্দ বা পদৰ সৃষ্টি হ'ব নোৱাৰে।"[২] যেনে- 'ঘৰ' প্রকৃতিৰ লগত '-অলৈ' সর্গ সংযোগ হৈ 'ঘৰলৈ' নামৰ নতুন অর্থবহ ৰূপৰ সৃষ্টি হৈছে। 'ঘৰলৈ' শব্দটো লক্ষ্য কৰিলে দেখা যায় ইয়াত প্রয়োগ হোৱা সর্গ '-অলৈ'ৰ কোনো নিজস্ব অর্থ নাই। অৱশ্যে ই 'ঘৰ' শব্দৰ লগত সংযোগ হোৱাৰ ফলত নতুন অর্থ বহন কৰিব পাৰিছে। সর্গসমূহৰ অৱস্থিতি অনুসৰি ইয়াক তিনিটা ভাগত ভাগ কৰা হয়—

১) উপসর্গ
২) পৰসর্গ
৩) অন্তঃসর্গ

প্রকৃতিৰ আগত সর্গ সংযুক্ত হৈ নতুন অর্থবহ শব্দ সৃষ্টি কৰাকে উপসর্গ বোলে। যেনে- 'দান'ৰ আগত 'প্রতি-' সর্গ সংযোগ হোৱাৰ পলত 'প্রতিদান' শব্দৰ সৃষ্টি হৈছে। প্রকৃতিৰ পিছত সর্গ সংযুক্ত হৈ নতুন অর্থবহ শব্দ সৃষ্টি কৰাকে পৰসর্গ বোলে। যেনে- 'ল'ৰা' প্রকৃতিৰ পিছত '-অলি' সর্গ সংযুক্ত হৈ 'ল'ৰালি' শব্দৰ সৃষ্টি হৈছে। যিবোৰ সর্গই প্রকৃতিক দুভাগ কৰি তাৰ মাজত সোমাই গৈ নতুন অর্থবহ শব্দৰ সৃষ্টি কৰে তাকেই অন্তঃসর্গ বোলে। অৱশ্যে অসমীয়া ভাষাত অন্তঃসর্গৰ প্রয়োগ পৰিলক্ষিত নহয়। যেনে- 'gulay' শব্দৰ মাজত 'in' প্রত্যয় সংযুক্ত হৈ 'ginulay' শব্দৰ সৃষ্টি হৈছে।

আকৌ সর্গক গুণ অনুসৰিও দুটা ভাগত ভাগ কৰিব পাৰি—
১) বিভক্তি
২) প্রত্যয়

"ধাতু আৰু প্রতিপাদিকৰ পাচত যিবিলাক প্রত্যয় যোগ কৰি ধাতু আৰু শব্দৰ ৰূপ কৰা হয় সিবিলাকৰ নাম বিভক্তি।"[৪] সাধৰণতে অসমীয়া ভাষাত দুই প্রকাৰৰ বিভক্তিৰ প্রয়োগ পৰিলক্ষিত হয়—
১) শব্দ বিভক্তি
২) ক্রিয়া বিভক্তি

শব্দৰ পিছত যোগ হৈ নতুন অর্থ প্রকাশ কৰা বিভক্তিবোৰক শব্দবিভক্তি বোলে। উদাহৰণস্বৰূপে- 'ঘৰ' শব্দৰ পিছত '-লৈ' বিভক্তি সংযোগ হৈ 'ঘৰলৈ' শব্দৰ সৃষ্টি হৈছে। আনহাতে ধাতুৰ পিছত সংযোগ হৈ নতুন অর্থবহ শব্দ সৃষ্টি কৰাকে ক্রিয়া বিভক্তি বোলে। যেনে- '√কৰ'ৰ লগত '-ইছ' বিভক্তি সংযোগ হৈ 'কৰিছ' শব্দৰ সৃষ্টি হৈছে। "প্রকৃতিৰ পিছত বহি যিবোৰ সর্গই নতুন শব্দ সাধন কৰে, সেইবোৰ সর্গকে প্রত্যয় বোলে।"[৩] এই সর্গবোৰৰ সংযোগত নতুন নতুন শব্দৰ সৃষ্টি হয় বাবে ইয়াক শব্দ সাধনৰ সর্গ বুলিও কোৱা হয়। এই প্রত্যয়সমূহ ধাতু অথবা প্রতিপাদিকৰ লগত সংযোগ হোৱা পৰিলক্ষিত হয়। উদাহৰণস্বৰূপে- 'ফুল' প্রকৃতিৰ পিছত '-আম' প্রত্যয় লগ হৈ 'ফুলাম' শব্দৰ সৃষ্টি হৈছে। ঠিক একেদৰে '√খা'ৰ লগত '-আ' প্রত্যয় যোগ হোৱাৰ ফলত 'খোৱা'ৰ সৃষ্টি হৈছে।

০.১ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

প্রত্যয়ৰ ব্যৱহাৰে ভাষা এটাক সুকীয়া মর্যদা প্রদান কৰিছে। অসমীয়া ভাষাত ভিন্ন ৰূপী প্রত্যয়ৰ ব্যৱহাৰে ইয়াৰ বহুৰঙী ৰূপ দাঙি ধৰে। ভাষাত প্রয়োগ হোৱা প্রত্যয়ৰ জ্ঞান অবিহনে ইয়াৰ প্রয়োগ অসম্ভৱ। কিয়নো শব্দত সথিক প্রত্যয়ৰ প্রয়োগ নহ'লে ইয়াৰ অর্থ উদ্ধাৰ কৰাটো সম্ভৱ নহয়। সেয়ে অসমীয়া ভাষাত প্রত্যয়ৰ এনেবোৰ প্রয়োগৰ বিস্তৃত অধ্যয়নৰ প্রয়োজনীয়তা আহি পৰে।

০.২ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

মূলত বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি প্রয়োগ কৰি উক্ত গৱেষণামূলক প্রবন্ধটো যুগুত কৰাৰ চেষ্টা কৰা হৈছে। ইয়াৰ লগতে অৱশ্যে ঠায়ে ঠায়ে তুলনামূলক পদ্ধতিবো প্রয়োজন সাপক্ষে ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে।

০.৩ উৎস সংগ্রহ ঃ

মূলত মুখ্য উৎস আৰু গৌণ উৎস এই দুয়োৰূপৰ পৰাই সমল সংগ্রহ কৰা হৈছে। মুখ্য উৎস হিচাপে অসমীয়া ভাষাৰ বিভিন্ন পর্যায়সমূহ লক্ষ্য কৰা হৈছে। লগতে গৌণ উৎস হিচাপে মূল বিষয়ৰ লগত সম্পর্কিত বিভিন্ন গ্রন্থ, আলোচনী আদিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

০.৪ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

অসমীয়া ভাষাৰ পৰিসৰ অতি বিস্তৃত। এনে বিস্তৃত পৰিসৰৰ ভিতৰত বৃহত্তৰ অসমীয়া ভাষাত ব্যৱহৃত প্রত্যয়সমূহকহে ইয়াৰ মুখ্যতভাৱে আলোচনা কৰা হৈছে।

১.১ মূল বিষয়বস্তুৰ আলোচনা ঃ

প্রত্যয় বুলি ক'লে কোনো সর্গই প্রকৃতি বা মূলৰ লগত যোগ হৈ নতুন শব্দ সাধন কৰাকে বুজায়। অর্থাৎ প্রত্যয়ৰ নিজস্ব অর্থ নাথাকিলেও ই আনৰ লগত সংযোগ হৈ অর্থ সাধন কৰিব পাৰে। উদাহৰণস্বৰূপে- 'চৰ'ৰ লগত '-ইয়া' প্রত্যয় যোগ হৈ 'চৰিয়া' শব্দৰ সৃষ্টি হৈছে। অসমীয়া ভাষাত প্রত্যয়বোৰ ধাতু আৰু প্রতিপাদিক দুয়োৰে লগত সংযোগ হোৱা দেখা যায়। প্রত্যয়ৰ এনে ব্যৱহাৰৰ ওপৰত ভিত্তি কৰিয়ে ইয়াক দুটা ভাগত ভাগ কৰা হৈছে। উদাহৰণস্বৰূপে—
১) কৃৎ প্রত্যয়
২) তদ্ধিত প্রত্যয়

কৃৎ প্রত্যয় হৈছে ধাতুৰ পিছত প্রয়োগ হোৱা প্রত্যয়। এইবিধ প্রত্যয়ে ধাতুৰ লগত সংযোগ হৈ নতুন নতুন শব্দ সাধিত কৰে। কৃৎ প্রত্যয়ক মুখ্য প্রত্যয় বুলিও কোৱা হয়। অসমীয়া ভাষাত ব্যৱহৃত কৃৎ প্রত্যয়ৰ প্রয়োগ তলত উদাহৰণস্বৰূপে উল্লেখ কৰা হ'ল—

√উৰ + অন = উৰণ √ভুক + অনি = ভুকনি

√পিন্ধ + অন = পিন্ধন
√ভৰ + অন = ভৰণ
√মৰ + অঙ = মৰঙ
√খুজ + অতি = খুজৰতি
√লাগ+অতিয়াল = লাগতিয়াল
√পি + অন = পিয়ন
√কঁপ + অনি = কঁপনি
√মাৰ + ই = মাৰি
√মগ + অনিয়াৰ = মগনিয়াৰ
√ৰান্ধ + অনি = ৰান্ধনি
√মগ + অনিয়াৰ = মগনিয়াৰ
√লেখ + আৰু = লেখাৰু
√হাঁহ + ই = হাঁহি
√মাৰ + উক = মাৰুক
√উৰ + উঙা = উৰুঙা
√পঢ় + উৰৈ = পঢ়ুৰৈ
√ঢাক + অনি = ঢাকনি
√শো + অন = শোৱন
√মৰ + অক = মৰক
√সাঁচ + অতীয়া = সাঁচতীয়া

আনহাতে তদ্ধিত প্রত্যয়ে প্রতিপাদিক বা নাম শব্দৰ পাছত লগ হৈ নতুন অর্থবাচক শব্দৰ সৃষ্টি কৰে। তদ্ধিত প্রত্যয়ক গৌণ প্রত্যয় বুলিও কোৱা হয়। "গৌণ বা তদ্ধিত প্রত্যয়বোৰ বিশেষ্য শব্দৰ পাছত যোগ দি নতুন বিশেষ্য শব্দৰ সৃষ্টি কৰিব পাৰি নাইবা বিশেষ্য শব্দৰ পৰা বিশেষণ শব্দ সজাব পাৰি। কেতিয়াবা বিশেষণ শব্দৰ পৰা অমূর্ত ভাব প্রকাশক বিশেষ্য শব্দ পাব পাৰি অথবা বিশেষণ শব্দৰ পৰা বিশেষণ শব্দ উৎপন্ন কৰাব পাৰি।"[৫] অসমীয়া ভাষাত তদ্ধিত প্রত্যয়ৰ যথেষ্ট প্রয়োগ পৰিলক্ষিত হয়। তলত তদ্ধিত প্রত্যয়ৰ প্রয়োগ তলত উদাহৰণসহ দাঙি ধৰা হ'ল—

খেতি + অক = খেতিয়ক
ভাও + অৰীয়া = ভাৱৰীয়া
ধান + অনি = ধাননি
বাট + অৰুৱা = বাটৰুৱা
কাতি + আ = কাতিয়া
ঠগ + আমি = ঠগামি
মঙল + আ = মঙলা
ৰণ + উৱা = ৰণুৱা
নোম + আল = নোমাল
আগ + লতি = আগলতি
ফুল + অনি = ফুলনি
খং + আল = খঙাল
মৰম + ইয়াল = মৰমিয়াল
টেঙৰ + আলি = ঠেঙৰালি
দুখ + ঈ = দুখী
জাৱৰ + উৱা = জাৱৰুৱা
বোকা + ময় = বোকাময়
বাপ + উ = বাপু
পেট + উলা = পেটুলা
ঘৰ + অচীয়া = ঘৰচীয়া

অসমীয়া ভাষাত প্রত্যয় ব্যৱহাৰৰ স্থান অথবা অৱস্থিতি অনুসৰি ইয়াক দুটা ভাগত ভাগ কৰিব পাৰি। উদাহৰণস্বৰূপে—

১) পূর্ব প্রত্যয়
২) পৰপ্রত্যয়।

যিবোৰ প্রত্যয়ে প্রতিপাদিক বা ধাতুৰ আগত বহি নতুন নতুন অর্থবাচক শব্দৰ সৃষ্টি কৰে তাকেই পূর্বপ্রত্যয় বোলে। পূর্বপ্রত্যয়বোৰ সদায় ধাতু বা প্রতিপাদিকৰ আগতহে বহা দেখা যায়। উদাহৰণস্বৰূপে—

আও + পাক = আওপাক
কু + ফল = কুফল
আও + পাক = আওপাক
এ + লাগী = এলাগী
আও + পাক = আওপাক
সু + ফল = সুফল
অতি + পাত = অতিপাত
আও + মৰণ = আওমৰণ
উপ + কূল = উপকূল
অনা + কটা = অনাকটা
আ + জীৱন = আজীৱন
অনা + হক = অনাহক
কা + পুৰুষ = কাপুৰুষ
অ + কার্য = অকার্য
অন + ইচ্ছা = অনিচ্ছা
অনু + ক্রম = অনুক্রম

আনহাতে যিবোৰ প্রত্যয় প্রতিপাদিক বা ধাতুৰ পিছত লগ হৈ নতুন অর্থবাচক শব্দৰ সৃষ্টি কৰে তাকেই পৰপ্রত্যয় বোলে।

পৰপ্রত্যয় সদায় প্রতিপাদিক বা ধাতুৰ পিছতহে বহে। উদাহৰণস্বৰূপে—

বাট + অৰুৱা = বাটৰুৱা
খৰ + আঙ = খৰাং
পাহ + ই = পাহি
√কান্দ + উৰা = কান্দুৰা
বছৰ + ঈয়া = বছৰীয়া
অন্ধকাৰ + ময় = অন্ধকাৰময়
তেল + অনি = তেলনি
√সাঁচ + অতীয়া = সাঁচতীয়া
√লিখ + অক = লিখক
দীঘ + অল = দীঘল
মাছ + উৰৈ = মাছুৰৈ
√লাগ + অতিয়াল = লাগতিয়াল
লগ + অৰীয়া = লগৰীয়া
নাট্য + কাৰ = নাট্যকাৰ
ভাল + অৰি = ভালৰি
মুর্খ + আমি = মুর্খামি

শব্দগঠনত প্রত্যয়ে গ্রহণ কৰা ভূমিকা অনুসৰি ইয়াক দুটা ভাগত ভাগ কৰিব পাৰি। উদাহৰণস্বৰূপে—

১) সমবর্গীয় শব্দসাধন প্রত্যয়
২) বিষমবর্গীয় শব্দসাধন প্রত্যয়।

সমবর্গীয় শব্দসাধন প্রত্যয়ে মূল শব্দৰ গুণ ৰক্ষা কৰে। অর্থাৎ সমবর্গীয় শব্দ সাধন প্রত্যয়ৰ দ্বাৰা বিশেষণ শব্দৰ পৰা বিশেষণ, বিশেষ্যৰ পৰা বিশেষ্য আদি শব্দ সাধিত হোৱা দেখা যায়। উদাহৰণস্বৰূপে—

ধান + অনি = ধাননি
শিক + অনি = শিকনি
গুৰু + তৰ = গুৰুত্বৰ
ৰূপ + অহ = ৰূপহ
খং + আল = খঙাল
ধান + অনি = ধাননি
গছ + আ = গছা
ৰঙা + অলী = ৰাঙলী
লগ + অৰি = লগৰী
ফুল + অনি = ফুলনি
নাও + অৰীয়া = নাওৰীয়া
থিৰ + আঙ = থিৰাং
উচ্চ + তৰ = উচ্চতৰ
দীঘ + অল = দীঘল
সুখী + আ = সুখীয়া
পদুম + অনি = পদুমনি

বিষমবর্গীয় শব্দসাধন প্রত্যয়ে মূল শব্দৰ গুণাগুণ ৰক্ষা নকৰে। অর্থাৎ এই প্রত্যয়ৰ সংযোগৰ ফলত পূর্বৰ শব্দৰ গুণ সৃষ্টি

হোৱা নতুন শব্দটোত দেখিবলৈ পোৱা নাযায়। বিষমবর্গীয় শব্দসাধন প্রত্যয়ত বিশেষণ শব্দৰ পৰা বিশেষ্য, বিশেষ্যৰ পৰা বিশেষণ, ধাতুৰ পৰা বিশেষণ, ধাতুৰ পৰা বিশেষ্য আদি ৰূপ সাধিত হোৱা দেখা যায়। উদাহৰণস্বৰূপে—

√শিক+আৱু = শিকাৱু
গোৰ+ইয়া = গুৰিয়া
√বাজ+অনা = বাজনা
বন+অৰীয়া = বনৰীয়া
√খা + অন = খাৱন
বেজ+আলি=বেজালি
√খা+অন = খাৱন
দলি+আ = দলিয়া
ভণ্ড + আমি = ভণ্ডামি
√সাঁচ + অতিয়া = সাঁচতিয়া
পেট + উৱা = পেটুৱা
ফুল + আম = ফুলাম
ভণ্ড + আমি = ভণ্ডামি
মৰম + ইয়াল = মৰমিয়াল
এঘৰ + ইয়া = এঘৰীয়া
√খুন্দ + আ = খুন্দা

ইয়াৰ উপৰিও অসমীয়া ভাষাত নির্দিষ্টতাবাচক প্রত্যয়ৰ প্রয়োগো পৰিলক্ষিত হয়। বিশেষ্য শব্দৰ পিছত যোগ হৈ যিবোৰ প্রত্যয়ে নির্দিষ্টকৈ কোনো শব্দৰ অর্থ বুজাই তাকেই নিদিষ্টতাবাচক প্রত্যয় বোলে। উদাহৰণস্বৰূপে—

তিনি + টা = তিনিটা
বেয়া+খিনি=বেয়াখিনি
কিতাপ+খন=কিতাপখন
পাণ+খিলা=পাণখিলা
আম+চকলা =আমচকলা
সৰিয়হ+ডৱা=সৰিয়হডৱা
পানী+খিনি=পানীখিনি
মাংস+টুকুৰা=মাংসটুকুৰা
ঘৰ + খন = ঘৰখন
ছাতি + টো = ছাতিটো
কল + আখি = কলআখি
ফুল + থোপা = ফুলথোপা
পানী + চলু = পানীচলু
জুই + কুৰা = জুইকুৰা
মাটি + চপৰা = মাটিচপৰা
ফুল + পাহ = ফুলপাহ

নির্দিষ্টতাবাচক প্রত্যয়ৰ লগতে অনির্দিষ্টতাবাচক প্রত্যয়ৰ প্রয়োগো দেখিবলৈ পোৱা যায়। অৱশ্যে নির্দিষ্টতাবাচক প্রত্যয়ৰ তুলনাত ইয়াৰ প্রয়োগ কম। উদাহৰণস্বৰূপে— এখন + মান = এখনমান, কেইখন + মান = কেইখনমান, গোটা +চেৰেক = গোটাচেৰেক ইত্যাদি।

অসমীয়া ভাষাত বহুবচনাত্মক প্রত্যয়ৰ প্রয়োগো পৰিলক্ষিত হয়। বহুবচনাত্মক প্রত্যয়ৰ সংযোগে বিশেষ্যৰূপবোৰক একবচনৰ পৰা বহুবচনৰ ৰূপ প্রদান কৰে। উদাহৰণস্বৰূপে—

মানুহ+বিলাক=মানুহবিলাক
এওঁ+লোক=এওঁলোক
তেখেত+সকল=তেখেতসকল
গ্রন্থ + ৰাজি = গ্রন্থৰাজি
চাউল + বোৰ = চাউলবোৰ
সুধী + বৃন্দ = সুধিবৃন্দ
গুণ + ৰাশি = গুণৰাশি
শিয়াল+জাক=শিয়ালজাক
শিক্ষক+সকল= শিক্ষকসকল
মেডেল+সোপা= মেডেলসোপা
মামা + হঁত = মামাহঁত
শিয়াল + সোপা = শিয়ালসোপা
গৰু + মখা = গৰুমখা
কিতাপ + সমূহ = কিতাপসমূহ
তেওঁ + লোক = তেওঁলোক
কমলা + বোৰ = কমলাবোৰ

ইয়াৰ উপৰিও অসমীয়া ভাষাত স্ত্রীবাচক ৰূপসমূহক স্পষ্টৰূপত বুজাব পৰাকৈ কিছুমান স্ত্রী প্রত্যয়ৰো প্রয়োগ পৰিলক্ষিত হয়। অসমীয়াত চাৰিটা স্ত্রী প্রত্যয়ৰ প্রয়োগ পৰিলক্ষিত হয় ঃ -ঈ, -অনী, -নী, -ৰী। উদাহৰণস্বৰূপে—

মাষ্টৰ+অনী = মাষ্টৰনী
ফুকন+অনী = ফুকননী
অজলা+ঈ = আজলী
কান্দুৰা + ঈ = কান্দুৰী
গৃহস্থ + নী = গৃহস্থনী
ৰাক্ষস+নী= ৰাক্ষসনী
কলা + ৰী = কালৰী
শইকীয়া+নী=শইকীয়ানী
ভকত + অনী = ভকতনী
নাপিত + অনী = নাপিতনী
পেটুলা + ঈ = পেটুলী
মহা + ঈ = মাহী
বৰুৱা + নী = বৰুৱানী
কলিতা + নী = কলিতানী
ডেকা + ৰী = ডেকেৰী
কমাৰ + অনী = কমাৰনী

২.০ উপসংহাৰ ঃ

অসমীয়া ভাষা এটা স্বকীয় বিশেষত্বৰে প্রতিষ্ঠিত নব্য ভাৰতীয় আর্য ভাষা। অসমীয়া ভাষাত প্রত্যয়ৰ প্রয়োগে ভাষাটোক এক সুকীয়া মর্যদা প্রদান কৰিছে। অসমীয়া ভাষাত প্রত্যয়ৰ ভিন্ন প্রয়োগ পৰিলক্ষিত হয়। মূলৰূপৰ লগত সংযোগ হোৱা এনে প্রত্যয়সমূহে শব্দবোৰক বৈচিত্রময় কৰি তোলে। প্রত্যয়ৰ ব্যৱহাৰৰ ফলত একোটা শব্দই ভিন্ন ৰূপ আহৰণ কৰে।

এনে প্রত্যয়সমূহৰ সংযোগে ভাষাটোক অন্য ভাষাসমূহৰ পৰা পৃথক কৰি তোলে। প্রত্যয়ৰ এনে প্রয়োগে অসমীয়া ভাষাৰ বৈশিষ্ট্য নির্ধাৰণত সহায় কৰে। ❑

প্রসংগ টীকা ঃ

১) অপর্ণা কোঁৱৰ ঃ 'ভাষাবিজ্ঞান উপক্রমণিকা', পৃ. ১৫৭
২) গোলক চন্দ্র গোস্বামী ঃ 'অসমীয়া ব্যাকৰণ প্রৱেশ', পৃ. ১২৫
৩) লক্ষ্মী হাজৰিকা ঃ 'ভাষাবিজ্ঞান আৰু অসমীয়া ভাষাবিজ্ঞান পৰিচিতি, পৃ. ৯২
৪) কলিৰাম মেধি ঃ 'অসমীয়া ব্যাকৰণ আৰু ভাষাতত্ত্ব', পৃ. ১২২
৫) উপেন্দ্রনাথ গোস্বামী ঃ অসমীয়া ভাষাৰ ব্যাকৰণ, পৃ. ৯০

গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

কোঁৱৰ, অৰ্পণা ঃ 'ভাষাবিজ্ঞান উপক্ৰমণিকা'
বনলতা প্ৰকাশ, পঞ্চম সংস্কৰণ, ২০১৫

গোস্বামী, উপেনচন্দ্ৰনাথ ঃ 'অসমীয়া ভাষাৰ ব্যাকৰণ'
মণিমাণিক প্ৰকাশন, দ্বাদশ প্ৰকাশ, গুৱাহাটী, ২০১৫

———— ঃ 'ভাষা-বিজ্ঞান'
মণি-মাণিক প্ৰকাশ, দ্বাবিংশতিতম্ সংস্কৰণ, ২০১৫

গোস্বামী, গোলকচন্দ্ৰ ঃ 'অসমীয়া ব্যাকৰণ প্ৰৱেশ',
বীণা লাইব্ৰেৰী, পঞ্চম সংস্কৰণ, ২০১২

———— ঃ 'অসমীয়া বৰ্ণপ্ৰকাশ',
বীণা লাইব্ৰেৰী, পঞ্চম সংস্কৰণ, ২০১১

———— ঃ 'ধ্বনি-বিজ্ঞানৰ ভূমিকা',
বীণা লাইব্ৰেৰী, চতুৰ্থ সংস্কৰণ, ২০১৪

মেধি, কালিৰাম ঃ 'অসমীয়া ব্যাকৰণ আৰু ভাষাতত্ত্ব'
দ্বিতীয় সংস্কৰণ, লয়ার্ছ বুক ষ্টল, ২০১৭

হাজৰিকা, লক্ষ্মী ঃ 'ভাষাবিজ্ঞান আৰু অসমীয়া ভাষাবিজ্ঞান পৰিচিতি'
অশোক পাব্লিকেশ্চন, দ্বিতীয় সংস্কৰণ, ২০১৩

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

ডাইনী নিগ্রহ আৰু অসমীয়া অভিযোজিত চলচ্চিত্র 'ঈশ্বু'

পূজা বৰা
গৱেষক ছাত্রী, অসমীয়া বিভাগ
কটন বিশ্ববিদ্যালয়
সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
কমাৰগাঁও মহাবিদ্যালয়
৯৩৬৫৮২০৭৯৯
borapooja024@gmail.com

ড° কল্পনা শর্মা কলিতা
সহযোগী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
কটন বিশ্ববিদ্যালয়
৭৫৭৮৯৩৯৮৯০
kalpana.sarma2@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

জীৱন আৰু জগতক উপলব্ধি কৰাৰ সুতীব্র তাড়না আৰু নিৰন্তৰ প্রচেষ্টাৰ পৰিপ্রেক্ষাত শিল্প সাহিত্য দর্শনৰ ক্ষেত্রখনত ভিন্নধর্মী চিন্তা-চেতনাৰ উন্মেষ হয়। বৌদ্ধিক অনুশীলনৰ মাধ্যমত শিল্প-সাহিত্যৰ বিভিন্ন অনুষংগৰ মাজেৰে এনে নব্য অৱধাৰণাৰ প্রকাশ ঘটে। সাহিত্যৰ চলচিত্রায়ণ বা অভিযোজনাৰ অন্তৰালত এনে অৱধাৰণাই ক্রিয়াৰত হৈ আছে বুলিব পাৰি। চলচ্চিত্র জীয়া বাস্তৱৰ অভিনৱ কথকতা। সমাজ বাস্তৱতাই প্রাণৱন্ত ৰূপত চলচ্চিত্রৰ মাজেৰে বাংময় হৈ উঠে। চলচ্চিত্রৰ আলোচনাৰ প্রসংগত উত্থাপিত এক গুৰুত্বপূর্ণ অনুষংগ হ'ল সাহিত্যৰ চলচ্চিত্রায়ণ বা অভিযোজনাৰ প্রসংগ। অসমীয়া চলচ্চিত্রৰ আলোচনাৰ প্রসংগতো এই বিশেষ দিশটোক উপেক্ষা কৰিব পৰা নাযায়। ডাইনী হত্যাৰ দৰে এক অন্ধবিশ্বাসজনিত কুপ্রথাৰ বিৰুদ্ধে প্রতিবাদ সাব্যস্ত কৰা সৎসাহসী এজন শিশুক কেন্দ্র কৰি উৎপল বৰপূজাৰীয়ে নির্মাণ কৰা 'ঈশ্বু' (২০১৭) শীর্ষক চলচ্চিত্রখন মণিকুন্তলা ভট্টাচার্যৰ একে নামৰ উপন্যাসৰ অৱলম্বনত অভিযোজনা কৰা হৈছে। গভীৰ জীৱন জিজ্ঞাসাৰে সংপৃক্ত সৃষ্টি চেতনাক মননশীলভাৱে কাহিনী কথন, চৰিত্র সংশ্লেষণত প্রয়োগ কৰা একবিংশ শতিকাৰ এগৰাকী প্রভাৱশালী লেখিকা মণিকুন্তলা ভট্টাচার্যৰ এক অনন্য সৃষ্টি 'ঈশ্বু'। মণিকুন্তলা ভট্টাচার্যৰ 'ঈশ্বু' উপন্যাসৰ অভিযোজিত চিত্রৰূপ 'ঈশ্বু'ৰ নির্মাতা উৎপল বৰপূজাৰী অসমীয়া চলচ্চিত্র জগতৰ এক বহুমুখী ব্যক্তিত্ব। ২০০৩ বর্ষত ভাৰতৰ ৫০ তম ৰাষ্ট্রীয় চলচ্চিত্র বঁটাৰ শ্রেষ্ঠ চলচ্চিত্র সমালোচকৰ বাবে স্বর্ণ কমল সন্মান প্রাপ্ত উৎপল বৰপূজাৰীৰ 'ঈশ্বু' শীর্ষক অভিযোজিত চলচ্চিত্র কর্মৰ বিষয়ে আমাৰ গৱেষণা পত্রখনৰ জৰিয়তে এক সামগ্রিক বিশ্লেষণ কৰিবলৈ প্রয়াস কৰা হৈছে।

সূচক শব্দ ঃ চলচ্চিত্র অভিযোজনা, ডাইনী নিগ্রহ, অন্ধবিশ্বাস, ঈশ্বু, শিশু মনস্তত্ব, জনগোষ্ঠীয় সমাজ ইত্যাদি ।

প্রস্তাৱনা ঃ

গৌৰী বর্মণৰ দ্বাৰা পৰিচালিত 'অকণ' (১৯৮০) ৰ জৰিয়তে আৰম্ভ হোৱা অসমীয়া শিশু চলচ্চিত্রৰ পৰিক্রমাত ডাইনী হত্যাৰ দৰে এক সংবেদনাত্মক বিষয়ক শিশু মনস্তত্বৰ আধাৰত উপস্থাপন কৰা উৎপল বৰপূজাৰীৰ চিত্রকর্ম 'ঈশ্বু' এক অভিনৱ সংযোজন হিচাপে পৰিগণিত হৈছে। ৬৫ সংখ্যক ৰাষ্ট্রীয় চলচ্চিত্র বঁটাৰ শিতানত অসমীয়া ভাষাৰ শ্রেষ্ঠ ছবিৰ ৰাষ্ট্রীয় বঁটা আৰু শৈলধৰ বৰুৱা চলচ্চিত্র বঁটাৰে সন্মানিত এই অভিযোজিত চলচ্চিত্রখনৰ কেন্দ্রীয় বিষয়বস্তু ডাইনী হত্যাজনিত কুপ্রথাৰ বিৰুদ্ধে এটা দহ বছৰীয়া

শিশুৰ সৰলমনা, নিষ্কলুষ হৃদয়ৰ সাহসী প্ৰতিবাদক কেন্দ্ৰ কৰি অভিব্যঞ্জিত হৈছে। সহজ-সৰল জনজাতীয় মানুহৰ অজ্ঞতাৰ সুযোগ গ্ৰহণ কৰি নিজৰ কৰ্তৃত্ব সুদৃঢ় কৰিবলৈ সদাতৎপৰ এচাম মানুহৰ ষড়যন্ত্ৰৰ বলী হোৱা নিৰীহ মানুহৰ মৰ্মস্পৰ্শী ছবি 'ঈশ্বু'ৰ মাজেৰে ৰূপায়িত হৈছে।

মূল বিষয়বস্তুৰ আলোচনা ঃ

সমাজৰ প্ৰতি থকা দায়িত্ববোধ আৰু মানৱীয় অনুকম্পাৰে সংপৃক্ত মণিকুন্তলা ভট্টাচাৰ্যৰ ৰচনা সম্ভাৰ স্বকীয় বৈশিষ্ট্যৰে অনন্য। এক সংবেদনশীল সামাজিক সমস্যাক শিশুৰ মনস্তাত্বিক দৃষ্টিভংগীৰে উত্থাপন কৰা 'ঈশ্বু' শীৰ্ষক শিশু উপন্যাসখন ভট্টাচাৰ্যৰ মননশীল সৃষ্টিৰাজিৰ অন্যতম। উপন্যাসখনৰ বিষয়বস্তু 'ঈশ্বু' নামৰ এটা জনজাতীয় শিশুক কেন্দ্ৰ কৰি আৱৰ্তিত হৈছে। অন্ধবিশ্বাসৰ কৰালগ্ৰাসত আচ্ছন্ন এখন সমাজত নিৰ্দোষী নাৰীয়ে সন্মুখীন হোৱা অবৰ্ণনীয় অত্যাচাৰৰ কৰুণ কাহিনীৰে 'ঈশ্বু' উপন্যাসৰ বিষয়বস্তু বিধৃত হৈছে। এটা নিষ্পাপ শিশুৰে তাৰ মৰমৰ বৰমাক অম্বিকাই অকস্মাতে সন্মুখীন হোৱা শোষণ আৰু উৎপীড়নৰ বিৰুদ্ধে অকলেই যুঁজাৰ কাহিনী 'ঈশ্বু'ৰ মাজেৰে বাংময় হৈ উঠিছে। ভিতৰুৱা গাঁওসমূহত নূন্যতম চিকিৎসা সেৱা উপলব্ধ নোহোৱাৰ পৰিপ্ৰেক্ষিতত সাধাৰণ হোজা গ্ৰাম্যবাসীয়ে জৰা-ফুকা আদি ব্যৱস্থাৰ সৈতে সহাৱস্থান কৰিবলৈ বাধ্য হয়। এনে অৱস্থাত উপযুক্ত চিকিৎসাৰ অভাৱত প্ৰসূতি মাতৃ-সন্তান তথা অন্যান্য ৰোগত আক্ৰান্ত ৰোগীৰ মৃত্যুৰ সংখ্যা বৃদ্ধি পায়। অনগ্ৰসৰতাৰ বাবে ৰাইজে এনে অকাল মৃত্যুৰ বাবে ডাইনীৰ প্ৰভাৱ জাতীয় অন্ধবিশ্বাসৰ মাজত নিমজ্জিত হৈ নিৰীহ মানুহকো আক্ৰমণ কৰিবলৈ কুণ্ঠাবোধ নকৰে। ডাইনীৰ সন্দেহত অম্বিকাৰ সৈতে সংঘটিত হোৱা অমানৱীয় ঘটনাচক্ৰৰ পিছত সংঘৰ মানুহৰ উদ্যোগত জনজাতীয় অধ্যুষিত সেই গাঁওখনত চৰকাৰী চিকিৎসা সেৱাৰ প্ৰৱৰ্তন হৈছে। উপন্যাসখনৰ শেষৰফালে সংযোজিত মাতৃ-পুত্ৰৰ কথোপকথনৰ মাধ্যমেদি কাৰিপাৰা গাঁৱত এনে অনাকাংক্ষিত মৃত্যুৰ হাৰ হ্ৰাস হ'ব বুলি আশা কৰাৰ ইংগিত প্ৰৱহমান হৈ আছে। আকাশত থকা ভগৱানৰ ঘৰৰ পৰা ডেউকা কোবাই কোবাই ঈশ্বুৰ মৰমৰ সহোদৰ মাইনাটো সিহঁতৰ ঘৰলৈ উৰি আহিব বুলি ঈশ্বুয়ে দেখা সপোনৰ মাজেৰে উপন্যাসখনৰ পৰিসমাপ্তি ঘটিছে। এই পৰিসমাপ্তিৰ মাজত অজ্ঞতা, অনগ্ৰসৰতা, অন্ধবিশ্বাসৰ নেতিবাচক প্ৰভাৱে গভীৰভাৱে শিপাই থকা জনজাতীয় গাঁওখনত নতুন দিনৰ সঞ্চাৰ হোৱাৰ সম্ভাৱনা নিহিত হৈ আছে।

সামগ্ৰিকভাৱে সাহিত্যকৰ্ম আৰু অভিযোজিত কৰ্মৰ বিষয়বস্তুৰ ক্ষেত্ৰত বিস্তৰ ব্যৱধান পৰিলক্ষিত হোৱা নাই। ডাইনী নিগ্ৰহৰ দৰে অমানৱীয় কাৰ্যৰ বিৰুদ্ধে এজন শিশুৱে সাব্যস্ত কৰা প্ৰতিবাদক কেন্দ্ৰ কৰি উপন্যাস আৰু চলচ্চিত্ৰ উভয়তে বিষয়বস্তুৰ পটভূমি নিৰ্মাণ হৈছে। উপন্যাসৰ কাহিনীৰ ব্যাপ্তি ঈশ্বুৰ শৈশৱৰ মাজতে সীমাবদ্ধ হোৱাৰ বিপৰীতে চলচ্চিত্ৰখনৰ কাহিনীয়ে প্ৰাপ্তবয়স্ক ঈশ্বুৰ জীৱনকো চিত্ৰনাট্যই বিচৰা ধৰণে সাঙুৰি লোৱা দেখা গৈছে। ডাইনী হত্যাৰ দৰে সামাজিক ব্যাধি নিৰ্মূলকৰণৰ বাবে অনগ্ৰসৰ অঞ্চলসমূহৰ ৰাইজক সজাগ কৰি তুলিবলৈ যথোপযুক্ত পদক্ষেপ গ্ৰহণ কৰাৰ অভিপ্ৰায় উপন্যাখনৰ সৃষ্টিৰ অন্তৰালত নিহিত হৈ আছে। অভিযোজিত চিত্ৰকৰ্মও এই উদ্দেশ্যৰেই অনুৱৰ্তী। চলচ্চিত্ৰখনৰ পৰিসমাপ্তিলৈ মন কৰিলে দৃষ্টিগোচৰ হয় যে ডাইনী, ভূত-প্ৰেত, যাদু-মন্ত্ৰৰ দৰে অন্ধবিশ্বাসে গ্ৰাস কৰি থকা অঞ্চলৰ পৰা গৈ এজন ব্যক্তিয়ে বনৌষধিৰ বিশেষজ্ঞ হিচাপে আন্তঃৰাষ্ট্ৰীয় পৰ্যায়ত যি সুখ্যাতি অৰ্জন কৰিলে ; সেই প্ৰাপ্তিয়ে বিজ্ঞানসম্মত চিন্তাধাৰাৰ প্ৰসাৰৰ দিশত এক আমূল পৰিৱৰ্তনৰ ইংগিত বহন কৰিছে। অৱশ্যে চলচ্চিত্ৰখনৰ শেষৰ পৰ্যায়ত সেই অনাকাংক্ষিত ঘটনা প্ৰবাহে অম্বিকাৰ মনস্তত্বত কেনেধৰণৰ প্ৰভাৱ পেলাইছে, সেই সম্পৰ্কে একো চিত্ৰায়ণ কৰা দেখা নগ'ল।

অভিযোজিত কৰ্মত উপন্যাসৰ তুলনাত ৰাধা নৱৌৰ চৰিত্ৰটোক অধিক সক্ৰিয় আৰু পৃথক ৰূপত উপস্থাপনৰ জৰিয়তে বিষয়বস্তুৰ ক্ষেত্ৰত এক নাৰীবাদী দৃষ্টিকোণ আৰোপৰ প্ৰয়াস কৰা দেখা গৈছে। জনগোষ্ঠীয় সমাজ-জীৱনত সাধাৰণতে নাৰীৰ ওপৰতে ডাইনীৰ মিছা অপবাদ জাপি দিয়া হয়। এইক্ষেত্ৰত ৰাধাৰ চৰিত্ৰটোৱে অম্বিকাৰ ওপৰত হোৱা নিৰ্যাতনৰ সময়ত নিজৰ স্থিতি স্পষ্টভাৱে প্ৰকাশ কৰিছে। ৰাধাৰ চৰিত্ৰটোৰ মাজেৰে চিত্ৰ নিৰ্মাতাই সেই নিৰ্মম সত্যক তুলি ধৰিছে যে আজি অম্বিকাই সন্মুখীন হোৱা শোষণৰ জ্বালা কেৱল অম্বিকা নামৰ নাৰীগৰাকীৰ মাজতেই শেষ হৈ যোৱা নাই। ডাইনীৰ অপবাদে ভৱিষ্যতে অম্বিকাৰ দৰে অন্য বহুতো নিৰ্দোষী নাৰীক পুৰি শেষ কৰিব। সেয়েহে এনে অন্যায়-অবিচাৰৰ অন্ত পৰিবলৈ অম্বিকাৰ দৰে নিৰপৰাধী নাৰীৰ হকে মাত মাতিবলৈ সমাজখনক ৰাধাৰ চৰিত্ৰটোৰ মাধ্যমেদি সষ্টম কৰি তোলাৰ এক দৃষ্টিকোণ অভিযোজিত কৰ্মৰ মাজেদি উত্থাপন কৰা হৈছে। এক সংবেদনশীল

বিষয়বস্তুৰ আধাৰত ৰচিত উপন্যাসখনে অভিযোজনাৰ মাধ্যমেদি এক অনন্য ব্যাপ্তি লাভ কৰিছে বুলি নিঃসন্দেহে ক'ব পৰা যায়।

অভিযোজিত চিত্ৰৰূপ 'ঈশ্বু'ৰ কেন্দ্ৰীয় চৰিত্ৰ দহ বছৰীয়া 'ঈশ্বু' অৰ্থাৎ ঈশ্বুৰ প্ৰসাদ ৰাভা। এই শিশুটোৰ দৃষ্টিৰেই চলচ্চিত্ৰখনৰ বিষয়বস্তু উপস্থাপিত হৈছে। চৰিত্ৰটোৰ ৰূপায়ণৰ ক্ষেত্ৰত নিৰ্মাতাই উপন্যাসখনত চিত্ৰিত হোৱা চৰিত্ৰটোৰ তুলনাত অত্যধিক সালসলনি ঘটোৱা নাই। কিন্তু 'ঈশ্বু'ৰ চৰিত্ৰটো অভিযোজিত কৰ্মত সাহিত্যকৰ্মতকৈ সক্ৰিয় ৰূপত চিত্ৰায়িত হৈছে। অভিযোজন প্ৰক্ৰিয়াত ঈশ্বুৰ মূল চাৰিত্ৰিক বৈশিষ্ট্যসমূহ যেনে- সৰলতা, সততা, অনুসন্ধিৎসা, সাহস, প্ৰতিবাদী সত্তা ইত্যাদি দিশৰ কোনো পৰিৱৰ্তন হোৱা নাই। চলচ্চিত্ৰখনত ঈশ্বুৰে যিবোৰ কাৰ্য সম্পাদন কৰিছে; সেই কাৰ্যসমূহে কাহিনীৰ গতি, দিশ আৰু ফলাফলৰ ক্ষেত্ৰত নিৰ্ণায়ক ভূমিকা পালন কৰিছে। উপন্যাসখনত চিত্ৰিত হোৱা ঈশ্বুৰ চৰিত্ৰটো সৎসাহসী আৰু আৰক্ষী প্ৰশাসনে অম্বিকাক উদ্ধাৰ কৰাৰ ক্ষেত্ৰত চৰিত্ৰটোৱে পূৰ্ণ সহযোগিতা আগবঢ়াইছে। অভিযোজিত কৰ্মৰ ক্ষেত্ৰত দেখা গৈছে যে ঈশ্বুৰ প্ৰতিবাদী সত্ত্বাক পৰিচালকে অধিক সক্ৰিয়ভাৱে উপস্থাপন কৰিছে। উপন্যাসত গাঁৱৰ ৰাইজে অম্বিকা বৰমাকক কৰা পাশৰিক অত্যাচাৰ দেখি ঈশ্বুৰ অন্তৰাত্মা কঁপি উঠিছে। সেই অমানৱীয় ঘটনাৰ পৰৱৰ্তী সময়ত গাঁৱৰ পৰা অন্তৰ্ধান হোৱা অম্বিকাক বিচাৰি ঈশ্বুৱে হাহাকাৰ কৰিছে। কিন্তু কোনো ধৰণৰ ফলপ্ৰসু কাৰ্যপন্থা গ্ৰহণ কৰি অম্বিকাৰ শুং-সূত্ৰ বিচাৰি উলিওৱাৰ ক্ষেত্ৰত কণমাণি শিশুটো সফল হোৱা নাই। এই ক্ষেত্ৰত অভিযোজিত চিত্ৰকৰ্মত উপস্থাপিত হোৱা 'ঈশ্বু'ৰ কাৰ্য-কলাপ কিছু পৃথকধৰ্মী। চলচ্চিত্ৰখনত দেখা গৈছে যে ডাইনীৰ সন্দেহত গাঁওবাসীয়ে অম্বিকা জেঠিক কৰা অমানুষিক অত্যাচাৰৰ পিছত গাঁৱৰ পৰা নিৰুদ্দেশ হোৱা অম্বিকাক উদ্ধাৰ কৰিবলৈ ঈশ্বু দৃঢ় সংকল্পবদ্ধ। নিৰ্দোষী অম্বিকাক ঘূৰাই আনিবলৈ ঈশ্বু কিছু ক্ষেত্ৰত দুঃসাহসী হৈ উঠিছে। চলচ্চিত্ৰৰ ঈশ্বুৱে সিপ্না নৈ পাৰ হৈ বনৰীয়া জীৱ-জন্তুলৈ ভ্ৰূক্ষেপ নকৰি, পৰিয়াল গাঁওবাসী সকলোৰে অজ্ঞাতে অকলে ঘন জংঘললৈ গৈ অম্বিকা জেঠিয়েকক উদ্ধাৰ কৰিবলৈ বদ্ধপৰিকৰ হৈছে। অটব্য অৰণ্যৰ মাজত অম্বিকাক বিচাৰি উলিয়াবলৈ ঈশ্বুৱে মানিমুনি শাকৰ পাতেৰে সুহুৰি বজাই জেঠিয়েকৰ সঁহাৰিলৈ অপেক্ষা কৰিছে। বনদৱৰ প্ৰস্তুত কৰিবলৈ বনশাক বিচাৰি ঘূৰি ফুৰোতে এদিন অম্বিকাই তাক মনোৰঞ্জনৰ বাবে বজাবলৈ শিকোৱা মানিমুনি শাকৰ পাতৰ পেঁপাৰ সঁজুলিক ঈশ্বুৱে অম্বিকাৰ সন্ধান পাবলৈ প্ৰয়োগ কৰা কাৰ্যই চৰিত্ৰটোৰ বুদ্ধিমত্তাৰ পৰিচয় দিছে। মৰমৰ জেঠিয়েকক উদ্ধাৰ কৰাৰ তাড়নাত সাঁতুৰিব নজনা ঈশ্বুৱে সিপ্না নৈত জাপ দিবলৈয়ো কুণ্ঠাবোধ কৰা নাই। উপন্যাসখনত নথকা কিন্তু চলচ্চিত্ৰখনত চিত্ৰ নিৰ্মাতাই নিজাববীয়াকৈ সংযোজন কৰা এই অনুষংগটোৱে 'ঈশ্বু' চৰিত্ৰটোক সাহিত্যকৰ্মৰ তুলনাত অধিক দৃঢ় ৰূপত তুলি ধৰিছে।

চলচ্চিত্ৰখনৰ আৰম্ভণিতে সংযোজিত বলুকা কলা (Sand art) ৰ দৃশ্যাংশটোৱে চলচ্চিত্ৰখনক নান্দনিক দৃষ্টিকোণৰ দিশৰ পৰা এক অভিনৱত্ব প্ৰদান কৰিছে। 'সাহসী আপীৰ সাধু' নামেৰে অম্বিকাই ঈশ্বুক যি সাধুকথা শুনাইছে; সেই সাধুকথাৰ মাজেৰে অম্বিকাৰ অতীত জীৱন আৰু বনৌষধিৰ প্ৰতি অম্বিকা আসক্ত হোৱাৰ কাৰণ সম্পৰ্কে দৰ্শক অৱগত হৈছে। বলুকা কলা (Sand art) ৰ মাধ্যমেদি উপস্থাপন কৰা সাধুটোৰ শেষত অম্বিকা আৰু ঈশ্বুৰ মাজত হোৱা কথোপকথনৰ জৰিয়তে চৰিত্ৰ দুটাৰ মাজৰ আত্মিক সম্পৰ্কৰ বিষয়েও এক ইংগিত প্ৰদান কৰা হৈছে। চলচ্চিত্ৰখনত বলুকা কলা (Sand art) ৰ ব্যৱহাৰ আৰু এক দৃশ্যাংশৰ উপস্থাপনৰ প্ৰসংগত প্ৰয়োগ কৰা দেখা গৈছে। কাৰিপাৰা গাঁৱৰ উৎপত্তি সম্পৰ্কে আইতাকে ঈশ্বুক যি সাধুকথা শুনাইছে ; সেই অনুষংগটোৰ উপস্থাপন কৰোতে বলুকা কলাৰ ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে।

চলচ্চিত্ৰৰ সামগ্ৰিক উপস্থাপনৰ ক্ষেত্ৰত পোহৰৰ গুৰুত্ব অপৰিসীম। পৰিচালকে দৰ্শকৰ মনস্তত্বত ছাঁ-পোহৰৰ মাজেৰে ভিন্নধৰ্মী আৱেগৰ সঞ্চাৰ কৰিবলৈ সক্ষম হয়। ঈশ্বুৱে অম্বিকাক সিপ্না নৈ পাৰ হৈ হাবিত বিচাৰি ফুৰা, হাবিত অম্বিকাৰ সৈতে কথা পাতি উভতি আহি ৰাধা নবৌক লগ পোৱাৰ দৃশ্যাংশৰাজি সূর্য অস্তগামী হ'বলৈ ধৰাৰ এক অপূর্ব পৰিৱেশৰ মাজেৰে আগবাঢ়িছে। ভিন্নধৰ্মী এংগল আৰু শ্বটৰ পয়োভৰে এই সময়ছোৱাৰ নান্দনিকতা দুগুণে বৃদ্ধি কৰাৰ লগতে দৰ্শকৰ মনত ভয়, উৎকণ্ঠা, উত্তেজনা, উৎসুকতা ইত্যাদি আৱেগিক প্ৰতিক্ৰিয়াৰ উদ্ৰেক কৰিছে। এটা মিড শ্বটৰ মাজেৰে ঈশ্বুৱে নাও চলাই সিপ্না নৈ পাৰ হ'বলৈ ধৰা দৃশ্যটো extreme long shot লৈ স্থানান্তৰিত কৰি সিপ্না নৈৰ নৈসৰ্গিক সৌন্দৰ্য ফুটাই তুলিবলৈ চেষ্টা কৰা হৈছে। high angle শ্বটৰ মাজেৰে ঈশ্বুৱে জংঘলত অম্বিকাক বিচাৰি ফুৰা দেখুওৱাৰ লগতে মাজে মাজে হাবিৰ বনৰীয়া জীৱ-জন্তু,

চৰাই-চিৰিকটিৰ শব্দ আৰু ছাঁ-পোহৰৰ তাৰতম্যৰ মাজেৰে এক উৎকণ্ঠাজনিত পৰিৱেশৰ সৃষ্টি কৰা হৈছে। ঈশ্বুৰে মানিমুনি শাকৰ পাতেৰে পেঁপা বজাই অম্বিকাক বিচৰা কার্য ক্লু'জ আপ শ্বট আৰু মিড শ্বটৰ মাজেৰে দেখুওৱা হৈছে। ঈশ্বু আৰু অম্বিকাৰ কথোপকথন প্ৰথমে এক মিড শ্বটৰ পৰা মন্থৰ গতিত এক ক্লু'জ আপ শ্বটলৈ পৰিৱৰ্তিত হৈছে। ক্ৰমশঃ আন্ধাৰ হ'বলৈ ধৰা পৰিৱেশত অম্বিকা আৰু ঈশ্বুৰ কথোপকথনৰ সমান্তৰালভাৱে এক কৰুণ আৱহ সংগীতৰ ব্যৱহাৰৰ জৰিয়তে অম্বিকাৰ যন্ত্ৰণা; অৱশ শৰীৰ; ক্লান্ত মানসিক অৱস্থা; ঈশ্বু আৰু অম্বিকাৰ নিঃস্বাৰ্থ, নিষ্কলুষ সম্পৰ্কটোৰ সৈতে দৰ্শকক একাত্ম কৰি তুলিছে।

উপসংহাৰ ঃ

উৎপল বৰপূজাৰীয়ে এক পৰিচ্ছন্ন চলচ্চিত্ৰীয় ভাষাৰ আশ্ৰয়ত নান্দনিক চেতনা আৰু সুসংহত চলচ্চিত্ৰবোধৰ সমন্বয়ৰে অভিযোজিত চিত্ৰৰূপ 'ঈশ্বু'ক এক অভিনৱ মাত্ৰা প্ৰদান কৰিছে বুলিব পৰা যায়।চলচ্চিত্ৰখনত জনগোষ্ঠীয় গ্ৰাম্য সমাজ জীৱনৰ ছবি ফুটাই তুলিবলৈ চিত্ৰ নিৰ্মাতাই চৰিত্ৰসমূহৰ সাজ-পাৰ, কথনভংগী, গৃহসজ্জা, আৱহ সংগীত ইত্যাদি সকলো দিশতে পৰম্পৰাগত স্থানীয় ঠাঁচ দিবলৈ চেষ্টা কৰিছে। ঈশ্বুহঁতৰ ঘৰ, ঘৰৰ চৌপাশ, চোতাল সকলোতে ৰাভা থলুৱা জনগোষ্ঠীয় গৃহসজ্জাৰ আদর্শ অনুকৰণ কৰি দৃশ্যপট অংকন কৰা হৈছে।

ঈশ্বু আৰু সমনীয়াবোৰে সিপ্না নৈৰ পাৰত ওমলি থাকোতে উলাহতে গোৱা ৰাভা গীতৰ কলি, আইতাকে মাজে-সময়ে গুণগুণাই থকা ৰাভা লোকসংগীতে চলচ্চিত্ৰখনক এক থলুৱা মাত্ৰা প্ৰদান কৰিছে। বুদ্ধিদীপ্ত কলাত্মক চিনেমেটোগ্ৰাফী, সুবিন্যস্ত শব্দ সংযোজন, বাস্তৱানুগ অভিনয় আদি উপাদানৰ সু-সমন্বয়েৰে উৎপল বৰপূজাৰীৰ 'ঈশ্বু' অসমীয়া অভিযোজিত চলচ্চিত্ৰৰ পৰিমণ্ডলত নিঃসন্দেহে এক সার্থক সংযোজন ৰূপে পৰিগণিত হৈছে। ❑

গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

দত্ত, উৎপল। *চলচ্চিত্ৰৰ ৰসাস্বাদন*। গুৱাহাটী ঃ পূৰ্বায়ণ প্ৰকাশন, ২০১৯। প্ৰকাশিত।

পাঠক, অমৰ। *চলচ্চিত্ৰ*। গুৱাহাটী ঃ অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, ২০১২। প্ৰকাশিত।

বৰপূজাৰী, মনোজ। জ্যোতিপ্ৰসাদৰ পৰা *জাহ্নু জাংদাও আৰু অন্যান্য*। গুৱাহাটী ঃ অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, ২০১৬। প্ৰকাশিত।

ভট্টাচার্য, মণিকুন্তলা। *ঈশ্বু*। গুৱাহাটীঃ ষ্টুডেণ্টচ্ ষ্ট'ৰচ, ২০১০। প্ৰকাশিত।

ঈশ্বু। বৰপূজাৰী, উৎপল। চিলড্রেন ফিল্ম চ'চাইটী, ২০১৭।

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

ড° ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াৰ যৌতুক গল্প আৰু দীনবন্ধু নাটকৰ এক তুলনামূলক আৰু বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন

নিশামণি মহন্ত
গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
তেজপুৰ বিশ্ববিদ্যালয়
নপাম, তেজপুৰ (অসম)-৭৮৪০২৮
৯১০১১০৮৮৭৪
nishamonitu@gmail.com

ভাস্কৰ জ্যোতি বৰ্মন
গৱেষক, ইংৰাজী বিভাগ, কটন
বিশ্ববিদ্যালয়, পাণবজাৰ, গুৱাহাটী
৯১০১৩৮৮৭৩০
barmanbhaskar001@gmail.com

আধুনিক অসমীয়া সাহিত্যৰ এগৰাকী কৰ্ণধাৰ ড° ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়া একাধাৰে এজন ঔপন্যাসিক, গল্পকাৰ, নাট্যকাৰ আৰু চলচ্চিত্ৰ পৰিচালক। কিন্তু ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়া বুলি প্ৰথমেই চুটিগল্প লেখকজন আৰু চলচ্চিত্ৰ নিৰ্মাতাজনৰ কথা যিদৰে মনলৈ আহে নাট্যকাৰজনৰ কথা বহুসময়ত এৰাই চলা হয়। কিন্তু চুটিগল্পৰ লগতে অনাতাঁৰ নাটকৰপৰা আৰম্ভ কৰি মঞ্চ নাটকলৈকে, বিশেষকৈ ভ্ৰাম্যমান নাট্যজগতখনত তেওঁৰ অৱদানখিনিক আওঁকান কৰিলে তেওঁৰ সৃষ্টিৰ লগতে অসমীয়া সাহিত্যকো আওঁকান কৰা হ'ব।

চুটিগল্প লেখকৰূপে অতুলনীয় জনপ্ৰিয়তাৰ শীৰ্ষত থকা ড° ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াৰ বহুবোৰ চুটিগল্পই নাটকৰ ৰূপ পাইছে। উদাহৰণস্বৰূপে তেওঁৰ অতি জনপ্ৰিয় চুটিগল্প গহুৰৰ মূল কথাখিনি অক্ষুণ্ণ ৰাখি তাৰ পটভূমি অসমীয়া সমাজখনক লৈ তেওঁ ৰচনা কৰিছিল গহুৰ নাটকখন। একেদৰে তেওঁৰ জনপ্ৰিয় ভ্ৰাম্যমান মঞ্চনাট দীনবন্ধুৰ কাহিনী আৰু মূল কথাখিনিৰ ক্ষেত্ৰত তেওঁৰেই যৌতুক নামৰ গল্পটোৱে অৰিহণা যোগাইছে। যৌতুক আৰু দীনবন্ধু উভয়তে এটা সাধাৰণ কাহিনী লৈ ইয়াৰ মাজেদিয়ে আমাৰ বিশেষকৈ গ্ৰাম্য সমাজৰ ত্ৰুটিপূৰ্ণ এটি পৰম্পৰাক কটাক্ষ কৰা হৈছে। বিয়াৰ আনুষ্ঠানিকতাৰ নামত দেউলীয়া হোৱা দীনবন্ধুৱে পৰম্পৰা ভাঙিবলগীয়া হৈছে তেওঁৰ কন্যাৰ বিবাহৰ সময়ত। যৌতুক আৰু দীনবন্ধু সম্পূৰ্ণৰূপে সামাজিক সমস্যাৰ ভিত্তিত ৰচিত হৈছে। ইয়াৰ নায়ক সাহসী হৈ উঠিছে বিভিন্ন প্ৰতিকূল অৱস্থাৰ আঘাতত। উল্লেখযোগ্য যে আকাশবাণী গুৱাহাটী কেন্দ্ৰই আবেলি নামেৰে প্ৰচাৰ কৰা নাটখনৰ জুমুঠিটোকে লৈ ভ্ৰাম্যমানৰ বাবে দীনবন্ধু ৰচনা কৰা হৈছে।

এটি চুটিগল্পৰ আধাৰত নাটখনি ৰচনা কৰা হৈছে যদিও বিষয়বস্তু আৰু কেইটিমান সংলাপৰ বাহিৰে ভালেখিনি কথাত আমি গল্পটো আৰু নাটখনৰ মাজত পাৰ্থক্য লক্ষ্য কৰোঁ। অৰ্থাৎ গল্পটোক নাট্যৰূপ দিবলৈ যাওঁতে কাহিনী কিছু দীঘল আৰু চৰিত্ৰৰ সংখ্যা কিছু বৃদ্ধি কৰা আমাৰ পৰিলক্ষিত হৈছে। লগতে সংলাপ আদিৰ ক্ষেত্ৰতো পাৰ্থক্য কিছু দেখিবলৈ পোৱা যায়। যৌতুক আৰু দীনবন্ধুৰ মাজত দেখিবলৈ পোৱা এই পাৰ্থক্যসমূহৰ বিচাৰ কৰি নিম্নলিখিতধৰণে এটি তুলনামূলক বিশ্লেষণ দাঙি ধৰা হ'ল--

কাহিনীৰ ক্ষেত্ৰত-

গল্পটোৰ কাহিনীত এটি গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা লৈছে দীননাথে লিখা গল্প আৰু সেই

গল্পটোৰ জৰিয়তে জীয়েক সুৰভিৰ প্ৰতি লিখা চিঠিখনে। আনহাতে নাটখনত এনেধৰণৰ কোনো চিঠিৰ উল্লেখ পোৱা নাযায়। ইয়াত এটা প্ৰত্যক্ষ, স্থিৰ কাহিনী আছে।

গল্পটোত কাহিনীৰ আৰম্ভণি আৰু নাটকখনত কাহিনীৰ আৰম্ভণি সম্পূৰ্ণ বেলেগ। অৱশ্যে গল্পটোৰ প্ৰথমভাগত থকা কথাখিনি নাটকখনৰ মাজভাগত সন্নিৱিষ্ট কৰা হৈছে।

গল্পটোৰ আৰম্ভণি ঘটিছে দীননাথৰ কিছু চিন্তা-ভাৱনাৰ জৰিয়তে, নাটকখনৰ আৰম্ভণি ঘটিছে ধৰ্মকান্তৰ জৰিয়তে। আকৌ এই ধৰ্মকান্ত চৰিত্ৰ অৱস্থিতি গল্পটোৰ ক'তোৱেই নাই।

গল্পটোত দীননাথে চাকৰি কৰাৰ লগতে সাহিত্যচৰ্চাও কৰে। বাঁহীৰ সুৰেৰে সকলোকে মুগ্ধ, তন্ময় কৰি বাটে বাটে বাঁহী বেচিবলৈ ঘূৰি ফুৰা এক উদাস, যাযাবৰ হেন যুবকৰ প্ৰতি ধনীৰ দুলালীৰ অনুকম্পা, ৰাক্ষসী হেন মাহীমাক আৰু তেওঁৰ হাতৰ পুতলা হেন দেউতাকৰ অত্যাচাৰত জৰ্জৰিত ডেকা চিত্ৰশিল্পীৰ বিষময় জীৱন- এনেধৰণৰ বিভিন্ন পাকচক্ৰত পৰি তেওঁৰ এই গল্পবোৰে প্ৰকাশিত ৰূপ পাবলৈ সক্ষম হোৱা নাছিল। কিছুমান আলোচনীৰ সম্পাদকে আনকি তেওঁৰ গল্পসমূহক দুৰ্বল, পুৰণি, নতুনত্বহীন বুলিও আখ্যা দিছিল। তদুপৰি তেওঁ গল্প পঢ়ি বলৈ আলোচনা চক্ৰৰ বৈঠকতো উপস্থিত হৈছিল, কিন্তু গল্প পাঠ কৰাৰ সুবিধাকণ তেওঁ লাভ কৰা নাছিল। মুঠতে গল্পকাৰ হিচাপে তেওঁ বিচাৰাধৰণৰ এটা কেৰিয়াৰ বা সুযোগ লাভ কৰিব পৰা নাছিল।

গল্পটোত দীননাথৰ সাহিত্যিক জীৱনৰ ওপৰত অধিক গুৰুত্ব দিয়াৰ পৰিৱৰ্তে নাটকখনত দীনবন্ধুৰ চাকৰি জীৱনকহে পোহৰাই তোলা হৈছে। ইয়াত দীনবন্ধুক এজন সৎ, নিষ্ঠাৱান আৰু আদৰ্শগত কৰ্মচাৰী হিচাপে দেখুওৱা হৈছে। তেওঁ ঘোচ লোৱাৰ পক্ষপাতী নহয়। এনেধৰণৰ আদৰ্শত বিশ্বাসী হোৱা বাবে তেওঁৰ তলৰ বহু কৰ্মচাৰী তেওঁতকৈ ওপৰত গুছি গৈছে, কিন্তু তেওঁ তেওঁৰ আগৰ স্থানতে আছে। দীনবন্ধুৰ এই ব্যক্তিত্বৰ কথা তেতিয়া জানিব পাৰি, যেতিয়া ৰমেশে তেওঁৰ ককায়েকৰ কোনো এটি কামৰ বিনিময়ত দীনবন্ধুক এহেজাৰ টকা যাচিছিল আৰু দীনবন্ধুৱে সেই ঘোচ প্ৰত্যাখান কৰাই নহয়, বৰং ৰমেশৰো চকু মেল খুৱাইছিল।

গল্পটোৰ কাহিনী এটা দিনতে শেষ হোৱাৰ দৰে হৈছে। ইয়াত সেই দিনটোৱে বিশেষ গুৰুত্ব পাইছে, যিটো দিনত সুৰভিয়ে দেউতাকৰ গল্প কপি কৰিছে। সেই গল্পটোতেই তেওঁ তেওঁৰ জীৱন বৃত্তান্ত জীয়েক সুৰভিৰ আগত বৰ্ণনা কৰিবলৈ চেষ্টা কৰিছে।

আনহাতে নাটকখনৰ কাহিনীটোৱে দীনবন্ধুৰ বিয়াৰপৰা আৰম্ভ কৰি দুয়োজনী জীয়েকৰ বিয়ালৈকে তেওঁৰ জীৱন পৰিক্ৰমাটোক দাঙি ধৰিছে।

গল্পটোৰ কাহিনী আৰু নাটখনৰ কাহিনীৰ মাজত এটি চকুত পৰা বৈসাদৃশ্য হৈছে- দীননাথৰ পত্নীৰ উপস্থিতি। গল্পটোত দীননাথৰ পত্নীৰ উপস্থিতিৰ ওপৰত বৰ বেছি গুৰুত্ব দিয়া হোৱা নাই যদিও নাটকখনত কৰাৰ দৰে চৰিত্ৰটোক সম্পূৰ্ণৰূপে মাৰি পেলোৱা হোৱা নাই।

নাটখনত দীনবন্ধুৰ পত্নী সাৱিত্ৰীৰ মুখত প্ৰথম অৱস্থাত দুই এটি সংলাপ দিয়া হৈছে। কিন্তু পিছলৈ সৰু জীয়েক বাণীৰ জন্মৰ পিছত সাৱিত্ৰীৰ মৃত্যু হৈছে।

যৌতুক গল্পটোৰ শিৰোনামৰ অৰ্থ নাটকখনৰ জৰিয়তে বেছি স্পষ্টকৈ প্ৰকাশ পোৱা যেন অনুভৱ হয়। কাৰণ গল্পটোৰ কাহিনীত কেৱল বিয়া পাতি কোঙা হোৱা দীননাথৰ অৱস্থাৰ চিত্ৰ অংকিত হৈছে। দীননাথৰ সেই অৱস্থাৰ কাৰণ যৌতুক নহয়। জীয়েক সুৰভিৰ বিয়াৰ বাবে তেওঁ যৌতুকৰ কথা চিন্তা কৰিছে যদিও তাৰ স্পষ্ট প্ৰকাশ ইয়াত পৰিলক্ষিত হোৱা নাই।

কিন্তু নাটকখনত পিতৃ দীনবন্ধুৱে ডাঙৰ জীয়াৰী ৰাণীৰ বিবাহৰ সময়ত দৰাঘৰৰপৰা বিচৰা যৌতুকৰ লিষ্টখন পূৰণ কৰিবলৈ গৈ পিছলৈ ধাৰত পোত খাই সৰু জীয়েক বাণীক পলাই যোৱাৰ দৰে পৰামৰ্শ দিবলৈ বাধ্য হৈছে।

গল্পৰ কাহিনীটোৰ যতি পৰিছে সুৰভিয়ে প্ৰেমিক প্ৰমোদলৈ চিঠিখন পঠোৱাৰ জৰিয়তে। কিন্তু নাটখনত দীনবন্ধুৰ সৰুকন্যা বাণীয়ে দেউতাকে কোৱাৰ ধৰণে বিপুলৰ সৈতে পলাই যোৱা কামটো সম্পন্ন হৈছে আৰু নাটৰ কাহিনীটোৰ একেবাৰে শেষত কথক হিচাপে থকা চৰিত্ৰ ধৰ্মকান্তৰ সংলাপৰ সংযোজন ঘটোৱা হৈছে।

গতিকে দেখা যায় যে গল্পটোৰ আৰু নাটকখনৰ বিষয়বস্তু আৰু নায়কৰ মাজত সামঞ্জস্য থাকিলেও কাহিনী দুটাৰ মাজত বহুখিনি প্ৰভেদ আছে।

চৰিত্ৰ সৃষ্টিৰ ক্ষেত্ৰত-

যৌতুক আৰু দীনবন্ধুত নায়ক হৈছে ক্ৰমে দীননাথ আৰু দীনবন্ধু। নায়ক চৰিত্ৰটোৰ বাহিৰে নাটকখনত প্ৰায়খিনি চৰিত্ৰই নতুন। গল্পটো প্ৰধানকৈ দীননাথ আৰু তেওঁৰ জীয়েক সুৰভি চৰিত্ৰটোৰ জৰিয়তেই সম্পন্ন হৈছে বুলি ক'ব পাৰি। এই দুটি চৰিত্ৰৰ বাহিৰে গল্পটিত আছে হৃদয়ানন্দ আৰু প্ৰমোদৰ চৰিত্ৰ। হৃদয়ানন্দই দীননাথৰ সৈতে অফিচত একেলগে চাকৰি

কৰে। প্ৰমোদ সুৰভিৰ প্ৰেমিক। মাজে-সময়ে দীননাথৰ পত্নীৰ উল্লেখ পোৱা যায় যদিও সেয়া অতি কম। ইয়াৰ কোনো এটি চৰিত্ৰই গল্পটোৰ কাহিনীভাগক আগবঢ়াই নিয়া পৰিলক্ষিত হোৱা নাই। দীননাথ আৰু সুৰভিয়েই ইয়াত মূল চৰিত্ৰ হিচাপে কাম কৰিছে।

আনহাতে নাটকখনত কেইবাটাও চৰিত্ৰৰ সমাবেশ ঘটিছে। ইয়াৰে প্ৰায় প্ৰতিটো চৰিত্ৰই নাটকখনৰ কাহিনীটোক আগবাঢ়ি যোৱাত সহায় কৰিছে। গল্পটোত দীননাথৰ এজনী জীয়েক সুৰভি আৰু দুজন পুতেক হোৱাৰ সলনি নাটখনত দীনবন্ধুৰ দুজনী জীয়েক- ৰাণী আৰু বাণী। ঠিক একেদৰে সুৰভিৰ প্ৰেমিক প্ৰমোদৰ দৰে ৰাণীৰ প্ৰেমিক ৰমেশ আৰু বাণীৰ প্ৰেমিক বিপুল। নাটখনত এটি গুৰুত্বপূৰ্ণ চৰিত্ৰ হৈছে ধৰ্মকান্ত, দীনবন্ধুৰ ভাৰাঘৰৰ মালিক। আকৌ সেইসময়ৰ তথাকথিত সমাজখনক প্ৰতিনিধিত্ব কৰিছে হলিৰাম, বলোভদ্ৰ নামৰ বয়সীয়াল ব্যক্তি দুজনে আৰু ৰমেশ দত্তৰ পিতৃ তথা ৰাণীৰ শহুৰ অৰবিন্দ দত্তই। এইকেইটা চৰিত্ৰৰ বাহিৰে কাহিনীটোৰ প্ৰয়োজনত সৃষ্টি হৈছে দীনবন্ধুৰ পত্নী সাবিত্ৰীকে ধৰি বেণ্ডপার্টীৰ মানুহ, কচাই, পিয়ন চৰিত্ৰৰ।

দুয়োটা কাহিনীত মূল চৰিত্ৰ দুটিৰ দীননাথ আৰু দীনবন্ধু প্ৰায় একে যদিও দুয়োৰে ব্যক্তিত্ব তথা জীৱনৰ মাজত কিছু অমিল পৰিলক্ষিত হৈছে। এইবিষয়ে ইতিমধ্যে আলোচনা কৰা হৈছে। অৰ্থাৎ যৌতুকত দীননাথ এজন কেৰাণী হোৱাৰ লগতে এজন গল্পকাৰ। নাটকত দীনবন্ধু গল্পকাৰ নহয়। নাটকত তেওঁক সাহিত্যচৰ্চাৰ সৈতে জড়ি ব্যক্তি হিচাপে দেখুওৱা হোৱা নাই। ইয়াত তেওঁ এজন সাধাৰণ কৰ্মচাৰী। লগতে নাটকখনত তেওঁ পিতৃ-মাতৃ দুয়োৰে কৰ্তব্য পালন কৰিবলগীয়া হৈছে, কাৰণ তেওঁৰ পত্নীৰ মৃত্যু হৈছে। জীয়েক দুজনীৰ সৈতে কৰা বন্ধুত্বসূলভ ব্যৱহাৰে তেওঁৰ ব্যক্তিত্বত এক বেলেগ জ্যোতি প্ৰদান কৰিছে। কাৰণ সাধাৰণতে দেখা যায় যে সন্তানবোৰৰ দেউতাকৰ সলনি মাকৰ সৈতেহে বেছি নিবিড় সম্পৰ্ক থাকে। এনে খুব কম পৰিয়াল থাকে, যত সন্তান আৰু দেউতাকৰ মাজত বন্ধুত্বপূৰ্ণ সম্বন্ধ থাকে। বৰ্তমান সময়ত এয়া বহু পৰিমাণে সম্ভৱ হৈ উঠিছে। কিন্তু গল্পটোৰ ৰচনাৰ সময়খিনিত এনেধৰণৰ পৰিৱেশ নাছিল বুলিবই পাৰি। গতিকে দীননাথ আৰু দীনবন্ধু চৰিত্ৰ দুটিৰ জৰিয়তে ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াই এক নতুনত্ব আনিবলৈ যত্ন কৰিছে বুলি কোৱাৰ অৱকাশ আমি পাওঁ।

ৰাণী, বাণী আৰু সুৰভি চৰিত্ৰৰ মাজতো কেইটিমান গুৰুত্বপূৰ্ণ দিশ পৰিলক্ষিত হৈছে। সুৰভি চৰিত্ৰটোৰ লগত কিছু বিষয় ৰাণী চৰিত্ৰটোৰ সৈতে মিলে আৰু আন কিছু বিষয় বাণী চৰিত্ৰটোৰ সৈতে খাপ খায়। সুৰভিৰ প্ৰেম আৰু ৰাণীৰ প্ৰেমৰ মাজত কিছু সাদৃশ্য আছে। গল্পটোত সুৰভিৰ প্ৰেম হৈছে প্ৰমোদৰ লগত, যিয়ে অফিচৰ কিবা কামত আহি তাতে আছেহি। প্ৰমোদৰ সুৰভিৰ সৈতে চিনাকি হোৱাৰ আগেয়ে দেউতাক দীননাথৰ লগতহে চিনাকি হৈছে। একেদৰে নাটখনতো ৰমেশে ৰাণীৰ সৈতে চিনাকি হোৱাৰ আগত দেউতাক দীনবন্ধুৰ লগতহে চিনাকি হৈছে। এই চিনাকি আৰু প্ৰেম হোৱাখিনিৰ ক্ষেত্ৰতহে সুৰভি আৰু ৰাণীৰ চৰিত্ৰ দুটি মিলে। তাৰ পাছত সুৰভি চৰিত্ৰটোৰ বহুখিনি দিশ বাণী চৰিত্ৰটোৰ সৈতে মিলা আমি দেখা পাওঁ। গল্পত সুৰভিক দেউতাকে পলাই যোৱাৰ পৰামৰ্শ দিয়া হৈছে। গতিকে দেখা যায় যে গল্পটোৰ এটা চৰিত্ৰকে নাট্যৰূপ দিয়াৰ সময়ত দুটা চৰিত্ৰত ভাগ কৰি পাঠক দৰ্শকৰ ওচৰ চাপিবলৈ যত্ন কৰা হৈছে। এইক্ষেত্ৰত নাট্যকাৰ বহু পৰিমাণে সাৰ্থকো হৈছে।

নাটকখনত গুৰুত্বপূৰ্ণ চৰিত্ৰ এটা হৈছে ধৰ্মকান্ত, যিটোৰ অৱস্থিতি গল্পটোত নাই। তেওঁ তথাকথিত সামাজিক পৰম্পৰাবোৰৰ সম্পূৰ্ণ বিৰোধী এটা চৰিত্ৰ। দীনবন্ধুৰ ভাৰাঘৰৰ মালিক তেওঁ, কিন্তু নাটকখনত দীনবন্ধুৰ এজন বন্ধুৰ দৰে, এজন অতি আপোন মানুহৰ দৰে কাম কৰিছে চৰিত্ৰটোৱে। ধাৰত পোত খাই থকা দীনবন্ধুৱে কেইবামাহৰো ঘৰভাৰা দিব নোৱাৰা সত্ত্বেও তেওঁ এই পৰিয়ালটোক খেদি পঠিওৱা নাই। বৰং দীনবন্ধুক বিভিন্ন বিপদত সহায়হে কৰিছে। নাটখনৰ শেষত থকা তেওঁৰ সংলাপটোৱেই বুজাই দিয়ে যে তেওঁ সেই দীনবন্ধুৰ পৰিয়ালটোৰ প্ৰতি কিমান আত্মীয়তা অনুভৱ কৰে। নিজে বিয়া নপতা ধৰ্মকান্তই এটা পৰিয়ালৰ মাজত প্ৰথমৰপৰা শেষলৈ উপস্থিত আছে, তেওঁলোকৰ সুখত সুখী, দুখত দুখী হৈছে। বৰঞ্চ এয়া সিদ্ধান্তও লৈছে যে নিজৰ মাটিখিনি তেওঁ দীনবন্ধুৰ দুই জী ৰাণী আৰু বাণীৰ হাতত গতাই দিব। ইয়াৰ জৰিয়তে বুজা যায় যে ধৰ্মকান্তয়ো ৰাণী আৰু বাণীক দীনবন্ধুতকৈ কমকৈ মৰম কৰা নাছিল, নিজৰ জী বুলি ভৱাৰ বাবেই হয়তো তেওঁ এনে কৰিবলৈ মন মেলিছিল।

গল্পটোত এই ধৰ্মকান্ত চৰিত্ৰটো নাই। নাটকখনত ই এটা সম্পূৰ্ণ নতুন অথচ অতি প্ৰয়োজনীয় চৰিত্ৰ।

নাটখনৰ আন দুটি চৰিত্ৰ বিপুল আৰু ৰমেশৰ অৱদানো ইয়াত গুৰুত্বপূৰ্ণ। দীনবন্ধু ঘৰখনৰ অৱস্থা জনাৰ পিছতো বিপুল

আৰু ৰমেশে তেওঁলোকক এৰি দিয়া নাই।

আকৌ বলোভদ্ৰ, হলিৰাম আৰু অৰবিন্দ দত্ত এই তিনিটা চৰিত্ৰই সমসাময়িক সমাজখনক প্ৰতিনিধিত্ব কৰিছে। সমাজত এনে এচাম লোক থাকে, যিয়ে আনৰ ভুলবোৰ উলিয়াই থাকে, কিন্তু সন্মুখত বেলেগ এখন মুখহে দেখুৱায়। তেনে দুটা চৰিত্ৰ হৈছে বলোভদ্ৰ আৰু হলিৰাম। অৰিন্দম দত্ত আকৌ যৌতুক পৰম্পৰাত বিশ্বাসী এজন অহংকাৰী, দাম্ভিক ব্যক্তি। পুতেক ৰমেশৰ বিয়াৰ সময়ত তেওঁ যৌতুকৰ এখন লিষ্ট ৰাণীৰ দেউতাক দীনবন্ধুলৈ পঠিয়াইছে। সেই যৌতুকৰ বাবেই ধাৰত পোত গৈ দীনবন্ধু শেষলৈ দেউলীয়া হৈছেগৈ।

এনেদৰে নাট্যকাৰে বিভিন্ন চৰিত্ৰৰ সমাহাৰণেৰে নাটখনক পূৰ্ণতা দিবলৈ যত্ন কৰিছে।

সংলাপ আৰু দৃশ্য সৃষ্টিৰ ক্ষেত্ৰত-

এখন নাটকৰ লগত জড়িত দুটা গুৰুত্বপূৰ্ণ বিষয় হৈছে ইয়াৰ সংলাপ আৰু দৃশ্য। দৃশ্য আৰু চৰিত্ৰসমূহৰ ভাবাৱেগপূৰ্ণ সংলাপসমূহে নাটক এখনক পাঠকৰ ওচৰলৈ চপাই নিয়াত যথেষ্ট সহায় কৰে। সেয়ে হয়তো ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াই যৌতুক গল্পটোক নাটকৰ ৰূপ দিবৰ সময়ত ভালেখিনি পৰিৱৰ্তন আনিবলৈ চেষ্টা কৰিছে।

গল্পটোৰ বহুকেইটা সংলাপ নাটকখনত সময়ে সময়ে সন্নিৱিষ্ট হৈছে। উদাহৰণস্ৱৰূপে-

ধৰ্মকান্ত- "তাকে ভাবো। এই যে পাটৰ পাঞ্জাৰী চোলা পিন্ধি মানুহ দৰা হয়, পিছলৈ সেই পাঞ্জাৰীটোৰ কি হয়গৈ বাৰু? .....কৰ লাজ যে ক'লৈ যায়।" (শইকীয়া, পৃ. ১৭)

এই সংলাপটো গল্পটোৰ একেবাৰে আৰম্ভণিতে আমি পাওঁ।

নাটখনত থকা আন এটা সংলাপ হৈছে-

দীনবন্ধু- "তাইৰ কপালৰ সোঁমাজত এটা ৰঙা ফোঁট থাকিব। সেই ফোঁটৰপৰা দুয়োখন গাললৈকে দুলানি সৰু সৰু ফোঁট নামি যাব। ..... সেইসময়ত দূৰত বেণ্ডপার্টিয়ে বজোৱা সুৰটো বৰ দুখৰ যেন শুনা যাব।" (শইকীয়া, পৃ. ২০৩)

উক্ত সংলাপটো গল্পটো শেষৰফালে থকা পৰিলক্ষিত হয়।

এনেদৰে গল্পটোৰ বহুকেইটা সংলাপ নাটখনত একে ৰাখিবলৈ চেষ্টা কৰি শইকীয়াই গল্প আৰু নাটখনৰ মাজৰ সম্পৰ্কসূত্ৰটোক অব্যাহত ৰাখিছে।

দৃশ্যসৃষ্টিৰ ক্ষেত্ৰত দেখা যায় যে নাটখনত বহু নতুন নতুন দৃশ্যৰ সৃষ্টি কৰা হৈছে। উদাহৰণস্ৱৰূপে বিপুল আৰু বাণীৰ গান গোৱাৰ দৃশ্যবোৰ, ৰাণী আৰু ৰমেশে নৈৰ পাৰত বহি কথা পতাৰ দৃশ্যসমূহ, বলোভদ্ৰ আৰু হলিৰামে খবৰ ল'বলৈ অহা দৃশ্য দুটা, দীনবন্ধুৱে ৰমেশৰ ঘৰলৈ গৈ অৰবিন্দ দত্তৰ সৈতে কথা পতা দৃশ্য আদি। এই দৃশ্যসমূহৰ উল্লেখ গল্পটোত একেবাৰে অনুপস্থিত। এই দৃশ্যসমূহে নাটখনক গল্পটোৰপৰা পৃথক কৰি তুলিছে আৰু পাঠক দৰ্শকৰ সন্মুখত স্পষ্ট ছবি এখন দাঙি ধৰিবলৈ চেষ্টা কৰিছে।

এনেদৰে বাস্তৱবাদী আৰু বৰ্ণনাধৰ্মী উপস্থাপনেৰে শইকীয়াই দীনবন্ধু নাটকখনক এখন সাৰ্থক মঞ্চনাট হিচাপে দৰ্শক পাঠকক মাজলৈ উলিয়াই দি অসমীয়া সাহিত্য, সাংস্কৃতিক জীৱনক চহকী কৰিছে। গল্প আৰু নাটকখনৰ মাজত থকা এই সাদৃশ্য বৈসাদৃশ্যসমূহে উভয়কে সুকীয়া পৰিচয় প্ৰদান কৰিছে।

উভয় পাঠৰে মাজত পৰিলক্ষিত হোৱা সাদৃশ্য আৰু বৈসাদৃশ্যসমূহৰ লগতে এই প্ৰবন্ধটোৰ জৰিয়তে পাঠ দুটাৰ মাজেৰে প্ৰতিফলিত হোৱা সমসাময়িক সমাজখনৰ কেতবোৰ দিশ যেনে মধ্যবিত্ত শ্ৰেণীৰ অৰ্থনৈতিক স্থিতি, সমাজত নাৰীৰ স্থিতি, চৰিত্ৰসমূহৰ মানসিক স্থিতি আদিক সাঙুৰি লোৱা হৈছে। কেইবাটাও তত্ত্বৰ আধাৰত এইসমূহৰ বিশ্লেষণ নিম্নোক্তধৰণে দাঙি ধৰিবলৈ যত্ন কৰা হ'ল-

দীননাথৰ চৰিত্ৰৰ জৰিয়তে মধ্যবিত্ত শ্ৰেণীৰ অৰ্থনৈতিক স্থিতি- এডাম স্মিথ (১৭২৩-১৭৯০) ৰ তত্ত্বৰ আধাৰত দুয়োটা পাঠৰ কাহিনীত চিত্ৰিত হোৱা গুৰুত্বপূৰ্ণ দিশটো হৈছে অৰ্থনৈতিক দিশ। আধুনিক অৰ্থনীতিৰ পিতৃস্ৱৰূপ এডাম স্মিথৰ তত্ত্বৰ সহায় লৈ এই দিশটোৰ বিশ্লেষণ কৰিবলৈ চেষ্টা কৰা হৈছে। তেওঁৰ ইনভিজিবল হেণ্ড(Invisible hand) তত্ত্বৰ ওপৰত আধাৰিত হৈছে এই বিশ্লেষণ। তেওঁ কৈছে- "... he intends only his gain, and he is in this, as in many other cases, led by an invisible hand to promote an end which was no part of his intention" (Smith, pp. 593-94).

স্মিথৰ An Inquiry into the Nature and Causes of the Wealth of Nations (১৭৭৬) গ্ৰন্থত প্ৰকাশ পোৱা এই তত্ত্বই নৱ্য উদাৰবাদৰ বিৰোধিতা কৰে। শ্ৰমিকৰ বিভাজনৰ দৃষ্টিভংগীৰ বিপৰীতে এই তত্ত্বই থিয় দিয়ে। কাৰণ এনে বিভাজনে এটা সমগোত্ৰীয় গোটৰ সৃষ্টি কৰে, যি এজন ব্যক্তিক কিছুমান সীমিত 'কাম'ৰ বাবে এটি যন্ত্ৰৰ সমান কৰি তোলে।

চুটিগল্পটোত চৰিত্রবোৰ পূৰ্ব-বৰ্ণিত কিছুমান কামৰ স্থিতিৰ ভিতৰত আৱদ্ধ হৈ থকা পৰিলক্ষিত হৈছে। এই কামৰ পৰিৱৰ্তন নহয়। তেওঁলোকৰ আচৰণসমূহ প্ৰায়ে এক শক্তিশালী আৰ্থ-সামাজিক বন্দীত্বৰ দ্বাৰা নিয়ন্ত্রিত হৈছে। দীননাথৰ দৰে চৰিত্রবোৰক তেওঁৰ সামাজিক মূল্যৰ সৈতে তেওঁৰ বিবাহৰ বাবে তৈয়াৰ কৰা পোছাকৰ মানদণ্ড, স্বাভাৱিক দিনবোৰত পিন্ধা পোছাকৰ মানদণ্ড আদিক সম্পৰ্কিত কৰা দেখা গৈছে-"মোৰ বিয়াত মই তিনিটা পাঞ্জাৰী চোলা সীয়াইছিলোঁ। এটা পাটৰ, বাকী দুটা কপাহী। পাটৰ চোলাটোত তিনিটা কপাহী চোলাৰ দাম পৰিছিল। মুঠতে কেৱল কপাহী চোলা লোৱা হ'লে মই মুঠতে পাঁচোটা চোলা কেতিয়াও নল'লোহেঁতেন। একেলগে দুটা চোলাও মই কেতিয়াও লৈ পোৱা নাছিলোঁ। মোৰ হিচাপ মতে সেই পাঁচোটা চোলা মই তিনি বছৰত ল'লোহেঁতেন। তাকো ইমান ভাল কাপোৰৰ চোলা মই নল'লোহেঁতেন। আগতে কেতিয়াও লোৱা নাছিলোঁ। " (শইকীয়া, পৃ. ২০) এগৰাকী ব্যক্তিৰ মানসিক স্থিতিয়ে বহুসময়ত তেওঁৰ অৰ্থনৈতিক স্থিতিক প্ৰতিফলিত কৰে। সেয়েহে সমাজত আন লোকৰ সন্মুখত গৌৰৱ আৰু আত্মমূল্যৰ অনুভূতি প্ৰদান কৰা এই এনেদৰে --- "..... মানুহে জানো তোমাৰ বিয়াখন খাই পিছত আৰু একো নোখোৱাকৈ থাকে? খায়। পিছে নামটো। এই যে সকলোৰে মুখে মুখে 'দীনবন্ধুৱে বিয়াখনত বেচ খুৱালে দিয়া'-এই নামটো ডাঙৰ কথা বুইছা? আৰু নাম মানেই ৰাইজৰ আশীৰ্বাদ"। (শইকীয়া, পৃ. ১৭২) এই কথাষাৰে শোষণমূলক সামাজিক চিন্তাধাৰাক সূচায় যাৰ জৰিয়তে সামাজিক-অনুষ্ঠানত অৰ্থনৈতিক শক্তি প্ৰদৰ্শনৰ ওপৰত আধাৰ কৰি এজন ব্যক্তিক অৱমাননা কৰা হয়। আমাৰ আলোচনাৰ ক্ষেত্রত তেওঁৰ নিজৰ বিবাহ। কাহিনীৰ গতিশীলতাৰ লগে লগে দেখা গৈছে যে নায়কৰ বন্ধু ধৰ্মকান্তক দিনবন্ধুৰ খৰচ কৰাৰ অভ্যাসে ক্রমান্বয়ে অসন্তুষ্ট কৰিছে — কিন্তু দিননাথৰ নিৰ্বোধতাই দৰ্শকক আচৰিত কৰি তুলিছে।

কাহিনীটোৰ প্ৰতিটো পৰিস্থিতিতে দেখা যায় যে সামাজিক নিয়মবোৰত প্ৰাসংগিক হোৱাৰ ইচ্ছাই দীনবন্ধু চৰিত্রটোক এনে কিছুমান সামগ্রী সংগ্রহ কৰিবলৈ বাধ্য কৰে যিবোৰ তেওঁৰ সাধ্যৰ বাহিৰত হয়। ফলস্বৰূপে তেওঁক ঋণৰ প্ৰয়োজন হয়। পৰৱৰ্তী সামাজিক প্ৰয়োজনতো তেওঁৰ ঋণ আৰু বৃদ্ধি হয় আৰু সমগ্র কাহিনীটোত ই অব্যাহত থাকে। অৰ্থনীতিবিদ এডাম স্মিথে তেওঁৰ Wealth of Nations(১৭৭৬) গ্রন্থত এই যুক্তিটো প্রদান কৰিছিল।

স্মিথৰ আন এটা শক্তিশালী যুক্তি হৈছে শ্রমৰ বিভাজন। দুয়োটা পাঠৰ কাহিনীতে, চৰিত্রসমূহে কিছুমান নিৰ্ধাৰিত ক্ষেত্রত অভিনয় কৰে — যাৰ বাবে তেওঁলোকৰ নাটকীয় আৰু সামাজিক প্রদৰ্শনৰ মাজত পাৰ্থক্যই দেখা দিছে। দুয়োটা কাহিনীতে পুৰুষৰ চৰিত্রবোৰক সক্রিয়ভাৱে কাম কৰা আৰু সামাজিক অনুষ্ঠানত অংশগ্রহণ কৰা দেখা গৈছে। তাৰ পৰিৱৰ্তেনাৰী চৰিত্রসমূহৰ সামাজিক কৰ্মত অংশগ্রহণ অতি নিষ্ক্রিয় হোৱা পৰিলক্ষিত হৈছে। উদাহৰণ স্বৰূপে নাটকখনত বালোভদ্র চৰিত্রটোৱে নৱবিবাহিত পত্নীৰ ভূমিকা সম্পৰ্কে এনেদৰে কোৱা দেখা গৈছে — "ন-কইনাৰ হাতৰ ৰন্ধা-বঢ়াৰ জুতি ল'ব লাগিব। মাকে কি ট্রেইনিং দি পঠিয়াইছে তাৰ টেষ্ট ল'ব লাগিব, তেহে নে কি কোৱা? কিজানিবা এওঁ কোনো কামৰ লায়েক নহয় কাৰণে বিদায় দি সেই ঘৰে এতিয়া সকাহহে পালে। " (শইকীয়া, পৃ. ১৭২) আনহাতে মহিলাগৰাকীৰ অংশত এই সম্পৰ্কত কোনোধৰণৰ গ্রহণযোগ্যতা অথবা অগ্রাহ্যতা আমাৰ দৃষ্টিগোচৰ হোৱা নাই। ইয়াৰ উপৰিও দেখা যায় যে দীনানাথৰ জীয়ৰী সুৰভি নিজৰ জীৱন সঙ্গী বাছনি কৰাত তীব্রভাৱে সীমাবদ্ধ। সুৰভিয়ে তেওঁৰ দেউতাকৰ প্রতি এগৰাকী আজ্ঞাকাৰী ছোৱালীৰ দায়িত্ব পালন কৰে, তেওঁৰ প্রতিটো প্রয়োজনীয়তাৰ যত্ন লয়-"সেইকাৰণে সুৰভিয়ে যোৱা ছমাহ দেউতাকৰ একান্ত অনুগত হৈ দিন কটাইছে। ভৰি দোৱা পানী, ভৰি মচা পানী, মুখ মচা গামোচা, দাঁত ঘঁহা এঙাৰ, গোৰোৱা ঘঁহা ভোলৰ বাহ, চাৰোন, ভগা পিয়লাত পানী, পুৰণি আয়না আদিৰে ঠিক ঠাইত ঠিক সময়ত ডাঢ়ি খুড়োৱাৰ সৰঞ্জাম- এইবোৰৰ একোৰে অভাৱ দেউতাকক অনুভৱ কৰিবলৈ সুৰভিয়ে দিয়া নাই। " (শইকীয়া, পৃ. ২০)। ইয়াৰ জৰিয়তে নাৰী আৰু পুৰুষৰ ভূমিকা আৰু দায়িত্বৰ বিভাজনৰ প্রসংগ প্রতিফলিত হয়, যাৰ অৰ্থ হৈছে এজন পিতৃয়ে তেওঁৰ জীয়েকৰ বাবে জীৱন সংগী বাছনি কৰা আৰু জীয়েকে পিতৃৰ পছন্দটোকেই স্বীকাৰ কৰি লোৱা। উভয় পাঠতে নাৰী চৰিত্রবোৰত শক্তিশালী স্বকীয়তাৰ অভাৱ হৈছে। আৰু লেখকৰ এনেধৰণৰ কাহিনীৰ নিৰ্বাচনে তেওঁৰ সমসাময়িক সমাজখনত চলি থকা অৱস্থাৰ আভাস পাঠক-দৰ্শকৰ সন্মুখত স্পষ্টৰূপত দাঙি ধৰিবলৈ সক্ষম হৈছে।

চৰিত্রসমূহৰ মানসিক স্থিতি- লাকা(১৯০১-১৯৮১)ৰ মনোবিশ্লেষণাত্মক তত্ত্বৰ আধাৰত

ফৰাছী মনোবৈজ্ঞানিক জেকছ্ লাকাই, ১৯৫৩ চনৰ পৰা ১৯৮ৰ চনৰ ভিতৰত পেৰিছত কেইবাটাও বিষয়ত বক্তৃতা

প্রদান কৰিছিল। পৰৱর্তী সময়ত এই বক্তৃতাসমূহৰ প্রবন্ধৰ সংকলন এটা প্রস্তুত কৰা হৈছিল। এই সংকলনটিৰ জৰিয়তে লাকাৰ "নিজস্বতা" (self) সম্পর্কে ধাৰণাৰ আভাস পাব পাৰি। অধ্যয়নৰ বাবে নির্বাচিত পাঠত, আমি এই দিশটোক বর্ণনাধর্মী ৰূপত লক্ষ্য কৰিব পাৰোঁ। নাটকখনত দিনবন্ধু চৰিত্রটোৰ মাজত নিজক লৈ থকা এটা অহংকাৰ প্রতিফলিত হয়। দিনবন্ধুৱে এনেদৰে কৈছে-"মই এনেয়ে ভয় খাইছিলোঁ। সেইকেইটা বস্তুতো মই তাইৰ লগত এনেয়েও দিলোঁহেঁতেন। মাক নোহোৱা ছোৱালী, ময়েই তাইক ডাঙৰ কৰিছোঁ। ডাঙৰ কৰোঁতে বৰ সুখ দিব নোৱাৰিলোঁ, এতিয়া উলিয়াই দিবৰ সময়ত সেইকেইটা বস্তু মই তাইৰ লগত নিদিমনে? " (শইকীয়া, পৃ. ১৯৯)। ইয়াৰ জৰিয়তে স্পষ্টভাৱে দীনবন্ধুৱে নিজৰ কাল্পনিক প্রতিচ্ছবি বা লাকাই কোৱাৰ দৰে ব্যক্তিত্ব এটিক ধৰি থকা দেখিবলৈ পোৱা গৈছে। নিজৰ অর্থনৈতিক স্থিতি সম্পর্কে সম্পূর্ণৰূপে অৱগত হোৱাৰ পিছতো তেওঁ ৰাণীৰ বিবাহৰ বাবে প্রয়োজনীয় যৌতুকৰ চর্ত স্বীকাৰ কৰিছে। ভাৰীজোঁৱাই ৰমেশে সহায় কৰিব বিচৰাত তেওঁ সেই প্রস্তাৱ প্রত্যাখ্যান কৰিছে, যিটোৱে তেওঁক তেওঁৰ ব্যক্তিত্ব বা নিজে নির্মাণ কৰা সেই কাল্পনিক চৰিত্রক ধৰি ৰখাত সহায় কৰিছে। একেদৰে চুটিগল্পটোত দীননাথে এনেদৰে কোৱা দেখিবলৈ পোৱা গৈছে- "মানুহজনীৰ আগত শুৱনি হৈ থাকিবলৈ মই বৰ ভাল পাইছিলোঁ। মানুহজনীৰ আগত চোলা নিপিন্ধাকৈ দেখা দিয়াটো মই ভাল নেপাইছিলোঁ। সেইটো লাজৰ কথা বুলি ভাবিছিলোঁ।"(শইকীয়া, পৃ. ২১) দীননাথে তেওঁৰ প্রকৃত অৱস্থাৰ সলনি নিজকে বেলেগ ধৰণে উপস্থাপন কৰাৰ ইচ্ছাই তেওঁক বাস্তৱ আৰু ভ্রান্তিৰ মাজত নিৰন্তৰ যুদ্ধত ৰাখিছিল, যি কাহিনীটো আগবাঢ়ি যোৱাৰ লগে লগে স্পষ্ট হৈ পৰে।

'নিজস্বতা' সম্পর্কে লাকাৰ ধাৰণাৰ আন এটা গুৰুত্বপূর্ণ দিশ প্রতীকী ক্রম(symbolic order)ৰ দ্বাৰা বুজিব পাৰি। তেওঁৰ মতে সংস্কৃতি হৈছে মানুহৰ মাজত হোৱা চুক্তি আৰু ই আমাৰ বাস্তৱতাক নিয়ন্ত্রণ কৰে — ই হৈছে কল্পনা (ব্যক্তিত্ব) আৰু প্রতীক (সংস্কৃতি)ৰ মিলন যি আমাৰ বাস্তৱতাক গঠন কৰে। চুটিগল্প আৰু নাটকখনৰ নায়কে সামাজিক নিযেধাজ্ঞাবোৰ কঠোৰভাৱে পালন কৰে। উদাহৰণ স্বৰূপে বিবাহৰ ক্ষেত্রত, অর্থনৈতিক স্থিতি ভাল নোহোৱাৰ স্বত্বেও বিলাসিতাৰ উপস্থাপনৰ প্রৱণতা। সমাজক সন্তুষ্ট কৰি ৰাখিবৰ বাবে আৰু নিজৰ সামাজিক-সাংস্কৃতিক সন্মান বজাই ৰাখিবৰ বাবে দীনবন্ধু চৰিত্রৰ অহংকাৰে তেওঁক বাৰে বাৰে ধাৰ ল'বলৈ বাধ্য কৰে যাৰ ফলত তেওঁৰ পতন হয়।

সুৰভি, ৰাণী, বাণী চৰিত্রৰ জৰিয়তে সমাজত নাৰীৰ স্থিতি- ছিমন ডি বিউভইৰ(১৯০৮-১৯৮৬)ৰ তত্ত্বৰ আধাৰত-

নাৰীবাদী সমালোচক আৰু ফৰাচী অস্তিত্ববাদী দার্শনিক ছিমন ডি বিউভইৰে ১৯৪৯ চনত তেওঁৰ অতি জনপ্রিয় গ্রন্থ The Second Sex ত নাৰীত্ব সম্পর্কে কিছুমান ধাৰণাৰ প্রস্তাৱ দিছিল। তেখেতৰ মতে নাৰীত্বৰ অৱস্থা জৈৱিকভাৱে সহজাত নহয়, ৰৱঞ্চ ইয়াক কিছুমান সূক্ষ্ম অৱস্থাৰ জৰিয়তে আহৰণ কৰা হয়-- "One is not born, but rather becomes, woman. No biological, psychical or economic destiny defines the figure that the human female takes on in society, it is civilization as a whole that elaborates this intermediary product between the male and the eunuch that is called feminine" (Beauvoir, p. 321)। গ্রন্থখনৰ দ্বিতীয় খণ্ডত, তেখেতে নাৰীৰ শৈশৱ, কৈশোৰ আৰু বৃদ্ধ বয়সৰ আলোচনাৰ মাজেৰে তেওঁলোকৰ ওপৰত জাপি দিয়া কার্য বা অৱস্থা কিছুমানৰ অন্বেষণ কৰে, যিবোৰৰ বাবে তেওঁলোকে তেওঁলোকৰ বিষয়নিষ্ঠতা ত্যাগ কৰি একঘেয়ামী অস্তিত্বলৈ হ্রাস হোৱা এক নিষ্ক্রিয় আৰু বিচ্ছিন্ন ভূমিকাত অংশগ্রহণ কৰিবলৈ বাধ্য হয়। অর্থাৎ সমাজ জীৱন অথবা নিজৰ জীৱনতেই হওক, নাৰীৰ অংশগ্রহণ কেতিয়াও সক্রিয় নহয়। কাহিনীটোত নাৰী চৰিত্রবোৰক স্পষ্টভাৱে নিষ্ক্রিয় ৰূপত দেখিবলৈ পোৱা গৈছে। লগতে তেওঁলোকক অধিক সঘনাই এনে পৰিস্থিতিত দেখিবলৈ পোৱা গৈছে, য'ত তেওঁলোকে প্রায়ে নিজৰ মনৰ বিপৰীতে গৈ কাম কৰিবলগীয়া হৈছে। এনে এটা উদাহৰণ নাটকখনৰপৰা ল'ব পাৰি য'ত ৰাণীয়ে তাইৰ দেউতাকক সান্ত্বনা প্রদান কৰিবলৈ নিজৰ বিবাহ ত্যাগ কৰিবলৈ সাজু হৈছে-"মুখ ফুটাই দোষ নিদিলেও ঘৰখনৰ সকলোৰে দুখতো হৈছে। মই যদি তেনেকৈ আগুৱাই নগলোহেঁতেন, তেনেহ'লে আজিতো দেউতাৰ ভাত খাবলৈ মন নোযোৱা নহয়। কিমান দিন আমি দুজনীয়ে ঠেহ পাতি ভাত নোখোৱাকৈ আছোঁ, দেউতাই আমাক ঠেহ বাঙি ভাত খুৱাইছে। কিন্তু দেউতাৰতো কেতিয়াও ভাত খাবলৈ মন নোযোৱা হোৱা নাছিল। ... নক'বা আৰু সেইবোৰ কথা। মই চব পাহৰি যাম। " (শইকীয়া, পৃ. ১৯৬) নাটকখনৰ এই অংশত দেখা গৈছে যে ৰাণীয়ে এক উচ্চ নৈতিক উদ্দেশ্য, অর্থাৎ নিজৰ দেউতাকৰ সন্মানৰ বাবে তাই নিজৰ সুখ ত্যাগ কৰিবলৈ বিচাৰিছে। কিয়নো ৰাণীয়ে জানে যে তাইৰ দেউতাকে বিবাহৰ বাবে প্রয়োজনীয় যৌতুক

প্রদান কৰিব নোৱাৰিব। ৰাণীৰ এই প্রবৃত্তিক স্বাভাৱিক যেন লাগিলেও ইয়াক নাৰীৰ ক্ষেত্রত হোৱা সামাজিক নির্মাণৰ প্রতিফলন বুলি ক'ব পাৰি। আকৌ এইক্ষেত্রত পুৰুষৰ ব্যক্তিগত বিফলতাৰ সলনি তেওঁৰ দুখ-কষ্টক ভাগ্যৰ ফল হিচাপেহে আদর্শকৰণ কৰা হয়। এই পৰিপ্রেক্ষিতত নাটকখনত ৰাণীৰ এটা মন্তব্য উল্লেখযোগ্য- "আৰু মই জানো, দেউতাইতো কেতিয়াও দায়িত্ব পালন নকৰাকৈ নাথাকে। মৰি-হজি-যিমান যি পাৰে দেউতাই কৰিবই। কিন্তু লিষ্টখন? লিষ্টখন যদি ডাঙৰ হয়? দেউতাই জানিবা কিবা এটা কৰিলেই, কিন্তু ৰাণী বাইদেৰে জানো সহ্য কৰিব পাৰিব? তাই জানো অপমান নাপাব? " ৰাণীয়ে তাইৰ দেউতাকে ঋণ জমা কৰাৰ বাবে লোৱা সিদ্ধান্তৰ বিৰোধিতা কৰিবলৈ বিচৰা নাই। (শইকীয়া, পৃ. ১৯৭) কাৰণ তেওঁৰ বিফলতাত, তাই এক উচ্চ নৈতিক উদ্দেশ্য লক্ষ্য কৰিছে।

এনেদৰে ড° ভবেন্দ্র নাথ শইকীয়াৰ যৌতুক গল্প আৰু দীনবন্ধু নাটকৰ এক তুলনামূলক আৰু বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন-শীর্ষক প্রবন্ধটিৰ জৰিয়তে নির্বাচিত পাঠ দুটিৰ মাজৰ এটা তুলনামূলক আৰু কেতবোৰ তত্ত্বৰ সহায়ত এটা বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন কৰিবলৈ চেষ্টা কৰা হ'ল। অধ্যয়নটিৰ জৰিয়তে গল্পকাৰ ভবেন্দ্র নাথ শইকীয়া আৰু নাট্যকাৰ ভবেন্দ্র নাথ শইকীয়াৰ লগতে সমাজ-সচেতক ভবেন্দ্র নাথ শইকীয়াৰ প্রতিচ্ছবি এখনো জিলিকি উঠিছে বুলি ক'ব পাৰি। যৌতুকৰ দৰে সামাজিক সমস্যা এটাক সাহিত্যৰ মাজলৈ আনি তাক মধ্যবিত্ত শ্রেণী, নাৰী শ্রেণী আদিৰ সৈতে সম্পর্কিত কৰি ইমান সাৱলীলভাৱে উপস্থাপন কৰিব পৰাতেই এগৰাকী সাহিত্যিক আৰু সমাজ-সচেতক হিচাপে শইকীয়াৰ সার্থকতা। ❑

গ্রন্থপঞ্জী (Bibliography) ঃ

প্রাথমিক উৎস

গ্রন্থ ঃ

শইকীয়া, প্রীতি (সম্পা.)। ভবেন্দ্র নাথ শইকীয়াৰ নাট্যসম্ভাৰ। জ্যোতি প্রকাশন, পাণবজাৰ, ২০০৮

শইকীয়া, প্রীতি (সম্পা.)। ড° ভবেন্দ্র নাথ শইকীয়াৰ গল্প সমগ্র। বনলতা, পাণবজাৰ, ২০০৮

গৌণ উৎস ঃ

দাস, শোণিত বিজয়, মুনীন বায়ন (সম্পা.)। কথা বৰেণ্য ১০০। কথা পাব্লিকেছন্ছ, পাণবজাৰ, ২০০৬

Beauvoir, Simone de. The Second Sex. Vintage Books, 2011, pp. 320-23.

Lacan, Jacques, Ecrits. Routledge, 1989

Smith, Adam. An Inquiry into the Nature and Causes of the Wealth of Nations. University of Chicago Press, 1977, pp. 593-94.

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

একবিংশ শতিকাৰ অসমীয়া কল্পবিজ্ঞানভিত্তিক চুটিগল্প ঃ এটি বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন

(ক্ষীৰধৰ বৰুৱা, অভিজিত শর্মা বৰুৱা, বন্দিতা ফুকনৰ গল্পৰ উল্লেখনসহ)

দিব্য কুলি

গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
৮৮১২০০৩৮৮০
dibyakuli1@gmail.com

সাৰ ভাগ ঃ

বিজ্ঞান সাহিত্যৰ সদ্য সমালোচিত বা আলোচিত অন্যতম সাহিত্য শাখা হৈছে কল্পবিজ্ঞান সাহিত্য। কল্পবিজ্ঞান কাহিনী বা ছাইন্স ফিক্‌ছন (Science fiction) হ'ল কুৰি শতিকাত বিকশিত সাহিত্যৰ এক বিশিষ্ট ধাৰা। বিভিন্ন কাৰণবশতঃ কল্পবিজ্ঞান সাহিত্য অন্য সাহিত্য শাখাৰ তুলনাত পাঠক আৰু লেখকৰ সংখ্যা কম হ'লেও সম্প্রতি এই জাতীয় সাহিত্য চর্চা পূর্বতকৈ অধিক গুৰুত্ব পোৱা পৰিলক্ষিত। তাৰ লগে লগে কল্পবিজ্ঞান সাহিত্য ৰচনাই সাহিত্যিক প্রভাৱৰ লগতে সমাজৰ অন্যান্য দিশতো ইয়াৰ ইতিবাচক আৰু নেতিবাচক প্রভাৱ লক্ষণীয় হৈ উঠিছে। বিশেষকৈ একবিংশ শতিকাত অসমীয়া কল্পবিজ্ঞান কাহিনীয়ে বিশেষভাৱে চর্চিত আৰু বিকশিত ৰূপ পালে। বর্তমান সময়ত মুষ্টিমেয় নবীন-প্রবীন লেখকে কল্পবিজ্ঞান সাহিত্য ৰচনা আৰু চর্চাত মনোনিৱেশ কৰে। তাৰ ভিতৰত ক্ষীৰধৰ বৰুৱা, অভিজিত শর্মা বৰুৱা, বন্দিতা ফুকন আদি লেখকে অসমীয়া কল্পবিজ্ঞান চুটিগল্প ৰচনাৰে একবিংশ শতিকাত অসমীয়া কল্পবিজ্ঞানভিত্তিক চুটিগল্প সাহিত্যক সমৃদ্ধ কৰি ৰাখিছে। গতিকে নির্বাচিত লেখকৰ কল্পবিজ্ঞান চুটিগল্পৰ আঁত ধৰি এই অধ্যয়নত একবিংশ শতিকাৰ অসমীয়া কল্পবিজ্ঞানভিত্তিক চুটিগল্পৰ বিষয়ে আলোচনা কৰিবলৈ প্রয়াস কৰা হৈছে।

বীজ শব্দ ঃ

কল্পবিজ্ঞান, চুটিগল্প, বিজ্ঞান-প্রযুক্তি, সমাজ-চেতনা, ক্ষীৰধৰ বৰুৱা, অভিজিত শর্মা বৰুৱা, বন্দিতা ফুকন।

০.০ অৱতৰণিকা

বিজ্ঞান সাহিত্যৰ অর্ন্তগত কাহিনীযুক্ত যেনে - গল্প, উপন্যাস, নাটক আদি সাহিত্য ৰচনাক মূলতঃ কল্পবিজ্ঞান সাহিত্য বা কল্পবিজ্ঞান কাহিনী (Science fiction বা চমুকৈ si-fi) বুলি অভিহিত কৰা হয়। কল্পবিজ্ঞান কাহিনীত লেখকে কাল্পনিক কাহিনীৰ গাত আউজি বিজ্ঞানৰ বিষয় তথা ঘটনাৰাজি উপস্থাপন কৰা হয়। কাহিনীৰ প্রধান বিষয়বস্তু বিজ্ঞান যদিও এই ধৰণৰ কাহিনীত মানৱীয় আৱেদন নিহিত হৈ থাকে। ই কেৱল বৈজ্ঞানিক তত্ত্বৰ ওপৰতে প্রতিষ্ঠিত কাহিনী নহয়। অর্থাৎ কল্পবিজ্ঞান কাহিনী বৈজ্ঞানিক তথ্য বা

তত্ত্ব, ইয়াৰ প্ৰয়োগ আৰু লেখকৰ কাল্পনিক প্লট বা কাহিনীৰ সৈতে বিজ্ঞান আধাৰিত এটা ভাল লগা ৰোমাঞ্চকৰ সংমিশ্ৰিত ৰচনা। কল্পবিজ্ঞান কাহিনীসমূহত কোনো এটা বৈজ্ঞানিক আৱিষ্কাৰ বা উদ্ভাৱনক কেনেদৰে মানুহৰ মংগলৰ বাবে ব্যৱহাৰ কৰিব পৰা যায়, তেনে বৈজ্ঞানিক ভিত্তি কাল্পনিক কাহিনীৰ জৰিয়তে অংকন কৰা হয়। ইতিমধ্যে আৱিষ্কৃত বা বৰ্তমানেও আৱিষ্কাৰ নোহোৱা আৰু ভৱিষ্যত সম্ভাব্য তথ্য বা তত্ত্ব উদ্‌ঘাটন, মানৱ সমাজত ইয়াৰ ইতিবাচক আৰু নেতিবাচক প্ৰভাৱ আদি বৈশিষ্ট্যৰে কল্পবিজ্ঞান কাহিনী পৰিপূৰ্ণ হৈ থাকে। মূলতঃ কাহিনীৰ মাজেদি জনসাধাৰণৰ মনত বৈজ্ঞানিক মানসিকতা আৰু সচেতনতা গঢ়ি তোলা বিজ্ঞানভিত্তিক কাহিনী বা কল্পবিজ্ঞান সাহিত্য সৃষ্টিৰ মূল উদ্দেশ্য। কল্পবিজ্ঞান কাহিনীনো কি? এই সম্পৰ্কে প্ৰাচ্য-পাশ্চাত্যৰ বিভিন্নজন সমালোচকে মন্তব্য আগবঢ়াইছে। কল্পবিজ্ঞান কাহিনী সম্পৰ্কে দীনেশ চন্দ্ৰ গোস্বামীয়ে এইদৰে কৈছে —

কল্পবিজ্ঞান বা বিজ্ঞানভিত্তিক কল্পকাহিনীবোৰ প্ৰথমতে কাহিনী, তাৰ পাছতহে এইবোৰ বিজ্ঞান। বিজ্ঞানৰ অতীত, বৰ্তমান বা ভৱিষ্যতৰ তত্ত্ব বা তথ্য কিছুমানক উপজীব্য হিচাপে লৈ এই কাহিনীবোৰ ৰচনা কৰা হয়। কল্পকাহিনী ৰচনা কৰোঁতে বিজ্ঞানৰ প্ৰকৃত জগতখনৰ নিশ্চিত তথ্য বা তত্ত্বৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি ৰচনা কৰাতকৈ কল্পনাৰ নাকী জৰি কিছু ঢিলাই দি, প্ৰকৃত বিজ্ঞানৰ জগতখনৰ পৰা সাম্ভাব্য বিজ্ঞানৰ জগত এখনলৈ আগবাঢ়ি গৈ, তাত সৃষ্ট হোৱা পৰিস্থিতিৰ ভিত্তিত এটা কাহিনী কল্পনা কৰা হয়। এই কাহিনীও মানুহ বা অন্য কোনো 'চৰিত্ৰ'ৰ সাফল্য-সংঘাত, হৰ্ষ-বিষাদৰ কাহিনী, মাত্ৰ বিজ্ঞানখিনি বা সাম্ভাব্য বিজ্ঞানখিনি তাৰ উপজীব্য; তাক বাদ দি সেই কাহিনী ৰচিত হ'ব নোৱাৰে। সেইবাবে সি হ'ল বিজ্ঞানভিত্তিক কল্পকাহিনী বা কল্পবিজ্ঞান কাহিনী (গোস্বামী ১৬১৯-১৬২০)।

গোস্বামীৰ উক্ত মন্তব্যৰ পৰা কল্পবিজ্ঞান কাহিনী সম্পৰ্কত সামগ্ৰিক ধাৰণা মূৰ্ত হৈ উঠিছে। কল্পবিজ্ঞান কাহিনীত কল্পনা আৰু উপস্থাপনৰ কলাগত দিশটোৰ লগতে বিজ্ঞানৰ যুক্তি, তত্ত্ব আৰু তথ্য সঠিকভাৱে উপস্থাপন কৰাত সমানে গুৰুত্ব আৰোপ কৰে। অৰ্থাৎ কল্পবিজ্ঞানভিত্তিক কাহিনীৰ আঁৰত লুকাই থকা কল্পচিত্ৰই পাঠকৰ মন উত্মাপূৰ্ণ আৰু নজনাক জনাৰ বা নেদেখাক দেখাৰ কৌতূহলপ্ৰীতি পূৰণ কৰে।

বিশ্বসাহিত্যৰ প্ৰেক্ষাপটত ঊনবিংশ শতিকাৰ ১৮১৮ খ্ৰীষ্টাব্দত ৰচিত প্ৰসিদ্ধ কবি শ্বেলীৰ পত্নী মেৰী ৱলষ্টক্ৰেফটৰ (Mary Wollstonecraft)ৰ 'ফ্ৰেংকেনষ্টেইন' (Frankenstein) নামৰ কল্পকাহিনীটোৰ জৰিয়তে কল্পবিজ্ঞানৰ সাৰ্থক সূচনা হয়। পৰৱৰ্তী সময়ত জুল ভৰ্ন, আইজাক এচিমভ, এইচ. জি. ৱেলছ, আৰ্থাৰ চি. ক্লাৰ্ক, হিউগ' গাৰ্ছেনবেক, জন ডব্লিই কেম্পেবেল, ৰে ব্ৰেডবাৰি, ৰবাৰ্ট এ হেইনলিনৰ দৰে কল্পবিজ্ঞান লেখকে এই সাহিত্য ধাৰাক শক্তিশীল ৰূপত গতি প্ৰদান কৰিলে। অসমীয়া আলোচনীৰ প্ৰেক্ষাপটত ১৮৪৬ চনত প্ৰকাশ পোৱা অসমীয়া ভাষাৰ প্ৰথম সংবাদপত্ৰ অৰুনোদই আলোচনীতেই বিজ্ঞানধৰ্মী গল্পই ভুমুকি মাৰিছিল, যদিও সেই সময়ত বিজ্ঞানভিত্তিক তেনে ৰচনাই বিশেষ গুৰুত্ব পোৱা নাছিল। বিংশ শতিকাৰ প্ৰায় চতুৰ্থ দশকত হৰিপ্ৰসাদ বৰুৱাৰ 'বিৰচতীয়াৰ দেশ' নামৰ গল্পৰ মাজেৰেই বিজ্ঞানভিত্তিক গল্পৰ সূচনা হোৱা বুলিব পাৰি। পৰৱৰ্তী সময়ত নগেন্দ্ৰনাৰায়ণ চৌধুৰী, সৌৰভ কুমাৰ চলিহা, দীনেশ চন্দ্ৰ গোস্বামী, শান্তনু তামূলী, বন্দিতা ফুকন, ৰমেশ চন্দ্ৰ গোস্বামী, অভিজিত শৰ্মা বৰুৱা, মনোৰঞ্জন হাজৰিকা, বিজয়কৃষ্ণ দেৱশৰ্মা, অমূল্য হাজৰিকা, ৰথীন্দ্ৰনাথ গোস্বামী, বিক্ৰম মজিন্দাৰ বৰুৱা আদি নবীন-প্ৰবীন লেখকে অসমীয়া বিজ্ঞানভিত্তিক গল্প-সাহিত্যক আৰু অধিক সমৃদ্ধ কৰিলে। আজিৰ প্ৰেক্ষাপটত উপৰোক্ত লেখকৰ উপৰিও অসমীয়া সাহিত্যৰ তাগিদা পূৰণ কৰিবলৈ বিজ্ঞানভিত্তিক গল্প ৰচনাত মনোনিৱেশ কৰা মিহিৰ কুমাৰ গোস্বামী, দীপক কুমাৰ শৰ্মা, দিব্যজ্যোতি বৰা, জয়ন্ত কুমাৰ গোস্বামী, প্ৰশান্ত কুমাৰ দাস, ভাস্কৰ ঠাকুৰীয়া, জয়ন্ত আকাশ বৰ্মন আদিৰ নাম উল্লেখযোগ্য। তেওঁলোকৰ দ্বাৰা ৰচিত ভালেমান বিজ্ঞানভিত্তিক চুটিগল্প বিভিন্ন আলোচনীৰ পাততে সিঁচৰতি হৈ আছে।

০.১ অধ্যয়নৰ লক্ষ্য আৰু উদ্দেশ্য ঃ

• নিৰ্বাচিত তিনিজন গল্পকাৰৰ একবিংশ শতিকাত প্ৰকাশিত কল্পবিজ্ঞান গল্পৰ আধাৰত একবিংশ শতিকাত প্ৰকাশিত অসমীয়া কল্পবিজ্ঞান চুটিগল্পৰ বিষয়ে বিচাৰ-বিশ্লেষণ কৰাই এই অধ্যয়নৰ মুখ্য উদ্দেশ্য।

• একবিংশ শতিকাত অসমীয়া কল্পবিজ্ঞান গল্প সাহিত্যই জনসাধাৰণৰ মনত বৈজ্ঞানিক মানসিকতা গঢ়ি তোলাৰ লগতে বৌদ্ধিক, সামাজিক আৰু অন্যান্য দিশত কেনেদৰে প্ৰভাৱ পেলাইছে সেই সম্পৰ্কীয় আলোচনাও এই অধ্যয়নৰ অন্যতম গৌণ উদ্দেশ্য।

০.২ বিষয়ৰ গুৰুত্ব ঃ

অসমীয়া সাহিত্য জগতত কল্পবিজ্ঞান সাহিত্য এক অভিনৱ সংযোজন। বৰ্তমান অসমীয়া সাহিত্যৰ প্ৰেক্ষাপটত বিজ্ঞান বিষয়ক সমালোচনামূলক প্ৰবন্ধ, মৌলিক কল্পবিজ্ঞানভিত্তিক গল্প, উপন্যাস, অনূদিত কল্পবিজ্ঞান কাহিনীয়ে একবিংশ শতিকাত বিকশিত ৰূপ পাবলৈ ধৰিছে। সেয়া আলোচনীৰ প্ৰেক্ষাপটতেই হওক বা গ্ৰন্থাকাৰেই হওক। এনে পৰিপ্ৰেক্ষিতত এইবোৰৰ বিজ্ঞানভিত্তিক এটি যুক্তিসংগত বিশ্লেষণৰ দ্বাৰা আলোচনা কৰাৰ প্ৰয়োজনীয়তা আহি পৰিছে। তাৰ লগতে বিশ্ব বা ভাৰতীয় অন্যান্য ভাষাৰ সমসাময়িক ৰচনাৰ সৈতে ৰিজাই অসমীয়া কল্পবিজ্ঞানভিত্তিক ৰচনাৰ মানদণ্ড বিচাৰ কৰি চোৱাৰ প্ৰয়োজনীয়তাও আছে। গতিকে বিজ্ঞানৰ তথ্য বা তত্ত্বৰ পৰা মানৱীয় আৱেগ-অনুভূতিলৈ, সৰ্বসাধাৰণৰ মাজত বৈজ্ঞানিক মানসিকতা আৰু সচেতনতা গঢ়ি তোলা ন ন লেখক, পাঠক, সমালোচকক কল্পবিজ্ঞানৰ প্ৰতি অধিক আকৰ্ষণ বঢ়োৱা ক্ষেত্ৰত বিশেষকৈ একবিংশ শতিকাত প্ৰকাশিত কল্পবিজ্ঞানভিত্তিক চুটিগল্পৰ বিষয়ে প্ৰণালীবদ্ধ অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব বা প্ৰাসংগিকতা অনন্য।

০.৩ বিষয়ৰ পৰিসৰ ঃ

আধুনিক অসমীয়া সাহিত্যৰ আলোচনাত অসমীয়া বিজ্ঞান সাহিত্যৰ গুৰুত্ব বাঢ়িছে। বিজ্ঞানৰ বিষয়বস্তু একোটাক শিল্পসন্মত, ৰূপসমৃদ্ধ লেখাৰ মাধ্যমেৰে জনসাধাৰণক বিজ্ঞানৰ ন ন আৱিষ্কাৰৰ সৈতে পৰিচয় ঘটোৱা, ইবিলাকৰ প্ৰয়োগ-অপপ্ৰয়োগ আৰু সজাগ-সচেতনতাৰ ইঙ্গিত আদি প্ৰদান কৰা কল্পবিজ্ঞান সাহিত্যৰ সম্প্ৰসাৰণ একবিংশ শতিকাত বিশেষভাৱে লক্ষণীয়। ঊনবিংশ বা বিংশ শতিকাৰ প্ৰথমার্দ্ধৰ তুলনাত একবিংশ শতিকাত প্ৰকাশ পাই থকা আলোচনীসমূহেও কল্পবিজ্ঞান ৰচনা প্ৰকাশত বেছি গুৰুত্ব দিয়া পৰিলক্ষিত হয়। গতিকে অসমীয়া কল্পবিজ্ঞান সাহিত্য বৰ্তমান সময়ত বিশেষভাৱে চৰ্চিত অভিনৱ সাহিত্য শাখা। গতিকে একবিংশ শতিকাত কল্পবিজ্ঞান সাহিত্যই বিশেষভাৱে প্ৰসাৰিত আৰু চৰ্চিত বিষয়ৰ প্ৰতি লক্ষ্য ৰাখি এই নিৰ্বাচিত অধ্যয়নত মূলতঃ একবিংশ শতিকাত প্ৰকাশিত ক্ষীৰধৰ বৰুৱা, অভিজিত শৰ্মা বৰুৱা আৰু বন্দিতা ফুকনৰ কল্পবিজ্ঞানভিত্তিক চুটিগল্প সামৰি আলোচনা কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে। অৱশ্যে আনুষঙ্গিক দুই-এটা প্ৰসংগও আলোচনাটিত স্থান দিয়া হৈছে।

০.৪ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

একবিংশ শতিকাৰ কল্পবিজ্ঞানভিত্তিক চুটিগল্প বিষয়ক এই অধ্যয়নত বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ সহায়ত আলোচনা কৰা হৈছে।

১.১ বিষয়বস্তু আৰু উপস্থাপন পদ্ধতি ঃ

কল্পবিজ্ঞান সাহিত্যৰ বিষয়বস্তুৰ পৰিসৰ বহল। বিজ্ঞানৰ যিকোনো বিষয়ে কল্পবিজ্ঞান সাহিত্য সৃষ্টিৰ বিষয়বস্তু হ'ব পাৰে। প্ৰথম অৱস্থাত বিজ্ঞানভিত্তিক ৰচনাসমূহৰ বিষয়বস্তু সীমিত আছিল যদিও শেহতীয়াকৈ বিভিন্ন গ্ৰহ-গ্ৰহান্তৰত মানুহৰ দৰে অন্য প্ৰাণী থকাৰ কল্পনা, মানুহৰ বসবাস উপযোগী অন্য গ্ৰহৰ সন্ধান, মহাকাশ পৰ্যটন (Space tourism), ছুপাৰ কম্পিউটাৰ, ক্লু'নিং, মানৱ মস্তিষ্কৰ হস্তান্তৰকৰণ বা সংৰোপণ, অমৰত্বৰ বাসনা, মানুহৰ বিকল্প হিচাপে কৃত্ৰিম বুদ্ধিমত্তাসম্পন্ন (Artificial Intelligence) ৰবট ব্যৱহাৰ, কম্পিউটাৰ ভাই�ৰাছ, লেজাৰ ৰশ্মি, নে'ন প্ৰযুক্তিবিদ্যা, থ্ৰী-মাত্ৰিক কৌশল পদ্ধতি (Three Diomentional), বৰ্হিবিশ্বৰ লগত সংযোগ স্থাপন, ছাৰ'গেট মাদাৰ তথা টেষ্ট টিউব বেবি, ভৱিষ্যতৰ সম্ভাব্য যন্ত্ৰ মানৱৰ ওপৰত নিৰ্ভৰশীল সমাজ আদি অভিনৱ বিষয়বস্তুৰে আলোচ্য বিজ্ঞানভিত্তিক গল্পসমূহ সমৃদ্ধ।

বিজ্ঞান সাহিত্য জগতত ক্ষীৰধৰ বৰুৱা বিশেষকৈ বিজ্ঞান প্ৰবন্ধকাৰ হিচাপে পৰিচিত। তেওঁৰ বিজ্ঞান বিষয়ক প্ৰবন্ধৰ তুলনাত মাজে-সময়ে দুই-এটা বিজ্ঞানভিত্তিক গল্প আলোচনীৰ পাতত প্ৰকাশ পোৱা দেখা যায়। তাৰ ভিতৰত 'প্ৰগ্ৰেম চিত্ৰলেখা' অন্যতম বিজ্ঞানভিত্তিক চুটিগল্প। গল্পটো সাতসৰী আলোচনীৰ পাতত ২০০৮ চনত প্ৰকাশ পাইছিল। বিবাহৰ বাবে উপযুক্ত পাত্ৰী নিৰ্বাচনক কেন্দ্ৰ কৰি এজন বিজ্ঞানীৰ দ্বাৰা আৱিষ্কৃত বিশেষ কম্পিউটাৰ পদ্ধতিৰ সহায়ত তৈয়াৰ কৰা কম্পিউটাৰ ছফ্‌টৱেৰ প্ৰয়োগক লৈ গল্পটোৰ কাহিনী নিৰ্মাণ কৰা হৈছে। গল্পটোৰ মূল চৰিত্ৰ সঞ্জয়ে কল্পবিজ্ঞান গল্প লিখিবলৈ লোৱাৰ আগমুহূৰ্তত অতীতৰ স্মৃতি ৰোমন্থনত আত্মবিভোৰ হৈ থকা অৱস্থাত বাতৰি কাকতৰ হেডলাইত তেওঁৰ একালৰ শিক্ষাগুৰু অনুপম চলিহা নামৰ বিজ্ঞান এগৰাকীৰ মৃত্যুৰ বাতৰি পাই তেওঁৰ মানসপটত ভাহি অহা দুকুৰি বছৰ আগৰ কথাৰে গল্পটোৰ বিষয়বস্তু আগবঢ়াই নিছে। গল্পটোৰ কাহিনী অনুসৰি বিজ্ঞানী অনুপম চলিহাই ব্যক্তিগত গৱেষণাগাৰত কেইবাটাও নতুন ধৰণৰ কম্পিউটাৰ নিৰ্মাণ কৰি খ্যাতি অৰ্জন কৰিবলৈ সক্ষম হৈছিল। আনকি তেওঁ তেনে পদ্ধতিৰ দ্বাৰা নিজৰ পুত্ৰ সন্তান ৰূপমৰ বাবে বিবাহযোগ্য এগৰাকী ছোৱালী বিচাৰি বাতৰি-কাকতত 'পাত্ৰী লাগে' শীৰ্ষক বিজ্ঞাপন প্ৰকাশ কৰিছিল। বিজ্ঞাপনৰ বক্তব্য আছিল

এনেধৰণৰ —

মোৰ ডাঙৰ ল'ৰা শ্ৰীমান ৰূপম চলিহাৰ বাবে এগৰাকী বিবাহযোগ্য কন্যা বিচৰা হৈছে। ল'ৰাৰ চেহেৰা সুন্দৰ, সুঠাম আৰু তেওঁ বিদেশত চিকিৎসা বিজ্ঞানত উচ্চ শিক্ষাপ্ৰাপ্ত। ছোৱালীৰ জাতিকুল, পৰিয়াল আদি বিষয়ত মুঠেই গুৰুত্ব দিয়া নহয়। মাত্ৰ ছোৱালীজনী ওপৰত দিয়া ফটোৰ লগত মিলিলেই হ'ল। বিজ্ঞাপন প্ৰকাশৰ পোন্ধৰ দিনৰ ভিতৰত এই ঠিকনাত যোগাযোগ কৰক ঃ ড° অনুপম চলিহা, চলিহা নিলয়, পাণ বজাৰ, গুৱাহাটী-১ (বৰুৱা ৩০)।

অসম বিজ্ঞান সমিতিৰ বাৰ্ষিক অধিৱেশনত অনুপম চলিহাই উপস্থিত দৰ্শক আৰু সংবাদদাতাৰ আগত তেওঁ উদ্ভাৱন কৰা নতুন ধৰণৰ কম্পিউটাৰ প্ৰদৰ্শন কৰি এটা নতুন ধৰণৰ যন্ত্ৰ উদ্ভাৱনৰ বিষয়ে বক্তৃতা প্ৰদান কৰিছিল, যি কম্পিউটাৰজনিত যন্ত্ৰৰ দ্বাৰা কোনো বস্তুৰ উপস্থিতি নথকাকৈ বস্তুটোৰ সঠিক বৰ্ণনা দি যিকোনো ভাষাত ইনপুট প্ৰদান কৰিলে বস্তুটোৰ ছবি তৈয়াৰ কৰিব পাৰি। 'চাইক'বায়কেমিকেল' নামৰ অত্যন্ত জটিল ইউনিত সংযোগ কৰি কাল্পনিক আৰু মৃত ব্যক্তিৰ ছবিও তৈয়াৰ কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। অৱশ্যে জীৱন্ত প্ৰাণীৰ ছবি অংকনৰ ক্ষেত্ৰত অনেক জটিলতা আহি পৰে। কাৰণ প্ৰাণীৰ ক্ষেত্ৰত শাৰীৰিক বৰ্ণনাৰ লগতে তাৰ মানসিক অৱস্থাৰ বৰ্ণনা এটা ইনপুট ডেটা হিচাপে ব্যৱহাৰ নকৰিলে নিখুঁত ছবি নোপোৱাৰ কথা উল্লেখ কৰিছে। চলিহাৰ এনে চিত্ৰলেখা কম্পিউটাৰ পদ্ধতি ইন্টাৰপলে অপৰাধী চিনাক্ত কৰাৰ ক্ষেত্ৰতো ব্যৱহাৰ উপযোগীতাৰ কথা উত্থাপন কৰিছে। গল্পটোৰ শেষৰফালে সঞ্জয়ৰ ল'ৰা চিন্টুৰ লগৰীয়া কেইজনমানে কোম্পানীৰ চাকৰি এৰি নিজাবৰীয়াকৈ 'প্ৰজাপতি ডট কম' নামৰ প্ৰতিষ্ঠানত চলিহাই উদ্ভাৱন কৰা চিত্ৰলেখা কম্পিউটাৰ পদ্ধতিৰ শেহতীয়া ভাৰ্ছন ব্যৱহাৰ কৰাৰ যোগাত্মক তথ্য উপস্থাপনেৰে গল্পটোৰ যৱনিকা পৰে। প্ৰথম পুৰুষত বৰ্ণিত গল্পটোৰ মূল কাহিনী ফ্লেছবেগ পদ্ধতিৰ প্ৰয়োগ ঘটিছে। লেখকে কথক ৰূপত বিষয়বস্তু অৱতাৰণা কৰিছে। গল্পটোত বিষয়ৰ সংক্ষিপ্ততা তথা গতি পৰিক্ৰমাৰ একমুখিতা ৰক্ষিত হৈছে। বৈজ্ঞানিক চৰিত্ৰ চলিহাৰ বিশেষ আৱিষ্কাৰক গল্পটোৰ মুখ্য চৰিত্ৰ তথা কথক সঞ্জয়ৰ জৰিয়তে উপস্থাপন কৰিছে।

অভিজিত শৰ্মা বৰুৱাই অসমীয়া বিজ্ঞান সাহিত্যৰ সৃষ্টিশীল ৰচনালৈ উল্লেখযোগ্য অৱদান আগবঢ়াইছে। অভিজিৎ শৰ্মা বৰুৱাৰ আন এটা বিজ্ঞানভিত্তিক গল্প হ'ল 'বিপ্ৰ দামোদৰ'। গল্পটো সাতসৰী আলোচনীৰ পাতত ২০০৮ চনৰ মে' মাহত প্ৰকাশিত। গল্পটোত দুজন বন্ধুৰ কথোকথনৰ মাজেৰে এড্‌ভান্স টেক্‌ন'লজিৰ সহায়ত অৰ্থাৎ কম্পিউটাৰ স্কেনিং, নেন'প্ৰযুক্তি আৰু থ্ৰী-মাত্ৰিক প্ৰিন্টাৰ পদ্ধতি অৱলম্বন কৰি নিমিষতে এটা ঘৰ তৈয়াৰ কৰি উলিওৱা কাহিনী উপস্থাপন কৰিছে। ইতিমধ্যে ইউ এছ. এছত তেনেকুৱা থ্ৰী-মাত্ৰিক প্ৰিন্টাৰ বহুকেইটা সজা হৈছে। এনে পদ্ধতিত সাধাৰণ ঘৰত ব্যৱহাৰ কৰা চিমেন্ট, ৰদ, বালি আদি সামগ্ৰীৰ ব্যৱহাৰ কৰাৰ পৰিৱৰ্তে কিছুমান মৌলিক পদাৰ্থৰ অণু-পৰমাণু ব্যৱহাৰ কৰা হয় আৰু নিমিষতে এটা ঘৰ সাজি উলিয়াব পাৰি; সেয়া সম্ভৱ কম্পিউটাৰ স্কেনিং, ত্ৰিমাত্ৰিক প্ৰিন্টাৰ আৰু নেন'প্ৰযুক্তিৰ সমন্বয়ত। গল্পটোৰ বৈজ্ঞানিক চৰিত্ৰ সমীৰে কথকৰূপী ৰাজনৈতিক নেতাজনৰ আচাম টাইপ ঘৰটোৰ সকলো বস্তু অণু-পৰমাণুলৈ ৰূপান্তৰ কৰি একে ঠাইতে কম্পিউটাৰ স্কেনিং, থ্ৰী-মাত্ৰিক প্ৰিন্টাৰ, নে'নমেচিন আদিৰ সহায়ত পঁচিশ মিনিটৰ ভিতৰত এখন চাৰিমহলীয়া নতুন ঘৰ সাজি উলিয়াইছে। এয়া এক অড্‌ভান্স টেকন'লজিৰ নমুনা। সমীৰৰ এনে প্ৰযুক্তিৰ ফলপ্ৰসূক লৈ বক্তাই অভিভূত হয় আৰু সমীৰে আগলৈ এইধৰণৰ বিজ্ঞান প্ৰযুক্তিৰ সহায়ত ঘৰ নিৰ্মাণ কাৰ্যত বক্তা তথা নেতাবন্ধুজনক সহযোগ কৰাৰ আশ্বাসাৰে গল্পটোৰ কাহিনী সামৰণি পৰে। অস্বাভাৱিক কাল্পনিক কাহিনীৰে লেখকে অত্যাধুনিক বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তিৰ প্ৰায়োগিক দিশ দেখুওৱা গল্পটোৰ কাহিনী প্ৰথম পুৰুষত বৰ্ণনা কৰিছে। লেখকে কথকৰ ৰূপত ৰাজনৈতিক নেতা আৰু বৈজ্ঞানিক চৰিত্ৰ সমীৰৰ মাজেৰে কথোপকথন ভিত্তিত গল্পটোৰ বিষয়বস্তু উপস্থাপন কৰিছে। নেন'প্ৰযুক্তিৰ অপৰিসীম প্ৰয়োগৰ সম্ভাৱনীয়তাৰ কথা প্ৰকংগই গল্পটোক কল্পবিজ্ঞান গল্পলৈ উন্নীত কৰিছে।

'বিৱৰ্তনত প্ৰেমহুঁ' অভিজিত শৰ্মা বৰুৱাৰ আন এটা বিজ্ঞানভিত্তিক গল্প। গল্পটো ২০০৮ চনৰ ছেপ্টেম্বৰ মাহত সাতসৰী আলোচনীত প্ৰকাশ পাইছিল। মানৱীয় প্ৰেমক কেন্দ্ৰ কৰি কম্পিউটাৰ ভাই�ৰাছৰ দৰে বৈজ্ঞানিক আৱিষ্কাৰে সৃষ্টি কৰা সামাজিক বিশৃংখল পৰিস্থিতি গল্পটোৰ মূল উপজীব্য। প্ৰেমৰ প্ৰস্তাৱক লৈ গল্পটোৰ বিষয়বস্তু আগবঢ়াই নিছে। কম্পিউটাৰ ইঞ্জিনীয়াৰিং পঢ়া ল'ৰা এটাই সুমন নামৰ ছোৱালী এজনীক দিয়া প্ৰেমৰ প্ৰস্তাৱ নাকচ কৰাৰ বাবে তাৰ প্ৰতিশোধ হিচাপে ল'ৰাটোৱে সুমনৰ ফটো ইন্টাৰনেটত পোৱা কিছুমান

অশ্লীল ভংগিমাৰ উলংগ দেহৰ লগত সুমনৰ মুখখন মিক্স কৰি পৰ্ণগ্ৰাফিক বিজ্ঞাপনৰ ৰেবছাইডত প্ৰচাৰ কৰে। ই এক ইণ্টাৰনেট মাধ্যমৰ অপব্যৱহাৰ বা সমাজত বৈজ্ঞানিক অৱদানৰ নেতিবাচক প্ৰভাৱৰ নিদৰ্শন। সুমনক বিভিন্নজনে ফোন কৰি ব্যতিব্যস্ত কৰে। সৌভাগ্যক্ৰমে মানসিকভাৱে ভাগি পৰা সুমনক বচাবলৈ বৈজ্ঞানিক চৰিত্ৰৰ ৰূপত কথকে তেওঁ নিজে সৃষ্টি কৰা ভাই�ৰাছৰ দ্বাৰা ইণ্টাৰনেটত অশ্লীলৰূপত বিয়পি পৰা সুমনৰ ফটো, ফোন নম্বৰ আদি বিজ্ঞাপনৰ ৰেবছাইটটোৰ পৰা আঁতৰাবলৈ সক্ষম হয়। সুমন সম্পূৰ্ণৰূপে বিপদৰ পৰা ৰক্ষা পৰিল আৰু তাইক বিপদৰ পৰা উদ্ধাৰ কৰা ল'ৰাটোৰ লগত সুমনৰ প্ৰেমালিঙ্গন পৰিৱেশত গল্পটোৰ সামৰণি পৰে। গল্পটোৰ কাহিনী প্ৰথম পুৰুষত বৰ্ণিত হৈছে। গল্পটোত কাহিনীৰ পৰিণতিৰ একমুখীতা দেখিবলৈ পোৱা যায়। গতানুগতিক প্ৰকাশভংগীৰে ইণ্টাৰনেট মাধ্যম তথা কম্পিউটাৰ ভাইৰাছ প্ৰসংগ উত্থাপন কৰা গল্পটোৰ কাহিনী নিৰ্মাণত বহুকেইটা চৰিত্ৰত সমাৱেশ ঘটিছে। লেখকে কথকৰ ৰূপত গল্পটোৰ কাহিনী উপস্থাপন কৰিছে। গল্পটোত কথক আৰু সুমনক ব্লেকমিইলিং কৰা ল'ৰাটো বিজ্ঞানৰ লগত জড়িত চৰিত্ৰ। নাৰী চৰিত্ৰ সুমন আৰু বন্দনাৰ বাহিৰে আনবোৰ পাৰ্শ্ব চৰিত্ৰই কাহিনীৰ অগ্ৰগতিত বিমূৰ্ত ৰূপত ভূমিকা পালন কৰিছে। এফালে মানৱ-জাতিৰ কল্যাণ সাধনত বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তিৰ অৱদান, আনফালে, বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তিৰ অপ-ব্যৱহাৰ — এই দুই ধৰণৰ বিপৰীতধৰ্মী বৈজ্ঞানিক দিশ গল্পটোৰ কথকৰূপী কম্পিউটাৰ ইঞ্জিনীয়াৰ আৰু সুমনক প্ৰেমৰ প্ৰস্তাৱ দিয়া ল'ৰাটোৰ চৰিত্ৰৰ মাজেৰে দেখুওৱা হৈছে। গল্পটোৰ কাহিনী কাল্পনিক যদিও বৰ্তমান সময়ৰ প্ৰাসঙ্গিক তথা বাস্তৱিক আৰু সংবেদনশীল বিষয় উপস্থাপনৰ ফালৰ পৰা গল্পটোক বিজ্ঞানভিত্তিক গল্পৰ বিশেষত্ব বহন কৰা বুলিব পাৰি। আজিৰ প্ৰেক্ষাপটত গল্পটোৰ বক্তব্য সাধাৰণ যেন লাগিলেও ইণ্টাৰনেট মাধ্যম আৰু কম্পিউটাৰ ভাইৰাছৰ ব্যৱহাৰিক দিশটোৰ ইতিবাচক আৰু নেতিবাচক সামাজিক প্ৰভাৱ তথা বিজ্ঞানভিত্তিক কাহিনীৰ স্বৰূপ লেখকে সুন্দৰকৈ ৰূপায়ন কৰিছে।

অভিজিত শৰ্মা বৰুৱাৰ 'লোবিছ গ্ৰহৰ আলহী' (নতুন আৱিষ্কাৰ , নৱেম্বৰ, ২০০৫) নামৰ আন গল্পত পৃথিৱীৰ বাহিৰেও অন্য গ্ৰহত প্ৰাণী থকাৰ সম্ভাৱনীয়তা, মানুহৰ বাবে পৃথিৱীৰ বিকল্প বাসোপযোগী ঠাইৰ অনুসন্ধান আৰু আগন্তুক দিনত পৃথিৱীৰ মানুহে সৌৰজগতৰ গ্ৰহ-গ্ৰহান্তৰক 'মহাকাশ পৰ্যটন কেন্দ্ৰ' হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰাৰ ভৱিষ্যত সম্ভাব্য ধাৰণা স্পষ্ট হৈছে। 'ডাউনল'ড' (বিজ্ঞান জেউতি, আগষ্ট-ছেপ্টেম্বৰ, ২০০৯) তেখেতৰ অন্যতম কল্পবিজ্ঞানভিত্তিক গল্প। গল্পটোত মানৱ কল্যাণ সাধনৰ স্বাৰ্থত মানুহৰ মগজুৱে পাহৰি যোৱা তথ্যৰ পুনৰুদ্ধাৰ তথা ডাউনল'ড কৰিব পৰা এটি বিশেষ কম্পিউটাৰ ছফ্‌টৱেৰৰ প্ৰায়োগিক দিশ দেখুওৱা হৈছে। অভিজিত শৰ্মা বৰুৱাৰ আন এটা কল্পবিজ্ঞান গল্প হ'ল — 'প্ৰেৰণাৰ বিয়া' (গৰীয়সী , এপ্ৰিল , ২০১৪)। কল্পিত কাহিনীৰ সৈতে চাইবাৰ টুৰিজম, থ্ৰী-মাত্ৰিক পদ্ধতি আৰু ৰবটিক বিজ্ঞানৰ দৰে অভিনৱ বৈজ্ঞানিক অৱলম্বন গল্পটোৰ মূল উপজীব্য। গল্পটোত এখন বিয়াক কেন্দ্ৰ কৰি মানুহৰ মগজুৰ সকলোবোৰ তথ্য ৰবটিক অৱয়বৰ মূৰত কপি-পেষ্ট কৰিব পৰা বৈজ্ঞানিক উদ্ভাৱনক থ্ৰী-মাত্ৰিক প্ৰিণ্টাৰৰ দ্বাৰা তৈয়াৰ কৰা ৰবটৰ সহায়ত পৰীক্ষা কৰি চোৱাৰ চাইবাৰ টুৰিজমৰ ধাৰণাৰ আধাৰত গল্পটোৰ সাৰবস্তু নিৰ্মাণ কৰা হৈছে। তেওঁৰ 'আৱৰ্জনা' (সাতসৰী, ২০১৪) নামৰ আন এটা গল্পত নেন'প্ৰযুক্তিবিদ্যা তথা নেন' কম্পিউটাৰৰ সহায়ত আৱৰ্জনা ভক্ষণ কৰিব পৰা বেক্টেৰিয়া আৱিষ্কাৰ আৰু ইয়াৰ প্ৰয়োগৰ কাহিনী অংকন কৰা হৈছে।

অসমীয়া বিজ্ঞান সাহিত্য জনপ্ৰিয়কৰণত বন্দিতা ফুকনৰ অৱদান অনস্বীকাৰ্য। তেওঁ বিগত আশী-নব্বৈ দশকৰ পৰাই কল্পবিজ্ঞান সাহিত্যৰ লেখক হিচাপে আত্মনিয়োগ কৰি আহিছে। 'মানুহ-অমানুহ' (সাতসৰী, মে', ২০০৮) বন্দিতা ফুকনৰ অন্যতম কল্পবিজ্ঞানভিত্তিক গল্প। কৃত্ৰিম যন্ত্ৰমানৱক মানুহৰ দৰে বহুমুখী প্ৰতিভাসম্পন্ন কৰি তুলিবলৈ কৰা প্ৰয়াসেই গল্পটোৰ মূল বিষয়বস্তু। গল্পটোৰ বিষয়বস্তু আগবঢ়াই নিছে নাৰী চৰিত্ৰৰ ৰূপত প্ৰতিষ্ঠা কৰা গীতা নামৰ ৰবটটোৰ কৰ্মদক্ষতাৰ পৰিৱেশত। গীতাৰ গৰাকী চিন্ময়ে গীতাক মানুহৰ দৰে কৰ্মদক্ষ ব্যক্তি হিচাপে গঢ়ি তুলিছে। গীতা নাডা চেলুলাৰ ফোনৰ আঞ্চলিক অফিচটোত এজনী ৰিচেপ্‌চনিষ্টৰ সাধাৰণ চাকৰিত কৰ্মৰত। তাই যেন যন্ত্ৰমানৱ নহয় প্ৰকৃত মানৱহে। আনহাতে এনাক্ষীয়ে ভাস্কৰৰ সংস্থাপনৰ বাবে এখোজো আগবাঢ়িব পৰা নাই সেই কথা উপলব্ধি কৰিছে। ভাস্কৰ গল্পটোৰ মূল বৈজ্ঞানিক চৰিত্ৰ এনাক্ষী নামৰ এজনী ছোৱালীৰ দ্বাৰা আৱিষ্কৃত ৰবট। এনাক্ষীয়ে ভাস্কৰক গীতাতকৈ অধিক বেছি কৰ্মদক্ষ অৰ্থাৎ তাই ভাস্কৰক শ্ৰেষ্ঠ আৰু বহু প্ৰতিভাসম্পন্ন ব্যক্তি হিচাপে গঢ়ি তুলিবলৈ আপ্ৰাণ চেষ্টা

চলাইছে। এনাক্ষীয়ে বিচাৰে যে ভাস্কৰ গীতাৰ দৰে চাকৰি কৰাতে সীমাবদ্ধ থাকিলে নহয়, তাৰ সমান্তৰালভাৱে অন্যান্য কামতো সমানে পাৰ্গত হ'ব লাগে। তেওঁৰ মতে — "ভাস্কৰে এজন স্পৰ্শকাতৰ ব্যক্তিৰ দৰে মানুহৰ জীৱনৰ অনেক দিশ অনুভূতিৰ বিষয়ে সচেতন হওক। ভাস্কৰ যদি এজন কৰ্মনিষ্ঠ গৱেষকো হয়, আজৰি সময়ত ভাস্কৰে সংগীতৰ চৰ্চা কৰক, পাৰিলে নাটক বা কথাছবিত অভিনয় অথবা কেমেৰাৰ দায়িত্বত থাকক" (ফুকন ৩৮)। তিনি দিনৰ অন্তত এনাক্ষীয়ে এটা ছফ্‌টৱেৰ প্ৰস্তুত কৰিবলৈ সক্ষম হ'ল। বহু প্ৰচেষ্টাৰ অন্তত ভাস্কৰেও ছবি আঁকিবলৈ সমৰ্থ হৈছে। এটা সময়ত আৱেগপ্ৰৱণ হৈ উঠা ভাস্কৰক এনাক্ষীয়ে কম্পিউটাৰ ছফ্‌টৱেৰত কিছু সাল-সলনি কৰাৰ পাছত এনাক্ষীৰ লেবৰেটৰীত দেখা ভাস্কৰৰ চকুত ফুটি উঠা সেই আৱেগিক চাৱনিৰ সলনি এক কৰ্মনিষ্ঠ পুৰুষৰ গভীৰ আত্মবিশ্বাস দেখা গ'ল। অৱশেষত বহু পৰিশ্ৰম তথা অধ্যাৱসায়ৰ অন্তত ভাস্কৰৰ দৰে কৰ্মনিষ্ঠ কৃত্ৰিম যন্ত্ৰমানৱ উদ্ভাৱন কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। গল্পটোৰ কথনভংগী পোনপটীয়া আৰু সৰল। তৃতীয় পুৰুষত বৰ্ণিত এই গল্পটিৰ মূল চৰিত্ৰ দুটা। এনাক্ষী আৰু চিন্ময় দুটা মানৱীয় বৈজ্ঞানিক চৰিত্ৰ। তাৰ বিপৰীতে গীতা আৰু ভাস্কৰ — এই দুটা যন্ত্ৰমানৱ চৰিত্ৰয়ো বিষয়বস্তু আৰু কাহিনীৰ পৰিৱেশ নিৰ্মাণত গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা পালন কৰিছে। যন্ত্ৰমানৱ চৰিত্ৰ দুটাই কাহিনীত সুশৃংখল আৰু সুচাৰুৰূপত নিজৰ দায়িত্ব পালন কৰি গৈছে। গল্পটোৰ মাজেৰে কি ক'ব বিচাৰিছে সেই কথা গল্পটোৰ শিৰোনামতেই ইয়াৰ স্পষ্ট আভাস ফুটি উঠিছে। মানৱসৃষ্ট কৃত্ৰিম যন্ত্ৰমানৱকো যে মানুহৰ দৰে বহুপ্ৰতিভাসম্পন্ন আৰু আৱেগপ্ৰৱণ কৰি তুলিব পাৰি — গল্পটোত উদ্ভাসিত তেনে বাস্তৱ তথা ভৱিষ্যত সম্ভাব্য দিশকেইটাৰ পৰা গল্পটো সাৰ্থক বিজ্ঞানভিত্তিক গল্প হৈ উঠিছে।

'জিমিৰ বন্ধু' বন্দিতা ফুকনৰ অন্যতম কল্পবিজ্ঞানভিত্তিক চুটিগল্প। গল্পটো ২০০১ চনৰ ফেব্ৰুৱাৰী মাহত নতুন আৰিষ্কাৰ আলোচনীত প্ৰকাশ পাইছিল। চন্দ্ৰপৃষ্ঠৰ পটভূমিত এহাল দম্পতীয়ে চন্দ্ৰৰ বুকুত পোন্ধৰ বছৰ বাস কৰি থকা সময়ত তেওঁলোকৰ সন্তান জিমি আৰু ৰবট কুকুৰ 'ৰবুট'ৰ বন্ধুত্বসুলভ আচৰণ আৰু চন্দ্ৰৰ বুকুলৈ জীৱন্ত কুকুৰ পৃথিৱীৰ পৰা লৈ অনা কথাৰ প্ৰসংগত গল্পটোৰ বিষয়বস্তু আগবঢ়াই নিছে। লেখকে শিশু উপযোগী গল্পটোৰ কাহিনী তৃতীয় পুৰুষত উপস্থাপন কৰিছে। গল্পটোত বৈজ্ঞানিক চৰিত্ৰৰ লগত জড়িত কোনো চৰিত্ৰ নাই, যদিও গল্পটোৰ মূল চৰিত্ৰ জিমিৰ দেউতাক এণ্ডাৰচনে জিমি আৰু ৰবট চৰিত্ৰ ৰবুটৰ শিশুসুলভ আচৰণ তথা বিক্ষিপ্ত কাৰ্য-কলাপৰ মাজেদি বক্তাই এক বাস্তৱিক তথা বৈজ্ঞানিক পৰিঘটনাক বিশ্বাসযোগ্য ৰূপত তুলি ধৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। তাৰ লগতে সাধাৰণ চৰিত্ৰৰ মাজেৰে উপস্থাপন কৰা গল্পটোত চন্দ্ৰ পৃষ্ঠত ৰবট কুকুৰ ৰবুটৰ সলনি সঁচা তথা জীৱন্ত কুকুৰৰ কৌশলপূৰ্ণ উপস্থাপনে সম্প্ৰতি বিজ্ঞানীসকলে গৱেষণা বা পৰীক্ষা-নিৰীক্ষা কৰি থকা চন্দ্ৰৰ দৰে গ্ৰহ-গ্ৰহান্তৰত জীৱন্ত প্ৰাণীৰ অৱস্থান সম্পৰ্কীয় পৰীক্ষামূলক বৈজ্ঞানিক অভিযানক বিশেষভাৱে অৰ্থবহ কৰি তুলিছে।

১.২ গল্পসমূহত প্ৰতিফলিত বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তিৰ প্ৰয়োগ ঃ

বিজ্ঞানভিত্তিক তথা কল্পবিজ্ঞান লেখকে কাল্পনিক কাহিনীৰ মাজেৰে বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তিৰ আৱিষ্কাৰ আৰু ইয়াৰ প্ৰয়োগৰ দিশসমূহ অতীত, বৰ্তমান আৰু ভৱিষ্যতৰ আধাৰত উপস্থাপন কৰে। তাৰ লগে লগে মানৱ সমাজত ইয়াৰ ধনাত্মক আৰু ঋণাত্মক প্ৰভাৱসমূহ প্ৰতিভাত হৈ উঠে। অৰ্থাৎ লেখকৰ কাল্পনিক চমৎকাৰিত্বই তুলি ধৰে বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তিবিদ্যাই দিয়া মানুহৰ আমাৰদায়ক জীৱন শৈলী আৰু ভৱিষ্যতে বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তিয়ে সৃষ্টি কৰিব পৰা ভাবুকিৰ বিষয়ে সাৱধানবাণী তথা সচেতনা — এই দুই বিপৰীতধৰ্মী দৃষ্টিভংগী। মানুহৰ ব্যক্তিত্ব আৰু মানুহৰ জীৱনৰ পৰস্পৰাগত বিন্যাসত প্ৰযুক্তিয়ে চলোৱা নিপীড়নৰ ক্ষুৰধাৰ সমালোচনা কৰি ফৰাচী চিন্তাবিদ জেক এলালৰ ১৯৫৪ চনত প্ৰকাশিত The Technological society শীৰ্ষক গ্ৰন্থত এইবুলি কৈছে যে মানুহে এতিয়া প্ৰাকৃতিক পৰিৱেশৰ পৰিৱৰ্তে এক প্ৰাযুক্তিক পৰিৱেশতহে বসবাস কৰিছে। এই নতুন পৰিবেশক কৃত্ৰিম, স্ব-নিয়ন্ত্ৰিত, স্ব-নিৰ্ধাৰিত আৰু সংহৰণবাদী (nihilistic) বুলি অভিহিত কৰি তেওঁ কৈছে — "প্ৰযুক্তি ইমানেই শক্তিশালী আৰু সৰ্বব্যাপী হৈ পৰিছে যে ৰাজনীতি আৰু অৰ্থনীতিৰ দৰে বিষয়বোৰ ইয়াৰ দ্বাৰা প্ৰভাৱিত হোৱাৰ পৰিৱৰ্তে ইয়াৰ অংগ হৈ পৰিছে" (Ellul 2)। তেওঁৰ মতে প্ৰযুক্তি মানুহৰ সৈতে খাপ খোৱাৰ পৰিৱৰ্তে মানুহহে প্ৰযুক্তিৰ সৈতে খাপ খাবলগীয়া হৈছে।

ক্ষীৰধৰ বৰুৱাৰ 'প্ৰগ্ৰেম চিত্ৰলেখা' গল্পত ভৱিষ্যতৰ অধিক প্ৰযুক্তিনিৰ্ভৰ সমাজখনত বিবাহৰ বাবে উপযুক্ত পাত্ৰ-পাত্ৰী নিৰ্বাচনৰ ক্ষেত্ৰত সম্ভাব্য পাত্ৰ-পাত্ৰীগৰাকীত থাকিব পৰা শাৰীৰিক আৰু মানসিক তথ্য সংগ্ৰহ কৰি প্ৰযুক্তিৰ সহায়ত ব্যক্তিগৰাকীৰ হুবহু, নিখুঁত চিত্ৰ অংকন কৰিব পৰা চিত্ৰ অংকনৰ

সম্ভাৱনা দেখুওৱা হৈছে। গল্পটোৰ কাহিনীৰ দৰে সাম্প্ৰতিক সমাজত বিবাহৰ পাত্ৰ-পাত্ৰী নিৰ্বাচনৰ ক্ষেত্ৰত বিবাহৰ আগতে দৰা-কন্যাৰ শাৰীৰিক তথা মানসিক অৰ্থাৎ জেনেটিকেল পৰীক্ষা-নিৰীক্ষাৰ প্ৰাসংগিকতাৰ ওপৰত ইতিমধ্যে চিন্তা-চৰ্চা আৰম্ভ হৈছে। গল্পটোত উল্লেখ কৰাৰ দৰে দেশৰ নিৰাপত্তাৰ দিশতো অৰ্থাৎ অপৰাধীক চিনাক্তকৰণত বিশেষকৈ অপৰাধীৰ মনৰ গোপন কথা উলিয়াই ব্যক্তিজন প্ৰকৃত অপৰাধী হয়নে নহয় তাক সাব্যস্ত কৰা ক্ষেত্ৰত 'Polygraph' পদ্ধতিৰ ব্যৱহাৰ ইতিমধ্যে বাস্তৱত সম্ভৱপৰ হৈছে। তথাপি ভৱিষ্যতৰ দিনবোৰত বিবাহৰ পাত্ৰ-পাত্ৰী নিৰ্বাচনৰ ক্ষেত্ৰত এনে পদ্ধতিৰ ফলপ্ৰসূ হোৱাৰ সম্ভাব্য দিশটোৰ বাবে গল্পটো সাৰ্থক কল্পবিজ্ঞান চুটিগল্প হৈ উঠিছে।

বৰ্তমান সময়ত নেন'-প্ৰযুক্তিবিদ্যাৰ দ্ৰুত সম্প্ৰসাৰণ ঘটিছে। এনে প্ৰযুক্তিবিদ্যাৰ সহায়ত ক্ষুদ্ৰতকৈও ক্ষুদ্ৰ অণু-পৰমাণুৰে ঘটিত বিভিন্নধৰণৰ যন্ত্ৰ-পাতি উদ্ভাৱন কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। নেন'প্ৰযুক্তিয়ে মানৱ জীৱন তথা ঔদ্যোগিক ক্ষেত্ৰখনত বৈপ্লৱিক পৰিৱৰ্তন আনিব। এক কথাত এই ক্ষুদ্ৰ বৈজ্ঞানিক ধাৰণাত লুকাই আছে ভৱিষ্যতৰ প্ৰযুক্তিৰ উজ্জ্বল সম্ভাৱনা। মানৱ জীৱন-ধাৰণৰ বিভিন্ন দিশত নেন'প্ৰযুক্তিৰ প্ৰভাৱলৈ চাই আগন্তুক সময়ত সম্ভৱত 'নেন'প্ৰযুক্তিৰ যুগ' হিচাপে চিহ্নিত হ'ব পাৰে। উল্লেখযোগ্য যে বিজ্ঞানভিত্তিক গল্প, উপন্যাস আদি ৰচনাত এইধৰণৰ বিজ্ঞানৰ অভিনৱ বিষয়ে গুৰুত্বপূৰ্ণ বিষয়বস্তু হিচাপে স্থান পোৱা দেখা যায়। অভিজিত শৰ্মা বৰুৱাৰ 'বিপ্ৰ দামোদৰ' গল্পটোত নেন' প্ৰযুক্তি অৰ্থাৎ নেন' মেচিন, থ্ৰী-মাত্ৰিক প্ৰিন্টাৰৰ দৰে শেহতীয়া প্ৰযুক্তিবিদ্যাৰ বাস্তৱ তথা কাৰ্যকৰী উদ্ভাৱন আৰু প্ৰয়োগে গল্পটোক বিজ্ঞানভিত্তিক চুটিগল্প কৰি তুলিছে। গল্পটোত প্ৰকাশ পোৱা থ্ৰী-মাত্ৰিক প্ৰিন্টাৰৰ সহায়ত অতি কম সময়ৰ ভিতৰতে ঘৰ নিৰ্মাণ পদ্ধতি শেহতীয়াকৈ বাস্তৱত সম্ভৱ হৈ উঠিছে। শেহতীয়াকৈ ভাৰততো থ্ৰী-মাত্ৰিক প্ৰিন্টাৰৰ সহায়ত ঘৰ নিৰ্মাণ প্ৰক্ৰিয়া আৰম্ভ হৈছে। এনে পদ্ধতি ব্যৱহাৰ কৰি ইতিমধ্যে ভাৰতৰ বেংগালুৰত প্ৰথমবাৰ বাবে ডাকঘৰ নিৰ্মাণ কৰি উলিৱাইছে, যদিও বিষয়টো এতিয়াও সাধাৰণ মানুহৰ বাবে বিস্ময়াভিভূত বিষয়।

বন্দিতা ফুকনৰ 'মানুহ-অমানুহ' গল্পত যন্ত্ৰমানৱৰ কথা উল্লেখেৰে প্ৰতিভাসম্পন্ন ৰবট গঢ়ি তোলাৰ প্ৰযুক্তিৰ দিশ দেখুওৱাৰ দৰে বৰ্তমান সময়ত বহুজাতিক প্ৰতিষ্ঠান বা কোম্পানীসমূহে বিভিন্ন ধৰণৰ ৰবটৰ দ্বাৰা কাম কৰোৱাৰ ধৰিছে, ফলত নিৱনুৱাৰ সমস্যা অধিক বৃদ্ধি পোৱাৰ সম্ভাৱনাই গা কৰি উঠিছে। কিয়নো বিজ্ঞানীসকলে ৰবটক উন্নত ধৰণৰ কম্পিউটাৰৰ দ্বাৰা প্ৰগ্ৰেমিং কৰি দহজন মানুহে কৰা কাম ৰবটৰ দ্বাৰা কৰিব পৰাটো আজিৰ দিনত স্বাভাৱিক হ'ব ধৰিছে। সেইফালৰ পৰা গল্পটোত উপস্থাপন কৰা ধৰণৰ ৰবটৰ চিকিৎসা, বাণিজ্য, কাৰিকৰী আদি দিশত ভৱিষ্যতে ইয়াৰ সুদূৰপ্ৰসাৰী প্ৰভাৱ লক্ষণীয় হ'ব। বন্দিতা ফকনৰ 'জিমিৰ বন্ধু' গল্পটোৰ কাহিনীত পৃথিৱীৰ পৰা লৈ অনা আচল কুকুৰৰ প্ৰসংগই চন্দ্ৰপৃষ্ঠৰ দৰে সৌৰজগতৰ গ্ৰহ-উপগ্ৰহত কৃত্ৰিম ৰবটৰ সলনি জীৱন্ত জন্তুৰ বাসোপযোগীতাৰ পৰীক্ষণৰ তাৎপৰ্য বহন কৰিছে। এফালে, শিশু মনস্তত্ত্ব ফুটি উঠা গল্পটোত বৰ্তমানৰ বিজ্ঞানৰ আধাৰত লেখকে মানৱ শিশু আৰু ৰবটৰ বন্ধুত্বসুলভ আচৰণ দেখুওৱা কাহিনীৰে শিশুমনত ৰাছিয়াই ৩ নৱেম্বৰ, ১৯৫৭ চনত 'স্পুট'নিক-২' নামৰ কৃত্ৰিম উপগ্ৰহৰ সহায়ত মহাকাশলৈ পৃথিৱীৰ প্ৰথম জীৱ হিচাপে পঠোৱা 'লাইকা' নামৰ কুকুৰৰ মহাকাশ অভিযানৰ আভাস দিবলৈ প্ৰয়াস কৰিছে। আনফালে, পৃথিৱীৰ বিকল্প হিচাপে চন্দ্ৰপৃষ্ঠত উপনিৱেশিকতাৰ ধাৰণা — এই দুটা বাস্তৱ আৰু ভৱিষ্যত সম্ভাব্য দিশটোৱে গল্পটোক বিজ্ঞানভিত্তিক কল্প-চুটিগল্প কৰি তুলিছে।

কম্পিউটাৰ প্ৰযুক্তিৰ অভূতপূৰ্ব উন্নতিৰ লগে লগে বিভিন্ন ধৰণৰ ছফ্‌টৱেৰ ইণ্টাৰনেটৰ জৰিয়তে সৰ্বসাধাৰণ লোকৰ বাবে সহজলভ্য হৈ পৰিছে। মানৱ সভ্যতাৰ উত্তৰণৰ দিশত প্ৰযুক্তিবিদ্যাই যিমান ভূমিকা লৈছে সিমান ইণ্টাৰনেট মাধ্যমত চলা অশ্লীল ছবি তথা অপপ্ৰয়োগে আন এক সামাজিক সংকটৰ সৃষ্টি কৰিছে। বিশেষকৈ বহু সংখ্যক কিশোৰ-কিশোৰী তথা যুৱক-যুৱতী এইধৰণৰ ইলেক্ট্ৰনিক মাধ্যমৰ বলি হয়। অৰ্থাৎ ইণ্টাৰনেট মাধ্যমে নাৰীৰ জীৱন আৰু দৃষ্টিভংগীলৈ অনা পৰিৱৰ্তনক লেখকে বাস্তৱধৰ্মী ৰূপত গল্পটোত চিত্ৰায়িত কৰিছে। অভিজিত শৰ্মা বৰুৱাৰ 'বিৱৰ্তনত প্ৰেমহ্ল' গল্পটোত কম্পিউটাৰ ভাইৰাছৰ ইতিবাচক দিশও দেখুওৱা হৈছে। ইণ্টাৰনেট মাধ্যমত প্ৰচাৰ হোৱা সামাজিক বিশৃংখলতাক মষিমূৰ কৰিবলৈ কম্পিউটাৰ ভাইৰাছক ইয়াৰ সমাধান সূত্ৰ হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰিছে। গল্পটোত মানৱীয় প্ৰেমৰ আধাৰত 'ডিপফেক' এ'পৰ দৰে বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তিৰ প্ৰভাৱত মূল্যবোধৰ খহনীয়া ৰূপ তথা প্ৰযুক্তিক নেতিবাচক কামত ব্যৱহাৰ কৰাৰ প্ৰায়োগিক দিশটোও সমানে স্থান পাইছে। প্ৰেমৰ ভাবটো চিৰশ্বাশ্বত যদিও বৰ্তমানৰ প্ৰেক্ষাপটত ৰূপৰ যে

পৰিৱৰ্তন হৈছে — তেনে দৃষ্টিভংগী পৰিস্ফুট হৈছে।

১.৩ গল্পসমূহ প্ৰতিফলিত সমাজ-চেতনা ঃ

বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তি আৰু সমাজ এটাই আনটোৰ পৰিপূৰক। সমাজৰ সকলো শ্ৰেণীৰ মানুহেই জনা-নজনাকৈ বিজ্ঞানৰ অৱদানবোৰ ব্যৱহাৰ কৰা পৰিলক্ষিত হয়। আজিৰ প্ৰেক্ষাপটত সমাজৰ কোনো এজন ব্যক্তিয়ে বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তিৰ আহিলা ব্যৱহাৰ নকৰাকৈ জীৱন-নিৰ্বাহ কৰাটো প্ৰায় অসম্ভৱ। নিৰক্ষৰ ব্যক্তিৰ পৰা বিজ্ঞানীলৈকে, আনন্দ-বিনোদনৰ পৰা স্বাস্থ্য ৰক্ষালৈকে ব্যক্তিমাত্ৰেই বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তিৰ সুদূৰপ্ৰসাৰী প্ৰভাৱ অনুভৱ কৰিব পাৰে। সাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰখনত বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তি সম্বন্ধিত তাত্ত্বিক তথা আৱিষ্কাৰ-উদ্ভাৱনৰ কথাবোৰ লেখকে সহজ-সৰল ভাষাৰে সকলো শ্ৰেণীৰ পঢ়ুৱৈৰ বোধগম্য হোৱাকৈ কলাত্মক ৰূপদান দিছে। সেয়া প্ৰবন্ধৰ ৰূপতেই হওক বা কাল্পনিক কাহিনীৰ আধাৰতেই হওক। লেখকে এইধৰণৰ লেখাৰ জৰিয়তে নান্দনিক আনন্দ দিয়াৰ লগতে বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তিৰ প্ৰায়োগিক দিশ তথা সমাজ-জীৱনত ইয়াৰ ইতিবাচক আৰু নেতিবাচক প্ৰভাৱ, উচিত-অনুচিত, গ্ৰহণ-বৰ্জন আদি সকলো দিশৰ প্ৰতি বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তি নিৰ্ভৰ তথাকথিত সমাজক সচেতন কৰাবলৈ প্ৰয়াস কৰে। এনে বিষয়ৰ জৰিয়তে পাঠক সমাজে সমাজৰ প্ৰগতিৰ পথ ৰুদ্ধ কৰা অবৈজ্ঞানিক ধ্যান-ধাৰণাক বৈজ্ঞানিক দৃষ্টিভংগীৰে বিচাৰ-বিশ্লেষণ কৰিবলৈ অনুপ্ৰেৰণা পায়। সেইদৰে সমাজৰ একো একোজন ব্যক্তি বিজ্ঞান চেতনা বা বৈজ্ঞানিক মানসিকতাৰে পুষ্ট হৈ উঠাত ইন্ধন যোগায়।

ক্ষীৰধৰ বৰুৱাৰ 'প্ৰগ্ৰেম চিত্ৰলেখা' গল্পটোত কম্পিউটাৰ বিজ্ঞানী এগৰাকীয়ে বিভিন্ন ইতৰ প্ৰাণীৰ ক্ষেত্ৰত শাৰীৰিক বৰ্ণনা 'ইনপুট' আৰু পূৰাকথা আদি মানুহৰ ক্ষেত্ৰত শাৰীৰিক আৰু শেষত জীৱন্ত মানুহৰ সঠিক বৰ্ণনাৰেও হুবহু ধৰণৰ ছবি অংকনত সফলতা দেখুওৱা হৈছে। এই পদ্ধতিৰ দ্বাৰা বিবাহৰ বাবে বিচৰা ধৰণৰ পাত্ৰী বিচৰাত সফলতা পোৱাৰ লগতে অপৰাধক বিচাৰি উলিওৱাত সুবিধা হোৱা দিশটোৰ চিন্তা-চেতনাত সমাজ-চেতনাৰ প্ৰতিফলন ঘটিছে। ভৱিষ্যতে ৰবটে গীতা আৰু ভাস্কৰৰ দৰে মানৱীয় আৱেগ-অনুভূতিসিক্ত ৰূপতো নিজকে সংস্থাপিত কৰাৰ সম্ভাৱনা আছে, তেনে যন্ত্ৰ নিৰ্ভৰ সমাজ-জীৱনৰ সচেতনতামূলক দিশ বন্দিতা ফুকনৰ 'মানুহ-অমানুহ' গল্পটোত নিহিত হৈ আছে। বৰ্তমান সময়ত মানুহৰ জীৱন পৰিক্ৰমাত বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তিৰ ইলেক্‌ট্ৰনিক মাধ্যমৰ অপৰিহাৰ্যতাই আনি দিয়া ইতিবাচক আৰু নেতিবাচক প্ৰভাৱ মনকৰিবলগীয়া বিষয়।

বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তিবিদ্যাই যিমানেই দ্ৰুত গতিত সম্প্ৰসাৰণ হৈছে, সিমানেই মানুহৰ শাৰীৰিক, মানসিক, বৌদ্ধিক তথা নৈতিক স্খলন ঘটিব ধৰিছে। ইলেক্‌ট্ৰনিক মাধ্যমৰ জৰিয়তে বিশেষকৈ নৱপ্ৰজন্মৰ এচাম শিক্ষিত যুৱকৰ অসৎ মানসিকতা তথা কু-চৰিতাৰ্থৰ নমুনা প্ৰতিফলিত 'বিৱৰ্তনত প্ৰেম' গল্পত। প্ৰেমৰ প্ৰস্তাৱ অস্বীকাৰ কৰাৰ ফলত তাৰ প্ৰতিশোধ হিচাপে এজনী ছোৱালীৰ শাৰীৰিক অৱয়ব অশ্লীলৰূপত পৰ্ণগ্ৰাফিক ৱেবছাইটত প্ৰচাৰ কৰা ঘটনাৰ প্ৰসংগত ইণ্টাৰনেট মাধ্যমৰ দৰে প্ৰযুক্তিবিদ্যাৰ অপ-প্ৰয়োগৰ প্ৰতি সমাজৰ সকলো শ্ৰেণীৰ মানুহ সদা সচেতনতাৰ প্ৰয়োজন - তেনে সমাজ-চেতনাৰ দিশ উন্মোচিত হৈছে। গল্পটোৰ কাহিনী কাল্পনিক কিন্তু গল্পটোত উপস্থাপন কৰা ঘটনা বৰ্তমান সমাজত স্বাভাৱিক হ'ব ধৰিছে। কম্পিউটাৰ ভাই�ৰাচৰ সুপ্ৰয়োগৰ প্ৰসংগ অৱতাৰণা কৰাৰ সমান্তৰালকৈ বৰ্তমান সময়ত ইণ্টাৰনেট মাধ্যমৰ জৰিয়তে ব্লেকমেইলিং কৰাৰ দৰে নেতিবাচক ঘটনাক গল্পকাৰে কাল্পনিক কাহিনী মাজেৰে ফুটাই তোলাত সফল হৈছে। গল্পটোত বিজ্ঞানৰ অৱদানে দিয়া সমস্যাক বিজ্ঞানৰ তত্ত্বৰ দ্বাৰাই সমাধান কৰা দেখুৱাইছে। বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তিবিদ্যাৰ প্ৰভাৱত প্ৰেমৰ ৰূপ যিমানেই সলনি নহ'ওক কিয় প্ৰেম যে অবিনশ্বৰ, প্ৰেম যে চিৰ শাশ্বত - গল্পকাৰে তেনে দৃষ্টিভংগীও প্ৰকাশৰ যত্ন কৰিছে। 'বিপ্ৰ দামোদৰ' গল্পটোত ত্ৰি-মাত্ৰিক প্ৰযুক্তিৰে অতি কম সময়ৰ ভিতৰতে ঘৰ তৈয়াৰ কৰিব পৰাৰ প্ৰসংগ উত্থাপন কৰিছে। থ্ৰী ডিৰ দৰে শেহতীয়া প্ৰযুক্তিৰ বিষয়ে গল্পকাৰে পাঠকক সচেতন কৰি দিয়াৰ লগতে তাহানিৰ কৃষ্ণ-দামোদৰৰ মাজৰ বন্ধুত্বৰ দৰে বন্ধুত্বৰ মাজৰ সহযোগিতা তথা গুৰুত্ব আৰু বন্ধুত্বৰ সহায়ত গুৱাহাটী মহানগৰীৰ পটভূমিত বিশৃংখলভাৱে গঢ়ি উঠা বাসভৱনসমূহ শৃংখলাবদ্ধভাৱে সজোৱাৰ প্ৰয়োজনীতাৰ দিশ গল্পটোত প্ৰতিফলিত হৈছে।

১.৪ গল্পসমূহৰ ভাষা-বৈচিত্ৰ্য ঃ

ভাষা যদি সাৱলীল, বোধগম্য আৰু সৰল নহয় তেন্তে ৰচনাৰ বিষয়বস্তু যিমানেই গুৰুত্বপূৰ্ণ বা প্ৰয়োজনীয় নহওক কিয়, তেনে লেখাই পাঠকৰ মনত সাঁচ বহুৱাব নোৱাৰে। বিজ্ঞান সাহিত্যৰ ভাষিক বৈচিত্ৰ্যই সাধাৰণ ৰচনাৰ বিশেষত্বৰ পৰা

কল্পবিজ্ঞানভিত্তিক কাহিনীক কিছু পৃথক কৰে। কল্পবিজ্ঞান কাহিনীত ব্যৱহাৰ হোৱা শব্দবোৰ দুই প্ৰকাৰৰ — এবিধ সচৰাচৰ ব্যৱহৃত সাধাৰণ শব্দ আৰু আনবিধ হ'ল বৈজ্ঞানিক শব্দ তথা বৈজ্ঞানিক পৰিভাষা। কল্পবিজ্ঞানভিত্তিক ৰচনাত বিজ্ঞানৰ আৱিষ্কাৰ, যন্ত্ৰপাতি আৰু ইয়াৰ প্ৰয়োগ সম্পৰ্কীয় বৈজ্ঞানিক তথ্য বা তত্ত্বখিনি যাতে বিচ্যুত নহয় তাৰ প্ৰতি লক্ষ্য ৰাখি লেখকে কৌশলপূৰ্ণ প্ৰকাশভংগীৰে বিষয়বস্তু উপস্থাপন কৰাত গুৰুত্ব দিয়া পৰিলক্ষিত হয়। বিজ্ঞান লেখকসকলে সচেতনভাৱে বিজ্ঞানৰ তথ্যগধুৰ বিষয়বস্তু সম্বন্ধিত শব্দ বা ভাষা ব্যৱহাৰত সাধাৰণ পাঠকৰ বোধগম্যতাৰ দিশটোৰ প্ৰতি লক্ষ্য ৰাখি ব্যৱহাৰ কৰা দেখা যায়। বিষয়বস্তু যিয়েই নহওক বিজ্ঞানভিত্তিক লেখাত সততে ব্যৱহাৰ হোৱা শব্দ প্ৰয়োগ, বৈজ্ঞানিক পৰিভাষাৰ ব্যৱহাৰ, বৈজ্ঞানিক শব্দ, সহজ-সৰল বাক্যৰীতিয়েহে বিজ্ঞানৰ বিষয় একোটা সকলো শ্ৰেণীৰ পাঠকৰ ওচৰ চপাত সহায় কৰিব পাৰে। বিজ্ঞানভিত্তিক ৰচনাৰ অন্যতম বৈশিষ্ট্য বৈজ্ঞানিক শব্দাৱলীয়ে পাঠকক বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তিৰ নতুন নতুন শব্দৰ সৈতে পৰিচয় কৰায়। আলোচ্য গল্পসমূহত ব্যৱহৃত বৈজ্ঞানিক শব্দাৱলীসমূহ হ'ল—কম্পিউটাৰ, ফটো'ইলেক ট্ৰ'কেমিকেল, চাইক'বায়'কেমিকেল, এফ-এম-আৰ-আই (প্ৰগ্ৰেম চিত্ৰলেখা), নেন'প্ৰযুক্তি, প্ৰিন্টাৰ, ফটোষ্টেট, কম্পিউটাৰ স্কেন, নেন' মেচিন, এটম কনভার্টাৰ, লেজাৰ গান, ইলেকট্ৰনিকেল ৰায়ার্ছ, টু-ডাইমেনছনেল, ফটোষ্টেত, এডভান্সড্ টেকন'লজি, ছুপাৰ কম্পিউটাৰ (বিপ্ৰ দামোদৰ), কম্পিউটাৰ, ভাইৰাছ, ৰেৰছাইট, ইণ্টাৰনেট, এণ্টিভাইৰাছ, ছফ্‌ট্‌ৱেৰ (বিৱৰ্তনত প্ৰেম) ইত্যাদি।

বিজ্ঞানভিত্তিক ৰচনাত লেখকৰ বৈজ্ঞানিক পৰিভাষাৰ যথাৰ্থ ব্যৱহাৰে বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তিগত যন্ত্ৰ-পাতি, পৰীক্ষা-নিৰীক্ষা, বিজ্ঞানৰ তথ্য বা তত্ত্বজনিত কথাবোৰ পঢ়ুৱৈয়ে ইংৰাজীৰ লগতে নিজৰ মাতৃভাষাত অনুধাবন কৰিব পাৰি। সেইবাবে পৰিভাষাৰ শব্দবোৰ সৰল-সহজ তথা অনায়সে বোধগম্য আৰু সঠিক অৰ্থ প্ৰকাশক হোৱা প্ৰয়োজন। পৰিভাষিক অৰ্থানুবাদ সম্ভৱ নহ'লে সহজবোধ্য সৰল ভাবানুবাদ ব্যৱহাৰ কৰাৰ লগতে ইংৰাজী শব্দটোৰো ব্যৱহাৰ কৰাৰ প্ৰয়োজনীয়তা বিজ্ঞানভিত্তিক ৰচনাৰ অন্যতম ভাষিক বৈশিষ্ট্য। যিবোৰ ক্ষেত্ৰত অনুবাদ সম্ভৱ নহয় তেনে ক্ষেত্ৰত ইংৰাজীতে শব্দটো ব্যৱহাৰ কৰা দেখা যায়। আৰু সকলো শ্ৰেণীৰ পঢ়ুৱৈৰ বোধগম্যতাৰ প্ৰতি লক্ষ্য ৰাখি কঠিন দুৰ্বোধ্য শব্দ ব্যৱহাৰ পৰিহাস কৰি সততে ব্যৱহাৰ হোৱা শব্দ প্ৰয়োগে বিজ্ঞাননিষ্ঠ ৰচনা এটাক সাধাৰণ সুখপাঠ্য ৰচনালৈ উন্নীত কৰে। আলোচ্য গল্পসমূহত ব্যৱহৃত তেনে বৈজ্ঞানিক পৰিভাষাৰ উদাহৰণ হ'ল যন্ত্ৰমানৰ — Robot (মানুহ-অমানুহ), ত্ৰিমাত্ৰিক প্ৰিন্টাৰ— Three Dimentional (বিপ্ৰ দামোদৰ) ইত্যাদি।

কল্পবিজ্ঞানভিত্তিক ৰচনাত বিষয়বস্তুক আকৰ্ষণীয় ৰূপত দাঙি ধৰিবলৈ বা পৰিৱেশ আৰু চৰিত্ৰৰ ভূমিকা অনুসৰি তেনে ইংৰাজী শব্দ বা বাক্যৰ ব্যৱহাৰ মনকৰিবলগীয়া। আলোচ্য গল্পসমূহত বৈজ্ঞানিক পৰীক্ষা-নিৰীক্ষাত ব্যৱহৃত শব্দ প্ৰয়োগত, ইংৰাজী বাক্য ব্যৱহাৰত অসমীয়া লিপ্যন্তৰ ব্যৱহাৰ কৰা দেখা গৈছে। উদাহৰণস্বৰূপে —

ছাৰ, আই হিয়েৰবাই ৰাণ্ট টু প্লেচ ভেৰি ইম্প'ৰ্টেণ্ট প্ৰপ'জেল বিফ'ৰ ইউ...।

ন'হু এভৰিটিংহু ৰাইট ফ্ৰম দি ইলেকট্ৰিকেল ৰায়ার্ছহু ফার্ণিচাৰ, লাইট, ফেন... (শৰ্মা বৰুৱা ৩৩-৩৪)।

কিছু সংখ্যক গল্পৰ কথোকথনত চুটি চুটি বাক্য বিন্যাসৰ মাজেৰে কাহিনীৰ প্ৰকাশভংগী সুন্দৰ ৰূপত তুলি ধৰা দেখা গৈছে। যেনে —

জ্ঞানৰ ইন্‌জেকছন
খং কমোৱা ছাৰ্কিট
প্ৰতি পদাৰ্থ, ফ'টন ৰকেট
ওপাহৰতকৈ বেগী কণিকা (বৰুৱা ২৮)।

বিজ্ঞান লেখকসকলে বিষয়বস্তুৰ প্ৰাসঙ্গিক উপমা, প্ৰবচন, সাহিত্যৰ বিভিন্ন ক্ষেত্ৰৰপৰা উদ্ধৃতি ব্যৱহাৰ কৰি কল্পবিজ্ঞানভিত্তিক ৰচনা এটাক সমৃদ্ধ হোৱা পৰিলক্ষিত হয়। উদাহৰণস্বৰূপে —

পশ্চিমত ডুব যাব খোজা বেলিটো ৰঙা বল এটাৰ দৰে হৈ পৰিছে।

কোনোবা ভাল শিল্পীয়ে আঁকাৰ দৰেই ভাস্কৰে ছবি দুখন আঁকিছে (ফুকন ৩৯)।

কাহিনীৰ পৰিৱেশ বৰ্ণনাৰ ক্ষেত্ৰত ব্যৱহৃত এইধৰণৰ উপমা-অলংকাৰে বাক্যৰীতিৰ চমৎকাৰিত্ব বহু গুণে বৃদ্ধি কৰায়।

১.৫ অনন্যা ঃ

প্ৰসংগক্ৰমে একবিংশ শতিকাত অসমীয়া কল্পবিজ্ঞানভিত্তিক চুটিগল্পক সমৃদ্ধ কৰা গল্পকাৰ তথা গল্পৰ

বিষয়ে চমুকৈ আলোকপাত কৰা হৈছে। সাতসৰী আলোচনীত প্ৰকাশিত সৌৰভ কুমাৰ চলিহাৰ শেহতীয়া কল্পবিজ্ঞানভিত্তিক চুটিগল্পটো হ'ল মৰুদ্যান (১৬-৩১ মে', ২০০৮)। পৃথিৱীয়ে হৈছে জীৱকুলৰ বাবে একমাত্ৰ আৰু অদ্বিতীয় বাসোপযোগী ঠাই। কিন্তু পৃথিৱীৰ বাহিৰেও সৌৰজগতৰ গ্ৰহ-উপগ্ৰহত বা তাৰ বাহিৰত পৃথিৱীৰ লেখীয়া অন্য এখন জগত আছে নেকি? যদি আছে ক'ত আছে? তেনে এক অনুসন্ধানমূলক কাহিনীৰে নিৰ্মিত মৰুদ্যান গল্পটো। শান্তনু তামুলী অসমীয়া সাহিত্য জগতত শিশু সাহিত্যৰ লগতে কল্পবিজ্ঞান সাহিত্যলৈও অৱদান আগবঢ়াইছে। তেওঁৰ 'পানী' (বিস্ময়, ২০০৮) নামৰ গল্পটো ৰাজনৈতিক পটভূমিত ৰচিত বিজ্ঞানভিত্তিক গল্প। কেৱল দুটা চৰিত্ৰৰ সমাৱেশ ঘটা গল্পটোত হিমালয়ৰ বুকুৰ পৰা বৈ অহা ব্ৰহ্মপুত্ৰৰ উৎপত্তি স্থলত অৰ্থাৎ তিব্বতৰ সীমান্তৱৰ্তী অঞ্চলত চীনে বান্ধ নিৰ্মাণ কৰি ব্ৰহ্মপুত্ৰক ভেটি ব্ৰহ্মপুত্ৰৰ পানী চীনদেশৰ গোবি মৰুভূমিৰ মাজে�ৰে বোৱাই নিয়াৰ বাবে কৰা পৰিকল্পনা আৰু ১৯৫০ চনৰ ১৫ আগষ্টত অসমত হোৱা ভূমিকম্পৰ আনুমানিক কাৰণ তুলি ধৰিছে। গল্পটোত ভৱিষ্যতৰ জগতৰ পৰা অহা দিহিঙ্গিয়া উপাধিৰ এগৰাকী ব্যক্তি আৰু বিজ্ঞানী তামুলীৰ বৈজ্ঞানিক আৱিষ্কাৰৰ যোগেদি চীনদেশৰ দ্বাৰা হ'ব পৰা সম্ভাব্য জলপ্ৰলয়ৰ পৰা ৰক্ষা কৰাৰ প্ৰয়াস দেখুওৱা হৈছে।

দীপক কুমাৰ শৰ্মা অসমীয়া সাহিত্যৰ নবীন বিজ্ঞানভিত্তিক গল্পকাৰ। তেওঁৰ 'সিদ্ধান্ত' (বিস্ময় , ছেপ্টেম্বৰত, ২০১৩ চনৰ) নামৰ গল্পটোৰ কাহিনীত অত্যাধুনিক তথা উন্নত প্ৰযুক্তিবিদ্যাৰে ভৰি পৰা চহৰ এখনৰ কল্পনা কৰিছে। আজিৰ প্ৰেক্ষাপটত 'সিদ্ধান্ত' গল্পত বৰ্ণনা কৰা কাহিনীৰ দৰে প্ৰযুক্তিবিদ্যাই মানৱ কল্যাণ সাধনৰ সমান্তৰালকৈ মানৱীয় প্ৰমূল্যবোধত বিৰূপ প্ৰভাৱ পেলাইছে; সেয়া সকলোৰে বোধগম্য। অদূৰ ভৱিষ্যতে জৈৱিক প্ৰেমৰ দৰে মানৱীয় আৱেদনসমূহ ৰবট বা ক্লা'নিং অৱয়ৱত ধাৰণ কৰাৰ সম্ভাৱীয়তাৰ দিশ ফুটি উঠা গল্পটোত বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তিৰ অপৰিহাৰ্যতাই আনি দিয়া বৰ্তমানৰ পৰিৱৰ্তিত সমাজখনত বৈজ্ঞানিক পদ্ধতিৰে সন্তান জন্ম দিয়া প্ৰক্ৰিয়া আৰু ক্ৰমাৎ হ্ৰাস পাবলৈ ধৰা জৈৱিক প্ৰজনন ক্ষমতাৰ বিপৰ্যয়ৰ স্বৰূপ উদঙাইছে। মনোৰঞ্জন হাজৰিকাৰ আন এজন বিজ্ঞানভিত্তিক গল্প লেখক। 'অমৰত্ব' (প্ৰান্তিক,১-১৫ অক্টোবৰ, ২০০১) তেওঁৰ বিজ্ঞানভিত্তিক চুটিগল্প। কৃত্ৰিম মহাকাশ আস্থানৰ পৰিৱেশত অস্ত্ৰোপচাৰৰ দৰে চিকিৎসা তথা গৱেষণা কাৰ্য সমাপনৰ প্ৰয়াস, ক্লা'নিং মানৱ তথা মগজু সংৰোপণৰ ধাৰণা, কৃত্ৰিম যন্ত্ৰমানৱৰ উপযুক্ত ব্যৱহাৰ আৰু অমৰত্ব কামনাৰ দৰে অভিনৱ আৰু সম্ভাব্য বৈজ্ঞানিক ধাৰণাৰ আভাস দিয়া কল্পবিজ্ঞানভিত্তিক কাহিনীটোৱে অসমীয়া পাঠকৰ মনত এক অভিনৱ বৈজ্ঞানিক বিষয়ৰ প্ৰতি অনুসন্ধিৎসু জগাই তুলিবলৈ সক্ষম হৈছে বুলিব পাৰি। প্ৰশান্ত কুমাৰ দাস অসমীয়া সাহিত্যৰ এগৰাকী নবীন কল্পবিজ্ঞান গল্পকাৰ। 'ফোনিক্স-ৰান' (সাতসৰী, ছেপ্টেম্বৰ, ২০০৮) তেওঁৰ অন্যতম কল্পবিজ্ঞাভিত্তিক চুটিগল্প। কথকৰ ৰূপত লেখকে এটা ৰবটৰ চিন্তাক মানুহৰ চিন্তাৰে কিদৰে প্ৰভাৱিত কৰিব পৰা যায় - তেনে বৈজ্ঞানিক গৱেষণা তথা পৰীক্ষণৰ মাজেৰে বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তিৰ উত্তৰণ আৰু প্ৰয়োগৰ পটভূমিত মানৱীয় আৱেদনৰ দিশটো অতি স্পৰ্শকাতৰভাৱে তুলি ধৰিছে।

সামৰণি ঃ

অসমীয়া ভাষাত কল্পবিজ্ঞানবিজ্ঞান সাহিত্য ৰচনা আপেক্ষিকভাৱে তাকৰ। কাৰণ মুষ্টিমেয় লেখকেহে একনিষ্ঠভাৱে কল্পবিজ্ঞান ৰচনা আৰু চৰ্চাত আত্মনিয়োগ কৰিছে। অৱশ্যে সেয়াই একমাত্ৰ কাৰণ নহয়। বিজ্ঞানৰ তাত্ত্বিক বিষয়বস্তুক অন্য সাহিত্য শাখাৰ লেখক আৰু পাঠকে ভালদৰে উপলব্ধি কৰিব নোৱাৰাও অন্যতম কাৰণ হ'ব পাৰে। তথাপি বিজ্ঞানক জনমুখী কৰিবলৈ বা সমাজত বৈজ্ঞানিক মানসিকতা গঠনৰ স্বাৰ্থত বিজ্ঞান সাহিত্য তথ্যভিত্তিক বিজ্ঞানৰ ন ন আৱিষ্কাৰৰ আলোচনাৰ মাজতে আবদ্ধ নাথাকি কল্পিত কাহিনীৰ আধাৰত বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তিৰ ঘটনা-পৰিঘটনাক সাহিত্যৰ ৰসত জুবুৰিয়াই গল্প, উপন্যাস, নাটক আদিৰ দৰে সৃজনীমূলক ৰচনাৰে অসমীয়া কল্পবিজ্ঞান সাহিত্য সমৃদ্ধ হৈ উঠিছে। এই অধ্যয়নৰ পৰা এইটো প্ৰতীয়মান হৈছে যে কল্পবিজ্ঞান চুটিগল্পই পঢ়ুৱৈ সমাজক কেৱল নান্দনিক আনন্দ দিয়াই নহয়, ন ন বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তিবিদ্যাৰ সৈতে পৰিচয় ঘটাই সম্ভাব্য নেতিবাচক প্ৰভাৱৰ প্ৰতি মানুহক সচেতন কৰোৱা, সমাজত কুসংস্কাৰ, অন্ধবিশ্বাস দূৰীকৰণ, বৈজ্ঞানিক মানসিকতা গঠন আৰু বৌদ্ধিক পৰিৱৰ্তন সাধনতো গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা পালন কৰে। অৱশ্যে এইক্ষেত্ৰত বিজ্ঞান সাহিত্যৰ লেখক আৰু পাঠকৰ বিজ্ঞানৰ তাত্ত্বিক জ্ঞানৰ লগতে বৈজ্ঞানিক মানসিকতাৰে পুষ্ট সৃষ্টিশীল আৰু গতিশীল মন নিতান্তই প্ৰয়োজন। ❑

প্রসংগসূত্র ঃ
গোস্বামী, দীনেশ চন্দ্র। বিশ্বকোষ (পঞ্চম খণ্ড)। শর্মা, মদন। সম্পা.। অসম সাহিত্য সভা, ২০০১, পৃ.১৬১৯-১৬২০।
বৰুৱা, ক্ষীৰধৰ বৰুৱা। "প্রগ্রেম চিত্রলেখা"। সাতসৰী। ১৬-৩১ মে', ২০০৮, পৃ. ৩০।
ফুকন, বন্দিতা। "মানুহ-অমানুহ" ।সাতসৰী। মে', ২০০৮, পৃ. ৩৮।.
Ellul, Jacques. The Technological Society. Vintage Books, UK, Trans. 1964. p.2
শর্মা বৰুৱা, অভিজিত। "বিপ্র দামোদৰ"। সাতসৰী। ১৬-৩১ মে', ২০০৮, পৃ.৩৩-৩৪।
বৰুৱা, ক্ষীৰধৰ। "প্রগ্রেম চিত্রলেখা"। সাতসৰী। মে', ২০০৮, পৃ.২৯।
ফুকন, বন্দিতা। "মানুহ-অমানুহ"। সাতসৰী। মে', ২০০৮, পৃ.৩৮-৩৯।

সহায়ক গ্রন্থপঞ্জী ঃ
কলিতা, নিপম, সম্পা.। অসমীয়া কল্পবিজ্ঞান সাহিত্য। পূর্বায়ন, ২০২১।
তামূলী, শান্তনু। সম্পা.। সংক.। অসমীয়া কল্পবিজ্ঞান গল্প-সংকলন। সাহিত্য অকাদেমি, ২০১৭।
শইকীয়া, বিনয় মোহন। কল্পবিজ্ঞান সাহিত্য। চন্দ্র প্রকাশ, ২০১৬।
ৰাজখোৱা, অৰবিন্দ। সম্পা.। অসমীয়া বিজ্ঞান সাহিত্য । অসম বিজ্ঞান লেখক সংস্থা আৰু নর্থ লখিমপুৰ মহাবিদ্যালয় প্রকাশন, ২০১৮।
Clute, John, and Peter Nichols. Encyclopedi of science fiction, 2nd ed. London Orbit. 1993.
Huxley, Aldous. Literature and science. Free Download, Borrow and Streaming :Internet Archive, Chatto & Windus, 1963.
Reginald, Robert.Science Fiction and Fantasy Literature, Detroit MI Washington, D.C. London : Gale Research, 1992.
Roberts, Adam. The History of Science Fiction. 2nd ed. London : Palgrave Macmillan, 2016.

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ পাঁচনি নাটকত সন্নিৱিষ্ট ৰসৰ বিচাৰ ঃ এক প্রাচ্যতাত্ত্বিক অৱলোকন

বিদ্যুৎ দত্ত
গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
বড়োলেণ্ড বিশ্ববিদ্যালয়, কোকৰাঝাৰ, অসম
(সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
বিমলা প্রসাদ চলিহা মহাবিদ্যালয়, নগৱবেৰা)
৬০০২১২২৮১০
bidyutdutta1996@gmail.com

ড° বিভূতি লোচন শর্মা
সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
বড়োলেণ্ড বিশ্ববিদ্যালয়, কোকৰাঝাৰ, অসম
৯৮৬৪৫২২৩০০
blsnalbari@gmail.com

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

জোনাকী যুগৰ ত্রিমূর্তিৰ অন্যতম লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাই অসমীয়া সাহিত্যৰ বিভিন্ন বিধাত সাহিত্য ৰচনা কৰাৰ উপৰিও নাট্য সাহিত্যৰ চর্চাতো বিশেষ মনোযোগ দিছিল। বেজবৰুৱাই *লিতিকাই* (১৮৯০), *নোমল* (১৯১৩), *পাঁচনি* (১৯১৩), *চিকৰপতি-নিকৰপতি* (১৯১৩) নামেৰে চাৰিখন ধেমেলীয়া নাট বা প্রহসন আৰু *জয়মতী কুঁৱৰী* (১৯১৫), *চক্রধ্বজ সিংহ* (১৯১৫) আৰু *বেলিমাৰ* (১৯১৫) নামেৰে তিনিখন ঐতিহাসিক নাট ৰচনা কৰে। বেজবৰুৱাই পাশ্চাত্যৰ চিন্তা-চর্চা আৰু সাহিত্যৰ দ্বাৰা প্রভাৰিত হৈ প্রধানকৈ নাট্য সাহিত্যৰ চর্চা কৰিছিল যদিও তেওঁৰ নাটকত ভাৰতীয় চিন্তা, দর্শন আৰু ঐতিহ্যৰো প্রকাশ আছিল। একেদৰে পাশ্চাত্য সাহিত্য তত্ত্বৰ বিভিন্ন উপাদান তেওঁৰ নাটকত যিদৰে লক্ষ্য কৰা যায়, ভাৰতীয় নাট্যশাস্ত্রৰ উপাদানৰ প্রকাশো তেওঁৰ নাট্য সাহিত্যৰ অন্যতম লক্ষণীয় দিশ। সংস্কৃত নাট্যশাস্ত্রৰ কাহিনী নির্মাণ, চৰিত্র সৃষ্টি আদি দিশবোৰত বৰ বিশেষ গুৰুত্ব নিদিলেও ৰসৰ সমাৱেশৰ ক্ষেত্রত তেওঁৰ নাটকত বিশেষ গুৰুত্ব লক্ষ্য কৰা যায়। 'নাট্যশাস্ত্র'ৰ প্রণেতা ভৰত মুনিয়ে আঠটা ৰসৰ কথা স্বীকাৰ কৰিছে যদিও পৰৱর্তী ৰুদ্রট, ভট্টোদ্ভট, আনন্দবর্ধন, অভিনৱগুপ্ত আদি আলংকাৰিকে শান্ত ৰস নামৰ নৱম ৰস এবিধৰ কথাও উল্লেখ কৰিছে। বেজবৰুৱাৰ অন্যান্য নাটকৰ দৰে 'পাঁচনি' নাটখনতো ৰসৰ সমাৱেশ লক্ষ্য কৰা যায়। এই সম্পর্কত পৰৱর্তী অধ্যয়নত বিশদভাৱে আলোচনা দাঙি ধৰাৰ প্রয়াস কৰা হ'ব।

বীজ শব্দ ঃ পাঁচনি, ধেমেলীয়া নাটক, প্রহসন, ৰস, হাস, হাস্য, ভয়, ভয়ানক, প্রাচ্যতত্ত্ব আদি।

০.০ অৱতৰণিকা

০.১ বিষয়ৰ পৰিচয় ঃ

সাহিত্য পাঠৰ অন্তর্নিহিত উপাদানসমূহৰ ভিতৰত ৰস আটাইতকৈ গুৰুত্বপূর্ণ উপাদান। দৰাচলতে সাহিত্য পাঠ একোটাত পাঠক বা দর্শকক যিটো উপাদানে অনির্বচনীয় স্বাদ বা তৃপ্তি দান কৰে সেয়াই হৈছে ৰস। ৰসহীন সাহিত্যৰ আদৰ নাই। এই ৰসৰ সৃষ্টি আৰু স্বৰূপ সম্পর্কত ভাৰতীয় আলংকাৰিকসকলে বিভিন্ন গ্রন্থত আলোকপাত কৰিছে। ভৰত মুনিৰ পৰা আৰম্ভ কৰি বিশ্বনাথ কবিৰাজ, ৰুদ্রট, ভট্টোদ্ভট, আনন্দবর্ধন, অভিনৱগুপ্ত আদিয়ে তেওঁলোকৰ দ্বাৰা ৰচিত অলংকাৰ শাস্ত্রসমূহত ৰস সম্পর্কীয় বিশেষ দৃষ্টিকোণ

অন্তর্ভুক্ত কৰিছে। ভৰত মুনিয়ে আঠবিধ ৰসৰ উল্লেখ কৰাৰ বিপৰীতে বাকী আংলকাৰিক কেইগৰাকীয়ে শান্ত ৰসবিধক নৱম ৰস ৰূপে সংযোজন কৰিছে। অসমীয়া নাট্য সাহিত্যৰ সূত্রপাত ঘটে শ্রীমন্ত শংকৰদেৱৰ হাতত। সংস্কৃত নাট্যশাস্ত্র আৰু অসম তথা ভাৰতবর্ষৰ বিভিন্ন লোক-নাট্যানুষ্ঠানৰ পৰা সমল লৈ শংকৰদেৱে প্রথম অসমীয়া নাট ৰচনাৰ নিদর্শন দাঙি ধৰে। সমান্তৰালভাৱে মাধৱদেৱেও নাট ৰচনাৰে অসমীয়া নাট্য সাহিত্যক সমৃদ্ধ কৰে। পৰৱর্তী উত্তৰ-শংকৰী যুগতো এচাম নাট্যকাৰে শংকৰ-মাধৱৰ নাটৰ অনুকৰণ-অনুসৰণেৰে নাট ৰচনাত প্রবৃত্ত হয় আৰু অসমীয়া নাট্য সাহিত্যৰ বিকাশত বিশেষ অৰিহণা আগবঢ়ায়। এই সময়খিনিৰ বেছিভাগ নাটকতে সংস্কৃত নাট্যতত্ত্বৰ প্রায় স্পষ্ট অনুৰণন দেখিবলৈ পোৱা যায়। পৰৱর্তী সময়ত ১৮৫৭ চনত গুণাভিৰাম বৰুৱাই প্রথমখন আধুনিক অসমীয়া নাটক *ৰাম-নৱমী* ৰচনা কৰে। ইয়াৰ পাছত ক্রমাৎ অসমীয়া লেখক-সাহিত্যিকসকলে আধুনিক অসমীয়া সাহিত্যৰ অন্যান্য বিধাসমূহৰ লগতে নাট ৰচনাতো বিশেষ মনোযোগ দিয়ে। এই সময়ৰ বেছিভাগ নাটকেই আছিল মূলতঃ পাশ্চাত্য নাট্যসাহিত্য অধ্যয়নৰ ফল। আধুনিক নাট্যকর্ম হিচাপে এইখিনি সময়ৰ পৰাই অসমীয়া নাটকলৈ পাশ্চাত্যৰ বিভিন্ন নাট্যকৌশল, চৰিত্র নির্মাণৰ অভিনৱ পদ্ধতি, ঘটনা উপস্থাপনৰ সুকীয়া পদ্ধতি আদিৰ আগমন ঘটিল যদিও সেই নাট্যকর্ম ভাৰতীয় শিপাৰ পৰা একেবাৰে বিচ্ছিন্ন নাছিল। অর্থাৎ ক'ব পাৰি পাশ্চাত্যৰ নতুন আৰু সুকীয়া কৌশলেৰে নাট্যকাৰসকলে অসমীয়া তথা ভাৰতীয় সমাজ জীৱনৰ প্রেক্ষপটকে তুলি ধৰিছিল। সামগ্রিকভাৱে ভাৰতীয় জীৱন দর্শনৰ গভীৰ প্রকাশো নাটসমূহত লক্ষ্য কৰা গৈছিল। তাৰ মাজত সংস্কৃত নাট্যশাস্ত্রৰ কিছু উপাদানৰ প্রকাশেও সেই নাট্যকর্মক স্বকীয়তা প্রদান কৰিছিল। আমাৰ আলোচনাৰ মূল বিষয় লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ *পাঁচনি* নাটকত বিভিন্ন ৰসৰ সমাৱেশ কিদৰে ঘটিছে সেই সম্পর্কত আলোচনা আগবঢ়োৱা। প্রস্তাৱিত আলোচনাত সেই সম্পর্কত বিশদভাৱে বিচাৰ-বিশ্লেষণ কৰাৰ চেষ্টা কৰা হৈছে।

০.২ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য আৰু পদ্ধতি ঃ

প্রস্তাৱিত বিষয়টোৰ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্যসমূহ হ'ল—

(১) ৰসৰ সংজ্ঞা, স্বৰূপ আৰু প্রকাৰ সম্পর্কত বিচাৰ-বিশ্লেষণ কৰা।

(২) বেজবৰুৱাৰ *পাঁচনি* নাটকৰ অধ্যয়ন।

(৩) বেজবৰুৱাৰ *পাঁচনি* নাটকত সন্নিৱিষ্ট হাস্য ৰসৰ বিচাৰ কৰা।

(৪) বেজবৰুৱাৰ *পাঁচনি* নাটকত সন্নিৱিষ্ট ভয়ানক ৰসৰ বিচাৰ কৰা।

প্রস্তাৱিত গৱেষণা পত্রখন প্রস্তুত কৰোঁতে মূলতঃ বিশ্লেষণাত্মক আৰু ব্যাখ্যামূলক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

০.৩ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ অন্যান্য নাট্যকর্মৰ দৰে *পাঁচনি* নাটকতো ৰসৰ সমাৱেশ লক্ষ্য কৰা যায়। এই নাটখনত মূলতঃ হাস্য ৰস আৰু ভয়ানক প্রকাশ আছে। আমাৰ প্রস্তাৱিত আলোচনাৰ পৰিসৰে *পাঁচনি* নাটকখনত সন্নিৱিষ্ট ৰসৰ বিচাৰ-বিশ্লেষণক সামৰি ল'ব। ইয়াৰ উপৰিও এই অধ্যয়নে ৰসৰ সংজ্ঞা, স্বৰূপ আৰু ইয়াৰ প্রকাৰ সম্পর্কে এটি সংক্ষিপ্ত আলোচনা আৰু বেজবৰুৱাৰ *পাঁচনি* নাটকখনৰ বিষয়বস্তু সম্পর্কত এটি চমু পর্যালোচনাক সামৰি ল'ব।

১.০ ৰসৰ সংজ্ঞা, স্বৰূপ আৰু প্রকাৰ ঃ এক চমু অৱলোকন

সাহিত্য পঠনৰ মূল উদ্দেশ্যই হ'ল সেই সাহিত্যত অন্তর্নিহিত হৈ থকা ৰস আস্বাদনৰ যোগেদি এক বিশুদ্ধ আনন্দ লাভ কৰা। সঁচা অর্থত ৰসৰ অবিহনে কোনো লিখিত কর্ম কেতিয়াও সাহিত্য অভিধাৰ আওঁতালৈ আহিব নোৱাৰে। পাঠক বা দর্শক বা শ্রোতাই সাহিত্য পাঠ একোটাৰ মাজত অনুভৱ কৰা ৰসনো কি— এই সম্পর্কত প্রাচ্যতত্ত্বৰ বিদ্বানসকলে বিভিন্নধৰণৰ মন্তব্য দাঙি ধৰিছে। প্রসিদ্ধ আলংকাৰিক ভৰত মুনিৰ মতে— 'ন হি ৰসাদৃতে কশ্চিদর্থঃ প্রৱর্ততে।' (নাট্যশাস্ত্র, ৬) অর্থাৎ ৰসৰ অবিহনে বাক্যৰ কোনোধৰণৰ অর্থৰ প্রকাশ নহয়। পাঠক, দর্শক বা শ্রোতাৰ অন্তৰত এই ৰসৰ অনুভূতি কিদৰে জাগি উঠে সেই সম্পর্কত ভৰত মুনিয়ে আকৌ কৈছে—

'ৰিভাৱানুভাৱব্যভিচাৰিসংয়োগাদ্ ৰসঃ নিষ্পত্তিঃ' (নাট্যশাস্ত্র, ৬)

অর্থাৎ বিভাব, অনুভাব আৰু ব্যভিচাৰী ভাবৰ সংযোগত ৰসৰ নিষ্পত্তি হয়। এই সংযোগ কাৰ লগত ঘটে সেই সম্পর্কতো পৰৱর্তী শ্লোক এটা ভৰত মুনিয়ে কৈছে—

'ভাৱাভিনয়সম্বন্ধান্ স্থায়িভাৱাংস্তথা বুধাঃ।
আস্বাদয়ন্তি মনসা তস্মান্নাট্যৰসাঃ স্মৃতাঃ।।' (নাট্যশাস্ত্র,....)

অর্থাৎ 'ভাব' আৰু 'অভিনয়'ৰ লগত সম্বন্ধ থকা স্থায়ীভাবসমূহক যে জ্ঞানীসকলে মনেৰে আস্বাদিত কৰে তাকে নাট্যৰস বোলা হয়। (অনু. শর্মা, মুকুন্দ মাধৱ, ৩৫) ৰস

সম্পর্কে আলোচনা কৰাৰ আগতে এই ভিন্ন ভাবকেইটাৰ বিষয়ে এক সাধাৰণ পৰিচয় থকাটো ভাল। সেই সম্পর্কে তলত চমুকৈ উল্লেখ কৰা হ'ল—

(ক) স্থায়ী ভাব ঃ যি ভাবে মনক প্ৰবলৰূপে অভিভূত কৰে, তাকে স্থায়ী ভাব বোলে। (শৰ্মা, সোণাপতি দেৱ, ৭) অৰ্থাৎ আমাৰ ভিতৰত থকা ভিন্ন চিত্তবৃত্তিবিলাককে স্থায়ী ভাব বোলা হয়। স্থায়ী ভাবৰ সংখ্যা নটা— ৰতি, হাস, শোক, ক্ৰোধ, উৎসাহ, ভয়, জুগুপ্সা, বিস্ময় আৰু শম বা নিৰ্বেদ। উক্ত স্থায়ী ভাবসমূহৰ পৰাই নৱৰসৰ উৎপত্তি হয়।

(খ) বিভাব ঃ আমাৰ অন্তৰত সুপ্ত হৈ থকা যিবিলাক কাৰণৰ নিমিত্তে স্থায়ীভাবসমূহৰ উৎপত্তি হয় তাকে বিভাব বোলে। সাহিত্য দৰ্পণৰ ভাষাত বিভাববিলাক হ'ল ৰতি আদি স্থায়ীভাবৰ উদ্বোধক বা জগাই তোলোতা। (শৰ্মা, মুকুন্দ মাধৱ, ৩৬) বিভাব দুবিধ— আলম্বন আৰু উদ্দীপন বিভাব। এই দুই বিভাবৰ চমু পৰিচয় তলত দাঙি ধৰা হ'ল—

(i) **আলম্বন বিভাব ঃ** যাক আলম্বন বা কেন্দ্ৰ কৰি ৰতি, হাস, শোক আদি স্থায়ী ভাববোৰৰ উদ্ৰেক ঘটে আৰু অনুভৱযোগ্য ৰূপত প্ৰকাশ পায়, তাকেই আলম্বন বিভাব বোলা হয়। উদাহৰণস্বৰূপে— কোনো নাটক বা কাব্যত যেতিয়া ৰামৰ প্ৰতি সীতাৰ প্ৰেমভাব জাগি উঠিব তেতিয়া সীতাৰ হৃদয়ত থকা ৰামবিষয়ক ৰতি ভাবৰ কাৰণে ৰাম আলম্বন বিভাব।

(ii) **উদ্দীপন বিভাব ঃ** যিবোৰ পাৰিপাৰ্শ্বিক অৱস্থা বা পৰিৱেশে হৃদয়ত স্থিত স্থায়ীভাব একোটাক উদ্দীপিত কৰি তোলে সিয়েই স্থায়ীভাবৰ উদ্দীপন বিভাব। উদাহৰণস্বৰূপে— বসন্তকাল, সন্ধ্যা সময়, নিৰ্জনতা, নিজৰাৰ জিৰ্-জিৰ্ শব্দ, ঝিলিৰ মাত, মেঘৰ কোলহল আদিয়ে নায়ক বা নায়িকাৰ অন্তৰত জাগি উঠা ৰতিভাবক অধিক গভীৰ বা পৰিপুষ্ট কৰি তুলিব পাৰে।

(গ) অনুভাব ঃ কাব্য বা নাটত যেতিয়া কোনো নায়ক বা নায়িকাৰ অন্তৰত স্থায়ীভাব এটা জাগ্ৰত হয়, তেতিয়া সেই নায়ক-নায়িকাসকলৰ শাৰীৰিক বিভিন্ন ভংগীমাত সেই স্থায়ী ভাবৰ প্ৰকাশ ঘটে। যেনে— ভয়ত শেঁতা পৰা, খঙত দাঁত চোবোৱা আদি। এই দুয়োটা লক্ষণ ক্ৰমে ভয়ানক ৰস আৰু ৰৌদ্ৰ ৰসৰ অনুভাব।

(ঘ) ব্যভিচাৰী বা সঞ্চাৰী ভাব ঃ কোনো এক সাহিত্য কৰ্ম বা নাটকত যেতিয়া স্থায়ী ভাবৰ আনুষংগিকৰূপে অন্য কিছুমান চিত্তবৃত্তিৰ প্ৰকাশ ঘটে সেইবোৰকেই ব্যভিচাৰী ভাব বা সঞ্চাৰী

ভাব বোলা হয়। স্থায়ীভাবৰ তুলনাত ব্যভিচাৰী ভাববোৰ কম সময় স্থায়ী। ইহঁত যেন ঘনাই অহা-যোৱা কৰে, ঘনাই মাৰ যায়। সেইবাবে এইবোৰক সঞ্চাৰী ভাবো বোলা হয়। জড়তা, গ্লানি, লজ্জা, হৰ্ষ আদি ভাববোৰ সঞ্চাৰী ভাব। সঞ্চাৰী ভাবৰ মুঠ সংখ্যা তেত্ৰিশটা।

ইতিমধ্যে ওপৰত ভৰত মুনিৰ ৰস সম্পৰ্কীয় ধাৰণাক চমুকৈ আলোচনা কৰা হৈছেই। ৰস সম্পৰ্কে ভৰত মুনি, ভট্টলোল্লট, শ্ৰীশঙ্কুৰ, ভট্টনায়ক, মম্মটভট্ট, অভিনৱগুপ্ত আদি আলংকাৰিকসকলে তেওঁলোকৰ নিজা নিজা দৃষ্টিকোণ ব্যক্ত কৰিছে। আমি এই আলংকাৰিকসকলৰ বাদ-বিবাদলৈ নগৈ এই আলংকাৰিকসকলৰ মতৰ আধাৰতে এটা কথা ধৰি ল'ব পাৰোঁ যে— ৰস হৈছে কোনো এক সাহিত্য কৰ্মত নিহিত হৈ থকা এনে এক উপাদান, যিয়ে সহৃদয় পাঠক বা দৰ্শকক এক আন্তৰিক তৃপ্তি প্ৰদান কৰে। এই ৰস উপলব্ধিৰ বাবে পাঠক বা দৰ্শকগৰাকীৰ মনৰ সূক্ষ্মতা বা সংবেদনশীলতা থাকিব লাগিব। সাহিত্যৰ ৰস ন-প্ৰকাৰৰ; সেইসমূহ হ'ল— আদি বা শৃঙ্গাৰ, হাস্য, কৰুণ, ৰৌদ্ৰ, বীৰ, বীভৎস, ভয়ানক, অদ্ভুত আৰু শান্ত। এই নৱৰসে সাহিত্যৰ পাঠক বা দৰ্শকৰ অন্তৰত ৰসৰ সঞ্চাৰ কৰি সেই দৰ্শক-পাঠকক আনন্দ প্ৰদান

কৰে আৰু ৰসেই সাহিত্যৰ শ্ৰেষ্ঠত্ব নিৰূপণ কৰে। কোনো এক সাহিত্য বা নাট্যকৰ্মত নৱৰসৰ আটাইকেইটা ৰসৰ সমাৱেশ নঘটিবও পাৰে; কাহিনীৰ প্ৰয়োজনৰ প্ৰতি লক্ষ্য ৰাখিহে নাট্যকাৰ বা কবিয়ে তেওঁলোকৰ সৃষ্ট কলাকৰ্মত ৰস সৃষ্টি কৰাৰ প্ৰয়াস কৰে।

২.০ লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ *পাঁচনি* নাটকৰ বিষয়বস্তু ঃ

আধুনিক অসমীয়া নাট্য সাহিত্যৰ ইতিহাসত লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ এখন ওখ আসন আছে। বেজবৰুৱাই নাটকৰ উপৰিও অসমীয়া সাহিত্যৰ অন্যান্য শাখাবোৰতো সাহিত্য ৰচনা কৰি থৈ গৈছে। বেজবৰুৱাকে আদি কৰি সেই সময়ৰ আন আন উৎসাহী ডেকাসকলে কলিকতাত উচ্চশিক্ষা গ্ৰহণ কৰিছিল। কলিকতাৰ শৈক্ষিক আৰু বৌদ্ধিক পৰিৱেশটোৰ সুবাদতে সেই সময়ৰ অসমৰ বহুকেইজন উচ্চশিক্ষিত ডেকাই অসমীয়া ভাষা-সাহিত্যৰ পুৰণি ৰূপটোক এক নতুন দৃষ্টিৰে চাব খুজিছিল। তাৰেই ফলশ্ৰুতিত অন্যান্য সাহিত্যৰ লগতে তেওঁলোকৰ কেইগৰাকীমানে অসমীয়া নাট ৰচনাতো মনোনিৱেশ কৰিছিল। সেইসকলৰ ভিতৰত গুণাভিৰাম বৰুৱা, হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাকে আদি কৰি পদ্মনাথ গোহাঞিবৰুৱা, লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱা আদি গুৰুত্বপূৰ্ণ। তেওঁলোকৰ নাটৰ পটভূমি বা বৰ্ণিত কাহিনী অসম তথা অসমীয়া মানুহৰ সৈতে সম্পৰ্কিত আছিল যদিও নাট ৰচনাৰ ক্ষেত্ৰত তেওঁলোক মূলতঃ ইংৰাজ নাট্যকাৰ শ্বেইক্সপীয়েৰ আৰু সমসাময়িক আধুনিক বাংলা নাট্যকাৰসকলৰ দ্বাৰা প্ৰভাৱিত হৈছিল। সি যি কি নহওক, বেজবৰুৱায়ো কেইবাখনো ধেমেলীয়া আৰু ঐতিহাসিক নাট ৰচনাৰে আধুনিক অসমীয়া নাট্য সাহিত্যৰ আৰম্ভণিৰ ধাৰাটোক সবল ৰূপত প্ৰতিষ্ঠা কৰি থৈ গৈছে।

বেজবৰুৱাই ঐতিহাসিক নাটকেইখনৰ উপৰিও ধেমেলীয়া নাট বা প্ৰহসন ৰচনাৰ ক্ষেত্ৰতো বিশেষ দক্ষতা দেখুৱাই থৈ গৈছে। প্ৰহসনকেইখনৰ ক্ষেত্ৰত বেজবৰুৱাই অসমীয়া গ্ৰাম্য সমাজৰ পৰা কাহিনী সংগ্ৰহ কৰি নিজৰ মৌলিকত্ব আৰু কল্পনাৰে সেই নাট্যকাহিনীক নিৰ্মাণ কৰি উলিয়াইছিল। এইক্ষেত্ৰত হৰিশ্চন্দ্ৰ ভট্টাচাৰ্যৰ মন্তব্য এনেধৰণৰ— 'লক্ষ্মীনাথে লৌকিক সাধুকথাৰ বকৰাণিত ধেমেলীয়া নাটৰ আধাৰ-শিলা স্থাপন কৰিলে।' (*অসমীয়া নাট্য সাহিত্য*, ১৪৯) বেজবৰুৱাই মুঠ চাৰিখন প্ৰহসন ৰচনা কৰি থৈ গৈছে। সেইকেইখন হ'ল— *লিতিকাই* (১৮৮৯), *নোমল* (১৯১৩), *পাঁচনি* (১৯১৩) আৰু *চিকৰপতি-নিকৰপতি* (১৯১৩)।

পাঁচনি নাটকখনৰ মূল বিষয়বস্তুভাগ এনধৰণৰ— নাটকখনৰ মূল চৰিত্ৰ দুটা হৈছে পাঁচনি আৰু তেওঁৰ পত্নী পাঁচনিয়ানী। পাঁচনিৰ সম্পূৰ্ণ নামটো ধৰ্ম্মাই পাঁচনি। পাঁচনি স্বভাৱতেই অতিথিপৰায়ণ আৰু ধৰ্মপৰায়ণ লোক। আনফালে তেওঁৰ পত্নী পাঁচনিয়ানী আকৌ তেওঁৰ সম্পূৰ্ণ বিপৰীত। অৱশ্যে পাঁচনিয়ানীৰ এই স্বভাৱ অৰ্থহীন নহয়; বাস্তৱৰ দাৰিদ্ৰ আৰু সমস্যাই তেওঁক তেনে কৰি গঢ়ি তুলিছে। ধৰ্ম্মাই পাঁচনি এনে এজন লোক, যিয়ে ঘৰখনত অলেখ অভাৱ-অনাটন থকাৰ পাছতো আলহী-অতিথিৰ অবিহনে আহাৰ গ্ৰহণ কৰিব নোৱাৰে। এফালে অভাৱ-অনাটন; আনফালে আলহী-অতিথিৰ আগমন। এক দ্বন্দ্বাত্মক পৰিস্থিতি! ইয়াৰ মাজতে পাঁচনিয়ে পদুলিত অতিথিৰ বাবে অপেক্ষা কৰে; সন্ধিয়াৰ ভাতসাঁজৰ বাবে ঘৰলৈ আলহী চপাই আনে। বাস্তৱৰ নিৰ্মমতাৰ সৈতে পৰিচিত পাঁচনিয়ানীয়ে বিভিন্ন কূট-কৌশলেৰে সেই অতিথিক খেদি পঠিয়ায়। একেধৰণৰ ঘটনাৰে পুনৰাবৃত্তি নাটখনৰ শেষলৈকে অব্যাহত থাকে। কেৱল অতিথি আৰু পাঁচনিয়ানীৰ অতিথিক কূট-কৌশলেৰে খেদি পঠিওৱাৰ পদ্ধতিবোৰ সুকীয়া হয়। গোটেই নাটখনৰ মূল বিষয়বস্তু এয়াই। এই কাহিনীটোৰ যোগেদি নাট্যকাৰে নাটখনত হাস্যৰসৰ প্ৰকাশ ঘটাবলৈ চেষ্টা কৰিছে। ইয়াৰ সমান্তৰালভাৱে নাটখনত ভয়ানক ৰসৰো প্ৰকাশ নাটখনত দেখা যায়।

৩.০ লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ *পাঁচনি* নাটকত সন্নিৱিষ্ট ৰসৰ বিচাৰ ঃ

৩.১ লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ *পাঁচনি* নাটকত সন্নিবিষ্ট হাস্য ৰসৰ বিচাৰ ঃ

কোনো কাব্য বা নাটত বৰ্ণিত বিকৃত আকাৰ, অসামঞ্জস্য কথা-বতৰা, আচৰণ, চলন-ফুৰণ আদিয়ে যেতিয়া দৰ্শক-পাঠকৰ মনৰ স্থায়ীভাব 'হাস'ক জগাই তোলে আৰু দৰ্শক-পাঠকৰ হৃদয়ত এক বিশুদ্ধ আনন্দৰ প্ৰকাশ ঘটাই, তেতিয়া তাকেই হাস্যৰস বোলে। বেজবৰুৱাৰ *পাঁচনি* নাটকখন এখন বিশুদ্ধ প্ৰহসন। ইয়াত বিদ্ৰূপৰ স্থান নাই। অসমীয়া লোকজীৱনৰ পৰা সংগ্ৰহ কৰা কাহিনীটোত নিজস্বতা আৰু কল্পনাৰ সমাহাৰ ঘটাই বেজবৰুৱাই এক বিশুদ্ধ প্ৰহসনৰ শাৰীলৈ লৈ গৈছে। ইয়াত বেজবৰুৱাৰ উদ্দেশ্য সমাজ-সচেতনতা নহয়, অসমীয়া পাঠক-দৰ্শকক বিমল হাস্যৰস যোগান ধৰাহে তেওঁৰ উদ্দেশ্য যেন লাগে। বেজবৰুৱা যিহেতু অসমীয়া হাস্য-ব্যঙ্গ সাহিত্যৰো এগৰাকী শক্তিশালী লেখক;

গতিকে বহু সময়ত তেওঁ ৰসিক চৰিত্রৰ নির্মাণ কৰাতকৈ চৰিত্রৰ মূর্খামি, নির্বুদ্ধিতা আৰু প্রতিকূল অৱস্থাত ককৰকাই ফুৰা মানুহৰ ছবি হাস্যোদ্দীপকভাৱে দাঙি ধৰিছে। এই আটাইকেইটা বৈশিষ্ট্যৰ প্রকাশ তেওঁৰ *পাঁচনি* নাটখনতো স্পষ্ট। *পাঁচনি* নাটকত পাঁচনি আৰু তেওঁৰ পত্নী পাঁচনিয়ানী চৰিত্র দুটা আৰু তেওঁলোকৰ ঘৰলৈ নিশা কটাবলৈ অহা অতিথিকেইজনৰ ক্রিয়া-কলাপ, কথা-বতৰা আৰু আচৰণৰ যোগেদি নাট্যকাৰে হাস্যৰসৰ সৃষ্টি কৰিছে। নাটখনিৰ আৰম্ভণিতে ধর্ম্মাই পাঁচনিক আলহী-অতিথিৰ বাবে ঘৰৰ পদূলি মুৰত অপেক্ষা কৰা আমি দেখিছোঁ। হাস্যৰস সৃষ্টিৰ এটা গুৰুত্বপূর্ণ কৌশল হৈছে— বিপৰীতমুখী দৃশ্য প্রকাশৰ যোগেদি হাস্যৰসৰ সৃষ্টি কৰা। *পাঁচনি* নাটখনতো এই কথাটো স্পষ্ট হৈ আছে। এফালে ঘৰখনত এশ-এবুৰি সমস্যা; এসাঁজ খালে, আনসাঁজলৈ চিন্তা! তাৰ মাজতে আকৌ আলহী-অতিথি অবিহনে পাঁচনিৰ পেটলৈ আহাৰ নাযায়! এনেধৰণৰ পৰস্পৰ বিৰোধমূলক দৃশ্যৰ যোগেদি নাটখনত হাস্যৰসৰ সৃষ্টি কৰিবলৈ চেষ্টা কৰা হৈছে।

নাটখনৰ প্রথম দর্শনত পাঁচনিয়ে আলহী-অতিথিৰ বাবে পদূলিত অপেক্ষা কৰি আছে। তেনেতে এজন কানীয়াৰ আগমন ঘটিছে। পাঁচনিয়ে হাততে সৰগ ঢুকি পোৱাৰ দৰে কানীয়াজনকে তেওঁৰ ঘৰত নিশাৰ আহাৰ গ্রহণ কৰি নিশাটো তাতেই কটাবলৈ অনুৰোধ কৰিছে। কিন্তু কানীয়াজনে নিচাৰ প্রকোপত পাঁচনিক ডকাইত বুলি ভ্রম কৰিছে আৰু আৰু তেওঁক এৰি দিবলৈ অনুৰোধ কৰিছে। 'মাৰিলে ঔ, মাৰিলে ঐ, মাৰিলে! ৰাজআলিত দিনদুপৰত ডকাইত ঔ! ডকাইত!' (*বেজবৰুৱা গ্রন্থাৱলী*, ১০৩৪)— কানীয়াজনৰ মুখত প্রয়োগ কৰা এনে সংলাপে হাস্যৰস সৃষ্টিত অৰিহণা যোগাইছে।

কানীয়াজনৰ প্রস্থানৰ পাছত পাঁচনি আলহী-অতিথিৰ আশাত পুনৰ বহুপৰ অপেক্ষা কৰি আশাহত হৈছে আৰু ঘৰলৈ উভতি আহিছে। এনেতে তেওঁলোকৰ ঘৰলৈ দুগৰাকী আলহীৰ আগমন ঘটে। তেওঁলোকে নিশাটোৰ বাবে পাঁচনিৰ ঘৰতে আশ্রয় বিচাৰে। হঠাৎ আলহীৰ আগমনে পাঁচনিক আনন্দিত কৰি তুলিছে। আলহীক শুশ্রূষা কৰিবৰ বাবে পাঁচনিয়ে পত্নীক অনুৰোধ জনাইছে। এসাঁজ খাই এসাঁজৰ চিন্তা কৰিবলগীয়া হোৱা পত্নী কিন্তু পাঁচনিৰ সম্পূর্ণ বিপৰীত। দাৰিদ্রৰে ভৰা ঘৰখনত আলহীক শুশ্রূষা কৰাতকৈ তেওঁ আলহীক কূট-কৌশলেৰে খেদি পঠিওৱাটোহে তেওঁৰ অভিপ্রেত উদ্দেশ্য। সেই অনুসৰি পাঁচনিয়ানীয়ে কৌশলেৰে স্বামীক হাটলৈ পঠিয়াই স্বামীয়ে প্রস্তুত কৰা ঢেকীৰ ঠোৰাটো দেখুৱাই অতিথি দুজনৰ মনত ভীতিৰ সঞ্চাৰ কৰিছে। সেই ঢেকীৰ ঠোৰাটোৰে তেওঁৰ স্বামীয়ে আলহী-অতিথিক নিশা প্রহাৰ কৰে বুলি তেওঁলোকক ভয় খুৱাইছে আৰু পাঁচনিয়ানীৰ কথাত আলহী দুগৰাকী পলাই-পত্রং দিছে। ইফালে পাঁচনি উভতি অহাত পাঁচনিয়ানীয়ে তেওঁক এইবুলি কয় যে আলহী দুগৰাকীয়ে তেওঁ নতুনকৈ সাজি থোৱা ঢেকীৰ ঠোৰাটো বিচাৰিছিল আৰু তেওঁ স্বামী আহিলেহে তেওঁক সুধি সেইটো দিব পৰা যাব বুলি কয়; তেওঁৰ কথাত দুয়োজন আলহী হঠাৎ খং কৰি গুচি যায়। ইয়াৰ পাছতে পাঁচনিয়ে পত্নীক ককর্থনা কৰি ঢেকীৰ ঠোৰাটো লৈ অতিথি দুজনক লক্ষ্য কৰি দৌৰ দিয়ে। এই গোটেই ঘটনাটোৰে পাঠক-দর্শকৰ মনত হাস্যৰসৰ উদ্রেক কৰি এক বিশুদ্ধ আনন্দ প্রদান কৰে। ইয়াত পাঁচনি-পাঁচনিয়ানী, কানীয়া, অতিথি আদি চৰিত্রকেইটাৰ কথা-বতৰা, হাস্যোদ্দীপক পৰিস্থিতি আদি হৈছে আলম্বন বিভাব। আনহাতে, ঢেকীৰ ঠোৰা, নিশাৰ নির্জনতা আদি উদ্দীপন বিভাব। আকৌ দুয়োগৰাকী অতিথিৰ ভয়ত শেঁতা পৰা অৱস্থা, ঠক্ ঠক্ কৰে কঁপা অৱস্থা আদি হৈছে অনুভাব। এই আটাইকেইটা ভাবে পাঠক-দর্শকৰ মনত স্থায়ী ভাবৰ উদ্রেক হোৱাত সহায় কৰাৰ লগতে হাস্যৰসৰ সৃষ্টিতো অৰিহণা যোগাইছে।

নাটখনৰ ষষ্ঠ দর্শনটোত তদনুৰূপ আন এটা ঘটনা দাঙি ধৰা হৈছে। পাঁচনিৰ ঘৰলৈ আন এজন আলহীৰ আগমন ঘটিছে। পাঁচনিৰ মনত আনন্দৰ সঞ্চাৰ, পাঁচনিয়ানীৰ মনত খঙৰ টো। পৰৱর্তী ঘটনাটোৰ দৰেই পাঁচনিয়ে পত্নীক আলহীৰ সেৱা-শুশ্রূষাৰ দায়িত্ব অর্পণ কৰি হাটলৈ যায়। তেনে সময়তে পাঁচনিয়ানীয়ে ঘৰৰ মেকুৰী পোৱালিটোক পানী ঢালি গা ধুৱায়। সেই দৃশ্য দেখি আলহীৰ প্রশ্ন— 'আই! মেকুৰী পোৱালিটোৰ গাত গধূলি বেলিকা পানী ঢালিছেনো কেলৈ? জাৰত সি ঠেৰেঙা লাগিব।' (*বেজবৰুৱা গ্রন্থাৱলী*, ১০৩৯)। তেওঁৰ প্রশ্নৰ উত্তৰ দি পাঁচনিয়ানীয়ে কয়— 'লাগিব নোৱাৰিছে? এতিয়াই তাক মৈদাত কুটি বাছি পেলাম।' (*বেজবৰুৱা গ্রন্থাৱলী*, ১০৩৯) কুটি-বাছি সেই মেকুৰীটোক কি কৰিব বুলি আলহীজনে সোধাত পাঁচনিয়ানীয়ে কয় যে কুটি-বাছি তাক ৰান্ধিবলৈ নিব। এই কথা শুনি আলহীজন ঘৃণা আৰু বিস্ময়ত তাৰ পৰা পলায়ন কৰে। এই ঘটনাটোৰ যোগেদি হাস্যৰসৰ প্রকাশ ঘটোৱাৰ ক্ষেত্রত নাট্যকাৰে বিশেষ দক্ষতাৰ পৰিচয় দিছে। উক্ত ঘটনাটোত হাস্যৰস সৃষ্টিৰ ক্ষেত্রত

পাঁচনিয়ানী আৰু অতিথিৰ হাস্যোদ্দীপক কথোপকথন আৰু আচৰণখিনি হৈছে আলম্বন বিভাব। আনহাতে, মেকুৰী পোৱালিটো হৈছে উদ্দীপন বিভাব। অতিথিজনৰ ঘৃণা আৰু বিস্ময় ভাব হৈছে সঞ্চাৰী ভাব। এই আটাইকেইটা ভাবে হাস্য ৰসৰ প্ৰকাশত সহায় কৰিছে।

নাটখনত হাস্যোদ্দীপক ঘটনাৰ উপস্থাপন আৰু সংলাপৰ উপৰিও শ্লোকৰ সুৰত নিৰ্মাণ কৰা নাইবা শ্লোকৰ অনুসৰণেৰে ৰচিত পদবোৰেও হাস্যৰস সৃষ্টিত অৰিহণা যোগাইছে। তলত তেনেধৰণৰ কেইটামান পংক্তি দাঙি ধৰা হ'ল—

'যত দেখা ভার্যা-পুত্র সবে অকাৰণ।
চাই মাত্র তাকে কালে ধৰে যেতিক্ষণ।।
বিষয়ৰ আশা এক তিলে কৰি চুৰ।
যমৰ কিঙ্কৰে ধৰি নিব যমপুৰ।।
যমৰ মূৰ্ত্তিক দেখি হৰাইব চেতনা।
দুৰ্ঘোৰ নৰকে পেলাই ভুঞ্জাইব যাতনা।।'

(*বেজবৰুৱা গ্ৰন্থাৱলী*, ১০৩৭)

'কুকুৰ চিৰ্কাল গাধৰো আত্মা ৰাম।
জানি জানি সকলোকে কৰিব পৰ্ণাম।।'

(*বেজবৰুৱা গ্ৰন্থাৱলী*, ১০৩৭)

প্ৰদত্ত আলোচনাৰ যোগেদি দেখা যায় যে বেজবৰুৱাই *পাঁচনি* নাটকখনৰ যোগেদি নিৰ্মল হাস্যৰস সৃষ্টিৰ ক্ষেত্ৰত বিশেষ সফলতা লাভ কৰিছে। অৱশ্যে বেজবৰুৱাই নাটখনৰ পঠনযোগ্যতাৰ দিশটোত অধিক গুৰুত্ব দিয়াৰ বাবে পৰিৱেশন সম্পৰ্কীয় প্ৰয়োজনীয় দিশবোৰৰ ক্ষেত্ৰত বিশেষ গুৰুত্ব দিয়া পৰিলক্ষিত নহ'ল। মঞ্চ সম্পৰ্কীয় দিশবোৰ বাদ দিলেও পঠনৰ ফালৰ পৰাও নাটখনৰ বিশেষ গুৰুত্ব আছে। নাটকক বিশুদ্ধ সাহিত্য হিচাপেও যে পাঠ কৰিব পাৰি, বেজবৰুৱাৰ ধেমেলীয়া নাটকেইখনেই তাৰ প্ৰকৃষ্ট উদাহৰণ।

৩.২ লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ *পাঁচনি* নাটকত সন্নিবিষ্ট ভয়ানক ৰসৰ বিচাৰ ঃ

ৰস সম্পৰ্কে ভাৰতীয় আলংকাৰিকসকলৰ মাজতেই বিভিন্নধৰণৰ বিতৰ্ক লক্ষ্য কৰা যায়। কোনোৱে যদি ৰস সহৃদয় দৰ্শকৰ উপলব্ধিৰ বিষয় বুলি ভাবে, আন কোনোৱে আকৌ ৰসটো নায়কৰ মনৰ বস্তু বুলি ভাবে। (শৰ্মা, মুকুন্দ মাধৱ, ৩৯) সি যি কি নহওক, বেজবৰুৱাৰ *পাঁচনি* নাটকত প্ৰকাশিত ভয়ানক ৰস সম্পৰ্কে আলোচনা কৰাৰ পূৰ্বতে ভয়ানক ৰস সম্পৰ্কীয় ধাৰণাখিনি স্পষ্ট কৰি লোৱাতো ভাল। ভয়ানক ৰস সম্পৰ্কত *সাহিত্য-দৰ্পণত* কোৱা কথাখিনি তলত উদ্ধৃত কৰা হ'ল—

ভয়ানক ৰসৰ স্থায়ী ভাৱ ভয়, অধিদেৱতা কাল আৰু ৰৱণ ক'লা। ইয়াৰ আশ্ৰয় স্ত্রী আৰু নীচপ্ৰকৃতিৰ লোক। যাৰ্লে ভয় হয়, তেঁৱেই এই ৰসৰ আলম্বন বিভাৱ। বিৱৰ্ণতা, থোকাথুকি মাতেৰে কথা কোৱা, নিঠৰ হৈ থকা, ঘাম ওলোৱা, নোম শিঞৰি উঠা, কঁপনি, ইফালে-সিফালে চোৱা আদিয়েই ভয়ানক ৰসৰ অনুভাৱ। জুগুপ্সা, আবেগ, সম্মোহ, ত্রাস, গ্লানি, দীনতা, শঙ্কা, অপস্মাৰ, জড়তা, মৃত্যু আদিয়েই ইয়াৰ ব্যভিচাৰী (সঞ্চাৰী) ভাৱ। ২২৫ (শাস্ত্রী, বিশ্বনাৰায়ণ, ১০৬)

বেজবৰুৱাৰ *পাঁচনি* নাটকখনত প্ৰকাশ পোৱা ৰস সম্পৰ্কত বিচাৰ-বিশ্লেষণ কৰিলে হাস্যৰসৰ লগতে ভয়ানক ৰসৰো প্ৰয়োগ লক্ষ্য কৰা যায়। নাটখনৰ তৃতীয় দৰ্শনত সন্ধিয়াৰ পৰত অতিথিৰ ৰূপত পাঁচনিৰ ঘৰত আহি উপস্থিত হোৱা ব্যক্তি দুগৰাকীৰ মনত ভীতিৰ সঞ্চাৰ কৰি পাঁচনিৰ পত্নীয়ে তেওঁলোকক খেদি পঠিওৱাৰ ছবি আছে। অতিথি দুগৰাকীক উদ্দেশ্য কৰি পাঁচনিয়ে ঢেকীঠোৰাটোৰে খেদি যোৱা দৃশ্যটোৱে দৰ্শক-পাঠকৰ মনত হাঁহিৰ খোৰাক যোগায় যদিও নাটখনৰ অতিথি দুগৰাকীৰ মনত ভীতি-বিহ্বলতাৰহে সৃষ্টি কৰিছে— যিয়ে নাটখনিত ভয়ানক ৰসৰ সমাৱেশ ঘটাইছে বুলি ভাবিব পাৰি। অৱশ্যে নাট্যকাৰে এই নাটখনৰ যোগেদি হাস্যৰসৰ প্ৰকাশতহে অধিক গুৰুত্ব দিয়া পৰিলক্ষিত হয়।

৪.০ সিদ্ধান্ত আৰু উপসংহাৰ ঃ

প্ৰস্তাৱিত আলোচনাত ৰস সম্পৰ্কীয় এক চমু খতিয়ান দাঙি ধৰাৰ লগতে বেজবৰুৱাৰ *পাঁচনি* নাটকখনত প্ৰকাশ পোৱা হাস্য আৰু ভয়ানক ৰস সম্পৰ্কত বিচাৰ-বিশ্লেষণ কৰি দেখা গ'ল যে— পাশ্চাত্য চিন্তা-চৰ্চা আৰু নাট ৰচনাৰ কৌশলৰ দ্বাৰা প্ৰভাৱিত হ'লেও বেজবৰুৱা প্ৰাচ্যতাত্ত্বিক চিন্তাৰ দ্বাৰাও পৰিপুষ্ট আছিল। এফালে শ্বেইক্সপীয়ে�ৰৰ নাটকৰ প্ৰভাৱ, আনফালে অসমীয়া লোকসমাজৰ ছবি, ভাৰতীয় নাট্যতত্ত্বৰ বিভিন্ন দিশৰ প্ৰকাশ তেওঁৰ নাটকৰ গুৰুত্বপূৰ্ণ দিশ। শ্বেইক্সপীয়েৰৰ নাট্যচিন্তাক তেওঁ নাট ৰচনাৰ ক্ষেত্ৰত আৰ্হি হিচাপে গ্ৰহণ কৰিছিল যদিও ভাৰতীয় নাট্যতত্ত্বৰ বিভিন্ন উপাদানৰ প্ৰয়োগ কৰিও তেওঁ তেওঁৰ নাট্যসত্ত্বাক সমৃদ্ধ কৰিছিল।

অৱশ্যে ৰসৰ ক্ষেত্ৰত বিষয়টো কিছু সুকীয়া। ৰস অবহনে কোনো লিখিত কৰ্ম কেতিয়াও সাহিত্যৰ শাৰীলৈ উত্তীৰ্ণ নোৱাৰে। ৰস এক স্বতঃস্ফূৰ্ত প্ৰক্ৰিয়া। ৰস প্ৰয়োগৰ দক্ষতাইহে নাট একোখনৰ সফলতা নিৰ্ণয় কৰে। বেজবৰুৱাই *পাঁচনি*

নাটকখনত সচেতনভাৱেই হাস্য ৰসৰ সৃষ্টি কৰিছে—যিয়ে নাটকখনক অসমীয়া নাট্য সাহিত্যৰ এখন গুৰুত্বপূৰ্ণ বিশুদ্ধ প্ৰহসনৰ পৰ্যায়লৈ লৈ গৈছে। সমান্তৰালভাৱে ভয়ানক ৰসৰ প্ৰকাশো নাটখনত আছে। এই অধ্যয়নে এটা কথা স্পষ্ট কৰে যে প্ৰাচ্যতাত্ত্বিক ভিন্ন উপাদানেৰে পৰিপুষ্ট বেজবৰুৱাৰ নাটকক প্ৰাচ্যতাত্ত্বিক দৃষ্টিকোণৰ আলোকত অধ্যয়ন কৰাৰ যথেষ্ট অৱকাশ আছে। এনেধৰণৰ অধ্যয়নে পৰৱৰ্তী সময়ত বেজবৰুৱা সম্পৰ্কীয় চৰ্চাৰ ক্ষেত্ৰত নতুন তথ্য আৰু চিন্তাৰ সংযোগ ঘটাব বুলি ভাবিব পাৰি। ❑

গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

১. গোস্বামী, ত্ৰৈলোক্য। নন্দনতত্ত্ব ঃ প্ৰাচ্য আৰু পাশ্চাত্য। বাণী প্ৰকাশ প্ৰাইভেট লিমিটেড, গুৱাহাটী। তৃতীয় সংস্কৰণ, ২০০৬।

২. ডেকা, তৰণী; আহমেদ, কামালুদ্দিন। আধুনিক অসমীয়া সাহিত্যৰ ঐতিহ্য আৰু লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱা। প্ৰকাশন বিভাগ, গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়। প্ৰথম প্ৰকাশ, মাৰ্চ, ২০১৪।

৩. ভট্টাচাৰ্য, হৰিশ্চন্দ্ৰ। অসমীয়া নাট্য সাহিত্যৰ জিলিঙনি। লয়াৰ্ছ বুক ষ্টল, পাণবজাৰ, গুৱাহাটী। ৪ৰ্থ প্ৰকাশ, ১৯৯৫।

৪. লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱা (গ্ৰন্থ)। অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, গুৱাহাটী। চতুৰ্থ প্ৰকাশ, ডিচেম্বৰ, ২০০৭।

৫. শৰ্মা, মুকুন্দ মাধৱ। ধ্বনি আৰু ৰসতত্ত্ব। বাণী প্ৰকাশ প্ৰাইভেট লিমিটেড, পাণবজাৰ, গুৱাহাটী। প্ৰকাশ, ২০১৩।

৬. শৰ্মা, সত্যেন্দ্ৰনাথ। অসমীয়া নাট্য-সাহিত্য। সৌমাৰ প্ৰিণ্টিং এণ্ড পাব্লিছিং প্ৰাইভেট লিমিটেডৰ হৈ বিহাবাৰী, গুৱাহাটী। চতুৰ্থ সংস্কৰণ, ১৯৮৩।

৭. শৰ্মা, সোণাপতি দেৱ। অসমীয়া সাহিত্যৰ সাজ। বাণী প্ৰকাশ প্ৰাইভেট লিমিটেড, পাণবজাৰ, গুৱাহাটী। প্ৰকাশ, ২০১৭।

৮. শাস্ত্ৰী, বিশ্বনাৰায়ণ (অনুবাদ আৰু সম্পাদনা)। বিশ্বনাথ কবিৰাজৰ 'সাহিত্য দৰ্পণ'। শৰাইঘাট প্ৰকাশন, গুৱাহাটী-২১। তৃতীয় প্ৰকাশ, ২০১০।

৯. শাস্ত্ৰী, নিত্যানন্দ (অসমীয়া অনুবাদ)। ভৰতৰ নাট্যশাস্ত্ৰ (প্ৰথম খণ্ড)। অসম নাট্য সম্মিলন। প্ৰথম প্ৰকাশ, ৬ অক্টোবৰ, ১৯৯১।

১০. হাজৰিকা, অতুলচন্দ্ৰ (মুখ্য সম্পা.)। বেজবৰুৱা গ্ৰন্থাৱলী (দ্বিতীয় খণ্ড)। সাহিত্য প্ৰকাশ, ট্ৰিবিউন বিল্ডিংছ, গুৱাহাটী। দ্বিতীয় প্ৰকাশ, নৱেম্বৰ, ২০১৪।

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

আহোম যুগৰ অলংকাৰ ঃ এক চমু অৱলোকন

প্ৰণীতা শৰণীয়া
গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
কটন বিশ্ববিদ্যালয়
৭০০২৩৫৮২৫৮
saraniapranita@gamil.com

ড° কাকলি গগৈ
সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
কটন বিশ্ববিদ্যালয়
৮০১১০০০৬৭০

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

আহোমসকলে ত্ৰয়োদশ শতিকাৰ তৃতীয় দশকৰপৰা ঊনবিংশ শতিকাৰ চতুৰ্থ দশকলৈকে নিৰবচ্ছিন্নভাৱে প্ৰায় ছশ বছৰ কাল অসম শাসন কৰিছিল। এই দীঘলীয়া সময়ছোৱাত অসমত অনেক ঘাত-প্ৰতিঘাত, যুদ্ধ-বিগ্ৰহ আদি সংঘটিত হোৱাৰ লগতে সাংস্কৃতিক, সামাজিক, অৰ্থনৈতিক আদি দিশত যথেষ্ট পৰিবৰ্তন সাধন হৈছিল। এই যুগটো অসমীয়া সংস্কৃতিৰ বাবে অতি গুৰুত্বপূৰ্ণ যুগ। এই যুগতেই খণ্ড-বিখণ্ড হৈ থকা ৰাজ্যসমূহ অসম নামৰ ৰাজ্যলৈ পৰিবৰ্তন হ'ল। আহোমসকল হৈছে টাই জাতিৰ এটা ঠাল। তেওঁলোকে নিজৰ ভাষা-সংস্কৃতি, ধৰ্ম, পৰম্পৰা লগত লৈ অসমত প্ৰৱেশ কৰিছিল যদিও কালক্ৰমত এই ভূ-খণ্ডৰ উন্নয়ন তথা সমন্বয়ৰ বাবে নিজস্ব ভাষা সংস্কৃতিৰ পৰিৱৰ্তে অসমীয়া ভাষা-সংস্কৃতিকেই নিজৰ বুলি গ্ৰহণ কৰিছিল।অসমীয়া সমাজ আৰু সংস্কৃতি গঠন আৰু উত্তৰণত আহোমসকলৰ চহকী পৰম্পৰা আৰু সংস্কৃতিৰ অৱদান বিশেষভাৱে মনকৰিবলগীয়া । এই যুগত অসমৰ শিল্প-কলা, ভাস্কৰ্য, যুদ্ধ-বিদ্যা, সাহিত্য আদি সকলো ক্ষেত্ৰত বিকাশ সাধন হৈছিল। এই সময়তে অসমীয়া অলংকাৰ শিল্পই ঠন ধৰি উঠিছিল আৰু এক স্বকীয় ৰূপ পৰিগ্ৰহ কৰিবলৈ সক্ষম হৈছিল। আলোচিত গৱেষণা পত্ৰখনিত আহোম যুগত আ-অলংকাৰ সম্পৰ্কে দাঙি ধৰা হ'ব।

সূচক শব্দঃ আ-অলংকাৰ, আহোম, পৰম্পৰাগত, সোণাৰি।

০.০০ অৱতৰণিকা ঃ

অলংকাৰ হৈছে সৌন্দৰ্যবৰ্ধনৰ এক প্ৰধান আহিলা। ইতিহাসে ঢুকি পোৱা কালৰে পৰা আমি মানুহক সৌন্দৰ্যৰ উপাসক ৰূপত দেখিবলৈ পাইছোঁ গুহাত ছবি আঁকি মনৰ ভাব প্ৰকাশ কৰা আদি কাৰ্যই অন্ততঃ ইয়াকেই প্ৰতিফলিত কৰে। ঠিক তেনেদৰেই যেতিয়া আদিম মানৱ সমাজে চিকাৰ কৰি জীৱন-নিৰ্বাহ কৰিছিল তেতিয়া তেওঁলোকে চিকাৰ কৰা জীৱ-জন্তুৰ হাড়-ছাল, শিং আদি চিকাৰীজনে বিভিন্ন অংগত পৰিধান কৰি নিজৰ বীৰত্ব বা প্ৰতিপত্তি ব্যক্ত কৰিব বিচাৰিছিল। বৰ্তমানেও বহুতো জাতি-জনগোষ্ঠীয়ে জীৱ-জন্তুৰ বিভিন্ন অংগসমূহক অলংকাৰৰূপে ব্যৱহাৰ কৰা দেখিবলৈ পাওঁ। পূৰ্বতে অৱশ্যে অংগসজ্জাৰ বাবে এই উপকৰণসমূহ ব্যৱহাৰ হোৱা নাছিল। চিকাৰীজনে নিজৰ প্ৰতিপত্তি প্ৰদৰ্শন কৰিবলৈহে তাক প্ৰদৰ্শন কৰিছিল। সমাজপাতি বাস কৰিবলৈ লোৱাৰ পৰা পুৰুষসকলেহে চিকাৰলৈ গৈছিল। যাৰ বাবে তেওঁলোকে জীৱ-জন্তুৰ অংগ পৰিধানৰ ক্ষেত্ৰত একচেতিয়া অধিকাৰ স্থাপন কৰিছিল।

পৰৱৰ্তী সময়ত অৱশ্যে অলংকাৰৰ ব্যৱহাৰৰ ক্ষেত্ৰত মহিলাসকলকহে অধিক আগবাঢ়ি যোৱা দেখা গ'ল। আদিম মানুহৰ জীৱ-জন্তুৰ অংগ, ফুল, পাত, পাখি আদিক সৌন্দৰ্যবৰ্দ্ধনৰ ৰূপলৈকে অলংকাৰৰ ইতিহাসে এক দীঘলীয়া বাট অতিক্ৰম কৰিলে।

অলংকাৰৰ ইতিহাসৰ নতুন অধ্যায়ৰ সৃষ্টি হয় ধাতুৰ আৱিষ্কাৰৰ পৰা। সভ্যতাৰ ক্ৰমবিকাশৰ লগে লগে মানৱ সমাজে ব্যৱহাৰ কৰা অলংকাৰতো বিকাশ ঘটিবলৈ ধৰিলে। ধাতুৰ চিকমিকনিয়ে মানুহক যথেষ্ট আকৰ্ষণ কৰিলে। যাৰ বাবে মানুহে ধাতু ব্যৱহাৰৰ নতুন নতুন উপায় উদ্ভাৱন কৰিবলৈ ধৰিলে। লগে লগে ধাতুৰ অলংকাৰসমূহে মানুহক ধনাঢ্যৰূপে সমাজত স্বীকৃতি লাভ কৰিব ধৰিলে। "পৃথিৱীৰ কোনখন দেশত অলংকাৰ আৱিষ্কাৰ হৈছিল এই সম্পৰ্কে সঠিককৈ জনা নাযায় যদিও পূৰ্ণ পৰ্যায়ৰ অলংকাৰ পোনপ্ৰথমে মিছৰত তৈয়াৰ হৈছিল।"[১] মিছৰৰ পিৰামিডসমূহৰ ভিতৰত বহুতো অলংকাৰ পোৱা গৈছে। ইয়াৰোপৰি অতি প্ৰাচীন সভ্যতাৰূপে স্বীকৃত মেচোপটেমিয়াৰ সভ্যতাৰ অলংকাৰ নিৰ্মাণে এক গুৰুত্বপূৰ্ণ স্থান দখল কৰিছিল বুলি জনা যায়। পৰৱৰ্তী সময়ত সকলো দেশতেই অলংকাৰৰ প্ৰচলন সম্পৰ্কে বিভিন্ন পুথিত উল্লেখ পোৱা যায়। ভাৰতবৰ্ষও ইয়াৰ ব্যতিক্ৰম নহয়। ভাৰতবৰ্ষত ইলোৰা আৰু অজন্তাৰ গুহাত উদ্ধাৰ হোৱা মূৰ্ত্তিত খোদিত অলংকাৰ সমূহেই ভাৰতবৰ্ষৰ অলংকাৰৰ প্ৰাচীনতম নিদৰ্শন। অৱশ্যে পুৰণি বিভিন্ন বেদ বা পুথিসমূহতো অলংকাৰৰ উল্লেখ পোৱা যায়।" খ্ৰীষ্টপূৰ্ব ২০০ ত ৰচিত ভাৰতৰ নাট্যশাস্ত্ৰত অলংকাৰ সম্পৰ্কীয় কিছু মতবাদ পোৱা যায়। এই পুথিখনতেই পোন প্ৰথমবাৰৰ বাবে ভাৰতীয় অলংকাৰৰ আঞ্চলিক ৰূপৰ কথা উল্লেখ কৰিছে।"[২] সেই সূত্ৰে এসময়ত ভাৰতত একেধৰণৰ অলংকাৰৰ প্ৰচলন আছিল বুলি অনুমান কৰিব পাৰি। অসমত অলংকাৰে আঞ্চলিক ৰূপ পৰিগ্ৰহ কৰে আহোম যুগত। এই সময়ছোৱাৰ বিভিন্ন পুথিত অসমৰ অলংকাৰৰ আঞ্চলিক নামৰ উল্লেখ পোৱা যায়।

০.০১ গৱেষণাৰ পৰিসৰ ঃ

এই গৱেষণা পত্ৰত আহোম যুগৰ অলংকাৰসমূহৰ বিষয়ে আলোচনা কৰা হ'ব। এই যুগত ব্যৱহাৰ হোৱা বহুতো অলংকাৰৰ প্ৰচলন এতিয়া নাই যদিও সেইসময়ৰ অলংকাৰসমূহৰ বিষয়ে ইয়াত ধৰিবলৈ যত্ন কৰা হ'ব।

০.০২ উদ্দেশ্য ঃ

এই গৱেষণা পত্ৰখনৰ উদ্দেশ্য হ'ল—

(১) আহোম যুগত প্ৰচলন হোৱা অলংকাৰ সমূহৰ বিষয়ে চমু আভাস প্ৰদান কৰা।

০.০৩ গৱেষণাৰ পদ্ধতি ঃ

গৱেষণা পত্ৰখন আলোচনাৰ বাবে মূলতঃ বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। বিভিন্ন গ্ৰন্থ, প্ৰবন্ধ, গৱেষণা গ্ৰন্থৰ সহায় লৈ বিষয়টো আলোচনা কৰা হৈছে।

১.০০ মূল বিষয়বস্তু ঃ

আহোম সকল ১২২৮ খ্ৰীষ্টাব্দত পাটকাই পাৰ হৈ অসমলৈ প্ৰব্ৰজিত হোৱা অতি প্ৰভাৱশালী জৱগোষ্ঠী। এই প্ৰব্ৰজিত দলটোৰ প্ৰতিনিধি আছিল ওপৰ-ব্ৰহ্মৰ থাওলুং নামৰ শ্যাম ৰাজ্যৰ যুৱৰাজ চ্যুকাফা। চ্যুকাফাই অসম জয় কৰি আহোমৰ ৰাজ শাসন আৰম্ভ কৰিছিল। অৱশ্যে সেই সময়ত বৰ্তমান অসমখনক প্ৰাগজ্যোতিষপুৰ, কামৰূপ আদি নামৰেহে জনা গৈছিল। এই অসম নামৰ উৎপত্তি আহোমসকলৰ ৰাজত্ব কালৰ পৰাই হোৱা বুলি মতবাদ আছে। আহোমসকলে অসমত ১২২৮ খ্ৰীষ্টাব্দৰ পৰা ১৮২৬ খৃষ্টাব্দলৈ সুদীৰ্ঘ ছশ বছৰ কাল অসমত ৰাজত্ব কৰিছিল। এই সময়ছোৱাত অসমৰ অৰ্থনৈতিক, সামাজিক, ৰাজনৈতিক আৰু অন্য দিশসমূহৰ লগতে সাংস্কৃতিক দিশত বিশেষ প্ৰভাৱ বিস্তাৰ কৰিবলৈ সক্ষম হৈছিল। আহোমসকলৰ দীৰ্ঘকাল ৰাজত্বৰ অন্তৰালত আছিল শাসক হিচাপে তেওঁলোকে তেওঁলোকৰ কৰতলীয়া ৰজা আৰু প্ৰজাসকলৰ সৈতে বহন কৰা সুমধুৰ সম্পৰ্ক। "আহোম শাসকসকলে তেওঁলোকৰ দ্বাৰা শাসিত হোৱা দেশখনক আৰু প্ৰজাসকলক অতি আপোন ভাবিছিল।"[৩] যাৰ বাবে তেওঁলোকে সুচাৰুৰূপে ৰাজকাৰ্য পালন কৰাত সফলতা অৰ্জন কৰিছিল। উদাৰভাৱে তেওঁলোকে আনৰো সংস্কৃতি গ্ৰহণ কৰা বাবে এই সময়ত ৰীতি-নীতি, বিশ্বাস-পৰম্পৰা, স্থাপত্য-ভাস্কৰ্য, সংগীত, সাত্যি, সাজ-পাৰ, অলংকাৰ আদি বিভিন্ন ক্ষেত্ৰত বিনিময় তথা আদান-প্ৰদান হৈছিল। অসমীয়া সংস্কৃতি প্ৰকৃততে বিভিন্ন জনগোষ্ঠীৰ সংমিশ্ৰণ আৰু সমন্বয়ৰ ফলত গঢ়ি উঠিছে। আহোমসকলে অসমীয়া সংস্কৃতিৰ বস্তুগত দিশ বিকাশৰ এক উল্লেখযোগ্য নিদৰ্শন দাঙি ধৰিছে। তাৰ ভিতৰত তেওঁলোকে ব্যৱহাৰ কৰা অলংকাৰসমূহ অন্যতম প্ৰধান। "উল্লেখযোগ্য যে আহোম যুগতহে বা আহোমৰ পৃষ্ঠপোষকতাতহে অসমৰ অলংকাৰে আঞ্চলিক ৰূপ আৰু নাম পৰিগ্ৰহ কৰিছিল।"[৪] আহোম যুগৰ সাহিত্য তথা বুৰঞ্জীসমূহতে অসমৰ অলংকাৰৰ সুকীয়া নাম আৰু তাৰ

গঠনৰ আলোচনা কৰা দেখিবলৈ পাওঁ। অসমত তাৰ পূৰ্বে সৰ্বভাৰতীয় পৰ্যায়ৰ অলংকাৰ ব্যৱহাৰ হৈছিল। আহোম যুগৰ পূৰ্ববৰ্তী সাহিত্যসমূহত অসমৰ কোনো আঞ্চলিক অলংকাৰৰ উল্লেখ দেখা নাযায়। আনকি আহোমৰ পৃষ্ঠপোষকতা লাভ নকৰা সমসাময়িক সাহিত্য সমূহতো আমি সৰ্বভাৰতীয় পৰ্যায়ৰ অলংকাৰৰ নামহে দেখিবলৈ পাওঁ।

১.০১ আহোম যুগৰ পুথিত উল্লেখ পোৱা অলংকাৰ ঃ

আহোম যুগত ৰাজ অভিষেক, জোৰণ, উপহাৰ বা উপঢৌকন আদিত অলংকাৰৰ এক উল্লেখযোগ্য প্ৰচলন হৈছিল। বুৰঞ্জীৰ পাতত আমি ইয়াৰ উল্লেখ পাওঁ। অৱশ্যে আহোম যুগত বুৰঞ্জীৰ উপৰিও অন্য সাহিত্যৰো প্ৰচলন আছিল। অতি উল্লেখযোগ্য যে এই যুগত আহোমৰ পৃষ্ঠপোষকতা লাভ নকৰাকৈয়ে কিছুমান সাহিত্যৰ সৃষ্টি হৈছিল। আহোম যুগৰ সাহিত্যক লীলা গগৈয়ে দুটা ভাগত ভাগ কৰিছে—"ভাগ দুটা সত্ৰীয়া ঐতিহ্যৰ সাহিত্য আৰু ৰজাঘৰীয়া পৃষ্ঠপোষকতাত সৃষ্টি হোৱা সাহিত্য"।[৫] অৱশ্যে প্ৰাক্ শংকৰী যুগৰ সাহিত্যতো অলংকাৰৰ উল্লেখ মন কৰিবলগীয়া। হৰিবৰ বিপ্ৰৰ বভ্ৰুবাহনৰ যুদ্ধত সোণেৰে নিৰ্মাণ কৰা ঘৰৰ লগতে ঘোঁৰাক পিন্ধোৱা অলংকাৰৰ বৰ্ণনা দেখা যায়। তাৰ ভিতৰত মুকুতাৰ মালা, কিৰিটী আদি প্ৰধান।

সুকবি নাৰায়ণদেৱৰ পদ্মপুৰাণত ৰূপত মুকুট, কুণ্ডল, সোণৰ কংকন, সোণৰ হাৰ, গলত কস্তুৰীমান, কৌস্তুভমণি, ৰত্নপতি, গজপাস্তি হাৰ, সাতসৰী হাৰ, নুপূৰ, সুৱৰ্ণ কংকন, উজণ্টি, বুকুত কাঁচলি, কঁকালত কিংকিনী, চুলিত পাৰিজাত ফুল, মালতীৰ থোপা, গজমতি হাৰ, অদ্ধচন্দ্ৰ শিৰমণি, সোণৰ চুৰি, আঙুঠি, শিৰত পিন্ধা সোণৰ কমল, বালায়া, পিতলৰ খাৰু আদিৰ উল্লেখ আছে।

মাধৱকন্দলীৰ ৰামায়ণত ভৰতে ৰামক বনবাসৰ পৰা ওভতাই আনিবলৈ যাওঁতে লগত ক্ষত্ৰিয়, বৈশ্য, কায়স্থ, নট, ভাট, তেলী, তাতী, বনিয়া, কমাৰ আদিৰ লগতে সোণাৰিসকল সহযোগ কৰিছিল। মাধৱ কন্দলীয়ে তেওঁৰ অনুদিত ৰামায়ণখনত বত্ৰিছ অলংকাৰৰ কথা উল্লেখ কৰিছে। বিশেষকৈ মুকুট, কুণ্ডল, সাতসৰি, নুপূৰ, পাগৰি, কংকন, কেয়ুৰ, ৰত্নাঞ্জলি আদি।

সত্ৰীয়া সাহিত্যৰ গুৰিধৰোতা শংকৰদেৱৰ ৰুক্মিনীহৰণ কাব্যত অলংকাৰৰ উল্লেখ দেখা যায়। ৰুক্মিনী ৰূপৰ বৰ্ণনাত বিশেষকৈ অলংকাৰৰ নাম তুলি দিয়া দেখা গৈছে। তাৰ ভিতৰত কানত খঞ্জখিলি, শিৰত মুকুট, চাকি শলাই, ৰত্নময় গলপতা, সাতসৰি হাৰ, পেচন্দাৰ, সুৱৰ্ণ টাৰ (বাহুত), কংকন, শাংখ দেৱাঙ্গভূষণ, কপালত সুৱৰ্ণৰ জেঠি, আঙুলিত সোণৰ আঙুঠি আৰু ৰত্নৰ নূপূৰ। শংকৰদেৱৰ দশম স্কন্ধ ভাগৱতৰ "কুৰুক্ষেত্ৰ"তো অলংকাৰৰ নাম পোৱা যায়। তাৰ ভিতৰত কৌস্তভ, মণিময় মকৰ কুণ্ডল, কেয়ুৰ, কংকন, মনি মুকুতাৰ হাৰ আদি।

আহোমৰ যুগত বিশেষকৈ বিবাহৰ যোগেদি ৰজাৰ মাজত মিত্ৰতা স্থাপনৰ বহুতো উদাহৰণ আছে। বিবাহোপযুক্ত কন্যাৰ জোৰণ আগতিয়াকৈ ৰজাই কটকীৰ জৰিয়তে পঠিয়াই দিয়ে। জোৰণৰ সামগ্ৰীৰ ভিতৰত বিভিন্ন মূল্যবান সামগ্ৰীৰ সৈতে অলংকাৰ অপৰিহাৰ্যভাৱে পঠিওৱা হয়। জয়ন্তীয়া বুৰঞ্জীত উল্লেখ থকা এই সম্পৰ্কীয় বৰ্ণনা এটা তুলি দিয়া হ'ল—

"ভগা ৰজালৈ দিয়া জয়ন্তাৰ কুঁৱৰী। তাতপাচে যশমাণিকৰ দিনত ১৫২৯ শকত ভগাজনা ৰজালৈ দিও বুলিলে কন্যা একজনা। পাছে শীতলিয়ালৰ ভেবেৰা কটকীকে, সোণবৰকে দুই কটকীক জোৰণ দিবলৈ পঠালে। অলঙ্কাৰ সোণৰ খাৰু ৪ পাট, সোণৰ আঙ্গলি ৪ যোৰ, বাখৰপতা ২ টা, হাতৰ ডিঙ্গিৰ মণি ৩ ছেও, ডিঙ্গিৰ হাৰ ১ হাৰ, মেখেলাৰে কাপোৰ ১ যোৰ, পাটশাৰ ১ যোৰ, বৰৈ লগোৱা বিহা ১ খন, কন্যা নবাবলৈ এই ক্ৰমে দিলে।"[৬]

আহোমৰ ৰাজত্বত চুবুৰীয়া ৰজাৰ সৈতে বিভিন্ন কাৰণত আহ-যাহ চলিছিল। আহোমৰ ৰাজ-আতিথ্য লাভ কৰা সকলো অতিথিকে যোৱাৰ সময়ত উপহাৰ দিয়াৰ বিশেষ প্ৰথাৰ প্ৰচলন আছিল। এই উপহাৰসমূহ আছিল আহোমসকলৰ স্বকীয় বৈশিষ্ট ফুটি উঠা সামগ্ৰী বিশেষ। ৰজা তাম্ৰধ্বজক আহোম ৰজাই দিয়া উপহাৰৰ তালিকাখন তলত তুলি দিয়া হ'ল—

"১৬০০ শকত বৈশাগৰ ৪ দিন যাওঁতে মঙ্গলবাৰে সলাত কছাৰী ৰজাক বিদায় দিওঁতে দিয়া যায় বাখৰাম শিৰশোভা ১ ধাৰ, বাখৰাম দুগদুগী এৰে মুকুতাৰ মালা ১ ধাৰ, বাখৰাম কৰ্ণফুলা ১ যোৰ, ৰাজাৰ আগতে বৰুৱা ফুকনে পিন্ধিলে। আৰু দিছে ৰূপ ২ পেড়া, হাতী ৪ টা, ঘোঁৰা ৩ টা.... সোণৰ কাণখসা ১ যোৰ, হাতত ৰূপ ২ পেড়া, হাতী ৪ টা, ঘোঁৰা ৩ টা.... সোণাৰ আঙুঠি, সোণাৰ চাৰিপটীয়া খাৰু ১ যোৰ, সোণাৰ বটা ১ টা, সোণাৰ বাটি ১ টা, বাগ্ৰাম চৌমি ১ টা, সোণাৰ তামোল এটা, সোণাৰ উকা টেমি ১

টা, সোণাৰ খৰিকা-চুঙ্গা ১ টা, সোণাৰ কাণখৰিকা ১ টা, সোণাৰ তামোল ১ টা, সোণাৰ বাৰা ১ টা, সোণাৰ বাঁহী ১ টা, সোণাৰ চুলা এৰে টকৌপটীয়া ঝাপি ১ টা, ৰূপৰ কলহ ১, ৰূপৰ বেলা ১, ৰূপৰ মায়িহঙ্গা ১, ৰূপৰ বাটি ২ টা, ৰূপৰ কলহ ২, তামৰ কলহ ৪ টা, পিতলৰ কলহ ৪ টা, কাঁহৰ কছাৰী শৰাই ২ খন, কাঁহৰ মুকলি শৰাই ২ খন, তামৰ মুকলি শৰাই ১ খন।"[৭]

মোগলৰ বাদসাহলৈ উপহাৰ স্বৰূপে ৰমণী গাভৰুৰ লগত ৰূপ-সোণ বন্দী-বেটী দিয়া হৈছিল। পৰ্বতীয়া চুডেফা কোঁৱৰ ৰজা আৰু লালুক বৰফুকনৰ দিনত ৰমণী গাভৰুলৈ দিয়া উপহাৰত উল্লেখ থকা অলংকাৰসমূহ হ'ল— সোণৰ কঁকালি (সাতচল্লিছ), সোণৰ ৰুলি এযাৰ জোখত চাব্বিছ তোলা, সোণৰ খাৰু এযোৰ জোখত বাইশ তোলা, সোণৰ আঙঠি দহ হাজাৰ, সোণৰ উৰ্ণ্টি দহ হাজাৰ জোখত আঠতোলা, যুৰমলা এডাল, সোণে পোৱালে ডিঙিৰ মণি সাতধৰীয়া এছেৰ, সোণে-পোৱালে ভৰ্কি মণি দুধৰীয়া দুধাৰ, আদি।

১.০২ আহোম যুগৰ অলংকাৰৰ চমু আভাস ঃ

আহোম যুগত অলংকাৰৰ ব্যাপক প্ৰচলন হৈছিল। পুৰুষ-মহিলা উভয়েই সেই সময়ত অলংকাৰ ব্যৱহাৰ কৰিছিল। অৱশ্যে পুৰুষতকৈ মহিলাৰ অলংকাৰৰ সংখ্যা বেছি আছিল। তথাপি ৰাজকীয় বা অভিজাত পুৰুষসকলে অলংকাৰ পৰিধান বেছিকৈ কৰা দেখা গৈছিল। আহোম যুগৰ অলংকাৰসমূহক ধাতুগতভাৱে, নিৰ্মাণপদ্ধতি, ব্যৱহাৰৰ ধৰণ অনুসৰি বিভিন্ন ভাগত ভাগ কৰিবপাৰি লিংগগতভাৱে বা সাধাৰণ প্ৰজাই ব্যৱহাৰ কৰা অলংকাৰৰ সৈতে ৰজাৰ অলংকাৰৰো প্ৰভেদ পাৰি। লিংগগতভাৱে বা সাধাৰণ প্ৰজাই ব্যৱহাৰ কৰা অলংকাৰৰ সৈতে ৰজাৰ অলংকাৰৰো প্ৰভেদ দেখা যায়। অলংকাৰ পৰিধানৰ বিভিন্ন অলিখিত নিয়মো এই সময়ত প্ৰচলিত আছিল। তলত আহোম যুগৰ অলংকাৰসমূহক দেহৰ অঙ্গ অনুযায়ী ভাগ কৰি দেখুওৱা হ'ল—

ডিঙিত পিন্ধা ঃ আহোম যুগত পুৰুষ-মহিলা উভয়ে ডিঙিত অলংকাৰ পিন্ধিছিল। পুৰুষে পৰিধান কৰা ডিঙিৰ অলংকাৰসমূহ হ'ল— মতামণি, মগৰদানা, বিৰি আদি। মগৰদানা কেৱল ৰজাঘৰীয়া বা ডা-ডাঙৰীয়াইহে পৰিধান কৰিব পাৰিছিল। মহিলাসকলে পৰিধান কৰা ডিঙিৰ অলংকাৰ হ'ল— জোনবিৰি, ঢোলবিৰি, ঢৰীয়াবিৰি, শিলিখাবিৰি, থোপামণি, পাৰচকুৰা বিৰি, ডুগডুগী, গেজেৰা, বেনা, গলপতা, সোণে পোৱাল মণি, ফুটিমণি, সাতসৰী, চন্দ্ৰহাৰ, থোপামণি আদি।

কাণত পিন্ধা ঃ পুৰুষৰ কাণত পিন্ধা অলংকাৰসমূহৰ ভিতৰত— লং কেৰু, জাংফাই, কৰ্ণবালা, লোকাপাৰ, উৰ্ণ্টি, কৰ্ণফুলা আদি প্ৰধান। মহিলাসকলে পৰিধান কৰা কাণৰ অলংকাৰৰ ভিতৰত— কেৰু, থুৰীয়া, কাণবালা, কাণখচা, কাণফুলি, সোণা মাকৰি, চাকি শলাই আদি প্ৰধান। উল্লেখযোগ্য যে "ৰজাৰ দোলাভাৰীৰ কাণৰ কেৰু প্ৰায় চাৰি/পাঁচ আঙুলি দীঘল আছিল।"[৮]

বাহুত/হাততঃ আহোম যুগৰ পুৰুষসকলে হাতত খাৰু পিন্ধিছিল যদিও সেয়া সদায় পৰিধান কৰা নাছিল। পুৰুষসকলে গামখাৰু পিন্ধিছিল। বাহুত পুৰুষসকলে বাজু পৰিধান কৰা দেখা যায়। বুৰঞ্জীত এই বাজুক সুবৰ্ণৰ টাৰ বুলি উল্লেখ আছে।

আহোম যুগৰ মহিলাসকলে হাতত পিন্ধা অলংকাৰসমূহ হ'ল— গামখাৰু, মুঠিখাৰু, ন ধৰীয়া সোণৰ খাৰু, সোণে পোৱালে হাতৰ মণি আদি। বৰৰজা ফুলেশ্বৰীয়ে হীৰা খটোৱা গামখাৰু পিন্ধিছিল বুলি জনা যায়।

কঁকালত ঃ 'ৰমণী গাভৰু'ত কঁকালত পৰিধান কৰা কঁকালিৰ উল্লেখ আছে। উল্লেখযোগ্য যে কঁকালত পিন্ধা এই কঁকালিগছ ওজনত সাতচল্লিছ তোলাৰ আছিল।

আঙুলিত ঃ চিৰিপতা শেণেপতা, জেঠীনেজীয়া, পাৰচকুৰা, মৰা নেজীয়া, মাছৰাকলীয়া, হীৰাপতা, বাখৰপতা আদি আঙুঠিয়েই প্ৰধান ৰূপ ব্যৱহাৰ হৈছিল।

ভৰিত ঃ নেপূৰ, সোণে পোৱালে ভৰিৰ মণি আদি মহিলাই পৰিধান কৰিছিল।

শিৰত পৰিধান কৰা ঃ ৰজাসকলে শিৰত মুকুট পৰিধান কৰিছিল। ডা-ডাঙৰীয়াসকলে মূৰত পাগুৰি মাৰিছিল। আহোম যুগত পুৰুষসকলে বাখৰাম শিৰশোভা পৰিধান কৰাৰ কথা উল্লেখ পোৱা যায়। মহিলাসকলে শিৰত চিতিপতি, নেঠিনেজীয়া আদি পিন্ধিছিল।

ওপৰত উল্লেখ কৰা অলংকাৰসমূহৰ ব্যৱহাৰৰ ক্ষেত্ৰত আহোম যুগত বিভিন্ন নীতি-নিয়ম আছিল। হীৰা বা বাখৰ খটোৱা সোণৰ অলংকাৰ ৰজাঘৰীয়া বিষয়বাব অনুসৰিহে ব্যৱহাৰ কৰিব পাৰিছিল। "ওখ শ্ৰেণীৰ বিষয়াইহে ভাল অলংকাৰ পিন্ধিব পাৰে, সাধাৰণ মানুহৰ কাঁহ আৰু পিতলৰ অলংকাৰ।"[৯] এই যুগত কঁপালত লোৱা 'ফোঁটতোও

পদমর্যাদা আৰু বিষয়ৰ চিন' আছিল।[১০] ডোমৰ কঁপালত ৰৌমাছ, হাড়ীৰ কঁপালত মার্জনী বা বাঢ়নী আঁকি দিয়া হৈছিল। হিন্দু তিৰোতাৰ লগতে সেই সময়ত মুছলমান তিৰোতাসকলেও ফোঁট লোৱাৰ নিয়ম আছিল। অৱশ্যে হিন্দু নাৰীসকলে সেন্দুৰৰ ফোঁট লোৱাৰ বিপৰীতে তেওঁলোকে চন্দন, মৃত্তিকা আদিৰ দ্বাৰা ফোঁট লৈছিল। একেদৰে ফুল বা ফুলৰ মালা পিন্ধাৰ ক্ষেত্ৰতো কিছু নিয়ম আছিল। যুতী, মালতী আদি ফুল ৰজাঘৰীয়াৰ বাহিৰে অন্যই পিন্ধাৰ ক্ষেত্ৰত নিষেধ আছিল।

১.০৩ আহোম যুগৰ সোণ কমোৱা পদ্ধতি ঃ

আহোম ৰজাৰ দিনত অসমত বালি ধুই সোণ সংগ্ৰহ কৰা হৈছিল।" ৰাজেশ্বৰ সিংহৰ দিনত (খ্ৰীঃ ১৭৫১-১৭৬৯)উজনি অসমৰ পৰা ২৫০০ তোলা সোণবালি ৰাজভঁৰাললৈ সংগ্ৰহ কৰিছিল।"[১২] আহোম ৰজা জয়ধ্বজ সিংহৰ দিনত কুৰি হেজাৰ সোণোৱাল সোণ কমোৱা ব্যৱসায়ৰ লগত জড়িত আছিল। চুক্ৰাংফাই সোৱৰ্ণশিৰি, ডিক্ৰং, লোহিত, দিঁহু, জাগলো নদীত সোণোৱাল আৰু ৰূপোৱাল সকলক সোণ আৰু ৰূপ কমাবলৈ দিছিল। নামনি অসমৰ ব্ৰহ্মপুত্ৰৰ বিভিন্ন পাৰৰ পৰা সংগ্ৰহ কৰা সোণ ৰাজভঁৰাললৈ বাৰ্ষিক কৰ হিচাপে দিব লাগিছিল। খেলধৰ বৰুৱাৰ তত্ত্বাৱধানত বালি ধুই সোণ কমোৱা কাৰ্য্য সমাপন কৰা হৈছিল। সোণ কমোৱা কামত পাৰ্গত চুতীয়া আৰু কছাৰীসকলকো আহোম ৰজাই নিয়োগ কৰিছিল।প্ৰতিবছৰে পাইকসকলে কাতিৰ পৰা বহাগ মাহলৈ সোণ কমোৱা কাম কৰিছিল। প্ৰতিজন সোণ কমোৱা পাইকে গাইপতি ২.৫ তোলা সোণ ৰাজকোষলৈ দিব লাগিছিল আৰু অতিৰিক্তখিনি নিজে ৰাখিব পাৰিছিল। " ধিং, সোণধনী, চোতগাৰীৰ মানুহেও ৰজাৰ ভঁৰাললৈ নিজৰ নিজৰ ঠাইত ওলোৱাসোণ পঠিয়াইছিল। ৰজাৰ সজাতিয়ে ভোটৰ পৰ্বতৰ পৰাও সোণ আনিছিল।"[১৩]

সোণ বালি কমোৱা পদ্ধতি সম্পৰ্কে লক্ষীমপুৰ জিলাৰ গেজেটিয়াৰত অতি স্পষ্ট বৰ্ণনা দিয়া আছে। এই বৰ্ণনাটোৰ অসমীয়া অনুবাদ তলত দিয়া হ'ল— "সোণোৱাল সকলে নদীৰ পাৰখহাই থকা ঘূলী এটা নিৰ্বাচন কৰি লয়। বিপৰীত পাৰত বালিচাপৰি পৰা হ'ব লাগে। আৱশ্যক হ'লে, বালি চাপৰিলৈ নদীৰ তীব্ৰসোঁত বোৱাই দিব পাৰে। তেনে স্থান নিৰ্বাচিত হোৱাৰ পিছত বালি চাপৰিৰ বালিবোৰ ধুই নিব পৰাকৈ নদীত বান্ধ দি তীব্ৰ সোঁতটি বালি চাপৰিলৈ বোৱাই দিয়া হয়। বালিবোৰ উটি গৈ তলৰ শিলৰ তৰপ দেখা গ'লে পানীত দিয়া বান্ধটো খুলি দিয়া হয় আৰু নদীৰ সোঁত আগৰ স্থানলৈ বোৱাই দিয়ে। বালি চাপৰিত পৰি থকা সোণ মিশ্ৰিত বালি-শিলবোৰ বাঁহৰ চালনিৰে চালি নাওঁৰ দৰে কাঠৰ পাত্ৰত সোণ মিশ্ৰিত বালিবোৰ ঢালি দিয়ে। বালি আৰু পানীৰে নাওঁৰ দৰে পাত্ৰটো ভৰ্ত্তি হ'লে পাত্ৰটো সামান্য বেঁকা কৰি এটা মূৰ দাঙি দিয়ে, যাতে পানীৰ লগতে উজ্জ্বল পদাৰ্থ লৰচৰ কৰিব পাৰে আৰু সোণ তথা গধূৰ ধাতু নাওঁৰ দৰে পাত্ৰটোৰ তলত থাকে এনে বালি যথেষ্ট পৰিমাণে সংগ্ৰহ হ'লে অন্য এটা পাত্ৰত জমা কৰি তাত পাৰা ঢালি দিয়া হয়, যাতে সৰু সৰু সোণৰ লদাৰ আকৃতি লয়। পাৰা মিশ্ৰিত সোণৰ বালিৰ লদাকে শামুকৰ খোলাত ভৰোৱা হয়। পিছত এইবোৰ জুইত পুৰিলে শামুকবোৰ চূণলৈ ৰূপান্তৰিত হয় আৰু পাৰা ধোঁৱা হৈ উৰি যায়। সোণৰ কণিকাবোৰ চূণত লিপিত খাই ৰয়। পানী থকা এটা পাত্ৰত চূণমিশ্ৰিত সোণৰ কণিকাবোৰ ঢালি দিলে পাত্ৰটোৰ তলত মূল্যৱান সোণখিনি জমা হয়গৈ।"[১৪]

১.০৪ ৰূপ কমোৱা পদ্ধতি ঃ

আহোম যুগত সোণৰ লগতে ৰূপৰ অলংকাৰো ব্যাপক পৰিমাণে ব্যৱহৃত হৈছিল। ৰূপ-মাটিৰ লগত অন্য খনিজ পদাৰ্থ মিহলি হৈ ৰূপৰ সৃষ্টি হয়। গুৱাহাটীৰ বলাবিলৰ মাটিত ৰূপমাটি পোৱা গৈছিল। "গাৰো পাহাৰ, খাচীয়া পাহাৰ, আদিৰ পৰা ৰূপ-মাটি আনি ৰূপ কমাবলৈ ৰূপোৱাল দলক নিয়োগ কৰিছিল।"[১৫]

১.০৫ আহোম যুগৰ অলংকাৰ নির্মাণ পদ্ধতি ঃ

আহোম যুগত কেইবাটাও পদ্ধতিৰে অলংকাৰ নির্মাণ কৰা হৈছিল। তাৰ ভিতৰত মীনাকৰা, জৰোৱা বা গুণাকটীয়া পদ্ধতি আৰু বাখৰুৱা পদ্ধতি প্ৰধান। অসমৰ সোণাৰিয়ে থলুৱাভাৱে হাতেৰে সোণ, ৰূপ, তাম, পিতল আদিৰ অলংকাৰ নির্মাণকৰিছিল। সোণাৰিসকলে এটা বহল পাত্ৰত অঙঠা কিছুমান ৰাখি জুহাল এটি প্ৰস্তুত কৰি লয়। ইয়াতেই মাটিৰ সৰু সৰু পাত্ৰত সোণ গলোৱা হয়। বতাহৰ প্ৰয়োজন হ'লে বাঁহ বা লোৰ ফু-চুঙা ব্যৱহাৰ কৰা হয়। তেওঁলোকে সোণ-ৰূপ 'নিয়াৰি"ৰে পিতে। তেওঁলোকে অলংকাৰ প্ৰস্তুত কৰিবলৈ সৰু ডাঙৰ মাটিৰ পাত্ৰ ব্যৱহাৰ কৰে। ইয়াৰোপৰি সৰু ডাঙৰ গাত থকা ঘনাকৃতিৰ এডোখৰ গোটা কাহ বা পিতল ব্যৱহাৰ কৰা হয়। এই গাত সমূহত সোণ, লটকণ,নূপূৰ আদিক আকাৰ দিবলৈ সুবিধা হয়। সোণাৰিয়ে

সোণ ৰূপ গলাবলৈ সুৱগা ব্যৱহাৰ কৰে। অসমৰ সোণাৰিয়ে টেঙাপানীৰেই সোণ-ৰূপ পৰিস্কাৰ কৰা দেখা যায়। অৱশ্যে কিছুমান সোণাৰিয়ে "নিশাদল" ব্যৱহাৰ কৰে।

খ্ৰী. ১৮৯৬ চনত মিঃ দৰাৰ "Notes on some Industries of Assam" আৰু Mr. F.C. Henniker ৰ The gold and silver waras of Assam এই পুথি দুখনৰ পৰা ঊনবিংশ শতিকাৰ প্ৰথমৰ্দ্ধত অসমৰ যোৰহাট, শিৱসাগৰ, ৰংপেটা আৰু গোৱালপাৰা জিলা অসমৰ অলংকাৰ নিৰ্মাণৰ প্ৰধান কেন্দ্ৰ ৰূপে গঢ় লৈ উঠিছিল। অৱশ্যে এই ঠাইসমূহৰ অলংকাৰ নিৰ্মাণ পদ্ধতি সুকীয়া আছিল। এই কেন্দ্ৰসমূহৰ অলংকাৰ বিশেষত্ব আছিল পৃথক। যোৰহাট আৰু শিৱসাগৰৰ সোণ আৰু ৰূপৰ অলংকাৰত বাখৰুৱা সোণপানী চৰোৱা কাম কৰিছিল। মীনা কৰাৰ ক্ষেত্ৰত যোৰহাটৰ নাম সেই সময়ৰ পৰাই আছিল বিখ্যাত। ৰংপেটা আৰু গোৱালপাৰাৰ সোণাৰিসকল জৰোৱা অলংকাৰ নিৰ্মাণত নিপুণ আছিল।

২.০০ সামৰণি ঃ

অলংকাৰ হৈছে পুৰণি হস্তশিল্পৰোৰৰ ভিতৰত অন্যতম প্ৰধান শিল্প। ই মানুহৰ সৌন্দৰ্যপিপাসু কল্পনা আৰু নিপুণ কাৰুকাৰ্যৰ এক বিকশিত ৰূপ। প্ৰাচীন কালৰ পৰাই অলংকাৰসমূহৰ ব্যৱহাৰ, গঢ় আৰু ব্যৱহাৰৰ কাৰণসমূহো সলনি হৈ বৰ্তমানৰ ৰূপ পাইছে। সংস্কৃতি পৰিবৰ্তনশীল। মানুহে ব্যৱহাৰ কৰা অলংকাৰো সংস্কৃতিৰে এটা অংগ। কালৰ সোঁতত আমাৰ সম্পদসমূহ পৰিবৰ্তন বা হেৰাই যোৱাৰ আগতে তাক সংৰক্ষণ কৰি ৰখা উচিত। আধুনিকীকৰণৰ নামত অসমৰ থলুৱা অলংকাৰসমূহৰ যাতে বিকৃতকৰণ নহয় তাৰবাবে কিছু সাৱধানতা অৱলম্বন কৰাৰ প্ৰয়োজনীয়তা ইতিমধ্যে আহি পৰিছে। গতিকে অসমৰ থলুৱা অলংকাৰৰ সঠিক সংৰক্ষণ আৰু ইয়াৰ বিস্তৃত গৱেষণাই অসমীয়া অলংকাৰৰ স্বকীয়তা ৰক্ষা কৰাৰ ক্ষেত্ৰত নতুন মাত্ৰা প্ৰদান কৰিব বুলি আশা কৰিব পাৰি। ❑

প্ৰসঙ্গ টোকাঃ

১। Jewellery, Page-1
২। নাট্যশাস্ত্ৰ, পৃ. ৬৩
৩। অসমীয়া সংস্কৃতি, পৃ. ১০৮
৪। গহনা-গাঠৰি, পৃ,৩১
৫। গগৈ লীলা, অসমৰ সংস্কৃতি, পৃ. ৯৮
৬। জয়ন্তীয়া বুৰঞ্জী, পৃ. ১৫
৭। জয়ন্তীয়া বুৰঞ্জী, পৃ. ৯৯-১০১
৮। আসাম বন্ধু, পৃ. ৪৩৯
৯। জয়ন্তীয়া বুৰঞ্জী, পৃ. ১৫
১০। আহোমৰ দিন, পৃ. ৫৭
১১। আসাম বন্ধু, পৃ. ৪৪০
১২। অসমৰ পৰম্পৰাগত অয়-অলংকাৰ, পৃ- ৯১)
১৩। বেনুধৰ শৰ্মা ৰচনাৱলী, পৃঃ২০)
১৪। The District Gazetter, vol viii, Lakhimpur, p- 198-199
১৫। অসমৰ সংস্কৃতি, পৃ. ৯২

গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

অসমীয়া গ্ৰন্থ ঃ

গগৈ, লীলা আৰু হৰিপ্ৰসাদ। সম্পা। অসমীয়া সংস্কৃতি। গুৱাহাটী ঃ বনলতা, ২০০৩। ছপা।
দাস, নাৰায়ণ। সম্পা। মহাপুৰুষ শ্ৰীশ্ৰীশংকৰদেৱ বিৰচিত ৰুক্মিণী হৰণ কাব্য। গুৱাহাটী ঃ বাণী লাইব্ৰেৰী, ২০১২। ছপা।
---। গহনা-গাঁঠৰি। গুৱাহাটী ঃ অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, ১৯৮৮। ছপা।
ফুকন, কাশীনাথ তামুলী। আসাম বুৰঞ্জী পুথি। গুৱাহাটী ঃ অসম চৰকাৰৰ বুৰঞ্জী আৰু পুৰাতত্ব বিভাগ, ২০১৫। ছপা।
বৰুৱা, গুণাভিৰাম। আসাম বুৰঞ্জী। গুৱাহাটী ঃ অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, ২০১৬। ছপা।
বৰুৱা, বিৰিঞ্চি কুমাৰ। অসমৰ লোকসংস্কৃতি। গুৱাহাটী ঃ বীণা লাইব্ৰেৰী, ১৯৯২। ছপা।
ভূঞা, সূর্যকুমাৰ। কছাৰী বুৰঞ্জী। সম্পা। গুৱাহাটী ঃ অসম চৰকাৰৰ বুৰঞ্জী আৰু পুৰাতত্ব বিভাগ, ১৯৮৪। ছপা।
---। জয়ন্তীয়া বুৰঞ্জী। গুৱাহাটী ঃ অসম চৰকাৰৰ বুৰঞ্জী আৰু পুৰাতত্ব বিভাগ, ২০১২। ছপা।
ভূঞা, সূর্যকুমাৰ। আহোমৰ দিন। গুৱাহাটী ঃ বাণী মন্দিৰ। ২০১৪। ছপা।
ৰৰবৰুৱা, হিতেশ্বৰ। আহোমৰ দিন। গুৱাহাটী ঃ অসম প্ৰকাশন পৰিষদ। ২০১৮। ছপা।
ফুকন, কাশী নাথ তামুলী। অসম বুৰঞ্জী। গুৱাহাটী ঃ অসম চৰকাৰৰ বুৰঞ্জী আৰু পুৰাতত্ব বিভাগ। ২০১৫। ছপা।

ইংৰাজী ঃ

Allen . b. c.: The District Gazetter, vol viii, Lakhimpur, The City Press Calcutta 1905
Gait, Adward. A History of Assam. Guwahati : LBS Publications, 1984. Print.
Sarma, Nabin Chandra. Oral songs of Tribal Communities of Assam. Asom Sahitya Sabha & AIRTSC, 1st Edition, 2006.
Smith, H. Clifford. Jewellery. New York : G P Putnam's Sons, London : Methwn & Co, 1908. Print.
Henniker, F.C. The Gold and Silver Wares of Assam. Shillong : Assam Secreteriate Printing Office. 1905. Print.

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

ইয়ুঙৰ মনোবৈজ্ঞানিক তত্ত্বৰ আলোকত শৰৎ চন্দ্ৰ গোস্বামীৰ 'অন্তৰ আবৰণ'

প্ৰীতম তালুকদাৰ

গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
৭৬৩৫৯৯৯৭৯৬
pritamtalukdar167@gmail.com

১.০০ প্ৰস্তাৱনা ঃ

মানুহে কৰা প্ৰত্যেকটো কাম তথা মানৱ আচৰণৰ আঁৰত মানসিক প্ৰয়োজন নিহিত হৈ থাকে। সাহিত্যও মানৱ মনৰ এক অন্যতম সৃষ্টি। গতিকে সাহিত্যত ব্যক্তিমনৰ স্বৰূপ প্ৰকাশ পোৱাটো স্বাভাৱিক। ইয়াৰ লগতে ব্যক্তি আৰু সমাজৰ পাৱস্পৰিক সম্পৰ্কৰ বিভিন্ন দিশো সাহিত্যৰ যোগেদি প্ৰতিফলিত হয়। এই সকলোবোৰৰ আঁৰত মানসিক জগতৰ যথেষ্ট ভূমিকা থাকে। এই দৃষ্টিকোণৰ পৰা সাহিত্য অধ্যয়নৰ ক্ষেত্ৰত মনস্তাত্ত্বিক বিশ্লেষণৰ ধাৰাটোৱে গুৰুত্ব লাভ কৰে। অসমীয়া গল্প-সাহিত্যৰ বুৰঞ্জী প্ৰণেতা প্ৰ াদ কুমাৰ বৰুৱাই তেওঁৰ *অসমীয়া চুটি গল্পৰ অধ্যয়ন* (২০১৭) শীৰ্ষক গ্ৰন্থখনত গল্প অধ্যয়নৰ মনস্তাত্ত্বিক বিশ্লেষণক মনঃসমীক্ষাত্মক দৃষ্টিভংগী আখ্যা দিছে। তেওঁৰ মতে এই দৃষ্টিভংগী অসমীয়া গল্প-সাহিত্যত আঠটা দিশত প্ৰতিফলিত হৈছে। সেইবোৰ হৈছে— নৰ-নাৰীৰ জৈৱিক বাসনা, আত্মহত্যা আৰু মৃত্যুস্পৃহা, শিশু মনস্তত্ত্ব, কিশোৰী মনস্তত্ত্ব, নাৰী মনস্তত্ত্ব, ৰুগ্ন মানসিকতা, নিৰ্জ্ঞান মনৰ সন্ধান আৰু বৃদ্ধ মনস্তত্ত্বৰ যোগেদি প্ৰতিফলিত হৈছে।(বৰুৱা ৪০৭) অৱশ্যে সেয়া হ'লেও মানৱ মন যিহেতু বিচিত্ৰ, গতিকে মন সম্পৰ্কীয় অধ্যয়নৰ ক্ষেত্ৰতো নতুন নতুন দিশৰ সংযোগ ঘটা দেখা যায়। মন কৱিবলগীয়া যে মানৱ দেহৰ বিকাশৰ বিভিন্ন স্তৰত মনত ক্ৰিয়া কৰা দিশবোৰবো তাৰতম্য ঘটিবলৈ লয়। কিন্তু মানৱ মনত প্ৰভাৱ পেলোৱা এনে কিছুমান দিশো থাকে যিবোৰ উমৈহতীয়া গুণবিশিষ্ট। অৰ্থাৎ সামাজিক, সাংস্কৃতিক বিভিন্নতাৰ মাজতো এইবোৰ দিশৰ মূল প্ৰকৃতিৰ বিশেষ তাৰতম্য নঘটে। এনে দিশবোৰ সমগ্ৰ মানৱজাতিৰ মানসিক জগতত সামূহিক ৰূপত নিহিত হৈ থাকে। ছুইজাৰলেণ্ডৰ এগৰাকী মনোবিজ্ঞানী হৈছে কার্ল গুস্তাভ্ ইয়ুং(১৮৭৫-১৯৬১)। তেওঁ মানসিক জগতৰ এই দিশবোৰক 'Archetype' (আৰ্কিটাইপ) বুলি চিনাক্ত কৰে। অসমীয়াত আৰ্কিটাইপবোৰক মূল ৰূপ, পূৰ্ব ৰূপ অথবা প্ৰাৰূপ বুলি ক'ব পৰা যায়।

ৰোমাণ্টিক যুগৰ গল্পসমূহৰ অধ্যয়ন কৰোঁতে ভাববাদী দৃষ্টিভংগী অথবা কোনো কোনো ক্ষেত্ৰত সাধাৰণ বিশ্লেষণাত্মক দৃষ্টিভংগীৰ প্ৰয়োগ কৰা দেখা যায়। অৱশ্যে কিছুমান গল্পত মনস্তাত্ত্বিক লক্ষণৰ ছিটিকনি থকা বাবে সেইবোৰৰ মনস্তাত্ত্বিক অধ্যয়নো কৰা দেখা যায়। তথাপি গল্প-সাহিত্য আৰু মানৱ মনৰ বৈচিত্ৰ্যপূৰ্ণ দিশৰ প্ৰতি লক্ষ্য ৰাখি গল্পকাৰ, কাহিনী তথা চৰিত্ৰৰ মানসিকতাক অন্য দিশৰ পৰাও চাব পৰা যায়। অসমীয়া গল্পৰ মনস্তাত্ত্বিক অধ্যয়নৰ নতুন ক্ষেত্ৰৰ অনুসন্ধানৰ প্ৰতি লক্ষ্য ৰাখি ইয়ুঙৰ

আর্কিটাইপৰ ধাৰণাৰ আধাৰত ৰোমাণ্টিক যুগৰ এগৰাকী গল্পকাৰ শৰৎ চন্দ্ৰ গোস্বামীৰ গল্পক আলোচনা কৰাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

উল্লেখযোগ্য যে মনোবিজ্ঞানৰ জগতখনত হোৱা বিভিন্ন পৰীক্ষা-নিৰীক্ষাৰ আধাৰত নিৰ্মিত তত্ত্ব, ধাৰণা অথবা চিন্তাধাৰাৰ আলোকত অসমীয়া গল্প-সাহিত্যৰ বিচাৰ-বিশ্লেষণ কৰোঁতে প্ৰায়ে ফ্ৰয়েডীয় চিন্তাধাৰাক প্ৰাধান্য দিয়া দেখা যায়। ইয়াৰ ফলত অসমীয়া গল্প-সাহিত্যখিনি অন্য দৃষ্টিৰে স্বাধীনভাৱে আলোচনা কৰাৰ দিশটো উপেক্ষিত হৈ ৰৈছে। অৱশ্যে ইয়ুঙৰ চিন্তাধাৰাত আধ্যাত্মিক, ৰাহস্যিক প্ৰকৃতিৰ উপাদানৰ উপস্থিতিৰ কাৰণে কিছুমান পণ্ডিতে তেওঁৰ ধাৰণাবোৰ সম্পূৰ্ণৰূপে বৈজ্ঞানিক নহয় বুলি ক'ব খোজে। কিন্তু সেয়া হ'লেও মানৱ মন তথা আচৰণৰ অধ্যয়ন আৰু মানসিক জগতৰ আঁৰত ক্ৰিয়া কৰা জটিল বিষয়বোৰৰ আঁৰৰ কাৰণ উদ্ধাৰৰ ক্ষেত্ৰত ইয়ুঙৰ অৱদানৰ গুৰুত্ব আছে।

মনোবিজ্ঞানৰ জগতখনত ইয়ুঙৰ তত্ত্ব তথা চিন্তাধাৰাক বিশ্লেষণাত্মক মনোবিজ্ঞান (Analytical psychology) হিচাপে জনা যায়। এই তত্ত্ব অষ্ট্ৰিয়াৰ মনোবিজ্ঞানী চিগ্‌মাণ্ড ফ্ৰয়েড(১৮৫৬-১৯৩৯)ৰ আধাৰত গঢ় লৈ উঠে। অৱশ্যে তাত কিছুমান সুকীয়া দিশো নিহিত হৈ আছিল। প্ৰথমে, ফ্ৰয়েডৰ নিচিনাকৈ ইয়ুঙেও মানুহ মনক তিনিটা ভাগত বিভক্ত কৰে। সেইবোৰ হৈছে--- ইগ' (Ego), ব্যক্তিগত অচেতনতা (Personal unconscious) আৰু সামূহিক অচেতনতা (Collective unconscious)। ইগ'ক অসমীয়াত অহং বুলি কোৱা হয়। ই ব্যক্তিৰ সচেতন স্থিতিৰ প্ৰতিনিধিত্বকাৰী। ইগ'ই ব্যক্তিবিশেষৰ সচেতন চিন্তাধাৰা, স্মৃতি আদিক সামৰি লয়। দ্বিতীয়তে, মানসিক জগতৰ অধ্যয়নৰ ক্ষেত্ৰত ফ্ৰয়েডৰ দৰে ইয়ুঙেও মনৰ অচেতন অৰ্থাৎ অজ্ঞাত অংশটোৰ ওপৰত সৰ্বাধিক গুৰুত্ব আৰোপ কৰে। অৱশ্যে তেওঁ মনৰ এই অচেতন স্থিতিক দুটা পৃথক পৃথক ভাগত বিভক্ত কৰে। সেই দুটা হৈছে--- ব্যক্তিগত অচেতনতা আৰু সামূহিক অচেতনতা। মন কৰিবলগীয়া যে ইয়ুঙৰ ব্যক্তিগত অচেতনতাৰ ধাৰণাটো ফ্ৰয়েডে আগবঢ়োৱা অচেতন মনৰ ধাৰণাৰ সমপৰ্যায়ৰ। যি হওক, নামৰ পৰাই এই কথা স্পষ্ট হৈ পৰে যে ব্যক্তিগত অচেতনতাই সাধাৰণতে ব্যক্তিৰ নিজস্ব ভাবানুভূতি আৰু স্মৃতিবোৰ সামৰি লয়। গতিকে এইবোৰ ব্যক্তিবিশেষে পৃথক হোৱা দেখা যায়। আনহাতে সামূহিক অচেতনতাৰ ধাৰণাটো মনোবিজ্ঞানৰ ক্ষেত্ৰলৈ ইয়ুঙে আগবঢ়োৱা এক যুগান্তকাৰী সংযোজনসমূহৰ অন্যতম বুলি ক'ব পৰা যায়। ইয়ুঙে দেখুৱালে যে সমগ্ৰ মানৱজাতি একেডাল বিৱৰ্তনৰ জৰীৰে সম্পৰ্কিত। গতিকে তেওঁলোকৰ সামূহিক অচেতন মন অৰ্থাৎ মনৰ অজ্ঞাত অংশত বিৱৰ্তনৰ কিছুমান উমৈহতীয়া কৌশল তথা পৰিস্থিতিবিশেষে আচৰণ প্ৰদৰ্শনৰ নমুনা বা 'পেটাৰ্ণ' নিহিত হৈ থাকে। এইবোৰ পূৰ্বপুৰুষৰ পৰা প্ৰবাহিত হৈ আহে। গতিকে এইবোৰৰ প্ৰকৃতি আনুবংশিক। একপ্ৰকাৰ ঐতিহাসিক সংযোগসূত্ৰৰ দ্বাৰা এইবোৰ পৰিচালিত হয়। মানৱজাতিৰ সামূহিক অচেতনতাত নিহিত হৈ থকা এই উমৈহতীয়া গুণবিশিষ্ট দিশবোৰ কিছুমান সাৰ্বজনীন চিহ্ন অথবা আৰ্কিটাইপ অৰ্থাৎ মূল ৰূপৰ যোগেদি প্ৰকাশ পায়। এইবোৰ ব্যক্তিৰ মানসিক জগতৰ লগতে প্ৰকাশ্য আচৰণৰ ক্ষেত্ৰতো যথেষ্ট প্ৰভাৱ পেলায়।

ইয়ুঙে বহুতো আৰ্কিটাইপ চিনাক্ত কৰে। অৱশ্যে তাৰ মাজত চাৰিটা আৰ্কিটাইপে মানৱ জীৱনত বিশেষ প্ৰভাৱ পেলোৱা দেখা যায়। আনবোৰ আৰ্কিটাইপৰ লক্ষণবোৰ প্ৰধান চাৰিটা আৰ্কিটাইপৰ ভিতৰতে সামৰি ল'ব পৰা যায়। যি হওক, ইয়ুঙৰ প্ৰধান চাৰিটা আৰ্কিটাইপৰ ভিতৰত অন্যতম হৈছে 'Persona'। অসমীয়াত ইয়াক মুখা বুলিব পৰা যায়। ই ব্যক্তিৰ সমাজস্বীকৃত আচৰণৰ সমূহ বা ৰূপটোক প্ৰতিনিধিত্ব কৰে। আমাৰ গৱেষণা পত্ৰখনত ইয়ুঙৰ 'মুখা' আৰ্কিটাইপৰ ধাৰণাৰ আধাৰত ৰোমাণ্টিক যুগৰ গল্পকাৰ শৰৎ চন্দ্ৰ গোস্বামীৰ 'অন্তৰ আবৰণ' শীৰ্ষক গল্পটো আলোচনা কৰাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে। গল্পটো গোস্বামীৰ *বাজিকৰ আৰু আন আন গল্প* (১৯৫০) শীৰ্ষক সংকলনৰ অন্তৰ্গত। গল্পটোত মানৱ মনৰ বিচিত্ৰ অথচ জটিল মানসিক জগতখনৰ চিত্ৰ তুলি ধৰা হৈছে। ইয়াত কোনো চৰিত্ৰবিশেষৰ চিত্ৰণ মুখ্য বিষয় নহয়, বৰঞ্চ সমগ্ৰ মানৱ জাতিৰ মানসিক জগতৰ সামূহিক ৰূপটো গল্পটোৰ যোগেদি প্ৰকাশ পাইছে। গল্পটোত মানৱ সমাজ, জন্তু জগত আৰু ঐশ্বৰিক সত্তাৰ উপস্থিতিয়ে গল্পটোৰ কাহিনীক বৈচিত্ৰ্যপূৰ্ণ কৰি তুলিছে।

১.০২ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ আৰু পদ্ধতি ঃ

এই গৱেষণা পত্ৰখনত ইয়ুঙৰ মনোবিশ্লেষণাত্মক তত্ত্বৰ অন্তৰ্গত মূল চাৰিটা আৰ্কিটাইপ সম্পৰ্কে উল্লেখ কৰি আলোচ্য 'মুখা' আৰ্কিটাইপৰ পৰিচয় দাঙি ধৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে। এই ক্ষেত্ৰত ইয়ুঙৰ 'মুখা' আৰ্কিটাইপৰ স্বৰূপ আৰু গুৰুত্ব ফুটি উঠা গল্প বাছনি কৰা হৈছে। গৱেষণা পত্ৰখনৰ বাবে জোনাকী যুগৰ গল্পকাৰ শৰৎ চন্দ্ৰ গোস্বামীৰ প্ৰাপ্ত গল্পসমূহৰ

অধ্যয়ন কৰি 'অন্তৰ আবৰণ' শীৰ্ষক গল্পটোক নিৰ্বাচন কৰা হৈছে। গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰিবলৈ প্ৰধানতঃ বৰ্ণনাত্মক আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ প্ৰয়োগ কৰা হৈছে।

১.০৩ তথ্য আহৰণৰ উৎস ঃ

পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰোঁতে ইয়ুঙৰ আৰ্কিটাইপ সম্বন্ধীয় গ্ৰন্থ তথা শৰৎচন্দ্ৰ গোস্বামীৰ গল্প সংকলনৰ সহায় লোৱা হৈছে। লগতে ইয়ুঙৰ ধাৰণা আৰু আৰ্কিটাইপৰ সম্পৰ্কে ইণ্টাৰনেটত উপলব্ধ প্ৰবন্ধবোৰ সহায় লোৱা হৈছে।

১.০৪ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰি উলিওৱাৰ উদ্দেশ্যসমূহ তলত উল্লেখ কৰা হ'ল ঃ

১) ইয়ুঙৰ 'মুখা' আৰ্কিটাইপৰ আলোকত গোস্বামীৰ গল্পৰ আলোচনা কৰা।

২) ব্যক্তিজীৱন আৰু সমাজ জীৱনক প্ৰভাৱিত কৰা 'মুখা'ৰ গুৰুত্ব সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা।

৩) মনস্তাত্ত্বিক দিশ সম্বলিত গল্পটোত লেখকৰ সাহিত্যিক কৌশল সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা।

২.০০ বিষয় পৰিচয় ঃ

২.০১ ইয়ুঙৰ মনোবিশ্লেষণাত্মক তত্ত্ব আৰু 'মুখা' আৰ্কিটাইপঃ

মনোবিজ্ঞানৰ জগতখনলৈ সামূহিক অচেতনতা, আৰ্কিটাইপ বা মূলৰূপ আৰু ব্যক্তিত্বৰ প্ৰকাৰ— অন্তৰ্মুখিতা আৰু বহিৰ্মুখিতাৰ ধাৰণা আগবঢ়োৱা মনোবিজ্ঞানীগৰাকী হৈছে কার্ল গুস্তাভ্ ইয়ুং। ইয়ুঙৰ বিশ্লেষণাত্মক মনোবিজ্ঞানত ব্যক্তিমনৰ অচেতন স্থিতিৰ ওপৰত সৰ্বাধিক গুৰুত্ব আৰোপ কৰা হয়। ইয়ুঙে এই অচেতন স্থিতিক ব্যক্তিগত অচেতনতা আৰু সামূহিক অচেতনতা হিচাপে দুটা ভাগত বিভক্ত কৰিছে। মনৰ ব্যক্তিগত অচেতন অংশত পাহৰণিৰ গৰ্ভত লীন যোৱা ব্যক্তিগত ঘটনা, স্মৃতি তথা অৱদমিত ইচ্ছা-আকাংক্ষাবোৰ সঞ্চিত হৈ থাকে। সাধাৰণতে সুপ্ত অৱস্থাত থকা ব্যক্তিগত ভয়, স্মৃতি অথবা অন্য কোনো অৱদমিত ইচ্ছা-আকাংক্ষা মনৰ এই অংশত থাকে। গতিকে এই ভাবানুভূতিবোৰ সদায়ে নেতিবাচক নহয়, কোনো কোনো ক্ষেত্ৰত এইবোৰ ইতিবাচক অথবা নিৰপেক্ষ প্ৰকৃতিৰো হ'ব পাৰে। (Mcleod) যি হওক, এই ভাবানুভূতিবোৰ ব্যক্তিভেদে বেলেগ বেলেগ হয়।

মনোবিজ্ঞানৰ জগতখনলৈ ইয়ুঙে আগবঢ়োৱা ধাৰণাসমূহৰ অন্যতম হৈছে সামূহিক অচেতনতাৰ ধাৰণা। এইবিধ অচেতনতা মানৱজাতিৰ আনুবংশিক গঠন তথা ঐতিহাসিক সংযোগসূত্ৰৰ আধাৰত এজনৰ সৈতে আনজনৰ পৰস্পৰ সম্পৰ্কযুক্ত হৈ চলি থাকে। ("Difference Between") সমগ্ৰ মানৱ জাতিৰ মাজত পৰিস্থিতিসাপেক্ষে লক্ষণীয় উমৈহতীয়া জন্মগত দিশ কিছুমান এই সামূহিক অচেতনতাৰ অন্তৰ্গত। এই দিশবোৰ প্ৰধানতঃ পূৰ্বপুৰুষৰ পৰা আহৃত, অৰ্থাৎ এইবোৰ আনুবংশিক। এই উমৈহতীয়া দিশবোৰৰ ওপৰত সামাজিক-সাংস্কৃতিক পৰিৱেশ তথা ব্যক্তিৰ অভিজ্ঞতাই অন্যতম ভূমিকা পালন কৰে। এই উমৈহতীয়া দিশবোৰ কিছুমান সার্বজনীন চিহ্ন অথবা আৰ্কিটাইপ বা মূলৰূপৰ যোগেদি প্ৰকাশ পায়। এইবোৰে ব্যক্তিৰ মানসিক জগতক প্ৰভাৱিত কৰি আচৰণকো নিয়ন্ত্ৰণ কৰিব পাৰে।

ইয়ুঙৰ বিশ্লেষণাত্মক মনোবিজ্ঞানত আৰ্কিটাইপ বা মূল ৰূপবোৰৰ এক বিশেষ গুৰুত্ব আছে। এইবোৰ ইয়ুঙে আগবঢ়োৱা সামূহিক অচেতনতাৰ ধাৰণাৰ অন্তৰ্গত। সমগ্ৰ মানৱজাতি একেডাল বিৱৰ্তনৰ জৰীৰে বান্ধ খাই থকা বাবে মানসিক জগতৰ অচেতন অৰ্থাৎ অজ্ঞাত অংশত কিছুমান একেধৰণৰ উমৈহতীয়া ভাবানুভূতি, আচৰণ তথা পৰিস্থিতিসাপেক্ষে প্ৰকাশ পোৱা প্ৰতিক্ৰিয়াৰ প্ৰতিৰূপ বা আৰ্হি পূৰ্বৰে পৰা সঞ্চিত হৈ থাকে। ইয়ুঙে এইবোৰক আৰ্কিটাইপ বা পূৰ্ব ৰূপ অথবা মূল ৰূপ বুলি অভিহিত কৰিছে। এইবোৰে ব্যক্তিৰ মন তথা আচৰণৰ ওপৰত যথেষ্ট প্ৰভাৱ পেলায়। সামাজিক, সাংস্কৃতিক তথা ভৌগোলিক আদি বিভিন্নতাৰ মাজতো এইবোৰ সলনি নহয়।

সামূহিক অচেতনতাৰ অন্তৰ্গত মূল ৰূপবোৰ সপোন, চিন্তাধাৰা, দৃষ্টিভংগী, আচৰণৰ প্ৰতিদৰ্শ অথবা অনুভূতি আদিৰ মাধ্যমেৰে সচেতন অৱস্থালৈ আহিব পাৰে। এইবোৰ কলা, ধৰ্ম, সাহিত্য, সংস্কৃতি আৰু প্ৰতীকী ৰচনাৰ যোগেদি প্ৰকাশ পায়। মূল ৰূপবোৰে সমগ্ৰ মানৱজাতিৰ সমূহীয়া অভিজ্ঞতাৰ বিভিন্ন দিশক প্ৰতিনিধিত্ব কৰে।(Mcleod) এইবোৰ প্ৰকৃততে নিৰ্দিষ্ট পৰিস্থিতিত আচৰণ প্ৰদৰ্শনৰ কিছুমান পূৰ্ব নিৰ্ধাৰিত পেটাৰ্ণ বা নমুনা অথবা আৰ্হিৰ লেখীয়া। সেয়ে এইবোৰ উমৈহতীয়া গুণবিশিষ্ট।

ইয়ুঙৰ বিশ্লেষণাত্মক মনোবিজ্ঞানত সামূহিক অচেতনতাৰ অন্তৰ্গত বহুতো আৰ্কিটাইপৰ ধাৰণাৰ ভিতৰত চাৰিটাক প্ৰধান স্থান দিয়া হৈছে— মুখা (The persona), ছাঁ (The shadow), বিপৰীত লিংগত নাৰীত্ব/পুৰুষত্বৰ লক্ষণ

(The anima/animus) আৰু আত্মা বা আত্মৰূপ (The self)। উপৰোক্ত আৰ্কিটাইপসমূহৰ ভিতৰত অন্যতম হৈছে 'Persona' (মুখা)। ইয়ুঙৰ ধাৰণা অনুসৰি মুখাই সাধাৰণতে সামাজিক ক্ষেত্ৰত ব্যক্তিক বিভিন্ন পৰিচয় প্ৰদান কৰে। এই দৃষ্টিৰে চাবলৈ গ'লে ব্যক্তি এগৰাকীৰ প্ৰকৃত পৰিচয়ৰ লগত মুখাৰ এক উপৰুৱা সম্পৰ্কহে থাকে। বিভিন্ন সামাজিক পৰিস্থিতিত ব্যক্তিয়ে বিভিন্ন পৰিচয় সচেতনভাৱে(কোনো কোনো ক্ষেত্ৰত অচেতনভাৱেও) গ্ৰহণ বা প্ৰদৰ্শন কৰে। মুখাৰ সম্পৰ্ক প্ৰধানকৈ বাহ্যিক জগতখনৰ সৈতে দেখা যায়।

...the persona was only a mask of the collective psyche. Fundamentally the persona is nothing real: it is a compromise between individual and society as to what a man should appear to be. He takes a name, earns a title, exercises a function, he is this or that. In a certain sense all this is real, yet in relation to the essential individuality of the person concerned it is only a secondary reality, a compromise formation, in making which others often have a greater share then he. The persona is a semblance, a two-dimensional reality, to give it a nickname.(Jung par. 246)

গতিকে বিভিন্ন সামাজিক পৰিস্থিতিত ব্যক্তিয়ে গঢ়ি তোলা সম্পৰ্কৰ ভিত্তিত মুখা বিভিন্ন ধৰণৰ হ'ব পাৰে। সেয়ে এজন ব্যক্তিয়ে পৰিস্থিতিবিশেষে বেলেগ বেলেগ মুখা পিন্ধিব পাৰে। 'মুখা'ক ইংৰাজীত persona বুলি কোৱা হয়। এই শব্দটো লেটিন 'persona' ৰ পৰা আহিছে। ইয়াৰ অৰ্থ হৈছে মুখা বা mask। এই শব্দটোৰ লগত গ্ৰীক নাট্য সংস্কৃতিৰ সম্পৰ্ক দেখা যায়। প্ৰাচীন গ্ৰীক নাটকত অভিনেতাই অভিনীত চৰিত্ৰক দৰ্শকৰ আগত পতিয়ন যোৱাকৈ তুলি ধৰিবলৈ ব্যৱহাৰ কৰা মুখাৰ লগত ইয়াৰ সম্পৰ্ক লক্ষণীয়। নাটকৰ অভিনেতাৰ নিচিনাকৈ ব্যক্তিয়ে সমাজৰ সদস্য হিচাপে বিভিন্ন পূৰ্ব-নিৰ্ধাৰিত, পূৰ্ব-প্ৰচলিত তথা সমসাময়িক নীতি-নিয়ম আৰু দায়িত্ব পালন কৰিবলগীয়া হয়। আৰু সেই দায়িত্ববোৰ পালন কৰোঁতে তেওঁ বিভিন্ন মুখাৰ আশ্ৰয় ল'বলগীয়া হয়। অৱশ্যে মুখাই এফালে তেওঁক সামাজিক স্তৰত সম্পৰ্ক স্থাপনত সহযোগ কৰিলেও আনফালে ই তেওঁৰ প্ৰকৃত সত্তাকো ঢাকি ৰাখে। "...a kind of mask, designed on the one hand to make a definite impression upon others, and, on the other, to conceal the true nature of the individual."(Jung par. 305)

'মুখা' ব্যক্তিমনৰ ইগ' (Ego) বা অহঙৰ সৈতে সম্পৰ্কিত, আৰু ই প্ৰধানকৈ মনৰ সচেতন স্থিতিক প্ৰতিনিধিত্ব কৰে। বিভিন্ন পৰিস্থিতিত সুন্দৰ ৰূপত গ্ৰহণ আৰু প্ৰদৰ্শন কৰা মুখা বা ব্যক্তিত্বৰ প্ৰকাশে ব্যক্তি এজনক সমাজৰ অন্য সদস্যৰ মাজত জনপ্ৰিয় কৰি তুলিব পাৰে; অন্যৰ তুলনাত বিশেষ স্বীকৃতি, সন্মান আদিৰ পাত্ৰও কৰি তুলিব পাৰে। ইয়াৰ মাজেৰে ব্যক্তিয়ে সমাজৰ অঙ্গীভূত সদস্য হিচাপে সকলোতকৈ গ্ৰহণযোগ্য বুলি বিবেচিত বাঞ্ছিত বা এক desirable পৰিচয় অৰ্থাৎ মুখা একোখন জগতৰ আগত প্ৰদৰ্শন কৰিব পাৰে। অৱশ্যে ইয়াৰ নেতিবাচক প্ৰভাৱো থাকে। সামাজিক স্থিতত, সেয়া লাগিলে ঘৰুৱা পৰিৱেশেই হওক অথবা কৰ্মস্থলীৰ পৰিৱেশেই হওক, ব্যক্তি এজনে মুখাৰ ওপৰত মুখা পিন্ধি আনৰ দ্বাৰা স্বীকৃত, গ্ৰহণযোগ্য ব্যক্তিগৰাকী হ'বলৈ চেষ্টা কৰে। কিন্তু বাহ্যিক জগতখনক কেন্দ্ৰ কৰি চলিবলৈ চেষ্টা কৰোঁতে জ্ঞাতে-অজ্ঞাতে তেওঁ নিজৰ প্ৰকৃত আত্ম-পৰিচয় (self)ৰ পৰা ক্ৰমাৎ আঁতৰি আহিবলৈ আৰম্ভ কৰে। গতিকে সামাজিক পৰ্যায়ত ব্যক্তি এগৰাকীয়ে যেনেদৰে নিজৰ দায়িত্ববোৰ সুচাৰুৰূপে পালন কৰাটো দৰকাৰী, ঠিক একেদৰে ব্যক্তি হিচাপেও নিজৰ লগত সু-সম্পৰ্ক ৰক্ষা কৰাটো বাঞ্ছনীয়। তাৰ বাবে প্ৰয়োজন আত্ম-উপলব্ধি বা self-realizationৰ। ইয়াৰ মাজেৰে গৈহে ব্যক্তি এগৰাকীয়ে দীৰ্ঘম্যাদী কাললৈ মানসিকভাৱে সুস্থ, সন্তুলিত(balanced) ব্যক্তিত্বৰ অধিকাৰী হৈ উঠিব পাৰে। মুখা ব্যক্তিৰ দৈনন্দিন জীৱনৰ এক এৰাব নোৱৰা আহিলা যদিও ই ব্যক্তিৰ প্ৰকৃত পৰিচয় নহয়। "Fundamentally the persona is nothing real: it is a compromise between individual and society as to what a man should appear to be."(Jung par. 246) গতিকে ই প্ৰধানতঃ ব্যক্তিৰ সচেতন স্থিতিক প্ৰতিনিধিত্ব কৰা ইগ'ৰ দ্বাৰা পৰিচালিত। অৱশ্যে মুখাই ব্যক্তিৰ সামাজিক ক্ৰিয়া-কলাপ, সম্পৰ্ক ৰক্ষা তথা ব্যক্তিৰ অবাঞ্ছিত আচৰণক ঢাকি ৰখাৰ ক্ষেত্ৰত এক গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা পালন কৰে।

৩.০০ ইয়ুঙৰ 'মুখা'ৰ ধাৰণাৰ আলোকত ৰোমাণ্টিক যুগৰ গল্প ঃ

অসমীয়া সাহিত্যৰ ৰোমাণ্টিক যুগটো সাধাৰণতে ১৮৮৯ চনৰ পৰা ১৯৪০ চনমানলৈ ধৰা হয়। এই যুগটো প্ৰধানকৈ গীতি-কবিতাৰ কাৰণে জনাজাত আছিল। অৱশ্যে কাব্য-সাহিত্যৰ লগতে পশ্চিমীয়া সাহিত্যৰ অনুকৰণত নিৰ্মিত আধুনিক শৈলীৰ গল্প-সাহিত্যৰ আৰম্ভণিও এই যুগতে হয়। এই ক্ষেত্ৰত অন্যতম ভূমিকা পালন কৰা গল্পকাৰগৰাকী হৈছে লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱা (১৮৬৪-১৯৩৮)। তেওঁ পুৱণি

সাধুকথাবোৰ একত্রিত কৰি নিজা ভাব-ভাষাৰে সেইবোৰক লিখিত ৰূপত প্রকাশ কৰিলে। তাৰ লগে লগে তেওঁ একশ্রেণী আধুনিক গঢ়ৰ গল্প-সাহিত্য ৰচনাতো মনোনিৰেশ কৰে। বেজবৰুৱাৰ গল্প-সাহিত্যত পুৰণি আৰু আধুনিক দুয়োটা শৈলীৰ সৃষ্টি সন্নিৰিষ্ট হৈছে। তেওঁৰ 'ঘৰ-পতা ককা', 'মূলা-খোৱা বুঢ়া' আদি গল্পত পুৰণি সাধুকথাৰ ঠাঁচটো লক্ষ্য কৰা যায়; আনহাতে 'ভদৰী', 'কন্যা', 'মুক্তি' আদি গল্প আধুনিক গঢ়ৰ। এই যুগত বেজবৰুৱাৰ বাহিৰেও অন্যান্য ভালেমান লিখকে গল্প ৰচনা কৰিছিল। অৱশ্যে আৰম্ভণি স্তৰৰ সৃষ্টি হোৱা বাবে এই যুগৰ সকলো গল্পত শিল্পগুণ ৰক্ষিত হোৱা নাই। তথাপি বেজবৰুৱা, শৰৎ চন্দ্র গোস্বামী (১৮৮৭-১৯৪৪), সূর্য্যকুমাৰ ভূঞা (১৮৯৪-১৯৬৪) আৰু নকুল চন্দ্র ভূঞা (১৮৯৫-১৯৬৮) আদি লিখকৰ কিছুমান গল্পত ব্যক্তিজীৱন আৰু সমাজ বাস্তৱতাৰ বিভিন্ন দিশ উন্মোচিত হৈছে। ইয়াৰ ওপৰত ভিত্তি কৰিয়ে গল্প তথা চৰিত্রৰ মনস্তাত্ত্বিক বিশ্লেষণৰ আলোচনাৰ ধাৰাটোৰ আৰম্ভণি ঘটে।

উল্লেখযোগ্য যে অসমীয়া সাহিত্যৰ মনস্তাত্ত্বিক বিশ্লেষণৰ ক্ষেত্রত অষ্ট্রিয়াৰ মনোবিজ্ঞানী চিগ্‌মাণ্ড ফ্রয়েডৰ চিন্তাধাৰাৰ যথেষ্ট প্রভাৱ পৰা দেখা যায়। ফ্রয়েডীয় তত্ত্বত ব্যক্তিৰ অৱদমিত আৱেগিক স্থিতিৰ ক্ষেত্রত যৌন প্রবৃত্তিক এক প্রধান কাৰক শক্তিৰ ৰূপত চোৱা হয়। ইয়াৰ সার্বজনিক দিশটোক ফ্রয়েডে 'Libido' (লিবিডো) বা কামশক্তি বুলি অভিহিত কৰিছে।(বৰুৱা ১১৮) "According to Sigmund Freud, the libido is a part of the id and is the driving force of all behavior."(Cherry) মন কৰিবলগীয়া যে মনস্তাত্ত্বিক ক্ষেত্রত ফ্রয়েডৰ বিপৰীতে অন্য মনোবিজ্ঞানী, চিন্তাবিদ অথবা দার্শনিকৰ প্রদত্ত ধাৰণা তথা তত্ত্বৰ আধাৰত অসমীয়া সাহিত্যৰ বিচাৰ তেনেকৈ দেখা নাযায়। ফ্রয়েডৰ পিছতে যিগৰাকী মনোবিজ্ঞানীয়ে নিজৰ চিন্তাধাৰাৰে মনোবিজ্ঞানৰ ক্ষেত্রখনলৈ নতুনত্ব আনিলে তেওঁ হৈছে ছুইজাৰলেণ্ডৰ কার্ল গুস্তাভ্ ইয়ুং। ইয়ুঙে ফ্রয়েডে আঙুলিয়াই দিয়া মানৱ আচৰণক নিয়ন্ত্রণ কৰা 'লিবিডো' বা কামশক্তিৰ ধাৰণাৰ পৰা আগুৰাই গৈ মানসিক জগতখনৰ সৃষ্টিশীল প্রয়োজনীয়তাসমূহকো সামৰিলে। ই ফ্রয়েডে উল্লেখ কৰা যৌন আকাংক্ষাসর্বস্ব ক্ষেত্রখনক এক বহল মাত্রা প্রদান কৰিলে। ("Difference Between") ইয়াৰ লগতে ইয়ুঙে সামূহিক অচেতনতা আৰু তাৰ অন্তর্গত আর্কিটাইপ বা পূর্ব ৰূপ অথবা মূল ৰূপ আদিৰ ধাৰণা আগবঢ়াই মনোবিজ্ঞান তথা মনস্তাত্ত্বিক অধ্যয়নৰ ক্ষেত্রলৈ নতুনত্ব কঢ়িয়াই আনিলে।

ৰোমাণ্টিক যুগৰ সাহিত্যিকিনিক বিভিন্ন সময়ত ৰোমাণ্টিক ভাববাদী অথবা কেতিয়াবা সাধাৰণভাৱে বিশ্লেষণাত্মক দৃষ্টিৰে চোৱা হৈছে। কিছু কিছু গল্পৰ মনস্তাত্ত্বিক লক্ষণসাপেক্ষে সেইসমূহৰ মনস্তাত্ত্বিক অধ্যয়নো কৰিবলৈ প্রয়াস কৰা হৈছে। যেনে 'মুক্তি', 'পাতমুগী' আদি। তথাপি এই ৰোমাণ্টিক যুগৰ গল্পত অন্য কিছুমান দিশো আছে, যিবোৰ ইয়ুঙৰ আর্কিটাইপৰ ধাৰণাৰ আধাৰত বিচাৰ কৰি চাব পৰা যায়। ইয়ুঙে নির্দেশ কৰা আর্কিটাইপৰ ভিতৰত চাৰিটা আর্কিটাইপক প্রধান স্থান দিয়া হয়। এইসমূহ হৈছে--- মুখা, ছাঁ, বিপৰীত লিংগত নাৰীত্ব/পুৰুষত্বৰ লক্ষণ আৰু আত্মা বা আত্ম ৰূপ।

ৰোমাণ্টিক যুগৰ গল্পসমূহলৈ লক্ষ্য কৰিলে পোনপ্রথমে বেজবৰুৱাৰ একশ্রেণীৰ গল্পত লেখকৰ সংস্কাৰকামী দৃষ্টিভংগী লক্ষ্য কৰা যায়। তেওঁ ঊনবিংশ শতিকাৰ শেষ আৰু বিংশ শতিকাৰ আৰম্ভণি কালৰ অসমীয়া সমাজখনক কেন্দ্র কৰি বহুতো গল্প ৰচনা কৰিছে। তেওঁৰ গল্পসমূহত এফালে তৎকালীন ইংৰাজ শাসনাধীন সমাজৰ শিক্ষিত, চাকৰিজীৱি, আভিজাত্যৰ ধ্বজা বহনকাৰী, মধ্যবিত্ত শ্রেণীটোৰ ভেম-ভণ্ডামি, অন্তঃসাৰশূন্যতা প্রকাশ পাইছে। আনফালে কিছুমান গল্পত পুৰণি পৰম্পৰাগত সমাজখনত পূর্বৰে পৰা প্রচলিত কিছুমান ৰীতি-নীতিৰ লগত সংলগ্ন বিভিন্ন কুসংস্কাৰক তুলি ধৰা হৈছে। বেজবৰুৱাৰ সাহিত্যিক আৰু সমাজ-চেতনা উভয়ে বিশাল স্তৰৰ আছিল। গতিকে ব্যৱসায়সূত্রে উৰিষ্যা, সম্বলপুৰ আদি স্থানত থকা সময়ছোৱাত সেই অঞ্চলৰ সমাজৰ পৰিস্থিতিৰ আধাৰতো তেওঁ কিছুমান গল্প ৰচনা কৰে। যেনে— 'কন্যা', 'ৰতনমুণ্ডা' আদি।

বেজবৰুৱাৰ কিছুমান গল্পত মনস্তাত্ত্বিক দিশ লক্ষ্য কৰা যায়। বেজবৰুৱাৰ গল্পসমূহৰ পৰা নির্বাচিত কেইটামান গল্প যেনে— 'মলক গুইন্-গুইন', 'মিষ্টাৰ ফিপ্সন', 'কন্যা', 'আমাৰ সংসাৰ', 'জগৰা মণ্ডলৰ প্রেমাভিনয়', 'ভোকেন্দ্র বৰুৱা', 'বিহু' আৰু 'ৰছিত' এইকেইটা গল্পক ইয়ুঙৰ আর্কিটাইপৰ ধাৰণাৰ আধাৰত আলোচনা কৰিব পাৰি। বেজবৰুৱাৰ একশ্রেণীৰ গল্পত ইংৰাজ শাসনাধীন সমাজত কিছুমান অসমীয়া লোকে শিক্ষা লাভ তথা চাকৰিত নিযুক্তি লাভ কৰাৰ পাছত পূর্বৰ সকলো শিপাৰ পৰা আঁতৰি নিজৰ একোটা পৃথক ব্যক্তিত্ব গঢ়ি তুলিবলৈ চেষ্টা চলোৱা দেখা যায়। তেওঁলোকে নতুনকৈ

নির্মাণ কৰি লোৱা ব্যক্তিত্বৰ সৈতে নিজৰ সমগ্ৰ সত্তাক সাঙুৰি পেলাইছে। ফলত স্থান, কাল, পাত্ৰ সকলো বিষয়ৰ পাৰ্থক্যক উপেক্ষা কৰি নতুনকৈ পিন্ধি লোৱা মুখাখনকে একমাত্ৰ সত্য জ্ঞান কৰি নানা আচৰণ প্ৰদৰ্শন কৰিছে। বেজবৰুৱাৰ 'মলক গুইন্-গুইন্ ' গল্পটোত এসময়ৰ মলখুৰে নিজৰ শিক্ষা-দীক্ষা, উপস্থিত বুদ্ধি তথা তোষামোদকাৰী চৰিত্ৰৰ বলত চাকৰিত নিযুক্তি লাভ কৰি নিজৰ মাক-দেউতাক তথা ভায়েকৰ প্ৰতি নিষ্ঠুৰ আচৰণ প্ৰদৰ্শন কৰিছে। 'ভোকেন্দ্ৰ বৰুৱা' গল্পতো ভোকোন্দাই নামৰ চৰিত্ৰটোৱে আধুনিকতাৰ গ্ৰাসত পৰি নিজৰ নাম সলনি কৰিছে। লগতে চিঠিৰ মাধ্যমেৰে মাক-দেউতাকলৈ তেওঁলোকৰ নাম আৰু দেউতাকক তেওঁৰ কাম সলনি কৰা নিৰ্দেশ দিছে। বেজবৰুৱাৰ 'মিষ্টাৰ ফিন্সন', 'আমাৰ সংসাৰ', 'জগৰা মণ্ডলৰ প্ৰেমাভিনয়' আদি গল্পত চৰিত্ৰবোৰে ইংৰাজ শাসনাধীন সমাজখনত নিজৰ স্থিতি উন্নত দেখুৱাবলৈ আধুনিক হোৱাৰ মুখা পিন্ধিবলৈ চেষ্টা চলাইছে। সেইদৰে, উৰিষ্যাৰ পটভূমিত ৰচিত 'কন্যা' গল্পটোত এহাল কোল ডেকা-গাভৰুৰ যোগেদি সমাজৰ দ্বাৰা নিৰ্দেশিত আচৰণ প্ৰদৰ্শনৰ বৃথা চেষ্টা লক্ষ্য কৰা যায়।

ৰোমাণ্টিক যুগৰ অন্য এগৰাকী গল্পকাৰ নকুল চন্দ্ৰ ভূঞাৰ 'কাৰ দোষত', 'ৰেলত এবেলা', 'চোৰ', 'পিলিঙা ডেকা নোমল', 'গোহাঁইদেও', 'গ্ৰেণ্ড লেডী', 'অন্তিম মিলন', 'নিলগতে', 'জগতে কিয় মিয়াদ খাটিলে' আৰু 'জকাইচুকীয়া ডেকাৰ ৰাজনীতি' গল্পত ইয়ুঙৰ মুখা আৰ্কিটাইপৰ লগত সম্পৰ্কিত দিশ লক্ষ্য কৰা যায়। নকুল চন্দ্ৰ ভূঞাৰ গল্পৰ চৰিত্ৰবোৰে সামাজিক, ধাৰ্মিক, ৰাজনৈতিক ক্ষেত্ৰত বিভিন্ন মুখাৰ আশ্ৰয় লৈছে। তেওঁৰ 'ৰেলত এবেলা' আৰু 'পিলিঙা ডেকা নোমল' গল্প দুটা বেজবৰুৱাৰ 'মলক গুইন্-গুইন্' আৰু 'ভোকেন্দ্ৰ বৰুৱা' গল্পৰ সমধৰ্মী। বেজবৰুৱাৰ মলখু আৰু ভোকোন্দাইৰ দৰে ভূঞাৰ অনামী বৰলোকৰ সন্তান আৰু নোমল চৰিত্ৰ দুটাই আধুনিকতাৰ মুখা পিন্ধি নানান অস্বাভাৱিক আচৰণ প্ৰদৰ্শন কৰা দেখা গৈছে। ভূঞাৰ 'কাৰ দোষত' আৰু 'নিলগতে' গল্প দুটাত জনতাৰ মাৰ্গদৰ্শনকাৰী ধাৰ্মিক গুৰুৰ অনিষ্টকাৰী দুমুখীয়া ব্যক্তিত্ব প্ৰকাশ পাইছে। সেইদৰে, উপৰোক্ত অন্যান্য গল্প কেইটাত সামাজিক আৰু ৰাজনৈতিক পৰিপ্ৰেক্ষিতত চৰিত্ৰবোৰে মুখাৰ আশ্ৰয় লোৱা দেখা গৈছে।

ৰোমাণ্টিক যুগত বেজবৰুৱাৰ পিছতে সমালোচকৰ দৃষ্টি আকৰ্ষণ কৰা গল্পকাৰগৰাকী হৈছে শৰৎ চন্দ্ৰ গোস্বামী। তেওঁৰ কিছুমান গল্পকো ইয়ুঙৰ আৰ্কিটাইপৰ ধাৰণাৰ আধাৰত বিচাৰ কৰিব পৰা যায়। অৱশ্যে গোস্বামীৰ প্ৰাপ্ত গল্পসমূহৰ ভিতৰত 'মুখা' আৰ্কিটাইপৰ আধাৰত বিচাৰ কৰিব পৰাকৈ মাথোন এটা গল্পই পোৱা গৈছে। গল্পটো হৈছে লেখকৰ *বাজিকৰ আৰু আন আন গল্প* শীৰ্ষক গল্প সংকলনৰ অন্তৰ্গত দ্বিতীয়টো গল্প 'অন্তৰ আবৰণ'। গল্পটোত ঐশ্বৰিক জগতৰ পটভূমিত মানৱ সমাজৰ সত্যতা প্ৰকট হৈছে। ঐশ্বৰিক পৰিৱেশ আধুনিক গল্পৰ নিৰ্মাণ শৈলীৰ পৰিপন্থী যদিও লেখকে ইয়াক গল্পটোত যথোপযুক্তভাৱে সংযোগ ঘটোৱা দেখা যায়। আমাৰ গৱেষণা পত্ৰখনত ইয়ুঙৰ 'মুখা' আৰ্কিটাইপৰ ধাৰণাৰ আধাৰত ৰোমাণ্টিক যুগৰ গল্পকাৰ শৰৎ চন্দ্ৰ গোস্বামীৰ 'অন্তৰ আবৰণ' গল্পটোক আলোচনা কৰাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

৪.০০ প্ৰস্তাৱিত বিষয়ৰ পৰ্যালোচনা ঃ

৪.০১ শৰৎ চন্দ্ৰ গোস্বামীৰ 'অন্তৰ আবৰণ' ঃ

আমাৰ আলোচ্য পত্ৰখনত জোনাকী যুগৰ অন্যতম গল্পকাৰ শৰৎ চন্দ্ৰ গোস্বামীৰ গল্প 'অন্তৰ আবৰণ'ক ইয়ুঙৰ 'মুখা' আৰ্কিটাইপৰ ধাৰণাৰ আধাৰত আলোচনা কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে। জোনাকী যুগৰ গল্পসকলৰ ভিতৰত লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ পিছতে শৰৎ চন্দ্ৰ গোস্বামীৰ নাম উল্লেখযোগ্য। সহজ-সৰল প্ৰকাশভংগী, বহল দৃষ্টিভংগী আৰু মানুহ তথা ইতৰ জীৱ-জন্তুৰ প্ৰতি গভীৰ সহানুভূতিশীলতা তেওঁৰ লেখনশৈলীৰ অন্যতম দিশ। তেওঁৰ 'পিয়াহৰ পানী', 'চিকাৰি আৰু হাঁহ' আৰু 'সামান্য প্ৰাণী' আদি গল্পত লেখকৰ সহানুভূতিশীল, মানৱতাবাদী বহল দৃষ্টিভংগী দেখা যায়। সমালোচক মহেশ্বৰ নেওগে তেওঁৰ *অসমীয়া সাহিত্যৰ ৰূপৰেখা* (১৯১৩) গ্ৰন্থত ইতৰ প্ৰাণীৰ প্ৰতি প্ৰকাশ পোৱা সহানুভূতিশীলতাক লেখকৰ ৰচনাশৈলীৰ অন্যতম বিশেষত্বৰূপে অভিহিত কৰিছে। (নেওগ ৩০২)

গোস্বামীৰ *বাজিকৰ আৰু আন আন গল্প* শীৰ্ষক সংকলনৰ দ্বিতীয়টো গল্প হৈছে 'অন্তৰ আবৰণ'। গল্পটোত মানৱ মন আৰু চৰিত্ৰৰ আঁৱৰ গোপন স্বাৰ্থ আৰু স্বৰূপ প্ৰকাশ পাইছে। গল্পটোৰ পটভূমি নিৰ্মাণত কাল্পনিক দৈৱিক জগতৰ উপস্থিতি লক্ষ্য কৰা যায়। অৱশ্যে এই দৈৱিক জগতৰ সহযোগতে গল্পৰ কাহিনীয়ে আধুনিক মানৱ মনৰ গোপন চিত্ৰ তুলি ধৰিছে।

ইয়ুঙৰ ধাৰণা অনুসৰি 'মুখা' আৰ্কিটাইপে ব্যক্তিৰ সমাজস্বীকৃত ৰূপটোক প্ৰতিনিধিত্ব কৰে। মুখাই এফালে

ব্যক্তিৰ সৰ্বজনস্বীকৃত ৰূপটোক তুলি ধৰে, আৰু আনফালে ব্যক্তিৰ ব্যক্তিত্বৰ ভাল-বেয়া দুয়োটা দিশক সামৰি ৰখা সমগ্ৰ সত্তাক ঢাকি ৰাখে। উল্লেখযোগ্য যে গোস্বামীৰ গল্পটোত এই ৰূপটোক অন্তৰ আৱৰণ হিচাপে অভিহিত কৰা হৈছে।

আলোচিত গল্পটোত নিৰ্দিষ্টকৈ কোনো চৰিত্ৰৰ ব্যক্তিত্বত মুখা দেখা নাযায়। গল্পটোত সমূহীয়া ৰূপতহে মুখাৰ গুৰুত্ব প্ৰতিফলিত হৈছে। গল্পটোৰ কাহিনী অনুসৰি পাৰ্বতীৰ অনুৰোধত মহাদেৱে মৰ্ত্যৰ মানুহৰ মাজত সৌহাদ্যপূৰ্ণ, মুক্ত সম্পৰ্ক স্থাপনৰ বাবে সিহঁতৰ অন্তৰৰ আৱৰণখন খুলি দিছে। কিন্তু তাৰপিছতে মৰ্ত্যবাসীৰ মাজত হাহাকাৰৰ সৃষ্টি হৈছে। দুই-চাৰিজনক বাদ দি সকলোৱে পৰস্পৰৰ সংগ ত্যাগ কৰি বনলৈ গৈ সিংহ, বাঘ, ভালুক আনকি বিষাক্ত সাপ আদি বন্যপ্ৰাণীৰ ওচৰত আশ্ৰয় লৈছে। "মানুহে মানুহৰ ভয়ত বিতত হৈ কালসৰ্পকো সাবটি ধৰিছেগৈ।"(গোস্বামী ১৪) গতিকে এইখিনিতে মুখাৰ গুৰুত্ব প্ৰকাশ পায়। ইয়ুঙে যদিও মুখাক 'semblance' অথবা "two-dimensional reality"(Jung par. 246) আখ্যা দিছিল, তথাপি ব্যক্তি আৰু সমাজৰ মাজত সু-সম্পৰ্ক, ভাৰসাম্যতা বজাই ৰখাত মুখাৰ গুৰুত্ব আছে। মুখা বা অন্তৰৰ আৱৰণখন থকালৈকে মৰ্ত্যবাসীয়ে ভাল-বেয়া সমস্ত ভাব ঢাকি এখন সমাজতে একেলগে বাস কৰিছিল। কিন্তু অন্তৰৰ আৱৰণখন নাইকিয়া হোৱাৰ লগে লগে মানুহবোৰে পৰস্পৰে পৰস্পৰৰ মনৰ সুপ্ত ঈৰ্ষা-অসূয়া আদি ক্ৰুৰ আৰু জান্তুৰ দিশ(ইয়ুঙীয় তত্ত্বত এইবোৰক Shadow অৰ্থাৎ ছাঁ বুলি কোৱা হৈছে)বোৰৰ প্ৰতি সচেতন হৈ উঠিছে। সেয়ে সিহঁতে পৰস্পৰৰ মানৱ সংগৰ বিপৰীতে বন্যপ্ৰাণীৰ সংগ অধিক নিৰাপদ বুলি বিশ্বাস কৰিছে।

...যেতিয়ালৈকে মানুহে মানুহৰ অন্তৰ দেখা নাছিল, তেতিয়ালৈকে বাহিৰৰ কাৰ্যকে অন্তৰৰ ভাৱ বুলি ভাবি মানুহে একেলগে বসবাস কৰি আছিল। যেতিয়ালৈকে মুখৰ কথাই অন্তৰৰ ভাৱ গোপন কৰি ৰাখিব পাৰিছিল, নেদেখা উদ্দেশ্যবোৰ দেখা কামৰ আঁৰত লুকাই আছিল, তেতিয়ালৈকে মানুহে বিশ্বাস-অবিশ্বাস দয়া-নিৰ্দয়তা মৰম-ঘৃণাৰ মাজত এক ৰকমে দিন কটাব পাৰিছিল। তোমাৰ বৰৰ প্ৰভাৱত মানুহৰ হৃদয়-পট মুকলি হল, মানব-মনৰ স্বাৰ্থ-বিজড়িত হিতৈষণাৰ ভিতৰ ওলাই পৰিল, ক্ৰুৰতা প্ৰণোদিত দয়াৰ অন্তস্থল দেখা গলহুঁ তেতিয়া মানুহে দেখিলে অৱস্থা বুজি মানুহ বাঘতকৈও ভয়ঙ্কৰ, ভালকতকৈও নিষ্ঠুৰ আৰু সাপতকৈও ক্ৰুৰ। সেই দেখি আজি মানব-সমাজৰ এই দশা দেখিছা।(গোস্বামী ১৫-১৬)

প্ৰকৃতাৰ্থত সামাজিক পৰিস্থিতিত কোনো মানুহে আনৰ প্ৰতি এক নিৰ্দিষ্ট ধৰণৰ ভাবনাৰে পৰিচালিত নহয়। সামাজিক সম্পৰ্কৰ জটিলতাত পৰিস্থিতিসাপেক্ষে এজন ব্যক্তিয়ে সমাজৰ অন্যান্য সদস্যৰ প্ৰতি ভাল-বেয়া যিকোনো এবিধ অথবা দুয়োবিধৰ সংমিশ্ৰিত ৰূপ একোটা পোষণ কৰে। সমাজত কেতিয়াবা শত্ৰুজ্ঞান কৰা মানুহৰ লগতো ব্যক্তিয়ে লেন-দেন অথবা সম্পৰ্ক বৰ্তাই ৰাখিবলগীয়া হয়। এইক্ষেত্ৰত মুখাই ব্যক্তিৰ মনৰ নেতিবাচক অথবা সমাজৰ দ্বাৰা অনিষ্টকাৰী বুলি বিবেচিত আচৰণক ঢাকি ৰাখি সমাজৰ সভ্য সদস্যৰূপে আত্মপ্ৰকাশ কৰাত সহায় কৰে। সেয়ে মুখাৰ গুৰুত্ব ব্যক্তিজীৱন আৰু সমাজ জীৱন উভয়তে লক্ষ্য কৰা যায়।

'অন্তৰ আবৰণ' গল্পটোৰ আন এক উল্লেখযোগ্য দিশ হৈছে দৈৱিক নিয়ন্ত্ৰকৰ উপস্থিতি। যুক্তিনিৰ্ভৰ বিজ্ঞানসন্মত দৃষ্টিৰে এই কাল্পনিক নিয়ন্ত্ৰকৰ ভূমিকা বা অস্তিত্বক স্বীকাৰ কৰিব নোৱাৰি। কিন্তু গল্পটোৰ কাহিনীৰ বিকাশত এই নিয়ন্ত্ৰকৰ ভূমিকা মন কৰিবলগীয়া। প্ৰকৃততে মানৱ মন তথা মানৱ সমাজৰ ভেদ খোলাৰ বাবে এই সমাজখনৰ বাহিৰৰ এক স্বাধীন সত্তাৰ কল্পনা কৰাটো লেখকৰ এক কৌশলী উপস্থাপন শৈলী বুলি ক'ব পৰা যায়। লেখকে দৈৱিক নিয়ন্ত্ৰকৰ ঠাইত যদি মানৱ সমাজখনৰ ভিতৰৰে কোনো ব্যক্তি নাইবা সমূহক ৰাখি এই চিত্ৰখন তুলি ধৰাৰ প্ৰয়াস কৰিলেহেঁতেন তেন্তে সেয়া নিশ্চিতভাৱে পতিয়নযোগ্য নহ'লহেঁতেন। লগতে কোনো নিৰ্দিষ্ট সাধু চৰিত্ৰৰ উপস্থিতিয়ে লেখকৰ বক্তব্য বিষয়ক অতিমাত্ৰা সংস্কাৰকামী মনোভাৱেৰে দোষদুষ্ট কৰি তুলিলেহেঁতেন। আচলতে লেখকে যি ভেদ খুলি মানৱ সমাজৰ প্ৰকৃত স্বৰূপ তুলি ধৰিছে সেই সীমাবদ্ধতাৰ পৰা দৈৱিক নিয়ন্ত্ৰক মুক্ত, সেয়ে এই উপস্থাপন অধিক কৌশলী আৰু দূৰদৃষ্টিসম্পন্ন হোৱা বুলি ভবাৰ থল আছে। তাৰ লগতে মুখা বা অন্তৰ আৱৰণে ব্যক্তিজীৱন আৰু সমাজ জীৱনত পেলোৱা প্ৰভাৱ তথা গুৰুত্বও সবলভাৱে প্ৰকাশ পাইছে।

শৰৎ চন্দ্ৰ গোস্বামী এগৰাকী আৰম্ভণি কালৰ সাহিত্যিক হোৱা বাবে তেওঁৰ গল্পৰ ভাব, ভাষা অথবা প্ৰকাশভংগীত কোনো ধৰণৰ জটিলতা দেখা নাযায়। লগতে তেওঁৰ সহানুভূতিশীল মনটোৱে মানৱ সমাজ, জন্তু সমাজ সকলোকে

একসম দৃষ্টিৰে চোৱাৰ প্ৰতি আগ্ৰহী আছিল। ঊনবিংশ শতিকাৰ শেষ আৰু বিংশ শতিকাৰ আৰম্ভণিৰ সময়ছোৱাত দেশ ইংৰাজৰ শাসনলৈ অহাৰ পাছত অসমৰ লোকসকল শৈক্ষিক, সামাজিক, ৰাজনৈতিক, অৰ্থনৈতিক তথা মানসিক সকলো ক্ষেত্ৰতে ক্ৰমাৎ এক নতুন ব্যৱস্থাৰ সন্মুখীন হয়। ইতিমধ্যে আহোমৰ দুৰ্বল নেতৃত্ব, মানৰ আক্ৰমণ আদিত জুৰুলা হৈ পৰা অসমৰ বহুতো লোকে ইংৰাজ শাসকক ত্ৰাণকৰ্তাৰ ৰূপত চাবলৈ লয়। একশ্ৰেণীৰ লোকে ইংৰাজ শাসনৰ প্ৰতি মুক্তমনে সন্তুষ্টি প্ৰকাশ কৰে। আনহাতে কিছুমান লোকে স্বাধীন হোৱাৰ বাঞ্ছা কৰিবলৈ লয়। যিসকল লোকে ইংৰাজ প্ৰৱৰ্তিত আধুনিক শিক্ষাৰে শিক্ষিত হৈ উঠে অথবা চাকৰিত নিযুক্তি লাভ কৰে তেওঁলোক ইংৰাজৰ শাসনৰ প্ৰতি অধিক আনুগত্যশীল হ'বলৈ লয়। তাৰ মাজৰে কিছুমান অসমীয়া লোকে শিক্ষিত হৈ, চাকৰি লাভ কৰি অথবা ইংৰাজৰ বিলাসিতা, জাক-জমকতাৰে পূৰ্ণ পশ্চিমীয়া জীৱনশৈলীৰ নিকট সংস্পৰ্শলৈ আহি আভিজাত্যৰ মুখা পিন্ধিবলৈ লয়। বেজবৰুৱাৰ 'মলক গুইন্-গুইন্', 'ভোকেন্দ্ৰ বৰুৱা', 'জগৰা মণ্ডলৰ প্ৰেমাভিনয়' আৰু 'ৰছিত' অথবা নকুল চন্দ্ৰ ভূঞাৰ 'ৰেলত এবেলা', 'পিলিঙা ডেকা নোমল' আদি গল্পত আভিজাত্যৰ অন্তঃসাৰশূন্য মুখা পিন্ধা বিভিন্ন চৰিত্ৰ আৰু সিহঁতৰ অস্বাভাৱিক, স্ব-বিৰোধী আচৰণ লক্ষ্য কৰা যায়। গতিকে তৎকালীন অসমীয়া সমাজখনত একেলগে বসবাস কৰা মানুহৰ মাজতে বিচিত্ৰ ৰূপে বিৰাজ কৰিবলৈ ধৰে। বাহিৰে ওচৰ-চুবুৰীয়াৰ লগত মাত-কথাত সদ্ আচৰণ প্ৰদৰ্শন কৰিলেও ভিতৰি মানুহবোৰৰ মাজত ঈৰ্ষা-অসূয়া, উচ্চাত্মিকা, উপেক্ষা আদি ভাববোৰে স্থান পাবলৈ লয়। আনকি অসমীয়া লোকসকলৰ নিজৰ ঘৰ, পৰিয়ালৰ মাজতে সম্পৰ্কত ক্ৰমাৎ ফাট্ মেলিবলৈ আৰম্ভ কৰা দেখা যায়। বেজবৰুৱাৰ 'মলক গুইন্-গুইন্', 'ভোকেন্দ্ৰ বৰুৱা', 'ৰছিত' আদি গল্পত পৰিয়ালকেন্দ্ৰিক অৱক্ষয় লক্ষ্য কৰা যায়। সেইদৰে, নকুল চন্দ্ৰ ভূঞাৰ 'ৰেলত এবেলা', 'গোহাঁইদেও', 'গ্ৰেণ্ড লেডী' আদি গল্পত জাতিগত আৰু সামাজিক অৱক্ষয়ে ক্ৰমাৎ এক প্ৰবল সমস্যাৰ ৰূপত দেখা দিছে। এগৰাকী সচেতন সাহিত্যিক হিচাপে গোস্বামীৰ দৃষ্টিৰ পৰা মানৱ সমাজৰ এইবোৰ বিষয় নিশ্চিতভাৱে বাদ পৰি যোৱা নাছিল। লেখকে 'অন্তৰ আবৰণ' গল্পটোত মানৱ সমাজৰ পৰস্পৰ ঈৰ্ষা-অসূয়া, শত্ৰুতাৰে ভৰা জটিল মানসিক জগতৰ প্ৰকৃত স্বৰূপ উদ্ঘাটন কৰাৰ প্ৰয়াস কৰিছে। অৱশ্যে লেখক দূৰদৃষ্টিসম্পন্ন, আশাবাদী আৰু সহানুভূতিশীল মনৰ লোক বাবে গল্পটোৰ সামৰণি ইতিবাচকভাৱে ঘটা বুলি ক'ব পাৰি।

৪.০২ সামৰণি আৰু সিদ্ধান্ত ঃ

শৰৎ চন্দ্ৰ গোস্বামীৰ গল্পসমূহত লেখকে সহজ-সৰল প্ৰকাশভংগী আৰু সহানুভূতিশীল দৃষ্টিৰে মানুহৰ জীৱনক অধ্যয়ন আৰু সাহিত্যত উংকীৰ্ণ কৰা দেখা যায়। ইতৰ প্ৰাণীৰ প্ৰতি লেখকে পোষণ কৰা সহানুভূতিশীল মনোভাৱে তেওঁৰ গল্পক এক অতিৰিক্ত মানৱিক সৌন্দৰ্য প্ৰদান কৰে। লেখকে 'অন্তৰ আবৰণ' শীৰ্ষক গল্পটোত ঈশ্বৰৰ প্ৰসংগ উত্থাপন কৰি তাৰ সমান্তৰালভাৱে মানুহৰ শৃংখলিত সমাজখনৰ আঁৰৰ সত্যতাক তুলি ধৰিছে। অৱশ্যে লেখকৰ উদ্দেশ্য ঐশ্বৰিক জগতখন তুলি ধৰাটো নহয়, বৰঞ্চ মানৱ সমাজৰ প্ৰকৃত স্বৰূপ গল্পটোৰ যোগেদি প্ৰতিফলিত হৈছে। শুদ্ধ-অশুদ্ধৰ বোধ নথকা প্ৰবৃত্তিনিৰ্ভৰ ইতৰ প্ৰাণীৰ বিপৰীতে মানুহৰ অন্তৰৰ আৱৰণখনে ব্যক্তিজীৱনত পেলোৱা প্ৰভাৱক আমাৰ গৱেষণা পত্ৰখনত ইয়ুঙৰ 'মুখা'ৰ ধাৰণাৰ আধাৰত চোৱা হৈছে। মানুহৰ অন্তৰৰ গোপন ভাব তথা চাৰিত্ৰিক সত্যতাক ঢাকি ৰাখিব পৰা আৱৰণখন ইয়ুঙীয় 'মুখা'ৰ নামান্তৰ মাথোন। আলোচ্য গৱেষণা পত্ৰৰ যোগেদি নিম্নলিখিত সিদ্ধান্তসমূহত উপনীত হ'ব পৰা গৈছে।

১) জোনাকী যুগৰ গল্পবোৰক বিভিন্ন দৃষ্টিৰে অধ্যয়ন কৰা হৈছে। এই ক্ষেত্ৰত মনস্তাত্ত্বিক অধ্যয়নো বিশেষভাৱে উল্লেখযোগ্য। ফ্ৰয়েডৰ চিন্তাধাৰাৰ ধাৰাৰ আধাৰত এই যুগৰ বিভিন্ন গল্প(যেনেঃ বেজবৰুৱাৰ 'মুক্তি', 'পাতমুগী' আদি)ৰ অধ্যয়ন দেখা যায়। ইয়ুঙৰ মনোবিশ্লেষণাত্মক তত্ত্বৰ অন্যতম দিশ 'আৰ্কিটাইপ'ৰ আলোকতো এই যুগৰ গল্পৰ অধ্যয়ন কৰিব পৰা যায়। ই সাহিত্যৰ মনস্তাত্ত্বিক আলোচনাক এক সুকীয়া মাত্ৰা প্ৰদান কৰে।

২) ব্যক্তিজীৱন আৰু সমাজ জীৱনত 'মুখা' আৰ্কিটাইপৰ গুৰুত্ব প্ৰকাশ পাইছে। 'মুখা'ই যদিও ব্যক্তি-চেতনাৰ বৃহৎ অংশ অধিকাৰ নকৰে তথাপি ব্যক্তিৰ সামাজিক জীৱনৰ সৈতে সুস্থ সমাযোজনৰ হেতু 'মুখা'ৰ স্বৰূপ আৰু গুৰুত্বৰ সম্যক জ্ঞান ই দাবী কৰে।

৩) গল্পকাৰে এই গল্পটোত বাস্তৱ আৰু দৈৱিক দুখন জগতৰ সমাৱেশ ঘটাইছে। অৱশ্যে ই কাহিনীৰ গতি ব্যাহত নকৰে, বৰঞ্চ এখন জগতক সমুখত ৰাখি আনখন জগতৰ ভেদ খোলাৰ ক্ষেত্ৰত ই গল্পকাৰৰ কৌশলী উপস্থাপন আৰু দূৰদৃষ্টিৰ উমান দিয়ে। ❑

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী

অসমীয়া

মুখ্য উৎসঃ

গোস্বামী, শ্ৰীশৰৎ চন্দ্ৰ। *বাজিকৰ আৰু আন আন গল্প*। যোৰহাট। শ্ৰীঅজধৰ বৰকটকী, বৰকটকী কোম্পানী। ১৯৫০। archive.org/details/in.ernet.dli.2015.452242. PDF file.

গৌণ উৎসঃ

গগৈ, হৃদয়ানন্দ(সম্পা.)। *লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ গল্প সমগ্ৰ*। গুৱাহাটী। জ্যোতি প্ৰকাশন। ২০১৮।

গোস্বামী, যতীন্দ্ৰ নাথ। *নকুল চন্দ্ৰ ভূঞা ৰচনা সমগ্ৰ*। গুৱাহাটী। লয়ার্ছ বুক ষ্টল। ১৯৯৬।

নেওগ, মহেশ্বৰ। *অসমীয়া সাহিত্যৰ ৰূপৰেখা*। গুৱাহাটী। চন্দ্ৰ প্ৰকাশ। ২০১৩।

বৰুৱা, গিৰীশ। *মনোবিজ্ঞান*। গুৱাহাটী। ভগৱতী প্ৰকাশন। ২০১২।

বৰুৱা, প্ৰ াদ কুমাৰ। *অসমীয়া চুটি গল্পৰ অধ্যয়ন*। ডিব্ৰুগড়। বনলতা। পুনৰ মুদ্ৰণ ২০১৭।

শৰ্মা, সত্যেন্দ্ৰনাথ। *অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত*। গুৱাহাটী। সৌমাৰ প্ৰকাশ। ২০১৩।

ইংৰাজী

মুখ্য উৎস ঃ

Jung, C.G. *AION: Researches into the Phenomenonology of the Self*. Translated by R. F. C. Hull. New York. Princeton University Press. 1970. archive.org/details/collectedworksof192cgju/1up. PDF file.

_ _ _ *Two Essays in Analytical Psychology*. Translated by R. F. C. Hull. New York. Princeton University Press. 1972. archive.org/details/in.ernet.dli. 2015. 218694/page/n249/model/1up. PDF file.

_ _ _ *The Archetypes and the Collective Unconscious*. Translated by R. F. C. Hull. New York. Princeton University Press. 1980. www.pdfdrive.com/the-archetypes-of-the-collective-unconscious-e100315202.html. PDF file.

গৌণ উৎস ঃ

Cherry, Kendra. "What are the Jungian Archetypes?" *Verywellmind*. Dotdash Meredith brands, March 11, 2023. Web. Accessed 10 May 2024. <www.verywell mind.com/what-are-jungs-4-major-archetypes-2795439>.

"Difference Between Freud and Jung." *Difference Between*. 17 Dec. 2014. Web. Accessed 9 Dec. 2022. <www.differencebetween.com/difference-between-freud-and-vs-jung/>.

Mcleod, Saul. "Carl Jung's Theory of Personality: Archetypes & Collective Unconscious." *Simply Psychology*. simply psychology.org. 24 Jan. 2024. Web. Accessed 15 May 2024. <simply psychology.org/carl-jung.html>.

Toyoda, Sonoko. "Persona." *International Association for Analytical Psychology*. iaap.org. Web. Accessed 15 Dec. 2023. <iaap.org/jung-analytical- psychology/short-articles-on-analytical-psychology/persona-2/>. PDF file.

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

মনোমতী উপন্যাসত যুদ্ধবন্দী আৰু বন্দীকর্তাৰ মনস্তত্ত্ব তথা প্রভুত্ব স্থাপনৰ কৌশল ঃ এটি বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন

অজিৎ কলিতা

সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
পূব কামৰূপ মহাবিদ্যালয়
বাইহাটা চাৰিআলী
কামৰূপ (মে'ট্ৰ), অসম-৭৮১৩৮১
৯৮৫৯০১৪৯৮২
kalitaajit9@gmail.com

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

যুদ্ধ এটি বিশ্বজনীন আৰু অতি স্পর্শকাতৰ বিষয়। যুগে যুগে যুদ্ধই ব্যক্তি আৰু মানৱ সমাজক বিভিন্ন ধৰণে প্রভাৱান্বিত কৰি আহিছে। যুদ্ধবিষয়ক উপন্যাসত (War Novel) যুদ্ধৰ বিভিন্ন দিশৰ কলাত্মক চিত্রণে সমাজ জীৱনত গুৰুত্বপূর্ণ ভূমিকা গ্রহণ কৰে। যুদ্ধবন্দীৰ সমস্যা যুদ্ধৰ সৈতে সংপৃক্ত এটি অন্যতম গুৰুত্বপূর্ণ বিষয়। যুদ্ধবন্দীসকল বন্দীত্বকালীন দশাত নানা প্রত্যাহ্বানৰ সন্মুখীন হয়, শাৰীৰিক আৰু মানসিক যন্ত্রণা ভোগ কৰাৰ লগতে নৈতিক, সাংস্কৃতিক, মনস্তাত্ত্বিক আদি নানা সমস্যাত ভোগে। সেয়েহে যুদ্ধবন্দী আৰু বন্দীকর্ত্তাৰ সম্পর্ক এটি অতি গুৰুত্বপূর্ণ বিষয়। যুদ্ধবিষয়ক উপন্যাসত বন্দীত্বৰ বিবিধ দিশ প্রতিফলিত হোৱা দেখা যায়। মানৱ তৃতীয় অসম আক্রমণৰ (১৮২১) পটভূমিত ৰচিত ৰজনীকান্ত বৰদলৈৰ 'মনোমতী' (১৯০০) উপন্যাসত যুদ্ধবন্দী আৰু বন্দীকর্ত্তাৰ আচৰণ আৰু সম্পর্কৰ ছবিখন সূক্ষ্ম আৰু বাস্তৱসন্মতভাৱে চিত্রিত হৈছে। আমাৰ গৱেষণা-পত্রত যুদ্ধবন্দীৰ বন্দীত্ব, যুদ্ধবন্দী আৰু বন্দীকর্ত্তাৰ মনস্তত্ত্ব, প্রভুত্ব বিস্তাৰৰ বাবে পৰস্পৰে গ্রহণ কৰা কৌশলগত আচৰণ সম্পর্কে 'মনোমতী' উপন্যাসৰ আধাৰত বিশ্লেষণ কৰা হৈছে।

বীজ শব্দ ঃ

(Key Words) ঃ War, War Novel, Captivity, Rajanikanta Bordoloi, Manomati

০.০০ অৱতৰণিকা ঃ

ব্যক্তি, সমাজ আৰু ৰাষ্ট্রৰ ওপৰত যুদ্ধৰ প্রভাৱ গভীৰ। সামাজিক, ৰাজনৈতিক, অর্থনৈতিক, সাংস্কৃতিক, মনস্তাত্ত্বিক আদি বিবিধ দিশত যুদ্ধৰ প্রভাৱ পৰিলক্ষিত হয়। যুদ্ধৰ বুৰঞ্জীত কোনো যুদ্ধৰ কাৰণ, যুদ্ধৰ সামৰিক আঁচনি আৰু ৰূপায়ণ, ৰাজনৈতিক প্রভাৱ, যুদ্ধৰ ফলাফল আদি উল্লেখ থাকিলেও সেই যুদ্ধই ব্যক্তি আৰু বহল সমাজ জীৱনক কিদৰে প্রভাৱান্বিত কৰে, তাৰ সূক্ষ্ম আৰু মর্মস্পর্শী ছবি যুদ্ধবিষয়ক উপন্যাসতহে প্রতিফলিত হয়। এইক্ষেত্রত Eleni Coundouriotis -ৰ মন্তব্য প্রণিধানযোগ্য ঃ "...The novel of war performs a reclamation of history from the perspective of the people" (২). গতিকে যুদ্ধৰ বুৰঞ্জীৰ তথ্যৰে সৈতে ব্যক্তি আৰু সমাজ-জীৱনৰ ছবি দাঙি ধৰি যুদ্ধবিষয়ক উপন্যাসে এক প্রকাৰ সাহিত্যিক বুৰঞ্জীৰ ভূমিকা গ্রহণ কৰে।

কামৰূপ বা অসমত ইতিমধ্যে বহুকেইখন যুদ্ধ সংঘটিত হৈছে। মান সেনাই তিনিবাৰকৈ অসম আক্রমণ কৰি (১৮১৭, ১৮১৯ আৰু ১৮২১ চনত) অসমৰ সামাজিক, ৰাজনৈতিক, সাংস্কৃতিক, অর্থনৈতিক পৰিকাঠামো ধ্বংস কৰি পেলায়। জনতাৰ ওপৰত কৰা মানৰ বর্বৰ অত্যাচাৰৰ বর্ণনা বুৰঞ্জীসমূহত পোৱা যায় যদিও যুদ্ধবন্দী আৰু বন্দীকর্ত্তা মানসেনাৰ মনস্তত্ত্ব, পৰস্পৰে পৰস্পৰক বশ কৰিবৰ বাবে গ্রহণ কৰা কৌশল, আচৰণ আদি সম্পর্কে অসমৰ বুৰঞ্জীসমূহত কোনো উল্লেখ পোৱা নাযায়। এইক্ষেত্রত মনোবিজ্ঞানৰ শিক্ষাৰে শিক্ষিত ঔপন্যাসিক ৰজনীকান্ত বৰদলৈয়ে মানৰ আক্রমণৰ পটভূমিত প্রথমখন অসমীয়া যুদ্ধবিষয়ক উপন্যাস 'মনোমতী' ৰচনা কৰি যুদ্ধবন্দীয়ে সন্মুখীন হোৱা বিভিন্ন সমস্যা দাঙি ধৰিছে।

০.০১ বিষয়ৰ গুৰুত্ব আৰু প্রয়োজনীয়তা ঃ

যুদ্ধবন্দীসকল যুদ্ধৰ দ্বাৰা প্রত্যক্ষভাৱে প্রভাৱান্বিত হয়। বন্দীত্বকালীন সময়ছোৱাত বন্দীকর্ত্তাৰ পৰা শাৰীৰিক, মানসিক নির্যাতন ভোগ কৰে। বিশেষকৈ যুদ্ধবন্দী যুৱতীসকল ধাৰাবাহিক ধর্ষণৰ সন্মুখীন হৈ মনস্তাত্ত্বিক সংকটত ভুগে। মানৰ অসম আক্রমণত প্রায় ৩০,০০০ অসমীয়া যুদ্ধবন্দী হৈছিল। অথচ তেওঁলোকে সন্মুখীন হোৱা সমস্যাসমূহৰ তথ্য বুৰঞ্জীত পোৱা নাযায়। মনোবিজ্ঞানৰ ছাত্র ৰজনীকান্ত বৰদলৈয়ে পৰৱর্তী সময়ত ক্ষেত্র অধ্যয়ন আৰু সমাজত পোৱা বাস্তৱ অভিজ্ঞতাৰে যুদ্ধবন্দীসকলৰ সমস্যা 'মনোমতী' উপন্যাসত দাঙি ধৰিছে। কিন্তু উক্ত বিষয়ত অদ্যাৱধি কোনো ধৰণৰ আলোচনা বা গৱেষণা সম্পন্ন হোৱা দেখা নাযায়। গতিকে, বন্দীত্বকালীন দশা সম্পর্কে অধ্যয়ন কৰাৰ যথেষ্ট অৱকাশ আছে। সেয়েহে জাতীয় আৰু আন্তঃৰাষ্ট্রীয় পর্যায়তো বিষয়টোৰ অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব অনুভৱ কৰা যায়।

০.০২ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি

দ্রআমাৰ অধ্যয়নত বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি গ্রহণ কৰা হৈছে। গৱেষণা কার্যত প্রসঙ্গসূচীৰ ক্ষেত্রত MLA হাতপুথিৰ অষ্টম সংস্কৰণত প্রকাশিত নীতিক মানি চলা হৈছে।

০.০৩ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য

আমাৰ অধ্যয়নৰ প্রধান উদ্দেশ্য হ'ল—

১. যুদ্ধবন্দী আৰু বন্দীকর্তাৰ সম্পর্ক বিচাৰ কৰি চোৱা। যুদ্ধবন্দী আৰু বন্দীকর্ত্তা মান সেনাৰ মনস্তত্ত্ব, পৰস্পৰে পৰস্পৰক বশ কৰিবৰ বাবে গ্রহণ কৰা কৌশল সম্পর্কে অধ্যয়ন কৰা।

১.০০ যুদ্ধবন্দী আৰু বন্দীকর্তাৰ সম্পর্ক

মানে বহু অসমীয়া যুৱক-যুৱতীক বন্দী কৰি সিহঁতৰ দাস কৰিছিল। বন্দীসকলৰ কিছুমানক তেওঁলোকে হত্যা কৰিছিল আৰু কিছুসংখ্যকক দাস হিচাপে লগত লৈ গৈছিল। বন্দীত্বৰ সময়ছোৱাত বন্দী আৰু বন্দীকর্তাৰ সম্পর্কৰ ছবিখন উপন্যাসত চিত্রিত হৈছে। মানে দাস কৰিব বিচৰা যুদ্ধ-বন্দীসকলক বশ কৰিবৰ বাবে গ্রহণ কৰা বিভিন্ন কৌশল আৰু তেওঁলোকৰ মানসিকতা *মনোমতী* উপন্যাসত প্রতিফলিত হৈছে। মানহঁতে বন্দীসকলক সুকীয়া সুকীয়াকৈ ৰখাৰ কৌশল গ্রহণ কৰাৰ কথা উপন্যাসত অংকিত হৈছে। উদাহৰণস্বৰূপে, দুটামান বর্ণনালৈ আমি চাব পাৰোঁ— "তই বৰ দুষ্টাহু তয়েই তাইক এনেবিলাক বুধি দিছ।" "...মিঙ্গিমাহা— "তোক আৰু মই তাইৰ সৈতে একেলগে নথওঁ"(বৰদলৈ ৯৭)। "মিঙ্গিমাহাই দুয়ো বৰুৱাকে একেলগে ৰখাটো উচিত নেভাবিয়েই হওক বা আন কোনো কাৰণেই হওক দুয়োকো এইদৰে বেলেগ কৰি থ'লে" (বৰদলৈ ১২৩)। যুদ্ধবন্দীসকল একেলগে থাকিলে বন্দীসকলৰ মাজত আৱেগিক সম্পর্ক থকাৰ বাবে তেওঁলোকক বশ কৰাটো কঠিন হৈ পৰে। ভাবৰ আদান প্রদান হোৱাৰ ফলত বন্দীৰ মনৰ পৰা ভৱিষ্যতৰ আশা সম্পূর্ণৰূপে আঁতৰি নাযায়। বন্দীসকলক সুকীয়াকৈ ৰাখি নিসঙ্গ আৰু অসহায় অনুভৱ কৰাই বন্দীসকলৰ মনত মানে প্রভুত্ব স্থাপন কৰিব বিচাৰিছিল। সুকীয়াকৰণ কৌশলৰ কথা Herman -এ উল্লেখ কৰিছে ঃ

Additional methods, however, are usually needed to achieve complete domination. As long as the victim maintains any other human connection, the perpetrator's power is limited. It is for this reason that Perpetrators Universally seek to isolate their victims from any other source of information, material aid, or emotional support. (79)

যুদ্ধবন্দী পদুমীক মান সেনাপতি মিঙ্গিমাহাই ধর্ষণ কৰিছে। কোনো ধৰণৰ বাহিৰৰ পৰা সহায় নোপোৱাকৈ ৰাখি তাইক অসহায় কৰি তুলিছিল। নিসঙ্গ আৰু অসহায় হৈ পদুমীয়ে মান সেনাপতিৰ প্রভুত্ব মানিবলৈ ঠিৰাং কৰিছিল ঃ

পাপিষ্ঠ মিঙ্গিমাহাই মোক অনেক প্রবন্ধ কৰি মৰিবলৈ নিদিলে। এইদৰে সকলো পিনে নিৰুপায় হৈ কপাল মূৰ ঢাকুৰি

জীয়াই থাকি মিঙ্গিমাহাৰ লগত মানৰ দেশ, অসম দেশ গোটেইখনতে ফুৰিলো।... ইয়াকে ভাবি আৰু যেতিয়াই মোৰ গা চুৱা গ'ল, তেতিয়াই মই সেনাপতিয়ে সৈতে ভাল হোৱাহে উচিত ইয়াকে ভাবি মিঙ্গিমাহাক মই মৰম কৰিবলৈ ধৰিলো। সিও মোৰ মৰমত বশ হ'ল। (বৰদলৈ ১৬৭)

অৱশ্যে পদুমী বশ হোৱাৰ অন্তৰালত অসমীয়া মানুহৰ মংগল কামনাৰ উদ্দেশ্যটোও নিহিত হৈ আছিল। পদুমীয়ে মৰমেৰে মিঙ্গিমাহাক বশ কৰি বহু অসমীয়া যুদ্ধবন্দীক পলুৱাই পঠাইছিল। যুদ্ধবন্দী পদুমীৰ ওচৰত মান সেনাপতি মিঙ্গিমাহা বশ হোৱা কথাটো মান সৈন্যসকলে ভাল চকুৰে চোৱা নাছিল। "এইয়ে আমাৰ সেনাপতিক এজন সাহিয়াল বীৰ গুচাই এটা ভেড়া কৰিলে" (বৰদলৈ ১২৮)।

যুদ্ধবন্দীসকলক একেলগে ৰাখিলে তেওঁলোকৰ নিৰাশাযুক্ত মনতো আশাৰ সঞ্চাৰ হয়। বন্দীকৰ্তাই তেতিয়া তেওঁলোকক সম্পূৰ্ণৰূপে দমন বা বশ কৰিবলৈ কঠিন হয়। মনোমতী আৰু পমীলাক যুদ্ধবন্দী হিচাপে একেটা কোঠাতে বন্দী কৰি ৰখাত মনোমতীৰ শোকাৰ্ত মনতো পমীলাই আশাৰ সঞ্চাৰ কৰি স্বতন্ত্ৰতা ৰক্ষাত গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা লৈছিল। "মানহুঁতে পমীলাক আৰু মনোমতীক একেলগে থোৱাত মনোমতীৰ দুখতো অলপ সুখ হৈছিল। ৰাংঢালী পমীলাই মনোমতীক নানা তৰহৰ কথা-বতৰা কৈ উছাহ দি আছিল আৰু সেই বিপদৰ সময়তো খুহুতীয়া কথা কৈ মনোমতীৰ জয় পৰা মনত অলপ ৰঙ লগাইছিল" (বৰদলৈ ৯৪)।

পমীলাৰ উৎসাহ-উদ্দীপনাই মনোমতীৰ শোকাৰ্ত, নিৰাশাজনক মনত আশাৰ সঞ্চাৰ কৰিছিল। নিজৰ স্বতন্ত্ৰতা ৰক্ষাৰ বাবে মনোমতীক সাহস দিছিল— "তোমাৰ নিজৰ ডিঙিক ৰেপ দিয়া ভাবটো এৰা। পাৰিলে পিশাচৰ ডিঙিত ক্ষুৰখন বহুৱাবা" (বৰদলৈ ৯৫)।

মানে প্ৰলোভন দি যুদ্ধবন্দী নাৰীসকলক বশ কৰাৰ কৌশল গ্ৰহণ কৰিছিল। মিঙ্গিমাহাই মনোমতীক প্ৰলোভন দি বশ কৰিবৰ চেষ্টা কৰাৰ ছবি উপন্যাসখনত আছে— "বুকুৰ জীউ তুমি যিহকে ভাল পোৱা মই তাকে কৰিম। তোমাৰ পিতাৰাক এৰি দিম, আৰু আন আন যাকে এৰি দিবলৈ কোৱা তাকে এৰি দিম। মোত তুমি ভজা" (বৰদলৈ ৯৬)। তেনেদৰে সোণ-ৰূপ, কানি-কাপোৰৰ প্ৰলোভন দি টেঙ্গুলাই পমীলাক বশ কৰিব বিচাৰিছিল।

মনোমতীক প্ৰলোভনেৰে বশ কৰিব নোৱাৰি মিঙ্গিমাহাই শাৰীৰিক শক্তি প্ৰয়োগ কৰি বশ কৰাৰ কৌশল অৱলম্বন কৰিছিল— "... মিঙ্গিমাহাই চকু দুটা ৰঙা কৰি বাহু আফলি "বাৰু তোকনো কোনে ৰাখে চাওঁ" এই বুলিয়েই সি মনোমতীক খেদা মাৰি গ'ল" (বৰদলৈ ৯৬-৯৭)।

জোৰ-জবৰদস্তিৰে মনোমতীৰ সতীত্ব হৰণ কৰি তাইক নিসহায় বুলি প্ৰতীয়মান কৰাবলৈ মিঙ্গিমাহা উদ্যত হৈছিল। বন্দীৰ ওপৰত শাৰীৰিক বল প্ৰয়োগ কৰি বশ কৰাৰ কৌশল সম্পৰ্কে Judith Herman -এ কৈছে ঃ

Captivity, which brings the victim into Prolonged contact with the perpetrator, creates a special type of relationship, one of coercive control. This is equally true whether the victim is taken captive entirely by force, as in the case of prisoners and hostages, or by a combination of force, intimidation, and enticement, as in the case of religious cult members, battered women, and abused children. (74-75)

কিন্তু মনোমতীয়ে ক্ষুৰেৰে মিঙ্গিমাহাক প্ৰত্যাহ্বান জনোৱাত তেওঁ তৰোৱাল উলিয়াই মৃত্যুৰ ভাবুকি প্ৰদান কৰি ভয় আৰু আতঙ্ক সৃষ্টি কৰিব বিচাৰিছিল। মিঙ্গিমাহাই কৈছে— "তোক এই তৰোৱালেৰে একে কোবে কাটিম" (বৰদলৈ ৯৭)।

শাৰীৰিক শক্তি প্ৰয়োগ কৰি সতীত্ব হৰণ কৰাৰ চেষ্টাৰে তথা মৃত্যুৰ ভাবুকি প্ৰদান কৰি মনোমতীৰ মনত ভয়, আতংক আৰু নিসহায়ৰ ভাব সৃষ্টি কৰিবলৈ মিঙ্গিমাহাই চেষ্টা কৰিছিল। বন্দীৰ মনত ভয়-আতংকৰ সৃষ্টি কৰিবলৈ বন্দীকৰ্তাই মৃত্যুৰ ভাবুকি দিয়াৰ প্ৰসঙ্গত Herman -এ উল্লেখ কৰিছে ঃ

Although violence is a universal method of terror, the perpetrator may use violence infrequently, as a last resort. It is not necessary to use violence often to keep the victim in a constant state of fear. The threat of death or serious harm is much more frequent than the actual resort to violence. (77)

মৃত্যুৰ ভাবুকিয়েও মনোমতীক বশ কৰাব পৰা নাছিল। মানৰ হাতত বশ্যতা স্বীকাৰ কৰি নিজস্বতা হেৰুওৱাতকৈ মৃত্যুৱে শ্ৰেষ্ঠ বুলি স্বাতন্ত্ৰ্য ৰক্ষাত মনোমতীয়ে দৃঢ়তা প্ৰকাশ কৰিছিল। অৱশ্যে মানৰ হাতত ধৰ্ষিতা হোৱাৰ আশংকাত ভুগি মনৰ মাজত এটি ভয়ৰ ভাব লৈ বন্দীত্বৰ কালছোৱা কটাবলগীয়া হৈছিল। উপন্যাসত তাৰ বৰ্ণনা দিয়া হৈছে— "সি ঘৰৰ ভিতৰত সোমোৱা মাত্ৰেই মনোমতী ভয়তে চুকত

সোমালগৈ”(বৰদলৈ ৯৫)। “পদুমী যেতিয়া ঘৰৰ ভিতৰত সোমাইছিল তেতিয়া পমীলা আৰু মনোমতী দুইও কাণজাগি চকুমুদি শুইছিল। ... দুইও সখীয়েকে গিৰিস্ কৰে উঠি বহিল আৰু কোনোবা মানে তেওঁবিলাকক কাটিবলৈ বা দৌৰাত্ম্য কৰিবলৈ সোমাইছে বুলি ভয়তে থৰ থৰি কঁপিবলৈ ধৰিলে” (বৰদলৈ ১১০)। ইয়াত ‘কাটিবলৈ অহা’ আৰু ‘দৌৰাত্ম্য’ অংশই মৃত্যু আৰু ধর্ষণৰ ভয়ৰ কথালৈ আঙুলিয়াইছে। গতিকে দেখা যায়, মৃত্যু আৰু ধর্ষণৰ ভয়ে যুদ্ধবন্দী পমীলা আৰু মনোমতীৰ মনত ভিতৰি ভয়ৰ অৱস্থা এটি সৃষ্টি কৰিছিল। যুদ্ধবন্দীৰ ওপৰত কৰা অমানুষিক নির্যাতন আৰু যন্ত্রণাদায়ক মৃত্যুৰ বাতৰি আৰু তাৰ চাক্ষুষ অভিজ্ঞতাই ভয় আৰু আতংকৰ জন্ম দিছিল। মনোমতীহঁত যুদ্ধবন্দী হিচাপে মিঙ্গিমাহাৰ নাৱত গৈ থাকোঁতে পুৰুষ বন্দীসকলক কৰা অত্যাচাৰ মনোমতীহঁতে স্বচক্ষে দেখিছে বুলি ভবাৰ অৱকাশ আছে— “বন্দীবিলাকৰ ভিতৰত মিঙ্গিমাহাই মনোমতী আৰু শান্তিৰাম ভকতক নিজৰ নাৱত তুলি লৈছিল। লক্ষ্মীকান্ত বৰুৱা, পমীলা আৰু বৰনগৰীয়া বৰুৱাক টেঙ্গুলা নামেৰে মানৰ বৰফুকনটোৱে তাৰ নাৱত লৈছিল। মানহঁতে মতা বন্দীকেইজনক মাছ পহুৰ দৰে বান্ধি নাৱৰ তলিত পেলাই নিছিল”(বৰদলৈ ৮৩)।

যুদ্ধবন্দীসকলক বশ কৰাৰ বাবে মানে মদ খাদ্যৰ লগত আগবঢ়াইছিল। শান্তিৰাম আৰু মনোমতীহঁতক খাবলৈ দিয়া খাদ্যৰ বর্ণনাত সেই কথাৰ উল্লেখ আছে। মিঙ্গিমাহাই পমীলাক কৈছে— “তুমি এতিয়াও ফটিকাৰ সোৱাদ বুজিব পৰা নাই। এবাৰ ফটিকাৰ সোৱাদ পালে বুজিবা ফটিকা কেনে ভালবস্তু। এবাৰ ফটিকাত মুখ বহিলে সদায় আমাৰ ফটিকা খাবলৈহে মন কৰিবা”(বৰদলৈ ৯৫)। বন্দীক বশ কৰিবলৈ মাদক দ্রব্যৰ প্রয়োগ কৰা কৌশলৰ কথা Herman -এ উল্লেখ কৰিছে—“The perpetrator may further debilitate the victim by offering addictive drugs or alcohol. The capricious granting of small indulgences undermines the psychological resistance of the victim for more effective by than unremitting deprivation and fear” (78).

গতিকে দেখা যায়— প্রলোভন, মৃত্যুৰ ভয় প্রদর্শন, শাৰীৰিক শক্তিৰে সতীত্ব নাশৰ ভাবুকি, একাকীত্বকৰণৰ ভাবুকি, খাদ্যত মদৰ প্রয়োগ আদি বিবিধ কৌশল প্রয়োগ কৰি তথা ভয় আৰু আতংকৰ জন্ম দি মনোমতীহঁতৰ মনত মান সেনাপতিয়ে নিজৰ সর্বশক্তিমান ৰূপ প্রতিষ্ঠা কৰিব বিচাৰিছিল। মান সেনাপতিয়ে মনোমতীহঁতৰ দৰে যুদ্ধবন্দীক বুজাই দিব বিচাৰিছিল যে তেওঁলোকৰ জীৱন মান সেনাপতিৰ অনুগ্রহৰ ওপৰত নির্ভৰশীল। সেনাপতিৰ কর্ম আৰু কথাত সেই ভাব ফুটি উঠিছিল— “... মিঙ্গিমাহাই চকু দুটা ৰঙা কৰি বাহু আফলি “বাৰু তোকনো কোনে ৰাখে চাওঁ” এই বুলিয়েই সি মনোমতীক খেদা মাৰি গ’ল। ... বাৰুহু আজিলৈ তোক এৰিলো। কিন্তু মই চাম তইনো মানৰ ভাত খাৱনে নেখাৱ”(বৰদলৈ ৯৬-৯৭)।

সেনাপতিয়ে মনোমতী-পমীলাহঁতৰ খোৱা-বোৱা, থকা-মেলাৰ খবৰ লোৱাৰ ছলেৰে নিজৰ অনুগ্রহৰ দিশটো দাঙি ধৰিব বিচাৰিছিল। সেনাপতিৰ মানসিকতা জানিয়েই পমীলাই সেনাপতিৰ অনুগ্রহৰ কথা উল্লেখ কৰি মানৰ প্রভুত্ব মানি চলাৰ ভাও ধৰিছিল— “সেনাপতিৰ অনুগ্রহত আমি এই ঘৰৰ ভিতৰতে ৰজাৰ ঘৰত থকা যেন পাইছো”(বৰদলৈ ৯৫)। বন্দীৰ ওপৰত বন্দীকর্তাৰ এনে মনোভাবৰ উদ্দেশ্য সম্পর্কে Herman -এ উল্লেখ কৰিছে ঃ

Fear is also increased by inconsistent and unpredictable outbursts of violence and by capricious enforcement of petty rules. The ultimate effect of these techniques is to convince the victim that the perpetrator is omnipotent, that resistance is futile, and that her life depends upon winning his indulgence through absolute compliance. The goal of the perpetrator is to instill in his victim not only fear of death but also gratitude for being allowed to live. (77)

মান সেনাই বহু যুদ্ধবন্দীক অমানুষিক নির্যাতনেৰে হত্যা কৰাৰ বর্ণনা উপন্যাসত চিত্রিত হৈছে। হাতত খিলা মাৰি কঁকালত ডোল লগাই ফুৰোৱা, যাঠি-জোঙেৰে খুচি মানুহক হত্যা কৰি সিহঁতৰ মঙহ কাউৰী-শগুণক খুওৱা, জীৱন্তে অগ্নিদগ্ধ কৰি হত্যা কৰা, নিজৰ কেঁচুৱাৰ মঙহ মাকৰ মুখত কটিওৱা আদি ভয়াৱহ আৰু বিভৎস বর্ণনা উপন্যাসখনত পোৱা যায়। তেনে ভয়াৱহ আৰু নিষ্ঠুৰ অত্যাচাৰৰ পৰা ৰেহাই পোৱাৰ একমাত্র উপায় আছিল মান সেনাপতিৰ দয়া বা অনুগ্রহ লাভ কৰা।

পমীলাই সেনাপতিৰ মনোভাব বুজি লৈ তেওঁৰ অনুগ্রহৰ কথা কৃতজ্ঞতাৰে প্রকাশ কৰাৰ ভাও জুৰি নির্যাতনৰ পৰা ৰেহাই পাবলৈ কৌশল অৱলম্বন কৰিছে— “সি ঘৰৰ ভিতৰত

সোমোৱা মাত্রেই মনোমতী ভয়তে চুকত সোমালগৈ। চতুৰী পমীলাই মিচিক কৰি হাঁহি এটি মাৰি আগবাঢ়ি আহি মিঙ্গিমাহাক ক'লে— "সেনাপতিহু আজি আমাৰ কি ভাগ্য যে আমাৰ ঘৰলৈ আহিল।... পমীলা- "সেনাপতিৰ অনুগ্রহত আমি এই ঘৰৰ ভিতৰতে ৰজাৰ ঘৰত থকা যেন পাইছো" (বৰদলৈ ৯৫)। মান সেনাপতি মিঙ্গিমাহাই পমীলাহঁতৰ আগত মান সেনাই তেওঁলোকৰ আশ্রয়দাতা, সর্বশক্তিমান বুলি প্রতিষ্ঠা কৰিব বিচাৰিছিল। পমীলাই তেওঁলোকৰ ইচ্ছানুযায়ী জীৱন কটোৱাৰ ইচ্ছা প্রকাশ কৰাৰ ভাও জুৰি নির্যাতনকাৰী মানক সন্তুষ্টিত ভুগিবলৈ প্ৰৰোচিত কৰিছিল। পমীলাই কৈছে— "সেনাপতিহু আমাকতো তোমালোকে আনিলাই। আমিনো আৰু কাহানি আই-ভাই-বোপাইহঁতক পাম? তোমালোকেতো আমাৰ জাত-কুল মাৰিবাই। সেই দেখি আমিও নিজৰ কপালকে সাৰোগত কৰি তোমালোকৰ আশ্রয় লওঁ বুলিছো" (বৰদলৈ ৮৫)।

মান সেনাই যুদ্ধবন্দী আৰু অসমীয়া মানুহক আত্মসন্মানত লগাকৈ নিষ্ঠুৰ শব্দৰে মানসিক নির্যাতন চলাইছিল। উপন্যাসত সেই কথাৰ বর্ণনা দাঙি ধৰা হৈছে—

(ক) "কৰবাৰ এটা অসমীয়া বান্দৰে আমাৰ নাওখন ৰাখিবলৈ কৈছে" (বৰদলৈ ৫৪)।

(খ) "এই বান্দৰটোৰ কথা শুনহঁক অ" (বৰদলৈ ৬১)।

(গ) "এই কুকুৰটোৰ কথাবোৰ শুনহঁক অ। মাৰিম নেকি ইয়াৰ মূৰত এটা লাঠি" (বৰদলৈ ৬২)।

কঠোৰ শব্দ প্রয়োগৰ লগতে ঠাট্টা-বিদ্রূপ কৰি বন্দীসকলৰ ওপৰত মানসিক অত্যাচাৰ কৰিছিল। বন্দীসকলক অখাদ্য খুৱাই আৰু মাদক দ্রব্য জোৰকৈ খুৱাই নির্যাতন কৰাৰ লগতে নিচাৰ ৰাগিত ডুবাই বশ কৰিব বিচাৰিছিল। উপন্যাসত সেই কথাৰ বর্ণনা দাঙি ধৰা হৈছে— "মনোমতীয়ে নিজৰ অৱস্থা গমি ভাবি নাৰে নাৰে কান্দি গৈছিল। মিঙ্গিমাহাই তেওঁক নাৰে নাৰে বিদ্রূপ কৰিবলৈ নেৰিছিল। বিদ্রূপ কৰি হেপাহ নপলাই সি এবাৰ উঠি আহি মনোমতীৰ মুখত তাৰ চেলুয়ইটো গুজি দিবলৈ ধৰিলে" (বৰদলৈ ৮৪)। মিঙ্গিমাহাই কেৱল যুদ্ধবন্দী মনোমতীক বশ কৰাৰ বাবে 'চেলুয়ই' জোৰকৈ খাবলৈ দিয়া নাছিল, যুদ্ধবন্দী পদুমীক ইতিমধ্যে 'চেলুয়ই' আৰু 'মদ' খোৱাৰ অভ্যাস কৰোৱাই লৈছিল— "কেইহোপামান মাৰি সি চেলুয়ইটো গাভৰুজনীৰ মুখত গুজি দিলে" (বৰদলৈ ৮৪)। "সেনাপতিয়ে চেলুৱইটো খাই একো একোবাৰ সেই চেলুৱইটো গাভৰুজনীৰ মুখত গুজি গুজি দিছিল। তাই এহোপা-দুহোপা মাৰি চেলুৱইটো ওলোটাই ওলটাই দিছিল..." (বৰদলৈ ৫৪)। "মিঙ্গিমাহাই তেওঁৰ এটা জপাৰ পৰা ফটিকা উলিয়ালে। পোনেই নিজে এবাটি খালে। তাৰ পাছত তেওঁৰ গাভৰুজনীক খুৱালে..." (বৰদলৈ ৬২)।

দীর্ঘদিন শাৰীৰিক-মানসিক নির্যাতন, কঠোৰ ব্যৱহাৰত বন্দীসকলৰ অনেকেই অতীষ্ঠ হৈ উঠে। বন্দীৰ তেনে মনোদশা বুজি 'ভাল ব্যৱহাৰ' আৰু নানা প্রলোভনেৰে বন্দীক বশ কৰাৰ বাবে বন্দীকর্তাসকল উৎসাহী হৈ পৰে। Herman -এ সেই কথাৰ বর্ণনা দিছে— "The hope of a meal, a bath, a kind word, or some other ordinary creature comfort can become compelling to a person long enough deprived" (78).

মানৰ ৰৰফুকন টেঙ্গুলা, মান সেনাপতি মিঙ্গিমাহাই পমীলা-মনোমতীহঁতক 'মইনা', 'বুকুৰ জীউ', 'লাহৰি' আদি মধুৰ, মৰমীয়াল শব্দৰে সম্বোধন কৰি ভালপোৱাৰ চলেৰে বশ কৰিব বিচাৰিছিল। টেঙ্গুলাই পমীলাক বশ কৰিবলৈ ভাল ভাল বয়বস্তু আৰু আৰামদায়ক জীৱনৰ প্রলোভন দিছিল— "তোক সোণ দিম, কানি-কাপোৰ দিম, মদ-ভাত দিম আৰু কি দিম?" (বৰদলৈ ৮৪)।

যুদ্ধবন্দীসকলৰ স্বতন্ত্রতাৰ চেতনা নাশ কৰিবৰ বাবে বন্দীকর্তাই বিভিন্ন উপায় প্রয়োগ কৰে। নিজৰ স্বতন্ত্রতা অক্ষুণ্ণ নাৰাখিলে বন্দীয়ে লাহে লাহে বশ হৈ পৰে। Herman -এ কৈছে ঃ

.. the perpetrator seeks to destroy the victim's sense of autonomy" (77) ... Political prisoners who are aware of the methods of coercive control devote particular attention to maintaining their sense of autonomy. One form of resistance is refusing to comply with petty demands or to accept rewards. The hunger strike is the ultimate expression of this resistance. Because the prisoner voluntarily subjects himself to greater deprivation than that willed by his captor, he affirms his sense of integrity and self-control. (79)

মনোমতী-পমীলাহঁতে বন্দী অৱস্থাতো নিজৰ স্বাতন্ত্র্য বর্তাই ৰাখিবলৈ দৃঢ়ভাৱে পণ লৈছিল— "মানহঁতে তেওঁবিলাকৰ জাত কুল মাৰিবৰ অভিপ্রায়ে তেওঁলোকক

সিহঁতৰ ৰন্ধা ভাত আনি দিছিল" (ৰৱদলৈ ৯৪)। অনাহাৰে থাকি পমীলাহঁতে গাঁত খান্দি সেই ভাত পেলাই দিছিল, কাৰণ 'জাত যোৱা'ৰ ভয় অর্থাৎ স্বতন্ত্রতা হেৰুওৱাৰ ভয় জৰিত হৈ আছিল।

মান সেনাপতিৰ কোনো কথাতে মাস্তি নহৈ মনোমতীয়ে নিজৰ আত্মসন্মান-মর্যাদা আৰু স্বাধীনতা ত্যাগ কৰা নাছিল। মনোমতীৰ সাহ আৰু দৃঢ়তা দেখি মান সেনাপতিয়ে তাইক হত্যা কৰিবলৈ উদ্যত হোৱা তৰোৱাল খাপত সুমুৱাই থৈ উভটি গৈছিল। মনোমতীয়ে কৈছে— "তই মোক তৰোৱালেৰে কাট। মোৰ পক্ষে সিও ভাল। তেও মই তোক মোৰ গা চুব নিদিওঁ"(ৰৱদলৈ ৯৭)। মনোমতীয়ে অসমীয়াত্ব কোনো কাৰণে ত্যাগ নকৰি নিজৰ ব্যক্তিত্বৰ স্বাধীনতা দৃঢ়ভাৰে বর্তাই ৰখাৰ দৰে চণ্ডী বৰুৱা, লক্ষ্মীকান্ত, পমীলা, শান্তিৰাম— আটাইবোৰ চৰিত্রই নিজস্বতা বর্তাই ৰাখিছে। তেওঁলোকৰ দৃঢ়তাৰ বাবেই চেষ্টা কৰিও মানে মনোমতীহঁতক বশ কৰিব নোৱাৰিলে। শান্তিৰামৰ দৃঢ়তাৰ কথা এনেদৰে দাঙি ধৰিছে— "অনাহাৰে মৰিব তেও অবস্তু স্বইচ্ছাই ভোজন নকৰিব এইটো দৃঢ় প্রতিজ্ঞা মনতে ৰাখি তেওঁ আজি চাৰি-পাচদিনে জল গ্রহণ কৰা নাছিল" (ৰৱদলৈ ১০০)। মিঙ্গিমাহাই চণ্ডী বৰুৱাক বশ কৰিবলৈ দোৱনীয়া হোৱাৰ প্রস্তাৱ দিছিল— "... তই মোৰ দোৱনীয়া হ আৰু হাদিৰাচকীৰ যুঁজলৈ ওলা"(ৰৱদলৈ ১২৬)। তেওঁলোকৰ দৃঢ়তাৰ বিপৰীতে পদুমীয়ে নিজস্বতা বর্তাই ৰাখিবলৈ দৃঢ়তা দেখুৱাব নোৱাৰিলে। পদুমীয়ে বন্দী অৱস্থাত আত্মহত্যা কৰিবলৈ অশেষ চেষ্টা কৰিও সফল নোহোৱাত তাই বন্দীকর্তাৰ পৰিৱেশত নিৰুপায় হৈ পৰিছিল। মিঙ্গিমাহাই পদুমীক জোৰকৈ শাৰীৰিক শোষণ কৰাৰ পাছত নিৰুপায় হৈ তাই সেনাপতিৰে সৈতে ভাল হ'বলৈ ইচ্ছা কৰে। পদুমীয়ে বন্দীকর্তাৰ পৰিৱেশত নিজকে খাপ খুৱাই বাহ্যিকভাৰে মানক দেখুৱাই বশ্যতা স্বীকাৰ কৰিলে। কিন্তু সুযোগ-সুবিধা বুজি বহু অসমীয়া বন্দীক মুকলি কৰি দি অন্তৰত নিজস্বতা বর্তাই ৰাখিলে। শান্তিৰাম, মনোমতীহঁতক বন্দী শিবিৰত লগ পোৱাৰ পাছত সিহঁতৰ দৃঢ়তাই পদুমীৰ মনত নিশ্চিতকৈ প্রভাৱ পেলালে।

মানৰ ৰক্ষিতা হৈ নিজৰ জাত-কুল মাৰি জীয়াই থাকিবলৈ পদুমীৰ বিতৃষ্ণা জন্মিল। পূর্বৰ প্রেমিক শান্তিৰামৰ মুখত পদুমী মানৰ তিৰোতা হোৱাৰ বাবে আক্ষেপ শুনি আৰু আপোন মানুহৰ লগত বিচ্ছেদৰ যন্ত্রণাই পদুমীক জীয়াই থকাৰ স্পৃহা নোহোৱা কৰিলে। পদুমীৰ ক্ষোভ, মানসিক যন্ত্রণা আৰু প্রতিশোধৰ ভাবনা তাইৰ বক্তব্যত স্পষ্ট হৈ উঠিল— "পিশাচহঁতহু পাষণ্ডহঁতহু ৰাক্ষসহঁতহু তহঁতে মোক কাটি পেলা। মোৰ মঙ্গহ কাউৰ, শগুণক দে। তেও তহঁতৰ হাতৰ পৰা সাৰো। নৰকীহঁতহু অধৰমীহঁত তহঁতে মোক কি কৰিবলৈ নথলি। মোৰ আই, বোপাই, ভাই, ককাই সকলোকে মাৰিলি। মোৰ জাত মাৰিলি। মোৰ সতীত্ব হৰণ কৰিলি। ... ঈশ্বৰে কৰিলে তহতৰো ল'ৰা-তিৰোতাৰ আন কোনোবাই এইদৰে জাতকুল মাৰিব"(ৰৱদলৈ ১২৮-১২৯)। মানৰ বশ্যতা ভাঙি ওলাই আহিবলৈ পদুমীয়ে দৃঢ়তা দেখুৱালে। মান সেনাক উচতাই ইচ্ছা মৃত্যুৰে মুক্তিৰ পথ পদুমীয়ে বাচি ল'লে। সেই দৃঢ়তা পূর্বতে বন্দী অৱস্থাত তাই দেখুৱাব পৰা নাছিল।

২.০০ সামৰণি

ৰজনীকান্ত ৰৱদলৈ যদিও এগৰাকী বিখ্যাত মনস্তত্ত্ববিদ নাছিল, তথাপি মনস্তত্ত্বৰ লগত তেওঁৰ চিনাকি নথকা নহয়। এই প্রসঙ্গত সত্যেন্দ্র নাথ শর্মাৰ মন্তব্য প্রণিধানযোগ্য— "ৰৱদলৈ মনোবিজ্ঞানৰ ছাত্র আছিল আৰু মনোবিজ্ঞান সম্পর্কে এলানি প্রৱন্ধ আলোচনীত প্রকাশো কৰিছিল।" (১১৮)

ৰৱদলৈয়ে চৰকাৰী চাকৰি সূত্রে বিভিন্ন ঠাইত ঘূৰি ফুৰোঁতে মান-ভগনীয়া বহু বৃদ্ধলোকক লগ পাই কথা-বতৰা পাতিছিল। মনোবিজ্ঞানৰ এগৰাকী ছাত্র হিচাপে মানুহৰ মন আৰু মানসিকতা নিশ্চয় তেখেতে বুজি পাইছিল। ৰজনীকান্ত ৰৱদলৈয়ে বন্দী, বন্দীকর্তা আৰু সৈনিকৰ মনস্তত্ত্বৰ জটিল বিশ্লেষণ যদিও দাঙি ধৰা নাই, তথাপি তাৰ আভাস চৰিত্রৰ কার্যৰ বিৱৰণত ফুটি উঠিছে। অসমৰ পাঠকৰ প্রতি লক্ষ্য ৰাখি চৰিত্রৰ গভীৰ অন্তদ্বন্দ্ব বা আত্মবিশ্লেষণ আদি দাঙি নধৰি কেৱল কার্য বা আচৰণৰ যোগেদিহে ৰৱদলৈয়ে তাৰ আভাস দিবলৈ চেষ্টা কৰিছিল। এনে অনুমানৰ সপক্ষে ৰৱদলৈয়ে 'স্বপ্ন'ৰ ধাৰণাৰে চৰিত্র আৰু কাহিনী কেইবাখনো উপন্যাসত দাঙি ধৰাৰ কথা ক'ব পাৰি। সত্যেন্দ্র নাথ শর্মাই ৰৱদলৈৰ উপন্যাসত 'স্বপ্ন'ৰ ব্যৱহাৰ প্রসঙ্গত কৈছে ঃ

সোৱণশিৰীৰ বুকুত জঙ্কি পানেইৰ মৰাশ দুটা উটি অহা দেখা পোৱাৰ আগদিনা নিৰমায়ে স্বপ্নত সিহঁতক পর্ব্বতৰ ওপৰত হাতত ধৰাধৰি কৰি ফুৰা দেখা পাইছে। ৰঙ্গিলীয়ে সৎৰামক এটা ভয়াবহ সপোন দেখি সাবধান কৰি দিছিল।

এনেকৈ 'নির্ম্মল ভকত', 'ৰহদৈ লিগিৰী' আৰু 'তাম্রেশ্বৰী-মন্দিৰ'ত লেখকে বিভিন্ন উদ্দেশ্যেত স্বপ্নৰ সহায় লৈছে। ৰৱদলৈ মনোবিজ্ঞানৰ ছাত্র আছিল আৰু

মনোবিজ্ঞান সম্পর্কে এলানি প্রবন্ধ আলোচনীত প্রকাশো কৰিছিল। তেখেতৰ ধাৰণা আছিল যে সপোনত দেখা কথা বা ঘটনা জীৱনৰ লগত সম্পর্কহীন বা অর্থহীন ব্যাপাৰ নহয়।(১১৮)

মনোমতী উপন্যাসত পাঁচ বাৰ সপোনৰ প্রসঙ্গ উত্থাপন কৰি চৰিত্রৰ মানসিক অৱস্থা আৰু আগন্তুক পৰিস্থিতিৰ আভাস দিয়া হৈছে। লক্ষ্মীকান্তই সপোনত বন্দী মনোমতীক মানৰ শিবিৰত ভালে আছেনে জানিব খোজা আৰু মানৰ তিৰোতা হোৱা বুলি আক্ষেপ কৰা; কমল আতৈয়ে সপোনত কলীয়া কৃষ্ণই কীর্তন ঘৰৰ পৰা ওলাই যোৱাৰ বর্ণনা উপন্যাসত আছে। তেনেদৰে পমীলা, শান্তিৰাম আৰু পদুমীৰ সপোনৰ মাজেদি অতীত আৰু অদূৰ ভৱিষ্যৎৰ ঘটনাৰ আভাস দিয়া হৈছে।

ইয়াৰ পৰাই ধাৰণা কৰিব পাৰি যে জটিল মনস্তত্ত্বক চৰিত্রৰ কার্য বা ঘটনাৰ মাজেদি অসমীয়া পাঠকৰ বোধগম্যভাৱে সৰলৰূপত প্রকাশ কৰিছিল। সেইপিনৰ পৰা বন্দী আৰু বন্দীকর্তাৰ মনোদশা তেওঁলোকৰ কার্য বা আচৰণৰ যোগেদি সৰলৰূপত লেখকে প্রকাশ কৰিছে বুলি ভবাৰ অৱকাশ আছে। ❑

উল্লিখিত গ্রন্থ ঃ

অসমীয়া ঃ

ৰৱদলৈ, ৰজনীকান্ত। *মনোমতী*, গুৱাহাটী ঃ সাহিত্য-প্রকাশ, ট্রিবিউন বিল্ডিংছ, ২০০১। মুদ্রিত।

শর্মা, সত্যেন্দ্র নাথ। "ৰৱদলৈৰ উপন্যাসৰ সাধাৰণ বৈশিষ্ট্য।" *ঔপন্যাসিক ৰজনীকান্ত ৰৱদলৈ*, সম্পা., বীৰেন ৰৱকটকী, দ্বিতীয় প্রকাশ, যোৰহাট ঃ অসম সাহিত্য সভা, আগষ্ট, ১৯৯৬। মুদ্রিত।

English :

Coundouriotis, Eleni. *The people's right to the novel : War fiction in the Postcolony.* First edition, New York : Fordham University press, 2014. print.

Herman, Judith. *Trauma and Recovery : The Aftermath of Violence - From Domestic Abuse to political Terror*. New York : Basic Books. 2015. print.

গ্রন্থপঞ্জী

মুখ্য সমল ঃ

ৰৱদলৈ, ৰজনীকান্ত। *মনোমতী*। গুৱাহাটী ঃ সাহিত্য-প্রকাশ, ট্রিবিউন বিল্ডিংছ, ২০০১ মুদ্রিত।

গৌণ সমল ঃ

অসমীয়া ঃ

ভৰালী, শৈলেন, সম্পাদনা। সম্পাদকীয়। *অসমীয়া উপন্যাসৰ গতি-প্রকৃতি*, প্রথম প্রকাশ, নতুন দিল্লি (দিল্লী) ঃ সাহিত্য একাদেমি (অকাডেমী), ২০০২। মুদ্রিত।

"অসমীয়া ঐতিহাসিক উপন্যাস।" *এশ বছৰৰ অসমীয়া উপন্যাস*, সম্পা., নগেন ঠাকুৰ, গুৱাহাটী ঃ জ্যোতি প্রকাশন, ২০০০ মুদ্রিত।

শর্মা, গোৱিন্দ প্রসাদ। *উপন্যাস আৰু অসমীয়া উপন্যাস*। দ্বিতীয় সংশোধিত আৰু পৰিবর্ধিত সংস্কৰণ, গুৱাহাটী ঃ ষ্টুডেণ্টচ্ ষ্টৰ্, ২০০৯। মুদ্রিত।

শর্মা, সত্যেন্দ্র নাথ। "ৰৱদলৈৰ উপন্যাসৰ সাধাৰণ বৈশিষ্ট্য।" *ঔপন্যাসিক ৰজনীকান্ত ৰৱদলৈ*, সম্পা., বীৰেন ৰৱকটকী, দ্বিতীয় প্রকাশ, যোৰহাট ঃ অসম সাহিত্য সভা, আগষ্ট, ১৯৯৬। মুদ্রিত।

English :

Coundouriotis, Eleni. *The people's right to the novel : War fiction in the Postcolony.* First edition, New York : Fordham University press, 2014. print.

Herman, Judith. *Trauma and Recovery : The Aftermath of Violence - From Domestic Abuse to political Terror*. New York : Basic Books. 2015. print.

Marsalek, Dorian. *The American War Novel*. Masaryk University Brno, Department of English Language and literature, 2006, unpublished thesis. https://is.muni.cz>hhjeg>di...

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ উপন্যাসৰ আধাৰত যুৱসমাজত বিশ্বায়ন আৰু তথ্য-প্ৰযুক্তিৰ প্ৰভাৱ ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন

চয়নিকা ৰাজখোৱা

গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
অসম বিশ্ববিদ্যালয় ডিফু চৌহদ
৮৮৭৬১৪৩৫৬৭
crajkhowa70@gmail.com

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

বিশ্বায়ন অভিধাটো হ'ল এটা বহুমাত্রিক ধাৰণাৰ সমষ্টি। বিংশ শতিকাৰ শেষ ভাগত উদ্ভৱ হোৱা এক আন্তর্জাতিক অৱস্থা য'ত পৃথিৱীৰ বিনিয়োগ, কর্মসংস্থান, উৎপাদন আৰু বিপণন ব্যৱস্থাই দেশৰ সীমা অতিক্রম কৰি আন্তঃদেশীয় পৰিসৰত পৰিব্যাপ্তি লাভ কৰে। ইয়াৰ ফলত সমগ্ৰ বিশ্ব এখন গোলকীয় গাঁৱলৈ পৰিণত হৈছে আৰু বিনিয়োগ, কর্মসংস্থান, উৎপাদন আৰু বিপণন প্রক্রিয়াত বিভিন্ন দেশে একেলগে অংশগ্রহণ কৰিছে। তদুপৰি বিশ্বায়ন এনে এক প্রবাহ যি পৃথিৱীৰ ৰাজনৈতিক, অর্থনৈতিক, সাংস্কৃতিক একমুখিতাক ত্বৰান্বিত কৰিছে।

সমাজৰ এক অবিচেদ্য অংগ হৈছে যুৱপ্রজন্ম। এখন দেশৰ ভৱিষ্যত নিৰূপণ কৰাত যুৱসমাজৰ যথেষ্ট ভূমিকা আছে। তেওঁলোকৰ বিকাশে এখন সমাজকো বিকাশ কৰে। এই যুৱ প্রজন্মক আধাৰ হিচাপে লৈ ৰচিত অনুৰাধা শর্মা পূজাৰীৰ এখন উপন্যাস হৈছে *সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ*। নতুন প্রজন্মৰ চিন্তাধাৰা, আৱেগ-অনুভূতি উপন্যাসখনত প্রকাশ পাইছে। সেয়েহে নির্বাচিত আলোচনাত উপন্যাসখনৰ আধাৰত বিশ্বায়ন আৰু তথ্য-প্রযুক্তিৰ উন্নতিয়ে যুৱপ্রজন্মক কেনেদৰে প্রভাৱিত কৰিছে তাৰেই আভাস দিবলৈ যত্ন কৰা হৈছে।

বীজশব্দ ঃ

যুৱপ্রজন্ম, বিশ্বায়ন, সমাজ, বিকাশ, তথ্য-প্রযুক্তি।

০.০০ অৱতৰণিকা ঃ

০.০১ বিষয় প্রৱেশ ঃ

বিংশ শতিকাৰ শেষৰ দশকত সমগ্ৰ বিশ্বতে সৃষ্টি হোৱা এক বহুমুখী প্রক্রিয়া হৈছে বিশ্বায়ন। ইয়াৰ ইংৰাজী পৰিভাষা Globalisation। বিশ্বায়নে সমাজ, অর্থনীতি, ৰাজনীতি, বিজ্ঞান, মূল্যবোধ সকলো স্তৰতে প্রভাৱ বিস্তাৰ কৰে। ইয়াৰ প্রভাৱৰপৰা ভাৰত তথা অসমো আঁতৰি যোৱা নাছিল। বিশ্বায়নৰ ফলতেই ১৯৯১ চনত ভাৰতত এটা নতুন অর্থনৈতিক ব্যৱস্থাৰ প্রচলন হৈছিল। ব্যক্তিগতকৰণ আৰু উদাৰীকৰণেই হৈছে বিশ্বায়নৰ প্রধান ভেটি। বিশ্বায়নক অধিক জনমুখী কৰি তোলা ব্যৱস্থাসমূহৰ ভিতৰত টেলিভিছন, টেলিফোন, ইণ্টাৰনেটৰ সংযোগ উল্লেখযোগ্য। বিশ্বায়ন আৰু তথ্য-প্রযুক্তিৰ উন্নতি ঘটাৰ ফলত বিশ্বৰ যিকোনো প্রান্তৰে তথ্য বা সংবাদ অতি সহজলব্ধ হৈ পৰিছে।

সমাজ এখনৰ বৃহৎ সংখ্যা যুৱক-যুৱতীৰে আগুৰি আছে। সেয়ে একোখন সমাজ সঠিক দিশত আগুৱাই যোৱাৰ ক্ষেত্রত যুৱ সমাজৰ অংশীদাৰিত্বৰ বিশেষ ভূমিকা আছে।

যুৱ সমাজৰ সঠিক চিন্তা আৰু কার্যৰ মাজেৰে এখন সুস্থ সবল সমাজ গঢ়ি উঠে আৰু তাৰ ওপৰত ভিত্তি কৰিয়েই এখন সবল ৰাষ্ট্ৰ গঢ় লৈ উঠিব পাৰে। বর্তমান সময়ত বিশ্বায়নে সমাজৰ যুৱপ্রজন্মকো প্রভাৱান্বিত কৰিছে। যুৱপ্রজন্মৰ চিন্তা-ধাৰা, মানসিকতা ক্রমাৎ বিশ্বায়নৰ গ্রাসত সলনি হ'বলৈ ধৰিছে। ইয়াৰ আভাস পোৱা গৈছে অনুৰাধা শর্মা পূজাৰীৰ উপন্যাস *সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰত*। ঔপন্যাসিকে অতি সহজ ভাষাত উপন্যাসখনত কেইজনমান যুৱক-যুৱতীৰ জীৱনৰ কাহিনীক সামৰি আনিছে। তেওঁলোকৰ ইচ্ছা আশাৰ মাজত বিশ্বায়ন আৰু ভোগবাদী মানসিকতাই কেনেদৰে প্রভাৱ পেলাবলৈ সক্ষম হৈছে সেয়া নির্বাচিত আলোচনাত প্রকাশ কৰিবলৈ প্রয়াস কৰা হৈছে।

০.০২ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

যুৱসমাজত বিশ্বায়ন আৰু তথ্য-প্রযুক্তিৰ প্রভাৱৰ বিষয়ে আলোচনা কৰোঁতে কেইটামান উদ্দেশ্য নির্দ্ধাৰণ কৰি লোৱা হৈছে —

- সমাজত যুৱপ্রজন্মৰ স্থান নির্ণয় কৰা।
- উপন্যাসখনত চিত্রিত বিশ্বায়ন আৰু তথ্য প্রযুক্তিৰ বিকাশে যুৱপ্রজন্মৰ মাজত বিস্তাৰ কৰা প্রভাৱ সম্পর্কে আলোচনা কৰা।

০.০৩ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ এখন যুৱপ্রজন্মকেন্দ্রিক উপন্যাস। উপন্যাসখনত কেইজনমান যুৱপ্রজন্মৰ প্রতিনিধিৰ জৰিয়তে সামাজিক, ৰাজনৈতিক, শৈক্ষিক, মানসিক আদি দিশত যুৱ সমাজত সৃষ্টি হোৱা বিভিন্ন সমস্যা-সংঘাত আৰু ইয়াৰ সমাধানৰ প্রয়াস প্রকাশ পাইছে। নির্বাচিত আলোচনাত কেৱল উপন্যাসখনত প্রকাশ পোৱা বিশ্বায়ন আৰু প্রযুক্তিৰ প্রভাৱৰ বিষয়কহে সামৰি লোৱা হৈছে।

০.০৪ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

'সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ উপন্যাসৰ আধাৰত যুৱসমাজত বিশ্বায়ন আৰু তথ্য-প্রযুক্তিৰ প্রভাৱ ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন' — শীর্ষক আলোচনাত সমাজতাত্ত্বিক পদ্ধতি, বর্ণনাত্মক পদ্ধতি আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি গ্রহণ কৰা হৈছে।

১.০০ উপন্যাসখনৰ বিষয়বস্তু ঃ

অনুৰাধা শর্মা পূজাৰীৰ উপন্যাসসমূহৰ ভিতৰত এখন উপন্যাস হৈছে *সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ*। উপন্যাসখনৰ কেন্দ্রীয় চৰিত্র হৈছে কেইজনমান সপোন দেখা প্রাণচঞ্চলা যুৱক-যুৱতী। উপন্যাসখনত কেইবাটাও কাহিনীৰ সংমিশ্রণ ঘটিছে। কৈশোৰ কালৰ পৰা যুৱাৱস্থালৈকে জীৱনৰ এই সময়ছোৱা এক জটিল সময়। এই সময়তে যুৱপ্রজন্মই চৌপাশৰ নানা দিশৰ দ্বাৰা প্রভাৱিতও হয়। শাৰীৰিক,মানসিক, আৱেগিক, সামাজিক আদি দিশত তেওঁলোকৰ জীৱনলৈ বিভিন্ন পৰিৱর্তন আহে। ঔপন্যাসিকাই এই সময়ছোৱাতে তেওঁলোকৰ জীৱনত ঘটা এই পৰিৱর্তন বা এই প্রসংগসমূহক আধাৰ হিচাপে লৈ উপন্যাসখনৰ কাহিনী আগবঢ়াই নিছে। কৈশোৰ কালতে সঘনে দেখা পোৱা প্রজন্মৰ ব্যৱধান, নিচাযুক্ত দ্রব্যৰ সোৱাদ লোৱা, বীৰপূজা কৰা, যৌন জীৱনৰ বিষয়ে জানিবলৈ আগ্রহী হোৱা, নিজকে সোনকালে প্রতিস্থিত কৰা ইত্যাদি লক্ষণ উপন্যাসখনত অতি সুস্পষ্ট। উপন্যাসখনত শেখৰ, এমিলি, বিদিশা, আল্পনা, প্রসেন আদি যুৱপ্রজন্মৰ মাজেৰে এনেধৰণৰ প্রসংগসমূহক উপস্থাপন কৰা দেখা গৈছে।

২.০০ মূল আলোচনা ঃ

বিশ্বৰ আর্থসামাজিক দিশত ঘটা এক পৰিঘটনা হৈছে বিশ্বায়ন। বিশ্বায়নে দিয়া মুক্ত অর্থনীতিৰ প্রভাৱে সমাজৰ বিভিন্ন ক্ষেত্রলৈ খৰ গতিত পৰিৱর্তন আনিছিল। বিশেষকৈ মানুহৰ প্রচলিত ধ্যান-ধাৰণালৈ পৰিৱর্তন নমাই আনিছিল। তদুপৰি সমাজৰ যুৱ প্রজন্মও এই মুক্ত অর্থনীতিৰ প্রভাৱত প্রভাৱিত হৈছিল। ইয়াৰ আভাস পোৱা যায় *সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ* উপন্যাসত শেখৰে এমিলিৰ আগত কোৱা কথাৰে —

আমাৰ এতিয়াৰ প্রজন্মই বিদেশলৈ যাবলৈ আৰু বিদেশত কর্মসংস্থান লৈ চিৰস্থায়ী হ'বলৈ ইচ্ছা কৰে। এয়া বিশ্ব অর্থনীতিয়ে দিয়া মুক্ত বজাৰৰ ফল। আমি সকলো এতিয়া পৃথিৱীৰ বাসিন্দা, কোনো বিশেষ ঠাইক খামুচি থাকিব নোখোজো। হ'ল ৱর্ল্ড ইজ ফ্রী ফৰ আছ্। আমি এজাক উৰণীয়া পৰিভ্রমী চৰাই পৃথিৱীৰ ইমূৰৰ পৰা সিমূৰলৈ উৰিব খোজো। গতিকে কোনো বিশেষ জাতিৰ প্রতি আমাৰ আকর্ষণ-বিকর্ষণ নাই। (পূজাৰী, ৭০)

দেখা যায় আজিৰ যুৱপ্রজন্মই কোনো এক নির্দিষ্ট গণ্ডীৰ ভিতৰত আৱদ্ধ হৈ থাকিবলৈ নিবিচাৰে। নিজৰ ইচ্ছা-আকাংক্ষাক লৈ তেওঁলোকে কোনো ক্ষেত্রতে আপোচ কৰাৰ পক্ষপাতী নহয়। বিশ্বায়নৰ প্রভাৱতে

এনেধৰণৰ সুবিধাসমূহ সহজলভ্য হৈ পৰিছে।

সাম্প্রতিক সময়ত বিশ্বায়নে বিশেষকৈ অর্থনৈতিক বিকাশৰ গতিত এক নতুন বাট দিছে। অর্থনৈতিক উদাৰীকৰণ আৰু বিশ্বায়নে বর্তমানৰ প্রজন্মক যথেষ্ট প্রভাৱিত কৰিছে। ইয়াৰ ফলত ভোগসর্বস্ব জীৱন অতি সহজলভ্য হৈ পৰিছে। যুৱচামৰ বাবে অর্থলাভৰ বিভিন্ন ধৰণৰ পথ মুকলি হ'বলৈ ধৰিছে। যাৰ ফলত সহজতে ধন ঘটা বা ইজি মনী মেকিং (Easy Money Making) হৈছে অতি সহজলভ্য। সেয়ে সততা, নিষ্ঠা, আদর্শ, ত্যাগ, সহমর্মিতা আদিৰ বিপৰীতে যুৱ সমাজেও লাভালাভৰ প্রতিযোগিতাত নিজকে পৰিচালিত কৰিবলৈ কুণ্ঠাবোধ নকৰা হৈছে। লগতে সামাজিক মূল্যবোধ আৰু ব্যক্তিগত নৈতিক চেতনাকো হেৰুৱাই পেলাইছে। উপন্যাসখনত এই সহজতে লভ্য অর্থলাভৰ প্রতিক্রিয়া প্রসেন নামৰ চৰিত্রটোৰ মাজেৰে ঔপন্যাসিকে প্রকাশ কৰিছে, এনেদৰে —

এশ শতাংশ কাম নোহোৱাকৈ, বিল পাছ হৈ যায়, মোৰ ককাইদেউ আজৰ বস্তু। গধূলিৰ পৰা জুৱাখেল বহে ঘৰত, দৈনিক মদৰ পার্টি হয় মাজনিশালৈকে। ঢেৰবন্ধু আহে দাদাৰ, হাতে হাতে বটল লৈ আহে। ময়ো খাওঁ, ভালেই লাগিছে। (পূজাৰী, ১৩২)

মুক্ত বিশ্বায়নে যুৱ সমাজৰ মাজত অবাধ স্বাধীনতা আনিছে। যাৰ ফলত যুৱসমাজৰ মাজত বিভিন্ন নিচাযুক্ত দ্রব্যই এক সুকীয়া প্রভাৱ বিস্তাৰ কৰিবলৈ লৈছে। মুলত বিশ্বায়নে আনি দিয়া এনে মুক্ত বজাৰৰ ফলত যুৱসমাজৰ মাজত এই দ্রব্যসমূহৰ প্রচলন বৃদ্ধি পাবলৈ ধৰিছে। বর্তমান যুৱ সমাজৰ মাজত অত্যাধিক জনপ্রিয় অন্যতম নিচাযুক্ত দ্রব্য এবিধ হৈছে ভাং। ভাং খোৱাৰ প্রৱণতা বৃদ্ধিয়ে স্কুল, কলেজ, বিশ্ববিদ্যালয় আদি বিভিন্ন স্তৰৰ যুৱপ্রজন্মক গ্রাস কৰিবলৈ আৰম্ভ কৰিছে। সাম্প্রতিক সময়ত এই নিচাযুক্ত দ্রব্যৰ প্রভাৱত যুৱ সমাজো বিভিন্ন সমাজ বিৰোধী কার্যত জড়িত হোৱা দেখিবলৈ পোৱা যায়। এনে নিচাযুক্ত দ্রব্য সেৱনৰ ফলত তেওঁলোক শাৰীৰিক আৰু মানসিকভাৱে ক্ষতিগ্রস্থ হৈছে। ইয়াৰ উপৰিও নিজৰ ঘৰখন আৰু সমাজখনলৈ এক অশুভ পৰিৱেশ কঢ়িয়াই আনিছে। উপন্যাসখনত নিচাযুক্ত মাদকদ্রব্যৰ প্রতি আসক্তি শেখৰৰ ৰূমমেট প্রসেনজিৎ নামৰ চৰিত্রটোৰ মাজত দেখা গৈছে এনেদৰে —

প্রসেনজিতৰ গাৰ পৰা এক বিশেষ গোন্ধ বিয়পি আহিছে।

ঃ তই ভাং খাই আহিছ ।

ঃ এই শেখৰ, দোস্ত, প্লীজ ব'ল ইয়াৰ পৰা। ছ'ৰি কিন্তু তহঁত ইয়ালৈ এনেদৰে মোক ফ'ল কৰি আহিব নালাগিছিল।

ঃ নালাগিছিলহু তোক ইয়াত কোনোৱাই খুন কৰি পেলাই থ'লেও আমি জানিলোহেঁতেননে? তোৰ পকেট চাওঁ আৰু কি কি আনিছ তই? ৰাজেশে প্রসেনক পিছফালৰ পৰা গবা মাৰি ধৰিলে।

ঃ এই এৰ, ইয়াত এইবোৰ নকৰিবি। মই কম তহঁতক কিন্তু কচম খা কাকো নক'বি....

ঃ কিহৰ কচম-চাল্লা মুখ ভাঙি দিম। তোৰ ভাঙৰ গোন্ধত মই ৰূমত থাকিব নোৱাৰো, আজি জেগা দেখিলোহি। কাগজৰ পেকেটৰ পৰা তই গধূলি কি খাৱ? মই সোধোতে হোমিঅ'পেথিক ঔষধ বুলি কৈছিলি যেহু সচাঁ কথা ক কি সেয়া? এল.এছ.ডি ব্রাউন ছুগাৰ নেকি? শেখৰে প্রসেনজিতৰ বাহুত খুন্দা মাৰিলে।

ঃ আৰে ব'লনা; আগে ইয়াৰ পৰা ওলাই ল। (পূজাৰী, ৪৬)

যুৱসমাজৰ এনে বিপথগামী মানসিকতা বর্তমান সমাজৰ এক জটিল সমস্যা হিচাপে পৰিগণিত হৈছে। নেচনেল ড্রাগ ষ্ট্রেটেজী হাউচহ'ল্ড ছাৰভে (National Drug Stategy House Survey 2016) ৰ মতে ১৮ ৰপৰা ২৪ বছৰৰ ভিতৰৰ যুৱপ্রজন্মই সপ্তাহত ২৮.৭ শতাংশ সুৰা সেৱন কৰে। (Cohabitation) উপন্যাসখনত যুৱ সমাজৰ মাজত নিচাযুক্ত দ্রব্যসেৱনৰ অন্য এক কাৰণ হৈছে উচিত শিক্ষাৰ অভাৱ। অভিজাত পৰিয়ালৰ সন্তানে প্রায়ে নিজে বিচৰা প্রতিটো বস্তু লাভ কৰে বাবে তেওঁলোকৰ মাজত মূল্যবোধ তথা নৈতিক শিক্ষাৰ অভাৱ দেখা যায়। কাৰণ তেওঁলোকে বিচৰা প্রতিটো অভাৱেই পৰিয়ালৰ লোকে পূৰণ কৰিব পাৰে। ঠিক সেইদৰে অভাৱগ্রস্ত যুৱচামৰ মাজতো কিছুমানে নিজৰ প্রয়োজনসমূহ পূৰণ কৰিবলৈ অসমর্থ হয়। ইয়াৰ ফলতো সেইসকল যুৱপ্রজন্ম বিপথে পৰিচালিত হয়। গোলকীয় পৃথিৱীত বর্তমান ইণ্টাৰনেটৰ যুগত সকলো বস্তু চাবলৈ বা বিচৰাটো অতি সহজ। ইয়াৰ নেতিবাচক দিশটোৰ প্রতি আগ্রহী একাংশ যুৱপ্রজন্মই মদ, ভাং,

চিগাৰেট, ড্ৰাগছ আদি সেৱন কৰা দেখা যায়। ফলত সমাজত এক বিশৃংখল পৰিৱেশৰ সৃষ্টি হয়।

উপন্যাসখনত বিশ্বায়নৰ প্ৰভাৱত মাল্টিনেশ্যনেল কোম্পানীবোৰৰ মাজত অহা এক প্ৰতিযোগিতামূলক মনোভাৱ চিত্ৰিত হৈছে। তেওঁলোকে যুৱচামক লক্ষ্য কৰিয়েই বিভিন্ন বস্তু উৎপাদন কৰিবলৈ লৈছে যাতে তেওঁলোকৰ মুনাফা অধিক হয়। সাধাৰণতে যুৱাৱস্থাত তেওঁলোকে ভাল-বেয়াৰ নিৰ্দ্ধাৰণ সম্পূৰ্ণৰূপে নাজানে। উপন্যাসখনত ৰাজদীপ নামৰ টেলিকম কোম্পানীৰ ল'ৰাজনৰ মুখেৰেই প্ৰকাশ পাইছে, এনেদৰে —

বহুত ব্যস্ত নতুন কোম্পানী, দিন-ৰাত কাম। ট্ৰেইনিং দিছো, ষ্টাফ লৈছো, ট্যুৰ কৰিছো। টাৰ্গেট বহুত বেছি, এই এৰিয়াৰ পৰা কোম্পানীৰ ডেজায়ার্ড টার্ন অ'ভাৰ দিব নোৱাৰিলে প্ৰ'ব্লেম হৈ যাব। এতিয়া আমি টাৱাৰবোৰ বহুৱাই আছো, নেটৱৰ্ক ভাল কৰা, গ্ৰাহকৰ বাবে আন প্ৰতিষ্ঠিত কোম্পানীতকৈ লোভনীয় অফাৰ দিয়া, স্কীম তৈয়াৰ কৰা, সকলো চিন্তা কৰিবলগীয়া হৈছে। আমি কলেজবোৰ টাৰ্গেট কৰি লৈছো বুজিছা। স্কুল আৰু কলেজ ষ্টুডেন্টৰ বাবে প্ৰিপেইড, প'ষ্টপেইডৰ এনে কিছুমান সস্তাত ভাল সুবিধা ঘোষণা কৰিম যে আমাৰ প্ৰডাক্ট খুব কম দিনত পপুলাৰ হৈ যাব। আমাৰ প্ৰধান গ্ৰাহক তোমালোকবোৰ। আমি গাঁওবোৰত ছাৰ্ভে কৰি দেখিছোঁ, গাঁৱৰ ল'ৰা-ছোৱালীয়ে এসাজ ভাত নাখাই থাকিব, কিন্তু ম'বাইল ফোন ৰিচাৰ্জ কৰিবই। (পূজাৰী, ৯১)

যুৱ সমাজৰ মাজত ইয়াৰ লগতে পশ্চিমীয়া আদৱ কায়দাৰ প্ৰতি এক মোহগ্ৰস্থতা আনিছে এই মাল্টিনেশ্যনেল কোম্পানীবোৰে। বিশেষকৈ গাঁৱৰ পৰা চহৰলৈ অহা তৰুণ প্ৰজন্মক মোহগ্ৰস্থতাই অধিক আকৰ্ষণ কৰা দেখা যায়। উদাহৰণস্বৰূপে, উপন্যাসখনত আল্পনা চৰিত্ৰটোৰ কথা উল্লেখ কৰিব পাৰি। দেউতাকৰ দৰে শিক্ষকতাৰ বৃত্তিকে গ্ৰহণ কৰিব বিচৰা আল্পনাই চহৰলৈ ওলাই আহি মডেলিং জগতৰ প্ৰতি আকৰ্ষিত হয়। কেৱল এটা সুন্দৰ দৈহিক গঠনৰ অধিকাৰী হোৱা বহু সংখ্যক যুৱতীয়ে নিজকে মডেলিঙৰ বাবে উপযুক্ত বুলি ভাবিবলৈ ধৰে। আল্পনা চৰিত্ৰটোৰ মাজেৰে এই কথাই প্ৰকাশ পাইছে—

সন্দিকৈ কলেজত আহি ভর্তি হোৱাৰ পিছত নবাগত আদৰণী সভাত, কোনোবা স্থানীয় টি, ভি, চেনেল এটাই বাৰে বাৰে তাইক ফ'কাছ কৰিলে।

সকলোৱে তাইৰ শৰীৰটো মডেলিঙৰ উপযুক্ত বুলি শলাগিলে হেনো। এইবোৰ আল্পনাই কোৱা কথা। যোৱা এমাহ মৈত্ৰীয়ে আল্পনাক কেৱল মডেলিঙৰ স্বপ্নত আতুৰ হৈ থকা দেখিছে। এতিয়া আল্পনাৰ টেবুলত কলেজৰ পাঠ্যক্ৰমৰ কিতাপৰ ঠাইত কেৱল ফেশ্বন সম্পৰ্কীয় আলোচনী, মেক্ আপ কিট। (পূজাৰী, ৮৬)

এনেদৰে হঠাতে নিজকে মডেল বুলি ভবা ভ্ৰান্ত ধাৰণাই বিশেষকৈ যুৱতীসকলৰ মনত ক্ৰিয়া কৰে। মডেলিং জগতখনৰ কথা নজনাকৈ কেৰিয়াৰ সর্বস্ব বুলি ভাবি মডেলিং জগতলৈ আগবাঢ়ে। হয়তো কেতিয়াবা এনে ভ্ৰান্ত ধাৰণাই যুৱতীসকলৰ জীৱনলৈ ধুমুহা নমাই আনিব পাৰে।উপন্যাসখনত অৱশ্যে এই কথা ভবাৰ অৱকাশ এইসকল যুৱতীৰ নাই। আল্পনাও ইয়াৰ ব্যতিক্ৰম নাছিল।

এই বিকিৰ সৈতে আল্পনা গুচি গৈছে তিনিদিন আগেয়ে। সময় থাকোতেই তীৰ মৰাৰ সপোন লৈ তাইৰ শুভাকাংক্ষী বুলি ভবা বিকিৰ সৈতে আল্পনা যোৱাৰ সিদ্ধান্ত লৈ মৈত্ৰীক কৈছিল - তুমি কাকো এতিয়া নক'বা। ঘৰত মই কোৱা নাই। ফোনত কনটেক্ট ৰাখিম ঘৰৰ সৈতে। মই পাৰিমেই, এমাহ ৰোৱা, মই বুজাই দিম, মই কিয় আহিলো। মৈত্ৰী অবাক হৈ গৈছিলা সহজ-সৰল, দেউতাকৰ দৰে শিক্ষকতাৰ বৃত্তিকেই ল'ম বুলি কোৱা ছোৱালীজনী কেইটামান মাহৰ ভিতৰত এইদৰে কি যাদু-মন্ত্ৰত সলনি হ'ব পাৰে, সেই কথা ভাবি মৈত্ৰীয়ে আজিও ওৰ পোৱা নাই। (পূজাৰী, ৮৭-৮৮)

বিশ্বায়নৰ বাবেই বহুজাতিক কোম্পানীবোৰে সাংস্কৃতিক ঔপনিবেশিকতাবাদৰ কূটনীতিৰে বিশ্ব অর্থনীতিৰ বজাৰ দখল কৰাৰ প্ৰতিযোগিতাত নামি পৰিছে। নতুন যুৱপ্ৰজন্মৰ মাজত ভোগবাদী মানসিকতাৰ অবাধ প্ৰচলন হৈছে। এইক্ষেত্ৰত প্ৰচাৰ মাধ্যমৰ যোগেদি কিছুমান সস্তীয়া ভাৱধাৰাৰ প্ৰচাৰ চলোৱা দেখা গৈছে। যুৱ প্ৰজন্মই সেইবোৰৰ অন্ধ অনুকৰণত নিজৰ সাংস্কৃতিক মূল্যবোধ যেন পাহৰি গৈছে। সম্প্ৰতি সমাজ জীৱনলৈ অহা লিভিং টুগেদাৰৰ ধাৰণাটো বিশ্বায়ন আৰু আধুনিকতাৰ ফল। নৱৈৰ দশকতে ইউৰোপৰ স্কেনডিনেভিয়ান (scandinavian) দেশত এই প্ৰথাৰ প্ৰথম প্ৰচলন হৈছিল (Noack) আৰু ক্ৰমান্বয়ে বিশ্বৰ

বিভিন্ন দেশত এই ধাৰণাটোয়ে প্ৰসাৰ লাভ কৰিলে। বৰ্তমান অসমীয়া সমাজৰ একাংশ যুৱ সমাজৰ মাজতো লিভিং টুভেদাৰৰ ধাৰণাটো প্ৰচলিত হ'বলৈ ধৰিছে। বিশেষকৈ শিক্ষা, চাকৰি তথা কেৰিয়াৰৰ সংক্ৰান্তত ঘৰৰ পৰা দূৰৈত থকা যুৱক-যুৱতীসকলৰ মাজত এনে মানসিকতা দেখা যায়। আলোচিত উপন্যাসতো এনে মানসিকতাৰ প্ৰকাশ দেখা গৈছে। নীৰাৰ মাহীয়েকৰ ছোৱালী সীমাই কলেজীয়া জীৱনতে লিভিং টুগেদাৰ কৰিছিল বৰুণৰ লগত। দিল্লীত চাকৰি জীৱন আৰম্ভ কৰিবলৈ লোৱা সময়তে পুনৰ বৰুণৰ লগত একেলগে থকাৰ সিদ্ধান্ত লৈছে। ঘৰত এই কথাবোৰত আপত্তি হৈছে। সীমাৰ অভিভাৱকে বৰুণৰ লগত বিয়াত বহাৰ কথা জনাইছে যদিও সীমা আৰু বৰুণ বিয়াৰ বাবে প্ৰস্তুত নহয়। সিহঁতৰ সন্মুখত ভৱিষ্যত, কেৰিয়াৰ সকলো পৰি থাকোতে বিয়াত বহি সময় নষ্ট কৰাৰ মানসিকতা নাই। সেয়ে মাক-দেউতাকৰ লগত সীমাৰ মনোমালিন্য ঘটিছে। সীমা আৰু বৰুণৰ দৰে অনেক যুৱতীয়ে গ্ৰহণ কৰা লিভিং টুগেদাৰ প্ৰসংগত একাংশ যুৱ প্ৰজন্ম সৰৱ আলোচনাত মিলিত হৈছে। তেওঁলোকৰ মনোভাৱ তথা প্ৰতিক্ৰিয়া প্ৰকাশ পাইছে উপন্যাসখনত এনেদৰে —

ঃ নীৰাই কথা প্ৰসংগত উল্লেখ কৰিলে - সীমাবাই এয়া বৰ বেয়া কাম কৰিছে। সুলেখাই মুখতে ধৰিলে, কিয়, কি বেয়া কাম কৰিছে? দিল্লীত ঘৰ ভাড়া কিমান জানানে? দুটা মনেমিলা পাৰ্টনাৰে ঘৰ ভাড়া কৰি আছে কি বেয়া হৈছে? নিজৰ সুখ-দুখ শ্বেয়াৰ কৰিছে, ভাড়া শ্বেয়াৰ কৰিছে।

ঃ কিন্তু শাৰীৰিক কথাটো ...

ঃ নীৰা, তোক যি পুৰুষে বিয়া কৰাব কি উপায়েৰে তাৰ 'ভাৰ্জিনিটি প্ৰুফ' কৰিবি? তোৰ বাইদেৰে এটা ল'ৰাৰ সৈতে থাকি ভাল পাইছে, লুক-ঢাক কৰা নাই। সিহঁত শিক্ষিত, আৰ্থিক ভাৱে স্বাৱলম্বী, সিদ্ধান্ত লোৱাৰ অধিকাৰ আছে।

ঃ সুলেখা, তছলিমা নাচৰিণ, চিমন দ্য বভোৱা পঢ়ি পঢ়ি তোৰ চিন্তাবোৰ আমাৰ সমাজৰ সৈতে খাপ নোখোৱা হৈ গৈছে। যদি থাকি ভাল পাইছে, সীমা আৰু বৰুণে, বিয়া কৰোৱাত কি আপত্তি, তেতিয়াওটো একেদৰেই থাকিব। (পূজাৰী, ৯৪)

সমাজত এনেধৰণৰ কাৰ্য সংঘটিত হ'লেই সততেই পশ্চিমীয়া সংস্কৃতিক দোষ দিয়া দেখা গৈছে। অৱশ্যে সংস্কৃতি কাৰো ওপৰত জাপি দিয়া বস্তু নহয়। কোনো এখন সমাজ আগবাঢ়ে বা তাৰ সংস্কৃতি গঢ় লয় চাৰিওফালৰ ভৌগোলিক পৰিৱেশত উপলব্ধ বিৱৰ্তনীয় ইতিহাস আদিৰ সংমিশ্ৰণত। কোনো এখন সমাজৰ বাবে গ্ৰহণযোগ্য নোহোৱা সংস্কৃতি হয়তো আন এখন সমাজৰ গুৰুত্বপূৰ্ণ উপাদান হ'ব পাৰে।

বিশ্বায়নৰ ফলত আশীৰ দশকৰ পিছত তথ্য-প্ৰযুক্তিৰ বিকাশ ঘটে। তথ্যায়ন হৈছে এনে এক ব্যৱস্থা বা প্ৰক্ৰিয়া যাৰ জৰিয়তে নতুন তথ্য বা যোগাযোগ প্ৰযুক্তিৰ ব্যৱহাৰ কৰা হয়। কম্পিউটাৰ বিকাশ, বিভিন্ন ছফট্ৱেৰ উদ্ভাৱন, ই-মেইল আৰু ৱেব সেৱাৰ প্ৰসাৰ, ইণ্টাৰনেটৰ বহুল ব্যৱহাৰ বিশেষকৈ ছচিয়েল মেডিয়া, ফেচবুক টুইটাৰ, হোৱাটছএপ, ইউটিউৱৰ আদিয়ে সমগ্ৰ বিশ্বতে এক নতুন প্ৰযুক্তি গঢ়ি তুলিছে। তথ্য ব্যৱহাৰৰ এনে আন্তৰ্জাতিকৰণৰ ফলত মানুহৰ মাজত অতি সহজতে তথ্য সৰবৰাহ হ'বলৈ ধৰিছে। এই তথ্যায়নৰ জগতখনক যুৱপ্ৰজন্মই বেছিকৈ আকোঁৱালি লোৱা দেখা যায়। তথ্য-প্ৰযুক্তিয়ে যিদৰে বৰ্তমান সুবিধাৰ সৃষ্টি কৰিছে তাৰ পৰিৱৰ্তে এচাম যুৱকক বিপথেও পৰিচালিত কৰিছে। সাধাৰণতে কৈশোৰৰ পৰা যৌৱনত ভৰি দিয়াৰ ল'ৰা-ছোৱালীৰ মনবোৰ উৎসুকতাৰে ভৰি থাকে। এই সময়ত স্কুল-কলেজত নিশিকোৱা কিছুমান পাঠ্যক্ৰমৰ প্ৰতি তেওঁলোক আগ্ৰহী হৈ উঠে। এইসকল ছাত্ৰ-ছাত্ৰী আৰু যুৱক-যুৱতীয়ে ইণ্টাৰনেটৰ প্ৰতি আসক্তি অনুভৱ কৰে। ইয়াৰে অধিকাংশ যুৱক-যুৱতী ইণ্টাৰনেটৰ জৰিয়তে বিপৰ্যস্ত হৈছে আৰু ফলত তেওঁলোকে জীৱনৰ গুৰুত্বপূৰ্ণ বিষয়সমূহৰ পৰা আঁতৰি আহিছে। ইণ্টাৰনেটৰ প্ৰতি থকা কঠিন আসক্তিয়ে বিভিন্ন অপৰাধমূলক কাৰ্য কৰিবলৈও তেওঁলোক কুণ্ঠাবোধ নকৰা হৈছে। ইণ্টাৰনেটত উপলব্ধ অশ্লীল দৃশ্যসমূহ উপভোগ কৰাৰ লগতে এনেধৰণৰ অবৈধ ৱেবচাইটসমূহে একোজন যুৱক-যুৱতীক পাশৰিক শক্তিত বন্দি কৰি তোলে। উপন্যাসখনত এনেধৰণৰ অশ্লীলতাৰ প্ৰতি আকৰ্ষিত যুৱ সমাজৰ ছবিখন প্ৰকাশ পাইছে।

পাইথাগ'ৰাছ টু, পাইথাগ'ৰাছ ছিক্সটি নাইন ইত্যাদি নামকৰণত এই জ্যামিতি বিশ্লেষণ কৰা হয়। যৌৱনৰ অপাৰ শাৰীৰিক কৌতুহল, নৰ-নাৰীৰ শৰীৰী সুখানুভূতিৰ ৰহস্য সন্ধানৰ বাবে সৃষ্টি হোৱা এই জ্যামিতি প্ৰতি বছৰে

নতুন ল'ৰা-ছোৱালীয়ে জানি আহে, এছ এম এছ কৰে ইজনে সিজনলৈ। তাৰ মাজে মাজে এম এম এছ আহে, হুলস্থূল লাগি যায় মুহূর্ত্তে। কোনো কলেজৰ ষোড়শীৰ নগ্ন শৰীৰৰ ক্লা'জ আপ, নতুন উদ্দাম শৰীৰী খেলৰ মুহূর্ত্তৰ ছবিবোৰ হাতে হাতে চেলফোনত ঘূৰি উত্তেজনাময় কৰি তোলে শ্রেণী কক্ষ, কেন্টিন, হোষ্টেল বা আবেলিৰ আড্ডা। কোন ছোৱালী? কি কথা। ল'ৰাটোৰ কথা প্রায়ে নোলায়। (পূজাৰী, ১৬৮-১৬৯)

তদুপৰি উপন্যাসখনত দেখা গৈছে সুদক্ষিণা নামৰ ছোৱালীজনীয়ে এটা নগ্ন এম এম এছ চাই হুলস্থূল লগাইছে। কাৰণ ল'ৰাটোৱে ছোৱালীজনীৰ সৈতে শাৰীৰিক ক্রিয়াত ব্যস্ত থকা মুহূর্ত মোবাইল ফোনত ৰেকর্ডিং কৰি থকা বুলি প্রমাণ হৈছে। এই অশ্লীল ছবিসমূহে যুৱক-যুৱতীসকলৰ মানসিক আৰু স্বাস্থ্যগত দিশৰ বাবে অত্যন্ত ক্ষতিকাৰক। এই ছবিসমূহে তেওঁলোকৰ মন মগজুত সকলো সময়তে অনবৰতে ক্রিয়া কৰি থাকে। ফলত এইবোৰ চোৱাটো বদ অভ্যাসত পৰিণত হৈ পৰে আৰু যিকোনো উপায়েৰে তেওঁলোক পৰিতৃপ্ত হ'বলৈ বিচাৰে।

৩.০০ উপসংহাৰ ঃ

আলোচনাৰ অন্তত ক'ব পাৰি যে *সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ* উপন্যাসখনত যুৱ চিন্তা-চেতনাই বিশেষ প্রাধান্য লাভ কৰিছে। উপন্যাসখনত বিশ্বায়নে মানৱ সমাজলৈ বহুতো সুযোগ সুবিধা আনি দিয়াৰ লগতে যথেষ্ট প্রত্যাহ্বানো আনি দিয়াৰ চিত্র প্রকাশিত হৈছে। অর্থাৎ বিশ্বায়নে যুৱ প্রজন্মৰ বাবে ইতিবাচক আৰু নেতিবাচক দুয়োটা দিশেই কঢ়িয়াই আনিছে। বিশ্বায়নে সমাজত মুক্ত বজাৰ আৰু মুক্ত অর্থনীতিৰ প্রচলন ঘটাইছে। মুক্ত বজাৰে সমাজলৈ অবাধ স্বাধীনতা আনি দিয়াৰ লগতে সমাজৰ যুৱ প্রজন্মকো বিপথে পৰিচালনা কৰাত সহায় কৰিছে। যুৱ উচ্ছৃংখলতা, ভোগবাদী মানসিকতাই তৰুণ প্রজন্মক মোহাচ্ছন্ন কৰি তুলিছে। বিশ্বায়নৰ সমান্তৰালভাৱে তথ্য-প্রযুক্তিৰ বিকাশে যুৱসমাজক অধিক ইন্টাৰনেট সেৱাৰ প্রতি আগ্রহী কৰি তুলিলে। ❑

সহায়ক গ্রন্থপঞ্জী ঃ

দত্ত, জয়ন্ত। আৰু গীতাশ্রী শইকীয়া, সম্পাদক। *একবিংশ শতিকাৰ অসমীয়া উপন্যাস*। প্রথম প্রকাশ, অসম বুক ট্রাষ্ট, ২০২০।

পূজাৰী, অনুৰাধা শর্মা। *সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ*। চতুর্থ প্রকাশ, চন্দ্রপ্রকাশ, ২০১৩।

"Cohabitation: Revision History." *Wikipedia,* Wikimedia Foundation, 3rd September, 2024, https://www.betterhealth.vic.gov.au.health/healthyliving/alcohol-tenagers. 4th Sepember, 2024. Deb, Bimal J et al., editor. *Globalisation and North East India.* 1st ed., Concept Publishing Company, 2008. Furlong, Andy. *Youth Studies: An Introduction*. 1st ed., Routledge, 2013.

Noack, Turid, et al. "The Realization of marriage plans among cohabiting couples in Sacninavia". Princeton university. 22nd September, 2020.

लेखकों से निवेदन

- द्विभाषी राष्ट्रसेवक में प्रकाशन हेतु पत्रिका की प्रकृति के अनुरूप भाषा, साहित्य, समाज, कला व संस्कृति विषयक लेख आमंत्रित हैं।
- अनूदित रचनाओं के संदर्भ में मूल लेखक की अनुमति/स्वीकृति अनिवार्य है।
- लेखक अपनी रचनाएँ केंद्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा स्वीकृत मानक हिंदी यूनिकोड में 13 प्वाइंट में टंकित कराकर पत्रिका के ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com पर अथवा स्पष्ट अक्षरों में लिखकर समिति कार्यालय के पते (मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, रूपनगर, गुवाहाटी-781032, असम) पर भेजें।
- अस्वीकृत रचनाएँ लौटाई नहीं जाएँगी। अत: भेजी गई रचना की प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- लेखक अपनी रचना के साथ अपना नाम, पदनाम, मोबाइल नं., ई-मेल, पूरा पता सहित एक पासपोर्ट साइज फोटो अवश्य भेजें।
- शोधपत्र की न्यूनतम शब्द-सीमा 2000 और अधिकतम 3000 होनी चाहिए और सार 150 से 200 शब्दों के भीतर होना चाहिए।
- असमीया भाषा में लिखे गए लेख को पेजमेकर फारमेट में गीतांजलि फंट, 12 प्वांइट में टाइप कराकर भेज सकते हैं।
- शोधपत्र के लेखन में एमएलए शैली का अनुपालन करना होगा।
- शोधपत्र में क्रमश: शीर्षक, सार, प्रस्तावना, उद्देश्य, संसाधन/सामग्री, प्रविधि/पद्धति, क्षेत्र, मूल विषयवस्तु का विश्लेषण, परिणाम/उपलब्धियाँ, निष्कर्ष और उद्धृत कार्य शामिल होंगे।
- शोधपत्र की मौलिकता हेतु रचना के साथ घोषणा-पत्र संलग्न किया जाना आवश्यक है।
- लेखक अपनी तथ्यात्मक सटीकता के लिए पूरी तरह जिम्मेदार हैं।

द्विभाषी राष्ट्रसेवक का सदस्यता प्र-पत्र

यहाँ से काटिए

नाम : .....

पदनाम : .....

पूरा पता : .....

: .....

ई-मेल : ..... मोबाइल : .....

RTGS का विवरण : .....

सदस्यता शुल्क

व्यक्तिगत		*संस्थागत*	
प्रति अंक	: रु. 100/-	प्रति अंक	: रु. 150/-
वार्षिक	: रु. 1000/-	वार्षिक	: रु. 1,500/-
आजीवन सदस्य	: रु. 10,000/-		

निर्धारित शुल्क मनीऑडर/डी.डी. के द्वारा असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के नाम से समिति कार्यालय के पते पर भेजा जा सकता है। ऑनलाइन शुल्क निम्न विवरण के अनुसार भेजें :-

Name of Beneficiary : Asom Rastrabhasha Prachar Samiti
A/c No. : 551802010004619
Name of Bank & Branch : Union Bank of India, Hatigaon Chariali, Dispur-781038
IFS Code : UBIN0555185

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें -

डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया, मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, डाक : इंद्रपुर, जिला : कामरूप महानगर, गुवाहाटी-781032 (असम), मो. 9101541380, ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com

POSTAL REGISTRATION NO. GH/127/2022-24 ❖ Date of Publication : 31st October, 2024 ❖ RNI No. ASSBIL/2009/31008

एक हृदय हो भारत जननी
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी

संपादकीय कार्यालय :

प्रधान संपादक, द्विभाषी राष्ट्रसेवक, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, गुवाहाटी-781032

arpsguwahati.com ✉ rastrasewak51@gmail.com 9101541395/9101541380